ಹಿಂದಿರುವಿದ್ದಾ	GL H 294.59218 ARA धारणाञ्चारवाञ्यायवायवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्चारवाञ्	これ アクラウラウラン
nementerne nem	मसूरी MUSSOORIE पुस्तकालय LIBRARY	フチシュ・ションションション
Apotociociociociociocio	अवाप्ति संख्या Accession No.	11.01.01

बृहदारगयकोपनिषद्

अनुवादक,

रायबहादुर बाबू जालिमसिंह

केसरीदास सेंड द्वारा

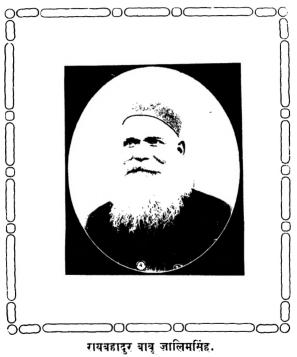
नवलकिशोर पेस में मुद्रित और प्रकाशित

लखनऊ

सन १६२३ ईव

वितीयबार १०००

[मूल्य ३)



भूमिका।

कंपूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्ति
द्वन्द्वतितं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
प्कं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुर्णरहितं सद्गुरुं तन्त्रमामि ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुस्साक्षात्परंब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
ध्यानमूलं गुरोर्मूतिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥

जब मैं हरिद्वारको संवत् १६७१ में गया, तब वहां पर कई एक साधु जान पिहचान के मुक्त से मिले, और कहा कि जैसे आपने ईश, केनादि आठ उपनिवदों पर भाषा टीका किया है यदि उसी श्रेगी पर बृहदारयय की टीका भी मध्यदेशी भाषा में कर दें तो कोगों का बड़ा कल्यामा हो, मैंने उनसे कहा कि वाक्यदान का प्रदान तो नहीं करता हूं, पर यदि अन्तः करमा प्रविष्ठ परमात्मा की प्रेरमा होगी और मैं जीता रहूंगा और अवकाश मिलेगा तो प्रयन्न करूंगा; जब मैं हरिद्वार से वापस आया तब पिखड़त गंगाधर शास्त्री और अंग्रेजी में अनुवाद किये हुये ग्रंथों की सहायता करके बृहदारयय की टीका का आरम्भ किया गया, और ईश्वर की छुपा करके आज उसकी निर्विष्ठ समानि हुई।

मेरा भन्यवाद प्रथम पिएडत सूर्यदीन शुक्त नवलिकशोर प्रेस को है जो इस उपनिपद् के छपाने के लिये मेरे उत्ताह को बढ़ाते रहे, उन के पुरुषार्थ झौर प्रथल करके यह उपनिषद् दिहानों के अवलोकनार्थ छपकर नैयार है. पिएडत शक्तिभर शर्मा शुक्त झौर पिएडत खूब्चन्द शर्मा गौड़ ने इस उपनिषद् का संशोधन किया है. मैं उनके इस अ-नुग्रह पर उन को भी धन्यवाद देता हूं.

हे पाटक ननो ! शंकरा चार्य जी ने उपनिषद् का अर्थ इस प्रकार किया है, उप 十 नि 十 पद् उप=समीप, नि=अत्यन्त, पद्=नाश, अतः संपूर्ण उपनिषद् शब्द का अर्थ यह हुआ कि जो जिज्ञासु अखा और भांक के साथ उपनिषदों के अत्यन्त समीप जाता है, यानी उनका विचार करता है वह आवागमन के सेशों से न्विन हो जाता है, और किसी किसी आचार्य ने इसका अर्थ ऐसा भी किया है, उप अमीप, नि=अत्यन्त, पद्=वैठना, यानी जो जिज्ञासु को अध्यन्य अध्यापन के द्वारा ब्रह्म के अति समीप वैठने के योग्य बना देता वह उपनिषद कहा जाता है।

हे पाठक जनो ! जैसे छान्दोग्यउपनिषद् के दो स्वयड हैं पूर्वार्छ और उत्तरार्छ, वैसेही इस वृहदारयय के भी दो खगड हैं, पूर्वार्छ श्रीर उत्तरार्छ, पूर्वार्छ में निष्काम कर्म यागादि का निरूपण है, श्रीर उत्तरार्छ में आत्मज्ञान का निरूपण है, जो मुमुश्ल श्रावागमन से रित होना चाहता है, उसको चाहिये कि वह प्रथम निष्काम कर्म करके श्रन्त करणा को शुद्ध करे, श्रीर फिर श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्रावार्य के समीप शिष्यभाव से जाकर श्रद्धा श्रीर भिक्त के साथ सेवा करके प्रमन्न करे, तत्पश्चात् श्रापनी इच्छानुसार प्रश्नों को करे श्रीर कहे हुये उपरेश को श्रवण मनन करके श्रापने श्रातमा का साक्षात् करे। हे पाठकजनो ! इस टीका में पहिले मूल मन्त्र दिया है, फिर पद-

च्छेर, फिर वामअंग की श्रीर संस्कृत श्रन्वय, श्रीर दाहिने श्रंग की श्रीर पदार्थ, यदि वाम श्रंग की श्रीर का जिला हुआ ऊपरसे नीचे तक पढ़ाजावे तो संस्कृत श्रन्वय मिलेगा, यदि दाहिने श्रंग का जिला हुआ ऊपर से नीचे तक पढ़ाजावे तो पूरा श्र्यं मन्त्र का भाषा में मिलेगा, श्रीर यदि बांये तरफ़ से दहिने तरफ़ को पढ़ाजावे तो हर एक संस्कृतपद का श्र्यं श्रथवा शब्द का श्रर्थ भाषा में मिलेगा. जहां तक होसका है हर एक संस्कृतपद का श्रर्थ विभक्ति के श्रनुमार जिला गया है, इस टीकाके पढ़ने से संस्कृतविद्या की उन्नति उनको होगी जिनको संस्कृत की योग्यता न्यून है, मन्त्रका पूरा पूरा श्रथं उसी के शब्दों से ही सिद्ध किया गया है, श्रपनी कोई कल्पना नहीं की गई है, हां कहीं कहीं संस्कृतपद मन्त्र के श्रथं स्पष्ट करने के जिये उपर से जिला गया है, श्रीर उसके प्रथम यह + चिह्न जगा दिया गया है ताकि पाठक जनों को विदित हो जावे कि यह पद मूल का नहीं है ॥

विद्वान सज्जनों की सेवा में प्रार्थना है कि यदि कहीं आगुद्धि हो अथवा अर्थ स्पष्ट न हो तो क्रपा करके उसको ठीक करकें, और मेरे मूल चूक को क्षमा करें, और ग्रुद्ध अन्तःकरण से आशीर्वाद दें कि यह ग्रुम्क करके रचित टीका मुमुक्षुजनों को यथोचित फलदायक हो, और इसकी स्थिति चिरकाल पर्यन्त बनी गहै।

जालिमसिंह रायबहादुर [श्चात्मन लाला शिवदयालुर्सिह, ग्राम श्वकवरपुर, जिला फैजाबाद (श्ववध) निवासी ।] पोस्टमास्टर जनरल रियासत ग्वालियर लश्कर (ग्वालियर)

बृहदारगयकापानषद् सटाक का मूचीपत्र ।

पहिला अध्याय।

		`			
ब्राह्मण	मन्त्र	वृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	वृष्ठ
१	१	१	રૂ	१७	ક્ષ્ર
ę	૨	×	3	१८	RX
ર	१	હ	3	3	કદ
ર	ર	3	3	२०	χο
ર	3	११	3	२१	χo
ર	8	१३	રૂ	२२	४१
ર	¥	१४	3	२३	४३
ર	દ્	१७	3	રક	አዩ
ર	y	38	3	રપ્ર	ሂሂ
3	१	રરૂ	3	२ ६	ሂও
3	ર	રક	3	२७	ሂ¤
3	3	२६	3	२८	3 ሂ
3	ષ્ઠ	२८	8	१	६३
3	×	३०	ક	२	६४
3	Ę	३२	용	ર	શ્યું ક
3	G	રૂજ	ષ્ટ	8	६६
3	5	३६	ક	×	હશ
ą	3	३७	8	६	७२
3	१०	3=	8	૭	ও ছ
Ę	११	3 <i>Ę</i>	8	=	30
3	१२	80	ષ્ઠ	3	= १
3	१३	४१	8	१०	८२
3	१४	કર	8	११	=X
રે	१४	કર	8	१२	EE
3	१६	ક ર	8	१३	58

ब्राह्मण्	मन्त्र	वृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	वृष्ठ
8	६४	03	Ł	. १२	१२१
8	8 ×	દ સ	×	१३	१२२
8	१६	£Ł	×	१४	१२४
8	१७	&⊏	, z	ર પ્ર	१२६
×	१	'१०२	×	१६	१२⊏
¥	ર	१०४	×	१७	१२६
¥	3	१११	×	१⊏	१३३
¥	૪	११४	×	38	१३४
×	×	११४	X '	२०	१३४
x .	ફ	११६	×	२१	१३७
¥	9	११६	¥	- २२	१४१
×	=	११७	¥	२३	१४३
×	3	११८	Ę	१	१४६
×	१०	११६	६	ર	१४७
×	११	११६	६	3	१४८

दूसरा अध्याय।

4						
मासग	मस्त्र	द्वह	ब्राह्मग्	मन्त्र	वृष्ठ	
Ą	Ą	१४०	ર	१३	१७ ०	
8	ર	१४१	2	१४	१७२	
₹,	3	१४३	2		१७३	
₹	8	१४४	₹	१६	१७४	
8	¥	१४६	१	१७	१७६	
₹	६	१ ४८	१	१=	१७=	
Ł	o	१४६	१	{ &	308	
8	5	१६१	१	20	१८१	
₹	8	१६३	२	8	१=३	
*	१०	१६४	ર	૨	१८४	
*	११	१६६	ર	Ę	१=६	
₹	१२	\$\$≅	ર	ક	? 55	

1 1 <th></th> <th>मन्त्र</th> <th>वृष्ठ</th> <th>ब्राह्मण्</th> <th>सन्त्र</th> <th>La</th>		मन्त्र	वृष्ठ	ब्राह्मण्	सन्त्र	La
2 2	ब्राह्मख		-	×	१	२२४
3 3 \$ 225 3 \$ 25 3 \$ 25 3 \$ 25 4 \$ 25 5 \$ 25 6 \$ 25 7 \$ 25 8 \$ 25 <		_	-	¥	ર	२२६
3 3 \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$	3				3	२२७
3 8 \$ 188 \$ 230 \$ 238 </td <td>3</td> <td>ર</td> <td>-</td> <td></td> <td></td> <td>२२८</td>	3	ર	-			२२८
3 X \$\x \x \	3	કું	१६४			
3 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 3 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 5 \$ 100 4 4 4 \$ 100 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 <td></td> <td>¥</td> <td>8 E X</td> <td>×</td> <td></td> <td></td>		¥	8 E X	×		
8 8 7 7 8 8 7 8 8 7 8 <td></td> <td></td> <td>28/9</td> <td>×</td> <td>Ę</td> <td></td>			28/9	×	Ę	
8 2 208 X E 238 8 3 203 X 80 239 8 8 203 X 80 238 8 8 203 X 80 238 8 8 200 X 83 248 8 8 200 248 X 84 248 9 8 200 248 X 84 </td <td></td> <td></td> <td>=</td> <td>×</td> <td>G</td> <td></td>			=	×	G	
8 2 9 2 10 2 <td></td> <td></td> <td></td> <td>.</td> <td>=</td> <td>२३४</td>				.	=	२३४
8 3 403 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 8 8 703 9 703 703 10 703 703 <td>8 -</td> <td></td> <td></td> <td>1</td> <td>3</td> <td>२३६</td>	8 -			1	3	२३६
8 8 204 8 4 208 8 4 208 8 4 208 8 4 208 8 4 208 8 4 208 8 4 208 8 208 208 8 208 208 8 208 208 9 208 208 10 208 208	ષ્ઠ	3		1		230
8 X 208 8 6 280 8 6 282 8 5 282 8 6 282 8 6 282 8 8 282 8 8 282 8 8 282 8 8 282 8 8 282 9 282 282 10 282 282 <td>ષ્ટ</td> <td>8</td> <td>રં૦ફ</td> <td>1</td> <td>_</td> <td></td>	ષ્ટ	8	રં૦ફ	1	_	
8 6 280 X 24 280 8 9 282 X 83 282 8 5 284 X 84 284 8 6 284 X 84 286 9 28 28 X 86 286 9 28 28 X 86 286 9 28 28 X 86 286 9 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28 28 28 28 10 28	8	×	૨૦૪			
8 9 8 4 8 7 8 7 8 <td></td> <td>8</td> <td>२१०</td> <td>×</td> <td></td> <td></td>		8	२१ ०	×		
8 1 20 20 8 2 20 20 8 2 20 20 8 2 20 20 9 20 20 20 10 2 20 20 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 2 2 2 10 3 2 2 10 3 3 2 10 3 3 3 10 4 3 <td< td=""><td></td><td></td><td>212</td><td>×</td><td>१३</td><td></td></td<>			212	×	१३	
8 5 7 7 7 8 7 8 <td></td> <td></td> <td></td> <td>2</td> <td>१४</td> <td>રકર</td>				2	१४	રકર
8 \$\xi\$				y	શ્રદ્ધ	રકક
8 \$0 \$2\$ \$2\$ 8 \$1 \$2\$ \$2\$ 9 \$2 \$2\$ \$2\$ 9 \$2 \$2\$ \$2\$ 9 \$2 \$2\$ 10 \$2 \$2	સ	3		1 -		રકદ
8 88 286 8 8 286 8 82 280 8 286 8 83 280 8 286 8 8 286 8 286	ક	१०				
8 64 466 X 65 4X8	8	११	२१६			
8 63 deo x 85 des		१२	288	×	-	
8 5 5 5X8		-	३ १०	X		•
		_		\$	१	રપ્રક
8 /6	ક	48	711	- 1		•

तीसरा	ऋध्याय	١	•
-------	--------	---	---

		तासरा १	70414 1		
			ज्ञाह्मण	मन्त्र	पृष्ठ
बाह्यज	सम्त्र	पृष्ठ	8	5	२७०
8	१	રપ્રહ			२७३
	ર	૨ ૪૬	१	3	
8	_	बह १	2	१०	રહક
१	3		2	8	२७७
2	૪	२६३	1	•	२७=
	×	રદપ્ર	2	ર	-
. १	-	250	2	3	રહદ
१	Ę		1 2	8	२८०
	. 10	રફદ		•	

ब्राह्मगु	मन्त्र	gg.	ब्राह्मण		
ર	×	- 20 2⊏१	S SIEN	मन्त्र	पृष्ठ
ર	દ્	२ - १	9	40	३३३
ર	و	ર=ર ર ≃ર	1	१८	३३४
ે ર	5	₹ =₹	و	39	₹ ₹
ર	Ę	२ -३	و	ર ૦	३३६
ર	१०	२ ~४	9	२१	338
રે	१ १		ی	२२	३३७
ર	१२ १२	२⊏६	હ	२३	३३⊏
રે	१३	२८७	5	१	३४०
3		255	=	ર	३४२
٠ ٤	१	२६२	=	₹	३४३
૪	2	રદ્દષ્ટ	5	ક	રેક્ક
૪	2	२१७	=	, x	રુક્ષ્ય
×	٦ •	२६६	=	६	३४६
Ę	₹	३०३	5	Ø	ই৪৩
્ હ	१	३०७	=	=	३४⊏
હ	ę	३१२	=	3	३४०
	૨	∙३१⊏	=	१०	३४२ .
9	3	३२०	=	११	३४४
હ	8	३२१	=	१२	ZXX
•	×	,३२२	3	१	3.46
.	Ę	३२३	Ł	ર	360
9	•	३२४	3	ą	368
9	=	३२४	3	8	३६२
9	3	३२४	3	¥	३६४
હ	१०	३२६	3	Ę	३६४
v	११	३२७	3	ف	388
•	१२	३२८	٠ ع	=	३६७
ঙ	१३	३२६	Ę	§.	388
•	१४	३३०		१०	३ ७०
હ	१४	३३१	E	११	३७२
G	१६	३३२	Ł	१ २	इप्छ

(k)						
ब्राह्मण्	सन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण	सन्ब	पृष्ठ	
٤	१३	३७६		२४	335	
3	१४	३७८	3	ર×	₹8=	
3	१४	३८०	3	२६	385	
3	१६	३ ⊏१	3	२७	४०२	
3	१७	३८३		२७-१	ಕಿಂಕ	
8	१८	ラニメ	8	२७-२	808	
3	१ ६	ર≂૪	3	२७-३	Rox	
£	२०	3=0	3	२७-४	४०६	
3	२१	३८६	٤	₹:9 - ¥	४०६	
3	२२	३१२	3	₹७–६	Roz	
3	२३	३६४		२७-७	용으드	

चौथा अध्याय।

ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ
8	१	४१०	3	E	८४७
Ł	ર	ध ११	3	৩	378
१	3	४१ ६	3	=	४६१
2	ક	કર શ	3	3	४६२
8	¥	४२६	3	१∙	કદ્દક
8	Ę	४३ १	3	११	४६६
१	•	४३६	3	१२	४६७
2	₹	४४ १	3	१३	४६⊏
ર	ર	४४३	3	१४	४६६
્ર	3	888	3	१४	४७१
ચ	8	880	3	88	<i>इ०</i> इ
ş	2	४४०	3	१७	Rox
3	ર	ઇ ડ્રર	3	१=	808
3		ક ×ફ	3	38	४७६
3	8	878	3	२०	80=
3	×	SXX	इ	२१ .	. ನಿಜಂ

साम्राज	सन्म -	্ বৃদ্ধ	ब्राह्मण	मन्त्र	पृष्ठ
	े २२	४८२	8	१३	४२६
Ę	२३ ४	8=8	8	१४	४२७
3	ે રક	अदह	8	१४	¥₹=
ક્રે	૨ ×	8=0	8	१६	XRE
3	28	성도도	8	१७	४३०
3	રહ	યુદ્ધ	8	१=	४३०
3	२⊏	880	8	१६	४३१
3	રદ	ક દર	8	२०	435
ર્	30	કક્રક	8	२१	४३३
3	38	ક્રકક	ષ્ઠ	२२	x33
ą	32	SEX	8	२३	X 3E
3	33	८६७	8	રક	४४१
3	રૂજ	४०१	8	ર×	४४२
3	રૂપ	४०२	×	१	४४३
3	३६	४०३	×	ર	KRR
3	· ૱	KoR	×	3	પ્રકલ
3	34	४०६	×	૪	x8€
ક	१	४०७	×	×	र४६
ષ્ઠ	ર	You	×	६	x8/0
8	3	४१२	×	v	४४२
ક	8	४१३	×	=	XXX
૪	×	xex	×	٤	xxe
ષ્ઠ	Ę	४१⊏	×	१०	xxe
ક	9	४२०	×	११	XX 9
ક	5	४२२	×	१२	XXE
ષ્ઠ	8	४२३	×	१३	४६१
ષ્ટ	१०	४२४	×	१४	४६२
8	११	¥₹¥	×	१४	४६४
8	१२	xxx	1		

(9)

पाँचवाँ ऋध्याय।

सन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण	सन्त्र	पृष्ठ
2		११	2	इ३४
		१२	₹.	४६६
ર	४७१	१३	१	33%
3	४७२	१३	ર	६०१
-	LOX	१३	3	६०२
	४७७	१३	B	६०३
_	30%	१४	٤	६०४
_	X=2	१४	ર	Eox
-	X=3	१४	3	६०७
	X=X	१ध	ક	३०३
		१४	×	६१२
-		18	Ę	६१४
-			ی	६१६
-		१४	5	६१⊏
ર	23%	१४	₹.	६२०
	פאי פאי (צי (זון פאי פאי פאי (צי (זון (ז) פאי פאי פאי פאי	\$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$	\$ \$ \$ <td>\$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$</td>	\$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$

छुठवाँ ऋध्याय ।

ब्राह्मण	मन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण्	सम्त्र	पृष्ठ
2	ર	६२३	१	११	द्रइ
8	ર	६२४	१	१२	६३६
ę	3	६२४	8	83	६३८
8	8	६२६	8	१४	६३६
8	×	६२=	२	8	६४३
ę	ફ	६२=	२	ર	ESK
į	9	६२६	२	3	ફ્રષ્ટ્રદ
8	5	६३०	2	8	EXO
8	٤	६३२	२	×	६४३
2	१०	६३३	ે ર	Ę	६४३

बाह्यय	मन्त्र	पृष्ठ	त्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ
ર	9	६४४	8	૪	६६६
ર	= :	६४६	ક	×	६६८
२	3	६४७	8	€`	900
2	१०	&¥=	ક	9 .	७०१
ર	११	કપ્રફ	ક	= .	७०३
ર	१२	६६०	8	3	૭૦૪
ર	१३	६६१	ષ્ઠ	१०	YOU
ર	१४	६६३	ક	११	७०६
ર	१४	६६४	ષ્ટ	१२	७०७
ર	१६	६६६	૪	१३	७११
3	१	६७०	૪	१४	७१२
3	ર	६७३	ષ્ટ	१४	७१३
3	3	६७४	ષ્ઠ	१६	७१४
3	ક	६७६	૪	१७	७१४
3	×	६⊏१	૪	१८	७१६
3	દ્	६८२	૪	१६	७१७
3	৩	. ६८६	૪	२०	७१६
3	5	६८६	ક	२१	७२०
3	3	६८७	ક	२२	७२२
3	१०	8==	૪	२३	७२३
3	११	६≡६	ક	રક	BER.
3	१२	६६०	૪	२४ 😘	, ७२७
Ź	१३	६६१	૪	२६	७२⊏
8	ę	६६२	૪	२७	७२६
.8	२	६६३	ક	२≖	७३०
87	3	EEX			
इति ॥					

श्रीगगोशाय नमः ॥

रुद्दारएयकोपनिषद् सटीक ॥

ऋथ प्रथमोऽध्यायः।

श्रथ प्रथमं बाह्मणम्।

मन्त्रः १ मृलम्।

उषा वा श्रश्वस्य मेध्यस्य शिरः सूर्यश्चक्षुर्वातः पाणो न्याचमिनिवैश्वानरः संवत्सरः श्रात्माश्वस्य मेध्यस्य द्यौः पृष्टमन्तिरक्षणुद्रं पृथिवीपानस्यं दिशः पाश्वे श्रवान्तरदिशः पर्शवः ऋतवोङ्गानि मासाश्चार्द्धमासाश्च पर्वाएयहोरात्राणि प्रतिष्ठा नक्षत्राएयस्थीनि नभो
मांसानि उवध्यं सिकताः सिन्धवो गुदा यकुच क्रोमानश्च पर्वता
श्रोषधयश्च वनस्पतयश्च लोमान्युचन्पूर्वार्थो निम्लोचञ्जपनार्थो
यदिशुम्भते तदिद्योतते यदिधूनते तत् स्तनयति यन्मेहति तद्र्षति
वागेवास्य वाक् ॥

पदच्छेदः ।

उवा, वा, ध्रश्वस्य, मेध्यस्य, शिरः, सूर्यः, चक्षुः, वातः, प्रात्मः, व्यात्तम्, ध्रश्निः, वैश्वानरः, संदत्सरः, ध्रात्मा, ध्रश्वस्य, मेध्यस्य, खोः, पृष्ठम्, ध्रन्तरिक्षम्, उद्रम्, पृथिवी, पाजस्यम्, दिशः, पारवे, ध्रवानतर-दिशः, पर्शवः, श्रृतवः, ध्रङ्गानि, मासाः, च, ध्रद्धमासाः, च, पर्वात्मः, श्रहोरात्राण्ति, प्रतिष्ठा, नक्षत्राण्ति, ध्रस्थीनि, नभः, मांसानि, उवध्यम्, सिकताः, सिन्धवः, गुदाः, यकृत्, च, क्लोमानः, च, पर्वताः, भ्रोषध्यः, च, वनस्पतयः, च, क्लोमानि, उद्यन्, पूर्वार्धः, निम्कोचन्, अधनार्धः, यत्, विष्टुन्ते, तत्, स्तनयति, यत्, मेहित, तत्, वर्षति, वाग्, एव, ध्रस्य, वाक्।।

श्रास्त्रयः

पदार्थाः ।

मेध्यस्य=यज्ञिय अश्वस्य=ग्रश्वका शिर:=शिर वै=निरचय करके उषा=उपाकाल है चक्षः=उसका नेत्र सूर्यः=सूर्व है प्राणः≔डसका प्राण वातः=बाद्यवायु है व्यात्तम्=उसका विवृतस्त वैश्वानरः=वैश्वानर नामक श्रावित:=श्रवित है + तस्य≔उसी मेध्यस्य=पश्चिय अश्वस्य=धोडे का **आत्मा**=भारमा संबत्सर:=संबत्सर है पृष्ठम्=उसकी पीठ द्यौः=स्वर्ग है उद्रम्=पेट अन्तरिक्षम्=भन्तरिक्ष है पाजस्यम्=पाद. पृथिवी=प्रध्वी है पार्श्वे=बगर्ने दिश:=दिशायें हैं पार्शवः=बगलों की हड़ियां श्चान्तरदिशः=उपदिशायें हैं

श्रक्तानि=धंग

ऋतवः=ऋतु हैं पर्वाणि=शंगों के जोड़

मासाः=मास

अन्थयः

पदार्थाः

च=ग्रीर
अर्थमासाः=पक्ष हैं
प्रतिष्ठा=पाद
अहोरात्राखि=दिन भौर रात हैं
अस्थीनि=हड़ियां
नक्षत्राखि=नक्षत्र हैं
मांसानि=मांस
नभः=धाकाशस्य मेव हैं
उद्यक्ष्यम्=उसका आथा पका

हुमा सम्र सिकताः=वाजू है गुदाः=उसकी मंतरी सिन्ध्रयः=नदी हैं च= भीर यत्=जो यक्त्त्=जिगर है च=भीर क्रोमानः=फेफवा है + ते=वे पर्धताः=पर्वत हैं सोमानि=जोम आध्रयः=भीषवि

वनस्पतयः=वनस्पति हैं

च=मार
पूर्वार्धः=उस घोदेका पूर्वार्ध
उद्यन्=निकतता हुमा सूर्य है
जघनार्थः=उसके पीक्षे का भाग
निम्लोचन्=भस्त होनेवाबा सूर्य है
च=मार

यत्=को

+ सः=वह
विजुम्भते=जमहाई बेता है
तत्=वही
विद्योतते=विद्युत् की तरह
जमकता है
यत्=जो
+ सः=वह
विधूनते=जंगको भारता है
तत्=वही
स्तनयति=बादलकी तरह गरजता है

यत्=जो + सः=वह मेहति=मृत्र करता है तत्=वही वर्षति=वरसवा है अस्य=इसका वाक्=हिनहिनाना वाक्=शब्द

प्रव= { ही है यानी इसके शब्द में आरोप किसी का नहीं हैं

भावार्थ।

यज्ञकर्ता यज्ञ करते समय ऐसी रूष्ट्रि रक्खे कि यज्ञिय घोडा प्रजापति है उसका शिर प्रात:काल है. क्योंकि दिन झीर रातभरमें उपाकाल जो तीन बनेसे पांच बजे तक रहता है. अतिशेष्ठ है. यह वेला देवताओं का है, इस काल में जो कार्य किया जाता है वह अवश्य सिद्ध होता है, यज्ञ कर्म में काल की श्रेष्ठता की आवश्यकता कही है. विना पविच-काल के यज्ञकी सिद्धि नहीं होती है, इसकारण उपाकाल की ऐकता यज्ञिय आहव के शिरसे की है, ऐसे घोड़ेका नेत्र सूर्य है, जैसे सूर्य से सब कार्य सिद्ध होता है, वैसेही नेत्र से सब कार्य की सिद्धि होती है. और जैसे शिरके निकट नेत्र होते हैं, वैसे ही उपाकाल के पश्चात सर्य उदय होता है, यानी उपाकाल के पीछे थोड़ी देर में सर्य निक-क्ता है, इस प्रकार इन दोनों की ऐकता है, घोड़का प्राण बाह्य वाय है, जैसे प्राण विना शरीर नहीं रहसकता है, वैसे ही वायु विना कोई जीव नहीं रहसकता है, उसका खुजा हुआ मुख वैश्वानरनामक अस्ति है, अरिन की उपमा मुखसे देते हैं, और अग्नि मुखका देवता भी है. भीर जैसे वैश्वानर अग्नि करके सब जीव जीते हैं वेंसे मुखद्वारा भोजन करके सब जीव जीते हैं, उसका आतमा संबत्सर है, जैसे बोहे के

मुखादि श्रंग बारह होते हैं, यानी ४ कमेंन्द्रियां ४ ज्ञानेन्द्रियां मन श्रीर बुद्धि वैसे ही संवत्सर में बाग्ह महीने होते हैं. इसकारण ऐसा कहा गया है. उस घोड़े की पीठ स्वर्ग है. जैसे सब लोकों में स्वर्ग ऊपर होता है. वैसे ही घोंडे की पीठ भी ऊपर होती है. उस घोड़े का पेट अंतरिक्ष है. जैसे अंतरिक्ष में सब चीजें भरी पढ़ी हैं. और जैसे अंतरिक्ष गहरा है बैसेही पेट में सब चीजें भरी हैं. और वह गहरा भी है. उसका पाद प्रियती है, जैसे प्रथिती नीचे है, वैसे ही पाद भी नीचे हैं, उसकी बगर्ले दिशायें हैं, यानी जैसे मुख्य दो दिशायें हैं वैसेही उस घोड़े की दो बगर्ले हैं, उसके बगलों की हडियां उपदिशायें हैं, जैसे बंगलों की हड़ियां बगल से मिली होती हैं, वैसेही दिशाओं से उप-दिशायें मिली रहती हैं, उसके शरीर के पृथक् पृथक् भाग ऋतु हैं, क्योंकि दोनों में सादश्यता है. श्रीर उसके श्रंगों के जोड मास और पक्ष हैं, क्योंकि दोनों में साहश्यता है, इसके पैर दिन और रात हैं. क्यों कि जैसे शरीर के साथ पैर बढ़ता है वैसे ही दिन रात काल के भी बढ़ते हैं, उसकी हड़ियां नक्षत्र हैं, क्योंकि दोनों में श्वेत रंग के कारण सादृश्यता है, उसका आधा पचा हुआ अन वाल है. क्योंकि अन्न के दानों में अपीर बाल के रेतों में सादश्यता है, अपीर उसके अँतरी और नस नदी हैं, क्योंकि जैसे नदी में से जल निक-लता है वैसे ही झाँतरी और नसमें से रहादि निकलते हैं. उसका जिगर स्प्रीर फेफड़ा पर्वत हैं, क्योंकि जैसे पहाड़ जंबा स्प्रीर ऊंचा होता है वैसे ही फेफ़ड़ा और जिगर फैला होता है, इस कारण दोनों में सादश्यता है, उसके शरीर के रोम औषधी और बनस्पति हैं. क्यें कि इन दोनों में सादृश्यता है, उसका अगला भाग यानी गर्दन निकला हुआ सूर्य है, क्येंकि जैसे घोड़े का गर्दन ऊपर उठा रहताहै, वैसे ही सूर्य भी ऊपर को उठा रहता है, उसके पीछे का भाग अस्त होनेवाला सूर्य है, जैसे पीछे का हिस्सा नीचे की तरफ मुका रहता

है वैसे सूर्य का रथ बाद दोपहर के पश्चिम के तरफ मुका रहता है, यह दोनों में सादृश्यता है, उसका जमहाई विद्युत् तुल्य है, क्योंकि बिजुकी की सादृश्यता मुखके साथ है, जब वह एकाएक सुल उठता है, झौर उसके शरीर का माड़ना मानो वादल का गर्जना है, दोनों में शब्द की सादृश्यता है, उसका मूत्र करना बृष्टिका वर्षना है, क्यों कि दोनों एकही प्रकार के छिड़काव करते हैं, यहीं दोनों की सादृश्यता है, उसका हिनहिनाना जो शब्द है इसमें आरोप किसीका नहीं है ऐसा ध्यान करने से यज्ञ की सफलता होती है, क्योंकि आध्यात्म ड़ीं र ऋषिरेंव एकही हैं, जो विश्व है वही विराट् हैं, जो व्यष्टि है वही समिष्टि है, भेद केवल छोटे बड़े का है, वास्तव में दोनों एकही हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः २

श्रहवी अश्वं पुरस्तान्महिमान्वजायत तस्य पूर्वे समुद्रे योनी रात्रिरेनं परचान्महिमान्वजायत तस्यापरे समुद्रे योनिरेती वा अरवं महिमानावभितः संबभ्वतुः हयो भृत्वा देवानवहद्वाजी गंधर्बानर्वा-सुरानश्वो मनुष्यान्समुद्र एवास्य बन्धुः समुद्रो योनिः॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥

पदच्छेदः ।

अहः, वा, **अ**श्वम्, पुरस्तात्, महिमा, श्चन्वजायत, तस्य, पूर्वे, समुद्रे, योनिः, रात्रिः, एनम्, पश्चात्, महिमा, श्चन्वजायत, तस्य, श्चपरे, समुद्रे, योनि:, एतौ, वा, श्रश्वम्, महिमानौ, श्रभितः, संबभूवतुः, हयः, भूत्वा, देवान्, अवहत्, वानी, गंधर्वान्, अर्था, असुरान्, अश्वः, मनुष्यान् , समुद्रः, एव, श्चस्य, बन्धुः, समुद्रः, योनिः ॥

श्चन्वयः

वा=निश्चय करके अश्वम् }=बोइं के सले का पुरस्तात्

अहः=िवनही

पदार्थाः | ऋन्वयः पदार्थाः महिमा=महिमा वानी सोने का

रात्रिः=रात्रि प्तम् ।=इस घादेके पांछे के तरफका पश्चात महिमा=महिमा नामक चांदी का कटोरा श्चन्वजायत=होता भया तस्य=तिस पहिले महिमा के योनिः=उत्पत्ति का स्थान पूर्वे समुद्रे=परब का समृद्र है तस्य=तिस दूसरे महिमा के योनिः=उत्पत्ति की जगह अपरे समुद्रे=पश्चिम का समुद्र है वा≕श्रोर पतौ=ये दोनों महिमानौ=महिमा नामक कटेारे श्रश्वम्=घोदे के श्राभितः=भागे पश्चि संबभूवतुः=स्क्ले गये + सः=वह घोड़ा हयः=हय होकर देवान्=देवों को अवहत्=ले जाता भवा यानी उन का वाहन हुआ

वाजी=गजी भृत्वा=देृकर गंधर्वान्=गंधर्वों को

+ अवहत्=जे जाता भया यानी दन का वाहन हुआ

झर्वा=घर्वा + भूत्वा=होकर झसुरान्=घसुरों को

+ ध्रवहत्≕के जाता भया यानी उनका वाहन हुन्ना

च्चश्वः=चरव + भूत्वा=होकर मनुष्यान्=मनुष्यों को + श्रवहत्=बे जाता भया बानी उनका वाहन हुसा

श्वस्य=इस घोड़े का बन्धु:=रहने का स्थान समुद्र:=समुद्र है + च=भीर योनि:=डस्पत्ति स्थान पव=भी समुद्र:=समुद्र है

भावार्थ ।

यज्ञिय घोड़े के आगे आँर पीछे दो २ कटोरे रक्ले जाते हैं, आगे वाला सोने का होता है, और पीछे वाला चांदी का होता है, इसीको महिमा कहते हैं, सोने वाले कटोरे की सादश्यता आदित्य के साथ है, क्योंकि हिरययगर्भ प्रजापति का प्रतिनिधि आदित्य है, जो दिन के नाम करके प्रसिद्ध है, घोड़े के पीछं का हिस्सा जिसके सामने चांदी का कटोरा रक्खा जाता है उसकी सादश्यता रात्रि बानी चंद्रमा से दी गई है, पहिले महिमा के उत्पत्ति का स्थान पूर्व का समृद्र है, वह जगह जहां सुवर्णा का कटोरा रक्सा है उसी को पूर्व का समुद्र माना है, क्योंकि वह कटोरा पूर्व के तरफ रक्खा जाता है, झीर सूर्य भी पूर्व की तरफ से निकलता है, घोड़े के पीछे का कटोरारूपी महिमा का स्थान पश्चिम का समुद्र माना है, क्योंकि यज्ञिय घोडे का पिछका भाग पश्चिम तरफ होता है जहां कटोरा रक्खा गया है, वह जगह दूसरे कटोरारूपी महिमा की जगह है, जो समुद्र माना गया है क्योंकि चंद्रमा पश्चिम दिशा में निकलता है. कटोरों का नाम महिमा रखने का कारण यह है कि ऐसा गौरव को पाया हक्या घोड़ा क्यार घोड़ों से काति श्रेष्ठ होता है, जिस घोड़े पर देवता सवार होते हैं उसका नाम हय है, जिस घोड़े पर गंधर्व सवार होते हैं उसका नाम वाजी है, जिसपर झसूर सवार होते हैं उसका नाम आर्वा है, अरीर जिस पर मनुष्य सवार होते हैं उसका नाम अप्रव है, झीर जो घोड़े के रहने झीर उत्पत्ति की जगह समुद्र कहा है उस से यह प्रकट किया गया है कि सब के उत्पत्ति का कारणा जलही है. यानी जल ही करके सबकी सृष्टि होती है, सो जल हिरययगर्भ से उत्पन्न हुआ है, इसी कारण उसकी श्रेष्ठता है ॥ २ ॥

इति प्रथमं ब्राह्मण्म् ॥ १ ॥

श्रथ द्वितीयं बाह्मण्म् । मन्त्रः १

नैवेह किंचनाम आसीन्मृत्युनैवेदमाष्ट्रतमासीत् अश्नायया-शनायाहि मृत्युस्तन्मनोकुरुतात्मन्वी स्यामिति सोर्चम्रचरत्तस्यार्चत आपोजायन्तार्चते वे मे कमभूदिति तदेवार्कस्यार्कत्वं कं इ वा अस्मै भवति य एवमेतदर्कस्यार्कत्वं वेद् ॥

पदच्छेदः ।

न, एव, इह, किंचन, अप्रे, आसीत्, मृत्युना, एव, इदम्, आवृतम्, आसीत्, अशनायवा, अशनाया, हि, मृत्युः, तत्, मनः, अकुरुत, आत्मन्वी, स्वाम्, इति, सः, अर्चन्, अपरत्, तस्य, अर्चतः, आपः, अजायन्त, अर्चते, वै, मे,कम्, अभृत्, इति, तत्, एव, अर्कस्य, अर्कत्वम्, कम्, ह, वा, अस्मै, भवति, यः, एवम्, एतत्, अर्कस्य, अर्कत्वम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अत्वयः प्रवार्थः

अप्रे=सृष्टि के पहिले इह=यहां किंचन एव=कुछ भी न=नहीं **ग्रा**सीत्=था इदम्=यह ब्रह्मांड **अशनायया**=बुभुक्षारूप मृत्युना=मृत्यु यानी हिरण्यगर्भ ईश्वर करके पच=ही आवृतम्=घाष्टत था हि=क्योंकि **श्रशनाया=**नुभुक्षारूपी मृत्युः मृत्युद्दी यानी हिरण्यगर्भ + इति=ऐसी + ऐच्छुत=इच्छा करता भया कि + अहम्=भें आत्मन्वी=मनवाला स्याम्=होऊं तत्=तिसके पीछे सः≔वह मनः≔मनको **ब्रकुरुत=**डस्पन करता भया सः=फिरं वही हिरययगर्भ श्चर्चन्=ध्यान करते हुये अखरत्=प्रकृति के परमाणु को

संचावन करता भया

पदार्थाः + तदा=तब तस्य=तिस श्चर्चतः=ध्यानकरनेवाले हिर्ग्य-गर्भ से द्यापः=जब अजायन्त=उत्पन्न होता भया + तद्ा≔तव + सः=बह हिरययगर्भ इति=एंसा + श्रमन्यत=मानता भया कि कम्=जलादि मे=मुक श्चर्यते=तपरूप विचार करनेवाले के जिये ही अभूत्=उत्पन्न हुआ है यानी मेरे रहन का स्थान हुन्ना है तत् एव=वही अर्कस्य=पूजनीय देव हिरयगर्भ ईश्वर का पतत्=यह श्रकत्वम्=श्रकत्व यानी ईश्वरत्व है अथवा स्वभाव है यः=जो एवम्=इस प्रकार अर्कस्य=हिरएगगर्भ ईरवर के श्चर्कत्वम्=ईरवरत्व को वा=भौर

भ्राध्याय १ नाहासा २

क्रम्=जळ को वेद=जानता है ग्रासी=उसके विवे

ह=घवश्य खे⇒घभीष्ट भवति=फल को सिद्धि होती है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इस वक्ष्यमारा सृष्टिकम के पहिले कुछ भी नहीं था, थह विश्व बुभुक्षारूष मृत्यु यानी हिरएयगर्भ ईरचर करके आवृत थाः पहिले कुछ नहीं था यह जो कहा गया है इससे मतलव यह है कि जो इस काल में नाम रूप करके जगत् दृश्यमान होरहा है वह ऐसी सुरत में नहीं था, परंतु प्रजय होने पर प्रकृति के कार्य परमागुरूप में झीर जीव ब्राइष्टरूप में स्थित थे, तिन्हीं को हिरगयगर्भ ईप्लबर ध्यान्ह्यादित किये था, यानी उनमें व्याप्त था, ऐसे होते संते हिरययमर्भ ईश्वर ने इच्छा की कि मैं मनवाला होऊं, तब उसी क्षणा मनवाला हुआ, और मन को उत्पन्न किया, और उसके आश्रित हुये प्रकृति के परमाण आदि में संवाजन शक्ति उत्पन्न होशाई, तिसके पीछे तिस क्मरमा करनेवाले हिरएयगर्भ ईश्वर में परिश्रम के कारमा उद्याता होक्साई जो उस यहिय काश्वरूप हिरएयगर्भ की क्राग्न के तुल्य हैं, तिस अध्याता से अल उत्पन्न होस्राया, तब हिरएयगर्भ ईरवर ने समझा कि मुक्त विचार करनेवाले के लिये जल आदि उत्पन्न हुये हैं. जो मेरे रहने की जगह है, यही उस परम पूजनीय ईरवर की ईरवरता है. जो उपासक इस प्रकार हिर्ययार्भ ईश्वर की ईश्वरता की स्नीर जल के जलत्व को जानसा है वह अपने असीष्ट फ़ल को प्राप्त होता है।। १।।

मन्त्रः २

आपो ता अर्कस्तधदपां शर आसीत्तत्समहत्यत सा पृथिव्य-भवत्तत्तस्यायश्राम्यत्तस्य शान्तस्य तमस्य तेजोरसो निरवर्तताग्निः॥

.पदच्छेदः ।

आपः, वा, अर्कः, तत्, यत्, आपाम्, शरः, आसीत्, तत्,

समहन्यत, सा, पृथिवी, अभवत्, तत्, तस्याम्, अश्राम्यत्, तस्य, श्रान्तस्य, तप्तस्य, तेजोरसः, निरवर्त्तत, अग्निः॥

धन्ययः श्चर्कः=श्रकेही चै=निश्चय करके श्चापः≃जस है तत्≕वह यत्≕जो श्रपाम्=जब का शरः⇒फेन + द्धाः=दही के + मग्डम्=मांदकी + इव=तरह श्रासीत्=उत्पन हुमा तत्=वही समहन्यत=तेज करके कठोर होता + पुनः=फिर सा=वही

प्रथिवी=प्रधी

पदार्थाः

आन्वयः

पदार्थाः

अभवत्=होतीभई यानी संदे के

साकार में दिखाई ही

तस्याम्=तिस पृथ्वी के

+ उत्पादितायाम्

+हिरण्यगर्भः=हिरचयगर्भ ईरवर

अभाम्यत्=भीमत होताभया

भान्तस्य=तिस भीमत हुवे

तसस्य=केववुकः

तस्य=उस हिरचयगर्भ ईरवर के

+ शरीरात्=शरीर से

तेजोरसः=तेजरस

शन्तः=धन्न

[निक्वता भया यानी

भावार्थ।

निरवर्तत=

हे सौम्य! अर्कही जल है, अर्क को सूर्य भी कहते हैं, और अभिन भी कहते हैं, सृष्टिकम में जल के बाद अभिन होता भया, चूंकि कारण कार्य में भेद नहीं होता है, इसिलये यहां अभिन और जल की एकता है, जल में चलन होने के कारण फेन या माग उठ आया, वह दही की तरह जम गया, वही फिर अभिन की उष्णाता पाकर कठोर होकर पृथ्वी होगई, वह पृथ्वी अंडे के आकार में दिखलाई पढ़ी, इस पृथ्वी के उत्पन्न होने पर हिरययगर्भ ईरवर जिसका दूसरा नाम विराट

झौर प्रजापित भी है श्रमित होता भया, तिस श्रमित खेदयुक्त हिरययगर्भ ईश्वर के शरीर से तेजरस झिनि उत्पन्न होता भया, यानी उस झंडे के भीतर प्रथम शरीर का रखनेवाला हिरययगर्भ हुझा॥२॥

मन्त्रः ३

स त्रेघात्मानं व्यकुरुतादित्यं तृतीयं वायुं तृतीयं स एष प्राणक्षेत्रा विहितः तस्य प्राची दिक् शिरोऽसौ चासौ चेभौ अथास्य प्रतीची दिक् पुद्रमसौ चासौ च सक्ष्य्यो दक्षिणा चोदीची च पार्श्वे चौः पृष्ठमन्तिरिक्षमुद्रस्थिमुरः स एषोऽप्सु प्रतिष्ठितो यत्र क चैति तदेव प्रतितिष्ठत्येवं विद्वान् ॥

पद्रब्देदः।

सः, त्रेघा, आत्मानम्, व्यक्त्रह्त, आदित्यम्, मृतीयम्, वायुम्,
मृतीयम्, सः, एषः, प्रायाः, त्रेघा, विहितः, तस्य, प्राची, दिक्,
शिरः, असौ, च, असौ, च, ईमौं, अथ, अस्य, प्रतीची, दिक्,
पुद्धम्, असौ, च, असौ, च, सक्थ्यौ, दक्षिया, च, उदीची, च, पाश्वें,
शोः, पृष्ठम्, अन्तरिक्षम्, उदरम्, इयम्, उरः, सः, एषः, अध्यु,
प्रतिष्ठितः, यत्र, क, च, पति, तत्, एव, प्रतितिष्ठति, एवम्, विद्वान् ॥

अन्वयः प्रदार्थाः अन्वयः प्रदार्थाः
सः=यह विराद् + अकुरुत=करता भवा
विधा=तीन
व्यकुरुत=भागों में विभाग करता
भवा
+ कथम्=केसे तीन प्रकार किया
सो कहते हैं
आदित्यम् | ध्रवावा अगिन वायु भारमानम् | द्रवावा वायु और
आरमानम् | द्रवावा वायु और
आरमानम् | द्रवावा वायु और
आरमानम् | द्रविष्ठ अगिन को

वृतीयम् । तीसरी स्वरूप

+ शकुरुत=करता भया सक्ट्यी=जंबा है सः≕सोई च=धौर एषः=यह उदान्त्री=शत्तर दिशा मागाः=सर्वभूतांतःस्थ विराट् त्रधा=मिन वायु सूर्य करके पार्श्वे=उसकी बगर्से हैं तीन प्रकार का द्योः=स्वर्ग विहितः=विभाग किया हम्रा है पृंछम्=पीठ **है** र्यन्तरिक्षम्=प्राकाश तस्य } = ऐसे तिस घोड़े का उव्रम्=पेट है शिर:≕शिर इयम्=यह प्रथ्वी प्राचीदिक=पूर्वदिशा है उरः≔हृदय है श्रसौ=यह यानी ईशानी दिशा सः=वही च≕थीर एषः=यह प्रजापति रूप असी=यह यानी आग्नेयी दिशा चारवसेधारिन ईमी-बाहु हैं द्यप्तू=जनं में श्राथ=श्रीर प्रतिष्रितः=स्थित है श्रस्यं≕उसका यत्र=जहां प्रतीचो=पश्चिम कच=कहीं दिक=दिशा एवम्=ऐसा पुरुम्=पिछ्वा माग है विद्वान्=शाता असौ=वायु दिशा पति=जाता है च=श्रीर तदेव=वहां असो=नैर्श्वति दिशा प्रतितिष्ठति=प्रतिश पाता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! वह विराट् अपने को तीन भागों में विभाग करता भया, कैसे उसने तीन भागों में विभाग किया सो कहते हैं, तुम सावधान होकर सुनो, अलावा वांगु और अन्ति के उसने सूर्य को अपना तीसरा स्वरूप रचा, इसी प्रकार आलावा अन्ति और सूर्य के वायु को अपना तीसरा स्वरूप रचा, तिसही आलावा वागु और सूर्य के अन्ति को अपना तीसरा स्वरूप रचा, सोई यह सर्वभूतांतःस्व विराट् अन्ति बायु सूर्य करके तीन प्रकार का विभाग किया हुआ आरवमेश आहिन में आरोपित किया हुआ घोड़ा है, यानी ऐसी जो आरवमेश आहिन है वही मानो एक घोड़ा है, उसका शिर पूर्व दिशा है, उसके बाहु ईशानी और आग्नेयी दिशा हैं, उसका पिछला भाग पश्चिम दिशा है, उसके दोनों जांच वायु दिशा और नैर्मूति दिशा हैं, उसकी बगलें दक्षिण और उत्तर दिशा हैं, उसकी पीठ स्वर्ग हैं, उसका पेट आकाश है, उसका हृदय पृथिवी हैं, सोई यह प्रजापतिरूप अश्वमेध अग्नि जल में स्थित है, ऐसा उपासक जहां कहीं जाता है वहां प्रतिष्ठा को प्राप्त होताहै।। ३।।

मन्त्रः ४

सोऽकामयत द्वितीयो म आत्मा जायेतेति स मनसा वाचं मिथुनं समभवदशनाया मृत्युस्तचद्रेत आसीत्स संवत्सरोऽभवत् न इ पुरा ततः संवत्सर आस तमेतावन्तं कालमविभः यावान्संवत्सरस्तमेतावतः कालस्य परस्तादस्रजत तं जातमभिन्याददात्स भागकरोत्सैव वागभवत् ॥

पदच्छेदः ।

सः, श्रकामयत, द्वितीयः, मे, श्रात्मा, जायेत, इति, सः, मनसा, वाचम, मिश्रुनम, समभवत्, श्रश्नाया, मृत्युः, तत्, यत्, रेतः, श्रासीत्, सः, संवत्सरः, श्रभवत्, न, ह, पुरा, ततः, संवत्सरः, श्रास, तम्, एतावन्तम्, काजम्, श्रविभः, यावान्, संवत्सरः, तम्, एतावतः, काजस्य, परस्तात, श्रस्जत, तम्, जातम्, श्रभिन्याददात्, सः, भागा, श्रकरोत्, सा, एव, वाक्, श्रभवत्।।

ग्रस्य यः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

सः≔वह झशनाया=भूवरूप मृत्युः=एत्यु झकामधत=इच्छा करता भवा कि मे⇒मेरा द्वितीयः=दूसरा स्रास्मा=शरीर जायेत=हो

इति=इसविये याचान्=जितने संबत्सर:=संबत्सर सः=वह प्रजापति सृत्यु ने + प्रसिदः=प्रसिद्ध है मनसा=मनके पतावतः=इस + सह=साथ कालस्य=कालके परस्तात्=पीके करता भया + पुनः≕िकर तन्न=तिस वाणी और मनके संबन्ध में यत्=जो सः=वह रेतः=ज्ञानरूप बीज + मृत्युः=मृत्यु आसीत्=था तम्=उस सः=वही जातम्=उत्पन हुवे कुमार के संवत्सर:=संवत्सर कासकप + असुम्=लाने के जिये + प्रजापतिः=प्रजापति श्रभिब्या- }=मुख खोखता भया द्दात् } अभवत्=होता भया · ततः=तिससे तदा=तब पुरा=पहिले सः=वह कुमार संवत्सरः=काब + भीतः=डरता स=न + सन्=हुमा ग्रास ह=धा भाग्य्=भाग् तम्=उस गर्भ विषे श्रायेहुये + इति=ऐसा शब्द प्रजापति को अकरोत्=करता भवा प्तावन्तम्=इतने सा प्य=वही भाग् कालम्=कालपर्यन्त वाक्=वाक् + मृत्युः= सत्यु श्रभवत्=होता भया अविभः=वारण करता भया

भावार्थ ।

हे सौंन्य ! जब उस भूखरूप मृत्यु ने इच्छा किया कि मेरा दूसरा शरीर उत्पन्न हो तब उसने वाणी को मनके साथ संयोजित किया, तिस मन और वागी के मेल से ज्ञानरूपी वीर्य जो शरीर की उत्पत्ति का कारण था सोई संवत्सर कालरूप प्रजापित होता भया, तिसकी उत्पत्ति के पहिले काल नहीं था, हे सौम्य ! उस गर्भ में झाये हुये प्रजापित को उतने कालतक मृत्यु धारण करता रहा जितने काल तक करूप होता है, तिस कालके पीछे वह अपने की ही झंडे में से दूसरे स्वरूप में उत्पन्न करता भया, तिस उत्पन्न किये हुये हुमार को वह मृत्यु खाने के लिये दौड़ा, तब वह डरा हुआ छुमार " भाण् " ऐसा शब्द करता भया, फिर वही शब्द भाग् वाणी होती भई, जो आजतक विख्यात है, यानी बोली जाती है। । ४।।

मन्त्रः ५

स ऐसत यदि वा इममिभमंस्ये कनीयोनं करिष्यइति स तया वाचा तेनात्मनेदं सर्वमछजत यदिदं किंचर्चो यजूषि सामानि छन्दांसि यज्ञान् प्रजाः पशुन् स यद्यदेवाछजत तत्तद्रजुमिश्रयत सर्वे वा अत्तीति तद्दितेरदितित्वं सर्वस्येतस्याचा भवति सर्वमस्यानं भवति य एवमेतद्दितेरदितित्वं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सः, ऐक्षत, यदि, वा, इमम्, अभिमंस्ये, कनीयः, अभम्, करिच्ये, इति, सः, तया, वाचा, तेन, आत्मना, इदम्, सर्वम्, असुजत, यत्, इदम्, किंच, भृचः, यजूंषि, सामानि, छन्दांसि, यज्ञान्, प्रजाः, पशृच्, सः, यत्, यत्, एव, असुजत, तत्, तत्, अजुम्, अधियत, सर्वम्, वा, अति, इति, तत्, अदितेः, अदितित्वम्, सर्वस्य, एतस्य, अचा, भवति, सर्वम्, अस्य, अभम्, भवति, यः, एवम्, एतत्, अदितेः, अदितित्वम्, वेद ॥

श्रान्वयः पदार्थाः श्रान्वयः पदार्थाः सः=वह रुत्यु + दृष्ट्या=देवकर तम्=वस भवनीत कुमार को देस्त=विचार करता मया कि

थदि = भगर + बुभुक्षया=साने के स्यास से इमम्≔इस कुमार को श्रभिमंस्ये=मारूं तो कतीयः=थोडा अश्रम्=भाहार करिष्ये=मिलेगा इति=इसंबिये सः=वह सृश्य त्रया=उस घाचा=वाणी च=धौर तेन=उस ·श्रारमना=मन करके यत्≕जो किच=कुछ इद्म्च्यह दश्यमान द्रव्य्=नद्यायह है सर्वम्=उस सबको श्चासुज्ञतः=उत्पन्न करता भया पुनः≔िकर भ्रमुः=ऋग्वेद य जूंचि=यजुर्वेद सामानि=सामवेद छन्दांसि=गायश्यादि छन्दों को यज्ञान्ज्यकों को प्रजाः=प्रजामों को पश्चन्=पशुक्षों को + श्रञ्जात=हरपच करता भया सः व्हापति यत्=त्रिस

यत्=जिसकी श्रस्जत⇒उध्पन्न करता भया तत्≔डसी तत्=डसी को अनुम्=बाने के बिये द्याध्रियत⊐इच्छा करता भया + यत्=चंकि + सृत्युः=मृत्यु वै एव=श्रवश्य सर्वम्=सबको श्रात्ति=खाता है तत्=इसिवये श्चिते:=श्चितिनामक पूर्य का अदितित्वम्=प्रदितित्व + प्रसिद्धम्=प्रसिद्ध है यः=जो पवम्=इस प्रकार श्चितिः=चिदिति के ग्रदितित्त्रम्≔षदितित्त को .घेद्ञजानता है सः≔वह सर्वस्य≃सब पतस्य=इस जगत् का श्राचा यानी भक्षण करनेवासा होता है + च≔भौर सह ह्यांड उसका भीग + हि=नवीकि + तस्य | उसका एक बारमा + सर्वजारमा=सर्वका प्रकड़ प्रकृ + श्राहमा | डोला है बारमा + सवति |

भावार्थ।

हे सौन्य ! तत्पश्चात् उस भयभीत कुमार को देखकर मृत्यु यानी प्रजापति ने विचार किया कि धागर मैं खाने के ख्याल से इस कुमार को मार डालूं तो बहुत थोड़ा सा आहार पाऊंगा, इसलिये वह मृत्यु-रूप प्रजापित वाशा धीर मन करके जो कुछ दृश्यमान यह जगत है उसको उत्पन्न करता भया, और फिर मृग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, गायत्री छंदादिकों को, यहाँ को, प्रजाझों को, पशुओं को उत्पन्न करता भया, भौर जिस जिसको उत्पन्न करता भया, उस उसको वह प्रजापति खाने की इच्छा करता भया, कारण इसका यह है कि मृत्य सबको अवश्य खा जाता है, और इसीलिये इस सत्यु का नाम श्रदिति है, क्योंकि श्रति घातु से निकला है, जिसका श्रर्थ खाना है, इस प्रकार जो मृत्यु नामक आदिति के आदितित्व की जानता है यानी यह सममता है कि नाम रूपवाकी चीजें भोग हैं खीर नाशवान हैं खीर भोगनेवाला चेतन आत्मा है वह सब जगत् का अत्ता यानी भक्षण्कर्ता होता है, क्यों कि हर एक व्यष्टिरूप पृथक पृथक् आत्मा उसका समष्टिरूप एक आत्मा होता है, इसिजिये जिस जिसको हर एक जीव खाते हैं वह सब इस मृत्युक्ष प्रजापति का भोग होता है।। १ ।।

मन्त्रः ६

सोऽकामयत भूयसा यक्षेन भूयो यजेयेति सोऽश्राम्यत्स तपोऽ-तप्यत तस्य भान्तस्य तप्तस्य यशोवीर्यमुदकामत् । माणा वै यशोवीर्यम् तत्प्राग्रेषुत्क्रान्तेषु शरीरं श्वियतुमिश्रयत तस्य शरीर एव मन श्रासीत् ॥ पवच्छेवः ।

सः, अकामयत्, भूयसा, बहेन, भूयः, यजेय, इति, सः, अश्रा-

म्यत्, सः, तपः, आतप्यत्, तस्य, आन्तस्य, तप्तस्य, यशः, बीर्धम्, खद्कामत्, प्रात्ताः, वै, यशः, वीर्यम्, तत्, प्रात्तेषु, खत्कान्तेषु, शरीरम्, श्वियतुम्, अधियत्, तस्य, शरीरे, एव, मनः, आसीत् ॥

पदार्थाः पदार्थाः ग्रन्वयः श्रन्वयः + च=श्रीर भूयसा=बड़े प्रयत वीर्यम्=बन यक्केन=यज्ञ विधि करके उद्ग्रामत्=उसके शरीरसे निकवता भूयः=फिर यजेय=यज्ञ करूं भया इति=ऐसी प्राणाः=प्राग्रही सः=वह प्रजापति वै=निस्संदेष्ठ श्रकामयत=रच्छा करता भया + शरीरे=इस शरीर में तदा=तब यशः=यश + लोकवत्=साधारग मनुष्य की + च=श्रीर वीर्यम्=बल है तरह सः≔वह प्रजापति + तेषु=तिस अक्षाम्यत्=थक गया प्रारोषु=प्राय के उत्क्रान्तेषु=निकल जाने पर '+ च=श्रौर तत्=प्रजापति का वह शरीर ∙सः=वह श्वयितुम् } श्रिधियत }=फ्बगया तपः अतप्यत =दुःखित होता भया + ततः=तत्पश्चात् + परन्तु=परन्तु आन्तस्य=थके हुवे तस्य=तिस प्रजापति का तप्तस्य≔क्रेशित मनः=मन तस्य=उस प्रजापति का शरीरे एव=उसी सतक शरीर में , यशः=यश यानी प्राण आसीत्=बगा था

भावार्थ।

हे सौम्य ! जब बड़े भारी यज्ञ करने की प्रजापित ने इच्छा किया तो उसके सामग्री के एकत्र करने में झौर विधान के सोचने में बहुत अप्रमित हुआा, यानी उसको परिश्रम करना पड़ा, झौर दु:स्वित भी हुआा, तत्पश्चात् उस थके हुये क्लेशित खेद को प्राप्त हुये प्रजापित के शरीर से जश झौर बल दोनों निकल गये, जशही निःसन्देह प्राया है, झौर बल इन्द्रिय है, इन्द्रियबल से मतलब कर्म इन्द्रिय, झौर झान इन्द्रिय हैं, शरीर में यही दो यानी प्राया झौर इन्द्रिय मुख्य हैं, जब ये दोनों निकल गये प्रजापित का मृतक शरीर फूल झाया, परन्तु उसका चित्त झथवा मन उसी मृतक शरीर में लगारहा ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

सोकामयत मेध्यं म इदं स्यादात्मन्त्र्यनेन स्यामिति ततोऽश्वः समभवद्यदश्वन्तन्मेध्यमभूदिति तदेवाश्वमेधस्याश्वमेधत्वम् एष हवा अश्वमेधं वेद् य एनमेवं वेद् तमनतुरुध्यैवामन्यत तं संवत्सरस्य परस्तादात्मन आलभत पश्न देवताभ्यः प्रत्यौहत् तस्मात्सर्वदेवत्यं प्रोक्षितं प्राजापत्यमालभन्त एष हवा अश्वमेधौ य एष तपित तस्य संवत्सर आत्मायमग्निरर्कस्तस्येमेलोका आत्मानस्तावेतावर्काश्वमेधौ सो पुनरेकैव देवता भवति मृत्युरेवाप पुनर्मत्युं जयित नैनं मृत्यु-रामोति मृत्युरस्याऽऽत्मा भवत्येतासां देवतानामेको भवति ॥ इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २॥

पदच्छेदः ।

सः, अकामयत, मेध्यम, मे, इदम्, स्यात, आत्मन्ती, अनेन, स्याम्, इति, ततः, अश्वः, समभवत्, यत्, अश्वत, तत्, मेध्यम्, अभूत्, इति, तत्, एवः, अश्वमेधस्य, अश्वमेधस्य, एवः, इ, षा, अश्वमेधस्य, वेद, यः, एनम्, एवम्, वेद, तम्, अननुरुध्य, एव, अमन्यत, तम्, सं-वत्सरस्य, परस्तात्, आत्मने, आलभत, पश्न्, देवताभ्यः, प्रत्योहत्, तस्मात्, सर्वदेवत्यम्, प्रोक्षितम्, प्राजापत्यम्, आलभन्ते, एषः, इ, वा, अश्वमेधः, यः, एषः, तपति, तस्य, संवत्सरः, आत्मा, अयम्, अन्नः, अर्कः, वस्य, इमे, लोकाः, आत्माः, तौ, एतौ, आकाश्वमेधौ, सा, उ,

पुनः, एका, एव, देवता, भवति, मृत्युः, एव, आप, पुवः, सृत्युम्, जवति, न, एनम्, मृत्युः, आप्रोति, मृत्युः, अस्य, आत्मा, सवति, एतासाम्, देवतानाम्, एकः, भवति ॥

द्यम्बयः पदार्थाः झम्बयः पदार्थाः सः=बद्द प्रजापति (सरवमेश्रस्य है यानी + इति=ऐसी जो पहिसे शरीरफूला श्रकामयत=इच्छा करता भया कि और अपवित्र था वहीं मे=मेरा अश्वमेधत्वम्= र्पाडे से प्रजापति के इदम्=यह शरीर प्रवेश करने से पवित्र मेध्यम्=यज्ञ के योग्य हुया इसविये उसका स्तात्=हो ्नाम धरतसेच पदा +च=श्रीर यः≕जो उपासक श्रनेन=इसी शरीर करके पवस्⇒कहे हुवे प्रकार आत्मन्वी=दूसरा शरीर वाला में अश्वमेधम्=धरदमेश हो स्याम्=होऊं वेव्≕मानता है इति=इस सोचने पर म्पः=वह यस्=जो वा ह=भवरय + ज्ञाता=सरवमेध का ज्ञाता तत्=वह अश्वत्=शरीर प्रजापति का कृत + भवति≔होता है + च=भौर ± तत्प्रवेशात्=उसी में प्रजापति के यः=जो प्रवेश करने से पवम्=इसमकार तत्≔वह शरीर प्नम्=इस प्रजापतिकृप मेध्यम्=पवित्र भ्रश्व को अभूत् इति=होगवा वेद्=जानता है ततः=तिसके पीचे एषः≔यही सः≔वह प्रजापति स्वयंही + झश्वमेश्वम्=मृत्वमेश्व को श्री **स**श्वः=योदा वेद=जानता है समवत्=होगया + पुनः≕फिर + तत् यव≔वही + सः≔वह प्रजापति अश्वमेघस्य=अश्वमेध का श्रमन्यत≔र्**ण्डा करता यथा कि**

तम्≔उस बूटे हुएे घोड़े को श्रमनुरुष्य एव=विता किसी कावट के +संबत्सरम्) _ एक वर्ष तक फिराता भामयामास 🕽 निया

+ स=भीर

संबत्सरस्य र ं बर्ष के पीछे परस्तात (

> आत्मने=अपने बिये तम्=उसी बोदे को शासभत=भग्निमें समर्पण करता

> > पश्चन्=भीर बहुतेरे पशुक्रों को

वेवताभ्यः=देवताकों के क्रिये प्रत्यीहत्=संप्रदान करता भया

+ तस्मात्=इसविये

सर्वदेवत्यम्= { सन देवताओं को सर्वदेवत्यम्= { आवाहन किया गया है जिसमें ऐसे

प्रोक्षितम्=पवित्र किये हुये आजापत्थम् । पति देवता वासे घोड़े की

+ याक्किम=इदानींका के बह-कर्ता

शालभन्ते=यह विषे संप्रदान

करते हैं मः≕नो सूर्य तपति=स्मारित होता है

एषः≔बही

ह वा=निरचय करके

अश्वमेघ:=अरवमेथ है

तस्य≔क्सी सूर्व का य्तः=पह **आत्मा**⇒शरीर संवत्सरः⇒संबत्सर है

श्रयम्≔गर् अन्तिः=अरवमेषानि ही

श्चर्कः ⇒पूर्व है

तस्य=इसी के श्चात्मानः≔धंग

इमे=ये

स्रोकाः=तीनोंस्रोक हैं तौ=प्राग्न और सूर्य एती=ये दोनों भाग्न भीर

सूर्य हैं

झर्काश्वमेधौ⇒यानी सरव सूर्व और सूर्य भरवमेश है उ=भार

पुनः≕फिर + ती=वे दोनों देवता यापी भागन भीर सूर्य

पका=मिवाकर

सा=बह पच=ही

देवता (प्रजापति देवता है सोई स्ट्रु है

+ यः≔जो उपासक

+-यबस्=इसम्रकार

+ वेद=आनता है

+ सः≔बह पुनः≔धानेवासी

मृत्युस्=स्यु को

अपजयति=जीत बेता है

एनम्=ऐसे जाता को

सृत्युः=मीत

न=नहीं

आभोति=प्राप्त होती है

+ हि=क्योंकि

सृत्युः=मत्युही

अस्य=उस जाता का
आत्मा=आत्मा

भवति=होजाता है
+ किंच=भौर
+ सः=बह ज्ञाता
पतासाम्=इन
देवतानाम्=देवताओं का
पकः=एकस्वरूप
भवति=होताहे यानी तदाकार

भावार्थ ।

हे सौन्य ! प्रजापित ने ऐसी इच्छा की कि यह मेरा मृतक शरीर यज्ञ के योग्य फिर होजाय, इसी करके मैं दूसरा शरीरवाला हो ऊं, उसके इस प्रकार सोचने पर वह जो मृतक शरीर प्रजापति का फूला था, उसमें वह प्रवेश कर गया, उसके प्रवेश करने से शरीर अवेत से सुचेत होगया, उसी शरीर विषे गया हुआ प्रजापित घोड़ा होगया, यही अध्यवमेध का अध्यवमेधत्व है, यानी जो पहिले शरीर फूला हुआ और अपवित्र था, वही पीछे को प्रजापति के प्रवेश करने से पवित्र होगया, इसिक्वये उसका नाम अश्वमेश्व पड़ा, क्योंकि प्रजापति आति श्रेष्ठ और अतिपवित्र है, जो उपासक इस प्रकार अश्वमेधरूपी प्रजा-पति को जानता है, वही अवश्य अश्वमधयझ का झाता होता है, जो इस प्रकार उस प्रजापतिरूप अव्यव को जानता है. वही अप्रवमेश यज्ञ को जानता है, यहां द्वितीय बार कहने से गुरु शिष्य को निश्चय कराता है कि वही अश्वमेधयज्ञ का ज्ञाता होता है जो भजी प्रकार ध्यश्वमेधरूप प्रजापति को जानता है, और दूसरा कोई नहीं होसकता है, पुन: वह प्रजापति ऐसी इच्छा करता भया कि जो छूटा हुआ घोड़ा है वह विना किसी रुकावट के एक वर्ष पर्यन्त चारो दिशाओं में घूमता रहे, ऐसा ही किया भी गया, जब घोड़ा वापिस काया गया तब उसने अग्नि में अपने किये समर्पण् किया, और उसके साथ बहुतेरे पशुओं को भी अन्य देवताओं के किये यानी इन्द्रियादि देवताओं के किये संप्रदान किया, इसकिये सब देवताओं का आवाहन किया गया है जिसमें ऐसे पवित्र किये हुये प्रजापति-रूप घोड़े को इदानींकाल के यहाकर्ता पुरुष भी यहा विषे संप्रदान करते हैं, हे शिष्य! जो प्रकाशमान सूर्य दिखाई देता है, वही निश्चय करके अश्वमेध है, इस सूर्य का शरीर संवरसर है, यह अश्वमेध अग्नि निश्चय करके सूर्य है, इसके आंग भूर, सुवः, स्वः, ये तीन कोक हैं, और अग्नि सूर्य है, सूर्य अश्वमेध है, श्रीर थे दोनों देवता यानी अग्नि और सूर्य दोनों मिला कर एक प्रजापति देवता है, जो उपासक इस प्रकार जानता है, वह आनेवाले एत्यु को जीत लेता है, क्योंकि ऐसे ज्ञाता के पास मृत्यु नहीं आता है, क्योंकि वह मृत्यु उस ज्ञाता का आत्मा होता है, आरे वह इस प्रकार का जानने वाला पुरुष देवतारूप होजाता है यानी प्रजापति होजाता है।। ७।।

इति द्वितीयं ब्राह्मराम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

द्वया ह पाजापत्या देवारचासुराश्च ततः कानीयसा एव देवा ज्यायसा असुरास्त एषु लोकेष्वस्पर्धन्त तेह देवा ऊचुईन्तासुरान्यज्ञ जदुगीयेनात्ययामेति ॥

पदच्छेदः।

द्वयाः, ह, प्राजापत्याः, देवाः, च, श्रासुराः, च, ततः, कानीयसाः, एव, देवाः, ज्यायसाः, असुराः, ते, एषु, लोकेषु, अस्पर्धन्त, ते, ह, देवाः, ऊचुः, हन्त, असुराच, यहे, उद्गीधन, अत्ययाम, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ह=यह कहा गया है कि इया:=दो प्रकार के थे प्राजापत्याः=अजापति के सन्तान देवा:=एक देवता श्रम्भारतं
श्रम्भारतं
ततः=दनमं से
देवाः=देवता
कानीय- } = भ्रमुरां की क्रवेक्षा कम
साः एव } के
+ च=कौर
श्रमुराः=प्रमुर
उदायसाः=देवताओं से ज्यादा थे
ते=दे दोनों
एषु=दन
सोकेषु=कोकों वा शरीरों में
श्रमुरपर्थन्त=एक दूसरे के दवाने के
क्रिये इच्छा करते भये

ह्=तत्त्रवाद्
ते व्ये
देखाः=देवता
ऊचुः=विचार करते भवे कि
हन्त=यदि सबकी अनुमति
हो तो
† यथम्=हम
यक्षे=ञ्योतिष्टोम नामक
यशे में
उद्गीथेन=उद्गीथ की सहायता
करके

प्रसुरान्=असुरों के ऊपर
अत्ययाम }=चितिक्रमच करें

भावार्थ ।

हे सौंम्य ! ऐसा सुना गया है कि प्रजापित के संतान दो प्रकार के हुये, इनमें से एक देवता थे, दूसरे असुर थे, असुर देवताओं की अपेक्षा संख्या में ज्यादा थे, आर देवता असुगें की अपेक्षा संख्या में कम थे, वे दोनों कोकों या शरीरों में एक दूसरे के दवाने के किये इच्छा करते अये, तिसके पीछे देवताओं को मालूम हुआ कि असुर हमको दवाकोंगे सब वे आपुस में एक दूसरे से कहने किंगे कि यदि सब की अनुमति हों तो ज्योतिष्ठोम नामक यज्ञ में उद्गीय की सहायता करके असुरों पर अतिक्रमण करें ॥ १ ॥

मन्त्रः २

ते ह वाचपूचुस्त्वं न उद्गायेति तथेति तेभ्यो वागुद्गायत् यो वाचि भोगस्तं देवेभ्य आगायच्यत्कल्याणं वदति तदात्मने ते विदुरनेन वैनउद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्वत्य पाप्पनाऽविध्यन्स वः स पाप्पा यदेवेदममतिरूपं वदति स इव स प्राप्ता ।।

ते, ह, वाचम्, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, बाकु, उदगायत्, यः, वाचि, भोगः, तम्, देवेभ्यः, भागायत्, यत्, कल्यासाम्, बदति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, अनेन, वै, नः, उद्गात्रा, अत्येष्यन्ति, इति, तम्, अभिद्रत्य, पाप्मना, अविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, अप्रतिरूपम्, वदति, सः, एव. सः. पाप्मा ॥ पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः श्चात्वयः

ते≔वे देवता ह=निश्चय के साथ बाचम=बाग् देवी से

ऊचु:=कहते भये कि + देखि=हे देवी !

त्वम्=तृ

नः=इमारे कल्याणार्थ

का गानकर

तथा इति=बहुत श्रद्धा इति=ऐसा

+ उक्त्वा=कहकर

वाक्=वाग् देवी

तेश्यः=उन देवताओं के कल्याय

के विचे

उदगायत्=उद्गीत का गान करती મર્જ

+ तदा=तिसके पीछे

बाचि=वाबी में

वः=जो

भोगः=पव है

तम्=इसको

+ त्रिभिः }=तीन पदमान स्तोत्र करके

देवेभ्य:=देवतीं के हित के विषे

आगायत्=वह वा**ची देवी भ**जी प्रकार गाती अहे

> + स=धीर यत=जो

कल्याग्रम्=मंगलदायक वस्त है

नः=हमारे करुपायार्थ + प्रावशिष्ट- रे_ वचे हुवे पवमान नौ उद्गाय=डद्गात बनकर उद्गीय नवस्तात्रैः र्रस्तेत्रों करके

तत्=उसको

श्चातमने=अपने हित के विषे

वदति=गाती भई

+ तदा=तव

तं≔वे प्रसुर

विदु:=जानते भये कि

द्यानेन=इस

उद्गात्रा=उद्गाता की सहायता

तः=इम जोगों के अपर

श्रत्येष्यन्ति=देवता सामम**स** करेंगे

इति=इससिये तम्=वाचीरप

श्रभिद्राय=इस उद्गाताके सामने

+स्वेम=धपने पाप्मना=पापरूप श्रम्न करके श्रविध्यन्=वेधित करते भये

यत्=जिस कारण एव=निश्चय करके सः=वही

सः=यह प्रसिद्ध एख≕निस्संदेह पाप्मा=पाप है यः=जो

सः≔बह वाणी में स्थित हका

सः≔यइ प्रसिद्ध पाप्मा≔पाप

इत्म्=इस अप्रतिरूपम्=भूट ग्रादिक को घटति=बोजता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! देवताओं ने पूर्व कहे हुये विचार को निश्चय करके वाग्देवी से कहा हे देवी! तू उद्गात्री वनकर हमारे कल्यागार्थ उद्गीथ का गायन कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसाही करूंगी, यह कहकर वाग्देवी उन देवताओं के कल्यागा के लिये गान करती भई, तिसके पीछे वाकू में जो भोग है अथवा वाक् इन्द्रियद्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उसको तीन पवमान स्तोत्रों करके देवताओं के लिये वाग्देवी भलीप्रकार गान करती भई, आरे जो मंगलदायक वस्तु वाग्गी करके प्राप्त होने योग्य है, उसको अपने लिये नो पवनमान स्तोत्रों करके गाती भई, तव असुरों को मालूम हुआ कि देवता इस उद्गाता की सहायता करके हमारे उपर आक्रमण करेंगे इसिलये इस वाग्गीरूप उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पास अस्त करके विधित कर दिया, तिसी कारगा जो वह पाप है वही यह प्रत्यक्ष पाप है, जिस करके वाग्गी अयोग्य वचनों को बोलती है।। २।।

मन्त्रः ३

श्रथ ह प्राणमूचुस्तं न उद्गायिति तथिति तेभ्यः प्राण उदगायचः प्राणे भोगस्तं देवेभ्य श्रागायचत्करयाणं जिन्नति तदात्मने ते विदु-रनेन वै न उद्गात्रात्येष्यन्तीति तमभिद्वत्य पाष्मनाविध्यन्स यः स पाष्मा यदेवेदममतिरूपं जिन्नति स एव स पाष्मा ॥

पदच्छेदः।

श्रथ, ह, प्राण्म, ऊचु:, त्वम, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, प्राणः, उदगायत्, यः, प्राणे, भोगः, तम्, देवेभ्यः, श्राणायत्, यत्, कल्याण्म्, जिन्नति, तत्, श्रात्मने, ते, विदुः श्रनेन, वे, नः, उद्गात्रा, श्रत्येष्यन्ति, इति, तम्, श्रमिद्रुत्य, पाप्मना, श्रविष्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम, श्रप्रतिरूपम्, जिन्नति, सः, एव, सः, पाप्मा।।

श्चन्वयः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके बाद प्राग्म्=घायदेव स + ते=वे देवता ऊचुः=कहते भये कि देव≔हे देव त्वम्=तृ नः=हमारे जिये उद्गाय=उद्गीथ का गानकर इति तथा≔बहुत अच्छा इति=ऐसा + उक्त्या=कहकर प्रागः=ग्रागदेव तेभ्यः=उन देवताओं के लिये उद्गायत्=उद्गान करता भया च=धौर यः≕जो प्राग्=प्राग में

भोगः=भोग है

तम्=इसको देवेभ्यः=देवताओं के लिये

उद्गायत्=वह ब्राण देवता गान

करता भवा

+ च=भीर यत्=जो

कल्याणम् = { मंगज सुगन्धी वस्तु जिञ्जति = { है श्रीर जिसको उद्गाता सूंचता है

तत्=उसको आत्मने=अपने लिये प्राणः=ब्राख देवता उद्गाता=गाता भया + तदा=तब + ते=वे असुर विदुः=जानगये कि अनेन≔इस उद्गात्रा=उद्गाता करके नः≔हमको श्रत्येष्यन्ति=देवता जीत खेंगे इति≔इसबिये तम्=उस उद्गाता के म्रभिद्धत्य=सामने जाकर तम्=उस उद्गाता को + स्वेन=अपने पाप्मना=पापचक करके

झविध्यम्=वेध करते भये यत्=िजस कारण धन्न=तिरवय करके सः=वही सः=यह प्रसिद्ध एव=िन:संदेह यादमा=पाप है यः≖जो सः≔षह प्राय में स्थित हुचा सः≔प्रसिद्ध याप्मा≔गण इयम्≔इस ब्रप्नतिक्पम्—इगेन्सी को जिझति=एंचता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे घाण्दिव से सब देवता कहने लगे कि हे देव ! तू हम लोगों के लिये उद्गाता होकर उद्गीथ का गान कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसा कहकर वह घाण्दिव उन देवताओं के लिये उद्गाता होता हो जो घाणा में भोग है यानी जो भोग घाणेन्द्रिय करके प्राप्त होता है उसको देवताओं के लिये वह घाणा देवता गान करता भया, और जो सुगंधि वस्तु घाणेन्द्रिय करके प्राप्त होने योग्य है, उसको अपने लिये वह गान करता भया, तब वे असुर जान गये कि उद्गाता की सहायता करके देवता हमको जीत लेंगे, तब वे घाण्दिव उद्गाता के सामने जाकर अपने पापरूप अस्त से वेधित कर दिया, इसलिये वह यही पाप है जिस करके घाणा इन्द्रिय दुर्गीबी को सूंपता है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

श्रय इ चक्षुरुचुस्त्वं न उद्गायित तथेति तेभ्यश्चक्षुरुदगायत् यश्चक्षुषि भोगस्तं देवेभ्य श्रागायद्यत्कल्याणं पश्यति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्वत्य पाप्मनाऽविध्यन्स यः स पाप्मा यदेवेदममतिरूपं पश्यति स एव स पाप्मा ॥

पदच्छेदः ।

अप, इ. बक्षुः, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, बक्षुः, उदगायत्, यः, चक्षुति, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्,

कल्याग्राम्, पश्यति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, आनेन, वे, नः, उद्गात्रा, आत्येद्यन्ति, इति, तम्, अभिद्रुत्य, पाप्पना, आविष्यत्, सः, यः, सः, पाप्पा, यत्, एव, इदम्, आप्रतिरूपम्, पश्यति, सः, एव, सः, पाप्पा ॥ अस्वयः पदार्थाः अस्वयः पदार्थाः

भवाः अध ह=इसके पीछे ते=वे देवता स्रश्लुः=चक्षु अभिमानी देवतासे ऊस्रुः=कहते भये कि त्वम्=त् नः=हमारे जिये

उद्ग(य=उद्गाता बनकर उद्गीथ

का गान कर तथा≔बहुत भ्रच्छा इति≕ऐसा

+ उक्त्वा=कहकर चक्षुः=चक्षु ग्रभिमानी देवता तेभ्यः=उन देवताग्रों के लिये

उद्गायत्=उद्गान करता अया च=मीर वे=नेत्र में चः=जो भोगः=भोग है तम्=उसको देवेभ्यः=वेबताकों के क्रिये* आगायत्=उद्गान करता अया + च=चीर

यत्=जो कल्याग्रम्) मंगलदायक रूपहे चौर पश्यति) जिसको वह देसता है

तत्=उसको सारमने=चपने विये +उदगायत्=गाता भवा +तदा=तव ते=वे असुर विदुः=जान गये कि अनेन=इस उद्गाजा=उद्गाता करके नः=इमारे उपर

नः=सार कपर अत्येष्यन्ति=वे देवता बाकसवा करेंगे इति=इसकिये तम्=डस उद्गाता के अभिद्वत्य=सामने जाकर + स्वेन=चपने

तम्=उसको

श्रविध्यन्=वेषते भवे

यत्=जिसी कारण

एव=निरचय करके

सः=वडी

सः=वड प्रसिद्ध

एव=निस्सन्देड

पाप्सा=पाप डै

पाप्मना=पाप श्रव से

पाप्मा=पाप है यः≔जो सः≔यह नेत्र में स्थित हुआ सः≔प्रसिद्ध पाप्मा=पाप

इदम्≔इल अप्रतिरूपम्⇒बनोग्य रूप को पश्यति=देवता है

भाषार्थ ।

हे सौन्य ! फिर वे देवता चक्रुआभिमानी देवता से कहने जो कि हे चक्रुदेव ! तू हमारे जिये उद्गाता बनकर उद्गीथ का गान कर, उसने कहा बहुत अन्छा, ऐसा कह कर चक्रुदेवता उन देवत ओं के जिये उद्गात करता भया, और फिर चक्रु करके जो भोग प्राप्त होने योग्य है उसको देवताओं के जिये उद्गान करता भया, और जो मंगजन्दायक स्वरूप है उसको अपने जिये उद्गान करता भया तब वे असुर जान गये कि उद्गाता करके देवता हमारे उपर आक्रमण करेंगे, इसजिये वे असुर उस उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पाप अस्त्र करके वेश्वत करदिया, इसजिये वह पाप यही है जिस करके चक्रुदेवता अयोग्य रूपों को देखता है।। ४।।

मन्त्रः ५

श्रथ ह श्रोत्रमूचुस्त्वं न उद्गायेति तथेति तेभ्यः श्रोत्रमुद्गायत् यः श्रोत्रे भोगस्तं देवेभ्य श्रागायद्यत्कल्याणं शृशोति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्युत्य पाप्मनाऽवि-ध्यन्स यः स पाप्मा यदेवेदममतिरूपं शृशोति स एव स पाप्मा।। पदच्छेदः।

अथ, ह, श्रोत्रम, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्राय, इति, तथा, इति, तेम्यः, श्रोत्रम्, उद्गायत्, यः, श्रोत्रे, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्, कस्याणाम्, श्र्याोति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, आनेन, वे, मः, उद्गात्रा, आत्थेष्यन्ति, इति, तम्, अभिद्धत्य, पाप्मना, अविष्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, अप्रतिरूपम्, श्र्याोति, सः, एव, सः, पाप्मा।।

श्चरवयः

पदांधीः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे + देवाः=रेवता ऊचुः=बोते कि त्वम=त्

नः=इमारे क्षिये

आत्रम् कर्ण श्रमिमानी देवता से

उद्राज्ञा=उद्गाता करके

+ ते=वे देवता

अत्येष्यानित=अतिक्रमण करेंगे

इति=इसी से

+ तम्=उसको

वै=निस्सन्देह

नः=हमारे जपर

तम्=उस श्रोत्राभिमानी

देवता के श्राभिद्रत्य=सामने जाकर

पाप्मना=पाप के श्रस्त करके

अक्टाब इति=उट्टाता बनकर उद्गीय का गान कर तथा=बहुत श्रद्धा इति≂ऐसा + उक्त्वा=कहकर श्रोत्रम्=भोत्रश्रमिमानी देवता तेभ्यः=उन दवताओं के क्षिय उदगायत्=उद्गीथ का गान करता + च=श्रीर य:≕जो श्रोत्रे=श्रोत्र इन्द्रिय में भोगः=ग्रानन्दादिक हैं तम्=उसको देवेभ्यः=देवताश्रों के लिये धागायत्=गान करता भया + च=श्रीर यत्=जो कल्यागम्) मंगलदायक वस्तुहें श्रीर श्राणोति कितसको वह सुनता है तत्=उसको श्चात्मने=अपने लिये + ग्रागायत्=गान करता भया + तदा=तव

ते=वे असुर

द्यनेन=इस

अविध्यन्=वेध कर दिया तस्मात्=इसिवये यत्=जिस कारण पच=निश्चय करके सः≔वधी सः=यह प्रसिद्ध एव=निस्सन्देह पाटमा=पाप है यः=जो सः=वह श्रोत्रमें स्थित हुआ सः=प्रसिद्ध पाप्मा=पाप इदम्=इस विदुः=जान गये कि अप्रतिरूपम्=अनुचित वाक्यको श्योति=सुनता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे कर्गाश्रमिमानी दैवतासे सब देवता बोले कि हे देवेश ! तू हमारे लिये उदाता बनकर उद्गीध का गान कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसा कहकर वह श्रोत्रअभिमानी देवता उन देव-

लाओं के लिये उद्गीध का गान करता भया, और दूसरी बार भी श्रोत्रेन्द्रिय विषे जो आनन्दादिक फल है, उसका गान देवताओं के किये करता भया, श्रीर जो मंगलादि वस्तु उससे प्राप्त होने योग्य है जसको अपने लिये गाता भया, तब असुरों को मालूम होगया कि इस उद्गाता की सहायता करके ये सब देवता हमारे ऊपर अतिक्रमण करेंगे, ऐसा सोच कर वे अपुर उस श्रोत्रश्रामिमानी देव उदाता के सामने जाकर उसकी अपने पापअख करके वेध करदिया, इसकारणा यह वहीं पाप है जिस करके वह श्रोत्रदेव श्रतुचित वाक्यको सुनताहै।। 🗴 🗈

मन्त्रः ६

श्रथ ह मन ऊचुस्त्वं न उद्घायेति तथेति तेभ्यो मन उदगायची मनसि भोगस्तं देवेभ्य श्रागायद्यत्कल्याणं सङ्कल्पयति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उदुगात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्यत्य पाप्मनाऽविध्यन्स यः स पाप्पा यदेवेदमप्रतिरूपं सङ्कल्पयति स एव स पाप्पैवम् खरुवेता देवताः पाप्पभिरुपासुजनेवमेनाः पाप्पनाविध्यन ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, मनः, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, मनः, उदगायत्, यः, मनसि, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्, कल्याराम्, संकल्पयति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, अनेन, वे, नः, बद्रात्रा, अत्येष्यन्ति, इति, तम्, अभिदुत्य, पाप्मना, अविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, अप्रतिरूपम्, संकल्पयति, सः, पव, सः, पाप्मा, एवम्, उ, खातु, एताः, देवताः, पाप्मभिः. उपासु-जन, एवम्, एनाः, पाप्मना, श्रविध्यन् ॥

श्चान्ययः

पदार्थाः अन्त्रयः

पदार्थाः

अथ इ≔इसके पींछे ने=वे देवता अनः=अब श्रीमानी देवतासे नः=हमारे विषे

ऊचः=कहते मये कि

उद्गाय=उद्गाता बन करके उद्गीथ का गान कर तथा इति=बहुत भव्हा इति=ऐसा + उक्त्वा=क्हकर मनः=मन मभिमानी देवता तेश्यः=डन देवताचीं के विये उद्गायत=गान करता भया + च=श्रीर यः=जो ग्रनक्षि=मनमें भोग:=म्रानंदादिक फल'है तम्=उसको देखेश्यः=देवताश्रीं के लिये श्रागायत्=गान करता भया + च=श्रीर यत्=जो कल्याणम्=मंगलदायक वस्त् है धौर जिसको वह संकल्पयति=संकल्प करता है तत्=उसको आत्मने=अपने विये + आगायत्=गान करता भवा तदा=तव ते=वे असुर बिदुः=जानगये कि बै=श्रवस्य ही श्रनेन=इस उद्गात्रा=मनोदेव उद्गाता की सहायता करके झ:=हमारे अपर श्रत्येष्यन्ति=देवता श्रतिक्रमश करेंगे

इति=इसिवये + ते≔वे असुर तम्=उस मनोदेव उद्गाताके श्रभिद्रत्य=सामने जाकर तम्=उसको पाटमना=पाप श्रम करके द्यविध्यन्=वेध करते भये · यत्=जिसी कारण प्रच=निश्चय काके सः=वही सः=यह प्रसिद्ध ष्य=निस्सन्देष्ट षाप्मा=पाप है यः=जो सः=वह मन में स्थित हुआ स≔प्रसिद्ध षाप्मा=पाप इद्म्=इस श्रप्रतिरूपम्=श्रयोग्य वस्तुको सङ्कल्पयति=संकर्प करता है उ≔इसी प्रकार खलु≕निश्चय करके पताः≔इन वानी देवताः=वचामादि इन्द्रियामि-मानी देवताश्रोंको भी पाष्मभिः=पाप करके ते=वे असुर . अविध्यन्=वेध करते भवे , एवम्=इसीपकार एताः=इन त्वचादि देवताश्रीको चाप्मभिः=पापी करके उपास्जन्द्रसंसर्ग करते भये

भावार्थ ।

हे सीम्य ! तदनन्तर वे सब देवता मनोदेव से कहते भये कि हे मन ! तू उद्गाता बनकर हमारे जिथे उद्गीध का गान कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसाही करूंगा, और फिर वह मनोदेव उन देवताओं के जिये गान करता भया, और मन विषे जो आनन्दादि फल है, उसको देवताओं के जिये मन देवता तीन पवमान स्तेत्रों करके गान करता भया, और जो जो उसमें मंगलदायक वस्तु है, उसको नव पवमान स्तेत्रों करके अपने जिये गाता भया, तब अधुरों ने देखा कि वे सब देवता इस मनोदेव उद्गाता की सहायता करके हमारे उपर आक्रमण करेंगे, इसजिये वह अधुर उस मनोदेव उद्गाता के सामने आकर उसको अपने पापअछ करके वेधित करते भये, इसजिये वही यह पाप है जिस करके वह मनोदेव इस अयोग्य वस्तुको संकरूप करता है, यानी अयोग्य वस्तु की इच्छा करता है, और इसी प्रकार त्या आदि इन्द्रियाभिमानी देवताओं को भी अपने पाप करके वे अधुर वेधते भये ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

श्रथ हेममासन्यं प्राण्यमुचुस्त्वं न उद्गायिति तथेति तेभ्य एष प्राण उदगायचे विदुरनेन वे न उद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तदमिद्वत्य पाप्यनाऽविन्यत्सन्स यथाऽशंमानमृत्वा लोष्टो विध्वंसेतैवं हैव विध्वंसमाना विष्वंचो विनेशुस्ततो देवा श्रभवन्पराऽसुरा भवत्या-त्यना पराऽस्य द्विषन्श्रातृत्यो भवति यः एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, इमम्, आसन्यम्, प्राग्तम्, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, एषः, प्राग्तः, उदगायत्, ते, विदुः, अनेन, वे, नः, उद्गात्रा, अत्येष्यन्ति, इति, तत्, अभिदुत्य, पाप्मना, अविन्यत्सन्, सः, यथा, अश्मानम्, भृत्वा, लोष्टः, विश्वं- सेत, एवम्, ह, एव, विश्वंसमानाः, विष्वंचः, विनेशुः, ततः, देवाः, द्याभवन्, परा, द्याराः, भवति, द्यारमना, परा, द्यास्य, द्विपन, भातृत्यः, भवति, यः, एवम्, वेद् ॥

द्यस्वयः

पदार्थाः भन्ययः

पदार्थाः

श्रध ह=हलके पाये

+ ते=वे देवबा

हमम्=हल

श्रासन्यम्=मृख्य

प्रात्मम्=प्राया से

कच्च:=कहते भवे कि

त्वम्=त्

तः=हमारे क्ल्यायार्थ

उद्गाय=बद्गात बनकर बद्गीय

का गान कर

तथा हति=यहुत स्रव्हा

हति=यहुत स्रव्हा

हति=यहुत स्रव्हा

प्राः=यहा

ष्यः=यह। प्राग्यः=मुख्य प्राच - तेश्यः=उन देवताक्षों के ासवे उद्गायत्⇒गान करता भया + तद्ा⇒तव

ते≔वे चसुर - चितुः≔जानते भये कि चनेन=इस उद्घात्रा=प्राबदेव उद्गाता की सहायता करके

नः≔हमारे कपर वै=भवरयही

सत्येष्यन्ति≔सति क्रमणकरेंगे इति=इसक्षिये तत्=डस प्राखदेव उद्वाता के झभिद्रुत्य=सामने आकर + स्वेन=सपने

पाद्मता≔पाप श्रम्भ करके + तम्=इसकी

अविव्यत्सन्=वेषने की इण्डा करते अवे

> + तदा=तब यथा=जैसे सः=यह

स्रोष्टः=मही का देखा ग्रश्मानम्=पत्थर पर ग्रमुत्वाः=गिरकर विध्वंसेत=नष्ट होजाता है एवम् ह एव=तिसीप्रकार

+ श्रसुराः=मसुर विष्यंचः=इषर उषर भागते

हुवे विध्वंसमानाः=१षद् एषक् होकर विनेग्रः=नष्ट होते भवे ततः=तिसी कारख + ते=वे

∓ त=प देवताः=देवता

प्रश्निक्षे की तरह अभवन्= प्रकारामान होते भवे यानी जीतते भवे

+ किंच=घीर

श्चसुराः=त्रसुर परा=परास्त श्रमवन्=होते भये यः=जो उपासक एवम्=ऐसा वेद=जानता है

श्वस्य=उसका द्विपत्=द्वेष करनेवाला भ्रात्च्यः=शत्रु श्रात्मना=उस प्रजापति करके जो उसका स्वरूप होगयाहै परा भवति=नष्ट होजाता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तदनन्तर वे सब देवता मुख्य प्राग् से कहने लगे कि हे प्राग्ध ! त् हमारे कल्यागार्थ उद्गाता बनकर उद्गीथ का गानकर, उसने कहा बहुत अन्छा, ऐसा कहकर वह मुख्य प्राग्ध देवताओं के लिये उद्गीथ का गान करता भया, तब वे अमुर जान गये कि इस् प्राग्धदेव उद्गाता की सहायता करके यह सब देवता हमारे उत्पर अवश्य अतिक्रमगा करेंगे, इसलिये उस प्राग्धदेव उद्गाता के सामने जाकर अमुर उत्को वेधने की इच्छा करते भये, तब जेंसे मिट्टी का ढेला पत्थर पर गिरने से चूर चूर होकर इधर उधर छितर बितर होजाता है, उसी प्रकार अमुर इधर उधर मागते हुये पृथक् पृथक् होकर नष्ट होगये, यानी ऐसे भागे कि उनका पता न लगा, तिस कारगा सब देवता पहिले जैसे जैसे प्रकाशमान थे वैसे ही प्रकाशमान होते भये, यानी अमुरों के उपर विजयी हुये, और अमुर परास्त होगये, हे सौम्य ! को उपासक इस प्रकार जानता है उसका देख करनेवाला शत्रु नष्ट होजाता है।। ७।।

मन्त्रः ८

ते होचुः क नु सोऽभूद्यो न इत्थमसक्वेत्ययमास्थेऽन्तरिति सो-यास्य त्राङ्गिरसोऽङ्गानां हि रसः ॥

पदच्छेदः ।

ते, ह, ऊचु:, क, तु, सः, अमृत्, यः, नः, इत्थम्, असकः, इति, अयम, आस्त्रे, अतः, इति, सः, अयास्यः, आङ्गरसः, अङ्गानाम्, हि, रसः ॥

पदार्थाः ग्रन्थयः + तत्प्रधात्=तिस के पीछे ते=वे देवता ऊचुः ह=कहते भये कि यः=जिसने नः=हमारी इत्थम्=इसतरह श्रसक्र=साथ दिवा है सः=वह क=कहां श्रभृत्=है जु इति=इस प्रश्नपर + उत्तरम्=उत्तर मिला कि सः=वही श्रयम्=यही प्राण है य:=मो

श्रास्य श्रंतः=मृत्त के संतर
+ भवाति=रहता है
+ च=ग्रोर
हित=इसीक्षिये
सः=वह प्राण
श्रयास्यः=मृत्तले उत्पन्न हुमा
+ कथ्यते=कहा जाता है
+ सः=वही मृत्य प्राण
श्रांगिरसः=ग्रांगिरस भी
+ कथ्यते=कहा जाता है
हि=न्याँकि
+ सः=वह

रसः=श्रात्मा है

भावार्थ ।

हे सोम्य ! ता वे देवता आपस में कहने लगे कि वह जिसने हमारी इस प्रकार रक्षा की है कहां है, इस प्रश्न के उत्तर में उनमें से किसी ने कहा कि जिस ने हमारी ऐसी रक्षा की है वही प्रारा है, वही मुख के अन्तर सदा निवास करता है, इसी िलये वह मुख्य प्रारा मुख से उत्पन्न हुआ कहा जाता है, और आङ्गिरस भी कहा जाता है, क्यों कि वह आंगों का आहमा है ॥ = ॥

मन्त्रः ६

सा वा एषा देवताद्नीम द्र १ हास्या मृत्युर्द्र १ ह वा अस्मा-न्मृत्युर्भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सा, वा, एवा, देवता, दूः, नाम, दूरम्, हि, ऋस्याः, मृत्युः, दूरम्, ह, वा, ऋस्मात्, मृत्युः, भवति, यः, एवम्, वेद !} भन्वयः पदार्थाः । भन्वयः

पदाथाः

स्ता=वही वा=निरचय करके एषा=यह

देवता=देवता दूः=दूर

नाम≔नाम करके प्रसिद्ध है हि=क्योंकि श्रस्याः=इसप्राग्यदेवताकेपाससे

मृत्युः=पापसंसष्ट मृत्यु

दूरम्≔दूर रहता है यः=जो उपासक यवम्=इस तरह चेद्=जानता है प्रस्मात=उस उपासक

श्चस्मात्=उस उपासक से ह वा=श्चवरय

मृत्युः=गापरूप मृत्यु दूरम्=दूर

भवति=रहता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! यह मुख्य प्राग्णदेव "दृर्" नाम करके भी प्रसिद्ध है, क्योंकि इस प्राग्णदेवता के पास से पापसंसृष्ट मृत्यु दृर रहता है, जो उपासक इस तरह से जानता है, उस उपासक से भी पापरूप मृत्यु अवस्य दूर रहता है ॥ १ ॥

मन्त्रः १०

सा वा एषा देवतैतासां देवतानां पाप्मानं मृत्युमपहत्य यत्रा-ऽऽसां दिशामंतस्तद्गमयाञ्चकार तदासां पाप्मनो विन्यद्धात्तस्मान्न जनमियात्रान्तिमयान्नेतपाप्मामं मृत्युमन्वत्रयानीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, वा, एषा, देवता, एतासाम्, देवतानाम्, पाप्मानम्, मृत्युम्, अपहत्य, यत्र, आसाम्, दिशाम्, अंतः, तत्, गमयाश्वकार, तत्, आसाम्, पाप्मनः, विन्यद्धात्, तस्मात्, न, जनम्, इयात्, न, अन्तम्, इयात्, नेत्, पाप्मानम्, मृत्युम्, अन्ववयानि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

सा वै=वही प्रचा देवता=यह प्रायदेवता प्रतासाम्=श्व देवतानाम्=वागदि हन्द्रियों के

पाप्मानम्=पापरूप मृत्युम्=मृत्युको अपदृत्य=द्यीन करके + तत्=वर्दो गमयाञ्चकार=केगया इयात्=जाय +च=भीर यत्र=जहां अन्तम्=उस दिशा के पंत श्वासाम्=१न दिशाम्=दिशायों का को भी अन्तः=अन्त है यानी भारत-वर्ष देशका भनत है इयात्=गाय + च=भौर + च=श्रीर तत्=वहांही इति≕ऐसा श्चासाम्=इन देवताश्ची के नेत्=डर रहै कि + यंदि=भगर पाप्मनः=पापां को विन्यद्धात्=स्थावित कर दिया +जगम=मैं गया तो तस्मात्=इसन्निथे पाप्मानम्=पापरूप + तत्≔वहांके मृत्युम्=मृत्यु को जनम्=कोगों के पास कोई अन्ववयानि=प्राप्तद्वंगा स=न

भावार्थ ।

हे सौन्य ! वह प्रायादेवता इन वागादि इन्द्रियों के पापरूप मृत्यु को पकड़ करके वहां लेगया, जहां इन दिशाओं का अंत होता है, यानी जहां भारतवर्ष देशका अंत है, और वहांही इन देवताओं के पापों को छोड़दिया है, इसिलये वहांके लोगों के पास कोई न जावे, अभीर उस दिशाके अंत को यानी भारतवर्ष के बाहर न जावे, ऐसा डरता रहे कि अगर में भारतवर्ष के बाहर गया तो पापरूप मृत्यु को प्राप्त हो जाऊंगा ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

सा वा एषा देवतैतासां देवतानां पाप्मानं मृत्युमपहत्याथेना मृत्युमत्यवहत् ॥

पदच्छेदः।

सा, वा, एवा, देवता, एतासाम्, देवतानाम्, पाप्मानम्, मृत्युम्, अपहत्य, अथ, एनाः, मृत्युम्, अति, अवहत् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

सा चै≔वही

पवा=यह मुख्य प्राया

देवता=रेवता पतासाम्=इन

देवतानाम्=वागादि देवताश्रों के पाप्मानम्=पापरूप

मृत्युम्=मृत्यु को

श्रपहत्य=उन से छीनकर

श्रथ=श्रौर ्

मृत्युम्=सृत्युको श्राति=श्रतिक्रमण करके

एनाः=वागादि देवताश्रीको

श्रवहत्=उत्तम पदवी को प्राप्त

करता भया

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही मुख्य प्राराहेवता वागादि देवताओं के पापरूप मृत्यु को उनसे पृथक् करके और उसको पकड़कर और स्वत: मृत्यु को आक्रमरा करके उन्हीं वागादि देवताओं को उत्तम पदवी पर प्राप्त करता भया और तभी से वे निष्पाप और आमर हैं ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

स वै वाचमेव पथमामत्यवहत्सा यदा मृत्युमत्यमुच्यत सोग्नि-रभवत्सोयमग्निःपरेख मृत्युमतिक्रान्तो दीप्यते ॥

पदच्छेदः ।

सः, वै, वाचम्, एव, प्रथमाम्, श्राति, श्रवहत्, सा, यदा, मृत्युम्, श्राति, श्रामुच्यत, सः, श्रानिः, श्राभवत्, सः, श्रायम्, श्रागिः, परेशा, मृत्युम्, श्रातिकान्तः, दीष्यते ॥

अन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

सः≔बह प्रागादेव वै=निश्चय करके

+मृत्युम्=पापरूप मृत्युको +श्रतीत्य=प्रतिक्रमण कर

प्रथमाम्=सर्वो में श्रेष्ठ

वाचम्≕नासी को प्रव≕ही

अवहत्=मृत्यु से परे केगया

यदा=जब सा≔बह वाणी

मृत्युम्=मृत्युको

श्रति=त्रतिक्रमण करके अमुच्यत=स्वयंपापसे मुक्त होगई

+ तदा=तव

+ सा=वह वाणी

सःश्राग्नः=वह श्राग्न

श्रमवत्≔होगई सः≔बही श्रयम्≔यह श्राग्निः≔श्राम मृत्युम्=सृत्युको अतिकारतः=उद्यंघन करके परेग्र⇒सृत्यु से परे द्वीप्यते=दीसिमान् होरही है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! प्रागादेव पापरूप मृत्यु की अतिक्रमण करके सब देवताओं में श्रेष्ठ वागादिव को मृत्युसे बहुत दूर केगया, और जब वह वागा मृत्यु को अतिक्रमण करके पापसे मुक्त होगई, तब वह वागा अग्नि होगई, वहीं यह अग्नि मृत्यु को उत्संघन करके मृत्युसे परे दीप्तिमान होरही हैं ॥ १२॥

मन्त्रः १३

भथ इ पारामत्यवहत्स यदा मृत्युमत्यमुच्यत स वायुरभवत्सोर्य वायुः परेरा मृत्युमतिक्रान्तः पवते ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, प्राराम्, अति, अवहत्, सः, यदा, मृत्युम्, अति, अमु-च्यत, सः, वायुः, अभवत्, सः, अयम्, वायुः, परेगा, मृत्युम्, अति-क्रान्तः, पवते ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इसके पोने ह=निरचय करके + प्राणः=माणदेव प्राणम्=श्राणदेव को + सृरयुम्=पापक्ष धृस्यु से श्राति श्रवहत्=दूर केगया यदा=जब प्राणः=वह प्राणदेव

वायुः=बद्धवायु स्रमधत्=होता भवा सः=वही स्रयम्=यह वायुः=वायु मृत्युम्=सत्यु के परेणु=परे अतिकान्तः=पापसे मुक्त होता

सः≔वही

मृत्युम्=मृत्यु से स्रति समुख्यत=स्र्ट गया

+ तदा=हब

स्था

युक्त =बहता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! इसके पीछे प्राग्यदेव ब्राग्यदेव को पापरूप मृत्यु से दूर लेगया, ब्र्योर जब वह ब्राग्यदेव पापरूप मृत्यु से छूटगया, तब वही बाह्य बायु होता भया, वही यह बायु मृत्यु के परे पापसे मुक्क हो कर बहता है ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

श्रथं चक्षुरत्यवहत्तद्यदा मृत्युमत्यमुच्यत स श्रादित्योभवत्सो-सावादित्यः परेग्ण मृत्युमतिक्रान्तस्तपति ॥

पदच्छेदः ।

भ्रथ, चक्षुः, श्रत्यवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, श्रत्यग्रंज्यत, सः, भ्रादित्यः, श्रभवत्, सः, श्रसौ, श्रादित्यः, परेण्, मृत्युम, श्रति-क्रान्तः, तपति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ≔इसके पीछे + प्राणः≔पायदेव चक्षुः≔नेत्रेन्द्रिय देवको + मृत्युम्≕ष्टलु से श्रत्यवहत्≕्द्र केगया यदा=जब तत्≕वह मृत्युम्≕ष्टलुको झतिकान्तः≔षतिकमण करके

श्रत्यमुच्यत=छूट गया + तदा=तव सः=वही नेत्रस्थ प्राण् श्रादित्यः=सूर्य श्रभवत्=होता भया सः=वही श्रसौ=यह श्रादित्यः=सूर्य मृत्युम्=पृत्यु के परेण्=परे श्रादिकान्तः=श्रतिक्रमण कर्ये

श्रतिकान्तः=श्रतिक्रमण करके तपति=श्रकाशता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इसके पीछे प्राग्यदेव नेत्र इन्द्रियदेव को मृत्यु से दूर क्रेगया, श्रौर जब नेत्रदेव मृत्युको श्राविक्रमण् करके छूट गया, तब वही नेत्रदेव सूर्य होगया, वही यह सूर्य मृत्युको श्राविक्रमण् करके मृत्यु से परे प्रकाशित हो रहा हैं॥ १४॥

मन्त्रः १५

अथ इ श्रोत्रमत्यवहत्तचदा मृत्युमत्यपुच्यत ता दिशोभवंस्ता इमा दिशः परेण मृत्युमतिकान्ताः ॥

पदच्छेदः ।

श्राथ, ह, श्रोत्रम्, श्राति, श्रवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, श्राति, श्रमु-च्यत, ताः, दिशः, श्रभवन्, ताः, इमाः, दिशः, परेगा, मृत्युम, श्रातिकान्ताः ॥

श्चन्तयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इस के पींखें ह=निरवय करके प्राणः=वह प्राणदेव श्रोत्रम्=श्रोत्रेन्द्रिय को मृत्युम्=सृत्यु से श्रत्यवहत्⇒दूर बेगया यदा=जन तत्न=वह श्रोत्रदेव अञ्चम्=कर्णहिन्दय ताः=प्रसिद्ध दिशः=दिशायं अभयन्=होतीभई ताः=वही इमाः=यह दिशः=दिशायं मृत्युम्=मृत्यु के परेश्य=परे

श्चत्यमुच्यत=छूट गया + तदा=तव श्रतिकान्ताः=पापसे मुक्र होगईं

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! इसके पीछे वह प्रागादेव श्रोत्रेन्द्रिय को पापरूप मृत्यु से दूर क्षेगया, श्रोर जब वह श्रोत्रदेव मृत्यु से छूट गया, तब वही श्रोत्रइन्द्रिय दिशा होती भई, वही यह दिशाय मृत्यु से परे मुक्क होगई ।। १४ ।।

मन्त्रः १६

श्रथ मनोत्यवहत्तवदा मृत्युमत्यमुच्यत स चन्द्रमा श्रभवत्सोसी चन्द्रः परेण मृत्युमतिकान्तो भारयेवं ह वा एनमेषा देवता मृत्यु-मति वहति य एवं वेद ।।

पदच्छेदः ।

आथ, मन:, आति, आवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, आति, आमुन्यत, सः, चन्द्रमा, आभवत्, सः, आसी, चन्द्रः, परेग्ग्, मृत्युम्, आतिकान्तः, भाति, एवम्, ह, वा, एनम्, एवा, देवता, मृत्युम्, आति, वहति, यः, एवम्, वेद ॥

ग्रस्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इसके पीखे

ह=निरचय करके

प्राण्यः=चह प्राण्यदेव

मनः=मनको

मृत्युम्=मृत्यु से
श्रत्यवहत्=दूर जेगवा

यदा=जव

तत्=वह मनदेव

मृत्युम्=मृत्यु से

श्रत्यमुच्यत=इर गया

+ तदा=तव

सः=वह मन
चन्द्रमाः=चन्द्रमा

श्रमवत्=होता भया

सः≔वही

श्रसी=यह
चन्द्रः=चन्द्रमा
मृत्युम्=मृत्यु से
परेग्र्=परे
श्रतिक्रान्तः=श्रतिक्रमण करके
भाति=प्रकाशित होता है
यः=जो
एवम्=हस प्रकार
चेद्=जानता है
एनम्=उस विज्ञानी को
एषा=यह
देवता=पाख देवता

एवम् ह वा=उसी प्रकार

मृत्युम्=ग्रत्यु के श्रतिवहति=पार पहुँचाता है

भावार्थ।

हे सोम्य ! इसके पीछे वह प्रायादेव मन को मृत्यु से दूर केगया, और जब वह मनदेव मृत्यु से छूट गया तब वही मन चन्द्रमा होगया, वही यह चंद्रमा मृत्यु के परे मृत्युको अतिक्रमणा करके प्रकाशित हो रहा है, जो उपासक इस प्रकार जानता है, उसको यह प्रायादेव मृत्यु के पार वैसाही पहुँचा देता है, जैसे उसने मनादिकों को मृत्यू के पार पहुँचा दिया है ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

श्रथात्मनेन्नाचमागायचि किश्रान्नमचतेनेनैव तदचतइह प्रति-ातेष्ठाते ॥

पदच्छेदः ।

श्राथ, श्रात्मने, श्रन्नादम्, श्रागायत्, यत्, हि, किन्त, श्रन्नम्, अयते, अनेन, एव, तत्, अयते, इह, प्रतितिष्ठति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

त्राधा=तदनन्दर + प्राणः=मुख्य प्राण श्चातमने=श्रपने विषे श्रन्नाद्यम्=भोज्य श्रन्नका

श्रागायत्=गान करता भया

यत=जो किच=क्ष श्रनम्=त्रन ऋचते=खाया जाता है

तत्=वह द्यानेन=प्राया करके पव=ही.

अद्यते≕खाया जाता है

+ च=श्रीर

+ प्राणः≔वही प्राण इह=इस देह में प्रतितिष्ठति=रहता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तिस के पीछे मुख्य प्राणा अपने जिये भोज्य अन्नका गान करता भया, क्योंकि जो कुछ अन्न खाया जाता है वह प्राग्त करके ही खाया जाता है, और वही प्रांगा जीवों के देहों में रहताहै ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

ते देवा अधुवन्नेतावद्वा इद सर्वे यदनं तदात्मन आगासीरत-नोस्मित्रज्ञ आभजस्वेति ते वै माभिसंविशेति तथेति तं सयन्तं परिषयविशनत तस्माद्यदनेनान्नमित तेनैतास्तृप्यन्त्येव इवा एनं स्वा श्रभिसंविशन्ति भत्तीस्वानां श्रेष्ठः पुर एता भवत्यनादोधिपति-र्य एवं वेद य उहैवंविदं स्वेषु प्रति प्रतिर्दुभूषति न हैवालं भार्येभ्यो भवत्यथ ह य एवैतमनु भवति यो वैतमनु भायीन्बुभूशित स हैवालं भार्थेभ्यो भवति ॥

पद्च्छेदः।

ते, देवाः, अन्नुवन्, एतावन्, वा, इदम्, सर्वम्, यत्, अनम्, तत्, आत्मने, आगासीः, अनुनः, अस्मन्, अन्ने, आभजस्य, इति, ते, वे, मा, अभिसंविशत, इति, तथा, इति, तम्, समन्तम्, पि, न्यविशन्त, तस्मान्, यत्, अनेन, अनम्, अत्ति, तेन, एताः, नृप्यन्ति, एवम्, इ, वा, एनम्, स्वाः, अभिसंविशन्ति, भर्ताः, स्वानाम्, अष्ठः, पुरः, एताः, भवति, अन्नादः, अधिपितः, यः, एवम्, वेद, यः, उ, इ, एवंविदम्, स्वेषु, प्रति, प्रतिः, वुभूषति, न, इ, एव, अलम्, भार्येभ्यः, भवति, अथ, इ, यः, एव, एतम्, अनु, भवति, यः, वा, एतम्, अनु, भार्यान्, वुभूषित, सः, इ, एव, अलम्, भार्येभ्यः, भवति। अन्त्ययः पदार्थाः। अन्त्ययः पदार्थाः।

श्रम्बयः देवाः=वागादि देवता + मुक्यप्राखम् =मुख्य प्राख से अनुवन्=कहते भये कि पतावत्=इतनाही इदम्=यह अन्रम्≃श्रन है यत्=िभस तत्=उस सर्वम्=सबको आत्मने=अपने खिये ' +,त्वम्=तुम आगासी:=गान करते अये हो अनु≔भव नः=हम सबको अस्मिन्=इस स्रक्षे=मन्तर्भे

श्रामजस्य=माग खेने दो

इति=इसपर + प्राणः=मुख्य प्राण + श्राह=कहता भवा कि . + ते=वे + यूयम्=तुम सब वै=धवश्य मा=मेरे में श्रभिसंविशत=भन्नी प्रकार प्रवेश तथा=बहुत प्रच्हा इति=ऐसा + उक्त्वा=कहकर + ते=वे सब देवता तम्≃उस प्राथ के परिसमन्तम्=चारो तरफ न्यविशन्त=भन्नी प्रकार प्रवेश करते भवे

तस्मात्=इसीक्षिये

यत्=जो श्रन्नम्=सन्नको श्रानेन=प्राण करके + स्रोकः=पुरुष श्रति=बाता है तेन=उसी श्रम करके पताः=ये वागादि देवता तृप्यन्ति=तृस होते हैं (उसी प्रकार यानी ्रीसे वागादिक प्रथम ह वा=्री इन्द्रियां प्राण कें भाश्रय रहती हैं (वैसे ही पुरुष के प्रंविदम् प्रति= वाले प्रायावे प्रविद्यम् प्रति= वाले प्रायावे उपा-सक के प्रति स्वाः प्राप्ति के लोग प्रतिः=प्रतिकृत्व प्राप्ति के लोग प्रतिः=प्रतिकृत्व प्राप्ति विद्याति हो जाते हैं वुभूपति=होने की हच्छा विद्यान्ति अयगीयहोते हैं +सः=वह + च=घोर स्वाः=वह स्वानाम्=अपने ज्ञाति का भर्ता=पातक + भवति=होता है + च=घौर श्रेष्ठः=पूज्य होकर पुरः=सबके भगादी प्ताः=चलने वाला भवति=होता है + च=घोर अञ्चादः=शत्रका भोहा

अधिपतिः=अधिपति + भवति=होता है + इद्म्≔यह + फलम्=फल + तस्य=उसको + भवाति=होता है यः=जो एवम्=कहेहुये प्रकार चेद=प्राणको जानता है उ ह=भौर स्वेषु=अपने यानी उसके ज्ञातियों में से यः=जो

भरण पोषण योख भार्चेभ्यः= श्रातियों के भर-यार्थ न एव=कभी नहीं अलम्=समर्थ भवति=होता है ह एव=यह निश्चय है अथ=भौर

यः=जो कोई

ं पुरुष के

प्तम् पव=इसी प्राण्वेसा

• अनु=अनुकृत

भवति=होता है

वा=अथवा

यः=जो कोई

एतम्=ह्सीप्राण्यवित्पुरुषके
अनु=अनुकृष बरतताहुमा
भार्यान्=अरखीय पुरुषों को
सुभुविति=पालनकरनाचाहताहै

सः=वह प्रव≃धवस्य भार्येभ्यः=पातने बोग्य बोगॉ के बिये झतम्=समर्थ भवति=होता है

भावार्थ ।

तदनन्तर बागादि इन्द्रियदेवता मुख्य प्राधा से कहने लगे कि जो कुछ भोजन करने योग्य अन है उसको आपने अपने लिये गान किया है, आप हम सबको उस अन में भाग दीजिये, उस पर मुख्य प्राराने कहा कि तुम सब मेरेमें प्रवेश कर जाव, जो कुछ में खाउंगा वह सब तुमको भी मिलेगा, बहुत श्राच्छा, ऐसा कह कर वे सब देवता उस प्रारा में प्रवेश करते भये, इसिलये जो अन्न प्रारा करके खाया जाता है उसी अन करके वागादि देवता भी तम होते हैं. और जैसे वागादि इन्द्रियां प्राण् के आश्रय रहती हैं, वैसे ही उस प्राण-वित पुरुष के आश्रय उसके जाति के लोग भी रहते हैं. और वह अपने जातियों का पालन पोषगा करता है, और उनका पुज्य होकर उनके सबके अगाडी जानेवाला होता है, यानी उनको अच्छे मार्ग पर चलाता है, और वही नीरोग होकर अन का भोक्ता और अधिपति होताहै, ऐसा फल उसी पुरुषको मिजता है जो उपर कहे हुए प्रासाकी उपासना करता है. झाँर उसके ज्ञातियों में से जो कोई उसके प्रति-कुल चलने की इच्छा करता है वह भरगा पोषगा करने योग्य जातियों के भरगार्थ कभी समर्थ नहीं होता है, और जो कोई उसके अन-कुल चलने की इच्छा करता है, अथवा जो कोई उसके अनुकूल वर्त्तता है और भरगीय पुरुषको पालन करना चाहता है वह अवश्य पालन पोष्णा करने योग्य लोगों के लिये समर्थ होता है ॥ १८ ॥

मन्त्रः १६

सोयास्य आङ्गिरसोङ्गानां हि रसः गाणो वा अङ्गानां रसः शाणो हि वा अङ्गानां रसस्तस्माचस्मात्कस्माचाङ्गात्माण उत्क्रामति तदेव तच्छुष्यत्येष हि वा अङ्गानां रसः ॥

सः, श्रयास्यः, श्राह्मिरसः, श्रङ्गानाम्, हि, रसः, प्राग्यः, ना, श्रङ्गानाम्, रसः, प्राग्यः, हि, ना, श्रङ्गानाम्, रसः, तस्मात्, यस्मात्, कस्मात्, च, श्रङ्गात्, प्राग्यः, उत्कामित, तत्, एन, तत्, श्रुव्यित, एवः, हि, ना, श्रङ्गानाम्, रसः ॥

शन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः=वह हि=निश्चय करके **अयास्यः**=मुख में रहनेवासा प्राय श्राक्रिरसः=श्राक्रिरस है हि=क्योंकि सः≔वह मुख्य प्राया चा=री अङ्गानाम्=सर श्रंगों का रसः=सार है प्राणः=प्राय बा=ही अङ्गानाम्⇒ाव अंगों का रसः=सार है हि=बिस कारवा प्राणः=प्राथ

वा=ही श्रङ्गानाम्=सब शङ्गो का रसः=सार है तस्मात्=तिसी कारव यस्मात्=जिस कस्मात्=िकसी अङ्गात्≕शंगों से प्राणः=प्राण . उत्कामित=निकल जाता है तत् एव=वहां का ही तत्=वह भंग शुष्यति=सूख जाता है + तस्मात्=इसविये एषः ह=यही मुक्य प्राच ब्रङ्गामाम्⇒सव जंगों का रसः=सार है

भावार्थ।-

वह मुख्यप्राण आङ्गिरस भी है, क्योंकि वह आंगों का सार है, इसी कारण जिस आंगसे प्राण निकल जाता है वह आंग सूख जाता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

एष उ एव बृहस्पतिर्वाग् वे बृहती तस्या एष पतिस्तस्मादु बृहस्पतिः॥

एषः, उ, एव, बृहस्पतिः, बोर्क्, वै, बृहती, तस्याः, एषः, पतिः, तस्मात्, ७, वृहस्पतिः ॥

ग्रस्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

उ=श्रीर एषः एव=यही मुख्य प्राय यहस्पतिः=टहस्पति है

स्पतिः=दृहस्पति है + हि=क्योंकि वाकु=वाणी

वै=निश्चय करके बृहती=बृहती है यानी वासी

का नाम बृहती है

तस्याः=उसी वाणी का एषः=यह मुख्य प्राया पतिः=मधिपति है उ=मौर तस्मात्=तिसी कारया

+ एषः=यह प्राया बृहस्पतिः=बृहस्पति कहस्राता के

भावार्थ।

हे सोम्य ! यही मुख्य प्राग्ण बृहस्पित भी है, क्यों कि वाग्णी बृहती कहलाती है, यानी दाग्णी का नाम बृहती है, बृहती का अर्थ बड़े के है, यानी द्यापक है, क्यों कि सबकी सिद्धि वाग्णी करके होती है, इस वाग्णी का प्राग्ण अधिपित है, यानी वाग्णी प्राग्णके आअय है, विना प्राग्ण के वाग्णी कुछ कार्य नहीं कर सकती है, और यही कारणा है कि प्राग्ण बृहस्पित कहलाता है, जैसे सब देवताओं में बृहस्पित अष्ठ है, वैसे ही सब इन्द्रियदेवताओं में प्राग्ण श्रेष्ठ है ॥ २०॥

मन्त्रः २१

एव उ एव ब्रह्मणस्पतिर्वाग् वे ब्रह्म तस्या एव पतिस्तस्मादु ब्रह्मणस्पतिः ॥

पदच्छेदः।

पपः, ७, एव, ब्रह्मग्रस्पतिः, वाक्, वे, ब्रह्म, तस्याः, एषः, पतिः, तस्मात, उ, ब्रह्मग्रस्पतिः ॥

धारवयः

पदार्थाः अम्बयः

पदार्घाः

ज≕सीर पषः एख=वही मुख्य प्राण ब्रह्मसस्पतिः=ब्रह्मसस्पति है + हि=क्योंकि वाक=वायी धै=निश्रय करके

ब्रह्म=यजुर्वेद है

तस्याः=उस वाखी का एषः=यह प्राय पतिः=पति है तस्मात् उ=भीर इसीकिये ब्रह्मसास्पतिः=यह ब्रह्मसस्पति प्रास + यज्ञुषास्=यजुर्वेद का + प्रायाः=चात्मा है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही प्रागा ब्रह्मका पति भी कहलाता है, वाग्गी यजुर्वेद है, उसका यह प्राणा पति है, इस कारणा इसका नाम ब्रह्मण्सपति है ॥ २१॥

मन्त्रः २२

एव उ एव साम वाग् वै सामैष साचामश्चेति तत्साम्नः सामत्वं यदेव समः मुविणा समी मशकेन समी नागेन सम एभिख्निभिलोंकैः समोनेन सर्वेख तस्माद्वैव सामाश्रुते साम्नः सायुज्यं सलोकतां य एवमेतत्साम वेद ॥

पदच्छेदः ।

एषः, उ, एव, साम, वाक्, वै, साम, एषः, सा, च, श्रमः, च, इति, तत्, साम्नः, सामत्वम्, यत्, उ, एव, समः, प्लुषिगाा, समः, मशकेन, समः, नागेन, समः, एभिः, त्रिभिः, लोकैः, समः, अनेन, सर्वेगा, तस्मात्, वा, एव, साम, श्रारनुते, साम्रः, सायुज्यम्, सक्तोक-ताम्, यः, एवम्, एतत्, साम, वेद् ॥

श्रास्ययः

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ज≕षौर एषः=यही मुख्यप्राय पच≕निश्रय करके साम=साम है

वाक वै=वायी निरचय करके साम=साम + भवति=हो सकता है + उत्तरम=उत्तर क्योंकि सा=बाविगमात्र

+ प्रश्नः=प्रश्न

स=मोर

+ कथम्=कैसे

द्यमः≔पुष्टिंबग बात्र + पत्नी=चे दोनों एषः=वह मुख्य प्राया करके कहे जाते हैं समान रूप से है तल=सोई साम्नः=सामका सामस्वम्=सामस्य है यानी साम शब्द का अर्थ है त=ग्रीर यत्=जिस कारण पश्च=निश्चय करके + सः=वह प्राण् प्लुषिगा=कीट के बाकार के समः=बराबर है मशकेन=मच्छरके शरीर के स्त्रग्रः=बराबर है नागेन समः=हाथी के शरीर के

+ च=प्रौर प्रभिः=इन त्रिभिलाँकै:=तीनां खोकों के समः≔बरांबर है तस्मात्=तिसी कारया अनेन=इनही सर्वेगा=सब कहे हुये के स्त्रमः=बराबर साम=साम है यः=जो उपासक एतत्=इस साम=साम को प्वम्=इस प्रकार बेद=जानताहै यानी उपा-सना करता है + सः=वह साम्नः=साम की सायुज्यम्=सायुज्यता को सलोकताम्=सालोक्यताको

भावार्थ।

हे सौन्य ! यही मुख्य प्रारा सामवेद भी है, प्रश्न होता है कि कैसे वार्गी सामवेद हो सकती है, इसका उत्तर यह है कि सा क्ली- लिंगमात्र छोर अगः पुल्लिंगमात्र ये दोनों मिलकर मुख्य प्रारा कहे जाते हैं, यानी स्त्रीजाति छोर पुरुषजाति भरमें प्रारा समानरूप से स्थित है, और जिस कारण यह प्रारा छोटे कीट के शरीर के छंदर होने से मच्छर के शरीर के बंदर होने से मच्छर के शरीर के बरावर छोर मच्छर के शरीर के बंदर होने से हाथी के शरीर के बरावर छोर तीनों लोकों के अन्दर रहने से तीनों लोकों

के बराबर सममा जाता है इसी कारण वह प्राया सब छोटे बड़े शरीरों के तुल्य सममा जाता है, और इन्हीं सबके बराबर साम भी है, क्योंकि साम और प्राया एकही हैं, जो उपासक इस सामकी इसप्रकार उपासना करता है वह साम के सायुज्यताको और सालो-कताको प्राप्त होता है।। २२।।

मन्त्रः २३

एष उ वा उद्गीयः प्राणो वा उत्प्राणेन हीद्छं सर्वमुत्तब्धं वागेव गीथोच गीथा चेति स उद्गीथः ॥

पदच्छेदः ।

एषः, उ, वा, उद्गीथः, प्राग्गः, वा, उत्, प्राग्गेन, हि, इदम्, सर्वम्, उत्तरुष्म्, वाक् एव, गीथा, उत्, च, गीथा, च, इति, सः, उद्गीथः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

> ज≕ग्रीर इदम्=यह एषः≕यही सर्वम्=सब बस्तु उत्तब्धम्=प्रथित है वा=मुख्यप्राख उद्गीथः=उद्गीय भी है च=भीर च=धौर वाक एव=वासी ही बै=निश्चय करके गीथा=गीथा है बानी गीथा उत्=उत् शब्दका अर्थ शब्दका अर्थ वासी है प्राणः=प्राण है उत्+गीथाइति=यइ दोनें। मिला करके हि=क्योंकि सः=वड प्राणेन=प्राण करके ही उद्गीथः=उद्गीय शब्द होता है

मावार्थ।

हे सौन्य ! यही प्राण् उद्गीथ भी है, उद्गीथ दो शब्द यानी उत् और गीथ करके बना है, उत्तराब्द का अर्थ प्राण् है, और गीथशब्द का अर्थ वाणी है, प्राण् ही करके वाणी बोजी जाती है, और प्राण्ही करके यावत् वस्तु संसार में हैं सब प्रधित हैं, इसजिये प्राण् और वाणी दोनों सिजकर उद्गीथ कहजाता है, इसी उद्गीथ की सहायता करके उद्गाता यजमान अभीट फलको प्राप्त होता है।। २३॥

मन्त्रः २४

तदापि ब्रह्मदत्तरचैकितायनेयो राजानं भक्षयन्तुवाचाथं त्यस्य राजा मूर्घानम् विपातयाद्यदितोयास्य श्राङ्गिरसोन्येनोदगायदिति वाचा च क्षेव स प्राणेन चोदगायदिति ॥

तत्, ह, श्रिपि, ब्रह्मदृत्तः, चैकितायनेयः, राजानम्, अक्षयन्, ख्वाच, श्रियम्, त्यस्य, राजा, मूर्धानम्, विपातयात्, यत्, इतः, श्रियास्यः, श्राङ्गिरसः, श्रान्येन, खऱ्गायत्, इति, वाचा, च, हि, एव, सः, प्राणान, च, खऱ्गायत्, इति ॥

च. उदगायत्, इति ॥ पदार्थाः श्रन्वयः तत=तिस विषय में + ब्राख्या-) एक ब्राख्यायिका यिका ह >=मी है + समये=एक समय चैकितायनेयः=चिकितायन का पुत्र ब्रह्मद्त्तः=ब्रह्मद्त्त राजानम्=यज्ञ में सोमजता के रस को भक्षयन्=पीता हुन्ना + इति=ऐसा उवाच=बोला कि + ग्रहम्=में + अनृतवादी=असत्यवादी + स्याम्≕होऊं + च=धौर श्रयम् राजा=यह राजा सोम त्यस्य=उस + मे=मेरे

+ मे⇒मेरे मुर्थानम्=मस्तक को श्चन्ययः प्रदार्थाः विपातयात्=काट के गिरा देवे यत्=यदि इतः=इस वार्यायुत प्राय के सिवाय श्चन्येन=श्रौर किसी देवताकी सहायता करके

+ एषः=यह + ग्रहम्=में श्रयास्यः=श्रयास्य श्राङ्गिरसः=श्रङ्गिरस + श्रृषीणाम्=किसी ऋषि के + सञ्ज=यज्ञ में उदगायस्=गान किया हो च=इस कहने के पीछे सः=वही खवास्य शङ्गिरस वाचा=वायी करके च=ग्रीर प्राण्न=भाषा करके एव हि इति=निस्सन्देह इस प्रकार

उद्गायत्≕गान करता भवा

भाषार्थ।

हे सौन्य! जो कुछ उपर कहागया है उसके विषय में एक आख्यायिका इसप्रकार कही जाती है, एक समय चिकितायन का पुत्र ब्रह्मदत्त यहा में सोमजता के रसको पीता हुआ बोजता भया कि यदि में अयास्य आङ्किरस ऋषि किसी यहा विषे सिवाय वाणी और प्राण् के उद्गीय के गान में और किसी देवताकी सहायता जी हो तो में असत्यवादी होऊं, और मेरा मस्तक कटकर गिरपड़े, ऐसा कह करके वह अयास्य आङ्किरस प्राण्क्प उद्गाता वाणी और प्राण् की सहायता करके उद्गीय का गान करता भया, और श्रुतिभी कहती है कि उसने इस यहा में भी वाणी और प्राण्की सहायता करके उस उद्गीय का गान किया।। २४।।

मन्त्रः २४

तस्य हैतस्य साम्नो यः स्वं वेद भवति हास्य स्वं तस्य वै स्वर् एव स्वं तस्मादार्तिवज्यं करिष्यन् वाचि स्वरमिष्क्षेत तथा वाचा स्वरसंपन्नयार्तिवज्यं कुर्याचस्माचन्ने स्वरवन्तं दिदक्षंत एव । श्रथो यस्य स्वं भवति हास्य स्वं य एवमेतत्साम्नः स्वं वेद ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, साम्तः, यः, स्वम्, वेद, भवति, इ, झस्य, स्वम्, तस्य, वे, स्वरः, एव, स्वम्, तस्मात्, झार्त्विज्यम्, करिष्यन्, वाचि, स्वरम्, इच्छेत, तया, वाचा, स्वरसम्पन्नया, झार्त्विज्यम्, दुर्धात्, तस्मात्, यक्के, स्वरवन्तम्, दिदृक्षन्ते, एव, झथो, यस्य, स्वम्, भवति, इ, झस्य, स्वम्, यः, एवम्, एतत्, साम्नः, स्वम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः=त्रो उद्गाता तस्य=उसी पतस्य=इस साम्बः=साम के

ş

स्वम्=स्वरस्पी धनको वेद=जानता है अस्य ह=डसको स्वम=जीकिक धन

भवति=प्राप्त होता है तस्य=उस उद्राताका स्वरः एव=स्वरही स्वम्=धन है तस्मात्=इसिवये श्रार्त्विज्यम्=ऋत्विज कर्म करिष्यन्=करने की इच्छा करता हुआ वाचि=अपनी वाणी में स्वरम्=यथाशास्त्रविधि स्वर पाने की इच्छेत=इच्छा करे + च=श्रीर तया=उसी स्वरसंपन्नया=संस्कार की हुई वाचा=वाणी करके आर्टिवज्यम्=उद्गाता के कर्मको कुर्यात्=करै तस्मात्=इसी कारण यक्रे⊐यज्ञ में स्वरवन्तम्=उत्तम स्वरवाले + उद्गातारम्=उद्गाता को

+ जनाः=लोग एख≔घबश्य दिद्धान्ते=देखने की इच्छा करते हैं झथो=अब फलको दिख-वाते हैं यः=जो साम्रः≔साम के पतत्=इस स्वम्=स्वररूपी धनको एवम्=इस प्रकार . घेद=जानता है + च=ग्रीर यस्य=जिसको स्वम्=स्वररूपी धन भवति=प्राप्त होता है ग्रस्य=उसको इदम्=यह स्यम्≔सोकिक धन ऋषि=भी भवति=पाप्त होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो बद्राता साम के स्वररूपी धन को जानता है, उस को दुनियासंबन्धी धन अवश्य प्राप्त होता है, उद्गाता का धन उसका स्वर है, इसिजिये मृत्विज कर्म करने की इच्छा करता हुआ अपनी बाग्गी में यथाशास्त्रविधि उत्तम स्वर पाने की इच्छा करें, और उसी ऐसी संस्कार की हुई उत्तम वाग्गी करके यह्नकर्म को करें, और यही कारण है कि यहा विषे उत्तम स्वरवाले उद्गाता नियत किये जाते हैं। हे प्रियदर्शन ! अब आगे इसके फलको दिखाते हैं, जो उपासक साम के स्वररूपी धनको अच्छे प्रकार जानता है, और जिसको स्वरक्षी धन प्राप्त है, उसीको यह संसारी धन भी प्राप्त होता है ॥ २४ ॥

मन्त्रः २६ तस्य हैतस्य साम्नो यः सुवर्णे वेद भवति हास्य सुवर्णे तस्य वै स्वर एव सुवर्णे भवति हास्य सुवर्णे य एवमेतत्साम्नः सुवर्ण वेद ॥

पवच्छेवः ।

तस्य, ह, एतस्य, साम्नः, यः, सुवर्गाम्, वेद, भवति, ह, प्रास्य, सुवर्गाम्, तस्य, वै, स्वर:, एव, सुवर्गाम्, भवति, इ, अस्य, सुवर्गाम्, यः, एवम्, एतत्, साम्नः, सुवर्णम्, वेद ॥

धाःचयः

पदार्थाः

यः=जो पतस्य=इस

स्वादनः=साम के सुवर्णम्=कंठादिस्थानसंबन्धी

वर्ण को

ह=भवी प्रकार

चेद=जानता है श्रास्य=इसीको

स्वर्णम्=संसारी धन भवति=मिलता है

+ च=श्रीर

तस्य=उस उद्गाता का

वै=निरचय करके

पदार्थाः स्रत्वयः

स्वर:=उत्तम स्वर उचारख

करना

पव=ही सुवर्णम्=भेष्ठ धन है

> + च=भीर यः=जो

सामनः=साम के

प्वम्=कहेडुये प्रकार पतत्=इस

सुवर्णम्=सुस्वर उचारक को

चेद=जानता है श्रस्य ह=उसको ही सुवर्णम्≃यह काकिक धन

भवति=मिसता है

भावाथे।

हे सौम्य ! जो इस साम के कंठादि स्थान संबन्धी वर्गाको जानता है उसीको संसारी भन प्राप्त होता है, उदाताको उत्तम स्वर से वासी का उचारसा करनाही श्रेष्ठ धन है, जो सामके, उपर कहे हुये प्रकार सस्वर के उद्यारण करने को जानता है. उसीको यह जौकिक धन मिलता है।। २६।।

मन्त्रः २७

तस्य हैंतस्य साम्नो यः प्रतिष्ठां वेट प्रति ह तिष्ठति तस्य वै वागेव मतिष्ठा वाचि हि खल्वेष एतत्प्राणः प्रतिष्ठितो गीयतेष इत्युहैक श्राहुः ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, साम्नः, यः, प्रतिष्ठाम्, वेद, प्रति, इ, तिष्ठति, तस्य, बै, वाग्, एव, प्रतिष्ठा, वाचि, हि, खल्ल, एषः, एतत्, प्रागाः, प्रतिष्ठित:, गीयते, श्रन्ने, इति, उ, ह, एके, श्राहु: ॥

श्चन्वयः

पटार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो तस्य ह=उसी प्तस्य साम्नः=इस सामके

प्रतिष्ठाम्=गुणको वेद=जानता है

+ सः≔वह उपासक

ह=भी

प्रतितिष्ठति=प्रतिष्ठावाला होता है तस्य=उस सामकी

प्रतिष्ठा=शतिष्ठा

पच=ही वै=निश्चय करके

धाग्=वाणी है हि≕क्योंकि

एषः=यह

प्राणः=प्राणरूप साम

ब्रलु≕निश्चय करके

वाचि=मुख के भीतर बाठ

जगहाँ में प्रतिष्ठितः+सन्=रहता हम्रा

> पतत् गीयते=गाया जाता है उ≕श्रोर

> > एके=कोई बाचार्य

इति ह=ऐसा भी

आइः=कहते हैं कि प्राणः=प्राय

अक्रे=बसर्मे

प्रतिष्ठित रहता है क्योंकि विना सक के प्राया स्पना कार्य नहीं कर

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो इस सामके प्रतिष्ठाको जानता है, वह प्रतिष्ठावासा

होता है, साम की प्रतिष्ठा वागा है, क्यों कि यह प्राग्य साम मुख के भीतर आठ जगहों में रहता है, और उन्हीं के द्वारा गाया जाता है, और कोई कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि प्राग्य अन्नमें रहता है, क्यों कि विना अन्न के प्राग्य अपना कार्य नहीं करसका है, और न शरीर विषे स्थित रहसका है।। २७॥

मन्त्रः २८

श्रथातः पवमानानामेवाभ्यारोहः स वै खलु प्रस्तोता साम प्रस्तोति स यत्र प्रस्तुयात्तदेतानि जपेत् श्रसतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योमीमृतं गमयेति स यदाहासतो मा सद्गमयेति मृत्युर्वा श्रसत् सद्मृतं मृत्योमीमृतं गमयामृतं मा कुर्वित्येवेतदाह तमसो मा ज्योतिर्गमयेति मृत्युर्वे तमो ज्योतिरमृतं मृत्योमीमृतं गमयामृतं माकुर्वित्येवेतदाह मृत्योमीमृतं गमयोति नात्र तिरोहितिमिवास्ति श्रथ यानीतराणि स्तोत्राणि तेष्वात्मनेन्नात्यमागायेत्तस्मादुतेषु वरं मृत्योति यं कामं कामयेत तथ स एव एवंविदुद्वातात्मने वा यजमान्वाय वा यं कामं कामयते तमागायति तद्धैतन्तोकजिदेव न हैवालोन्वयताया श्राशास्ति य एवमेतत्साम वेद ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, श्रत , पत्रमानानाम्, एव, श्रभ्यारोहः, सः, वे, खलु, प्रस्तोता, साम, प्रस्तौति, सः, यत्र, प्रस्तुयात, तत्, एतानि, जपेत्, श्रसतः, मा, सत्, गमय, तमसः, मा, ज्योतिः, गमय, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, इति, सः, यत्, श्राह, श्रसतः, मा, सत्, गमय, इति, मृत्युः, बा, श्रसत्, सन्, श्रमृतम्, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एव, एतत्, श्राह, तमसः, मा, ज्योतिः, गमय, इति, मृत्युः, वे, तमः, ज्योतिः, श्रमृतम्, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एव, एतत्, श्राह, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एव, एतत्, श्राह, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एव, एतत्, श्राह, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, नमय, इति, न, श्रम्, तिरोहितम्, इत्, श्रस्ति, श्रथ, यानि, इतराण्यि,

स्तोत्राश्चि, तेषु, झात्मने, झत्राद्यम्, झागायेत्, तस्मात्, उ, तेषु, वरम्, वृत्याित, यम्, कामम्, कामयेत, तम्, सः, एषः, एवंवित्, उद्गाता, झात्मने, वा, यजमानाय, वा, यम्, कामम्, कामयते, तम्, झागा-यित, तत्, ह, एतत्, लोकजित्, एव, न, ह, एव, झालोक्यतायाः, झाशा, झिस्त, यः, एवम्, एतत्, साम, वेद् ॥

श्रन्वयः

पदार्था

श्चन्वयः

पदार्थाः

ऋध=अब श्रतः=इहां से पवमानानाम् । पवमान स्तोत्रों एवं रे कीही **अ**भ्यारीहः=श्रेष्ठता कथ्यतं=कही जाती है वै खलु=निस्सन्देह यत्र≕ितस समय सः≔वह यज्ञ प्रसिद्ध प्रस्ताताः साम=सामका प्रस्तौति=श्रारम्भ करता है तत्र=तब पहिले सः=वह प्रस्तोता प्रस्तुयात्=सामका श्रारंभ करै च=ग्रीर पतानि=यजुर्वेदके तीन मंत्रों को उद्वाता=उद्गाता

> श्चसतः=चसत् से मा=मुक्ते सत्=सत्को गमय=पहुँचादे

+ इति=इस प्रकार

तमसः=तम से

मा=मुके

उयोतः=ज्योति को

गमय=पहुँचादे

मृत्योः=मृत्यु से

मा=मुके
अमृतम्=अमृतको
गमय इति=पहुँचा दे इसप्रकार
+ एषाम्=इन तीन मंत्रों को
+ अर्थे=अर्थे के विषय में

यत्=जो कुछ
+ कथितम्=कहा गया है

+ तन्=उसी को
+ आह्मणम्=ण्ड झाझण प्रंथभी

स्रसत्=असत् पदार्थ वै=िरचय करके पृत्युद्धै बानी व्यव-सृत्युः= { हारिक कर्म चौर व्यवहारिक ज्ञानहै + च=चौर सत्=सत्"परमार्थिक कर्म परमार्थिक ज्ञान है"

+ तस्मात्=उस

+ निस्नप्रकारेग=निम्नप्रकार

+ व्याचछे=व्याख्या करता है

मृत्योः=स्ववहारिककर्म भार व्यवहारिक ज्ञानसे मा=मुके असृतम्=परमार्थिक कर्मको भौर प्रमार्थिक ज्ञानको गमय=प्राप्त कर इति=इसी प्रकार एतत् एव=इस बातको भी + मंत्रः=मंत्र आह=कहता है कि उदाता ऐसा कहै मा=मुक्ते श्रमृतम्=सव कर्मों से मुक्र कुरु=कर च=ग्रीर तमसः=तमसे मा≔मुके ज्योतिः=ज्योति को गमय इति=प्राप्त कर तमः≔तम पदार्थ वै=िनश्चय करके अज्ञानहै क्योंकि मृत्युः=≺ बज्ञान मरण का हितु होता है च≕गोर ज्योति≔प्रकाश अमृतम्=अमर होने का कारण

ज्योतिः=प्रकाश श्रमृतम्=श्रमर होने का कारण है तस्मात्=वसी तमसः=मरण हेतु श्रज्ञान से मा=मुके श्रमृतम्=रैव स्वरूपको

रामय=प्राप्तकर इति=इसी प्रकार एतत् एव=इस बातको भी + मंत्रः≔मंत्र आह=कहता है कि उद्गाता ऐसा कहै मा=मुक्तको श्रमृतम्=दैवस्वरूप कुरु=बनादे मृत्योः=मृत्यु से मा=मुभे अमृतम्=श्रमस्य को गमय इति=प्राप्त कर दे अत्र=इसमें तिरोहितम्इव=पहिने दो मंत्रों की तरह छिपाहुआ सर्थ न≕नहीं अस्ति=है बर्थात् मंत्रका बर्ध स्पष्ट है अथ=अव इसके पीछे इतराणि=श्रीर यानि=जो + अवशिष्टानि=वचे हुये + नव≕नौ स्तात्रााण=पवमान स्तोत्र हैं ≻≕उनके पढ़ने पर +प्रयुक्तेषु +सत्सु रे

+ उद्गाता=डद्राता

आत्मने=अपने विये

म्रन्नाद्यम्=भोज्य बन्नका

श्रागायेत्=गान करे

ड=श्रीर आगायति=गान करके प्राप्त तस्मात्=इसलिथे करता है सः=वही च=धौर एषः=यह तत् ह=वही एवंवित्=प्राणवेत्ता यह प्राया ज्ञानयानी उद्गाता=४द्राता पतस्= { समयानुसार स्वरों का अपर नीचे के जाना श्रादिक ज्ञान यम्≕िजस कामम्=पदार्थ की कामयेत=इच्छा करे लोकजित=बोक के विजय का तम्=उसी वरम्=पदार्थ को एच=भवरय तेषु) (उन्हीं पवमान + अस्ति=है + प्रयुक्तेषु >= < स्तोत्रों को पढ़ते + सत्सु / (हुये यः≕जो एतत्=इस वृश्वीत=वरदान मांगे साम=साम को + हि=क्योंकि प्वम्≔इस प्रकार + उद्गाता=उद्गाता वेद=जानता है आत्मने=अपने विवे तस्य=उसको वा≕ग्रौर पव ह=निश्चय करके यज्ञमानाय वा=यजमान के विये आसोषयतायाः=मुक्तिके जिथे यम्≕जिस आशा=प्रार्थना कामम्=पदार्थ को न≕नहीं कामयते=चाहता है श्चस्ति=है यानी वह श्रवस्य तम्≕उसको मुक्र होजाता है

भावार्थ।
हे सौम्य! अव पवमान नाम स्तोत्रों की श्रेष्ठता कही जाती है, जब प्रस्तोता अवृत्तिज साम का गान आरम्भ करता है तब उद्गाता यजुर्वेद के तीन मंत्रों का जप निम्नप्रकार करता है। हे मंत्र! तू सुन्ने असत् से सत्को पहुँचादे, हे मंत्र! तू सुन्ने तमसे प्रकाशको पहुँचा दे, हे मंत्र! तू सुन्ने तमसे प्रकाशको पहुँचा दे, हे मंत्र! तू सुन्ने तमसे प्रकाशको पहुँचा दे हन तीनों मंत्रों में जो इन्ह आर्थ कहा गया है उसी को यह श्राक्षया पंथ भी नीचे जिस्से

हुये प्रकार कहताहै, श्रासत् पदार्थ निश्चयकरके मृत्यु है यानी व्यवहारिक कर्म और व्यवहारिक ज्ञान है, और सत पदार्थ परमार्थिक कर्म और परमार्थिक ज्ञान है. हे मंत्र ! तिस व्यवहारिक कर्म झौर व्यवहारिक ज्ञान से मक्तेपरमार्थिक कर्म और परमार्थिक ज्ञान को प्राप्त कर, और मंत्र ऐसा भी फहता है कि उद्गाता सब कमीं से मुक्त होजाता है झीर तमरूपी कालात से प्रकाशकर्पी जानको प्राप्त होता है. मंत्रकी और अभिमुख होकर उद्गाता कहता है कि तू मरगा हेतु श्रज्ञान से मुक्ते देवस्वरूप को प्राप्त कर झौर देवस्वरूप मुक्ते बनादे, मृत्यु से झमरत्वको प्राप्तकर, आब आगे जो नौ बचे हये पवमान स्तोत्र हैं उनके पहने पर उद्गाता श्रापने लिये श्रम का गान करे, श्रीर वही यह प्राग्येवता उद्गाता जिस पदार्थ की इन्छा करे उसी पदार्थ को उन्हीं नी पवमान स्तोत्रों को पहते हुये वर मांगे, हे सीम्य ! उद्गाता अपने लिये और यजमान के लिये जिस पटार्थ को चाहता है उस पदार्थ का गान करके प्राप्त करसका है, उसका यह प्राण झानसमयानुसार सुरों का ऊपर नीचे लेजाना क्लोकों के विजय करने का साधन है, जो सामको इस प्रकार जानता है वह अवश्य मुक्त होजाता है ॥ २८ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥ श्रथ चतुर्थं ब्राह्मणम् ।

मन्त्रः १

श्चात्मैवेदमग्न श्रासीत्पुरुषविधः सोनुनीक्ष्य नान्यदात्मनोपश्य-त्सोइमस्मीत्यग्रे व्याइरत्ततोइं नामाभवत्तस्माद्प्येतक्कीमन्त्रितोइमय-भित्येवाग्रे उक्त्वाथान्यकाम प्रवृते यदस्य भवति स यत्पूर्वोस्मात्स-र्वस्मात्सर्वान्पाप्मन श्रीषत्तस्मात्पुरुष श्रोषति इ वे स तं बोस्मात्पूर्वो बुभूषति य एवं वेद ॥

पद्च्छेदः।

भारमा, एव, इदम्, अमे, आसीत्, पुरुषविधः, सः, अनुवीक्य, न, अन्यत्, आरमनः, अवश्यत्, सः, अहम्, अस्मि, इति, अमे, व्याहरत्, ततः, झहम्, नाम, झभवत्, तस्मात्, झिप, एतिहैं, झाम-न्त्रितः, झहम्, झयम्, इति, एव, झमे, उक्त्वा, झथ, झन्यत्, नाम, प्रबृते, यत्, झस्य, भवति, सः, यत्, पूर्वः, झस्मात्, सर्वस्मात्, सर्वन्ता, पाप्मनः, औषत्, तस्मात्, पुरुषः, झोषति, ह, वै, सः, तम्, यः, झस्मात्, पूर्वः, बुभूषति, यः, एवम्, वेद् ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

इदम्=यह जगत् श्राग्रे=अत्पत्तिसे पहिनो आत्मा प्व=श्रात्मा ही श्रासीत्=था + पुनः≕िकर +सःपुरुषविधः=वही भ्रात्मा हिररय गर्भ + अभूत्=हुन्ना + सः=वह प्रथमपुरुष श्रनुवीक्ष्य=चारों तरफ देखकर आत्मनः=श्रपने से श्चन्यत्≕भिन्न कुछ न=नहीं **द्य**पश्यत्=देखता भया + तदा≕तब अहम्=मेंही + सर्वात्मा=सर का बात्मा म्रास्म=हुं इति=ऐसा सः≔डसने श्रद्रे≔प्रथम व्याहरत्=कहा ततः=तिसी कारण

+ सः=हिरययगर्भ

श्रहम् नाम=शहनामवाला श्रभवत्=होता भया + यतः=जिस कारण सः≔डसने अहमस्मि=" बहमस्मि" ऋाह=कहा तस्मात्=तिसी कारख श्रिप पतर्हि=भव भी श्रामन्त्रितः=बुजाया हुश्रा पुरु**ष** + आह्चकहता है कि ग्रहम्=में अयम्≕यह हूं इति एव=ऐसा ही अग्रे=पहिसे उक्त्वा=कहकर अध≃पीचे अन्यत्=श्रीर नाम≕नाम यत्=जो अस्य=इस धादमी का भवति≔होता है प्रवृते=कहता है यत्=जिस कारण + सः=यह प्रजापति

सर्वान=सब पाटमनः=पापोंको श्रीषत्=जलाता भया अस्मात्=तिसी कारय

सर्वस्मात्=प्रजापति पद पाने सिःपुरुषः ह वै=वह पुरुष श्रवस्य बाबों में से

∔ सः=बह पूर्वः=प्रथम + स्रभवत्=होता भया

तस्मात्=इसिवये यः=जो परुष श्रस्मात्=अजापति होनेवाखाँ

+ वशयः=प्रथम

बुभूषति=होना चाहता है

तम=उस पुरुषको द्योषति=नाश करहालताहै यानी तेजहीन कर देता है

य:=जो

एवम्=इस प्रकार चेड=श्रपने में उस पद्वी पानेकी इच्छा करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जगत् उत्पत्ति के पहिले केवल एक आत्माही था, वही पीछे से हिरएयगर्भ होता भया, और वही प्रथम पुरुष चारो तरफ देखकर श्रीर अपने से पृथक कोई भिन्न वस्त न पाकर कहने कागा. मैं ही सबका आत्मा हूं और यही कार्गा है कि वह हिरगयगर्भ आहं नामवाला होता भया. जिस कार्गा उसने प्रथम कहा तिसी कार्गा अव भी जोग पुकारे जाने पर कहते हैं कि यह मैं हूं और इसके पीछे अपना द्सरा नाम देवदत्त आहि लगाकर कहते हैं और जिस कारगा उस प्रजापित ने सब पापों को जला दिया उसी कार्गा वह सब प्रजा-पतिपद पानेकी इच्छा करनेवालों में से प्रथम होता भया, इसिल्ये जो पुरुष प्रजापति होनेवाओं में से प्रथय होना चाहता है वह पुरुष अवस्य उस पुरुषको नाश करडालता है यानी तेजहीन कर देता है जो इस प्रकार अपने में उस पदवी पाने की इच्छा करता है।। १।।

मन्त्रः २

सोबिभेत्तस्मादेकाकी बिभेति स हायमीक्षांचक्रे यन्मदन्यकास्ति कस्माञ्च विभेगीति तत एवास्य भयं वीयाय कस्माद्धचभेष्यददिती-याद्रै भयं भवति ॥

पदच्छेवः ।

सः, अबिभेत्, तस्मात्, एकाकी, विभेति, सः, ह, अयम्, ईक्षां-चक्रे, यत, मत्, अन्यत्, नं, अस्ति, कस्मात्, नु, विभेमि, इति, ततः, एव, अस्य, भयम्, वीयाय, कस्मात्, हि, अभेष्यत्, द्वितीयात्, वै, भयम् , भवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्चन्ययः

पदार्थाः

सः≔वह प्रजापति + ग्रस्मदादिवत्=हम बोगों की तरह श्राविभेत्=हरता भया तस्मात्=तिसी कारण

+ श्रहा=बाउक्व पकाकी=त्रकेवा पुरुष

बिभेति=डरता है + पुनः=किर

सः ह=वही श्रयम्=यह प्रजापति र्दक्षांचक्र=विचार करने बगा कि

यत्=जब मत्⇒मुक से अन्यत्=दूसरा और कोई स=नहीं

झस्ति≕है + तत्=तो

कस्मात् नु≔िकससे + ब्रहम्=में बिभेमि इति=दर्

ततः पच=ऐसे विचार से ही

श्चस्य=उस प्रजापति का

भयम्=भय वीयाय=दूर होगवा भयम्=भय

हि=भवश्य

ब्रितीयात्=दूसरे से सवति≔होता है

+ यदा 🗅 + अन्यत् ≻=जब दूसरा रहा नहीं

+ तदा=तव कस्मात्=कैस अभेष्यत्=भव होगा

माबार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रजापति अकेला होने के कारण दरता भया और यही कारणा है कि आजकल अकेला पुरुष दरता है फिर वही प्रजा-पति विचार करने कागा कि जब मुमसे दूसरा कोई नहीं है तो मैं क्यों डरूं ऐसे विचार से उस प्रजापित का डर दूर होगया क्यों कि भय दसरे से होता है अपने से नहीं जब द्सरा नहीं रहा तब अब कैसे होगा ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

स वै नैव रेमे तस्मादेकाकी न रमते स द्वितीयमैच्छत स हैता-वानास यथा स्त्रीपुगांसी संपरिष्यक्री स इममेवात्मानं द्वेषापातय-त्ततः पतिरच पत्नी चाभवतां तस्पादिदमर्थेष्टगलिमव स्व इति इ स्माइ याज्ञवल्क्यस्तस्मादयमाकाशः स्त्रिया पूर्यत एव ता समभव-त्ततो मनुष्या अजायन्त ॥

पवच्छेदः ।

सः, वै, न, एव, रेमे, तस्मात्, एकाकी, न, रमते, सः, द्वितीयम, ऐच्छत्, सः, इ, एतावान्, भ्रास, यथा, स्त्रींपुमांसी, संपर्िष्वक्री, सः, इमम्, एव, आत्मानम्, द्वेधा, आपातयत्, ततः, पतिः, च, पत्नी, च, अभवताम्, तस्मात्, इदम्, अर्द्धवृगलम्, इव, स्वः, इति, ह, स्म, आह, याज्ञवल्क्यः, तस्मान्, श्रयम्, आकाशः, श्रिया, पूर्वते, एव, ताम्, समभवत्, ततः, मनुष्याः, श्रजायन्त ॥

श्चन्धयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः=वह प्रजापति वै=निश्चय करके न एव रेमे=शकेबा होनेके कारय , आनंदित नहीं हुआ तस्मात्=इसीविये +इदानीम् }=अव भी + अपि } एकाकी=अबेबा कोई पुरुष न=नहीं रमते=चानन्द् को प्राप्त होता है + अतः=इसकिये

सः=बह प्रजापति

पेटलुत्=इच्हा करता अवा

द्वितीयम्=दूसरे की

+चपुनः≕भौर फिर सः≔वही एतावान्=इतने परिमाखवासा श्रास=हुत्रा किं यथा=जितना स्रीपुमांसी=बी पुरुष दोनों मिब

संपरिष्वक्री=होते हैं + च=भौर + पुनः≕िकर सः=वही प्रजापति इमम्=१सी

एव=ही **आत्मानम्=म**पने सरीर को

दो भाग में यानी **म्रपातयत्**=विभाग किया ततः=तिय शरीर विभाग होने पर पति:=पति च≔घौर पत्नी च=पत्नी दो श्रभवत्=होते भये तस्मात्=इसिबये स्वः=श्रात्मा का इद्म्=यह शरीर श्चर्यवृगलम् (अर्बभाग् दाल के `}[≡]समान है इति ह=ऐसा याञ्चयद्वयः=याज्ञवद्वयं ने ब्राह स्म=कहा है

तस्मात्=इसी कारण
अयम्=गड
आकाशः=पुरुष का आई भाग
आकाश
स्मिया प्रव=विवाहिता की करके
ही
पूर्यते=पूर्ण किया जाता है
+ च=शीर
+ पुनः=िकर
सः=वही प्रजापति यानी
स्वायंभू मनु
ताम्=उस शतरूपा नाम
की स्नी से
समभवत्=मैथुन करता भया
ततः=ितस मैथुन से
मनुष्याः=मनुष्य

श्रजायन्त=उत्पन्न होते भवे

भावार्थ।

हे सौम्य ! वह प्रजापित अकेला होने के कारणा आनंदित नहीं रहा करता था, और यही कारणा है कि आजकल कोई पुरुष अकेला आनंदित नहीं होता है, जब प्रजापित ने देखा कि अकेले रहने में दुःख है तब दूसरे के प्राप्ति की इच्छा करता भया, और फिर अपने को इतना बड़ा परिमाणवाला बनाया जितना कि स्त्री पुरुष दोनों मिलकर होते हैं, और फिर उसी प्रजापित ने उस अपने शरीर को दो भागों में यानी स्त्री और पुरुष के रूपमें विभाग कर दिया, तिसी शरीर के विभाग होने पर पित और पत्नी दो होते भये, इसिलये शरीर का अर्द्धमाग दाल के समान है, ऐसा याझवल्क्य ने कहा है, इसी कारण इस पुरुष का अर्द्धभाग जो आकाश की तहर खाली है, वह विवाहिता स्त्री करके ही पूरण कियाजाता है, और फिर वहीं

प्रजापति यानी स्वायंभू मनु उसी स्त्री यानी शतरूपा से मैशुन करता भया तिसी मैशुन से मनुष्य की सृष्टि उत्पन्न होती भई ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

सो हेयमीक्षांचक्रे कथं नु मात्मन एव जनियत्वा संभवित इन्त तिरोसानीति सा गौरभवद्द्वपभ इतरस्तां समेवाभवत्ततो गावोजा-यन्त वडवेतराभवदश्वद्रपभ इतरो गर्दभीतरा गर्दभ इतरस्तां समेवा-भवत्तत एकशफमजायताजेतराभवद् वस्त इतरोविरितरा मेप इतर-स्तां समेवाभवत्ततोजावयोजायन्तैवमेव यदिदं किंच मिथुनमापिपी-लिकाभ्यस्तत्सर्वमस्रजत ॥

पदच्छेदः ।

सा, उ, ह, इयम्, ईक्षांचके, कथम्, नु, मा, आत्मनः, एव, जन-यित्वा, संभवति, हन्त, तिरः, असानि, इति, सा, गौः, अभवत, वृषभः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, गावः, अजायन्त, वडवा, इतरा, अभवत्, अश्ववृषभः, इतरः, गर्दभी, इतरा, गर्दभः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, एकशफम्, अजायत, अजा, इतरा, अभवत्, वस्तः, इतरः, अविः, इतरा, मेषः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, आजाययः, अजायन्त, एवम्, एव, यत्, इद्म्, किंच, मिथुनम्, आपिपीलिकाभ्यः, तत्, सर्वम्, असुजत ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः उ≕मौर श्चात्मनः=अपने से सा ह=वही एव≕ही इयम्=यह शतरूपा मा≕मके ईक्षांचके=विचार करती भई कि जनयित्वा=पैदा कर कथम् नु≔कैसे + कथम्≕कैसे संभवति=मुक्तसे मैथुन करता है + इदम्=यह हत=सेद है + अकृत्यम्=बात श्रहम्=भैं + श्रयम्≔यह तिरः=बिपकर पुरुषः=पुरुष

झसानि≔दूसरी जाति में होते इति≕इसिक्षये सा=वह शतरूपा गौः≕गाय

अभवत्=होती भई + तदा=तव हतरः=मनु नुषभः=वैक

श्रमवत्=होताभया + च=श्रीर

ताम् एष=डसी गाय से समभवत्=मिथुन करता भया ततः=डस मिथुन से गावः≕गो बैज

गावः--गा चल अजायन्त=उत्पन्न होते भये + च=फिर इतरा=शतरूपा खडवा=घोडी होती भई इतरः=मनु

श्चश्चयुषः=घोडा श्चभवत्=होताभया इतरा=शतरूपा गर्दभी=गदही इतरः=मनु गर्दभः=गदहा

+ श्रभवत्=होता भया (+ पुनः=फिर ताम् प्व=उसी शतरूपा से समभवत्=मनु मिथुन करता

-भया

ततः=चस सिधुन से

प्रकारमम्=पक खुरकी सृष्टि

अजायत=होती भई

हतरा=शतरूपा

अजा=वकरी

हतरः=मनु

बस्तः=वकरा

अभवत्=होताभया

हतरा=शतरूपा

श्रविः=भेदी होगई

हतरः=मनु

अभयत्=होताभया

श्रविः=भेदी होगई

हतरः=मनु

अभयत्=होताभया

+ अभवत्=होताभवा ताम्=वस भेड़ी के एव≕साथ

समभवत्=वह बकरा व मेड़ा मैथुन करता भया ततः=तिसी कारण

झजावयः≔कर्त भेद झजायन्त≔होते भये पत्रम् पत्त≔इसीतरह यत्≔नो किंच≔कुह इदम्≔वह स्रष्टि

श्रापिपीत्ति- } काभ्यः } =बींटी तक

> + मस्ति≔है तत् सर्वम्=वस सक्को मिथुनम्=मिथुन अस्जत=पैश करता

भया

भावार्थ ।

है सौम्य ! कही यह शतरूपा की विचार करती भई कि जब इस पुरुषने मुक्तको अपने ही से उत्पन्न किया है तब फिर मेरे साथ यह कैसे भोग करता है, इस प्रकार परचात्ताप करके दूसरी योनिको प्राप्त होगई, जब वह गाय भई तब मनु बैल होगया और उससे मैथुन किया, तिस मैथुन से गाय और बैल उत्पन्न हुए, फिर जब वह शतरूपा की घोड़ी होगई तब मनु घोड़ा होगया, जब शतरूपा गदही हुई तब मनु गदहा होगया, फिर उसी शतरूपा से मैथुन किया तिस मैथुन से एक सुरवाली सृष्टि उत्पन्न होती भई, फिर शतरूपा बकरी होगई तब मनु बकरा होगया, जब शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, आरे राव उसी भेड़ी के साथ भेड़ा मैथुन करता भया, तिस मैथुन से बकरी और भेड़की सृष्टि होती भई, इसप्रकार जो इन्ह सृष्टि ब्रह्मासे लेकर चीटी पर्यंत देखने में आती है सबको मैथुनने ही उत्पन्न किया है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ४

सोवेदहं वाव सृष्टिरस्म्यहं हीदं सर्वमस्सीति ततः सृष्टिरम-वत्सृष्ट्यां हास्यैतस्यां भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सः, अवेत्, अहम्, वाव, सृष्टिः, अस्मि, अहम्, हि, इदम्, सर्वम्, असृक्षि, इति, ततः, सृष्टिः, अभवत्, सृष्ट्याम्, ह, अस्य, एतस्याम्, भवति, यः, एवम्, वेद

ग्रस्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

पदाय सः≔बह प्रजापति इसेब्=जानता सवा कि झहम्=में दाव=ही सृष्टिः≔बह सहिकप झस्म=इं

हि=न्योंकि ऋह्म्=मैंने ही इदम्=इस सर्वम्=सन जगद्र को झस्क्षि इति=पैदा किया है ततः=इसी कारव + सः=वह
स्राप्तिः=सृष्टिकप
अभवत्=होतामया
यः=जो पुरुष
पवम्=हस कहे हुये प्रकार
वेद=जानता है
+ सः=वह

ह=भवरय अस्य=इस प्रजापित की पतस्याम्=इस सृष्ट्याम्=सृष्टि में + प्रजापितः=सृष्टिकर्ता भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! वह प्रजापित जानता भया कि मैं सृष्टिरूप हूं, क्योंकि मैंने ही इस सब सृष्टिको रचा है, जो पुरुष इसप्रकार जानता है वह प्रजापित की सृष्टि में सृष्टिकर्चा अवश्य होता है।। ४ ॥

मन्त्रः ६

अथेत्यभ्यमन्यत्स पुलाच योनेईस्ताभ्यां चाण्निमस्जत तस्मादेत-दुभयमलोमकमन्तरतोलोमका हि योनिरन्तरतः तद्यविद्माहुरसुं यजामुं यजेत्येकैकं देवमेतस्यैव सा विस्रष्टिरेष उ क्षेव सर्वे देवाः अथ अत्किचेदमाई तद्रेतसोस्जत तदु सोम एतावद्वा इदं सर्वमकं चैवा-श्रादश्च सोम एवाजमण्निरश्नादः सैवा ब्रह्मणोतिस्रष्टिः यच्छ्रेयसो देवानस्जताथ यन्मर्त्यः सञ्चम्तानस्जत तस्मादतिस्रष्टिरतिस्रष्ट्रणां हास्येतस्यां भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः।

अथ, इति, अध्यमन्थत्, सः, मुखात्, च, योनेः, इस्ताध्याम्, च, अग्निम्, अम्तरतः, तस्मात्, एतत्, उभयम्, अक्षोमकम्, अन्तरतः, अक्षोमका, हि, योनिः, अन्तरतः, तत्, यत्, इद्म्, आहुः, अग्रुम्, यज्ञ, अग्रुम्, यज्ञ, इति, एकैकम्, देवम्, एतस्य, एव, सा, विसृष्टिः, एवः, च, हि, एव, सर्वे, देवाः, अथ, यत्, किंच, इद्म्, आर्द्रम्, तत्, रेतसः, अस्त्रज्ञतं, तत्, च, सोमः, एतावत्, वा, इद्म्, सर्वम्, अन्नम्, च, एव, अन्नादः, च, सोमः, एव, अन्नम्, अग्नादः, सा, एवा,

बहागाः, अतिसृष्टिः, यत्, श्रेयसः, देवान्, अस्जत, अथ, यत्, मर्त्यः, सन्, अमृतान्, असुजत, तस्मात्, अतिसृष्टिः, अतिसृष्टगाम्, ह, श्रास्य, एतस्याम्, भत्रति, यः, एवम्, देद ॥

ध्रन्वयः

पदार्थाः श्रह्ययः पदार्थाः

अथ इति=इसके पीचे सः≔वह प्रजापति श्वभ्यमन्धत्=मंथन करता भवा + तदा=तब मुखात् च=मुखरूप योनेः=योनि यानी निकलने की जगह से + च=श्रीर

हस्ताभ्याम्=हस्तरूप योनि यानी निकलनेकी जगह से श्राग्निम्=श्रीग्नको

श्रास्त्रजत=उत्पन्न करता भया तस्मात्=इसिबये पतत्त=यह

उभयम् { दोनों यानी मुख द्यान्तरतः= { श्रीर हाथ का श्रभ्यंतरी भाग

आसामिकम्=रोम रहित है हि=क्योंकि थोनिः=धाग के उत्पक्ति का स्थान

भ्रन्तरतः=भीतरसे अलोमका=बोम रहित होता है तत्=इसी कार्य कोई कोई

÷ यात्रिकाः=याज्ञिक यत्=जो

इदम्=यह आडुः≔कहते हैं कि अमुम्=इस एकैकम्=एक एक देव को

यज=यजन करो ते=वे

स=नहीं

विज्ञासन्ति=जानते हैं कि पतस्य पव=इसी प्रजापित की

सा=वह विसृष्टिः=अग्न्यादि देवस्टि है उ=श्रीर

सर्वे≕थे सब देखाः=अम्म्यादि देवता एषः=यही प्रजापति है

अथ=और यत्=जो किंच=क्ष

इदम्=यह

आईम्=गीबी वस्तु है यानी अञ्चादि है

तत्=उसको रेतसः=अपने वीर्य से

+ सः≔वह अस्जत=पैदा करता भवा

उ≕मीर तत्=वही सोमः≔सोम है

च=भौर
यावत्=जितना
श्रक्षम्=भन है

च=भौर
श्रक्षादः=भन का मोक्रा है
एतावत्=उतनाही
इत्म् सर्वम्=यह सब जगत है
श्रक्षम् एव≃श्रक्षही
सोमः=सोम है
च=और
श्रिनः=श्रीन
श्रक्षादः=श्रक्षका मोक्रा है
सा=वही

एषा=यह

ब्रह्मणः=प्रजापति की श्रतिसृष्टिः=श्रेष्ठ सृष्टि है यत्≕जो प्रत् श्रेयसः=श्रेष्ठ प्रति देवान्≕देवों को

श्चररृजत=वह उत्पन्न करता भया भागार्थ ।

हे सौम्य ! हे प्रियदर्शन ! इसके पीछे जब वह प्रजापित अगिन को मंथन करता भया तब उसके मुख झौर हाथरूप योनि से अगिन उत्पन्न होता भया, श्रीर चूंकि अगिन के निकज़ने का स्थान जोमरहित है इसिलिथ यह मुख झौर हाथ जहां से अगिन निकज़ा है रोमरहित है, और जो कोई याहिक ऐसा कहते हैं कि एक एक देवताको पृथक् पृथक् पूजन करो तो वह ठीक नहीं कहते हैं, शायद वह नहीं जानते हैं कि इसी प्रजापित के वे अगिन आदि देव सृष्टि हैं, और यह सब अगिन अगि देवता प्रजापित स्पृही हैं, और जो कुछ ये गीकी वस्तु

झथ=भीर यत्=जिस कारव प्रजापतिः=प्रजापति मत्येः सन्=मरवपर्मी होता हुस्राभी

श्चमृतान्=प्रजर घमर देवोंको श्रस्जत=पैदा करता भवा तस्मात्=तिसी कारख श्रतिसृष्टिः=देवों की सृष्टि प्रजा-पति से ग्रतिशेष्ठ है

> श्चतः=इसिंखये यः=तो ठपासक एवम्=इस प्रकार वेद्=जानता है सः=वह

श्चस्य=इस प्रजापति की एतस्याम्=इस

त्रतिसृष्ट्याम्=मतिसृष्टि में + स्रष्टा=सृष्टिकतौ भवति=होता है देखने में आती है उस सबको प्रजापित ने अपने वीर्य से पैदा किया
है, और ओ अन्न है वही सोम है, और जितना अन्न है और अन्न
का मोक्ता है उतनाही यह सब जगत है, हे सीन्य! वास्तव में अन्न
ही सोम है, और अग्नि ही अन्नका मोक्ता है, और जिस कारण
प्रजापित मरण्यमी होता हुआ भी अजर अमर देवताओं को पैदा
किया है तिसी कारण देवों की सृष्टि प्रजापितकी सृष्टि से अतिश्रेष्ठ
है, इसिलिये जो उपासक प्रजापित की अतिसृष्टि में इस प्रकार जानता
है वह प्रजापितकी सृष्टि में सृष्टिकत्तां होता है।। है।।

मन्त्रः ७

तद्धेदन्तर्श्वव्याक्रतमासीत्तन्नामरूपाभ्यामेव व्याक्रियतासीनामायमिदं रूप इति तदिदमप्येतिईं नामरूपाभ्यामेव व्याक्रियतेसी नामायमिदं रूप इति स एप इह प्रविष्टः स्नान्तवाग्रेभ्यो यथा शुरः धुरधानेविहतः स्याद्धिश्वम्मरो वा विश्वम्भरकुलाये तन्न पश्यन्ति श्रक्तस्नो हि स पाणनेव पाणो भवति वदन्वाक्पश्यंश्रश्चः शृणुवन् श्रोतं मन्वानो मनस्तान्यस्यैतानि कर्मनामान्येव स योत एकैक-मुपास्ते न स वेदाक्रत्स्नो ह्येपोत एकैकेन भवत्यात्मेत्येवोपासीतात्र ह्येते सर्व एकं भवन्ति तदेतत्पदनीयमस्य सर्वस्य यदयमात्मानेन ह्येतत्सर्व वेद यथा ह वै पदेनानुविन्देदेवं कीर्त्तं श्लोकं विन्दते स य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

तत्, ह, इदम्, तर्हि, झन्याकृतम्, झासीत्, तत्, नामरूपाभ्याम्, एव, न्याकियत्, झसोनामा, झयम्, इदम्, रूपः, इति, तत्, इदम्, झिप, एतर्हि, नामरूपाभ्याम्, एव, न्याकियते, झसोनामा, झयम्, इदम्, रूपः, इति, सः, एवः, इह, प्रविष्टः, झा, नत्वाप्रेभ्यः, यथा, क्षुरः, क्षुरधाने, झबहितः, स्यात्, विरवंभरः, वा, विरवंभरकुलाये, तम्, न, पश्यन्ति, झकुरस्नः, हि, सः, प्राग्णन्, एव, प्राग्णः, भवति, वदन्, वाक्, पश्यन्,

चक्षुः, श्वरावन् , श्रोत्रम् , मन्वानः, मनः, तानि, झस्य, एतानि, कर्म-नामानि, एव, सः, यः, अतः, एकैकम्, उपास्ते, न, सः, वेद, अक्र-त्स्नः, हि, एषः, झतः, एकैकेन, भवति, झात्मा, इति, एव, उपासीत, अत्रत्न, हि, एते, सर्वे, एकम्, भवन्ति, तत्, एतत्, पदनीयम्, अस्य, सर्वस्य, यत्, अयम्, आत्मा, अनेन, हि, एतत्, सर्वम्, वेद, यथा, ह, बै, पदेन, अनुविन्देत, पवम्, कीर्त्तिम्, हलोकम्, विन्दते, सः, यः, एवम्, वेद ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः ।

तत् ह=वही इदम्=यह जगत

तर्हि=सृष्टि के बादि में अव्यक्तिम्=अव्यक्ति यानी नाम

रूपकी उपाधिसे रहित

श्रासीत्=था

तत् पव=सोई

नामरूपाभ्याम्=नाम रूप करके व्याक्रियत=व्याकृत यानी नामरूप

वाला होता भया

+च पुनः≔भौर फिर

श्रयम्=वही जीवातमा

असीनामा=उस नामवाला

च=मौर

इदं रूपः=इस रूपवाला

इति=ऐसे होकर

व्याक्रियते=विकृति को प्राप्त होता

भया

तत्=तिसी कारण

इदम्=इस जगत् में पतर्हि≕श्रव

अपि=भी

श्रन्वयः

पदार्थाः

प्रच=श्रवश्य

नामरूपाभ्याम्=नाम रूप करके

अयम=यह जीवात्मा

श्रसौनामा) इदं रूपः र् = र श्रीर उस रूपवासा

+व्याकियते=विकार को प्राप्त

होता है

+ च=भौर

सः=वही

प्षः=यह जीवात्मा

इह=इस देह में

श्रानखाग्रेभ्यः=नस से लेकर शिर तक

प्रविष्टः=प्रविष्ट है

यथा=जैसे

क्षरः=छरा

धरधाने=नाई की पेटी में

श्रवहितः=प्रविष्ट

स्य।त्=रहता है वा=प्रथवा

+ यथा=जैसे

विश्वस्भर:=मनि

विश्वम्भर- } =काष्टादिक में + अवहितः=प्रविष्ट स्यात्=रहती है परन्त ती=परन्तु उस हुरे श्रीर प्राप्ति को + जनाः≕सोग न=नहीं पश्यन्ति=देखते हैं सः≔वड जीवात्मा हि=निश्चय करके श्रकत्स्नः=अपूर्ण है + यः=जो + एकाङ्गे=एक शक्न में + बसति=वास करता है + सः=वह जीवात्मा + यदा=जब प्रात्मन् एव=प्रात्मकाही व्यापार करनेवाला + भवति=होता है + तदा=तब प्राणः=प्राण के नाम≂नाम से भवति= इहवाता है + यदा=जब वद्न्≔बोलनेवाला + भवति=होता है + तदा≔तव वाक्=बाक् के नाम से + प्रसिद्धः=प्राप्तिद + भवति=होता है + यदा=जब

पश्यन्=द्रष्टा भवति=होता है + तदा=तव खश्चः=चक्षु के नाम से + प्रसिद्धः=प्रसिद्ध + भवति=होता है + यद्ा=जब श्र्यावन=सुनने वाला + भवति=होता है + तदा=तव श्रीत्रम्ःश्रीत्र के नाम से + प्रसिद्धः=प्रसिद्ध + भवति=होता है + यदा=जब मन्यातः=मनन करनेवाला + भवति=होता है + तदा=तब मतः≔सबके नाम से + प्रसिद्धः=प्रसिद्ध + भवति=होता है श्चस्य=इसके तानि⇒वे पतानि≕ये मिनामानिएव=सब कर्मजन्य नाम है अतः=इस कारण सः=वह यः=जो एकैकम्=एक शंग का उपास्ते=बात्मा सममकर उपासना करता है सः=वह पूर्व भात्माको न चै⇒नहीं

चेद्≕नानता है: हि≔क्पोंकि ग्रतः≔इसक्षियेः एषः=यहः जीवास्मा एकैकेन=एक एक ग्रंग-करके श्रकृतस्तः=अपूर्वही रहका है + सर्वम्=सबको शात्मा=चात्मा + मत्वा इति=मान करके पव≕ही जवासीत=डपासना करे हि=क्योंकि श्रत्र=इसी में पत=ये सर्वे≕सब एकम्=एक भवन्ति=होजाते हैं तम्=तिसी कारण एतत्=यदः जीवात्मा पदनीयम्=खोजने योग्यःहै यत्≕िनस कारण झस्य=इस सर्वस्य=सब वस्तु में श्रयम्≔षह

श्चात्मा=त्रात्मा + विद्यमानः=विषमान है + ततः=तिसी कारण अनेन हि=इसी भारमा करके ही + सः≔वह उपासक पतत्= इस सर्वम्≕सबको वेद⇒जान खेता है यथा=जिसमकार पदेन=पाद के चिक्क करके निस्सन्देष्ट श्रज्ञविन्देत्=लोयेहुये पश्को परुष तबाश कर लेता है एवम्=तिसी प्रकार यः=जो कोई श्चातमानम्=घातमा को वेद=लोज करलेता है सः=वह कीर्हिम्=कीर्ति + च=मोर श्लोकम्=यशको ह=चवर य

विन्दते=प्राप्त होजाता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! यह जगत् जो दिखाई दे रहा है सृष्टिके झादि में झाव्या-इत था, यानी नामरूप से रहित था, पीछे से यही जगत् व्याकृत यानी नामरूपवाला होता भया, झौर फिर उसी नामरूपवाले विकृति में जीवारमा प्रवेश करता भया, झौर तिसी कारणा यही विकृतिवाला यानी नामरूपवाला कहलाता है, सोई झारमा इस देहमें नखसे शिख

तक प्रविष्ट है, जैसे द्वरा नाई की पेटी में प्रविष्ट रहता है, अथवा जैसे अगिन काष्ट में जीन रहता है, और उस हरे और अगिन को कोई नहीं देखता है तहत, जो जीवात्मा एक झंग में वास करता है वह अपूर्ण होता है, ऐसा जीवात्मा जब प्राग्त का व्यापार करने वास्ता होता है तब प्राणा के नाम से पुकारा जाता है. जब बोस्तने का व्यापार करनेवाला होता है तब वाक्य के नाम से प्रकारा जाता है, जब द्रष्टा होता है तब चक्षके नाम से प्रसिद्ध होता है, जब श्रवण व्यापार करनेवाला होता है तब श्रोत्र नामसे प्रसिद्ध होता है. जब मनन करनेवाला होता है तब मन के नामसे प्रसिद्ध होता है. यह जीवात्मा के उपाधिजन्य नाम हैं, इस कारणा जो पुरुष जीवात्मा के एक अंगकी उपासना करता है वह पूर्ण आतमा को नहीं प्राप्त होता है, क्यों कि यह जीवात्मा एक अंग करके अपूर्ण ही रहता है, इस लिये उपासक को चाहिये कि सब श्रंगोंको एक श्रात्मा मानकर उपा-सना करे. क्योंकि उसी आत्मा में ये सब एक होते हैं. ऐसा यह जीवात्मा खोजने योग्य है, श्रीर जिस कारण यह जीवात्मा सब वस्तुओं में विद्यमान है तिसी कारण सबको वह उपासक जानलेता है, और जिसप्रकार पादके खुरके चिह्न करके खोचे हुचे पशुको पुरुष तलाश करलेता है उसी प्रकार जो कोई आतमा को खोज करलेता है वह कीर्त्ति झीर यशको प्राप्त होता है ॥ ७ ॥

मन्त्रः द

तदेतत्त्रेयो पुत्रात्मेयो वित्तात्मेयोन्यस्मात्सर्वस्मादन्तरतरं यदय-मात्मा स योन्यमात्मनः प्रियं द्वुवाणं त्रूयात्मियं रोत्स्यतीश्वरो ह तथैव स्पादात्मानमेव प्रियमुपासीत स य स्थात्मानमेव क्रियमुपास्ते न हास्यिपयंप्रमायुक्तं भवति ॥

पदच्छेदः।

तत, एतत्, प्रेयः, पुत्रात्, प्रेयः, वित्तात्, प्रेयः, अन्यस्मात्, सर्व-

स्मात्, अन्तरतरम्, यत्, अयम्, आत्मा, सः, यः, अन्यम्, आत्मनः, प्रियम्, ब्रुवाग्राम्, ब्रूयात्, प्रियम्, रोत्स्यति, इति, ईश्वरः, ह, तथा, एव, स्यात्, आत्मानम्, एव, प्रियम्, उपासीत, सः, यः, आत्मानम्, एव, प्रियम्, उपास्ते, न, ह, अस्य, प्रियम्, प्रमायुकम्, भवति ॥

द्मन्वयः

पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

तत्=बही एतत्=यह श्रात्मा पुत्रात्=पुत्र से प्रेयः=प्यारा है विसात्=धन सं भी प्रयः=प्यारा है यत्≕जो श्रयम्=यह श्चात्मा=श्रात्मा है + तत्=वही अस्यस्मात्=श्रौर सर्वस्मात्=सब बस्तुश्रों से भी प्रेयः=प्यारा है + हि=वयोंकि भन्तरतरम्≕यति निकट है सः=सो यः=जो कोई धारमजानी अस्यम्=अपने से पृथक् पुत्रा-दिक को आत्मनः=भपने भारमा से प्रियम्=प्रियतम श्रुवाण्म्=माननेवाचे से ब्यात्≖कहे कि

+ ते=तेरा
प्रियम्=पुत्रादि पदार्थ
रोस्स्यति=नष्ट होजायगा
+ सः=वह भात्मज्ञानी तो
ह=श्वदय
तथा पव=ऐसा कहने को
ईश्वरः=समर्थ
स्यात्=है
श्वतः=इसिवये
पियम् }=भ्रपने प्रिय भात्माकी
भात्मानम्
पव=ही
उपासीत=उपासना करे

प्व=ही
उपासीत=उपासना करे
सः=वह
यः=जो
प्रियम्=प्रिय
शारमानम्=चाल्माकी
उपास्ते=उपासना करता है
शस्य ह=डसका ही
प्रियम्=प्रिय पुत्रादिक
प्रमायुकम्=मरखाबा
प्व व=कभी नहीं
भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौन्य । यह अन्त:करगाविशिष्ट चैतन्य आत्मा सत्र वस्तुओं

से प्यारा है, यह पुत्र से प्यारा है, धन से प्यारा है, क्योंकि अपित निकट है. और जो कोई आत्मज्ञानी अनात्मज्ञानी से जो अपने से अपने पुत्रादिकों को प्रिय मानता है कहे कि तेरा प्रिय पुत्रादि पहार्थ नष्ट होजायगा तो उस आत्मज्ञानी का ऐसा कहा हुआ सत् होता है इसिलये पुरुष अपने आत्मा की ही सदा उपासना करता रहे. जो अपने प्रिय आत्मा की उपासना करता है उसका प्रिय पुत्रादिक मस्सा धर्मवाला कभी नहीं होता है।। = 11

मन्त्रः ६

तदाहुर्यद् ब्रह्मविद्यया सर्वे भविष्यन्तो मनुष्या मन्यन्ते किमु तदुब्रह्मावेद्यस्मात्तत्सर्वमभवदिति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, ब्राहुः, यत्, ब्रह्मविद्यया, सर्वम्, भविष्यन्तः, मनुष्याः, मन्यन्त, किमु, तत्, ब्रह्म, अवेत्, यस्मात्, तत्, सर्वम्, अभ-चत्, इति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=यहां ब्राहुः=कोई ज्ञानी कहते हैं ब्रह्मविद्यया=ब्रह्मविद्या करके ही सर्वम्=सब वस्तुको भविष्यन्तः≐हम प्राप्त होंगे अथवा तद्रप होंगे + इति=इस प्रकार **मनुष्याः**=मनुष्य यत्≕जो

मन्यन्ते=मानते हैं तो

किमु=क्या संभव है कि + सः=वह

तत्=उस ब्रह्म=ब्रज्ञ को इाते=ऐसा श्रवेत्=जानसके

यस्मात्=जिस ज्ञान से

तत्=यह सर्वम्=सब जगत् + ब्रह्म=ब्रह्मरूप

अभवत्=होताभया है

भावाधे।

हे सौम्य ! यहां कोई ज्ञानी ऐसा कहते हैं कि ब्रह्मविद्या करके ही सब वस्त को हम प्राप्त होंगे अपथवा हम इन के तद्रप होजायँगे इस प्रकार जो मनुष्य मानते हैं तो क्या संभव है कि वह उस श्रक्षकों ऐसा जानसके जिससे यह सब जगत् ब्रह्मरूप होता भया है।। ६।।

मन्त्रः १०

ब्रह्म वाइदमप्र आसीत्तदात्मानमेवावेत् । अहं ब्रह्मास्मीति त-स्मान्तत्त्वर्मभयत्तवो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत्त्यर्षीणां तथा मनुष्याणां तद्धैतत्पश्यन्त्वः भिर्वामदेवः प्रतिषेदेऽहं मनुरमवं सूर्यन्त्रेति । तदिदमप्येतिहं य एवं वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वे भवति तस्य ह न देवाश्च नाभूत्या ईशते आत्मा ह्रेषां स भवति अथ योन्यां देवतामुपास्तेन्योसावन्योहमस्त्रीति न स वेद यथा पशुरेवं स देवानाम् यथा ह वै वहवः पश्यो मनुष्यं मुञ्ज्यरेवमेकैकः पृष्को देवानमुनन्त्येकस्मिन्नेव पशावादीयमानेऽप्रियं भवति किमु बहुपु तस्मादेषां तन्न भियं यदेतन्मनुष्या विद्याः ॥

पदच्छेदः।

ब्रह्म, ब्रें, इत्म, अप्रे, आसीत्, तत्, आसानाम्, एव, अवेत्, आहम्, ब्रह्म, अह्म, हिन, तस्मात्, तत्, सर्वम्, अभवत्, तत्, यः, यः, देवानाम्, प्रत्यवुष्यतं, सः, एव, उत्, अभवत्, तया, श्रृषीयाम्, तथा, मनुष्यागाम्, तत्, ह, एतत्, परयन्, श्रृषिः, वामदेवः, प्रतिपेते, आहम्, मनुः, अभवम्, सूर्यः, च, इति, तत्, इदम्, अपि, एतर्हि, यः, एवम्, वेद, अहम्, श्रह्म, श्रह्म, इति, सः, इदम्, सर्वम्, भवित, तथ्य, ह, न, देवाः, च, न, अभ्यये, ईशते, आत्मा, हि, एषाम्, सः, भवित, अथ, यः, अन्याम्, देदताम्, ष्पास्ते, अन्यः, असी, अन्यः, अहम्, असिम, इति, न, सः, वेद, यथा, पर्यः, एवम्, सः, देवानाम्, यथा, ह, वे, बह्वः, परावः, मनुष्यम्, भुक्ज्युः, एवम्, एकेकः, पुरुषः, देवान्, मुनक्ति, एकस्मिन्, एव, पर्यो, आदीयमाने, आदियम्, भवति, किन्न, बहुषु, तस्मात्, एषाम्, तत्, न, प्रियम्, यत्, एतन्, मनुष्याः, विद्यः ॥

श्रश्यः

पदार्थाः

श्रन्वयः

षदार्थाः

इद्म=यह एक ब्रह्म=ब्रह्म वै=धी अधे=सृष्टि के आदि में श्चासीत्=था तत् एव=सोई आत्मानम्=अपने को शहम्=भें ब्रह्म=मद्म श्राह्म=हं इति=ऐसा श्रवेत्=जानता भया तस्मात्=इसिबये तत्=वह ब्रह्म सर्वम्=सब रूप यानी व्यापक श्रभवत्=होताभवा तत्=तिसी कारण देवानाम्=देवतायां में ं तथा=मथवा त्रमुषीग्राम्=ऋवियों में तथा मनु-) = अथवा मनुष्यों में य:=जो य:=जो प्रत्यबुध्यत=ज्ञानवान् हुये सः एव=वही वहां

> तत्=वह बद्य स्रभवत्=होते भये

> > पतत्न्=इस बद्धज्ञान को

तत् ह=उसी ही

पश्यम्=जानता हुआ धामदेवः=वामदेव भृषिः=ऋषिने धाद=कहा कि श्रहम्='भैंही मनुः≔मनु अभवम्=होता भया च≔घौर + ग्रहम्=मेंही सूर्यः=सूर्य + श्रभवम्=होतामवा " इति=ऐसे प्रतिपदे=ज्ञानको वह प्राप्त हुश्रा तत्=तिसी कारण यः≕जो एतर्हि=श्राजकल श्रपि≕भी तत्=डस इदम्≔इस प्रसिद्ध ज्ञानकी वेद्=जानता है सः≔वह भी इति=ऐसा +म्राह=कहता है कि श्रहम्=''मैं ब्रह्म=त्रहा अस्मि=हुं'' + च=धौर सः=वही इदम्=यह

सर्वम्=सब रूप

भवति=होता है तस्य=उस ब्रह्मवेता के अभूत्यै=त्रकल्यागार्थ + कश्चित्=कोई भी देवाः=देवता न हन=कभी नहीं ईशते=समर्थ होते हैं हि=क्योंकि सः≔वह ज्ञानी एषाम्=उन देवतायां का श्चात्मा=श्चात्मा भवति=होता है श्रथ=भौर श्रसौ=यइ अन्यः=श्रीर है + श्रहम्≕में अन्यःश्रस्मि=श्रीर हं इति=इस प्रकार + शास्त्रा=जान करके यः=जो **अन्याम्**=धन्य देवताम्=देवताश्रों की उपास्ते=उपासना करता है सः=वह न=नहीं ' वेद्=जानता है कि सः=वह ग्रज्ञानी एव≕निश्रय करके **देवानाम् प**शुः≔देवतार्श्वोका पशुई यथा≃जैसे वहवः=घहुत पश्चः=पशु

ह वै=निरचय करके मनुष्यम्=मनुष्यको भुञ्ज्युः≔पोषण करते हैं एवम्=उसी प्रकार एकैकः≔एक एक पुरुष:=श्रज्ञानी पुरुष देवान्=देवताश्रां को भूनक्रि=पोषण करता है एकस्मिन्) किसी एक पशु के पव पशी }= व्हराविये जाने पर आदीयमाने श्रियम्=दुःख + स्वामिन:=उस के स्वामी को भवति=होता है बहुख=बहुतरे पशुके चुरा जाने पर किम्+तस्य दशो भवि- }=क्या उसकी दशाहोगी इदम् (यही श्रनुभव करने । श्रनुभवाहम् (योग्य है तस्मात्=इसिबये एषाम्=इन देवताओं को तत्=त्रवज्ञान न=नहीं त्रियम्=त्रिय बगता है + श्रत:=इस ख्वात से कि यत्=शायद + ब्रह्मज्ञानेन=ब्रह्मज्ञान करके मनुष्याः=मनुष्य प्तत्≖इस बद्यको

थिदुः≕कहीं जानजायँ

भावार्थ ।

हे सौन्य ! सृष्टि के आदि में केवल एक ब्रह्मही था. वही ब्रह्म जब अपने को जानता भया कि मैं ब्रह्म हूं, तब वही सबरूप यानी व्यापक होता भया, तिसी कारण देवताओं में, ऋषियों में, मनुष्यों में, जो जो ज्ञानवान हुये वेही वेही, ब्रह्मस्वरूप होते भये, तिसी ब्रह्मको जान करके वामदेव ऋषिभी ब्रह्मरूप होता भया, श्रीर • कहने लगा कि सूर्य मैंही हुं,मनु मैही हूं, भीर तिसीकारण आजकल के लोग जो इस प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञान को जानते हैं वह भी ऐसा कहते हैं कि मैं ब्रह्म हूं, धीर वही सबरूप होते भी हैं: ऐसे ब्रह्मवेत्ता को कोई देवता एक बाज भी टेढ़ा नहीं करसका है. और जो पुरुष यह जानता है कि मैं और हूं और देवता और हैं. और फिर उनकी उपासना करता है वह अज्ञानी निश्चय करके देवताओं का पश है, और जैसे पश मनुष्योंका पोषशा करता है. उसी प्रकार एक एक अज्ञानी देवताओं का पोषरा करता है, जब एक पशुके चुराजाने पर उसके स्वामी को द:ख होता है तो यदि उसके बहुत से पशु चुरा किये जायँ तो उसके दुःख की क्या दशा होगी ? हे सौम्य ! तुम अनुभव करसके हो, और यही कारता है कि देवताओं को ब्रह्मज्ञान प्रिय नहीं लगता है, और वे इस ख्याल से खरा करते हैं कि कहीं मेरे सेवक ब्रह्मज्ञान करके ब्रह्म को न प्राप्त होजायँ झौर मेरी सेवा न छोड़दें ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

ब्रह्म वाइद्मम्र श्रासीदेकमेव तदेकं सम्न व्यभवत् तच्छ्रेयोरूप-मत्यस्रजत क्षत्रं यान्येतानि देवत्रा क्षत्राणीन्द्रो वरुणः सोमो रुद्रः पर्जन्यो यमो मृत्युरीशान इति । तस्मात्क्षत्रात्परं नास्ति तस्माद्-ब्राह्मणः क्षत्रियमधस्तादुपास्ते राजसूये क्षत्र एव तद्यशो द्धाति सैषा क्षत्रस्य योनिर्यद्श्वस्म तस्माद्यद्यि राजा परमतां गच्छति ब्रह्मैवा- न्तत उपनिश्रयति स्वां योनि य उ एनं हिनस्ति स्वां स योनिमृच्छति स पापीयान् भवति यथा श्रेयांसं हिंसित्वा ॥

पदच्छेदः ।

ज्ञक्क, वै, इदम, अप्रे, आसीत्, एकम्, एव, तत्, एकम्, सत्, न, न्यभवत्, तत्, श्रेयोरूपम्, अदरस् जत, क्षत्रम्, यानि, एतानि, देवत्रा, क्षत्रािण्, इन्द्रः, वक्णः, सोमः, रुद्रः, पर्जन्यः, यमः, मृत्युः, ईशानः, इति, तस्मात्, क्षत्रात्, परम, न, अस्ति, तस्मात्, आक्ष्याः, क्षत्रियम्, अधस्तात्, उपास्ते, राजसूये, क्षत्रे, एव, तत्, यशः, दधाति, सा, एषा, क्षत्रस्य, योनिः, यत्, ज्ञद्धा, तस्मात्, यदि, आपि, राजा, परमताम्, गन्द्वति, ब्रह्म, एव, अन्ततः, उपनिश्रयति, स्वाम्, योनिम्, यः, उ, एनम्, हिनस्ति, स्वाम्, सः, योनिम्, अमृत्वते, सः, पापीयान्, भवति, यथा, श्रेयांसम्, हिंसित्वा ॥

अन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

वै≕भवश्य इदम् एकम्=यह एक ब्रह्म एव= बाब्रयवर्ष अग्रे=सष्टि के बादि में श्रासीत्=था तत्=वही ब्राह्मण्वर्ण एकम्=एक सत्=होने के कारण न व्यभवत्=विशेष वृद्धिको नहीं प्राप्त हुवा तत्≕तव + तत्=उस बाह्यसवर्णने . श्चेयोरूपम्=प्रशंसनीय क्षत्रम्=क्षत्रिय जातिको श्रात्यसृजत=उत्पन्न किया यानि=जिन

पतानि≂इन देवत्रा=देव सत्राणि=क्षत्रियों में इन्द्रः=गरुव् बरुगुः=वरुग सोमः=चन्द्रमा रुद्र:=रुद्र पर्जन्यः≔इन्द्र यमः=यमराज मृत्युः=मृत्यु **ईशानः**=वायु इति=करके प्रसिद्ध हुये हैं तस्मात्=इसलिये क्षत्रात्=क्षत्रिय से परम्=भेष्ठ न अस्ति≔कोई वर्ण नहीं है

तस्मात्=इसी कारव राजसूये=राजसूय यश में ब्राह्मयः=ब्राह्मय श्राधस्तात्+ सन्=क्षत्रिय से मीचे वैठा क्षत्रियम्=क्षत्रिय की उपास्ते≕सेवा करता है + च≂मौर क्षत्रे=क्षत्रिय विषे एव=ही तत् यशः=उस यानी अपने यशको वधाति=स्थापित करता है यत्=जो ब्रह्म≔प्राह्मण है सा=धरी एषा=यह क्षत्रस्य=क्षत्रिय के योनिः=उत्पत्ति का स्थान है तस्मात्=तिसी कारण यदिश्रपि=यद्यपि राजा≔राजा + राजसूये=राजसृय यश्में परमताम्=श्रेष्ठ परवी को गच्छति=प्राप्त होता है

+ परम्तु=परम्तु ग्रन्ततः=यज्ञ के घन्तमें स्वाम्=भपने यानिम्=अत्वित्तके स्थान बानी ब्रह्म एच=अश्वाय के निकट उपनिश्चयति=बैठता है उ≔ग्रीर यः=जो क्षत्रिय पनम्=बाह्यगको हिनस्ति=तिरस्कृत करता है सः=वह स्वाम्=श्रपने योनिम्=उत्पत्तिके स्थान की भ्राच्छति=नाश करता है + स=धीर सः≔वह + तथा=वैसेही पापीयान्=श्रति पातकी भवति=होता है यथा=जैसे कोई श्रेयांसम्=अपने से बड़े का हिंसित्वा=तिरस्कार करके + पापतरः≔पातकी

+ भवति=होता है

भावार्थ।

हे सौन्य ! सृष्टि के आदिमें केवल एक ब्राह्मण वर्णाथा, वह ब्राह्मण वर्णा एक होने के कारण विशेष वृद्धि को नहीं प्राप्त हुआ, यानी आपनी रक्षा नहीं करसका इसलिये उस ब्राह्मण वर्णाने एक प्रशंसनीय क्षत्रिय जातिको उत्पन्न किया, और उन्हीं श्रुत्रियों में बड़े वह महान पुरुष असे गरुड, वरुण, चन्द्रमा, रुद्र, इन्द्र, मृत्यु, वायु, यमराज आदि के नाम से विख्यात हैं, इसलिये क्षत्रिय जातिसे और कोई श्रेष्ठ नहीं है, और यही कारणहै कि राजस्ययज्ञ में ब्राह्मण जो क्षत्रियों के उत्पत्ति का कारण है क्षत्रिय राजा के नीचे वैठता है, और उसकी सेवा करता है, और क्षत्रियविषे वह ब्राह्मण अपने यशको स्थापित करता है, ब्राह्मण ही क्षत्रिय के उत्पत्ति का स्थान है, इसी कारण यद्यपि राजा राजस्य यज्ञ में श्रेष्ठ पदवी को प्राप्त होता है परन्तु यज्ञ में श्रेष्ठ पदवी को प्राप्त होता है परन्तु यज्ञ में श्रेष्ठ पदवी को प्राप्त होता है परन्तु यज्ञ में स्थान होने पर वह ब्राह्मण्ये निकटही बैठता है, और जो क्षत्रिय ब्राह्मण्योको तिरस्कार करता है, वह अपने उत्पत्तिके स्थान को नाश करता है, और वह वैसे ही अतिपातकी समस्ता जाता है, जैसे कोई अपने से बड़े को तिरस्कार करके पातकी होता है।। ११ ॥

मन्त्रः १२

स नैव व्यभवत्स विशमस्रजत यान्येतानि देवजातानि गर्णश भारत्यायन्ते वसवो रुद्रा भ्रादित्या विश्वेदेवा मस्त इति ॥

पदच्छेदः।

सः, न, एव, व्यभवत्, सः, विशम्, अस्जत, यानि, एतानि, देवजातानि, गगा्शः, श्राख्यायन्ते, वसवः, रुद्राः, आदित्याः, विश्वे-देवाः, मरुतः, इति ॥

पदार्थाः अन्वयः व्यन्धयः + यदा=जब अस् जत=उत्पन्न करता भवा यानि≕जो सः≃वह बाह्य + कर्मेश=द्रव्य उपार्जन के पतानि=ये स्तिये देघजातानि⇒देव बैरव न एव≕नहीं गण्शः=गव ब्यभवत्≔समर्थ हुमा + इति=करके श्राख्यायन्ते=कहे जाते हैं + तदा=तब सः≔वह विशम=वैश्यजाति को बसबः=बाठ बस

रुद्धाः=यारह रुद्ध म्रादित्याः=बारह सूर्व विश्वेदेवाः=तेरह विश्वेदेव ं मरुतः=सात वायु

भावांर्ध ।

हे सौम्य ! जब वह ब्रह्मा (ब्राह्मणा) द्रव्य उपार्जन के करने में असमर्थ हुआ, तब वह वैश्यजाति की सृष्टिको रचता भया, हे सौम्य! को यह सब देवगणा कहे जाते हैं उनमें श्राठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह सूर्य, तेरह विश्वेदेव, सात वायुदेव वैश्यजाति करके प्रसिद्ध है ॥ १२ ॥ मन्त्रः १३

स नैव व्यभवत्स शोद्रं वर्णमस्जत पूष्णभिवं वे पूषेवं होदं सर्व

प्रध्यति यदिदं किंच ॥

पदच्छेदः ।

सः, न, एव, व्यभवत्, सः, शौद्रम्, वर्गाम्, श्रमुजत, पूष्णाम्, इयम, वै, पूपा, इयम्, हि, इदम, सर्वम, पुष्यति, यत, इदम, किंच ॥ श्चन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

+ यदा=जब सः≔वह पुरुष + सर्वार्थम्=सब के पोषण के बिये

न पख≕नहीं ब्यभवत्=समर्थ होता भया

+तदा=तब

सः=वह पृष्णम्=पोषण करने वाले शौद्रम्=शृद

वर्णम्=वर्णको श्रसज्जत=उत्पन्न करता भया

इयम् हि=यही शृद्रजाति वै=निरचय करके

पूषा=पृष्टिकत्रीं है + यथा≕त्रेसे

इयम्=यह पृथ्वी इदम्=डस

सर्वम्=सक्को

प्रवि=पृष्ट करती है यत्≕जो

किंच=कुछ

इदम्≔यह है यानी इस के षाधेय है

भावार्थ। हे सौम्य ! जब वह ब्राह्मणा सब क सेवा करने को समर्थ नहीं भया, तब उसने पोषमा करनेवाले शूद्रवर्गाको उत्पन्न किया, यही शूद्र जाति निरचय करके सबको पुष्ट करती है जैसे यह पृथ्वी सक्को पुष्ट करती है ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

स नैव व्यभवत्तच्ल्रेयोरूपपत्यस्यत धर्म तदेतत्क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्म-स्तस्माद्धमीत्परं नास्त्यथो अवलीयान्वलीयांसमाशंसते धर्मेण यथा राह्नेवं यो वे स धर्मः सत्यं वे तत्तस्मात्सत्यं वदन्तमाहुर्धमं वदतीति धर्म वा वदन्तं सत्यं वदतीत्येतद्धयेत्रैतदुभयं भवति ।।

पदच्छेदः ।

सः, न, एव, व्यभवत्, तत्, श्रेयोरूपम्, झ्रात्यसृजत, धर्मम्, तत्, एतत, क्षत्रस्य, क्षत्रम्, यत्, धर्मः, तस्मात्, धर्मात्, परम, न, झ्रस्ति, झ्राथो, झ्रवलीयान्, बलीयांसम्, झ्राशंसते, धर्मेण, यथा, राज्ञा, एवम्, यः, वे, सः, धर्मः, सत्यम्, वे, तत्, तस्मात्, सत्यम्, बदन्तम्, झाहुः, धर्मम्, वद्ति, इति, धर्मम्, वा, वदन्तम्, सत्यम्, सत्यम्, वदति, इति, एतत्, हि, एव, एतत्, उभयम्, भवति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

+ यद्दा=जब
सः=बह बद्धत्वाभिमानी
पुष्प
+बृद्धिम् कर्तुम्=बृद्धि करने में
नैव=नहीं
व्यभवत्=समर्थे हुमा
तत्=तब
भेगोरूपम्=करवाण्यरूप
धर्मम्=धर्म को
अस्जत=उत्पन्न ह ता भया
तस्मात्=इस्बिये
यत्=जो

पतत्=यह धर्मः=धर्म है तत्=वही क्षत्रस्य=क्षत्रका

क्षत्र है. यानी वह शासन करनेवाले क्षत्रियों का भी शासक है

तस्मात्=तिसी कारख धर्मात्=धर्म से परम्=श्रेष्ठ नास्ति=कोई नहीं है

श्रधो=धौर अबलीयान्=निर्वेत बलीयांसम्=बलीके +जेत्म=जीतने को धर्मेग=धर्म करके ही आशंसते=इच्छा करता है यथा=जैसे राज्ञा=राजा के साथ स्पर्द्धमानः=भगदा करनेवाला पुरुष धर्मेग=धर्म करके ही जीयते=जीता जाता है वै=निश्चय करके यः=जो सः≔वह धर्मः=धर्म है तत्=वही सत्यम्=सत्य है तस्मात्=इसीविये

सत्यमू=सत्य वदन्तम्=बोखनेवाले को इति=ऐसा आहु:=खोग कहते हैं कि स्य:=वह धर्मम्≔धर्म की बात बदति=कहता है वा=ग्रीर धर्मम=धर्म के वद्न्तम्=कहने वाले को इति≔ऐसा + आहु:=कहते हैं कि + सः=वह सत्यम्=सत्य चदति=कहता है हि=क्योंकि एतत्=यहं सत्य भौर धर्म उभयम्=दोनों एतत=यही है यानी एकडी है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! जब वह बाह्या बृद्धिक करने में असमर्थ हुआ, तब वह कल्यागारूप धर्म को उत्पन्न करता भया, इसिकिय जो कुछ यह धर्म है वह क्षत्रका क्षत्र है यानी वह शासन करनेवाको क्षत्रियों का भी शासक है, तिसी कारणा धर्म से श्रेष्ठ और कोई वस्तु नहीं है, क्यों कि इसी धर्म करके निर्वली बली के जीतने की इच्छा करता है, और जैसे राजा, चोर, डांकू, दुष्ट पुरुषों को धर्म करके जीत लेता है, वैसे ही राजा भी धर्मही करके जीता जाता है, जो धर्म है वही सत्य है अरे यही कारणा है कि सत्य बोलनेवाको को लोग कहते हैं कि वह धर्म की बात कहता है, आरे धर्म के कहनेवाले को लोग कहते हैं कि वह धर्म की बात कहता है, क्यों कि सत्य शौर धर्म दोनों एकही है। १४ ॥

मन्त्रः १४

तदेतद्ब्रहा क्षत्रं विर् शूद्रस्तदग्निनैव देवेषु ब्रह्माभनद्बाह्मखो मनुष्येषु क्षत्रियेण क्षत्रियो वैश्येन वैश्यः शूद्रेण शूद्रस्तस्माद्रग्नावेव देवेषु लोकमिच्छन्ते ब्राह्मणो मनुष्येष्वेताभ्यां हि रूपाभ्यां ब्रह्मा-भनदथ यो ह वा अस्माङ्मोकात्स्वं लोकमदृष्ट्वा भैति स एनमिव-दितो न भुनक्ति यथा वेदो वाननुक्तोन्यद्वा कर्माकृतं यदिह वा अप्य-नेवंविन्महत्युएयं कर्म करोति तद्धास्यान्ततः शीयत एवात्मानमेव लोकमुपासीत स य श्रात्मानमेव लोकमुपास्ते न हास्य कर्म क्षीयते श्रस्माद्धचेवात्मनो यचत्कामयते तत्तत्स्वजते ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एतत्, ब्रह्म, क्षत्रम्, विट्, शूद्रः, तत्, श्राग्निना, एव, देवेषु, ब्रह्म, अभवत्, ब्राह्मग्राः, मनुष्येषु, क्षत्रियेगा, क्षत्रियः, वैश्येन, वैश्यः, शृद्रेस, श्द्रः, तस्मात्, श्राग्नौ, एव, वेदेपु, लोकम्, इच्छन्ते, ब्राह्मसः, मनुष्येषु, एताभ्याम्, हि, रूपाभ्याम्, ब्रह्म, श्रभवत्, श्रथ, यः, ह, वे, अस्मात्, लोकात्, स्वम्, लोकम्, श्रदृष्ट्वा, प्रेति, सः, एनम्, श्रवि-दितः, न, भुनिक्त, यथा, वेदः, वा, अननुक्तः, अन्यत् , वा, कर्म, इथकतम्, यत्, इह, वा,श्रमि, श्रमेवंवित्, महत्, पुगयम्, कर्म, करोति, तत, ह, श्रास्य, श्रान्ततः, क्षीयते, एव, श्रास्मानम्, एव, लोकम्, उपासीत, सः, यः, ऋात्मानम्, एव, लोकम्, उपास्ते, न, ह, अध्य, कर्म, क्षीयते, अस्मात्, हि, एव, आत्मनः, यत्, यत्, काम-यते, तत्, तत्, सृजते ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=वही पतत्व≕यह ब्रह्म=माद्यग क्षत्रम्=क्षत्रिय विट=वैश्य

शुद्धः=शुद + चातुर्वएर्यम्=चारवर्ध है तत्=वही ब्रह्म देवेषु=देवताओं में अभिना एव=अन्निरूप करके

ब्रह्म=नवा अभवत्=होताभया +सः=वही मनुष्येषु=मनुष्यों में + ब्राह्मणः=ब्राह्मण + ग्रभवत्=होताभया +एवम्=इसीतरह क्षात्रियेसा=क्षत्रिय करके क्षत्रियः=क्षत्रिय वैश्येन=वैश्य करके वैश्यः=वैश्य शूद्रेग=शूद्र करके शद्भः=शृद + अभवत्=होताभया तस्मःत्=इसिवये अग्नौ=धरिन विवे एव=ही + याश्चिकाः=यज्ञकरने वाले लोकम्=कर्मफलकी इच्छन्ते=इच्छा करते हैं हि=क्योंकि मनुष्येषु=मनुष्यों के मध्य ब्रह्म=बद्य पताभ्याम्=इनहीं यानी यज्ञकर्मकाकर्ता ब्राह्मग्रः=ब्राह्मग्र अभवत्=होताभया

> अथ=मार यः≕जो

ष्ठ वै≕निरचय करके स्वम्=चपने लोकम्=चात्माको श्रद्धा=न जानकर ग्रस्मात्=इस लोकात्=कोक से प्रैति=क्ंच करजाता है सः≔वह अविदितः=अज्ञानी प्नम्=श्रपने श्रात्मानन्दको न=नहीं भुनक्ति=शास होता है यथा वा=जैसे श्रननुकः=गुरुसे न पढ़ाहुश्रा वेदः≔वेद वंधेषु=देत्रतात्रों के मध्य + न + भुनक्ति=कर्म के फलको नहीं देता है वा=अथवा +यथा=जैसे असतम्=नहीं की हुई कर्म=खेती + न + फलम्=नहीं फलको +भुनक्ति=देती है यत्=जिसकारग इह=इस लोक में अनेवंवित्=अपने आत्मा का न जानने वाला अपि=भी महत्=वक् पुरायम्=पुराय कर्म=कर्म को करोति=करता है

+ परन्तु=परन्तु

ग्रस्य=उसका

तत्=वह फल

ह एव=अवश्य

ग्रन्ततः=भोगने के पीछे
श्रीयते=नष्ट होजाता है
+ ग्रतः=तिस कारण

ग्रात्मानम्
लोकम्
=अपने ग्रात्माकी ही
एव

उपासीत=उपासना करे यानी
ग्रपने ग्रात्माको जाने
सः=वह
य:=जो

ग्रात्मानम्
रात्मानम्
रात्मानम्
राञ्मानम्
रात्मानम्
रात्मानम्

उपास्ते=उपासना करता है

ग्रस्य ह=उसकाही

कर्म=कर्म फल

न'ह=कभी नहीं

श्रीयते=श्रीय होता है

हि=श्रोंकि

ग्रस्मात् }

=हसही

एवं } = इसहा
आत्मनः= आत्मा से
यत्ः जो
यत्ः जो
+ सः= वह
कामयते= वाहता है
तत् तत्= उस उसको
सजते= प्राप्त करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वेश्य, शृहवर्णों में ब्राह्मण झ्रानिहरप ब्रह्म होता भया, वही मनुष्यों में ब्राह्मण होता भया, क्षत्रियों के मध्य देवश्वत्रिय होता भया, वैश्यों के मध्य देववेश्य होता भया, शृहों के मध्य शृद्ध होता भया, इसिलये देवताओं के मध्य अगिन विषे यज्ञ करनेवाले कर्मफल की इच्छा करते हैं, क्योंकि मनुष्यों के मध्य ब्राह्मण में यज्ञकर्म का कर्ता और यज्ञकर्म का अधिकरण श्राग्निहर ब्राह्मण ही होता भया है और जो अपने आत्माको न जानकर इसलोक से कूंच करजाता है, वह अज्ञानी अपने आत्मानन्द को नहीं प्राप्त होता है, जैसे गुरु से न पहाहुआ वेद कर्म के फलको नहीं देता है, अथवा जैसे नहीं की हुई खेती फलको नहीं देती है, और जिस कारण इस क्यां भी कर्म फलके भोगने के पीछे नष्ट होजाता है, तिसी कारण पुरुष आपने आत्मा की उपासना करे यानी आपने आत्माको जाने जो पुरुष आपने आत्मा की उपासना करता है उसका कर्मफल कभी नष्ट नहीं होता है, क्योंकि उपासक जो जो बस्तु आत्मासे चाहता है उस उस वस्तु को वह प्राप्त होता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

अथो अयं वा आत्मा सर्वेषां भूतानां लोकः स यज्जुहोति यचजते तेन देवानां लोकोय यदनुबूते तेन ऋषीणामथ यत्पितृभ्यो निषृ-णाति यत्प्रजामिच्छते तेन पितृणामथ यन्पनुष्यान्वासयते यदेभ्यो-शनं ददाति तेन मनुष्याणामथ यत्पशुभ्यस्तृणोदकं विन्दति तेन पश्नां यदस्य गृहेषु श्वापदा वयांस्यापिपीलिकाभ्य उपजीवन्ति तेन तेषां लोको यथा ह वै स्वाय लोकायारिष्टिमिच्छेदेवं हैवंविदे सर्वाणि भूतान्यरिष्टिमिच्छन्ति तदाएतिहदितं मीमांसितम् ॥

पदच्छेदः ।

आथो, श्रयम्, वे, श्रातमा, संवेपाम्, भूतानाम्, लोकः, सः, यत्, जुहोति, यत्, यजते, तेन, देवानाम्, लोकः, श्रथ, यत्, श्रानृत्रूते, तेन, श्रृषीसाम्, श्रथ, यत्, पितृभ्यः, निपृस्पाति, यत्, प्रजाम्, इच्छते, तेन, पितृसाम्, अथ, यत्, मनुष्यान, वासयते, यत्, एभ्यः, श्रश्मनम, ददाति, तेन, मनुष्यासाम्, श्रथ, यत्, पर्युभ्यः, नृस्पोदकम, विन्दति, तेन, पश्चाम्, यत्, श्रस्य, गृहेषु, श्वापदाः, वयांसि, श्रा, पिपीलिकाभ्यः, उपजीवन्ति, तेन, तेषाम, लोकः, यथा, ह, वे, स्वाय, लोकाय, श्रारिष्टम्, इच्छन्ति, तन्, वे, एतम्, ह, एवंविदे, सर्वािसा, भूतानि, श्रारिष्टम्, इच्छन्ति, तन्, वे, एतन्, विदितम्, मीमांसितम् ॥

भ्रन्वयः पदार्थाः भन्वयः पढार्थाः

श्रथो=तत्परचात् वै=निश्चय करके श्रयम्=यह गृहस्थाभमी म्रात्मा=पुरुष सर्वेषाम्=सर भूतानाम्=प्रागियों हा

लोकः=माश्रय है सः=वह पुरुष यत्=जो ज्रहोति=होम करता है यत्=गो यजते=प्रतिदिन यज्ञ करता है तेन=उसी कर्म करके + सः≔वह देवानाम्=देवोंका लोकः=ग्राथय + भवति=होता है अथ=भौर यत्=गे अनुत्र्ते=पठन पाठन करता तेन=उसकरके + सः≔वह ऋषीगाम्=ऋषियों का + लोकः=भाभय + भवति=होता है **अथ**≕थीर यत्=जो पित्रयः=पितरों के जिये निपृणाति=पिंडा और पानी देताहै + च=धौर यत्≕जो **प्रजाम्**=संतान की इच्छते=इच्छा करता है तेन=इस पिंडदान और संतान करके पितृगाम्=पितरी का + सः≔वह + लोकः=श्राश्रय

+ भवति=होता है अध=धौर यत्≕जो मनुष्यान्=मनुष्यों को (भपने घरमें जगह वासयते= 🗸 जनादि देकर वास र कराता है + च=ग्रीर यत्=जो प्रथः=उनके लिये अशनम्=भोजन दद।ति=देता है तेन≕उस जल वस्त्र श्रद्धां मनुष्याणाम्=मनुष्यां का + सः=वह + लोकः≕प्राध्य + भवति=होता है अध=श्रीर यत्≕जो पशुभ्यः=पशुद्धों के लिये तृणोदकम्=धास फूस भौर जब विन्द्ति=देता है तेन=उस करके पश्चनाम्=पशुद्धों का + सः=वह + लोकः≕भाशव + भवति=होता है यत्≕जो अस्य=इसी गृहस्थी के गृहेषु=वरों में श्वापदाः=चौपावे

वयांसि=पक्षी आपिपीलि- }=मौर चींटी तक उपजीधन्ति=भन्न पाकर जीते हैं तेत=उसी करके + सः=वह तेषाम्=चौपायों आदिकों का लोक:=आश्रय + भवति=होता है + श्रथ ह वै≕धीर श्रवश्य ही यथा=जैसे + प्रत्येकः=इरएक पुरुष स्वाय=भपने लोकाय=देहप्रविष्ट जीवात्मा के जिये श्रारिष्टिम्=श्रविनाशिख को इच्छेत्=इच्छा करता है प्वम् ह=वैसेही

प्रवंदिदे=ऐसे जानने बाखे के
क्षिये भी
सर्वाणि=सब
भूतानि=प्राणी देवतादि
+ तस्य=उसके
प्रारिष्टिम्=प्रविनाशित्व को
इञ्छुन्ति=चाहते हैं
+ च=प्रीर
तत्व=साई
प्रतत्=यह यज्ञादिकर्म

विदितम्=पंचमहायज्ञादि प्रक-रण में कहा गया है + च=भौर + तत् एव=वही

+ इह=यहां पर भी मीमांसितम्=कर्तन्यरूप से विचार का विषय हुआ है

भावार्थ।

हे सौम्य ! गृहस्थाश्रमी पुरुष सब प्राणियों का आश्रय है, वह पुरुष जो होम करता है, और जो नित्यप्रति यह करता है, वह उसी कर्म करके देवोंका आश्रय होता है, और जो पठन पाठन करता है वह उस करके अपूषियों का आश्रय होता है, आर जो पितरों के लिये पिंडा पानी देता है और जो संतान की इच्छा करता है तो वह उस पिंडदान और संतान करके पितरों का आश्रय होता है, और जो अभ्यागतों को अपने घर में ठहरा कर जल मोजनादि देता है उस जल वस्त्र अन्न करके वह मनुष्यों का आश्रय होता है, और जो पशुओं को घास फूस देता है, वह उस करके पशुओं का आश्रय होता है, दे सौम्य ! उसी गृहस्थाश्रमी पुरुष के घर में पशु, पक्षी

चींटी तक सब अन्न पाकर जीते हैं, उसी करके वह पुरुष पशु पशी आदिकों का आश्रय होता है, और जैसे हर एक पुरुष अपने देह प्रविष्ट जीवात्मा के अविनाशित्व को इच्छा करता है वैसेही ऐसे उपासक के लिये भी सब प्राण्णी देवता आदिक उसके अविनाशित्व को भी चाहते हैं, और सोई यह यज्ञादिकम वेद के पंचमहायज्ञ प्रकरण में कहा गया है, और वही यहां पर भी कर्तव्यरूप से विचार का विषय हुआ है।। १६ ॥

मन्त्रः १७

श्रात्मैवेदमप्र श्रासीदेक एव सोऽकामयत जाया मे स्यादथ प्रजायेयाथ वित्तं मे स्यादथ कर्म कुर्वियेत्येतावान्वे कामो नेच्छंश्च नातो.
भूयो विन्देत्तस्मादप्येतर्श्वेकाकी कामयते जाया मे स्यादथ प्रजायेयाथ
वित्तं मे स्यादथ कर्म कुर्वियेति स यावदप्येत्वेषोभेक्तैकं न प्रामोत्यकृत्सन एव तावन्मन्यते तस्योऽकृत्सनता मन एवास्याऽऽत्मा वाग्जाया
प्राणः प्रजा चश्चर्मानुषं वित्तं चशुपा हि तद्विन्दते श्रोतं दैवछश्रोत्रेण
हि तच्छृणोत्यात्मैवास्य कर्माऽऽत्मना हि कर्म करोति स एप पांक्रो
यज्ञः पांक्रः पशुः पांक्रः पुरुषः पांक्रिसिदछ सर्वे यदिदं किंच तदिदछ सर्वमामोति य एवं वेद ॥ इति चतुर्थं बाह्मणम् ॥

पदच्छेदः ।

श्रातमा, एव, इदम्, अप्रे, आसीत्, एकः, एव, सः, अकामयत, जाया, मे, स्यात्, अथ, प्रजायेय, अथ, वित्तम्, मे, स्यात्, अथ, कर्म, क्रींय, इति, एतावान्, वे, कामः, न, इच्छन्, च, न, अतः, भूयः, विन्देत्, तस्मात्, अपि, एतर्हि, एकाकी, कामयते, जाया, मे, स्यात्, अथ, प्रजायेय, अथ, वित्तम्, मे, स्यात्, अथ, कर्म, कुर्वीय, इति, सः, यावत्, अपि, एतेषाम्, एकेकन्, न, प्राप्तोति, अक्रुत्स्नः, एव, तावत्, मन्यते, तस्य, च, अक्रुत्स्नता, मनः, एव, अस्य, आत्मा, वाक्, जाया, प्रायाः, प्रजा, चक्षुः, मानुषम्, वित्तम्, चक्षुषा,

हि, तत्, विन्दते, श्रोत्रम्, दैवम्, श्रोत्रेण, हि, तत्, श्र्णोति, आत्मा, एव, अस्य, कर्म, आत्मना, हि, कर्म, करोति, सः, एषः, पाङकः, यज्ञः, पाङ्कः, पशुः, पाङ्कः, पुरुषः, पाङ्कम्, इदम्, सर्वम्, यत्, इदम्, किंच, तत्, इदम्, सर्वम्, आप्नोति, यः, एवम्, वेद ॥

श्चत्यः

पदार्थाः

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रग्रे=त्रिवाहविधि से पहिले इद्म्=यह प्रत्यक्ष

एकः=एक श्चातमा=पुरुष

एव=ही

ग्रासीत्=था

+ पुनः≕िकर

सः एव=वही पुरुष श्रकामयत=इच्छा करता भया

+कर्माधिकार- } = यज्ञ कर्म के जिये सम्पत्तये }

जाया=धी

मे=मेरे को

स्यात्=प्राप्त होवे

श्रथ=थार + ऋहम्≕में

प्रजायेय=इस जाया से संतानके

स्वरूपमें उत्पन्न होऊं

श्रथ=इस के पीछे म=मेरेबिये

वित्तम्=गौ मादिक धन

स्यात्=प्राप्त होवे

अध=किर

+ ऋहम्≕भैं

कर्म=वेदविहित कर्म को

कुर्वीय=कर्र

एतावान् वै=इतनी ही कामः=मेरी कामना है

इति=इस प्रकार

इच्छन्=इच्डा करता हुआ

च=भीर

न + इच्छुन्=नहीं इच्छा करता

हुन्ना

+ पुरुषः=पुरुष

त्रातः≔इससे भूषः=प्रधिक धन

न≕नहीं

चिन्देत्=पासका है

तस्मात् श्रवि=इसी कारव

एतर्हि=आजकब भी एकाकी=अनब्याहा पुरुष

कामयते=चाहता है कि

जाया=बी

मे=मेरे जिबे

स्यात्=प्राप्त होवे

अथ=तत् पश्चात्

+ ब्रहम्≕भें

प्रजायेय=पुत्ररूप से इसमें

उत्पन्न होकं

ऋध≔फिर मे≕मेरे विषये वित्तम्=गौ भादिक कर्म सा-धन द्रव्य स्यात्=प्राप्त होवे श्रथ≔तत् परचात् + ऋहम्≕में कर्म=मक्ति के साधन कर्म कुर्वीय=करं इति=इस प्रकार सः≔वह पुरुष यावत् अपि=जब तक एतेषाम्=इन कहे हुये पदार्थी में से एकैकम्=एक एकको न≕नहीं प्राप्नोति=पाबेता है तावत्=वन तक + सः=वह मन्यते=मानता है कि + श्रहम्=मैं एव=निरचय करके **अ**कृत्स्नः=प्रपूर्ण + श्रस्मि=हं उ=मौर तस्य=उसकी **इ.त्स्नता=**पृर्वता + तदा≕तव

+ भवति=होती है

+ यहा=जब

+ सः=वह

को पास होता है + उ=पर + तस्य=उस की + पूर्णता=पूर्णता · + यद्ग=जब भविष्यति=होगी यदा=जब + तस्य≕उसका + विचारः रे ऐसा विचार होगा + इति : मनः=मन एव=ही त्रात्मा=उसका भारमा है वाक=वाणी ही जाया=उसकी श्री है प्राणः=प्राग्रही प्रजा=उसका पुत्र है चक्षुः≔नेत्रही मानुपम्=उसका मनुष्य सम्बन्धी विसम्=धन है हि=क्योंकि चश्लुषा=नेत्र करके ही तत्=उस मनुष्य सम्बन्धी धन को विन्द्ते=प्राप्त होता है + च=मौर देवम्=देवता सम्बन्धी धन यानी विज्ञान श्रोत्रम्=श्रोत्र है हि=क्योंकि

+ प्राप्नोति=मनोगत सभिसापा

श्रोत्रेग=श्रोत्र करके ही तत्=श्स ज्ञानको श्र्योति=सुनता है श्रस्य=उस साधनयुक्त पुरुष त्रात्मा पच=शरीर ही कर्म=कर्म है हि=च्याँकि श्चातमना=शरीर करके ही कर्म=कर्म को करोति=वह करता है +तस्मात्=इसिबये सः=वडी एषः=यह यज्ञ:=यज्ञ पांकः=पांच पदार्थों से सिद्ध हुआ पशुः पांक्रः=यज्ञपश् है

+ सः≔वही + एषः=यह पांक्रः≔पांचतस्वसे बनाहन्ना पुरुषः=पुरुष है इदम्=यह जगत् सर्वम्≔सब पांक्रम्=पांच तस्ववादा है यः≃जो एवम्=इस प्रकार वेद=जानता है यत्≕जो किंच=कुछ इदम्=यह है तत्=उस इदम्=इस सर्वम्=सबको श्राप्नोति=पाप्त होता है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन! विवाहविधि से पहिले केवल एक पुरुष था, वहीं ऐसी इच्छा करता भया कि कर्म करने के लिये मुम्नको स्त्री प्राप्त होवे, झौर में उस स्त्री से संतान की सूरत में उत्पन्न होऊं, झौर फिर भेरे को गौ आदिक धन प्राप्त होवें, तिनकी सहायता करके मैं वेद-विहित कर्मको करूं. इन सबकी प्राप्ति होने से मेरी कामना पूर्या हो जायगी. इस प्रकार इच्छा करता हुआ और नहीं इच्छा करता हुआ भी पुरुष इससे अधिक धनको नहीं पा सकता है, और यही कारण है कि आजकल भी वे व्याहा पुरुष चाहता है कि मेरे को स्त्री प्राप्त होवे, तिसमें मैं पुत्ररूप से उत्पन्न होऊं, फिर मेरे को गौ आदिक कर्म साधन द्वन्य प्राप्त होवे, ताकि मैं मुक्ति के साधन कर्म को करूं. इस

प्रकार जब तक इन कहे हुये पदार्थों में से एक एक को नहीं पालेता है, तब तक वह समम्तता है कि मैं अपूर्ण हूं, परंतु हे सोम्य! उस की पूर्णता तब होतीहै जब वह मनोगत अभिलापा को प्राप्त होताहै, और उसकी पूर्णता तभी होगी जब उसका विचार ऐसा होगा कि मनही उसका आदमा है, और वाली ही उसकी स्त्री है, प्रार्ण ही उसका पुत्र है, नेत्रही उसका मनुष्यसम्बन्धी धन है, क्यों कि नेत्र करके ही मनुष्यसम्बन्धी गौ आदि धन उसको प्राप्त होता है, और उसका देवतासम्बन्धी धन यानी विज्ञान श्रोत्र है, क्यों कि श्रोत्र करके ही उस ज्ञानको सुनता है, उसका शरीरही कर्म है, क्योंकि श्रोत्र करके ही उस ज्ञानको सुनता है, उसका शरीरही कर्म है, क्योंकि श्रोत्र करके ही वह कर्म को करता है, इसलिये हे प्रियदर्शन! वही यह यज्ञ पांच पदार्थों से सिद्ध हुआ है, वही यह पांच पदार्थ से सिद्ध हुआ यज्ञ पश्च है, वही यह पांच तक्त से बनाहुआ पुरुष है, वही यह जगत् पांच तक्तोंवाला है, वह जो इस प्रकार जानता है वह जो इन्छ जगत् विषे है सक्को प्राप्त होता है।। १७।।

इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं ब्राह्मणुम्। मन्त्रः १

यत्सप्तान्नानि मेथया तपसाऽजनयित्पता एकमस्य साधारणं द्वे देवानभाजयत् त्रीएयात्मनेऽकुरुत पशुभ्य एकं प्रायच्छत् तस्मि-न्सर्व प्रतिष्ठितं यच प्राणिति यच न कस्मात्तानि न क्षीयन्तेऽध्यमानानि सर्वदा यो वैतामक्षितिं वेद सोऽन्नमित्त प्रतीकेन स देवानिप गच्छति स ऊर्जमुपजीवतीति रलोकाः ॥

पदच्छेदः ।

यत्, सप्त, श्रन्नानि, मेथया, तपसा, श्रजनयत्, पिता, एकप्, अस्य, साधारण्म्, हे, देवान, अभाजयत्, त्रीणि, आत्मने, अकु-

रुत, पशुभ्यः, एकम्, प्रायच्छत्, तिसम्, सर्वम्, प्रतिष्ठितम्, यत्, च, प्रास्तिति, यत्, च, न, कस्मात्, तानि, न, क्षीयन्ते, क्राद्यमानानि, सर्वदा, यः, वा, एताम्, क्रिक्षितिम्, वेद, सः, क्रानम्, क्रात्ति, प्रतिकेन, सः, देवान्, क्रापि, गच्छति, सः, ऊर्जम्, उपजीवित, इति, रुलोकाः ॥

ग्रन्**व**यः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सप्त=सात श्राज्ञानि≕धन्न मेधया=मेधा + च=ग्रीर तपसा=तप करके पिता=िपताने श्रजनयत्=पेदा किया ग्रस्य=उनमें से एकम्=एक साधारग्रम्=माधारण है यानी सबके जिये साभेमेंहैं + च=श्रीर द्रे=दो अस देवान्=देवताश्रों को श्रभाजयत्=देदिया त्रीशि=तीन श्चात्मने=अपने विवे श्रकुरुत=स्वसा पशुभ्यः≔पशुद्धों के लिये एकम्=एक

प्रायच्छ्रत्≕दिया

सर्वम्=सब

यत्≕जो

तस्मिन्=तिसी श्रव विषे

यत्=जो

प्राणिति=श्वास बेते हैं च=श्रीर यत्=जो न≕नहीं ਚ=ਮੀ + प्राणिति=श्वास लेते हैं प्रति। ष्टर्तम्=पतिष्टित हैं यानी आश्रित हैं यः=जो ज्ञानी वा=िनश्चय करके ताम्=उस श्रवको अक्षितिम्=भविनाशी वेद=जानता है च=भौर सः≔वह श्रमम्=डसी बन्नको

प्रतीकेन=मुख करके
श्रात्ति=खाता है
सः=वह
देवान्=देवताणों को
गच्छिति=प्राप्त होता है
+ च=भौर
सः=वही
ऊर्जम्=बकको मी
+ उपजीवति=प्राप्त होता है

कस्मात्=िकस कारय तान्=वे सर्वदा=सदा अधमानानि=खाये जाने पर भी न=नहीं क्षीयन्ते=नाराको प्राप्त होते हैं इति=इस विषय में श्लोकाः=श्रागेवाले मंत्र प्रमाख हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य! जो सात प्रकार के अन्न हमारे पिता ब्रह्मदेव ने तप आगेर बुद्धि करके उत्पन्न किये, उन में से एक सबको साम्ने में दिया, दो अन्न देवताओं को दिया, और तीन अपने लिये रक्खा, केवल एक पशुओं के लिये दिया, जिसके आश्रय सब जीव हैं, चाहे वह स्वास क्षेते हों और चाहे न लेते हों, प्रश्न उठता है कि किस कारगा सब अन्न खाये जाने पर भी श्लीगा नहीं होते हैं, उत्तर यही आता है कि सब अन्न परमात्मा से उत्पन्न हुये हैं, आगेर चूंकि वह परमात्मा नाशरहित हैं इस कारगा उससे उत्पन्न हुये अन्न भी नाशरहित हैं, जो ज्ञानी इन अनों को अविनाशी जानकर खाता है, वह देवताओं की पदवी को प्राप्त होता है और वही बलको भी प्राप्त होता है इस विषय में आगोवाले मंत्र प्रमागा है।। १॥

मन्त्रः २

यत्सप्तान्नानि मेथया तपसाऽजनयित्पतेति मेथया हि तपसाऽजनयत्पिता एकमस्य साधारणिभितीदमेवास्य तत्साधारणमन्नं यदिदमद्यते स य एतदुपास्ते न स पाप्मनो व्यावर्चते मिश्रश्ं होतद् द्वे
देवानभाजयिदिति हुतं च प्रहुतं च तस्माहेवेभ्यो जुह्वति च प च
जुहृत्यथो आहुर्दर्शपूर्णमासाविति तस्मान्नेश्चियाजुकः स्यात् पशुभ्य
एकं प्रायच्छदिति तत्पयः पयो होवाग्ने मनुष्यारच पशवश्चोपजीवन्ति
तस्मात्कुमारं जातं घृतं वैवाग्ने पतिलोहयन्ति स्तनं वाऽनुधापयन्त्यथ
वत्सं जातमाहुरतृणाद इति तस्मिन्सर्वे पतिष्ठितं यच प्राणिति यच्च
नेति पयसि हीद्धं सर्वे पतिष्ठितं यच प्राणिति यच्च न तद्यदिदमाहुः

संवर्त्सरं पयसा जुहदपपुनर्धत्युं जयतीति न तथा विद्याद्यदृहरेव जुहोति तद्दृहः पुनर्धृत्युमपजयत्थेवं विद्वान्सर्वे हि देवेम्यो-ष्माचं मयच्छिति कस्मात् तानि न क्षीयन्तेद्यमानानि सर्वदेति पुरुषो चार्ळीक्षितिः स हीदमन्नं पुनः पुनर्जयते यो वैतामिक्षितिं वेद वेदेति पुरुषो वा अक्षितिः सहीदमन्नं थिया थिया जनयते कर्माभियद्दैतन्न कुर्यात् क्षीयेत ह सोन्नमित्त मतीकेनेति मुखं मतीकं मुखेनेत्येतत् स देवानिष गच्छित स कर्जमुपजीवतीति मशंसा ॥

पद्च्छेदः।

यत, सत, अन्नानि, मेथया, तपसा, अजनवत्, पिता, इति, मेथया, हि, तपसा, अजनयत्, पिता, एकम्, अस्य, साधारराम्, इति, इदम्, एव, श्रास्य, तत्, साधारराम्, श्रात्रम्, यत्, इदम्, श्रद्यते, सः, यः, एतत्, उपास्ते, न, सः, पाष्मनः, व्यावर्त्तते, मिश्रम्, हि, एतत्, है, देवान्, अभाजयत्, इति, हुतम्, च, प्रहुतम्, च, सस्मात्, देवेभ्यः, जुह्वति, च, प्र, च, जुह्वति, श्रथो, श्राहुः, दर्श-पूर्णमासी, इति, तस्मान्, न, इष्टियाजुकः, स्यात्. पशुभ्यः, एकम्, प्रायच्छत्, इति, तत्, पयः, पयः, हि, एव, अप्रे, मनुष्यः, च, पशवः, च, उपजीबन्ति, तस्मात्, कुमारम, जातम्, घृतम् , वा, एव, अभे, प्रतिकेहयन्ति, स्तनम्, वा, अनुभाषयन्ति, अथ, वत्सम , जातम् , आहुः, अनृगादः, इति, तस्मिन, सर्वम, प्रतिष्ठितम्, यत्, च, प्राश्मिति, यत्, च, न, इति, पयसि, हि, इदम्, सर्वम्, प्रतिष्ठितम्, यत्, च, प्राश्चिति, यत्, च, न, तत्, यत्, इदम्, श्चाहुः, संवत्सरम् , वयसा, जुह्वत्, अप, पुनः, मृत्युम् , जयति, इति, न, तथा, विद्यात, यत्, झहः, एव, जुहोति, तत्, झहः, पुनः, मृत्युम्, झप, जयति, एवम्, विद्वान्, सर्वम्, हि, देवेभ्यःं, अन्नाद्यम्, प्रयच्छति, कस्मात, तानि, न, श्रीयन्ते, अध्यमानानि, सर्वदा, इति, पुरुष:, वा, अक्षितिः, सः, हि, इदम, अन्नम्, पुनः, पुनः, जयने, यः, वा, एताम्,

अक्षितिम्, वेद, वेद, इति, पुरुषः, वा, अक्षितिः, सः, हि, इदम, अन्नम्, धिया, धिया, जनयते, कर्मभिः, यत्, वा, एतत्, न, कुर्यात्, क्षीयेत, ह, सः, अन्नम्, अति, प्रतीकेन, इति, मुखम्, प्रतीक्रम्, मुखेन, इति, एतत्, सः, देवान्, अपि, गच्छतिं, सः, अर्जम्, उपजीवति, इति, प्रशंसा ॥
अस्वयः पदार्थाः । अस्वयः पदार्थाः

यत्⇒जो

यत्≕ण + **मन्त्रः**≕मंत्र

इति≕ऐसा

+ ऋाह=कहता है कि पिता=पिता ने

सप्त=सात

अक्षानि=धन्न को

मेधया=मेधा करके

+ च=धौर तपस्या≔तप करके

श्रजनयत्=पैदा किया

+ तत्≔सो + इति≕ऐसा

+ सत्यम्=डीकही

+ आह=कहता है

हि=क्योंकि

पिता≕पिता ने

मेधया=मेधा करके

+ च=भौर

तपसा≔तप करके

+श्रक्षम्=धन्न को श्रजनयत्=पैदा किया

+ च=मौर

+ यत्≔जो

+इति=ऐसा

+ ब्राह=कहता है कि

एकम्=एक श्रन्न साधारगम्=साधारग है यानी

सबके लिये बराबर है

तत≕तो

श्रस्य + श्रर्थः =उसका श्रर्थ

इदम्=यह है कि

इदम्=वह

साधारणम्=साधारण मन्न + सर्वेण्=सब करके

. स्वयं=स्वया जाता है

सः≔वह

यः≕जो

पतत्≔इस साधारण अन्नकी उपास्ते=उपासना करता है

सः=वही

पाष्मनः=पाप से

न व्यावर्त्तते=निवृत्त नहीं होता है

हि=∓योंक<u>ि</u>

प्तत्=यह सांधार**वा ग्रन्न**

मिश्रम्=सबका है

+ पिता=पिता

. द्वे=दो श्रद्ध

हुतम्=हुत

च=घौर

महुतम्=अहुत इति=नाम करके वेवान्=देवताओं को सभाजयत्=देता भवा च=भौर तस्मात्=इसी कारण देवेभ्यः=देवताओं के लिये + विद्वान् } =विद्वान् श्लोग ज्रहृति च=श्रीन में होम श्रीर बलिप्रदान करते हैं स=धौर प्रज्ञहृति=विशेष करके भानि में अधिक होम करते ख्यो=श्रीर +ग्रन्याचार्याः=कोई कोई माचार्य आहुः=कहते हैं कि + एतौ=ये दोनों अन दर्शपृर्णमासौ=दर्श भौर पूर्णमास इष्टि के नाम इति=करके हैं तस्मात्=इस विये इष्टियाजुकः=कामयक न स्यात्=न करे + च=श्रीर + यत्=जो पशुभ्यः=पशुद्रों के लिये एकम्=एक अन प्रायच्छत्=दिया इति=ऐसा + उक्तम्⇒कहा गया है

तत्≔वह सम

हि=क्योंकि एव=निश्चय करके अग्रे=पहिले मनुष्याः≕मनुष्य च≕भीर पश्वः=पशु ∓ा≕भी पयः=दूध को उपजीवन्ति=प्रहण करके जीते हैं तस्मात्=इस निये जातम्=उत्पन्न हुये कुमारम्=बर्ध को श्रये=प्रथम वा एव=श्रवश्य घृतम्=धृत प्रतिलेहयन्ति=चटाते हैं वा≔ष्रथवा स्तनमू=माता के स्तन को श्रनुधा- | =पिबाते हैं पयन्ति | श्रथ=भीर + पशुनाम् =पशुन्नों में जातम्=उत्पन्न हुये वत्सम्=बद्धरे को श्चतृणादः=तृख न खानेवाला इति=ऐसा आदुः=कहते हैं तस्मिन्=उसी दूषपर सर्वम्=सब जीव प्रतिष्ठितम्=माश्रित हैं यत्=जो

प्राशिति=श्वास बेते हैं च=मौर यत्=जो न≖नदीं च=भी + प्राणिति=स्वास केते हैं हि=क्यांकि पयसि=दूध के ही ऊपर इदम्=यह सर्वम्=सर् जीव प्रतिष्ठितम्=श्राश्रित हैं यत्=जो प्राणिति=स्वास बेते हैं च=गौर यस्≕जो न≕नहीं च≃भी + प्राणिति=स्वास केते हैं तत्=तिसी कारच यस्=नो इत्म्=यह + ब्राचार्याः=ब्राचार्य आडुः≔कहते हैं कि संवत्सरम्=एक साब तक पयसा≔तूष करके + य≔जो पुनः≕निरम्सर जुड़ाति≔होम करता है सः≔वह श्रापमृत्युम्=मकालमृत्यु को अयति इति=जीत केता है त्तथा=वेता

विद्यात्=सम भे यत् एष=जिसी ऋहः=दिन जुहोति=हवन करता है तत्≡डसी ऋहः=दिन पुनः=बार बार भानेवाके मृत्युम्=मृत्यु को अपजयति=जीत खेता है + हि=क्योंकि एवम्=इस प्रकार विद्वान्=सात श्रम का जानने वासा विद्वान् सर्वम्≕सब अन्न।द्यम्=असादि को देखेभ्यः=देवताओं के क्षिये प्रयच्छति=देता है कस्मात्=किस वास्ते तान्=वे सर्वदा=सर्वदा श्रद्यमानानि=साये जानेवाले सस न श्रीयन्ते=नहीं कम होते हैं इति=कारण यह है कि पुरुषः क्षा≕पुरुषद्दी यानी शक्र का भोक्रा अक्षितिः=अविनाशी है सः हि=वही इदम्≃इस श्रम्भाग् अस को

पुनः पुनः≔बार बार

जनयते≕पैदा करता है वा=भौर यः=जो पताम्=इसको अक्षितिम्=मक्षिति घेढ इति=जानता है सः≔वही पुरुष अक्षिति:=अविनाशी है हि=च्योंके इदम्=इस अञ्जम्=अञ्च को धिया धिया=बृद्धि से भौर कर्मधिः≔कर्म से + सः=वह जनयते=उत्पन्न करता रहता है यत् ह=यदि + सः=वह श्रविनाशी पुरुष एतत्=इस प्रज को न=न कुर्यात्=उत्पन्न करता तो + तत्=वह अन्नम्=त्रस ह=प्रवर्ष श्रीयते=नाश होजाता + च=धौर इति=जो ऐसा कहा गया है कि

सः=वह श्रक्षम्=श्रक्त का प्रतीकेन⇒मुख से अत्ति=खाता है इति=उसका भाव यह है कि प्रतीकम्=प्रतीक का अर्थ मुखम्=मुख है इति=इस विये एतत्=यह मुखेन इति="मुखेन" धुसा पद + उक्तम्=कहा है च=धौर यः=जो इति=ऐसा उक्तम्=कहा गया है कि सः≔वह पुरुष देवान=देवताओं को (मास होता है यानी गच्छति= देवयोनि को प्राप्त + च=घौर सः≔वही ऊर्जम्=दैवबल को उपजीवति=पास होता है तो इति=ऐसा कड्ना श्रापि=केवस प्रशंसा=चन यज्ञ कर्म की प्रशंसा है

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! जो मंत्र ने ऐसा कहा है कि पिताने मेथा झौर तप करके सात अन्न उत्पन्न किये हैं सो ठीक कहा है, मेथा ज्ञान है,

भीर ज्ञानही तप है, उससे पृथक् दूसरा कोई तप नहीं है, भीर जो मंत्र यह कहता है कि पिताने एक अन्न सब के वास्ते उत्पन्न किया है. उसका भाव यह है कि वह अन्न सब प्राशायों करके खाया जाता है. यानी उसमें सब का भाग है जो कोई इस अन्न को केवल अपना ही समम कर खाता है, विना दिये दूसरों को वह पाप से निवृत्त नहीं होता है, कारण यह है कि यह अत्र सब के साम्ते का है, खास उसी का नहीं है, हे सोम्य! और जो मंत्र ने 'यह कहा है कि पिताने हो अन्त्र "हत" और "प्रहत" नाम करके देवताओं को दिया है, उसका अर्थ यह है कि दो कर्म यानी वैश्वदेव और बिलहरन कर्म देवताओं के लिये रक्खा गया है, श्रीर इसी कारण विद्वान लोग श्रभ्यागत-रूप देवता के आने पर उसकी प्रतिष्ठा के लिये होम दृज्य आगिन में देते हैं. भीर कोई कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि यह दोनों अन दर्श यानी अमावस और पूर्णमास के नाम से समस्रे जाते हैं. इस लिये हर अमावस और पूर्णमास को निष्काम यहा अवश्य करे, और जो मंत्र ने यह कहा है कि पशुद्धों के लिये एक अन्न दिया गया है उसका अर्थ यह है कि वह दिया हुआ अन पय है. क्योंकि मनुष्य झौर पश दोनों उत्पन्न होते ही पय को प्रहरा करते हैं झौर उसी करके जीते हैं, ऋौर यही कारणा है कि उत्पन्न हुये बने को प्रथम घृत अवश्य चटाते हैं, अप्रथवा माता के स्तन को पिलाते हैं. और पशुक्रों में उत्पन्न हुये बह्ररों को श्रतृशाद यानी तृशा न खानेवाला कहते हैं. इस लिये सब जीव चाहे वह श्वास लेते हों चाहे न लेते हों उस पर्यक्षे आश्रित हैं. इसी कारण जो आचार्य कहते हैं कि जो कोई निरंतर एक सालतक द्ध करके होम करता है वह ध्रकालमृत्यु को जीत लेता है सो केवल इतनाही नहीं समम्तना चाहिये बल्कि यह समम्तना चाहिये कि जिस दिन वह दूध से हवन करता है उसी दिन अकालमृत्य को जीतलेता है, अब प्रश्न यह है कि वे अन खाये जाने

पर भी क्यों कम्र नहीं होते हैं उत्तर यह मिलता है कि पुरुष यानी आज का भोक्ता अविनाशी है, वही इस अज़को बार बार उत्पन्न करता है, और जो इस अज़को अक्षत जानता है वही पुरुष अविनाशी होता है, क्योंकि इस अज़को बुद्धि और कर्म करके उत्पन्न किया करता है, यदि वह पुरुष इस अज़को उत्पन्न न किया करता तो वह अज़ अवश्य नाश हो जाता और जो ऐसा कहा है कि वह अज़ को मुख से खाता है उस का भाव यह है कि प्रतीक का अर्थ मुख है, इस जिये "मुखेन" यह पद मूल में कहागया है, और जो मंत्र में यह कहा गया है कि वह पुरुष यानी अज़का भोका देवयोनि को प्राप्त होता है यह अज़यझ की प्रशंसा है।। २।।

मन्त्रः ३

त्रीएयात्मनेऽकुरुतेति मनो वाचं पाणं तान्यात्मनेऽकुरुतान्यत्र-मना अभूवं नादर्शमन्यत्रमना अभूवं नाश्रीपमिति मनसा क्षेत्र पश्यति मनसा शृणोति कामः संकल्पो विचिकित्सा श्रद्धाऽश्रद्धा ष्टृतिरप्टृति-हींधींभींदित्येतत्सर्वे मन एव तस्मादिष पृष्ठत उपस्पृष्टो मनसा विजा-नाति यः कश्च शब्दो वागेव सा एषा क्षन्तमायत्तेषा हि न प्राणो-ऽपानो व्यान उदानः समानोऽन इत्येतत्सर्वे पाण एवतन्मयो वा अयमात्मा वाद्मयो मनोमयः पाणमयः ॥

पद्च्छेदः।

त्रीत्म, आत्मने, अकुरुत, इति, मनः, वाचम्, प्रात्मम्, तानि, आत्मने, अकुरुत, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अश्रोपम्, इति, मनसा, हि, एव, पश्यति, मनसा, शृतोति, कामः, संकल्पः, विचिकित्सा, अद्धा, अश्रद्धा, वृतिः, अन्तः, स्वाः, स्वाः, अपि, पृष्ठतः, अपस्पृष्टः, मनसा, विज्ञानाति, यः, कः, च, शब्दः, वाक् एव, सा, एवा, हि, अन्तम्, आयसा, एवा, हि, न, प्रात्मः, अपानः,

पदार्थाः

भ्रन्वयः

ध्यानः, उद्गानः, समातः, झानः, इति, एतत्, सर्वम्, प्राराः, एव, एतन्मयः, वा, ऋंयम्, श्चात्मा, वाङ्मयः, मनोमयः, प्रारामयः॥

त्रीिख्⊐तीन श्रव अकुरुत=उत्पन्न करता भया तानि=अर्थात् इन ग्रत्रों को यानी मनः≕मन वाचम्=वार्षा च=धौर प्राण्म्=प्राण् को आत्मने=अपने तिये अकुरुत=बत्पन करता भवा यदा=जब भ्रम्यत्रमनाः | श्रीर जगह गया है| भन जिसका ऐसा अभूवम् | में होता भया इति≕तव ण ऋदर्शम्=में रूप को नहीं दे-खता भया + यद्ा=जब अन्यत्रमन्यः=श्रीर जगह गया हुशा है मन जिसका ऐसाई अभूचम्=होता भवा वानीवेसी मेरी अवस्था भई + अतः≕तिस हेतु म अश्रीषम्इति≕में नहीं सुनता भवा हि=क्योंकि

+ कल्पादी=करूप के आदि में

द्यात्मने=भपने लिये

+ पिता≕पिता

सन्तयः पदार्थाः

मनसा एव=मन करके ही

+ पुरुषः=पुरुष

परयति=देखता है

मनसा वै=मन करके ही

श्रुणोति=जुनता है

+ सधुना=श्रव

+मनःस्वरूप- } = मनका स्वरूप कहा

मुज्यते } जाता है

कामः=काम

संकरणः=संकरण

विचिकित्सः=संदेह
श्रद्धा=मश्रदा
मश्रद्धा=मश्रदा
पृतिः=पृति
मप्तिः=स्पृति
हीः=बजा
धीः=पृदि
भीः=मय
दति=हस प्रकार
प्रतत्=थे
सर्वम्=सब

राज म्∸राज ं मनः य्व≃गनरों के स्वरूप हैं तस्मात् अपि=तिसी कारख पृष्ठतः=अपजे नेत्र से न देखी हुई पीठ पर उपस्पृष्ठः=दूसरे के हाथ से खुका हुआ। + पुरुषः=पुरुष + मनसा=भपने मन करके
जानताहै कि मेरी
विजानाति=

र् जानताहै कि मेरी
पीठ को किसी ने
छूमा है

+ ऋध=ऋब

+ वाक्=वासी का स्वरूप

+ इति=इस प्रकार

+ कथ्यते=कहा जाता है

यः≕जो

कश्च=कोई यानी वर्णात्मक

श्रीर ध्वन्यात्मक

शब्द:=शब्द है

सा≔वह

एव=ही

चाकु=वाणी है यानी वाणी

का स्वरूप है

एषा हि=यही वाणी निश्चय

करके

श्चन्तम्=निर्णय के श्वन्त तक श्चायत्ता=पहुँची हुई है

हि=क्योंकि

ाह=क्याक

एषा=यह वाणी

+ अन्येन न | और करके नहीं प्रकाश्या | प्रकाश होने योग्य है

+ श्रध=श्रव

+ प्रागः=आग का स्वरूप

+ उच्यत=कहा जाता है

प्राणः= { मुख और नासिका से हृदय तक चलने वाला वायु

श्रपानः=नाभि से नीचे तक जाने वाला वाय

ं पास श्रीर श्रपान व्यानः= को नियम में रखने बाला वायु

उदानः=पैर से लेकर मस्तक तक उर्ध्वसंचारी वाय

समानः≔खाये हुये श्रव को पचाने वाला बाय

+ प्रते≕ये

+ पञ्चधा=पांच प्रकार के

+ प्राणः=प्राण हैं

+ च=श्रीर

इति अनः=इस प्रकार का चलने

वाला

पतत्=यह

सर्वम्≃सब

प्रागः=प्राग

एव=ही है

+ झतः≔इस त्रिये

श्रयम्≕यह

आत्मा=जीवारमा

पतन्मयः=एतन्मय है भर्थात् वाङ्मयः=वाणीमय है

मनोमयः=मनोमय है

प्राणमयः=प्राणमय है

भावार्थ।

हे सौम्य ! सृष्टि के आदि में जो पिताने अपने लिये तीन आजें को उत्पन्न किया वे तीन आज मन, वार्गी और प्राया है, इसिजये हें सौम्य ! जब किसी का मन झ्रौर जगह चला जाता है तब बह कहता है कि मन अगेर जगह होने के कारणा भैंने इस रूप को नहीं देखा, झौर फिर कहता है कि मन झौर जगह चल्ले जाने के कारण मैंने किसी बात को सुना भी नहीं. हे प्रियदर्शन ! मन करके ही पुरुष देखता है, मन करके ही पुरुष सुनता है, यदि मन न हो तो वह न देख सकता है, न सुन सकता है, सुनो ब्राव मैं मनके स्वरूप को कहता हूं जो कामना है, संकल्प है, श्रद्धा है, अश्रद्धा है, सन्देह है, धृति है, श्राधृति है, लज्जा है, बुद्धि है, भय है वह सब मनही के रूप हैं. इसी मन करके उस पुरुष को सब बस्तुओं का ज्ञान होता है, अगर कोई पुरुष किसी की पीठ को छूदेतो उस पुरुष को पीठन देखने पर . भी मन के द्वारा इस बात का ज्ञान होजाता है कि किसी पुरुष ने मेरी पीठ को छूआ है. हे सौम्य ! सुनो अब में बागा के स्वरूप को कहता हूं जो शब्द है चाहे वह वर्गातमक हो चाहे ध्वन्यात्मक हो उसका ज्ञान बास्सी करके ही होता है, इसीर उस शब्द के निर्साय के झन्त तक वाणी ही पहुँचती है, जैसे मन प्रकाशस्त्ररूप है वेसे वाणी भी प्रकाशस्वरूप है, इप्रव में प्रागा के स्वरूप को कहता हूं तुम सावधान होकर सुनो प्रारा पाँच प्रकार का है उसके नाम प्रारा, श्रपान, व्यान, बदान, समान हैं, प्रास्त वह वायु है जो मुख से नासिका तक चलता है, आपान वह वायु है जो नामिभे नीचे को जाता है, व्यान वह वायु है जो प्रांग झौर ख्रपान को नियम में रखता है, उदान वह वायु है जो पैरस लेकर मस्तक तक चला करता है, समान वह वायु है जो खाये हुये श्चन्नको पचाता है, श्चीर इन्हीं सबके साथ यह जीवात्मा एतन्मय है यानी यही वासाीमय है, यही मनोमय है, यही प्रासामय है ॥ ३ ॥ मन्त्रः ४

त्रयो लोका एतएव वागेवायं लोको मनोऽन्तरिक्षलोकः प्राखो-ऽसी लोकः ॥

पदच्छेदः ।

त्रयः, लोकाः, एते, एव, वाग्, एव, श्रयम्, लोकः, मनः, श्रन्त-रिक्षलोकः, प्राग्यः, श्रसी, लोकः ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

एते एव=ये ही मन वासी प्रास

श्रय:=तीन

लोकाः=स्रोक यानी भ भुवः, स्वः

श्रयम्=यह स्तोक:=पृथ्वीलोक है

ग्रह:=सन

अन्तरिक्षलोकः=धन्तरिक्ष लोक है

+सहित=हैं + तत्र=तिनमें

वाग=वार्यो पच=निश्चय करके

+ च=श्रीर प्राराः=प्राराही श्रसी=वह

लाक:=धुलोक है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही तीन यानी वाणी, मन ऋौर प्राण तीन लोक भूः भुवः स्वः हैं, तिन में से वास्ती निश्चय करके यह पृथ्वीलोक है, भन श्चन्तरिक्षलोक है, श्रीर प्राग्त युज्ञोक है।। ४।।

सन्त्रः ५

त्रयो वेदा एतएव वागेवर्ग्वेदो मनो यजुर्वेदः पागाः सामवेदः ॥ पदच्छेदः ।

त्रयः, वेदाः, एते, एव, वाक, एव, ऋग्वेदः, मनः, यजुर्वेदः, प्रागाः, सामवेदः ॥

श्चन्तयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

पते पव=यहरी

त्रयः=तीन यानी वाणी, त्रमुख्देरः=ऋग्वेद है मन, प्राया बंदाः=तीन वेद हैं

+ तत्र≕तिनमें

वाक≕गणी

पच≕निश्चय करके

मन:=मन यज़र्चेदः≔यजुर्वेद है प्रागुः=प्राग

सामवेदः=सामवेद है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही तीन यानी वास्ती, मन, प्रास्त तीन वेद हैं, तिन में वास्ती निश्चय करके ऋग्वेद हैं, मन यजुवेंद हैं, प्रास्त साम-वेद हैं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

देवाः पितरो मनुष्या एतएव वागेव देवा मनः पितरः पाणो मनुष्याः ॥

पदच्छेदः।

देवाः, पितरः, मनुष्याः, एते, एव, वाग्, एव, देवाः, मनः, पितरः, प्रागुः, मनुष्याः ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

पते=गइ पव=ही वाग्=वाषी एव=निश्चय करके

+ त्रयः≔तीन यानी वाणी, मन, प्राण देवाः≔देवता पितरः≔पितर

देवाः=देवता हैं मनः=मन पितरः=पितर हैं

दवाः--प्यतः पितर≔पितर मनुष्याः=मनुष्य हैं + तत्र≕तिनमें से

प्राणः=प्राण मनुष्याः=मनुष्य हैं

भावार्थ ।

यही तीन यानी वास्मी, मन, प्रास्म, देवता, पितर, मनुष्य हैं, तिनमें से निश्चय करके वास्मी देवता हैं, मन पितर हैं, और प्रास्म मनुष्य हैं ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

पिता माता भजैत एव मन एव पिता वाङ्माता शाणः भजा ॥ पदच्छेदः ।

पिता, माता, प्रजा, एते, एव, मनः, एव, पिता, वाक्, माता, प्राराः, प्रजा ॥ ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्त=यह एव=ही मनः≔मन

+ त्रयः=तीन यानी वाणी

एच=निश्चय करके

मन प्राश्

पिता=पिता

माता=माता पिता=पिता वाक्=वार्या माता=माता है

प्रजा=पुत्र हैं + तत्र=उनमें से

प्राणः=प्राण प्रजा=पत्र हैं

तत्र=उनसस भावार्भ।

हे सोम्य ! यही तीन यानी वाग्गी, मन, प्राग्ग, माता, पिता, पुत्र हैं, तिन में से निश्चय करके मन पिता है, वाग्गी माता है, प्राग्ग पुत्र है ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

विज्ञातं विजिज्ञास्यमविज्ञातमेतएव यर्तिकच विज्ञातं वाचस्त-द्र्पं वाग्यि विज्ञाता वागेनं तद्भूत्वाऽवति ॥

पदच्छेदः ।

विज्ञातम्, विजिज्ञास्यम्, अविज्ञातम्, एते, एव, यत्, किंच, विज्ञातम्, वाचः, तत्, रूपम्, वाग्, हि, विज्ञाता, वाग्, एनम्, तत्, भूत्वा, अविति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

ष्ते=यह षष=ही + च=शं अविद्यातम्=श्रविज्ञात (जो श्रवि-

+ त्रयः=तीन यानी मन,वाणी,

ज्ञात है)

प्राय

+ तत्र≕ितनमें से

विज्ञातम्=विज्ञात (जो ज्ञात हो चुका है) यत्=जो किंच=कुष

विजिज्ञास्य म्=विजिज्ञास्य (जो ज्ञात होने योग्य है) विश्वातम्=जाना गया है तत्=वह

वाचः=वाणी का क्रपम्=रूप है हि=श्योंकि साग=नाणी ही विज्ञाता=विज्ञात्री भी है यानी जाननेवाली है

तत्=ऐसा विज्ञात भूत्वा=होकर एनम्=वार्खा के महस्व जा-ननेवासे पुरुष को श्रवति=धन्न करके पोषण करती है

वागू=वाणी ही

भावार्थ ।

हे साम्य ! यही तीन यानी वाणी, मन, प्राण विज्ञात (जो ज्ञात हो चुका है) विजिज्ञास्य (जो जानने योग्य है) ख्रीर अविज्ञात (जो नहीं जाना गया है) हैं, तिनमें से जो कुछ जाना गया है वह वाग़ी का रूप है, क्योंकि वाग़ी ही विज्ञात्री है, यानी जानने वास्ती है. वागाी ही ऐसी विज्ञात होकर वागाी के महत्त्व के जाननेवाले परुष को अत्र करके पालन पोषणा करती है।। ⊏।।

मन्त्रः ६

यत्किच विजिज्ञास्यं मनसस्तद्वयं मनो हि विजिज्ञास्यं मन एनं तद्भूत्वाऽवति ॥

पदच्छेदः ।

यत. किंच, विजिज्ञास्यम्, मनसः, तत्, रूपम्, मनः, हि, विजि-ज्ञास्यम्, मनः, एनम्, तत्, भूत्वा, श्रवति ॥ पदार्थाः

पदार्थाः । अन्वयः श्चन्त्रयः यत्≔जो

मनः≔मन है

किंच=कुष विजिहास्यम्=जानने योग्य है

तत्=वही

मनसः=मनका रूपम्=स्वरूप है हि=क्योंकि

+ यत्≕जो

विजिज्ञास्यम्=जानने योग्य है

मनः=मनही

तत्=जानने योग्य भूत्वा=होकर

+ तत्≔वही

प्तम्=मनके महत्त्वके जा-ननेवाको पुरुष की

अवति=रक्षा करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो जानने योग्य है, वही मन का स्वरूप है, क्योंकि जो जानने योग्य है वही मन है, मनही जानने योग्य होकर मन के महत्त्व के जाननेवाले प्ररूप की रक्षा करता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

यत्किचाविज्ञातं प्राग्णस्य तद्रूषं प्राग्णोद्धविज्ञातः प्राग्ण एनं तद्भूत्वाऽवति ॥

पदच्छेदः ।

यत, किंच, श्रविज्ञातम्, प्रागास्य, तत्, रूपम्, प्रागाः, हि. अविज्ञातः, प्राग्गः, एनम्, तत्, भूत्वा, अविति ॥

श्चन्यः

पढार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यत्=जो किच=कुष श्रविज्ञातम्=नहीं जाना गया है तत्=वही प्राग्रस्य=प्राग् का

रूपम्=रूप है हि=पयों कि प्राणः=प्राण

श्रविज्ञातः=श्रविज्ञात है + च=ग्रौर

> प्राणः=वह प्राणही तत्=श्रविज्ञात

भृत्वा=होकर एनम्=प्रागवेत्ता पुरुष की

श्रवति=रक्षा करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो कुछ नहीं जाना गया है, वही प्राण् का स्वरूप है, क्योंकि प्रागा अविज्ञात है, और यही प्रागा अविज्ञात होकर प्रागा-वेत्ताकी रक्षाकरता है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

तस्यै वाचः पृथिवी शरीरं ज्योतीरूपमयमग्निस्तद्यावत्येव वाक्ना-वती पृथिवी तावानयमग्निः ॥

पदच्छेदः ।

तस्यै, वाचः, पृथिवी, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, अयम्, अन्निः, तत्, यावती, एव, वाक्, तावती, पृथिवी, तावान्, अयम्, अग्नि: ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तस्यै=उस वाचः=वायी का शरीरम्=शरीर पृथिवी=प्रथिवी है + च=श्रीर ज्योतीरूपम्=मकाशात्मकरूप श्रयम्=यद्द प्रत्यक्ष श्राग्नः=श्रीन है तत्=तिसी कारया यावती=जितनी दूर तक
पृथिवी=पृथिवी है
तावत्=उतनी दूर तक
वाक्=वाकी है
+ च=ग्रीर
यावत्=जितनी दूर तक
ग्राग्न=व्यानि है
तावत्=उतनी ही दूर तक

भावार्थ।

हे सौम्य ! वागाी का शरीर पृथिवी है, श्रौर वागाी का प्रका-शात्मक रूप यह प्रत्यक्ष अगिन है, इसी कारण जितनी दुर तक पृथिवी है उतनी ही दूर तक वाणी है, अोर जितनी दूर तक अगिन है उतनी दर तक अपिन का प्रकाशात्मक रूप है, अध्या जहां तक पृथिवी अपेर आग्नि है. वहां तक वासी और वासी का स्वरूप है, हे सौम्य ! पृथिवी में पांच तत्त्व हैं, पृथिवी, जल, श्राग्नि, वायु, श्राकाश इन्हीं करके सारी सृष्टि की उत्पत्ति है. इसिलये जहां तक इन पांच तत्त्वों का श्रीर खास करके प्रथिवी श्रीर श्रारिन का विस्तार है वहां तक वासी का भी विस्तार है, जैसे अपिन का कार्य नेत्र है, जिसके आश्रयरूप है, वैसे ही वाणी अग्नि के आश्रय है, यानी विना अग्नि के वाणी नहीं रह सक्ती है, यह प्रत्यक्ष देखने में आता है कि पुरुष के मरते समय जब तक शरीर में उष्णाता रहती है तब तक भाषणा शक्ति भी रहती है, जब शरीर से उष्णाता चल देती है और शीतजता आजाती है तब वासी भी बंद हो जाती है, इसी से जाना जाता है कि वासी अग्नि शक्ति के आश्रित है, और जैसे अग्नि पदार्थों का प्रकाशक. और अन्धकार का नाशक है, वैसेही वासी भी उद्यारस करके सब पदार्थीं की प्रकाशिका है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

अथैतस्य मनसो चौः शरीरं ज्योतीरूपमसावादित्यस्तवावदेव मनस्तावती घौस्तावानसावादित्यस्ती मिथुन एसमैतां ततः पाणोऽ-जायत स इन्द्रः स एषोऽसपत्रो द्वितीयो वै सपत्रो नास्य सपत्रो भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एतस्य, मनसः, दोः, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, असौ, आदित्यः, तत्, यावत्, एव, मनः, तावती, दौः, तावान्, असौ, आदित्यः, तौ, मिथुनम्, समैताम्, ततः, प्राग्यः, आजायत, सः, इन्द्रः, सः, एषः, आसपतः, द्वितीयः, वै, सपतः, न, आस्य, सपतः, भवति, यः, एवम्, वेद ॥

श्रान्वयः

पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=श्रीर एतस्य=इस मनसः=मन का श्रुरीरम्=शरीर चीः=स्वर्ग है +तस्य=उसका ज्योतीक्षयम्=श्रकाशक्ष श्रादित्यः=सूर्य है तत्=इस कारण यावत्=जितना प्रमाणवाला मनः=मन है तावती एव=उतना ही प्रमाण

द्योः=स्वर्ग है ताबान्=उतनाही प्रमास

श्रमी=यह आदित्यः=सूर्व है + यदा=जब तौ=ये दोनों यानी मन और वायी मिथुनम्=मिथुनभाव को समैताम्=मास हुये ततः=तव उनसे प्रांग:=प्राय सजायत=हुमा सः=बह प्राव इन्द्र:=बहा शक्तिमान् है सः=वडी एषः=यह प्राख असपताः=स्पर्धारहित धै=निरचय करके है सपका:=स्पर्धा करने वाका द्वितीयः≠दूसरा + भवति=होता है यः=जो ध्वम्=ऐसा बेद=जानता है

अस्य=इसक। सपज्ञः=मुकानिका करने वाला दूसरा न=नडीं भवति=होता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! उस मन का शरीर स्वर्ग है, उसका प्रकाशरूप यह सूर्य है, इस कारण जितना प्रमाण्याला मन है, उतना ही प्रमाण्याला आकाश है, उतना ही प्रमाण्याला आकाश है, उतना ही प्रमाण्याला यह सूर्य है, जब दोनों यानी मन और वाणी मिश्रुनभाव को प्राप्त होते हैं, यानी संमिलित होते हैं तब उनसे प्राण्य उत्पन्न होता है, वह प्राण्य बड़ा शक्तिमान है, वही यह प्राण्य स्पर्धारहित है, स्पर्धा करनेवाला दूसरा होता है, जो ऐसा जानता है उसका मुकाबिला करनेवाला दूसरा नहीं होता है। १२।

मन्त्रः १३

भ्रथेतस्य पार्णस्यापः शरीतं ज्योतीरूपमसौ चन्द्रस्तथावानेव पार्ण-स्तावत्य श्रापस्तावानसौ चन्द्रस्त एते सर्व एव समाः सर्वेऽनन्ताः स यो हैतानन्तवत उपास्तेऽन्तवन्त ५ स लोकं जयत्यथ यो हैतान-नन्तानुपास्तेऽनन्त ५ स लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, एतस्य, प्राग्यस्य, श्रापः, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, श्रसी, चन्द्रः, तत्, यावान्, एव, प्राग्यः, तावत्यः, श्रापः, तावान्, श्रसी, चन्द्रः, ते, एते, सर्वे, एव, समाः, सर्वे, श्रनन्ताः, सः, यः, ह, एतान्, श्रन्तवतः, उपास्ते, श्रन्तवन्तम्, सः, जोकम्, जयित, श्रथ, यः, ह, एतान्, श्रन्तनान्, उपास्ते, श्रनन्तम्, सः, जोकम्, जयित ॥ श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्तयः पदार्थाः

श्रथ≈भीर . पतस्य=इस प्राग्यस्य=प्राय का श्रुरीरम्=शरीर

आपः=जब है + च=घीर + तस्य=इसका ज्योती रूपम्=प्रकाशास्मकस्त्र श्रसी=यह प्रत्यक्ष चन्द्रः=चन्द्रमा ह तत्=तिसी कारण यावान्=जितना एव=ही प्राणः=प्राण है ताबत्यः=उतना ही श्रापः=जल है तावान्=उतनाही श्रसी=वह चन्द्रः=चन्द्रमा है ते=वे वाणी मन और प्राण पते=वे सर्वे=संब पच=निरचय करके समाः=ग्रापस में बराबर हैं सर्वे=सब श्चनन्ताः=धनन्त हें

े सः≔वड यः=जो ह=निश्चय करके पतान्≔इनको स्रन्तवतः=परिव्हिक् + शात्वा=जानकर उपास्ते=उपासना करता है + सः=वह ह=धवश्य अन्तवन्तम्=नाशवःन् लोकम्=बोकको जयति=जीतता है श्रध=थीर यः=जो प्तान्=ान मन वाकी प्राम को अनन्तान्=ध्रारिच्छित्र + शात्वां=जानकर उपास्ते=उपासना करता है सः=वह अनन्तम्=श्रन्तरहित स्रोकम्=स्रोक का

जयति=जीतता है

भावार्थ ।

हे सीन्य ! उस प्राण का शरीर जल है, यानी जल के आश्रय प्राण है, इसी कारण संस्कृत में कहा है, "जलं जीवनम्" विना जल के किसी प्राणों का जीवन नहीं रह सक्ता है, और प्राण का प्रकाशक्तप यह चन्द्रमा है, इस कारण जहां तक प्राण की स्थित है वहां तक जल है, और वहीं तक चन्द्रमा है, इस लिये वाणी, मन और प्राण आपसा में वरावर है, और सबही अनन्त हैं जो कोई इन वाणी, मन और प्राण का प्राण को परिच्छन जानकर उपासना करता है, वह अवस्य

नाशवान् जोकों को प्राप्त होता है, झोर जो उपासक मन, वासी, प्रास्त को अपरिच्छित्र जानकर उपासना करता है, वह अवश्य अन्त-रहित जोकों को प्राप्त होता है ॥ १३॥

मन्त्रः१४

स एष संवत्सरः प्रजापितः षोडशकलस्तस्य रात्रय एव पश्च-दश कला ध्रुवैवास्य षोडशीकला स रात्रिभिरेवाऽऽच पूर्यतेऽप च क्षीयते सोऽमावास्या ५ रात्रिभेतया षोडश्या कलया सर्विमदं पाण-भृदनुप्रविश्य ततः पातर्जायते तस्मादेता ५ रात्रिं पाणभृतः प्राणं न विच्छन्द्यादपि कुकलासस्यैतस्या एव देवताया श्रपाचित्ये ॥

सः, एवः, संवत्सरः, प्रजापितः, षोडशकलः, तस्य, रात्रयः, एव, पश्चदशः, कलाः, ध्रुवा, एव, अस्य, षोडशीकला, सः, रात्रिभिः, एव आ, च, पूर्वते, अप, च, श्रीयते, सः, श्रमावास्याम्, रात्रिम्, एतया, षोडश्या, कलया, सर्वम्, इदम्, प्राग्णभृत्, श्रनुप्रविश्य, ततः, प्रातः, जायते, तस्मात्, एताम्, रात्रिम्, प्राग्णभृतः, प्राग्णम्, न, विच्छिन्न्यात्, श्रापि, क्रकलासस्य, एतस्याः, एव, देवतायाः, श्रापित्ये ॥ श्रम्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ान्वयः पदार्थाः
सः≔वही
प्रपःःच्यह
वे अशुक्तलः≔सोलह कलावाला
संवरसरः≔कालरू॰
प्रजापतिः≔प्रजापति है
तस्य=उस प्रजापति के
रात्रयः=सुक्र कोर हृष्यपश्च
की रात्रि मिकाकर
पञ्चदश्=पन्दह
कलाः≔कला है वानी भाग

+ च=घीर

श्रस्य=उस प्रजापति की
थोडशीकला=सोबदवीं कबा

प्रवा पद्य=ध्रुव कबा है जो सदा*

श्रवा पद्य=ध्रुव कबा है जो सदा*

श्रवा रहती है

सः=वह प्रजापति
रात्रिभिः=कबाघों करके

पद्य=ही

श्रापूर्यते=पूर्व कियाजाता है

्रवर्शी कलाओं करके अपर्श्वायते= ही श्लीय भी किया जाता है

+ततः=तत्परचात् सः=वही प्रजापति

द्यमावास्याम् । रात्रिम्)

पतया=इस षोडश्या=सोलइवीं कलया=कला के साथ इदम्=इस सर्वम्=सब

प्राणभृत्=प्राणियों में ब्रानुप्रविश्य=प्रवेश करके

प्रातः=दूसरे दिन प्रातःकाच जायते=उत्पन्न होता है तस्मात्=इस विये पताम्=इस रात्रिम्=ममावास्या की रात्रि को

प्राग्धभृतः≔जीवनात्र को न विक्छिन्द्यात्≕कोई न मारे + ख=घोर

कृकलासस्य=बदशैनीय श्रीर सुभाव हिंस्य गिरगिट के

> प्राण्म्=प्राण् को स्रपि=भी

पतस्याः पव=इसश देवतायाः=चन्द्रदेवता के अपचित्यै=पूजा के तिये + न पच=न

+ छिन्द्यात्≕मारे

भावार्थ।

हे सौम्य ! वही यह सोजह कजावाजा संवत्सरात्मक प्रजापित है, और जैसे शुक्तपक्ष और कृष्णपक्ष की रात्रि मिलाकर पन्द्रह कला इसके घटते बढ़ते हैं, और सोजहवीं इसकी कला जो सदा अचल रहती है, और अमावस की तिथिको सोजहवीं काला से शुक्त होकर सब प्राण्यों के अन्दर प्रवेश करता है और दूसरे दिन प्रातःकाल उत्पन्न होता है, इसी प्रकार यह पुरुष भी सोजह कलावाजा है, इसके सोजह कलाओं में से पन्द्रह कला गौ, महिष, भूमि, हिरयय, साम्राज्यादि धन हैं, जो घटते बढ़ते रहते हैं और सोजहवीं इसकी कला आत्मा है जो घटने बढ़ने से रहित होकर अचल स्थित रहता है हे सौम्य ! इस जिये इस अमावस की रात्रिको जीवमात्र का मारना निषेष है, यहां तक कि अदर्शनीय स्वभावहिंस्य गिरगिटान को भी चन्द्रदेवता की प्रतिष्ठानिमत्त भी हत न करे !! १४ !!

सन्त्रः १४

यो वै स संवत्सरः प्रजापतिः षोडशकलो ऽयमेव स यो ऽयमेवं वित्पुरू-पस्तस्य वित्तमेव पञ्चदश कला श्रात्मैवास्य षोडशी कला स वित्तेनै-वाऽऽच पूर्वतेऽप च श्लीयते तदेतन्नभ्यं यदयमात्मा मधिर्तित्तं तस्माच-चपि सर्वेज्यानि जीयते त्रात्मना चेज्जीवति प्रधिनाऽगादित्येवाऽऽहुः॥

पवच्छेदः ।

यः, वै, सः, संवत्सरः, प्रजापतिः, षोडशकलः, श्रयम्, एव, सः, यः, अयम्, एवंवित्, पुरुषः, तस्य, वित्तम्, एव, पश्वदश, कला, आत्मा, एव, आस्य, पोडशी, कला, सः, वित्तेन, एव, आ, च, पूर्यते, आप, च, क्षीयते, तत्, एतत्, नभ्यम्, यत्, भ्रयम्, भ्रात्मा, प्रधिः, विक्तम्, तस्मात्, यदि, श्रापि, सर्वज्यानिम्, जीयते, श्रात्मना, चेत्, जीवति, प्रधिना, श्रमात्, इति, एव, श्राह: ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः यः≕जो सः=वह वै=निश्चय करके षोडशकलः=सोलह कलावाला संवत्सरः=संवत्सरात्मक प्रजापतिः=प्रजापति है सः एव=वह ही अयम्=यह सोलह कलायुक्र पुरुषः=पुरुष है प्षंवित्=इस प्रकार जानता है तस्य=उसका वित्तम्=धन गौ भादि प्व=धवश्य पञ्चदश कला=पन्द्रह कलाके तुस्य

पदार्थाः सस्य=उसका द्यात्मा=श्रासा एव=निश्चय करके षे) डश्री=सोलहवीं कला=कला युव के तुस्य भटल है सः=वह पुरुष वित्तेन=गा ग्रादि धन करके पव=ही आपूर्वते=बदता है + च=घौर अपक्षीयते=घटजाता है यदि≕धगर यत्≕जो भयम्≕यह

श्चात्माः च्चात्मा है
तत्=सो
पतत्=यह
नभ्यम्=नामिस्थानी है
च=चौर
यत्=जो
वित्तम्=गी भावि धन है
प्रधिः=वह प्रधि केसमान है |
तस्मात्=इस कारण
यद्यपि=यचपि
श्चस्य=इसका
सर्वज्यानिम्=सर्वस्वहानि को
जीयते=पास होजाय
+ तथापि=तो भी उसकी

+ म + श्वतिः=कोई क्षति नहीं है
चित्=चगर
आत्मन।=चात्मा करके
+ सः=वह
जीवति=जीता हुआ हो
हित=ऐती हाजत में
आहु: पूच=जोग उनके बारे में
यही कहेंगे कि
सः=वह केवल
प्रधिना=अधिस्थानी धन से
हुआ है पर चात्मा

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जैसे सोलह कलायुक्त संवत्सगत्मक प्रजापित है वैसे ही यह सोलह कलायुक्त पुरुष भी है, आरे जैसे प्रजापित के पन्द्रह कला यानी प्रतिपदा से आमावस के अर्धभागतक घटते बढ़ते हैं वैसे ही इस ज्ञानी पुरुष के भी गी आदि धन बढ़ते घटते हैं, और जैसे प्रजापित का सोलहवाँ कला यानी अन्तिमभाग आमावस और पूर्णमासी का धुववत् अटल रहता है, उसी प्रकार इस पुरुष का भी सोलहवाँ कला यानी आत्मा अटल बना रहता है, और इसी अविनाशी आत्मा के आश्रय पन्द्रह कला स्थित रहते हैं, ये पन्द्रह कला अरा और परिधि के तुल्य हैं, और आत्मा चक्र के नाभिस्थानी है, जैसे नाभि के बने रहने पर निकले हुये और और परिधि दुरुस्त होसको हैं उसी प्रकार आत्मा के आश्रय गो आदि धन भी रहते हैं, यदि यह धन एकबार नष्ट भी होजायँ और आत्मा बना रहे तो फिर भी धन प्राप्त हो सका है, और संसार में लोग ऐसा भी कहते हैं कि अरा

क्योर परिधि के तुल्य इस पुरुष के सब धन नष्ट होगय हैं, परन्तु इसका क्यात्मा चक्रनाभि के तरह बना है जिस करके यह फिर क्यपने धन को पूर्या करलेगा ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

अथ त्रयो वाव लोका मनुष्यलोकः थितृलोको देवलोक इति सोऽयं मनुष्यलोकः पुत्रेणीव जय्यो नान्येन कर्मणा कर्मणा पितृलोको वि-षया देवलोको देवलोको वै लोकाना ५ श्रेष्टस्तस्मादिचां मश्५सन्ति॥

पदच्छेदः ।

अथ, त्रयः, वाव, लोकाः, मनुष्यलोकः, पितृलोकः, देवलोकः, इति, सः, अयम्, मनुष्यलोकः, पुत्रेगा, एव, जय्यः, न, अन्येन, कर्मगा, कर्मगा, पितृलोकः, विद्या, देवलोकः, देवलोकः, वे, लोकानाम, श्रेष्ठः, तस्मात्, विद्याम, प्रशंसन्ति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः
श्चर्य=श्चीर
श्चर्य=तीन
थाव=ही
स्रोकाः=लोक हैं यानी
मनुष्यस्रोकः=मनुष्यलोक
पिनुस्रोकः=पितरस्रोक
+ च=शीर
देयस्रोकः इति=देवस्रोक के नाम से
प्रसिद्ध है
+ तत्र=तिनमें
सः=वही
श्चरम्=यह
मनुष्यस्रोकः=मनुष्यस्रोक

पुत्रेगा=पुत्र करके

एच≕8ो

श्रन्थयः पदार्थाः

न सन्येन } = श्रन्य यज्ञादि कर्म

कर्मेणा } = करके नहीं

कर्मेणा=कर्म करके

पितृलोकः=पितरलोक

+ च=श्रीर

थिद्यया=विषा करके
देवलोकः=देवलोक

+ जय्यः=जीतने योग्य है
देवलोकः=देवलोक

वै=निश्चय करके
लोकानाम्=तीनों खोकों में

थ्रेष्ठः=भेष्ठ है
तस्मात्=इसी कारख
विद्याम्=विषा की

+ विद्यासः=विद्यानुलोग

भावार्थ ।

है सौम्य ! तीन लोक हैं, यानी मनुष्यलोक, पितरलोक, देवलोक.
मनुष्यलोक पुत्र करके प्राप्त होने योग्य है, और कमों करके नहीं,
यज्ञादि कमों करके पितरलोक प्राप्त होने योग्य है, और ज्ञान करके
देवलोक प्राप्त होने योग्य है, कहे हुये तीनों लोकों में से देवलोक श्रेष्ठ
है, क्योंकि देवलोक की प्राप्ति ज्ञान करके होती है, और यही कारगा
है कि ज्ञानकी प्रशंसा विद्वान लोग करते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

श्रयातः संप्रचिर्यदा प्रैष्यन्मन्यतेऽय पुत्रमाह त्वं ब्रह्म त्वं यह्नस्त्वं लोक इति स पुत्रः पत्याहाहं ब्रह्माहं यह्नोहं लोक इति यद्दे किंचा-नृक्षं तस्य सर्वस्य ब्रह्मेत्येकता ये वै के च यह्नास्तेषा सवषां यह्न इत्येकता ये वै के च लोकास्तेषा सर्वेषां लोक इत्येकतेतावद्वा इद १६ सर्वेमेतन्मा सर्वे सम्प्रयमितोऽभुनजदिति तस्मात्पुत्रमनुशिष्टं लोक्य-माहुस्तस्मादेनमनुशासति स यदैवंविदस्माल्लोकात्त्रेत्ययेभिरेव प्राणीः सह पुत्रमाविशति स यचनेन किंचिद्स्ण्णयाऽकृतं भवित तस्मा-देन १ सर्वस्मात्युत्रो मुखति तस्मात्युत्रो नाम स पुत्रणैवास्थिलंकोके मतितिष्ठत्यथैनमेते दैवाः प्राणा श्रमृता श्राविशन्ति ।।

पदच्छेदः ।

अथ, अतः, संप्रत्तिः, यदा, प्रेच्यन्, मन्यते, अथ, पुत्रम्, आह, त्वम्, ब्रह्म, त्वम्, यज्ञः, त्वम्, लोकः, इति, सः, पुतः, प्रत्याह, अहम्, ब्रह्म, यज्ञः, अहम्, लोकः, इति, यत्, तै, किंच, अन्-क्रम्, तस्य, सर्वस्य, ब्रह्म, इति, एकता, ये, तै, के, च, यज्ञाः, तेषाम्, सर्वेषाम्, यज्ञः, इति, एकता, ये, ते, के, च, लोकः, तेषाम्, सर्वेषाम्, अवः, इति, एकता, एतावत्, वा, इदम्, सर्वम्, एतत्, मा, सर्वम्, सन्, अयम्, इतः, अभुनजत्, इति, तस्मात्, पुत्रम्, अनुशास्ति, सः, यदा, शिष्टम्, लोक्यम्, आहुः, तस्मात्, एनम्, अनुशास्ति, सः, यदा,

एवंवित्, अस्मात्, स्नोकात्, प्रैति, अथ, एभिः, एव, प्रायौः, सह, पुत्रम्, आविशति, सः, यदि, अनेन, किंचित्, अक्षाया, अकृतम्, भवति, तस्मात्, एनम्, सर्वस्मात्, पुत्रः, मुश्वति, तस्मात्, पुत्रः, नाम, सः, पुत्रेगा, एव, अस्मिम्, क्लोके, प्रतितिष्ठति, अथ, एनम्, एते, दैवाः, प्राग्ताः, अमृताः, आविशन्ति ॥ पदार्थाः सन्वयः पदार्थाः

अन्वयः

अथ अतः=तीन लोकों के कथन के पीखे

संप्रतिः=संप्रति कर्म का वर्षान + कथ्यते=किया जाता है

यदा=जब

+ पिता=पिता

प्रैध्यन्=मरनेवाला

मन्यते=अपने को समसता है

ग्रथ=तब

+ सः=वह पुत्रम्=पुत्र से

आह=कइता है कि

त्वम्=त् ब्रह्म=वेद है

त्वम्=पू

यञ्चः=यज्ञ है त्वम्=त्

लोक:=बोक है इति=इस प्रकार

+ शुरवा=सुन कर

सः=वह

पुत्रः=पुत्र प्रत्याह=जवाब देता है कि

श्रहम्=में

Ę

श्रहम्≕र्मे यक्षः=यज् है

लोकः इति=बोक हं तब

+ पिता पुनः } पिता फिर कहता वदति } है कि

यत्≕जो किंच वै=कुछ मुक्त करके अनुक्रम्=पहा गया है अथवा

नहीं पदा गया है

तस्य=उस सर्वस्य⇒सबकी

पकता=एकता

ब्रह्म इति=वेद के साथ हैं

+ च=भीर ये में के जो कोई

तेषाम्=डन

सर्वेषाम्=सबकी एकता≕एकता

यज्ञः इति=यज्ञ के साथ है

ख=भीर

ये वै के=जो कोई

(स्रोक सुमकरके जीते स्रोकाः={ गये हैं भथवा नहीं जीते गये हैं

तेषाम्=उन सर्वेषाम्=सम्बद्धी एकता=एकता

पकता=प्कता स्रोकः इति=स्रोकपद के साथ है + युत्र=हे पुत्र !

पतावत् वै=इतना ही

इदम्=यह

सर्वम्= { सबहै यानी इन तीन कर्मों से अधिक और कोई कर्म नहीं है

पतत्=इस सर्वम्=सर भार को

+ अपिडिछ्ड्य= { मुक्तसे असग करके - अपिडिछ्ड्य= } और अपने उपर रख करके

> + मम=मेरा सन्=विद्वान् श्रयम्=यह पुत्र इतः=इस खोक से मा=मुक्तको

अभुनजत् (अच्छी तरह पालेगा यानी सर्वे बन्धनों से इति (जुदादेगा

तस्मात्=इस कारण अनुशिष्टम्=सुशिक्षित पुत्रम्=पुत्रको लोकम्=पिट्योकहितकारी

+ जनाः=विद्वान्सोग भाडुः=कइते हैं + च=धौर तस्मात्=इसी कारवा पनम्=इस पुत्र को अनुशासति=विद्या पदाते भौर

कर्म सिसाते हैं + यहा=जब सः=वह पिता प्रवंबित्=ऐसा जाननेवासा अस्मात्=इस

स्रोकात्=जोक से यानी इस शरीर से

> प्रैति=चन्ना जाता है डाथ=तब

+ सः≔वह

प्रसिः≔इन

प्राणः एव=वाणी, मन भौर

प्राया के

सह=साथ पुत्रम्=पुत्र में

आविश्वति=प्रवेश करता है

+ येन=जिस करके

+ सः=वह पुत्र + पितृवत्=पिता की तरह

+ कर्म=कर्मी को

+ करोति=करता है यदि=भगर

झनेन=इस पिता कस्के

किचित्=कुव

ग्रंस्ण्या=विश्वसः" श्रकुतम्=नर्ही किया गया

भवति=होता है तो

सः=बह

पुत्रः=पुत्र
तस्मात्=बस
सर्वस्मात्=सब बकृत कर्म से
पनम्=इस विता को
मुञ्जिति=खुदा देता है
तस्मात्=इस कारण
• सः=बद्द विता
पुत्रः=पुत्र रूप
नाम=करके प्रसिद्ध है
+स्रातः=इसी कारण
• सः=बद्द विता

पुत्रेण्=पुत्रहप से
श्रहिमन् लोके=इस बोक विवे
पद्य=प्यवश्य
प्रतितिष्ठति=विद्यमान रहता है
श्रध=तत्पश्चात्
पनम्=इस पुत्र में
पते=ये
प्राणाः=मन, वाक्, प्राणादि
देवाः=देवता
श्रमृताः=मरणधर्मरहित
श्राविशन्ति=प्रविष्ट रहते हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तीन लोक जो ऊपर कथन कर आये हैं उन सबके पीछे अब सम्प्रत्ति कर्मका वर्णन करते हैं, हे सौम्य ! जब पिता मरने खगता है तब वह अपने पुत्र को समस्ताता है कि है पुत्र ! तू वेद है यानी तु वेद को पह, तु यह है यानी यह को कर, तु क्लोक है यानी त सब जोकों को अपने पुरुषार्थ करके प्राप्त कर यह सुन कर पुत्र जवाब देता है कि हे पिता ! मैं वेद हूं यानी वेद को पहुंगा, मैं यज्ञ हूं यानी यह करूंगा श्रीर में लोक हूं यानी लोकों को जीतूंगा, तब फिर पिता कहता है, हे पुत्र ! जो कुछ मुम्म करके पढ़ा गया है, झौर जो नहीं पढ़ा गया है उन सबकी एकता वेद के साथ है. आरे जो कुछ मुम्म करके यज्ञ किया गया है उनकी एकता यज्ञ के साथ है. और जो कहा लोक जीते गये हैं या नहीं जीते गये हैं. उन सबकी एकता जोकपद के साथ है. इस ऊपर कहे हुये का अभिप्राय यह है कि जो कुछ पिताने खडके को सिखलाया है और जो कुछ जडके ने पिता से सीखने को कहा है वह सब देद में अनुगत है, और जो कुछ पितासे जडके ने यहा करने को वाक्य दिया है वह सब यहा विषे अनुगत है, और जो पितासे लोकों की प्राप्ति के लिये जडके ने कहा

है वह सब लोक में अनुगत है, हे सीम्य ! फिर पिता अपने पुत्र से कहता है कि यही तीन कर्म ऊपर कहे हुंथे हैं, इनसे अधिक कर्म कोई नहीं है, हे पुत्र ! तू मुक्त को इसके भार से उद्धार कर, और उस भारको अपने ऊपर रख, और मुक्तको सब प्रकार के बन्धनों से छुड़ा दे, पुत्र कहता है ऐसाही करूंगा. इस कारण सुशिक्षित पुत्र पितरों का हितकारी होताहै, ऐसा विद्वान लोग कहते हैं, और इसी कारण पुत्र को विद्या पढ़ाते हैं, कर्म सिखाते हैं, और जब वह पिता इस लोक से चलाजाता है तब वह इन वाक, मन और प्राण्य के साथ पुत्र में प्रवेश करता है, और यही कारणा है कि पुत्र पिताकी तरह कर्मों को करने जगता है, यदि पिताने कोई कर्म विद्याश नहीं किया है तो पुत्र उस अकृत कर्म को करके पिता को पाप से छुड़ा देता है, इसी कारणा वह पिता पुत्र के रूप में संसार विधे विद्यामन रहता है, और उस पुत्र में ही सब वाक, प्राण्य, मन आदि देवता मरण्धमें से रहित होते हुये प्रवेश करते हैं ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

पृथिञ्चे चैनमग्नेश्च दैवी वागाविशति सा वै दैवी वाग्यया यद्यदेव बदति तत्तद्भवति॥

पद्च्छेदः ।

पृथिन्ये, च, एतम्, झग्तेः च, देवी, वाग्, झाविशति, सा, वे, देवी, वाग्, यया, यत्, यत्, एव, वदति, तत्, तत्, भवति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पृश्चिडयै=पृथिबी झंशसे पृथक् स्व=झोर झाने:=झिन झंश से

ख=भी प्रथक्

+ सदा=जब देखी=देखी शक्तियुक्त वार्य=नायी एनम्=इस स्तरूख पुरुष में एक्टिएकि-एनेस स्टब्स है

भाविशैति=मवेश करती है + तदा=तव

> वै≕निरचन करके सा≔नही

देधी=देवी धाग्=वाथी है यया=जिस करके यत् यत्=जो जो

+ पुरुषः=वह पुरुषः वद्ति=कहता है तत् तत् एव=वही वही भवति=होता है

भावार्थ।

हे सौन्य ! यह देवीशक्तियुक्त वाग्गी पृथिवी अंश और अग्नि अंश से पृथक् होकर जब इस कृतकृत्य पुरुष में प्रवेश करती है तभी निश्चय करके देवी वाग्गी है जिस करके वह पुरुष जो जो कहता है वह वह सब सत्य होता है ॥ १८ ॥

मन्त्रः १६

दिवरचैनमादित्याच दैवं पन श्राविशति तद्वै दैवं पनो येनाऽऽ- ं नन्धेव भवत्यथो न शोचति ॥

पदच्छेदः ।

दिवः, च, एनम्, आदित्यात्, च, दैवम्, मनः, आविशति, तत्, वै, दैवम्, मनः, येन, आनन्दी, एव, भवति, अथो, न, शोचति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ यदा=जब दैचम्=दैवीशक्षियुक्त मनः=भन दिखः=बाकाश के बंशसे प्रथक् ख=बीर बादित्यात्=सूर्य के बंश से प्रयक् स्न=भी

+ भूत्वा=होकर पनम्=इसं इतहत्य पुरुष विवे झाविद्यति=मवेश इतहा है

+ तद्।≒तव

तत्=वह
वै=िनरचय करके
वैवम्=दैवीशक्रियुक्त
मनः=मन है
येन=जिस करके

+ पुरुषः=पुरुष प्रव=भवरय भ्रानम्दी=भागन्दित भवति=होता है भ्रथ=भीर

न शोखति⇒सोच नहीं करता है

भाषार्थ ।

हे सीम्य ! जब देवीशक्तियुक्त मन आकाश और सूर्य के

कांश को त्याग करके इस कृतकृत्य पुरुष में प्रवेश करता है तब वही निश्चय करके दैवीशिक्तयुक्त मन है जिस करके पुरुष आनिन्दत होता है और शोक नहीं करता है।। १६॥

मन्त्रः २०

श्रद्भणश्चैनं चन्द्रमसरच दैवः प्राण श्राविशति स वै दैवः प्राणो यः संचर १रचासंचर १रच न व्यथते अथो न रिष्यति स एवं-वित्सर्वेषां भूतानामात्मा भवति यथैषा देवतैव स यथैतां देवता र सर्वाणि भूतान्यवन्त्येव इवंतिद सर्वाणि भूतान्यवन्ति यदु किं चेमाः प्रजाः शोचन्त्यमैवाऽऽसां तद्भवति प्रएयमेवाग्नं गच्छति न इ वै देवान्यापं गच्छति ॥

पदच्छेदः ।

भाद्रथः, च, एनम्, चन्द्रमसः, च, दैवः, प्राग्तः, भाविशति, सः. वै, दैवः, प्राशाः, यः, संचरन्, च, असंचरन्, च, न, व्यथते, अथो, न, रिष्यति, सः, एवंवित्, सर्वेषाम्, भूतानाम्, आत्मा, भवति, यथा, एषा, देवता, एवम्, सः, यथा, एताम्, देवताम्, सर्वाग्रि, भूतानि, अवन्ति, एवम्, ह, एवंविदम्, सर्वाणि, भूतानि, अवन्ति, यत्, उ, किंच, इमाः, प्रजाः, शोचन्ति, श्रमा, एव, श्रासाम्, तत्, भवति, पुरायम्, एव, आमुम्, गच्छति, न, ह, वै, देवान्, पापम्, गच्छति ॥ पदार्थाः

पदार्थाः । श्चन्ययः

+ यदा≔जब वैवः=वैवीशक्तियक प्रागुः=प्राय श्चाद्धशः=जब के शंशसे पृथक् बन्द्रमसः=चन्द्रमा के चंदा से च=भी अतिरिक्त + भूत्वा=हो कर

इस्वयः

पनम्≔इस पुरुष में माविशति=भवेश करता है + तदा=तब सःबै=वही देख:=दैवीशक्रियुक्त प्राणः=भाष है संसरन्=चसता हुमा

च≔ग्रीर श्रसंचरन् च=नहीं चलता हुनाभी म≕नहीं ब्यथते=दुःखित होता है अथो=भौर न=नहीं रिष्यति=नष्ट होता है एवंवित्=प्राणकी ऐसी महिमा का जानने वाला सः≔वह पुरुष सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राणियों का द्यातमा=त्रिय भारमा भवति=होता है +च=भौर यथा=जैसे एषा=यह प्राख देवता=देवता कल्यासरूप है एवम्=तैसेही सः=वह भी कल्याग्रह्य + भवति=होता है + च=भौर यथा=जैसे सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी पताम् देवताम्=इस प्राणदेवता की श्रवन्ति=रक्षा करते हैं

एवम् ह=वैसे ही

सर्वाणि=सब भूतानि=प्राची पर्वविदम्=इस प्राचवेता की भी अवन्ति=रक्षा करते हैं उ=ग्रीर यस्=जो

> इमाः=यह प्रजाः=प्रजायें

शोचन्ति= शोचन्ति= दुःख पहुँचता है

तत्=वह सब दुःस श्रासाम्=इन प्रजाकों के श्रासा के श्रासा=साथ प्रव=ही भयति=होता है + परन्तु=परन्तु श्रमुम्=इस प्राणवित् देव पुरुष को पुरायम् प्रव=सुख श्रवस्य गञ्जूति=प्राप्त होता है ह वै=न्योंकि निरस्य करके देवान्=देवों को पार्यम्=पारजन्य दुःस

म=नहीं

गच्छति=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जब दैवीशिक्तियुक्त प्रांग जल झंश झौर चन्द्र झंश को त्याग करके इस कृतकृत्य पुरुष विषे प्रवेश करता है तब वही दैवीशिक्षियुक्त प्राया है जो चलता है झोर नहीं भी चलता है सो ऐसा यह प्राया न नष्ट होता है, न दुःखित होता है, प्राया की इस मिहमा का जाननेवाला जो पुरुष है वह सब प्रायायों का प्रिय आरक्ष्मा होता है, और जैसे वह प्राया देवता कल्यायारूप है, तैसेही वह पुरुष भी कल्यायारूप होता है, झोर जैसे सब प्राया उस प्रायादेवता की रक्षा करते हैं वैसेही सब प्राया इस प्रायावेता की रक्षा करते हैं, झोर है सौम्य! जो कुछ यह प्रजा शोक करती है यानी जो कुछ उसको दुःख होता है वह दुःख इस प्रजा के झात्मा को भी पहुँचता है, झोर इस प्रायावित पुरुष को प्रयम्क यानी सुख अवस्य प्राप्त होता है, क्योर इस प्रायावित पुरुष को प्रयम्क यानी सुख अवस्य प्राप्त होता है, क्योर

मन्त्रः २१

श्रयातो व्रतमीमाश्सा पजापितई कर्माणि सस्जे तानि स्पृष्टान्यन्योन्येनास्पर्धन्त विद्ण्याम्येवाइमिति वाग्दघे द्रक्षाम्यइमिति
चक्षः श्रोष्याम्यइमिति श्रोत्रमेवमन्यानि कर्माणि यथाकर्म तानि
सत्युः श्रमो भूत्वोपयेमे तान्यामोत्तान्याप्त्वा सृत्युरवारुन्ध तस्माच्छ्राम्यत्येव वाक् श्राम्यति चक्षः श्राम्यति श्रोत्रमथेममेव नामोचोऽयं मध्यमः माणस्तानि ज्ञातुं दिघरे भयं वे नः श्रेष्ठो यः
संचर् रचासंचर रच न व्यथते ऽथो न रिष्यति हन्तास्यैव सर्वे
रूपमसामेति त एतस्यैव सर्वे रूपमभव रस्तमादेत एतेनाऽऽख्यायन्ते माणा इति तेन ह वाव तत्कुलमाचक्षते यस्मिन्कुले भवति य
एवं वेद य उ हैवंविदा स्पर्धते अनुशुष्यत्यनुशुष्य हैवान्ततो ज्ञियत
इत्यध्यात्मम् ॥

पदच्छेदः।

अथ, अतः, व्रतमीमांसा, प्रजापतिः, ह, कर्माग्रि, सस्जे, तानि, सुशानि, अन्योन्थेन, अस्पर्धन्त, बदिष्यामि, एव, अहम्, इति, वाग्, दभे, दक्ष्यामि, अहम्, इति, चक्षुः, श्रोष्यामि, अहम्, इति, श्रोत्रम्,

एवम्, अन्यानि, कर्माणि, यथाकर्म, तानि, मृत्युः, अमः, भूत्वा, उपयेमे, तानि, आप्रोत्, तानि, आप्त्वा, मृत्युः, आवारुन्य, तस्मात्, श्राम्यति, एव, वाक्, श्राम्यति, चक्षुः, श्राम्यति, श्रोत्रम्, श्राश्र, इमम्, एव, न, आप्रोत्, यः, अयम्, मध्यमः, प्राग्गः, तानि, ज्ञातुम्, द्धिरे, अयम्, वै, नः, श्रेष्ठः, यः, संचरन्, च, असंचरन्, च, न, व्यथते, आथो, न, रिष्यति, इन्त, आस्य, एव, सर्वे, रूपम्, आसाम, इति, ते, एतस्य, एव, सर्वे, रूपम्, आभवन्, तस्मात्, एते, एतेन, श्राख्यायन्ते, प्राणाः, इति, तेन, ह, वाव, तन्, कुलम्, श्राचक्षते, चस्मिन्, कुले, भवति, यः, एवम्, वेद, यः, उ, ह, एवंविदा, स्पर्धते, अनुशुब्यति, अनुशुब्य, ह, एव, अन्ततः, स्रियते, इति, श्राध्यात्मम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

श्रध=श्रब श्रतः=यहां से

वतका विचार है वतमीमांसा=) वानी इन्द्रियों में कौन श्रेष्ठ है यह (विचारने योग्य है

+ सौम्य=हे सौम्य ! ह=वह प्रसिद्ध है कि

प्रजापतिः=प्रजापति कर्माशि=वागादि कर्मेन्द्रियों को ससुजे=पैदा करता भया तानि=वे सृष्टानि=वैदा हुई इन्द्रियां ब्रन्योन्यन=ब्रापस में श्चर्पर्धन्त=ईर्ष कर श भई कि अहम्≅में ध्य=श्रवस्य

श्चन्ययः वदिष्यामि=बोलती रहंगी द्वांत=ऐसा वत वाग्=वाणी दधे=धारण करती भई श्रहम्≕में द्रस्यामि=देखतारहूंगा इति=ऐसा वत चशुः≔नेत्र दधे≐धारग करता भया ऋहम्≕में श्रोष्यामि=सुनता रहूंगा इति=ऐसा वत श्रोत्रम्=श्रोत्र + द्भ=धारण करता भया एवम्=इसंा प्रकार अन्यानि=भौर कर्माणि=इन्द्रियां भी

यथाकर्म=वपने घपने कर्मानुसार
+ दिश्चरे=त्रत धारण करती भई
+ तदा≔तन
श्रमः=श्रम
सृत्युः=सृत्यु
भूत्वा=हो कर
तानि=वनको
उपयेमे=पक्क लिया यानी
काम में थका दिया
+ च=घोर
तानि=वनको

आप्रोत्= { अपना स्वरूप दिख-स्नाप्रोत्= { स्नाप्रभागायायानाउन के निकट आपहुँचा

+ च=ग्रौर श्चाप्त्वा=उनके पास जाकर मृत्युः≔वर्हा सत्यु अवारुत्ध=उनको भगने काम से रोकता भया तस्मात्=तिसी कारण वाक एव=वाणी घवरय आर्मति=बोसते २ थक नाती है चश्चः≔नेत्र श्राम्यति=देखते २ थक जाता है ओत्रम्=श्रोत्र आम्यति=सुनते २ थक जाता है + सौम्य=हे सौम्य ! द्राध=भव सल्लग्ड वत को कहते हैं + मृत्युः=मृत्युरूपी श्रम

इमम् एव=इस प्राय को

#=नहीं

आप्नोत्=पक्द सका यः=जो श्चयम्=षइ मध्यमः=मध्यम यानी सव इ-न्द्रियों में फिरनेवासा प्राणः=माण है + तम् इतिम् }=उसके जानने के सिये तानि=वे सब इन्द्रियां द्रधिरे=इच्छा करती भई + च=भौर + तम्=उसको + झात्वा=जानकर +वदन्ति+स्म=कहने लगीं कि नः=हम लोगों में + प्राणः वै=प्रागही श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है यः≕जो संवरन्=चलता हुमा च=श्रौर श्रसंचरन्=न चलता हुआ च≕भी न≈न व्यथते=दुःसी होता है अथो=श्रौर न≕न रिष्यति=नष्ट होता है हन्त=यदि सबकी राय हो तो सर्वे=हम सब

ग्रस्य=इसी का

पव≔ही

इतम्=स्व

श्रसाम=वनजायं इति=ऐसा सुनने पर ते सर्वें=वे सब एतस्य=इसका एव=ही रूपम्=रूप श्रभवन्=होते मये तस्मात्=इसी कारण एते=ये वागादि इन्द्रियां एते=व्हस प्राण्य के नामसेही प्राणाः=" प्राण्य " इति=ऐसा

श्रास्थायन्ते= कहे जाते हैं यानी श्रायके नाम करके ही पुकारे जाते हैं

यः≔जो कोई एवम्≔इस प्रकार वेद्≔प्राया की श्रेष्टता को जानसा है

सः=वह प्राग्गवित् पुरुष यस्मिन् कुले=जिस कुल म

भवति=उत्पन्न होता है तत्=डस कुलम्≔कुत को तेन=डसी नाम से ह वाघ=निरचय करके आचक्षते⇒सोग कहते हैं उ=घौर यः≕जो एवंविदा=ऐसे जाननेवाले के + सह≕साथ स्पर्धते=हंषां करता है + सः=वह ह≃प्रवश्य अनुशुष्यति=सुख जाता है + च≔र्घार श्र**नुशुष्य**=सृत्तकर ह एव=भवश्य

श्चन्ततः≔जन्त में स्त्रियते⇒नाश होजाता है इति=ऐसा यह श्रध्यात्मम्≔ष्रध्यात्मविषयक विचार है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! श्रव प्राग्त की श्रेष्ठता को दिखकाते हैं, झौर वत का विचार करते हैं, यानी इन्द्रियों विषे कौन इन्द्रिय श्रेष्ठ है, हे सौम्य ! यह संसार में प्रसिद्ध है कि जब प्रजापित ने बागादि कर्मेन्द्रियों को उत्पन्न किया तब पैदा की हुई इन्द्रियां आपस में ईषां करती मई बाग्ती ऐसा व्रत धारणा करती मई कि मैं सदा बोकती रहूंगी, नेन्न ऐसा व्रत धारणा करता भया कि मैं सदा देखता रहूंगा, श्रोन ने ऐसा क्रत धारणा करता भया कि मैं सदा देखता रहूंगा, श्रोन ने ऐसा क्रत धारणा किया कि मैं सदा दुस्ता रहूंगा, इसी प्रकार और और

इत्टियों ने भी ऐसा वर धारण किया तब उन सब की साहकार पाकर श्रम ने मृत्य होकर उन सबको पकड जिया, यानी उन को बतके कार्य में थका दिया. और उनके निकट जाकर उनकी अपने काम से रोक दिया. इसी कारण वाणी अवश्य बोलते बोलते थक जाती है, नेत्र देखते देखते थक जाता है, श्रोत्र सुनते सुनते थक जाता है. हे सौस्य ! अब आगे उस ब्रत को कहते हैं जो अखग्रिहत बहुता है, हे सीम्य ! वह अमरूप मृत्य इस प्राचा को नहीं पकड सका. जो यह इन्द्रियों में फिरनेवाला प्राशा है उसके जानने की इच्छा सब इन्द्रियां करती भई, और उसके महत्त्व को जानकर आपस में कहने क्रगों कि निस्संदेह यह प्राग्त हम लोगों में श्रेष्ठ है. जो चलता हुआ और नहीं चलता हुआ भी न कभी दुःखी होता है न कभी नष्ट होता है. यदि सब की राय हो तो हम इसका ही रूप वन जायें. ऐसा सुनने पर वे सब इसके ही रूप हो गये. इसी कार्गा वे वागादि इन्द्रियां इसी प्राणा के नाम से प्रकारी जाती हैं. हे सीम्य ! जो कोई इस प्रकार प्राणा की श्रेष्ठता की जानता है, वह जिस कुल मं पैदा होता है वह कुल उसी के नाम से पुकारा जाता है. और जो कोई ऐसे प्राशावित प्रस्व के साथ द्वेष करता है वह सूख जाता है और सूख कर अन्त में नाश होजाता है. हे सोन्य ! ऐसा यह अध्यात्मविषयक विचार है ॥ २१ ॥

मन्त्रः २२

श्रथाधिदेवतं ज्वलिष्याम्येवाहमित्यग्निर्द्धे तप्स्याम्यहमित्या-दित्यो भास्याम्यहमिति चन्द्रमा एवमन्या देवता यथादेवत ५स यथैषां प्राणानां मध्यमः प्राण एवमेतासां देवतानां वायुम्र्लोचन्ति इन्या देवता न वायुः सेषाऽनस्तमिता देवता यद्वायुः ॥

पदच्छेदः । अथ, अधिदैवतम्, ज्वलिष्यामि, एव, अहम्, इति, अग्निः, दर्भे,

द्वप्त्यामि, अहम्, इति, आदित्यः, भास्यामि, अहम्, इति, चन्द्रमाः, एवम्, अन्याः, देवताः, यथादैवतम्, सः, यथा, एषाम्, प्रास्तानाम्, मध्यमः, प्राशाः, एवम्, एतासाम्, देवतानाम्, वायुः, स्लोचन्ति, हि, भ्रान्याः, देवताः, न, वायुः, सा, एषा, भ्रानस्तम्, इता, देवता,

यत्, वायुः ॥

पदार्थाः द्यान्वयः

श्रध=ब्रध्यात्म वर्णन के

अधिदेवतम्=देवता सम्बन्धी विषय + कथ्यते=कहा, जाता है

श्रहम्≕भें

ज्विल्ड्यामि } =जलता ही रहूंगा एवं

र्शत≕ऐसा वत

अग्निः≔भग्नि

द्ध्र=धारण करता भया

श्चहम्≕में

तदस्यामि+एव=तपताही रहूंगा इति=ऐसा वत

द्यादित्यः=सूर्य

+ दभ्र=धारण करता भया

+ च=ग्रौर

श्रहम्=में

भास्यामि+पच=पकाश करता ही

रहुंगा

इति=ऐसा वत

चन्द्रमाः≔चन्द्रमा

+ वृझे=धारण करता भया एवम्=ऐसेही

श्चम्याः=भौर

देवताः=देवता भी

ग्रन्वयः

पदार्थाः

यथादैवतम्=भगने स्वभाव श्रनुसार + अकुर्धन्=वत धारण करते अथे

+ ख=भीर

+ साम्य=हे सीम्य ! यथा≕जैसे

पषाम्≔इन

प्राणानाम्=प्राणां में

सः≔वह

मध्यमः प्राणः=मुख्य प्राश

+ श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है

प्वम्=वैसेही

पतासाम्=इन देवतानाम्=मनि मादि देव-

साझों में

वायु:=वायु

+ श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है

हि=न्योंकि

अन्याः=और

देवताः=देवता

म्लोचन्ति=मपने कार्य में थक

जाते हैं

+ परन्तु=परन्तु

वायुः=वायु

+ आस्यति=पक्ता है

+ च=ष्रीर यत्=इसी कारब सा=बही एषा=बह

वायुः≐वायु देवता⇒वेवता अनस्तम्=नहीं सस्त को इता=पास होता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! अध्यात्मवर्णन के पीछ अव देवतासम्बन्धी विषय कहा जाता है, इसको तुम सावधान हो कर सुनो. मैं जलताही रहूंगा ऐसा व्रत अगिन देवता ने धारणा किया, मैं तपता ही रहूंगा ऐसा व्रत अगिन देवता ने धारणा किया, मैं प्रकाशित करता रहूंगा ऐसा व्रत चन्द्रदेवता ने धारणा किया, मौर इसी प्रकार खोर देवता भी अपने स्वभाव और कर्म अनुसार व्रतको धारणा करते भये. हे सौम्य ! जैसे इन इन्द्रियों विषे खोर प्रागादेवताओं विषे सुख्य प्रांण श्रेष्ठ है वैसेही इन अगिन आदि देवताओं विषे वायु देवता श्रेष्ठ है क्योंकि और देवता अपने कार्य करते करते थक जाते हैं. परन्तु वायु देवता अपने कार्य करते करते थक ताते हैं. परन्तु वायु देवता अपने कार्य के करने में कभी नहीं थकता है. और यही कारणा है कि वह वायु देवता कभी अस्त को नहीं प्राप्त होता है।। २२।।

मन्त्रः २३

श्रथेष श्लोको भवति यतश्वोदेति सूर्योऽस्तं यत्र च गच्छतीति पागादा एष उदेति पाग्रेऽस्तमेति तं देवाश्विकरे धर्मः स एवाद्य स उ श्व इति यदा एतेऽमुक्केश्रियन्त तदेवाप्यद्य कुर्वन्ति तस्मादेकमेव व्रतं चरेत्पाययाचैवापान्याच चेन्मा पाप्मा मृत्युराप्नुवदिति यद्य चरेत्स-मापिपयिषेचेनो एतस्य देवताये सायुज्य सस्तोकतां गच्छति ॥

इति पश्चमं ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥

इराथ, एषः, इलोकः, भवति, यतः, च, उदेति, सूर्यः, अस्तम्, यत्र, च, गच्छति, इति, प्रागात्, वा, एषः, उदेति, प्रागो, अस्तम्, एति, तम्, देवाः, चिक्तरे, धर्मम्, सः, एव, अद्य, सः, ७, श्वः, इति, यत्, वा, एते, अमुहिं, अधियन्त, तत्, एव, अपि, अद्य, कुर्वन्ति, तस्मात्, एकम्, एव, व्रतम्, चरत्, प्राययात्, च, एव, ध्रापान्यात्, च, चेत्, मा, पाप्मा, मृत्युः, ध्राप्नुवत्, इति, यदि, उ, चरेत्, समापिपयि-चेत्, तेन, उ, एतस्यै, देवतायै, सायुज्यम्, सजोकताम्, गच्छति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

सूर्यः≔सूर्य उदेति=डदय होता है च=भौर यत्र=किसमें श्चस्तम्=ग्रस्त को गच्छति=प्राप्त होता है + इदम्=इसका + उत्तरम्=उत्तर यह है एषः=यह सूर्य प्राणात्=प्राण से वै=ही उदेति=उदय होता है ख≕शीर प्राग्रे=प्राग्य में ही ग्रस्तम्=श्रसको पति=पास होता है झथ≔इस धर्थ विषे ख्यः इक्षोकः=यही मन्त्र प्रमाण है तम् धर्मम्=उसी वाले प्राया के वत की देवाः=वागादि देवता + एव=भी चक्रिरे=प्रहण करते भये उ=मार यस्=जो वत श्रद्य=माज है

यतः=कहांसे

श्वः=कस भी इति=ऐसाही + भविता=बना रहेगा धा=भौर यत्=जिस वत को श्रम हिं=स्यतीत काल में पते=ये वागादि देवता अधियन्त=धारण करते भवे सः तत् एव=उसही निश्रय किये हये वस को श्रदा=घाजकल श्रपि=भी कुर्घन्ति=वेई देवता करते हैं तस्मात्=इस कारग एकम्=केवल एक पव=ही व्रतम्=वत को चरेत्=पुरुष करे च≕मौर + यथा=जैसे श्राग्यात्=प्राथ व्यापार करता च≕भीर + यथा=जैसे अपान्यात्=अपान व्यापार करता

सः एव≔वह ही

+ तथा=वैसे पच≕ही

चरेत=पुरुष करे समापिपयिषेत्=उस जत के समाक्षि

+ सः=बह पुरुष भी भएना

कीं इच्छाभी रक्खे

तेन=बसी बत करके

+ कुर्यात्=करता कि पाप्मा=पापरूप मृत्युः=मृत्यु

+ सः=वह दपासक

मा=मुमको यानी उसको

पतस्यै≔इस डेवताय=प्रायदेवता के

नेत् आप्नुवत=न प्राप्त होवे ज=ग्रीर यत्≕जिस व्रतको

सायुज्यम्=सायुज्यक्रोक को भौर सलोकताम्=सामीप्यक्रोक को गच्छति=पास होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! प्रश्न होता है कि कहां से सूर्य उदय होता है, और किस में जय होता है, इसका उत्तर यही मिलता है कि यह सर्य मारा से ही उदय होता है, अमेर प्रारा में ही स्वय होता है और जसे सूर्य देवता ने अहर्निश जगातार चलने का अत किया है. उसी प्रकार वागादि देवताओं ने भी ब्रत किया है, और जैसे सूर्य का जो व्रत आज है वहीं कल रहेगा, वैसेही व्रत इन देवताओं का भी है, श्रीर व्यतीतकाल में जिस बत की वागादि देवताओं ने धारणा किया था, उसी व्रत की आजकल भी वे धारणा किये हैं. इसी कारणा हे सौन्य ! पुरुष एकही ब्रत को धारण करे, खीर जैसे प्राणा अपान अपने ज्यापार को किया करते हैं. वैसेही वह पुरुष भी अपने जल को धारणा किया करे, ऐसा करने से पापरूप मृत्यु कभी उसके पास न आवेगा, हे सौम्य ! जिस बत को पुरुष एक बार करे उसी बत की पूर्णता का भी भ्यान रक्खे. ऐसे क्रव करने से उपासक प्राग्रादेवता के सायज्य कोक को भीर सालोक्यता को प्राप्त होता है ॥ २३ ॥

इति पञ्चमं बाह्यसाम् ॥ ४ ॥

श्रथ षष्ठं बाह्यसम्। ',

त्रयं वा इदं नाम रूपं कमे तेषां नाम्नां वागित्येतदेषामुक्यमयो हि सर्वाणि नामान्युत्तिष्ठन्ति । एतदेषा समितद्धि सर्वैर्नामभिः सममेतदेषां ब्रबीतद्धि सर्वाणि नामानि विभित्ते ॥

त्रथम्, वै, इदम्, नाम, रूपम्, कर्म, तेषाम्, नाम्नाम्, वाक्, इति, एतद्, एषाम्, उक्थम्, द्राथो, हि, सर्वािष्ण, नामानि, उत्, तिष्ठन्ति, एतद्, एषाम्, साम, एतद्, हि, सर्वेः, नामिः, समम्, एतद्, एषाम्, ब्रह्म, एतद्, हि, सर्वेष्ण, नामानि, विभित्ति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

बै=निश्चय कर इदम्=ये त्रयम्=तीन नाम=नाम रूपम्=रूप + च=श्रीर कर्म=कर्म + सन्ति=हैं तेषाम्≈उन + त्रयाणांमध्ये=तीनों में से एषाम्=इन नाम्नाम्=नामों का एतत्=यह वागिति=वायी ही उक्थम्=उपादान कारण है श्रथो=क्योंकि हि=जिससे

सर्वाणि=सब नामानि=नाम उत्तिष्टन्ति=उत्पन्न होते हैं पतत्=यही एष।म्=इन नामों की साम=समता है पतत्∙हि=यही सर्वें:=सब नामभिः=नामी की समम्=बराबरी है पतत्≔यह एषाम्≖इनका ब्रह्म=बद्य है एतद्-हि=यही सर्वाग्रि=सब नामानि=नामों को विमर्ति=धारक करता है

भावार्थ। ये तीन नाम, रूप, भौर कर्म है, इनमें से नामों का वाग्री ही उपादान कारण है. क्योंकि वाणी ही से सब नाम कहे जाते हैं. यह वाणी ही इन सब नामों की समतारूप है, यही सब नामों की समानता है, यही इनका ब्रह्म है, क्योंकि यह वाणीही सब नामों को धारण करती है विना वाणी के नामों का उच्चारण नहीं होसका है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

त्रथ रूपाणां चक्षुरित्येतदेषामुक्यमतो हि सर्वाणि रूपाण्यु-चिष्ठ-त्येतदेषा समेतिद्ध सर्वेरूपेः सममेतदेषां ब्रह्मेतद्धि सर्वाणि रूपाणि विभर्ति ॥

पदच्छेदः ।

श्चय, रूपाणाम्, चक्षुः, इति, एतद्, एषाम्, उन्थम्, श्चतः, हि, सर्वाणि, रूपाणि, उत्, तिष्ठन्ति, एतद्, एषाम्, साम, एतद्, हि, सर्वेः, रूपैः, समम्, एतद्, एषाम्, श्रद्धा, एतद्, हि, सर्वाणि, रूपाणि, विभर्ति ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्याम्=इन
सितासितः } = सक्रेद, काके बादि
प्रस्तीनाम् }
कपाणाम्=रूपां का
पतत्=यह
चक्षुः=नेन
इति=ही
उक्थम्-प्रस्त=डपादान कारय है
अतः-हि=हसे से
सर्वाण्=रूप
कपाण=रूप
उत्तिष्ठन्त=रह होते हैं
पतत्=यह
प्याम्=इनका

श्राधा=भव

साम=साम
+ ऋस्ति=है

पतद्-हि=यही

सर्वेः=सब

रूपैः=स्पाँ की

समम्=समता है

पतद्=यही

पपाम्=इन स्पाँ का

झ्झ=मझ
+ झस्ति=है

पतद्-हि=यही मझ

सर्वाण=स्पाँ को

विभति=धारण करता है

भावार्थ ।

और इन सफ़ेद काले ध्यदि रूपों का चक्कि विपादान कारचा है, इसी चक्किसे ही सब रूप देखे जाते हैं, यही इनका साम है, यही समस्तरूपों की समता है, यही इन रूपों का ब्रह्म है, यही ब्रह्म सब रूपों को धारता है।। २।।

मन्त्रः ३

श्रय कर्मणामात्मेत्येतदेषामुक्थमतो हि सर्वाणि कर्माण्युत्ति-श्रुन्त्येतदेषा सामैतद्धि सर्वैः कर्मभिः सममेतदेषां श्रश्चेतद्धि सर्वाणि कर्माणि विभित्ते तदेतत्त्रय सदेकमयमात्माऽऽत्मो एकः सञ्चेतत्त्रयं तदेतदमृत सत्येनच्छनं प्राणो वा श्रमृतं नामरूपे सत्यं ताभ्यामयं प्राणश्चनाः ॥

इति षष्ठं ब्राह्मग्रम् ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि मथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ पदच्छेरः।

अथ. कर्मणाम्, आत्मा, इति, एतर्, एवाम्, उक्थम्, अतः, हि, सर्वाित्या, कर्मािण, उत्, तिष्ठन्ति, एतर्, एवाम्, साम, एतत्, हि, सर्वेः, कर्माभः, समम्, एतत्, एवाम्, ब्रह्म, एतत्, हि, सर्वािण, कर्मािण, कर्मािण, विभित्तिं, तत्, एतत्, अयम्, सत्, एकम्, अयम्, आत्मा, अरकः, सन्, एतत्, अयम्, तत्, एतत्, अमृतम्, सत्येन, छत्रम्, प्राणः, वे, अमृतम्, नामरूपे, सत्यम्, ताभ्याम्, अयम्, प्राणः, छत्रः ॥ अम्वयः पदािथाः अन्वयः एदािथाः

श्रथ=धौर प्याम्=इन' कर्मणाम्=कमौ का प्रतत्=षद आत्मा इति=मात्मादी उक्थम्=उपादान कारब + स्रस्ति=दे + क्रशः-द्वि=दसी से दी सर्वाशि=सब कर्माशि=कर्म उत्तिष्ठन्ति=पैदा होते हैं पतत्=यह पषाम्=हन कर्मों का साम=साम है पतद्-हि=पही सर्वें:=सब

कर्मभिः=कर्मों के सन्=होता हुन्ना +ब्यवस्थितम्=स्थित है समम्=बराबर है पतत्=यही पतद् + पव=यही एषाम्=इनका त्रयम्=तीर्नो ब्रह्म=ब्रह्म है +नाम रूप कर्म=नाम-रूप-कर्म हैं एतव्-हि=यही तत्=सः सर्वाणि=सब कमां शि=कर्मों को विभर्ति=धारण करता है तत्-एतत्=सो यह पूर्व कथना-नुसार त्रयम्=तीनी वै=ही सदेकम्=सत्यरूप होकर एक हैं श्रयम्≕यही श्रात्मा=भात्मा है

ख=श्रीर +एतावत्-हि=श्तनाही + इदम्-सर्वम्=यह सब नाम-रूप-कर्म

> एकः=एक आत्मा=भारमा

भावार्थ

पतत्=यह असृतभ्≕श्रमृतरूप सत्येन=पञ्चभृतात्मक से प्राणः=प्राण श्रमृतम्=श्रमृत है + च=श्रीर नामरूपे≕नाम रूप

सत्यम्=कार्यात्मक हैं ताभ्याम्=उन दोनों से श्रयम्=यह प्राणः=प्राण

छुन्नः=अप्रकाशित है

भीर कर्मी का आत्मा ही उपादान कारण है, क्योंकि आत्मा से ही सब कर्म किये जाते हैं, यही इन कर्मी का साम है. यही सब कमें। के समान है और यही इनका ब्रह्म है. यही सब कमों को धारता है, येही तीनों सत्यरूप होकर एक हैं. यही नाम-रूप-कर्मात्मक आत्मा है, यही तीनों नाम-रूप-कर्म वाला है, वही यह अविनाशीरूप होकर पश्चमहाभूतों से घिरा है. और प्राग्यही अमृतरूप है और नाम-रूप कर्मात्मक है जन दोनों से ही यह प्राया अप्रकाशित रहंता है ॥ ३ ॥

इति पष्ठं त्राह्मराम् ॥ ६ ॥

इति श्रीवृहदारएयकोपनिषदि भाषानुवादे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

श्रथ द्वितीयोऽध्यायः **।**

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

द्यालाकिहीनुचानो गार्ग्य श्रास स होवाचाजातश्र्वुं काश्यं ब्रह्म ते ब्रवाणीति स होवाचाजातशतुः सहस्रमेतस्यां वाचि दद्यो जनको जनक इति वै जना धावन्तीति ॥

पदच्छेदः ।

द्याबालाकिः, ह, अनूचानः, गार्ग्यः, श्रास, सः, ह, उवाच, अजात-शत्रुम्, काश्यम्, ब्रह्म, ते, ब्रवाणि, इति, सः, ह, उवाच, श्रजातशत्रुः, सहस्रम्, एतस्याम्, वाचि, दद्यः, जनकः, जनकः, इति, वै, जनाः, धावन्ति, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः ह=िकसी समय किसी

देश में

गार्ग्यः≔गर्गगोत्र में उत्पन्नहुमा हप्तबालाकिः=दप्तबालाकी नामक अनुचानः=वेद का पढ़ने वासां श्रास=रहता था

सः≔वह

काश्यम्=काशी देश के राजा अजातशत्रुम्=अजातशत्रु से उवाच=कहता भया कि

ते≕ग्रापके विये ब्रह्म=ब्रह्म का उपदेश

ह=भक्षी प्रकार ब्रवाशि=करंगा में

श्रन्वयः

पदार्थाः इति=ऐसा सुन कर

सः≃वह ह=प्रसिद्ध

यज्ञातश्रञ्जः=यजातशत्रु राजा उवाच=योला कि

पतस्याम्=इस

वाचि=वचन के बदले में + ते=तेरे जिये

सहस्रम्=एक इज्ञार गौवें वै=ग्रभी

द्याः≔देता हूं

+ किम्=क्यों

=जनक जनक ऐसा

ने बदन्तः=पुकारते हुये + तस्य≃डसके

+ निकटम=पास जनाः=सब मनुष्य धावन्ति इति=वौडे जाते हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! किसी समय गर्गगोत्र में उत्पन्न हुआ एक आहंकारी वेद का पढनेवाला बालाकीनामक ब्राह्मगा था. वह एक दिन काशी के राजा श्रजातशत्रु के पास पहुँचा, श्रीर उससे कहा कि मैं श्रापके किये ब्रह्मविद्या का उपदेश करूंगा. यह सुन कर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ झ्रीर कहा हे ब्राह्मशा ! त धन्य है. ऐसा तेरे कहने पर मैं एक सहस्र गी देता हूं, जनक जनक ऐसा पुकारते हुये जोग क्यों उनके पास (जनक के पास) जाते हैं, अर्रीर मेरे निकट क्यों नहीं आते हैं, मैं सहस्रों गी देने को तैयार हूं, यदि ब्रह्मवादी मेरे पास आवें, आर मुम्मको ब्रह्मोपदेश का अधिकारी समर्भे ॥ १ ॥

मन्त्रः २

स होवाच गार्ग्यो य एवासावादित्ये पुरुष एतमेवाई ब्रह्मी-पास इति स होव।चाजातश्तुमी मैतस्मिन्संविद्धा अतिष्ठाः सर्वेषां भूतानां पूर्धा राजेति वा अहमेतसुपास इति स य एतमेवसुपास्ते-ऽतिष्ठाः सर्वेषां भूतानां मुर्धा राजा भवति ॥

पदच्छेदः।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रसी, श्रादित्ये, पुरुषः, एतम्, एव. घ्रहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, घ्रजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, अतिष्ठाः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मूर्घा, राजा, इति, वै, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, अतिष्ठाः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मूर्धा, राजा, भवति ॥

श्चान्धयः

पढार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः-ह=वह प्रसिद्ध बालाकी गार्ग्यः=गर्गगोत्रवासा

उवाच=बोसता भया कि धव=निरचय करके

यः≔जो ∖ ग्रसी≔वह पुरुषः=पुरुष श्चादित्ये=सूर्यं विषे + अस्ति=है एतम् एव=उसही को ब्रह्म=बद्य इति=करके श्रहम्=में उपासे=उपासना करता हूं + तदा=तब सः≔बह ह=प्रसिद्ध अजातशञ्चः=भजातशतु राजा उवाच=बोसा कि एतस्मिन्=इस ब्रह्म विषे मा मा संवदिष्ठाः=ऐसा मत कही ऐसा सत कही + सः≔बह सूर्यस्थ पुरुष आतिष्ठाः=सवजीवां को श्रतिकः मण्करकेरहनेवालाई सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्रावियों का मुर्धा=शिर है + च=घौर

राजा=प्रकाशवाका है इति=ऐसा + मत्वा=मान कर श्रहम्=में वै=प्रवरय ए नम्=इसकी उपास=डपासना करता हूं + च=ग्रीर इति=ऐसा + मस्वा=मानकर यः=जो प्तम्≔इसकी प्तम्=इस प्रकार उपास्ते=उपासना करता है सः=वह उपासक अतिष्ठाः=सबको अतिकमख करके रहने वासा + भवति=होता है + च=भौर सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=पाविवां के मध्य मुर्धा=प्रतिष्ठाबाबा + च=घौर राजा=राजा भवति=होता है

भावार्थ।

तव वह असिद्ध बालाकी गर्गगोत्रवाला बोलता भया कि है राजन्! सूर्यविषे जो पुरुष दिखाई देता है वही ब्रह्म है, झ्मोर उसी को में ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करता हूं, तब वह झजातरात्रु राजा ऐसा सुनकर बोला कि ब्रह्मसंबाद विषे ऐसा मत कहो, यह झादित्य जो दिखाई देता है वह बड़ा नहीं है, यह सुर्यस्थ पुरुष निस्संदेह सब जीवों को अतिक्रमण करके रहता है, यानी जब सब जीव नष्ट होजाते हैं तब भी यह बना रहता है, यह सब प्राणियों का शिर है, यानी सबों करके पूजने योग्य है, अगेर यही प्रकाशवाला भी है, ऐसा मानकर में इस सूर्य की बपासना करता हूं, और ऐसा समम्म कर जो कोई इसकी बपासना करता है, वह बपासक सबको अतिक्रमण करके रहता है, और सब प्राणियों के मध्य में प्रतिष्ठा पानेवाला और राजा होता है। २॥

मन्त्रः ३

स होताच गार्ग्यो व एवासी चन्द्रे पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होताचाजातशत्रुर्मा मैतिस्मिन्संविद्धा बृहन्पाएडरवासाः सोमो राजेति वा अहमेतमुपास इति स य एतमेवगुपास्तेऽहरहई सुतः प्रसुतो भवति नास्याञ्चं क्षीयते ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, डवाच, गार्ग्यः, यः, एव, असी, चन्द्रे, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, अहा, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, आजातशतुः, मा, मा, एतस्मिन, संवदिष्ठाः, बृहन्पायङ्ग्वासाः, सोमः, राजा, इति, वै, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, आह-गहः, ह, सुतः, प्रसुतः, भवति, न, अस्य, अञ्चम्, श्रीयते ॥

भ्रान्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

सः≖वह ह=प्रसिद्ध गाग्येः=गर्मगोत्रवाका + बालाकिः=बाकाकी उवाच=बोकता भया कि यः=जो

श्रसी=वह पुरुष:=पुरुष है यतम्=इसीको यस:ही श्रहम्=म श्रह्म=व्रह इति=करके य्य=निस्तन्देहें
हपासे=उपासना करता हूं
हति=ऐसा
+ शुरवा=धुनकर
सः=वह
अज्ञातशत्रुः=अज्ञातशत्रु राजा
उवाच=कहता सया कि
एतस्मिन्=इस नच विषे
मा मा } = ऐसा मत कहो
संविविष्ठाः } = ऐसा मत कहो
+ अयम्=यह
राजा=मकाशवाका
सोमः=चन्द्रमा
वै=निश्चय करके
हिन्पाएडर- }
वामाः
हि ऐसी

श्रहम्≃में

एतम्=इसकी उपासे=डपासना करता द्रं + च=मौर इति=इस प्रकार यः=जो कोई एतम्=इसकी अहरहः=प्रतिदिन उपास्ते=उपासना करता है सः=वह सुतःप्रसुतः=सोम यज्ञ का करने भवति=होता है + च=श्रीर **श्च**स्य≃उसका अन्नम्≕षत न=कभी नहीं श्रीयते=श्रीय होता है

मावार्थ ।

फिर वह प्रसिद्ध गर्गगोत्री बाजाकी बोजा कि जो चन्द्रमा बिषे पुरुष है, उसीको में ब्रह्म समस्तकर उपासना करता हूं. ऐसा सुन-कर वह अजातरान्नु राजा कहता भया कि इस ब्रह्मसंवाद बिषे ऐसा कहना ठीक नहीं है, यानी यह ब्रह्म नहीं है, निस्संदेह यह रवेत बस्च-धारी चन्द्रमा प्रकाशमान है, में इसकी उपासना ऐसा समस्तकर करता हूं, और जो इसकी उपासना इसीप्रकार प्रतिदिन करता है, वह अपने घर में सोमयज्ञ का करनेवाला होता है, और उसके घर में कभी अब्र क्षीया नहीं होता है। ३॥

मन्त्रः ४ स होवाच गाग्यों य एवासी विद्युति दुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपहस

इति स होबाबाजातरात्रमी मैतस्मिन्संवदिष्ठास्तेत्रस्वीति वा अहसे-तमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते तेजस्वी इ भवति तेजस्विनी हास्य प्रजा भवति ॥

1 1

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, असौ, विद्युति, पुरुषः, एतम्, एव, श्रहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्रजातशत्रः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, तेजस्वी, इति, वै, श्रहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, तेजस्वी, ह, भवति, तेजस्विनी, ह. श्चास्य, प्रजा, भवति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः ग्रम्बयः पदार्थाः

+ पुनः=फिर सः=वड ह=प्रसिद्ध गार्थः=गर्गगोत्री बालाकी उवाच=बोबता भया कि यः=नो

द्यसी=वड वियुति=विजनी विषे

पुरुषः=पुरुष है एतम्-एच=उसही को

> श्रहम्=में महा=मध इति=करके

ह=ही

गसे=उपासना करता ह

+ शत=ऐसा

+ शुत्वा=सुन कर सः≔बह

अजातशञ्चः=चन्नतरात्रु राजा स्त्राच-ह=साफ बोबा कि

पतस्मिन्=इस बद्धा विषे मा मा } _ऐसा मत कही ऐसा संविद्याः } मत कही

यः≕जो

+ इदये=हदय में इति=ऐसा

तेजस्वी=तेजस्वी देवता है पतम् पव=उसही की

बह्म्≔में

प्वम्=इस प्रकार वै=निरचय करके

डपासे=डपासना करता हं इति=इसी प्रकार

यः≕जो

+ ग्रन्थः≔धीर कोई प्तम्=इसकी उपास्ते=डपासना करता है

सः=वह

+ प्रच=भी

तेजस्वी=तेजस्वी भवाति=होता है + च=ग्रीर

प्रजा≔संतान ह=भी तेजस्थिनी=तेजवःसी अवति=होती है

भाषार्थ ।

फिर वह प्रसिद्ध गर्गगीत्र में उत्पन्न हुआ बालाकी बोला कि है राजन ! जो बिजली बिषे पुरुष है उसीको मैं ब्रह्म करके उपासना करता हूं, ऐसा सुनकर अजातशत्रु राजा बोलता भया कि है बालाकी ब्राह्मगा ! इस ब्रह्म बिषे ऐसा मत कही जिसको तुम बिजली बिथे पुरुष-रूप ब्रह्म समम्मते हो वह वास्तव में हृदय में तेजस्वी देवता है, मैं उसकी उपासना ऐसा समम्म कर करता हूं, और जो कोई इसकी उपासना ऐसा समम्मकर करता है वह भी तेजस्वी होता है, और उसकी संतान भी तेजस्विनी होती है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ४

स होवाच गार्ग्यो य एवायमाकाशे पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातराजुर्मा मैतस्मिन्संवदिष्टाः पूर्णममवर्चीति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते पूर्यते प्रजया पशुभिनीस्या-स्माल्लोकात्प्रजोद्वर्त्तते ॥

पदच्छेदः।

सः, इ, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, आकाशे, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, अझ, उपासे, इति, सः, इ, उवाच, अजातशत्रुः, मा, मा, एतिस्तन्, संविद्धाः, पूर्णम्, अप्रवर्त्ति, इति, वे, अहम्, एतम्, उपासे, इति. सः, यः, एतम्, एवम्, उपासे, पूर्यते, प्रजया, पश्चिमः, न, अस्य, अस्मात्, जोकात्, प्रजा, उद्वत्ते ॥

श्चन्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ पुनः≕फिर सः≔षड ह=प्रसिद्ध गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न बासाकी

खवाच=बोबा कि पूर्णम्=पूरा अप्रवर्त्ति=कियारहित पुरुष है यः=जो ग्रहम्≕में श्रयम्≔यह पतम्≕उसकी आकाशे=आकाश विषे वै=ही पुरुषः=पुरुष इ इति=ऐसा समम कर एतम् एव=उसही को उपासे=उपासना करता हं श्रहम्≃में प्वम्=इसी प्रकार ब्रह्म=ब्रह्म + यः≕जो इति=करके + अन्यः≔और कोई उपासे=उपासना करता हूं उपास्ते=उपासना करता है + इति=ऐसा सः≔वह + श्रुत्वा=सुन कर प्रजया=संतान करके सः=वह पशुभिः=पशुश्रों करके ह=प्रसिद्ध पूर्यते=पूर्ण होता है

स्रजातरात्रुः≔प्रजातरात्रु राजा उवाच=बोजा कि एतस्मिन्=इस बद्य बिषे

मा मा } ूपेसा मत कहो ऐसा संवदिष्ठाः ऽ मत कहो

यः=जो + आकाशे=माकाश विषे

+ च=ग्रीर

लोकात्=बोक से

ग्रस्य=इसकी

प्रजा≕संतान

न=नहीं

उद्धर्तते=बूर की जाती है

श्रस्मात्=इस

भावार्थ।
हे सौम्य! फिर भी वह प्रसिद्ध गर्गागोत्र में उत्पन्न हुझा वालाकी कहता भया कि हे राजन्! आकाश विषे जो पुरुष है उसी की में न्नहा करके उपासना करता हूं, ऐसा सुनकर वह राजा अजातशत्रु ऐसा कहने लंगा कि हे नाह्यण्! इस न्नहा विषे ऐसा मत कहो, यह न्नहा नहीं है, जिसको तुम न्नहा सममते हो, जो आकाश विषे पूरा और क्रियारहित पुरुष है, उसकी उपासना ऐसा समम्म कर में करता हूं, और जो कोई उसकी उपासना ऐसा ही समम्म कर करता है वह संतान

884

करके और पशुक्रों करके पूर्या होता है, और उसकी संतान नष्ट नहीं होती है।। १ ॥

मन्त्रः ६

स होवाच गार्ग्यो य एवायं वायौ पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातश्तुमी मैतस्मिन्सवदिष्ठा इन्द्रो वैकुएठोऽपराजिता सेनेति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते जिष्लाहीपराजि-ष्णुर्भवत्यन्यतस्त्यजायी ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम्, वायौ, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एत-स्मिन्, संवदिष्ठाः, इन्द्रः, वेकुग्ठः, अपराजिता, सेना, इति, वे, श्रहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, जिल्लाः, ह, श्रप-राजिष्णुः, भवति, श्चन्यतस्त्यजायी ॥

श्चन्यः

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

+ पुनः≕फिर सः≔वह ह=प्रसिद्ध गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न बाखाकी उचाच=बोला कि य:⇒जो पश्च=निश्चय करके श्रयम्=पह वायौ⇒वायु में पुरुषः=पुरुष है ग्रहम्=में ₋ पतम्-एव=इसही पुरुष को

इति=करके

उपासे=डपासना करता हं + इति=ऐसा + शुत्वा=सुन कर सः≔वह अजातशतुः=मजातशतु राजा उवाच=बोला कि प्तस्मिन्=इस बद्ध विवे मामा रे_ऐसा मत कही संविद्षष्टाः रेसा मत कही + श्रयम्=पह इन्द्र:=पुेश्वर्यवासा वैकुएठः≔म्रजय वायु मधि-ष्टान पुरुष है

± मदताम्=पवनों के मध्य में

अपराजिता है अपराजिता यानी सेनाइति डिजाबित सेना है चै=निरचय करके अहम्=में पतम्=इसकी उपासे=उपासना करता हूं इति=इस प्रकार य:=जो + अन्य:=और कोई प्रस्=इस प्रकार पतम्=इसकी

जपास्ते=उपासना करता है

सः=बह
+ पत्व=भी
जिप्णुः=जीतनेवाका
ह=धवरव
भवित=होता है
अपराजिप्णुः=हारनेवाका नहीं
भवात=होता है
+ किंच=भीर
अन्यतस्त्य- } _ दूसरों से हारनेवाका
जायी } नहीं
+ भवत=होता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! फिर वह गर्गगोत्र में उत्पन्न हुआ बाजाकी बोला कि हे राजन ! जो बायु विषे पुरुष है मैं उसकी उपासना ब्रह्म समक्त कर करता हूं, ऐसा सुन कर वह राजा बोजा कि हे बाजाकी ! तुम इस ब्रह्म बिषे ऐसा मत कहो, वह ब्रह्म नहीं है जिसको तुम ब्रह्म समक्रते हो, वायु विषे जो पुरुष है वह इन्द्र है, वह अजय है, वह ऐरवर्य वाला है, वही पवनों की अजीत सेना का सेनापित है, मैं इसकी बपासना इस प्रकार निरचय करके करता हूं, और जो कोई दूसरा पुरुष उसकी उपासना इस प्रकार करता है, वह भी जीतनेवाला अवस्य होजाता है, वह किसी करके जीता नहीं जाता है ॥ ह ॥

मन्त्रः ७

स होवाच गार्ग्यो य एवायमग्नौ पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन्संविद्या विषासहिरिति वा ब्रह्मेत-मुपास इति स य एतमेवमुपास्ते विषासहिर्ह भवति विषासहिर्हास्य मजा भवति ॥

पद्ब्छेदः। सः, इ, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अग्रम्, अग्नौ, पुरुपः, एतम्, एव, आहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन, संविद्धाः, विषासिहः, इति, वे, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, विषासिहः, ह, भवति, विषासिहः, ह, अस्य, प्रजा, भवति ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः | अन्त्रयः

पदार्थाः

सः=वह ह≖प्रसिद्ध गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्वन + बालाकि:=बाक्षाकी उवाच=बोसा कि यः=जो श्चयम्=यह प्य=निश्चय करके श्चानी=श्चीन विषे पुरुषः=पुरुष है श्रहम्=मैं प्तम्=उसको पव≕ही यसा=वस इति=करके उपासे=उपासना करता हूं + इति=प्रेमा श्रुत्वा=सुन कर . सः=वह ह=प्रसिद्ध स्रजातशत्रुः=ग्रजातशत्रु राजा

उवाच=बोबा कि

पतस्मिन्=इस वज विवे

मा मा । ऐसा मत कही संविदिष्ठाः । ऐसा मत कही

ः + एतत्≔यह

+ ब्रह्म≐ब्रह्म + न=नहीं है + श्रयम्=यह भ्रग्नि विषासहिः=सब कुछ सहनेवासा है इति=ऐसा वै=निश्चय कर ग्रहम्≕भें एतम्=इसकी उपासे=उपासना करता इं + च=श्रौर यः=जो कोई + ग्रान्यः=ग्रन्य एतम्=इसकी एव=ही उपास्ते=उपासना करता है सः=वह ह≕भी विषासिहः=सहनशीकवाका

भवति=होता है

+ च=श्रोर

श्चस्य≃डसकी

प्रजा=संतान

भवति=होती है

विषासहिः=सहनशीववाबी

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रोत्पन्न वालाकी बोला कि हे राजन् ! जी यह अग्निविषे पुरुष है, यानी उसका जो अधिष्ठात्री देवता है, उसको मैं ब्रह्म समम्प्रकर उपासना करता हूं, तुम भी ऐसाह्मी करो ऐसा सुनकर राजा ने कहा कि हे अगूचान, ब्राह्मणा ! ऐसी बात इस ब्रह्म विषे मत कहो, जिसको तुम ब्रह्म करके समम्प्रते हो, वह ब्रह्म नहीं है, वह अग्नि देवता है, जो सब कुछ सहनेवाला है, यह सब से बड़ा जबरदस्त है, मैं इसको ऐसा समम्प्र कर इसकी उपासना करता हूं, परंतु ब्रह्म समम्प्र कर नहीं करता हूं, और जो अग्न्य पुरुष इसकी उपासना ऐसाह्मी समम्प्र कर करता है, वह भी सहन-शीलवाला होता है, और उसकी संतान सहनशीलवाली अवस्थ होती है। । ७।।

मन्त्रः द

स होवाच गार्गो य एवायमप्यु पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन्संवदिष्टाः मतिरूप इति वा ऋहमेत-मुपास इति स य एतमेवमुपास्ते मतिरूप ६ हैवैनसुपगच्छाति नाम-तिरूपमथी प्रतिरूपोऽस्माज्जायते ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम्, श्रम्यु, पुरुषः, एतम्, एव, श्रह्म्, श्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्राजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, प्रतिरूपः, इति, वै, श्रह्म्, एतम्, उपास, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, प्रतिरूपम्, ह, एव, एनम्, उपाच्छ्वित, न, श्रप्रतिरूपम्, श्रथो, प्रतिरूपः, श्रम्मात्, जायते ॥ श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

सः=वह ह=प्रसिद्ध शार्थः=गर्धगोत्रोत्पन्न + वालाकिः≔बालाकी उवास्य≔बोला कि यः≠जो

ग्रयम्=पह प्रच≕निरचव करके श्रप्स≃जब में ग्रहम्≕में पतम्=इसको एव=डी अहा=नदा इति=करके उपासे=उपासना करता हूं + इति=ऐसा + शत्वा=सन कर सः≔वह ह=प्रसिद भजातश्रञ्जः=चजातरात्रु राजा उवाच=बोता कि प्तस्मिन्=स्स तक विवे मा मा } _ ऐसा नत कहो संवदिष्ठाः } देसा मत कहो +ग्रयम्=यह प्रतिक्रपः=प्रतिविस्बद्दै यानी प्रनु-क्वत्व गुग्रवाका है इति≕ऐसा + हात्वा=जानकर

वै=निस्संदेड श्रहम्=में एतम्=इसकी उपासे=उपासना करतां इं +च=मौर यः=जो कोई + अन्यः=मन्य पतम्=इसका पव=ही इति=ऐसा + ज्ञात्वा=जानकर उपास्ते=डवासना करता है सः≔वह भी पनम्=इस प्रतिरूपम्=भनुक्तता बानी अनुकृत पदार्थी को ड एव=भवश्य उपगच्छति=शास होता है द्यप्रतिरूपम्=विपरीत वस्तु को न=नहीं अथो=भौर ग्रस्मात्=इस पुरुष से प्रतिक्पः=इसके समान पुत्र जायते=उत्पश्च होते हैं

मावार्थ।

से कहता भया कि जो निश्चय करके जल विषे पुरुष है यानी पुरुष का प्रतिविम्ब है, मैं उसको ब्रह्म समम्ब कर उपासना करता हूं, आप भी ऐसा ही करें. यह सुनकर वह राजा बोला कि हे अनुचान, ब्राह्मणा !

इस ब्रह्म विषे ऐसा मत कहो यह ब्रह्म नहीं है. जिसकी तुम उपासना करते हो यह केवल पुरुष का प्रतिविन्त है यानी इसमें अनुकृत्रत्व अुगा है ऐसा जानकर में इसकी छप।सना करता हुं और जो कोई अन्य इसको ऐसा ही जानकर उपासना करता है वह भी अनुकृत्रता यानी अनुकूल पदार्थों को प्राप्त होता है, विपरीत वस्तुको नहीं, और इस पुरुष के समान इसके पुत्र पौत्र उत्पन्न होते हैं ॥ = ॥

मन्त्रः ह

स होवाच गार्ग्यो य एवायमादशे पुरुष एतमेबाई ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन संवदिष्ठा रोचिष्णुरिति वा अहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते रोचिष्णुई भवति रोचिष्णु-र्हास्य प्रजा भवत्यथो यैः संनिगच्छति सर्वा स्तानतिरोचते ॥

पढच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, आदर्शे, पुरुषः, एतम्, एव, आहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, ध्वाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, रोचिष्णुः, इति, वै, ब्रह्म्, एतम्, ज्यासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, रोचिष्णुः, इ, भवति, रोचिष्णुः, ह, अस्य, प्रजा, भवति, अथो, यैः, संनिगच्छति, सर्शव्, तान्, क्रातिरोचते ॥

चान्वयः

पदार्थाः द्यस्वयः पदार्थाः

सः≔वड ह=प्रसिद्ध गार्थः=गर्गवंशी + बालाकिः=बासाकी उवाच=बोबा कि यः≕जो

श्चयम्=वह यय=निस्तंदेड द्यावर्शे=वर्षय में पुरुषः=पुरुष है बानी प्रति-विम्ब प्रवता है ग्रहम्≕में प्तम्=रसको

े शास्त्रा≃नानकर

प्य≔डी

उपासे=उपासना करता हं + इति=ऐसा + श्रत्वा=सुन कर सः=वह ह=प्रसिद्ध अजातश्रञ्जः=अजातशत्रु राजा उवाच=बोला कि पतस्मिन्=इस ब्रह्म बिवे ्मामा }ुऐसा संवदिष्ठाः }ुऐसा +न एतत् } =यह ब्रह्म नहीं है + ब्रह्म + श्रयम्=यह रोचिष्णु:=प्रकाशमान द्वायाप्राही वस्तु हं इति≕ऐसा · + बुद्ध्वा=जान कर ग्रहम=मैं वै≕श्रवश्य उपासे=उपासना करता हं + च=भौर

+ ग्रन्यः=ग्रीर प्तम्= ध्सको एवम्=ऐसाही इति एव=समक्रकर उपास्ते=उपासना करता है सः=वह एव≃भी रोचिष्णुः=प्रकाशवाता भवति=होता है + च=श्रीर ग्रस्य=इसकी प्रजा=संतान ह=निस्संदेह रोचिप्णुः=प्रकाशवाली भवति=होती है अथो=श्रीर यै:=जिनके साथ संनिगच्छति=सम्बन्ध करता है तान्≕उन सर्वान=सबको

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध गर्गवंशी वालाकी राजा से कहता भया कि हे राजन् ! दर्पण में जो पुरुष है उस विषे जो प्रतिविम्ब है, में उसको ब्रह्म समम्म कर उसकी उपासना करता हूं, आपभी ऐसाही करें. यह सुन कर राजा कहता है कि हे अनुचान, ब्राह्मण ! ऐसी बात ब्रह्म बिने मत कहो, यह ब्रह्म नहीं है, जिसको तुम ब्रह्म समम्म कर उपासना करते हो यह प्रकाशमान द्यायप्राही वस्तु है, ऐसा जानकर में इसकी उपासना करता हूं, जो कोई अन्य पुरुष ऐसाही जान कर

इसकी उपासना करता है, वह भी प्रकाशवाला होता है, झौर इसकी संतान भी प्रकाशवाली होती है, स्पीर जिनके साथ वह सम्बन्ध करता है उन सबको प्रकाशमान करता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

स होवाच गार्थों य एवायं यन्तं पश्चाच्छब्दोऽनुदेत्येतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन्संवदिष्टा श्रमुरिति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते सर्वे ईवास्मिल्लोक त्रायुरेति नैनं पुरा कालात्पाणो जहाति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम्, यन्तम्, पश्चात्, शब्दः, अनुदेति, एतम्, एव, अहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, अजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, असुः, इति, वै, अहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एतम्, उपास्ते, सर्वम्, ह, एव, श्चस्मिन्, लोके, आ्रायुः एति, न, एनम्, पुरा, कालात्, प्रागाः, जहाति ॥

श्चन्वयः

ग्रन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

स्यः=बह

गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न बालाकी उवाच=बोला कि

यः≕जो

श्रयम्=यह एच=निश्चय करके

यन्तम्=गमन करनेवाले पुरुष के

पश्चात्=पीछे

अनु=मतिसमीप

शुब्दः=शब्द उदेति=उठता है

त्रहम्≕में एतम् एव=उसही को

> ब्रह्म=ब्रह्म इति=करके

उपासे=उपासना करता हू

+ इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर

सः≔वह

ह=श्रसिद्ध

अजातश्रञ्जः=अजातशत्रु राजा

उवाच=बोबा कि ्यतम्≔इसको उपास्ते=उपासना करता है एतस्मिन्=इस ब्रह्म विषे मा मा } _ऐसा संवदिष्ठाः } ऐसा सः=वह एव=भी श्चास्मिन्=इस + एतत्-ब्रह्म=यह ब्रह्म + न=नहीं है ह=ही लोके=लोक में + श्रयम्=यह सर्वम्=पूर्ण श्रसुः=प्राय है द्यायुः=प्रायुको इति + मत्वा=ऐसा समक कर पति=प्राप्त होता है बै=ानस्पंदेह + च=भोर कालात्=नियत समय से एतम्=इसकी पुरा=पहिले उपासे=उपासना करता हूं + च=ग्रौर प्रागः=प्राग यः=जो कोई · एनम्=इसको न≕नहीं + श्रान्यः=धन्य पुरुष एवम्=इसी प्रकार जहाति≕त्यागता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! जब वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रवाला बालाकी राजा से कहता भया कि गमन करनेवाले पुरुष के पीछे पीछे आतिसमीप जो शब्द उठता है में उसीको ब्रह्म समम्म कर उसकी उपासना करता हूं. ऐसा सुन कर आजातरात्रु राजा कहता भया कि हे अनुचान, ब्राह्मणा ! तुम क्या कहते हो, यह ब्रह्म नहीं है, तुमको ऐसा कहना नहीं चाहिये, यह प्राण् है, ऐसाही इस हो समम्म कर इसकी उपासना में करता हूं. जो कोई इसको ऐसा समम्म कर इसकी उपासना में करता हूं. जो कोई इसको ऐसा समम्म कर इसकी उपासना करता है वह आवश्य इसलोक में पूर्ण आयुको प्राप्त होता है, और वह नियमित काल से पहिले अपने शरीर को नहीं त्यागता है, यानी वड़ी आयुवाला होता है।।१०॥

मन्त्रः ११

स होवाच गार्ग्यो य द्वायं दिशु पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास

इति स होवाचाजातशतुर्भा मैतस्मिन्संविद्षष्टा द्वितीयोऽनपग इति वा अहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते द्वितीयवान्ह भवति नास्मा-द्वरारिक्षयते ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रायम्, दिश्च, पुरुषः, एतम्, एव, श्राहम्, श्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्राजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, द्वितीयः, श्रानपगः, इति, वे, श्राहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, द्वितीयवान्, ह, भवित, न, श्रास्मान्, गर्गः, छिद्यते ॥

सः=वह ह=प्रसिद्ध गार्थः=गर्गगोत्रोत्पन्न बालाकी उवाच=बोबा कि यः=जो श्चयम्=यह दिश्र=चारों दिशाओं में पुरुषः=पुरुष है श्चहम्≔में प्तम्=इसको एव=ही ब्रह्म=ब्रह्म इति=मान करके उपासे=उपासना करता हूं इति≂ऐसा + भुत्वा=सुन कर सः=वह ह=प्रसिद्ध

बजातश्रद्धः=बजातशत्रु राजा

ग्रन्वयः पदार्थाः उवाच=बोला कि एतस्मिन्=इस बद्या विषे मा मा रे पुरसा मत कही संवदिष्ठाः } देशा मत कहा + एतत्=यह + ब्रह्म≃ब्रह्म + न=नहीं है + अयम्≔यह अनपगः=नहीं त्याग करनेवाला द्वितीयः=दूसरा दिशागत पुरुष वै=निश्चय करके स्रहम्=में इति≕ऐसा + मत्वा>मान कर एतम्=इसकी डपासे=डपासना करता हूं + च=भीर यः=जो कोई + झन्यः=चन्य पुरुष

+ एष=भी एतम्=इसकी एवम्=इस प्रकारं उपास्ते=उपासना करता है सः=वह

एव=भी द्वितीयचान्=द्वितीयवान् भवित-होता है

ग्रस्मात्=इससे

गणः=पुत्र पशु भादि समुदाय

न=नहीं

जिद्यते=नष्ट होते हैं बानी वे

सदा बने रहते हैं

भावार्थ ।

वह प्रसिद्ध गर्गगोत्री बालाकी बोला कि हे राजन ! जो चारों दिशाओं में पुरुष है, वही ब्रह्म है, उसी को में ब्रह्म मान कर उसकी उपासना करता हूं. ऐसा सुन कर अजातशत्रु राजा बोला हे अनूचान, ब्राह्मण ! यह तुम क्या कहते हो, यह ब्रह्म नहीं है, यह निश्चय करके नित्यसम्बन्धी दिशागत दूसरा वायुरूप पुरुष है, मैं उसको ऐसा समझ कर उसकी उपासना करता हूं. हे ब्राह्मण ! जो कोई इसको इस प्रकार जान कर इसकी उपासना करता है, वह भी द्वितीयहीन नहीं होता है, आँग इसके पुत्र पशु आदि इससे पृथक नहीं होते हैं, यानी सदा इसके साथ बने रहते हैं।। ११॥

मन्त्रः १२

स होवाच गार्ग्यो य एवायं छायामयः पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मो-पास इति संहोवाचाजातशत्रुर्मा मैतस्मिन्संविद्षष्ठा मृत्युरिति वा ऋहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते सर्वश्हैवास्मिल्लोक आयु-रेति नैनं पुरा कालान्मृत्युरागच्छति ॥

पद्च्छेदः ।

सः, इ, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, छायामयः, पुरुषः, एतम्, एव, आइम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उशच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संविद्याः, मृत्युः, इति, वे, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, सर्वम्, ह, एव, आस्मिन्, लोके, आयुः, एति, न, एनम्, पुरा, काजात्, मृत्युः, आगण्डति ॥

द्यन्वयः

पदार्थाः

ब्रस्वयः

पदार्थाः

सः=वह ह=असिद्ध गार्ग्यः=गर्मगोत्रोत्पन बासाकी डवाच=बोबा कि यः=जो श्चयम्=यह एव=निश्चय करके छ।यामयः=हायारूपी पुरुषः=पुरुष है श्रहम्≕में एतम्≔इसको एव=ही ब्रह्म=ब्रह्म इति=मान करके उपासे=उपासना करता हं इति=ऐसा + शुरुवा=सुन कर

डवाच=बोबा कि पतस्मिन्=इस बद्य विषे मा मा र्े पुता मत कही संविवद्याः } देसा मत कहो

सः=वह

ह=प्रसिद्ध

बाजातशत्रुः=बजातशत्रु राजा

+ पतत्=पर

+ ब्रह्म=बद्ध

+ न=नहीं है

+ अयम्=यह द्वायापुरुष मृत्युः=स्त्यु हे

इति + मस्वा=ऐसा मान कर

वै=निस्संदेह श्रहम्≔में

प्तम्≔इसकी

उपासे⇒उपासना करता हूं

+ च=मौर

यः≕जो कोई

+ श्रम्यः एव=श्रम्य भी एतम्=इसकी

प्यम् उपास्ते=इस प्रकार उपासना करता है

सः=वह

ह=धवश्य ग्रस्मिन्≡इस

> लोके=खोक में सर्वम्=पूर्व

द्यायुः=बायु को

प्रति=प्राप्त होता है

+ ख⇒धौर

मृत्युः≃मृत्य

कालात्=नियमित कास से

पूरा=पहिसे

प्तम्≔इसके पास न=नहीं

मागच्छति=भाती है

मावार्थ ।

हे सौन्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रवाला बालाकी राजा से कहता

भया कि जो यह द्वायापुरुष है, इसीको में ब्रह्म मान कर इसकी उपासना करता ं ऐसा सुन कर अजातरांत्रु राजा ने जवाब दिया कि हे ब्राह्मण ! यह तुम क्या कहते हो, ऐसा मत कहो, यह ब्रह्म नहीं है, यह तो द्वायापुरुष मृत्यु है, क्योंकि जब उपासक को यह कटा कुटा दिखाई देता है तब उसीको अपने मरने का बोध होता है. इसको में ऐसा समम कर इसकी उपासना करता हूं. जो कोई इसकी उपासना इस प्रकार समम कर करता है, वह अवश्य इस लोक में पूर्ण आयु को प्राप्त होता है, और उसके निकट मृत्यु नियत कालसे पहिले नहीं आती है ॥१२॥

मन्त्रः १३

स होवाच गार्गो य एवायमात्मिन पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमा मैतिस्मिन्संविदिष्टा श्रात्मन्वीति वा श्रहमे-तमुपास इति स य एतमेवमुपास्त श्रात्मन्वी ह भवत्यात्मिन्वनी हास्य प्रजा भवति स ह तृष्णीमास गार्ग्यः ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, जवाच, गार्थः, यः, एव, अयम्, आत्मिन, पुरुषः, एतम्, एव, आहम्, श्रद्धा, उपासे, इति, सः, ह, जवाच, आजातरात्रुः, मा, मा, एतिस्मन्, संवदिष्ठाः, आत्मन्वी, इति, वै, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, आत्मन्वी, ह, भवति, आत्मन्विनी, ह, अस्य, प्रजा, भवति, सः, ह, तृष्णीम्, आस्, गार्ग्यः ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

सः≔बह ह=मसिद ग्राण्येः=गर्गगोगोत्त्रम बाजाकी उवाच=बोजा कि यः=जो श्रयम्=यह + र

एव≕निरचय करके झात्मनि≔हदव में पुरुषः≔पुरुष है झहम्=मैं एतम्≔इसको झहा=बस + मत्वा हति≕समस्क करके

उपासे=उपासना करता हूं इति=ऐसा + भुत्वा=सुन कर सः=वह ह=प्रसिद्ध श्रजातश्रञ्जः=ग्रजातश्रञ्ज राजा उवाच=बोना किं एतस्मिन्-इस ब्रह्म विवे मा मा १ पेसा मत कहो संविद्धाः (पेसा मत कहो + एतत्व्वह + ब्रह्म≕ब्रह्म + न≕नहीं है +श्रयम्=यह श्चात्मन्वी=श्रीवारमा पराधीन है इति=इस प्रकार घै=बिश्चय करके ग्रहम्=में **एतम्≃इसको** + एय=निस्संदेह उपासे=उपासना करता हूं + च=धौर यः=जो कोई

+ झान्यः=घन्य पुरुष + एव=भी यतम्≔इसकी एवम्=इस प्रकार डपास्ते=डपासना काता है सः=वह + एव=भी हु=धवश्य श्चारमन्वी=शु**खगु**खप्राही भवति=होता है + च=श्रीर ह्य्यवर्ष ग्रस्य=इसकी प्रजा=संतान + एच≕मी आत्मन्यिभी=शुद्ध बास्मावाती भवति=होती है ह=इसके परचात् सः=वह

ं शार्ग्यः=गर्नैगोन्नी बाखाकी

श्रास=इता भवा

तूष्णीम्=चुपचाप

मावार्घ।

हे सौन्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रोत्पन्न वालाकी बोका कि हे राजन ! इस हृदयाकाश विषे जो पुरुष है उसकी में ब्रह्म मान कर उसकी उपा-सना करता हूं. ऐसा सुन कर वह प्रसिद्ध राजा अजातशत्रु बोका कि हे अनुचान, ब्राह्मणा ! तुम क्या कहते हो, तुमको ऐसा नहीं कहना चाहिये, जिसको तुम ब्रह्म समसे हो वह ब्रह्म नहीं है, यह तो केवल जीवातमा पराधीन है, में इसको ऐसा जान कर इसकी उपासना करता है बहु जो कोई इसको ऐसा जान कर इसकी उपासना करता है बहु

अवश्य शुद्धगुगाप्राही होता है, और उसकी संतति भी शुद्ध आत्मा-बाली होती है. ऐसा उत्तर पाकर बालाकी चुपचाप होगया ॥ १३॥

मन्त्रः १४

स होवाचाजातशत्रुरेतावन्त्र ३ इत्येतावद्धीति नैतावता विदितं भवतीति स होवाच गार्ग्य उप त्वा यानीति ॥

पदच्छेवः।

सः, ह, उवाच, अजातशत्रुः, एतावत्, नू, इति, एतावत्, हि, इति, न, एतावता, विदितम्, भवति, इति, सः, इ, उवाध, गार्ग्यः, छप, त्वा, यानि, इति ॥

श्रम्बयः

. पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ह≔तब विदितम्=नहा का ज्ञान सः=वह न=नहीं अजातशत्रुः=धजातशत्रु राजा भवति=होता है उधाच=बोबा कि इति=ऐसा न्≕क्या + श्रुत्वा=सुन कर पतावत् हित्म इत्रणाही सः=वह जानते हो ह=प्रसिद्ध + बालाकि#=बालाकी गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पस + उवाच≔बोला कि बासाकी हि=हां श्रवश्य उवाच=बोबा कि एतायत् इति=इतनाही ब्रह्म विषे त्वा=भापके + जानामि=मैं नानता हं उप=िनकट + पुनः≕फिर +काश्यः=काशी के राजाने + ग्रहम्=मैं + शिशुवत्=शिष्यवत् आह=कहा ^३ इति=ऐसा पतावता } ⊨इतना करके इति } यानि=भाप्त हं भावार्थ ।

हे सौम्य ! जब बालाकी चुप होगया, तब राजा अजातसञ्ज ने

कहा है अनुचान, ब्राह्मणा ! क्या तुम ब्रह्म विष इतनाही आनते हो ? उसने कहा हां महाराज, ब्रह्म विषे इतनाही में जनता हूं. इसस राजा को विज्ञात होगया कि यह ब्राह्मणा ब्रह्मज्ञान में अपूर्ण है, और फिर कहा कि इतने करके ब्रह्म का ज्ञान नहीं होसकता है, इस पर बाजाकी को मालूम होगया कि राजा को ब्रह्म का पूरा ज्ञान है, ऐसा जान कर राजा से कहा कि हे भगवन् ! मैं आपके निकट शिष्यभाव से प्राप्त हूं !। १४ !।

मन्त्रः १४

स होवाचाजातशतुः प्रतिलोमं चैतद्यद्वाह्मणः क्षत्रियमुपेयाद् ब्रह्म मे वक्ष्यतीति व्येव त्वा अपिष्यामीति तं पाणावादायोच-स्यो तौ ह पुरुष सुप्तमाजम्मतुस्तमेतैर्नामिशरामन्त्रयाश्वके बृहन्पा-षटरवासः सोम राजिन्नति स नोचस्यौ तं पाणिनाऽऽपेषं बोधया-श्वकार स होचस्यौ ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, अजातरात्रः, प्रतिलोमम्, च, एतत्, यत्, ब्राह्मगाः, क्षित्रयम्, उपेयात्, ब्रह्म, मे, वक्ष्यित, इति, वि, एव, त्वा, क्षप्यिष्यामि, इति, तम्, पाग्गी, आदाय, उत्तस्यी, तो, ह, पुरुषम्, सुप्तम्, आज-मतुः, तम्, एतेः, नामभिः, आमन्त्रयाश्वको, बृहन्, पायस्वरवासः, सोम, राजन्, इति, सः, न, उत्तस्यी, तम्, पाण्णिना, आपेषम्, बोधया-श्वकार, सः, ह, उत्तस्यी॥

ग्रन्ययः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

ह=तव सः≔बह क्षत्रियम्=क्षत्रियं के पास उपेयात्=निकट जाय इति=इस माशासे कि

अजातशत्रुः=प्रजातशत्रु राजा उदाच=बोजा कि

म=मेरेबिये

यत्=बो

सः=वह

ब्राह्मणः=वास्य

ह=धवरय

एतत्=यह मतिलोमम्=शास्त्रविरुद् + अस्ति=है परन्तु=पर**न्तु** श्रहम्=भैं एव=धवश्य त्वा=तुमको विश्वपियस्यामि= वहा के विषे कहूंगा इति=इतना + उक्त्वा=कह कर तम्≕उसके पासी=हाथ को श्रादाय=पक्द कर उत्तस्थी=४ठखड़ा हुम्रा + च=ग्रीर ती=वे दोनों सुप्तम्=किसी सोये हुये पुरुषम्=पुरुष के पास आजग्मतुः≔धाये + च=घौर तम्=डस सोये हुये पुरुषको उत्तस्थौ⇒जगडठा

ब्रह्म=ब्रह्म की

वश्यति=उपदेश करेगा तो

एतैः=इन नामभिः=नामा से श्रामन्त्रयाञ्चके=जगाने के जिये एकारने खरी बृहन्=दे श्रेष्ठपुरुष, पाएउरचासः=हे श्वेतवस्र के धारख करने वाखे, सोम=हे सोम ! राजन्=हे राजन् ! + उत्तिष्ठ≕जागो + परन्तु=परन्तु सः=वह सोया हुचा पुरुष न=नहीं उत्तस्थी=उठा ह=तब पाणिना≔हाथ से श्रापेषम्=दबा दबा कर तम्=उसको बोधयाञ्चकार=जगाया

+ तदा=तव

सः=वह

भावार्थ ।

इस पर हे सीम्य ! राजा अजातशत्रु ने जवाब दिया कि हे बालाकी! यदि ब्राह्मण् क्षत्रिय के पास इस आशा से जाय कि वह क्षत्रिय मुक्तको ब्रह्म का उपदेश करेगा तो उसका ऐसा करना शास्त्रविरुद्ध है, परन्तु मैं तुमको अवश्य ब्रह्म विषे कहूंगा, इतना कह कर उसका हाथ पकड़ कर उठ खड़ा हुआ, और दोनों एक सोये हुये पुरुष के पास आये, और उसके जगाने के लिये ऐसे पुकारने लगे कि, हे श्रेष्टपुरुष !

हे रवेतवस्त धारणा करनेवाले ! हे चन्द्रमुख ! हे प्रकाशवाले ! जागो, जागो, उठो, परन्तु जब वह नहीं जागा, तब हाथ से उसके शरीर को दवा दवाकर उसको जगाया, तब वह उठ वेठा ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

स होवाचाजातरात्रुर्यत्रैष एतत्सुप्तोऽभूद्य एष विज्ञानमयः पुरुषः कैष तदाऽभूत्कुत एतदागादिति तदु ह न मेने गार्ग्यः ॥

सः, ह, उवाच, अजातशत्रुः, यत्र, एषः, एतत्, सुप्तः, अभूत्, यः, एषः, विज्ञानमयः, पुरुषः, ज्ञ, एषः, तदा, अभूत, कुतः, एतत्, आगात, इति, तत्, उ, ह, न, मेने, गार्ग्यः ॥

श्चन्यः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

+ अथ=तिस के पीछे विद्यानमयः=विज्ञानमय पुरुषः=पुरुष है सः=वह एषः≔यह ह=प्रसिद्ध तदा=सोते वक् श्रजातश्त्रुः≔ष्रजातशत्रु राजा क=कहां उवाच=षोबा कि अभूत्=या + बालाके=हे बालाकी ! + च≔मौर यञ्जिस कास कुत≔कहां से ह=निस्संदेह एतत्=उस काब में यानी एषः=यह जीवात्मा जागने पर पतत्=इस शरीर में आगात इति=आगया ऐसे सुप्तः≔सोया हुम्रा तत्=इन दोनों प्रश्नों को ड ह=चच्छी तरह से अभृत्=था + च=भीर गार्ग्यः=वासाकी यः=जो . स=नहीं मेने⇒सममा एष:=यह

भावार्थ।

हे सौन्य ! वह प्रसिद्ध राजा अजातरात्रु बोला कि हे बालाकी ! जिस कार्ल में यह जीवात्मा सोया हुआ था; उस अवस्था में यह विकानमय पुरुष कहां था, और जब शरीर के दवाने से जगाया गया तो यह कहां से आगया, यानी इस पड़े हुये शरीर में कौन सोचे और जागनेहारा है, और कौन जगाया गया है, और वह कहां से आया है, यह मेरा प्रश्न है, है अनूचान, ब्राह्मण ! क्या दुम इन सबको जानते हो ? यह सुन कर वह ब्राह्मण बोला कि मैं आपके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता हूं, क्योंकि मैं इस विषय को नहीं जानता हूं।। १६।।

मन्त्रः १७

स होवाचाजातशत्रुर्यत्रैष एतत्सुप्तोऽभूच एप विज्ञानमयः पुरुष-स्तदेषां पाणानां विज्ञानेन विज्ञानमादाय य एपोऽन्तर्हृदय त्राकाशः-स्तस्मिष्ट्रेते तानि यदा युद्धात्यथ हैतत्पुरुषः स्विपिति नाम तद्-यृहीत एव पाणो भवति यृहीता वाग् यृहीतं चक्षुर्यृहीत श्रोत्रं यृहीतं मनः ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, खवाच, आजातशत्रुः, यत्र, एषः, एतत्, सुप्तः, अभूत्, यः, एषः, विज्ञानमयः, पुरुषः, तत्, एषाम्, प्राग्णानाम्, विज्ञानेन, विज्ञानम्, आदाय, यः, एषः, अन्तर्दृदये, आकाशः, तस्मिन्, शेते, तानि, यदा, गृह्वाति, अथ, ह, एतत्, पुरुषः, स्विपिति, नाम, तत्, गृहीतः, एव, प्राग्णः, भवति, गृहीता, वाग्, गृहीतम्, चक्षुः, गृहीतम्, श्रोत्रम्, गृहीतम्, मनः ॥

स्रक्षयः

पदार्थाः सन्वयः

पदार्थाः

ह्=पसिद् स्रजातरात्रुः=स्रजातरात्रु राजा उदान्त=शेवा कि

सः=वह

इवाख=बाबा ।क यत्र≠जिल कास में • एषः⊐यह जीवात्मा पतत्≔इस शरीर विषे सुप्तः≔सोवा हुमा स्रभृत्=था

+ तत्=उस भवस्था में यः≕जो

एषः≕यह

विज्ञानमयः र _विज्ञानमय पुरुष कर्मी पुरुषः (का करनेहारा है विद्यानेन=अपने ज्ञान करके एषाम्=इन प्राशानाम्=वागादि इन्द्रियों के विज्ञानम=विषय प्रहण सामर्थ्य श्चादाय=ने कर तस्मिन्=उस विषे शेते=सोता है यः=जो एषः=यह श्चन्तर्द्वये=हृदय के भीतर आकाशः=आकाश है + च=ग्रीर यदा=जब + सः≔वह पुरुष तानि=डन वागादि इन्द्रियों को ग्रह्माति=अपने में ब्रय कर द्माध=तव ∙ ह=चह प्रसिद्ध

पतत्पुरुषः=यइ पुरुष स्विपिति="स्विपिति" के नाम=नाम से +विख्याता रे + च=धौर तत्=तवहीं प्राणः=ब्राण इन्द्रिय ग्रहीतः एव=स्वकार्य में प्रसमर्थ भचति=होती है + एवम्=इसी प्रकार वाक्=वाची इन्द्रिय गृहीता=स्वकार्य में भ्रममर्थ + भवति=होजाती है चभ्रः≔नेत्र इन्द्रिय गृहीतम्=स्वकार्य में श्रसमर्थ + भवति=होजाती है धोत्रम्=शोत्र इन्द्रिय गृहीतम् । _स्वकार्यं में बद्ध + भवति 🕽 होजाती है मनः=मन गृहीतम (न्स्वकार्य में बद + भवति रे होजाता है

भावार्थ।

तब वह प्रसिद्ध आजातशत्रु राजा बोलता भया कि हे ब्राह्मणा ! जिस काल में यह जीवातमा इस शरीर बिषे सोया हुआ था, उस अवस्था में यह विज्ञानमय जीवातमा कर्मों का करने हारा आपनी ज्ञानशक्ति करके इन बागादि इन्द्रियों के स्व, स्वविषय अक्षण सामर्थ्य को केकर उस देश में जाकर जो हृद्य के भंतर स्थित है सोगया था. हे

सौम्य ! जब यह पुरुष वागादि इन्द्रियों को अपने में लय कर लेता है, तब लोग ऐसा कहते हैं कि यह पुरुष सोता है, उस समय इस पुरुष की बागोन्द्रिय अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाती है, नेत्रेन्द्रिय अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाती है, श्रोत्र अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाता है, और मन अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाता है। १७॥

मन्त्रः १८

स यत्रैतत्स्वप्न्यया चरति ते द्दास्य लोकास्तदुते महाराजो भवत्युतेव महाब्राह्म ए उत्तेवोचावचं निगच्छति स यथा महाराजो जानपदान् गृहीत्वा स्वे जनपदे यथाकामं परिवर्त्तेतैवमेवेष एतत्मा-ए।न् गृहीत्वा स्वे शरीरे यथाकामं परिवर्तते ।।

पद्च्छेदः।

सः, यत्र, एतत्, स्वप्नयया, चरति, ते, ह, आस्य, कोकाः, तत्, उत, इव, महाराजः, भवति, उत, इव, महाश्राह्मगाः, उत, इव, उशा-वचम्, निगच्छति, सः, यथा, महाराजः, जानपदान्, गृहीत्वा, स्वे, जनपदे, यथाकामम्, परिवर्तेत, एवम्, एव, एपः, एतत्, प्रागान्, गृहीत्वा, स्वे, शरीरे, यथाकामम्, परिवर्तते ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यन्न=जिस काल में

लोकाः≕िकये हुये सब कर्म

सः=वह

स्वप्न्यया=स्वप्रद्वारा प्तत्=इस शरीर में ह=स्रवस्य

चरति=स्वम के व्यापारों को करता है

+ तदा=उस समय में श्रस्य=इस पुरुष के ते=वे + उत्तिष्ठन्ते=उदय हो भाते हैं तत्=उस भवस्था में उत=कभी सः=वड

प्रहाराजः=महाराजा के इव=समान घतत्=इस गरीर में भवति=विचरता है उत=चौर कभी
महाब्राह्मणः≔महाबाह्मण की
ह्य=भाित
+ भवित=विचरता है
उत=चौर कभी
+ सः≔वह सुसगत
+ पुठषः=पुरुष
+ महाब्राह्मणः≔महाबाह्मण की
ह्य=भांति
उद्यायचम्=अंच नीच योनिको
निगच्छृति=प्राप्त होता है
+ च=चौर
यथा=जैसे
महाराजः≔कोई महाराजा

ज्ञानपदान्=जीते हुये देशों के

पदार्थों को

गृहीस्वा=जे कर

स्थे=अपने

जनपदे=देश में

यथाकामम्=अपनी इण्डानुसार
परिवर्षेत=धूमता किरता है

एवम् एव=इसी प्रकार

एयः=यह पुरुष भी

प्राणान्=वागदिक इण्डियों को
गृहीस्वा=जे कर

स्थे=अपने

गृरीरे=शरीर में

यथाकामम्=कामना के अनुसार
परिवर्तेत=अमया करता है

भाषार्थ।
दे सौम्य! जिस काल में यह जीवात्मा इस शरीर में स्वप्रद्वारा
स्वप्त के व्यापार को करता हैं, तब उसके पूर्वके किये हुये कर्म के
फल उदय हो आते हैं, और तभी यह जीवात्मा कभी महाराजा
के समान बर्तता है, और कभी महाब्राह्मसा के समान विचरता है,
और कभी ऊंच नीच योनिको प्राप्त होता है. यानी कभी राजा
होता है, और कभी चायडाल बनता है, कभी हँसता है, कभी रोता
है, कभी मारता है, और कभी माराजाता है, और जैसे कोई महाराजा जीते हुये देशों के पदार्थों को लेकर अपने देश में अपनी
इच्छानुसार घूमता फिरता है, इसी प्रकार यह पुरुष यानी जीवात्मा
भी इस शरीर में जो उसका देश है, अपनी कामनानुसार अपनी
इन्द्रियों के साथ अमसा करता है।। १८।

मन्त्रः १६ अथ यदा मुचुतो भवति यदा न करण्यन वेद हिता नाम नाड्यो द्वासप्तिः सहस्राणि हृदयात्पुरीततमभिप्रतितिष्ठन्ते ताभिः प्रत्यवस्रप्य पुरीतित शेते स यथा कुमारो वा महाराजो वा महा-ब्राह्मणो वाऽतिश्लीमानन्दस्य गत्वा शयीतैवमेवैष एतच्छेते ॥

पदच्छेदः ।

अथ, यदा, सुषुतः, भवति, यदा, न, कस्यचन, वेद, हिताः, नाम, नाड्यः, द्वासप्ततिः, सहस्राणि, इदयात्, पुरीततम्, अभिप्रतितिष्ठन्ते, ताभिः, प्रत्यवस्प्य, पुरीतति, शेते, सः, यथा, कुमारः, वा, महाराजः, वा, महान्राह्मणः, वा, श्रातिन्नीम्, आनन्दस्य, गत्वा, शयीत, एवम्, एव, एवः, एतत्, शेते ॥

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः श्रभिप्रति- } = स्याप्त हैं तिष्ठन्ते श्रथ=तदनन्तर यदा=जब पुरुषः=पुरुष + सः=वह ताभिः=डन के द्वारा सुषुप्तः≕सुषुप्तिगत + बुद्धः=बुद्धि के साथ भवति=होता है प्रत्यवख्य=बीट कर + च=धौर पुरीतिति=सुषुम्ना नादी में यदा=जब कस्यचन=किसी पदार्थ को शेते=सोता है यानी मानन्द भोगता है त≕नहीं + श्रत्र=इस विषय में चेद=जानता है तदा=उस श्रवस्था में + इप्रान्तः=र द्यान्त है कि यथा≃जैसे हिताः नाम=हिता नामक सः=कोई + ये=जो द्वासप्तति:=बहत्तर कुमारः≔बालक सहस्राचि=हजार वा=मथवा नाड्यः=नादियां महाराजः=महाराजा इदयात्=इदय से वा=मथवा ± निस्तीर्थ≔क्किक कर महाब्राह्मस्यः=दिग्य ब्राह्मस् पुरीततम् शारीत भर में आनन्दस्य=पानस् की

स्रतिक्रीम्⇒सीना को + गत्सा⇒पा कर श्रयीत=सोता है एसम् एस=इसी प्रकार एषः≔वह जीवाता। एतत्=इस शरीर में होते≔सानन्दपूर्वक सोताहै

भावार्थ।

हे सौन्य! फिर जब यह पुरुष सुष्ठुप्ति में रहता है, झौर जब किसी पदार्थ को नहीं जानता है, तब वह पुरुष सोया हुझा है ऐसा कहा जाता है, उस अवस्था में जो ये बहत्तर हज़ार नाहियां हृदय से निकलकर शरीर भरमें ज्याप्त हैं उनके साथ वह घूम फिर कर बुद्धि में सिमट कर शरीर में, अथवा सुषुन्ना नाड़ी में आनन्दशीका हो जाता है, हे सौन्य! इस विषय में लोग ऐसा दृष्टान्त देते हैं कि वह आतमा ऐसा आनन्दपूर्वक सोता है जैसे कोई बालक अथवा महाराजा अथवा कोई दिज्य ब्राह्मण आनन्द में पड़ा हुआ सोता है।। १९॥

मन्त्रः २०

सं यथोर्णनाभिस्तन्तुनोचरेद्यथाऽग्नेः श्रुद्रा विस्फुलिङ्गा व्युचर-न्त्येवमेवास्मादात्मनः सर्वे प्राणाः सर्वे लोकाः सर्वे देवाः सर्वाखि भूतानि व्युचरन्ति तस्योपनिषत्सत्त्यस्य सत्यमिति प्राणा वे सत्यं तेषामेष सत्यम् ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥

सः, यथा, ऊर्णनाभिः, तन्तुना, उत्तरेत्, यथा, आन्तः, क्षुद्राः, विस्फुलिङ्गाः, व्युत्तरन्ति, एवम्, एव, आस्मात्, आत्मनः, सर्वे, प्रात्माः, सर्वे, लोकाः, सर्वे, देवाः, सर्वािंग्, भूतानि, व्युत्तरन्ति, तस्य, उपनिषत्, सत्यस्य, सत्यम्, इति, प्रात्माः, वे, सत्यम्, तेषाम्, एषः, सत्यम् ॥ आन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथा=जैसे

तन्तुना=अपने तन्तु के आश्रय

सः=यह प्रसिद्धः ऊर्खनाश्चिः=मकर्ना उद्गच्छेत्=विवस्ती है + ख=बीर

यथा=जैसे
अग्नेः=कानि से
श्रुद्धाः=कोटी
विस्फुलिङ्काः=िबनगारियां
व्युक्तरिन्द्र=िनकजती हैं
यथम् एव=इसी मकार निरचय
करके
अस्मान्=इस
आत्मनः=कात्मा से
सर्वे=सब
प्राणाः=वागादि इन्द्रियां
सर्वे=सब
लोकाः=प्रादिजोक
सर्वे=सब
देवाः=प्रादिजोक
सर्वे=सब

भृतानि=बाकाशादि सक्तम्त
व्युवारन्ति=निक्तते हैं
तस्य=दसका
उपनिषद्=शनही
सत्यस्य=सत्य का
सत्यम्=सत्य है
हृति=हृसी प्रकार
प्राणाः=हृन्त्र्यां
वै=निश्चय करके
सत्यम्=सत्य हैं वानी
नाशवान् हैं
तेषाम्=उन सब में
प्रयः=यह धारमा
सत्यम्=सत्य है वानी
कृतिनाशी है

भावार्थ ।

ू हे सौम्य ! जैसे उर्जानाभि नामक कीट अपने मेंसे उत्पन्न किये हुये तन्तुओं के आश्रय विचरता है, उसी प्रकार ब्रह्म भी अपने से किये हुये जगत् के आश्रय विचरता हुआ प्रतीत होता है, और जैसे अग्नि से छोटी छोटी चिनगारियां इधर उधर उड़ती हुई दिखाई देती हैं, उसी प्रकार इस जीवात्मा से सब वागादि इन्द्रियां, सब भूरादि जोक, सब सूर्यादि देवता, आकाशादि पश्चमहाभूत निकलते हैं, और दिखाई देते हैं, हे सौम्य ! उसका ज्ञानही सत्य का सत्य है, और ऐसेही वागादि इन्द्रिया भी उसके आश्रय होने के कारण सत्य हैं नहीं तो नाशवान हैं और वह इनमें अविनाशी है ॥ २०॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

श्रथ दितीयं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

यो ह वै शिशु अ साधान्छ समत्याधान्छ सस्यूण्छ सदामं बेद सप्त ह द्विषतो भ्रातृच्यानवरुणादि श्रयं वाव शिशुर्योऽयं मध्यमः प्राणस्तस्येदमेवाऽऽधानमिदं पत्याधानं पाणः स्यूणाऽसं दाम ॥

पवच्छेवः।

यः, ह, वै, शिशुम्, साधानम्, सप्रत्याधानम्, सस्थूगाम्, सदा-मम्, वेद, सप्त, ह, द्विषतः, भ्रातृत्यान्, अवरुगाद्धि, श्रयम्, वाव, शिशुः, यः, अयम्, मध्यमः, प्रागाः, तस्य, इदम्, एव, आधानम. इदम्, प्रत्याधानम्, प्रागाः, स्थृगाा, श्रन्नम्, दाम ॥ पदार्थाः | अन्वयः

श्चन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो ह=निश्चय करके साधानम्=श्राधान सहित सप्रत्याधानम्=प्रत्याधान सहित सस्थूग्म=स्थागुसहित सदामम्=दामसहित शिशुम्=बड्वे को वेद=जानता है + सः=वह ह वै=घवश्य सम=सात द्विपतः=द्वेष करनेहारे म्रातृब्यान्=शतुर्घी को श्रवरुण्जि=वशमें करबेता है + तेषु=तिन शतुश्रों के मध्य

यः≕जो श्रयम्=यह मध्यमः=बीच में रहनेवाला प्रागः=प्राग है श्चयम्=यही वाव=निस्संदेह शिशुः=बद्धदा है तस्य≖उसका आधानम=अधिष्ठान बानी उसके रहने की जगह इदम्=यह एव=ही

+ शरीरम्=स्थूल शरीर है

इड्म्=यह + शिर:=शिर

+ तस्य=उसके

रहने की सनेक जगह वानी शिर में सांख, कान, नाक, मुख जो सनेक जगह हैं रनमें बहरहताहै + तस्य=उसका स्थाया=बूंटा प्रात्यः≔सक से पैदा हुआ बल है + तस्य=डसकी दाम=शस्सी अकाम्≃सक यानी भोज्य पदार्थ है

भावार्थ ।

हे सौम्य! इस मन्त्र में मुख्य प्राप्त को गाय के बळाड़ के साथ उपमा दिया है, जैसे बळाड़ा खंटे से बँचा हुआ घासादि खाकर बली हो जाता है, बैसेही विविध प्रकार के भोजनादि करने से यह प्राप्त भी बली होजाता है, हे सौम्य! जिस में कोई वस्तु रहे, उसको आधान कहते हैं, प्राप्त के रहने की जगह यह स्थूल शरीर है, इस लिये इस स्थूल शरीर कोही आधान कहा है, क्यांकि इस शरीर में ही प्राप्त रहता है, एक स्थान के अन्दर और कई जगह रहने का हो तो उसे प्रत्याधान कहते हैं. यह शिर प्रत्याधान है, क्योंकि इसमें प्राप्त के रहने की बगह सात हैं, यानी दो आँख, दो कान, दो नासिका, एक रसना है, यह अन्नोत्पन्न बल ही प्राप्त क्यांक बळाड़े का खंटा है, और अन्न इसका भोज्य है जैसे खंटे से बँधा हुआ। बळाड़ा घास फूसादि जो उसका भोग है खा कर बली होता है, बैसेही यह प्राप्त शरीर से बँधा हुआ अनेक प्रकार के भोजन करके बली बनता है।। १।।

मन्त्रः २

तमेताः सप्ताक्षितय उपतिष्ठन्ते तथा इमा अक्षन्लोहिन्यो राजय-स्तामिरेन छ रुद्रोऽन्वायत्तोऽथ या अक्षन्नापस्तामिः पर्जन्यो या कनीनिका तयाऽऽदित्यो यत्क्रुष्णं तेनाग्निर्यच्छुक्तं तेनेन्द्रोऽधरवैनं वर्तन्या पृथिव्यन्वायत्ता चौरुत्तरया नास्यानं क्षीयते य प्वं वेद ॥

पव्चक्षेदः। तस्, ख्वाः, सप्त, ऋक्षितयः, उपतिष्ठन्ते, तत्, याः, इमाः, अक्त्, कोहिन्यः, राज्ञयः, ताभिः, एनम्, कद्रः, अन्वायत्तः, अथ, याः, अक्षन्, आपः, ताभिः, पर्जन्यः, या, कनीनिका, तया, आदित्यः, यत्, कृष्णम्, तेन, अप्वः, यत्, युक्तम्, तेन, इन्द्रः, अप्रया, एनम्, वर्तन्या, पृथ्वी, अन्वायत्ता, यौः, उत्तरया, न, अस्य, अन्नम्, श्रीयते, यः, एवम्, वेद ॥

अन्वयः

पदार्थाः

: अन्वयः

पदार्थाः

तम्=इस विक्वात्मा प्राय को प्ताः=ये स्रप्र≃सात श्रक्षितयः=भ्रजय देवता उपतिष्ठन्ते=पूजते हैं तत्=तिस विषे याः=जो इमाः≔ये स्रोहिन्यः=स्रात राजयः⇒रेखार्वे श्रक्षन्=नंत्र विषे हैं ताभिः=उन करके एनम्=इस मध्यम प्राश के श्रन्दर रुद्रः=रुद्रदेवता स्रन्वायत्तः=उपस्थित है द्याय=भीर याः⇒जो शाए:=जव आक्षन्=नेत्र विवे हैं ताभिः=उन करके पर्जन्यः=पर्जन्य देवता

+ अन्यायतः=उपस्थित है

याः≕जो

कदीनिका=पुतसी है

आदित्यः=सूर्य देवता + श्रक्षन्=नेत्र विषे + म्रन्वायत्तः=उपस्थित है यत्=जो + श्रक्षन्=नेत्र विषे कुष्णम्=कालायन है तेन=उस करके श्चारिन:=धरिनदेवता + उपतिष्ठते=उपस्थित है यत्=जो + सञ्जूषि=नेत्र विषे शुक्कम्=श्वेतता है तेन=उस करके इन्द्रः=इन्द्र देवता + उपतिष्ठते=डपस्थित है पूथियी=पृथिवी **अधर्या**≔नीचेवाली वर्तस्या=पवकों करके एतम्=इस मध्यम प्राय के स्रम्बायत्तः=सनुगत है

द्यौः=माकाश

उत्तरया=अपरवाडी + वर्तन्दा=पडको करके

तया=उस करके

+ अन्वायत्तः=अनुगत है
यः=जो उपासक
एवम्=इस प्रकार
बेद=जानता है

द्यस्य=इसका स्रक्षम्=मन्न न=कभी नहीं भीयते=श्रीण होता है

भावाध ।

हे सौम्य! इस लिङ्गात्मक प्राग्त को जो सात अन्य देवता इसके निकट रह कर पूजते हैं-वे ये हैं, जो नेत्र विषे लाल रेखाओं द्वारा इस मध्यम प्राग्त को पूजता है वह रह है, जो जल करके नेत्र में रहने वाले प्राग्त को पूजता है वह पर्जन्यदेवता है, जो पुतली में मध्यम प्राग्त को पूजता है वह स्वयंदेवता है, जो नेत्र विथे कालापन है उसमें रहने वाले प्राग्त को जो पूजता है वह अपिनदेवता है, जो नेत्र विथे श्वेतता है उसके अन्दर जो प्राग्त रहता है उसको जो पूजता है वह इन्द्रदेवता है, पृथिवी अभिमानी देवता नेत्र के नीचे की पलकों के अन्दर रह कर प्राग्त की पूजा करता है, अपोर खो अभिमानी देवता उपर के पलकों के अन्दर रह कर प्राग्त की पूजा करता है, इसे प्रकार जो उपासक प्राग्त को जानता है उसका अन्य कभी क्षीया नहीं होता है। । र ।।

मन्त्रः ३

तदेष श्लोको भवित अवीग्विलश्रमस ऊर्ध्वब्रुधस्तस्मिन् यशो निहितं विश्वरूपं तस्याऽऽसत ऋषयः सप्त तीरे वागष्टमी ब्रह्मणा संविदानेति अवीग्विलश्रमस ऊर्ध्वब्रुध इतीदं तिस्वर एष ह्यवीग्वि-लश्चमस ऊर्ध्वब्रुभस्तस्मिन् यशो निहितं विश्वरूपमिति प्राणा वै यशो विश्वरूपं प्राणानेतदाह तस्याऽऽसत ऋषयः सप्त तीर इति प्राणा वा ऋषयः प्राणानेतदाह वागष्टमी ब्रह्मणा संविदानेति वाग्ध्यष्टमी ब्रह्मणा संवित्ते ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एषः, श्लोकः, भवति, अर्वाग्विजः, चमसः, ऊर्ध्वृष्टः, तस्मिन्, यशः, निद्दितम्, विश्वकृपम्, तस्य, आसते, भृषयः, सप्त, तीरे, वाग्,

अष्टमी, ब्रह्मगा, संविदाना, इति, अर्वाग्विकः, चमसः, अर्थ्वुष्ठः, इति, इदम्, तत्, शिरः, एषः, हि, अर्वोग्वलः, चमसः, ऊर्ध्वबुध्नः, तस्मिन्, यशः, निहितम्, विश्वरूपम्, इति, प्राखाः, वै, यशः, विश्व-रूपम्, प्राग्णान्, एतत्, आह, तस्य, आसते, ऋषयः, सप्त, तीरे. इति, प्राशाः, वै, ऋषयः, प्राशान, एतत्, आह, वाग्, अष्टमी, ब्रह्मणा, संविदाना, इति, वाग् , हि, श्रष्टमी, ब्रह्मणा, संवित्ते ॥

श्चन्धयः

तत्=पिछ्ने मन्त्र में जो कहा गया है उस विषे

एषः=यह श्लोकः=मन्त्र

भवति=प्रमाण है श्रवीविद्यतः=नीचे है मुख जिसका

+ च=श्रीर

ऊर्ध्वबुधः=अपर है पेंदा जिसका चमसः=ऐसा यज्ञका कटोरा +शिरः=मनुष्य का शिर है

तस्मिन्⇒डमर्मे

विश्वक्रपम्) नाना प्रकार का यशः > विभववाला प्राण

निहितम्=स्थित है तस्य=उसके

तीरे=िकनारे पर

सप्त=सात भूषयः=प्राचयुक्त इन्द्रियां हैं + च=ग्रीर

ब्रह्मणा≔वेद से

संविदाना=संवाद करनेवाली अध्मी=चारवीं

वाक्=वावी

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्रासते=स्थित है अर्वाग्वितः=नीचे हैं मुलरूप वित

जिसमें + च=स्रीर

ऊर्ध्ववुध्नः=अपर है पेंदा जिसमें

इति=ऐसा

तत्=वह

इदम्=यह

चमसः=चमसाकार

शिर:=मनुष्य का शिर है हि=क्योंकि

एषः=यह मनुष्य का शिर

अर्वाग्विलः=नीचे घेदवाबा च≕मौर

ऊर्ध्वेबुध्नः=ऊपर पेंदावाला

चमसः=यज्ञ का कटोरा है

तस्मिन्=तिसी शिर में

विश्वक्रपम्=नाना प्रकार का यशः=विभववाता प्राय

निहितम्=स्थित है

इति=वही

बिश्वरूपम् अवंशक्रिमान्

बशः=विभववाद्या

वै=िश्रचय करके

पतन्=

+ इति=इस क्षिये

प्राणान्=

प्राणाः=

प्रा

मस्त्रः=सन्त्र ने एतत्=इसको प्रागान्=प्राग आह=कहा है + स=धौर ब्रह्मसा=वेद से संविदाना=संवाद करनेवाली अप्रमी=बाठवीं वाग्=वाणी है इति≕ऐसा + मन्त्रः=मन्त्र ने + उक्तम्=कहा है ष्टि=क्यों।के श्राष्ट्रमी=भाउनी वाक्≒वाणी ब्रह्मणा=वेद के साथ संवित्ते=सम्बन्ध करती है

भावार्थ।

हे सौम्य ! जो पिछ्रले मन्त्र में कहा गया है कि जीवात्मा के सात शत्रु हैं, उन्हीं का व्याख्यान इस मन्त्र में कहा जाता है सुनो, जिसका मुख्य नीचे है और पेंदा ऊपर है, ऐसा यह का कटोरावत् जो मनुष्य का शिर है, उसमें नाना प्रकार के चमत्कारवाज़े प्राचा स्थित हैं, और उसके किनारे पर सात प्राचायुक्त इन्द्रियां, यानी दो नेत्र, दो कर्या, दो नासिका, और एक जिहा (विषयों की भोगनेवाज़ी और इसी कारण जीवके शत्रु) स्थित हैं, और हे सौम्य ! एक प्राचायुक्त वेद से संवाद करनेवाज़ी आठवीं वाणी भी स्थित है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

इमावेष गोतमभरद्वाजावषमेव गोतमोऽयं भरद्वाज इमावेव वि-रवामित्रजणद्वमी अध्यमेष विश्वामित्रोऽयं जमद्ग्निरिमावेष वसिष्ठ- कश्यपावयमेव वसिष्ठोऽयं कश्यपो वागेवात्रिवीचा श्रममद्यतेऽचिई वै नामैतद्यदत्रिरिति सर्वस्याचा भवति सर्वमस्यामं भवति य एवं वेद।।

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

पदच्छेदः ।

इमी, एव, गोतमभगद्वाजी, श्रायम्, एव, गोतमः, श्रायम्, भरद्वाजः, इमौ, एव, विश्वामित्रजमद्ग्नी, श्रायम्, एव, विश्वामित्रः, श्रायम्, जमदिग्न:, इमी, एव, विसष्टकश्यपी, श्रयम्, एव, विसष्टः, श्रयम्, कश्यपः, वाक्, एव, श्रत्रिः, वाचा, हि, श्रत्नम्, श्रद्यते, श्रत्तिः, ह, वै, नाम, एतत्, यत्, अत्रि:, इति, सर्वस्य, अत्ता, भवति, सर्वम्, श्चास्य, श्चान्नम्, भवति, यः, एवम्, वेद ॥

पदार्थाः श्चराः ग्रस्वयः

पदार्थाः

+ गुरुः=गुरु + शिष्यम्=शिष्य से + आह=कहता है इसौ एव=ये दोनों कर्ण निरचय

गोतम् । गोतम श्रीर भरद्वाज भरद्वाजी } हैं यानी श्रयम्=यह दहिना कर्ण प्य=निस्संदेड गोतमः=गोतम है अयम्=यह वायां कर्य भरहाजः=भरदाज है

इमौ=ये दोनों नेत्र

एव=निश्चय करके

विश्वामित्र- । विश्वामित्र और जमदन्ती े जमदन्ति हैं यानी अयम् र यह दहिना नेत्र नि-=रचय करके विश्वामित्र:=विश्वामित्र है

द्ययम्=यह बायां नेत्र जमद्गिनः=जमद्गिन है इमी=ये दोनों नासिका पच≕निस्संदेड विसष्ठकश्यपौ=विसष्ठ भौर कश्यप

हैं यानी श्रयम् एवं=यह दहिनी नासिका निरचय करके वसिष्ठः=वसिष्ठ है

अयम्=यह बाई नासिका क्रश्यपः=करवप है

वाक्=वावी एव=निस्संदेह अत्रिः=मत्रि है हि=न्योंकि बाचा=वाणी करके

श्रद्भम्=धन श्रद्यते=सायाजाता है

+ तस्मात्=इस बिये

वेद=जानता है + ग्रह्य=इस वागी का ह वै=प्रसिद्ध निश्चय करके सः=वह मर्वस्य=प्रव प्रश्न का नाम=नाम अत्तिः=श्रति है ग्रचा=भोका भवति=होता है यत्=जो पतत्= यह है + च=धौर सर्वम्=सब + तत्=वही श्रात्रिः=श्रत्रि है श्रन्नम्=भन्न इति=ऐसा श्चस्य=इसका यः≕जो + भे(उथम्=भोज्य भवति=होता है एवम=कहे हथे प्रकार भावाधे ।

हे प्रियदर्शन ! गुरु शिष्य से कहता है कि ये दोनों कर्गा गौतम क्रीर भरद्वाजऋषि हैं, यानी यह दहिना कर्गा गौतम है, और यह बायां कर्गा भरद्वाज है, उसीतरह नेत्रों को अंगुली से बताकर कहता है कि ये दोनों विश्वामित्र और जमदिन हैं, यानी यह जो दिहना नेत्र हैं वह विश्वामित्र हैं, और जो यह बायां नेत्र हैं वह जमदिन हैं, फिर दोनों नासिका को अंगुली से दिखा कर कहता है, हे शिष्य ! ये बसिष्ठ और कश्यप हैं, यानी जो यह दहिनी नासिका है, वह वसिष्ठ हैं, अगैर जो बाई नासिका है, वह कश्यप हैं, हे शिष्य ! बागी निस्सन्देह अति हैं, क्योंकि वागी करके ही अन्न खाया जाता है, इसीका प्रसिद्ध नाम अति हैं, जो अति हैं, वही अति हैं, जो उपासक इस प्रकार जानता है वह सब अन्नों का भोका होता है, और सब अन्न इसका मोज्य होता है ॥ ४॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्राम् ॥ २ ॥

श्रथ ततीयं बाह्यसम्।

मन्त्रः १

द्वे बाव ब्राह्मणो रूपे पूर्त चैवापूर्त च पत्र्य चामृतं च स्थितं च यच सच त्यं * च ॥

पदच्छेदः ।

द्वे, वाव, ब्रह्मगाः, रूपे, मूर्त्तम्, च, एव, श्रमूर्तम्, च, मर्त्यम्. च. श्रमृतम्, च, स्थितम्, च, यत्, च, सत्, च, त्यम्, च॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चान्वयः

ब्रह्मणः=ब्रह्म के वाय=निश्चय करके द्वे=रो रूपे=रूप हैं मुर्त्तम्=एक मृर्त्तिमान् च=ग्रीर श्रमूर्त्तम्=दूसरा श्रमृत्तिमान् है मर्द्भम=एक मरग्रधमी

ħ

च≔घौर अमृतम्=दूसरा धमरधर्मी स्थितम्=एक श्रवत च=धौर यत्=दूसरा चल सत्=एक ध्यक च=श्रौर पच=निरचय करके त्यम्=वृत्तरा भव्यक्र

भावार्थ ।

हे सौम्य ! ब्रह्म के दो रूप हैं, एक मूर्तिमान, दूसरा अमूर्तिमान, एक मर्गाधर्मी, दूसरा श्रमर्धर्मी, एक चल, दूसरा श्रचल, एक व्यक्त, दूसरा अव्यक्त, कार्यरूप करके जगत के अथवा ब्रह्मागड के जितने ह्म हैं सब मुर्तिमान् हैं, ऋौर इसीकिये नाशवान् भी हैं, परन्तु जो परमाणुंरूप से सृष्टि के नाश होने पर स्थित रहते हैं, वे अप्रमूर्तिमान् झौर मरगाधर्मरहित कहें जाते हैं. यही परमाणु जब ईश्वर जगत् के रचने की इच्छा करता है एक दूसरे से मिलकर स्थूल गोलाकार स्नोकझादिक बन जाते हैं, झीर फिर उन स्नोको में ईश्वर की प्रेरणा

[#] इस मन्त्र में चकार आठ हैं जिनमें से चार का अर्थ गया है भीर चार छोड़ दिये गये।

करके चलनशक्ति होने लगती है, श्रीर तत्परचात् मूर्तिमान् वृक्ष, कीड़े, पतिंगे झार जीवजन्तु उत्पन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः २

तदेतन्मूर्त्ते यदन्यद्वायोश्चान्तरिक्षाचैतन्मर्त्यमेतत्स्थितमेतत्सत्तर्स्यै-तस्य मूर्त्तस्यैतस्य मर्त्यस्यैतस्य स्थितस्यैतस्य सत एव रसो य एव तपति सतो होष रसः ॥

पद्दच्छेदः ।

तत्, एतत् , मूर्त्तम् , यत् , अन्यत् , वायोः, च, अन्तरिक्षात् , च, एतन्, मर्त्यम्, एतत्, स्थितम्, एतत्, सत्, तस्य, एतस्य, मूर्त्तस्य, एतस्य, मर्त्यस्य, एतस्य, स्थितस्य, एतस्य, सतः, एपः, रसः, यः, एषः, तपति, सतः, हि, एषः, रसः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः | ऋन्वयः 🕟

पदार्थाः

यत्≕जो वायोः=वायु से च=श्रीर **ग्रन्तरिक्षात्=श्राकाश** से श्चान्यत्=भिन्न तेज जल पृथ्वीहै तत्=वही एतत्=यह मुर्त्तम्=मूर्त्तिमान् है एतत्=यही मर्त्यम्=मरणधर्मी है . एतत्=यही स्थितम्=स्थायी है एतत्=यही सत्≕व्यक्त हे तस्य=तिस एतस्य=इस

मूर्त्तस्य=मृत्तिमान् का

एतस्य=इस मर्त्यस्य=मरणधर्मी का एतस्य=इस स्थितस्य=स्थायी का एतस्य=इस सतः=ध्यक्त का एषः⇒यह रसः=सार है यः=जो एषः=यह सूर्य तपति=प्रकाशता है हि=न्यों कि एषः=यह सतः=पृथ्वी जल श्रीर स्राग्निका रसः=सार है

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! वायु झौर झाकाश से पृथक् जो तेज, जल, पृथ्वी हैं वे मूर्तिमान्, मरगाधर्मी, झस्थायी, व्यक्त यानी रूपवाले कहे जाते हैं, तिनका जो सार है वह यही सूर्य है, जो सामने प्रकाश करता है।। २।।

मन्त्रः ३

अथापूर्त वायुश्चान्ति । चैतदमृतमेतयदेतत्त्यं तस्यैतस्यामूर्त्त-स्यैतस्यामृतस्यैतस्य यत एतस्य त्यस्यैप रसो य एप एतिस्मिन्य-एडले पुरुषस्त्यस्य क्षेप रस इत्यधिदैवतम् ॥

पद्च्बेदः ।

अथ, अमूर्त्तम्, वायुः, च, अन्तिरिक्षम्, च, एतत्, अमृतम्, एनन्, यन्, एतत्, त्यम्, तस्य, एतस्य, अमूर्त्तस्य, एतस्य, अमृतस्य, एतस्य, यतः, एतस्य, त्यस्य, एषः, रसः, यः, एषः, एतस्मिन्, मगडले, पुरुषः, त्यस्य, हि, एषः, रसः, इति, अधिदैवतम् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्राच्यः प्रद्राधाः
श्रथ=श्रव
श्रम् न्त्रम्=श्रक्ष का समूर्तिमान् रूपः
+ उच्यते=कद्दाजाता है

एतत्=यद्द
बायुः=वायु
ख=सोर
श्रम्तरिक्षम्=श्राकाश
श्रमृतम्=श्रमर धमेवाले हैं

एतत्=यद्द दोनों
यत्=वलने फिरने वाले हैं

एतत्=यद्द दोनों
त्यत्=वकने फिरने वाले हैं

एतत्=यद्द दोनों
त्यत्=वकने फिरने वाले हैं

एतत्=यद्द दोनों
त्यत्=वकने किरने वाले हैं

एतस्=वहने
सम्बन्धक हैं

तस्य=तिस

एनस्य=इस

श्रम् न्तर्य=सम्तिमान् का

एतस्य=इस झसृतस्य=झमर धर्मवाले का एतस्य=इस यतः=चलने फिरने वाले का एतस्य=इस त्यस्य=झन्यक्र का यः=जो एषः=यह रसः=सार है + सः=वही एतस्मिन्=इस सूर्य मगडले=मगडक में एषः=यह पुरुषः=पुरुष है हि=क्योंकि एषः=यह पुरुष त्यस्य=अन्यक्रकाही रसः=सार है इति=यह द्यभिदेवतम्=देवतासम्बन्धी विज्ञान है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! अब इस मन्त्र में ब्रह्म के अप्रमूर्तिमान रूप को कहते हैं. पांच महाभूतों में से तीन यानी तेज, जल, पृथ्वी मूर्तिमान हैं, जिनका व्याख्यान पहिले मन्त्र में हो चुका है, और हो यानी वायु ओर आकाश अमूर्तिमान हैं, वानी उनकी अपेक्षा ये दोनों अमरधर्मी हैं, चलने फिरने वाले हैं, और अव्यक्त हैं, यानी निराकार हैं, इन दोनों का सार सूर्यस्थ पुरुष है, यह देवतासम्बन्धी उपदेश है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अथाध्यात्मिमदमेव मूर्ज यदन्यत्माणाच यश्चायमन्तरात्म-श्नाकाश एतन्मर्त्यमेतित्स्थतमेतत्सत्तस्यैतस्य मूर्जस्यैतस्य मर्त्यस्यै-तस्य स्थितस्यैतस्य सत एष रसो यचक्षः सतो ह्येष रसः ॥

पदच्छेदः ।

आथ, अध्यात्मम्, इदम्, एव, मूर्त्तम्, यत्, व्यन्यत्, प्रागात्, च, यः, च, अयम्, अन्तरात्मन्, आकाशः, एतत्, मर्त्यम्, एतत्, स्थितम्, एतत्, सत्, तस्य, एतस्य, मूर्त्तस्य, एतस्य, मर्त्यस्य, एतस्य, स्थितस्य, एतस्य, सतः, एषः, रसः, यत्, चक्षुः, सतः, हि, एषः, रसः ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

अथ=अब
अध्यात्मम्=शरीरसम्बन्धी
+ ज्ञानम्=ज्ञान
+ उच्यते=कहा जाता है
यत्=जो
आणात्=वायु से
अन्यत्=भिन्न है
च=कार

श्चयम्=यह श्चन्तरात्मन्=शरीर के ह 'बर श्चाकाशः=श्चाकाश है + तस्म।त्=उससे एव=भी + यः=जो

यः≕जो

+ भिन्नः=ष्टथक् है

इस्म्=वही

+ पतत्=यह

मूर्नम्=मूर्निमान् है

पतत्=वही

मर्यम्=मर्याधर्मी है

पतत्=वही

स्थितम्=स्थायी है

पतत्=वही

स्थान्=वही

स्थान्=वही

सत्=वही

सत्=वही

पतस्य=इस

मूर्नस्य=मूर्गिमान् का

पतस्य=इस

मर्यस्य=सस

प्तस्य=इल स्थितस्य=स्थाधी का प्तस्य=इल स्रतः=ड्यक्र का यत्=जो प्षः=यइ रसः=सार है + तत्=वही स्थुः=नेत्र है हि=क्सेंकि प्षः=यह नेत्र स्रतः=स्यक्ष का यानी स्रिन, जल सीर पृथ्यी का

भावार्थ ।

हे सौन्य ! आव शारी रसम्बन्धी उपदेश कहा जाता है, जो बाबु आर वायु के विकार से भिन्न है, जो शारी रस्थ आकास और आकास के विकार से भिन्न वस्तु है, यानी जो आग्नि, जल, पृथिवी हैं, वही मूर्तिमान् है, वही मरसाधमी है, वही स्थायी है, वही व्यक्त है, तिसी मूर्तिमान् का, तिसी मरसाधमी का, तिसी स्थायी का, और तिसी व्यक्त का जो सार है वही नेत्र है।। ४।।

मन्त्रः ५

अयामूर्तं पाणरच यरचायमन्तरात्मकाकाश एतदम्तमेतचदेतस्यं तस्येतस्यामूर्चस्येतस्यामृतस्येतस्य बत एतस्य त्यस्येष रस्ये योऽयं दक्षिणेऽक्षम्युरुषस्त्यस्य ग्रेष रसः ॥

पवृच्छेदः ।

अथ, अमूर्तम, प्रास्यः, च, यः, च, अयम्, अन्तरात्मन्, आकाराः, एतत्, अमृतम्, एतत्, यद्, एतत्, त्यम्, तस्य, पतस्य,

अमूर्त्तस्य, एतस्य, श्रमृतस्य, एतस्य, यतः, एनस्य, त्यस्य, एषः, रसः, यः, श्रायम्, दक्षिणे, श्राक्षन् , पुरुषः, त्यस्य, हि, एवः, रसः ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः

ग्रान्सयः

श्रध =श्रव श्रमृत्तम्=श्रमृत्तं के बारे में + उच्यते=उपदेश किया जाता है यः-च=जो ग्रयम्-च=^{यह} अन्तरात्मन्=हृदय के भीतर आकाशः=ग्राकाश है + च=ग्रीर + यः=जो प्राग्ाः=प्राग है + च= { श्रीर जितने प्राण श्रीर प्तत्=वही श्रमृतम्=श्रमरधर्मी है पतत्=वही यत्=गमनशील है एतत्=यही

त्यम्=अध्यक्त है

तस्य=उसी

ग्रमूर्तस्य=ग्रमूर्तिमान् का पनस्य } =इस श्रमरथर्मी का श्रमृतस्य } प्तस्य-यतः=इस चलनशील का पतस्य=इस त्यस्य=श्रव्यक्र का यः=जो. एषः≕यह रसः=सार है श्रयम्=यही दक्षिगा=दहिने

पतस्य=**इस**

श्रक्षन्=नेत्र में पुरुषः=पुरुष है . त्यस्य={ तिस श्रव्यक्रका यानी त्यस्य= { श्राकाश श्रीर वायुका हि=ही एषः=यह नेत्रस्थ पुरुष रसः=सार इं

भाषार्थ ।

हे सीम्य ! स्त्रव झामूर्त्त जो पदार्थ है उस विषय का उपदेश किया जाता है, जो हृदय के भीतर आकाश है, और जो शरीरस्थ प्राण्य है, झौर जितने प्रारा झौर झाकारा के भेद हैं, वही यह झमरघर्मी है, वही गमनशीकवाला है, वही आव्यक्त है, उसी आमूर्तिमान् का, उसी अप्रसंघर्मी का, उसी चलन शीलवाले का, उसी अव्यक्त का जो सार है, वही दहिने नेत्र में पुरुष है, आधवा दिहने नेत्रस्थ पुरुष आकाश बायुका सार है।। ४।।

मन्त्रः ६

तस्य हैतस्य पुरुषस्य रूपं यथा महारजनं वासो यथा पाएडा-विकं यथेन्द्रगोपो यथाग्न्यिर्चिर्यथा पुग्रहरीकं यथा सकृद्विग्रुच्छं सकृद्विग्रुचेव ह वा श्रस्य श्रीर्भवति य एवं वेदाथात आदेशो नेति नेति न ग्रेतस्मादिति नेत्यन्यत्परमस्त्यथ नामधेयछं सत्यस्य सत्य-मिति प्राणा वै सत्यं तेषामेष सत्यम् ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, पुरुषस्य, रूपम्, यथा, महारजनम्, वासः, यथा, पागडु, आविकम्, यथा, इन्द्रगोपः, यथा, अग्न्यचिः, यथा, पुण्डरीकम्, यथा, सकृत्, विद्युत्, तम्, सकृत्, विद्युत्ता, इत, इ, तै, अस्य, श्रीः, भवति, यः, एवम्, वेद, अथ, अतः, आदेशः, न, इति, न, इति, न, हि, एतस्मात्, इति, न, इति, अग्न्यत्, परम्, अस्ति, अथ, नामधेयम्, सत्यस्य, सत्यम्, इति, प्रासाः, वै, सत्यम्, तेषाम्, एषः, सत्यम् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ अध=अव तस्य=उस एतस्य=इस ह=मसिद्ध पुरुषस्य=जीवासमा के क्रपम्=रूप को + आह=कहते हैं + कहा=कभी + अस्य=इस जीवासमा का + स्यक्रपम्=स्वरूप महारजनम्=कुसुंभ के फूकों से रंगा हुआ वासः यथा=वक्ष की तरह + भवति=डोता है + कदा=कभी पागुडु=कुछ रवेत यथा झाविकम्=भेदी के रोम की तरह + भवति=होता है

+ कदा=कभी यथा इन्द्रगोपः≔वीरबहूटी कीट के समान

+ भवति=होती है

+ कदा=कभी

यथा अञ्चर्विः=प्रांग्निकी ज्वासा की

तरह

+ भवति=होता हैं + कदा=क्मी

+ प्रार्भ्यते=भारम्भ करते हैं यथा पुराहः } =श्वेत कमल की तरह रीकम् हि=क्योंकि + भवति=होता है एतस्मात्=इस + कटा=कभी + उपदेशात्=उपदेशसे यथा सकृत् । पुकायक विगुत् के विगुत्तम् (प्रकाश की तरह +म्रन्योपदेशः=श्रीर उपदेश न=श्रेष्ठ नहीं है होता है यानी इन + हि=क्योंकि श्चरमात्=इस परमात्मा से श्चन्यत्=दूसरा परम्=डत्कृष्टदेव नेति श्रस्ति=नहीं है + यः=जो + एतस्य=इस जीवात्मा को ग्रथ=धब नामधयम्=बहा के नाम को एवम्=जपर कहे हुये प्रकार + आह=कहते हैं चेद≕जानता है तस्य=उसकी + तस्य=उसका श्रीः=संपत्ति + नाम=नाम सत्यस्य=सत्य का सकृत्वियुत्ता } = { एकबारगी विद्युत् के प्रकाशके समान चमकने वाली सत्यम्⇒सत्य इति=ऐसाई यानी परम-सत्यहै ह वै=निस्संदेह प्राणाः=प्राणीं का भवति=होती है + नाम=नाम व=निरचय करके अथ=अव + बालाके=हे बालाके सत्यम्=सस्य है श्रतः=यहां से तेषाम्=उन प्राचीं को आदेश:=परमात्मा के विषय + एव=भी · सें उपदेश एषः=वह परमात्मा नेति नेति=न इति न इति करके सत्वम्=सत्ता देनेवाला है भाषार्थ ।

हे सौम्य! अन इस जीवात्मा के स्वरूप को अनेक उपमाओं द्वारा वर्णान करते हैं, हे सौम्य! कभी इस जीवात्मा का स्वरूप कुसुंभके फूजों से रँगे हुये कपड़ों की तरह होजाता है, कभी किंचित् श्वेत मेड़ के रोम की तरह होजाता है, कभी इन्द्रगोपनामक कीट (बीरबहूटी) की तरह होजाता है, कभी अभिन की ज्वाला की तरह उसका रूप होजाता है, कभी श्वेतकमल की तरह उसका रूप होजाता है, कभी विद्युत् के प्रकाश की तरह इसका रूप बन जाता है, यानी जैसी इस की उपाधि होती है वैसेही यह आपत्मा भी देख पड़ता है, हे प्रिय-दर्शन ! जो पुरुष इस रहस्य का जाननेवाला है उसकी संपूर्ण संपत्ति विद्युत् के प्रकाश की तरह चमकनेवाली होती है, हे बालाके ! जो कुछ अप्रभी तक कहा गया है, वह प्रकृति आरोर जीव के विषय में कहा गया है, श्रव परमात्मा के विषय में उपदेश प्रारम्भ करते हैं, हे ब्राह्मगा ! उस परमात्मा का उपदेश नेति नेति शब्दों से होता है, क्योंकि इस उपदेश से बढकर दसरा कोई उपदेश नहीं है, क्योंकि इस परमात्मा से बढकर न कोई उत्क्रष्ट देव है, न कोई उसके समान है, श्रीर न कोई सामग्री उसके वर्गान के लिये है, इस लिये नेति नेति शब्द के द्वारा उसका उपदेश किया जाता है, हे बालाके ! जगत् के दो भाग हैं, एक मूर्तिमान्, और एक अप्रमृत्तिमान्, इन दोनों के लिये दो न-कार प्रयुक्त हैं, यानी मूर्तिमान वस्तु को देखकर शिष्य के प्रश्न करने पर कि यह ब्रह्म है ? गुरु कहता है-यह नहीं है, यह नहीं है, ज्यों ज्यों ब्रह्म बिषे शिष्य प्रश्न करता जाता है त्यों त्यों गुरु नेति नेति करके उत्तर देता जाता है, जब संपूर्ण मृत्तिमान विषय यानी श्राम्न, जल, पृथ्वी की सब वस्तुओं की समाप्ति होजाती है, श्रीर जब शिष्य श्चमार्त्तिमान् यानी वायु श्चीर् श्चाकाश के कार्यों के विषय में प्रश्न करता है तब गुरु फिर्भी नेति नेनि शब्द से उसको उपदेश करता जाता है, जहां शिष्य का प्रश्न समाप्त होजाता है, वहां दोनों यानी शिष्य और गुरु चुप चाप होजाते हैं, वहीं पर शिष्य को ब्रह्म की तस्फ निर्देश करके गुरु बताता है कि यह इहा है, ब्रॉर फिर वहां से ही ऊपर को यानी कार्या के कार्य को बताता चलां आता है कि यह

भी बहा है, यह भी बहा है, क्योंकि कार्य में कारण अनुगत रहता है, अथवा कार्य कारण एकरूप होता है, सब संसार भर बहारूप ही है, ऐसा उपदेश पाने के बाद शिष्य शान्त होकर महाआनन्द को प्राप्त होजाता है, आर फिर शिष्यत्व और गुरुत्व भाव दोनों का नष्ट होजाता है, हे बालाके ! इस ब्रह्म का नाम सत्य का सत्य है, जो बाह्म, आर अध्यन्तर प्राण्य है, उसका नाम भी सत्य है, उन प्राण्यों का भी जो प्रेरक हो यानी सत्ता देनेवाला हो, वही त्रिकालाबाध सिचदानन्द स्वरूप है, यही उसका नाम है ॥ ह ॥

इति तृतीयं ब्राह्मग्राम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं ब्राह्मग्म् ।

मैत्रेयीति होवाच याज्ञवल्क्य उन्नास्यन्वा ऋरेऽहमस्मात्स्थाना-दस्मि हन्त तेऽनया कात्यायन्याऽन्तं करवाग्गीति ॥

पदच्छेदः ।

मेंत्रेयि, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, उद्यास्यन्, वे, आहम्, आस्मात्, स्थानात्, आस्मि, हन्त्, ते, आनया, कात्यायन्या, आन्तम्, करवाणि, इति ॥

श्रन्वयः पदार्थाः | श्रन्वयः पदार्थाः | सेत्रेयि=हे प्रियमैत्रेथि स्थानात्=ग्रहरथ श्राश्रम से हित=ऐसा सम्बोधन करके वै=िनरचय करके वे=िनरचय करके विचित्रस्यः च्याज्ञवरूप | अपरको जानेवाला उद्यास्यन् | हे यानी वानप्र-श्राध्या | श्राह्म | श्राह्म | श्राह्म | श्राह्म | श्राह्म | श्राह्म | स्थाश्रमको धारण करनेवाला हूं | स्याह्म स्था स्था करनेवाला हूं | स्थान्त हो तो

कानया≔इस निकट वैठी हुई कात्यायन्या≔कात्यायनी के साथ ते≔तम्हारा

करवाशि इति=

होनों के मध्य धन को बराबर बांट तूं ताकि एक दूसरेसे कोई सम्बन्ध म

अन्तम्=सम्बन्ध को पृथक्

भावार्थ।

हे सौम्य! एक समय राजा जनक और याज्ञवल्क्य ऋषि परस्वर बातचीत कर रहे थे, राजा जनक ने याज्ञवल्क्य महाराज से कहा कि हे प्रभो! मैंने वैराग्य के स्वरूप को नहीं देखां है, उसका कैसा स्वरूप होता है, मैं देखना चाहता हूं, याज्ञवल्क्य महाराजने कहा कि कल मैं तुमको वैराग्य का स्वरूप दिखादूंगा. ऐसा कहकर अपने घर चले आये, और अपनी लघुपल्ली मेंत्रेयी से कहा हे प्रियमेत्रेयि! मैं इस गृहस्थाश्रम को त्यागना चाहता हूं, और वानप्रस्थाश्रम को प्रहर्ण करनेवाला होना चाहता हूं, यदि तुम्हारी अनुमित हो तो तुम्हारे और कात्यायनी के मध्य में द्रव्यको वरावर बरावर वांट दूं॥ १॥

मन्त्रः २

सा होवाच मैत्रेयी यस्नु म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्कथं तेनामृता स्यामिति नेति होवाच याज्ञवल्क्यो यथैवोप-करणवतां जीवितं तथैव ते जीवित्रष्ठ स्यादमृतत्वस्य तु नाऽऽशा-ऽस्ति वित्तेनेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उबाच, मेंत्रेयी, यत्, तु, मे, इयम्, भगोः, सर्वा, पृथिवी, विसेन, पूर्णा, स्यात्, कथम्, तेन, अमृता, स्वाम्, इति, न, इति, ह, उवाच, याज्ञवस्क्यः, यथा, एव, उपकररावताम्, जीवितम्, तथा, एव, ते, जीवितम्, स्यात्, अमृतत्वस्य, तु, न, आशा, अस्ति, विसेन, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्रम्बरः द्धति=ऐसा + इशिज्यह + शुरुवा=युन कर + शुरवा=सुन कर ह=प्रसिद्ध सा=वह ह=प्रसिद्ध याश्रवल्क्यः=याश्रवस्क्य मैत्रेयी=मैत्रेयी उवाध=बोले कि न इति=ऐसा नहीं उवाच=बोली कि भगोः=हे भगवन् ! यथा=जैसे एध≕निश्चय करके नु=में पूछती हूं कि यत्=जो उपकरण्यताम्=उत्तम सुख साधन वालों को इयम्=यह सर्वा=सब जीवितम्≕जीवन + भवति=होता है पृथिवी=पृथिवी तथैव=तैसही वित्तेन=धन करके पूर्णा=पूर्य ते=तेस भी जीवितम्=जीवन मे=मेरी ही स्यात्=होजाय तो स्यात्=होगा

कथम्=किसी प्रकार तन=उस धन करके + श्रहम्=भैं अमृता=मुक्त

स्याभ्=होजाऊंगी

वित्तेन=धन करके न ऋस्ति इति=कभी नहीं होसकती है

आशा=भाशा

तु=परन्तु अमृतस्य=मुक्तिकी

भावार्थ।

यह सुनकर मेत्रियी बोली कि हे प्रभो, हे भगवन् ! में पूछती हूं आप क्रिया करके सुम्मको उत्तर दीजिये. हे प्रभो ! मान लीजिये कि यह सब पृथ्वी धन करके पूर्या है, यदि दैवइच्छा से मेरी होजाय तो क्या उस धन करके में तापत्रय से छूट जाऊंगी, यानी सुक्त होजाऊंगी, याझवल्क्य महाराज ने जवाब दिया कि ऐसा तो नहीं होसकता है, हाँ जैसे उत्तम सुखसाधनवालों का जीवन होता है वैसेही तुम्हारा भी जीवन हो जायगा, परन्तु सुक्ति की आशा धन करके नहीं हो सकती है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच मैत्रेयी येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्यो बदेव भगवान्वेद तदेव मे बूहीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैंत्रेयी, येन, ऋहम्, न, आमृता, स्याम्, फिन्, आहम्, तेन, कुर्याम्, यस्, एव, मगवान्, वेद, बत्, एव, मे, ब्रहि, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रम्बयः

पकार्थी:

+ तद्।=तब
सा=वह
ह=प्रसिद्ध
मैत्रेयी=भैत्रेयी
उवाच=वोनी कि
येच=जिस घम करके
श्रहम्=मैं
अमृता=मुक
न=नहीं
स्याम्=होसकी हूं
तेन=उस धम से

शहम्व्यें
किम्व्या
कुषाम्वात वराक्यां
यत्=जिस सावय की
भगवान्=चाप
यस्वित्रस्य करके
वेद्=गायते हो
तत्-यस्व=दसी सावय को
मे=मेरी मुक्तिके विके
मृहि-इति=कहिबे

भावार्थ।

मैत्रेयी बोकी कि हे भगवन् ! जिस धन करके मैं ग्रुक्त नहीं हो सकती हूं, उस धन से मैं क्या जाभ उठाउंगी ? जिस साधन को झाप जानते हैं, उस साधन को मेरी मुक्ति के जिये बताइसे, और जिस श्रेष्ठ धनकी आप जिसे जाते हैं उसमें मेरे को भी भाग दी बिये ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

स होवाच याज्ञवल्क्यः भिया बतारे नः सती मियं भाषस प्रज्ञास्त्व व्याख्यास्यामि ते व्याचक्षाग्णस्य तु मे निदिष्णासस्वेति ॥

पदच्छेदः।

सः, इ, ववाच, याज्ञवस्त्यः, प्रिया, वत, बारे, सः, सबी, प्रिवम्,

भाषसे, एहि, झास्स्व, व्याख्यास्यामि, ते, व्याचक्षाण्स्य, तु, मे, निविध्यासस्व, इति ॥

श्रन्ययः

पदार्थाः भ्रम्बयः

पदार्थाः

+इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर

सः=वह ह=प्रसिद्ध

याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य उवाच⇒वोले कि द्यरे=हे प्रियमेत्रेयि !

> नः=त् भेरी त्रिया=प्यारी सर्ती=पतित्रता की है

+ त्वम्>त् धत=प्रेमके साथ प्रियम्=प्रिय भाषसे=बोजती है एहि=ब्रावो स्रास्स्व=बैठो

व्याख्यास्यामि=तेरे बिये मुक्ति के साधन को कहंगा

तु=पर

व्याचक्षाणस्य=व्याख्यान करते हुये :

मे=मेरी + वाक्यानि=बार्ती पर निदिध्या- } =ध्यान करके सुनो सस्य इति

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! ऐसा सुनकर वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि है मैंत्रेथि ! तू मेरी पतिव्रता स्त्री है, तू सदा मेरे साथ प्रियभाषणा करती रही है, झौर झब भी प्रिय बोलती है, हे प्यारी ! उठो, एकान्त बिषे चलो, तेरी मुक्ति के लिथे मुक्ति के साधन को कहूंगा, तू मेरी बातों पर ध्यान देकर सुन, तेरा कल्याला झवश्य होगा ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच न वा अरे पत्युः कामाय पतिः पियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः पियो भवति। न वा अरे जायाये कामाय जाया पिया भवत्यात्मनस्तु कामाय जाया पिया भवति। न वा अरे पुत्राणां कामाय पुत्राः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पुत्राः पिया भवन्ति। कामाय पुत्राः पिया भवन्ति। न वा अरे वित्तस्य कामाय वित्तं पियं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं वित्तं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं विश्वं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं विश्वं भवत्यात्मनस्तु कामाय अर्थे भवत्यात्मनस्तु

कामाय श्रम्भ मियं भवति । न वा अरे सम्रस्य कामाय क्षन्नं प्रियं भव-त्यात्मनस्तु कामाय क्षन्नं प्रियं भवति । न वा अरे लोकानां कामाय लोकाः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय लोकाः प्रिया भवन्ति । न वा अरे देवानां कामाय देवाः प्रिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय देवाः प्रिया भवन्ति । न वा अरे भूतानां कामाय भूतानि प्रियािण भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि प्रियािण भवन्ति । न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वे प्रियं भवत्यात्मनस्तु कामाय सर्वे प्रियं भवति । आत्मा वा अरे द्रष्टुच्यः श्रोतच्यो मन्तव्यो निद्ध्यासितच्यो मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनद्ध सर्वे विदितम् ॥

पदच्छेदः ।

सः, इ, उवाच, न, वै, अरे, पत्युः, कामाय, पतिः, प्रियः, भवति, श्चारमनः, तु, कामाय, पतिः, प्रियः, भवति, न, वै, श्चरे, जायायै, कामाय, जाया, विया, भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, जाया, प्रिया, भवति, न, वै, श्ररे, पुत्राशाम्, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवन्ति, श्रात्मनः, तु, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, श्ररे, वित्तस्य, कामाय, विक्तम्, प्रियम्, भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवति, न, वै, धारे, ब्रह्मगाः, कामाय, ब्रह्म, प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, ब्रह्म, प्रियम्, भवति, न, वै, अरे, श्रत्त्रस्य, कामाय, श्रत्त्रम्, प्रियम्, भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, क्षत्त्रम्, प्रियम्, भवति, न, वै, श्ररे, कोकानाम्, कामाय, लोकाः, प्रियाः, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, लोकाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, झरे, देवानाम्, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, अरे, भूतानाम्, कामाय, भूतानि, प्रियागि, भवन्ति, श्रात्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, न, वे, ध्रोरे, सर्वस्य, कामाय, सर्वम् , प्रियम् , भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मा, वै, अरे, द्रष्टन्यः, श्रोतब्यः, मन्तव्यः, निद्धियासितव्यः, मैत्रेगी, श्रास्मनः, वै,

आरे, दर्शनेन, श्रवगोन, मत्या, विज्ञानेन, इदम्, सर्वम्, विद्वम् ॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः भवति=होती है सः ह=वह प्रसिद्ध याज्ञवहत्रय डवाच≔बोबा कि द्यारे=हे त्रियमैत्रेषि ! ऋरे=हे प्रियमेत्रेयि ! पुत्राणाम्=पुत्रों की कामाय=कामना के विवे पत्युः=पति की कामाय=कामना के खिये पुत्राः=पुत्र प्रिया:=प्यारे पतिः=पति + भार्याम्= भार्या को न भवन्ति=नहीं होते हैं प्रिय:=ध्यारा त्=िकन्तु वै=निश्चय करके न भवति=वडीं होता है ब्रात्मनः=अपने यानी माता तु=किन्तु बै=निश्चय करके पिता के सात्मा की **ग्रात्मनः=चपने** जीवात्मा की कामाय=कामना के बिये कामाय=कामना के जिये पुत्राः=बदके पतिः=पति प्रियाः≔प्यारे भवन्ति=होते हैं + भार्याम्=भार्या को झर=हे प्रियमेत्रेयि ! प्रिय:=प्यारा भवति=होता है वित्तस्य=धनकी द्योर=हे प्रियमैत्रेयि ! कामाय=कामना के क्षिये जायायै=जाया की वित्तम्=धन प्रियम्=प्यारा कामाय=कामना के खिये न भवति=नहीं होता है जाया=घी तु=किन्तु प्रिया=प्यारी वै=निश्चय करके न भवति=नहीं होती है आत्मनः=अपने यानी धनीकी तु=किन्तु वै=निश्चय करके चात्मा की कामाय=कामना के विये ब्यात्मनः=श्रंपने बानी पति के

विसम्≕धन कामाय=कामना के विषे प्रियम्=प्यारा भवति=होता है जाया=श्री आरे=के जियमेन्नेव ! त्रिया=प्वारी

चात्मा की

अहाग्ः≔नाइम्स की कामाय≔कामना के विये ब्रह्म=ब्राह्मय प्रियम्=प्यारा न भवति=नहीं होता है तु=किन्त् वै≕निश्चय करके मात्मनः=भपने यागी यजमान के ज्ञातमा की कामाय=कामना के लिये ब्रह्म=बाह्यग त्रियम्=प्यारा भवति=होता है श्चरे=हे प्रियमेन्नेथि ! अत्त्रस्य=क्षत्रिय की कामाय=कामना के बिये क्षत्त्रम्=क्षत्रिय प्रियम्=प्यारा न भवति=नहीं होता है तु=किन्त बै=निश्चय करके आत्मनः=अपने यानी पालनीय की प्रात्मा की कामाथ=कामना के विये **भ्रत्त्रम्=क्षत्रिय** प्रियम्=प्यारा भवति=होता है अरे=हे प्रियमेत्रेषि ! लोकानाम्=सोगों की कामाय=कामना के बिये स्रोकाः≔स्रोग प्रिया:=प्यारे

न भवति=नहीं होते हैं तु=किन्दु वै=निश्चय करके आत्मनः=अपने यानी धर्यी की धास्मा की कामाय=कांमना के बिवे लोकाः=सोग वियाः=प्यारे भवास्त=होते हैं ह्मरे=हे प्रियमैत्रेबि ! देवानाम्=देवों की कामाय=कामना के विये देवाः=देव प्रियाः=प्यारे न भवन्ति=नहीं होते हैं तु=किन्तु वै=निरचय करके श्चातमनः=भपने वानी उपासक की बात्मा की • कामाय=कामना के बिये देवाः=देवता प्रियाः=प्रिय भवन्ति=होते हैं अरे=हे प्रियमैत्रेयि ! भूतानाम्=प्राणियों के कामाय=कामना के खिये भूतानि=पाणी व्रियाशि=प्यारे न भवन्ति=नहीं होते हैं तु=किन्त श्चे=निरचय करके

द्यात्मतः=चपने यानी प्राची की भारमा की कामाय=कामना के विये भतानि=प्राची प्रियाशि=प्यारे भवान्त=होते हैं श्चरे≕हे प्रियमैत्रेयि ! सर्वस्य=संबद्धी कामाय=कामना के लिये सर्वमु≔सब प्रियम्=प्रिय न भवति=नहीं होता है तू=किन्तु श्चातमनः=श्चपने यानी सब लोगों की श्रात्मा की कामाय=कामना के लिये सर्वम्=सब ब्रियम्=त्रिय भवति=होता है द्वारे=हे त्रियमैत्रेवि !

+ तस्मात्≖इस किये

श्वारमाः अभ्याना आत्मा

द्रष्टव्यः चर्णन के योग्य है

श्वोतव्यः च्यदी मुरु और शास्त्र करके सुनने योग्य है

मन्तव्यः चित्रास्त्र करने योग्य है

विदिध्यासि- } =िनश्चय करने योग्य है

श्चरे मैत्रेयि=हे प्रियमेत्रेषि !
श्चारमनः=श्चारमा के
दर्शनेन=दर्शन से
श्रवणंग=श्चनने से
मत्या=समभने से
विश्वानेन=जानने से
इदम्=यह
सर्वम्=सब
विदितम्=जाना हुआ
वै=श्चवस्य
+ भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! मेत्रेयी देवी ने अपने पित याज्ञवल्क्य महाराज से सिवनय प्रार्थना किया कि जिस साधन करके आप अपने आत्मा सम्बन्धी ज्ञानरूपी धन को अपने साथ जिये जाते हैं उसमें मुमको संमिलित की जिये, यह मुनकर याज्ञवल्क्य महाराज बड़े प्रसन्न हुये, और बोले हे प्रियमैत्रेयि ! पित की कामना के जिये पित भार्या को प्यारा नहीं होता है, किन्तु निज आत्मा की कामना के जिये भार्या को पात प्यारा होता है, हे प्रियमैत्रेयि ! जाया की कामना से जाया पित प्यारा होता है, हे प्रियमैत्रेयि ! जाया की कामना से जाया पित को प्यारा नहीं होती है, किन्तु पित के

निज आत्मा की कामना के लिये जाया प्रिय होती है. हे प्रियमैत्रेथि ! पत्रों की कामना के लिये पत्र पिता को प्यारे नहीं होते हैं. किन्त माना पिता की कामना के जिये जड़के जड़की प्यारे होते हैं. है प्रिय-मैनेयि! धनकी कामना के जिये धन धनी को प्यारा नहीं होता है. किन्त धनी की निज आत्मा की कामना के लिये धन प्यारा होता है. हे प्रियमेत्रेयि ! ब्राह्मगा की कामना के लिये ब्राह्मगा यजमान को प्यारा नहीं होता है, किन्तु यजमान के आत्मा की कामना के लिये ब्राह्मता प्यारा होता है. हे प्रियमैत्रेयि ! क्षत्रिय की कामना के जिये क्षत्रिय स्वामी को प्यारा नहीं होता है, किन्तु पालनीय के आत्मा की कामना के लिये क्षत्रिय प्यारा होता है. हे प्रियमैत्रेयि ! लोगों की कामना के लिये लोग प्यारे नहीं होते हैं, किन्तु अर्थी की कामना के क्षिये लोग प्यारे होते हैं. हे प्रियमैत्रेयि ! देवों की कामना के जिये देव उपासकों को प्यारे नहीं होते हैं. किन्तु उपासक की कामना के लिये देवता उपासक को प्यारे होते हैं. हे प्रियमैत्रेयि ! प्राशायों की कामना के लिये प्रांगी को प्रांगी प्यारे नहीं होते हैं. किन्तु प्रांगी के आतमा की कामना के जिये प्रांगी प्यारे होते हैं. हे प्रियमैत्रेयि ! सब की कामना के लिये सबको सब प्यारे नहीं होते. हैं, किन्त सबजोगों की आतमा की कामना के लिये सब प्रिय होते हैं. इस लिये, है प्रिय-मैत्रेयि ! यह अपना आत्माही दर्शन के योग्य है. यही गुरु और शास्त्र करके सनने योग्य है. यही विचारने योग्य है, यही निश्चय करने योग्य है. हे प्रियमैत्रेयि ! इस आतमा के दर्शन से, सुनने से, सममते से. जानने से यावत कुछ ब्रह्मागड बिषे है सब जाना जाता है. हे प्रियमैत्रेयि ! अपने आत्मा को जानो, इसीसे तुम्हारा कल्यागा होगा. वही सत्र वस्त प्रिय है, जिससे इस झात्मा को झानन्द मिलता है क्योंकि यह आत्मा आनन्दस्वरूप है इससे अतिरिक्ष कहीं आनन्द नहीं है, जो कुछ है वह आत्माही है।। १॥

मन्त्रः ६

श्रस तं परादाचोऽन्यत्राऽऽत्मनो श्रस वेद सत्रं तं परादाचो-ऽन्यत्राऽऽत्मनः सत्रं वेद लोकास्तं परादुर्योऽन्यत्राऽऽत्मनोलोकान्वेद देवास्तं परादुर्योऽन्यत्राऽऽत्मनो देवान्वेद भृतानि तं परादुर्योऽन्य-त्राऽऽत्मनो भृतानि वेद सर्वं तं परादाचोऽन्यत्राऽऽत्मनः सर्वं वेदेदं श्रक्षेदं सत्रमिमे लोका इमे देवा इमानि भृतानीद्धं सर्वं यदयमात्मा ॥

पदच्छेदः ।

ब्रह्म, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, ब्रह्म, वेद, क्षञ्जम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, क्षञ्जम्, वेद, लोकाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, लोकान्, वेद, देवाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, देवात्, वेद, भूतानि, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूत्रानि, वेद, सर्वम्, ह्दम्, क्षञ्जम्, इमे, लोकाः, इमे, देवाः, इमानि, भूतानि, इदम्, सर्वम्, यत्, अयम्, आत्मा।

द्यान्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ब्रह्म=ब्रह्मत्व तम्=उस पुरुष को परादात्=त्याग देता है यः⇒जो ब्रात्मनः=ब्रात्मा से ब्रम्यत्र=प्रथक् ब्रह्म=ब्रह्मत्व को वेद=जानता है श्रृद्मम्=क्षत्रियस्य तम्=उस पुरुष को परादात्=त्याग देता है यः≕जो

श्रन्यश्र=ष्टथक् श्रन्नम्=श्रियत्व को वेद्=जानता है लोकाः=लोक तम्=उस पुरुष को परादुः=ऱ्याग देते हैं यः=जो श्रात्मनः=चाला से श्रन्यश्र=भिष्ठ स्रोकान्=लोकों को वेद्=जानता है देशाः=देवतालोग तम्=उस पुरुष को

परादुः=स्याग देते हैं यः=जो ब्रात्मनः=श्रात्मा से श्चन्यत्र=भिन्न देवान=देवों को वेद्=जानता है भृतानि=प्राणिमात्र तम्=उस पुरुष को परादुः≔त्याग देते हैं यः≔जो श्चात्मनः=प्रात्मा से श्चन्यत्र≐भित्र भूतानि=प्राणियों को वेत्=जानता है तम्=उसके। सर्वम्=सब परादात्≕याग देता है य:=जो आत्मनः=श्रास्मा से

ग्रस्यत्र=भिन्न सर्वम्=सबको वेद=जानता है इदम्=यह ब्रह्म=बाख्य इदम्=यह क्षत्रम्=क्षत्रिय इमे=ये लोकाः=सोक इमे=वे देघाः=देवता इमानि=वे भूतावि=प्राविमाक यस्=जो कुछ इदम्=यह सर्वम्=सब है श्रयम्=यह सब आत्मा=भारमाही है

भावार्थ ।

हे मैंत्रेयि ! ब्रह्मत्व उस पुरुष को त्याग देता है, जो आत्मा से पृथक् ब्रह्मत्व को जानता है. क्षत्रियत्व उस पुरुष को त्याग देता है, जो आत्मा से पृथक् क्षत्रियत्व को जानता है. शुलोक, अन्तरिक्षलोक, पृथिवीलोकादि उस पुरुष को त्याग देते हैं जो आत्मा से भिन्न उस लोकों को जानता है. सूर्य, चन्द्रमा, वरुषा, शिव आदि देवता उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपने जीवात्मा से इन देवों को पृथक् जानता है. सकल प्राणी उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपने जीवात्मा से इन सबको पृथक् जानता है. हे मैंत्रेयि ! मैं इस विषय में बहुत क्या कई इतनाही कहना बहुत है कि जो कुळ बहायद विषे है, हे मैत्रेयि !

वह उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपनी आत्मा से पृथक् उन सब को जानता है. हे मैत्रेयि ! ब्राह्मण्, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, लोकजोका-न्तर, देवता आसदि प्राशिएमात्र जो इन्छ है यह सब जीवात्माही है, इससे पृथक् कुछ नहीं है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

ၞ स यथा दुन्दुभेर्हन्यमानस्य न बाह्याञ्शब्दाञ्शक्नुयाद्व्रहणाय दुन्दुभेस्तु ग्रहरान दुन्दुभ्याघातस्य वा शब्दो गृहीतः॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, तुन्दुभेः, इन्यमानस्य, न, बाह्यान् , शब्दान् , शक्तुयात्, प्रहृत्ताय, दुन्दुभेः, तु, प्रहृत्तोन, दुन्दुभ्याघातस्य, वा, शब्दंः, गृहीतः ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः अन्वयः

+ अत्र=इस विषे सः≕प्रसिद्ध

+ द्यान्तः=स्यान्त

+ वदति=देते हैं कि यथा=जैसे

इन्यमानस्य=बजाये हुये हुन्दुभेः=नगारे के

बाह्यान्=बाहर निकले हुये शब्दान्=शब्दों को ग्रहणाय=पकड़ने के विये

+ जनः=कोई मनुष्य न=नहीं

शक्तुयात्=समर्थ होता है

तु=परन्तु

दुन्दुभेःप्रह्रोन=दुन्दुभि के पकड़

वा≕ग्रथवा (दुम्दुभि के बजाने दुन्दुभ्याघ) (दुन्दुमिक बजान

+ प्रहरोन) (जेने से

शब्द:=शब्द गृहीतः=गृहीत

+ भवति≔होता है

+ तद्भत्=उसी प्रकार

+ ऋत्मनः=चात्मा के ज्ञान से

+सर्वस्य झानम्=सबका ज्ञान

+ भवति=होता है

भावार्थ।

हे सीन्य! मैत्रेथी को दृष्टान्त देकर याज्ञवल्क्य महाराज समस्रातेहैं कि हे मेन्नेयि ! जीते बजाये हुये नगारे के बाहर निकले हुये शब्दों को कोई मनुष्य नहीं पकड़सक्ता है वैसेही झात्मा को कोई बाहर से पकड़ना चोह तो नहीं पकड़ सक्ता है, परन्तु जैसे दुन्दुभिके पकड़ कोने से आथवा दुन्दुभिके बजाने वाले को पकड़कोने से शब्द पकड़ा जा सक्ता है उसी प्रकार हे प्रियमेंत्रेयि ! आत्मा के समीप जो इन्द्रियसमूह हैं उनके ग्रोकने से आत्मा का ज्ञान होसक्ता है।। ७।।

मन्त्रः ८

स यथा शङ्कस्य ध्मायमानस्य न बाह्याञ्शब्दाञ्शक्तुयाद्व्रहणाय शङ्कस्य तु ब्रह्मेन शङ्कध्मस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, शङ्कस्य, ध्यायमानस्य, न, बाह्यान्, शब्दान्, शक्तु-यात्, प्रह्णाय, शङ्कस्य, तु, प्रह्णोन, शङ्कध्यस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ अत्र=इस विषे
सः=यह प्रसिद्ध
+ दृष्ठान्तः=रद्यान्त
+ वद्ति=कहते हैं
यथा=जैसे
स्मायमानस्य=वजते हुये
शह्यय=शंख के
बाह्यान्=वाहर निकले हुये
शब्दान्=वाहर निकले हुये
शब्दाय=वाहर निकले हुये
शब्दाय=वाहर निकले हुये
शब्दाय=वाहर निकले हुये
तु=परन्तु

शह्वस्य=शंस के प्रह्मोन=प्रहम से वा=प्रथवा

शक्क्ष्मस्य=शंख बजाने वाखे के

+ प्रह्रगोन=महण से शब्दः=शब्द का गृहीतः=प्रह्रण

+ भवति=होजाता है

+ तद्वत्=उसीप्रकार

+ भारमनः=भारमा के ज्ञानसे

+ सर्वस्य } =सबका ज्ञान ज्ञानम्

+ भवति≔होजाता है

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! याज्ञवल्क्य महाराज फिर दृष्टान्त देकर मैत्रेयी को समस्ताते हैं कि हे प्रियमैत्रेयि ! जैसे वजते हुये शंख के बाहर निकले हुये शब्दों को प्रहृता करने के किये कोई मनुष्य समर्थ नहीं होता है, सैसेही इस आत्मा से निकले हुये शास्त्र आदि के प्रहर्ण करने से आत्मा का प्रहर्ण नहीं होसका है. परन्तु शंख के प्रहर्ण करने से अथवा शंख के बजानेवाले के प्रहर्ण करने से शंख क शब्दका प्रहर्ण होजाता है, उसीतरह इन्द्रियादिकों के प्रहर्ण करलेने से उसके साथ जो आत्मा है उसका प्रहर्ण होता है। । ।।

मन्त्रः ६

स यथा विष्णाये वाद्यमानाये न बाह्याञ्शब्दाञ्शक्तुयाद्ग्रह-णाय वीषाये तु ग्रहणेन वीष्णावादस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, वीगाये, वाद्यमानाये, न, वाह्यान्, शब्दान्, शक्रुयात्, प्रहिताः ॥ प्रहिताः ।। प्रक्षायः पदार्थाः । प्रक्षायः पदार्थाः ।

+ प्रत्र=इस विषे
सः=प्रसिद्ध
+ दृष्टान्तः=दृष्टान्त
+ वद्गति=कहते हैं
यथा=जैसे
वाद्यमानाय=जनती दुई
विशाय=वीषा के
बाह्यान्=वाहर निकले हुथे
शब्दान्=शब्दों को
प्रह्णाथ=भवीपकार प्रह्ण
करने के विषे
+ जनः=कोई मनुष्य

न≕नहीं

तु=परन्तु
चीगाय=वीगा के
ग्रहणेन=प्रहण करने से
चा=प्रथवा
बीगाचादस्य=वीगा बजाने वाले के
+ प्रहणेन=प्रश्य करने से
ग्रह्दःगृहीतः=शब्द का प्रहण
+ भवति=होता है
+ तद्भत्=डसीतरह

शक्तुयात्=समर्थ होता है

+ गृहीतः≔गृक्षेत + भवति≔होता है

+ ऋ तमा=भारमा

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तीसरा टप्टान्त देकर मैत्रेयी को याज्ञवल्क्य महाराज समस्तात हैं कि हे मैत्रेयि ! जैसे बजती हुई बीन के बाहर निकले हुये शब्दों को भजीपकार प्रह्या करने के जिये कोई मनुष्य समर्थ नहीं होता है उसीप्रकार बाहर सुने सुनाये उपदेशों करके आत्मा का प्रहण नहीं होता है, परन्तु जैसे वीगा के प्रहण करने से प्राथवा वीता। के बनाने वाले के प्रहणा करने से शब्द का महणा होता है उसी तरह से मन आदिक इन्द्रियों के वश करने से आत्मा का ज्ञान होता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

स यथाऽऽर्द्वेधाग्नेरभ्याहितात्पृथग्धूमा विनिश्वरन्त्येवं वा अरे-Sस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतच्रहानेदो यजुर्वेदः सामवेदो Sथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपानिषदः श्लोकाः सूत्राएय-नुच्याख्यानानि च्याख्यानान्यस्येवैतानि निश्वसितानि ॥

पदच्छेदः ।

स:, यथा, ऋार्द्रेशाग्ने:, अभ्याह्तात्, पृथक्, धूमाः, विनिश्चरन्ति, एवम्, वै, ऋरे, श्रस्य, महतः, भृतस्य, निश्वसितम्, एतत्, यत्। भूग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथर्वाङ्गिरसः, इतिहासः, पुराराम्, विद्याः, उपनिषदः, श्लोकाः, सूत्राणि, श्रनुव्याख्यानानि, व्याख्यानानि, श्चस्य, एव, एतानि, निश्वसितानि ॥

परार्थाः

पदार्थाः

श्चन्वयः द्यान्वयः विनिश्चरन्ति=निकत्तती हैं + अञ=इस विषे सः=यह प्रसिद्ध एवम्=इसी प्रकार च=निश्चय करके + द्यान्तः=रप्टान्त ऋरे=हे प्रियमैत्रेथि ! + बद्ति=कहते हैं कि यथा=जैसे यत्=जो अभ्याहितात्=स्थापित की हुई पतत्=यह वश्यमाय आर्द्धेधाग्ने:=गीबी बकड़ी जनती भूग्वेदः=ऋग्वेद है हुई छीन से यज्ञुर्वेदः=यज्वेद है सामवेदः=सामवेद है पृथक्=नाना प्रकार के धूमा:=धूर्वे बार चिनगारियां अथवाङ्गिरसः=अथवेश वेद है इतिहासः=इतिहास है प्रादि

पुराग्रम्=पुराग्य है ग्रस्य=उसी
विद्याः=विद्याः हैं ग्रह्तः=श्रेष्ठ
उपनिषदः=वेदान्तशास्त्र हैं श्रूतस्य=जीवात्सा के
श्लोकाः=काव्य हैं श्रूतस्य=जीवात्सा के
स्त्राग्रि=पदार्थसंग्रहवाक्य हैं निश्वसितम्=रवास हैं
सज्जव्या- }=मन्त्रव्याक्या हैं ग्रह्मय=उसके
व्याक्यानानि=श्र्यव्याक्या हैं प्य=ही
प्रतानि=वे सब निश्वसितानि=परश्वास हैं

भावार्थ।

हे सौम्य ! याझवल्क्य महाराज मैत्रेथी महारानी से कहते हैं कि हे प्रियमैत्रेथि ! जैसे एक जगह रक्खी हुई गीस्त्री लकड़ी जब जलाई जाती है तब उसमें से नाना प्रकार के धूर्ये झौर चिनगारियां झादि निकलती हैं इसी प्रकार इस श्रेष्ठ जीवात्मा के श्वास से झृग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, झार्थर्वणवेद, इतिहास, पुराण, विद्या, वेदान्त-शास्त, श्र्वोक, सूत्र, मन्त्र, व्याख्या झौर झर्थव्याख्यादि निक-स्तरी हैं ॥ १०॥

मन्त्रः ११

स यथा सर्वासामपाछ समुद्र एकायनमेवछ सर्वेषाछ स्पर्शानां त्वगेकायनमेवछ सर्वेषां गन्धानां नासिके एकायनमेवछ सर्वेषाछ रसानां जिहेकायनमेवछ सर्वेषाछ रूपाणां चक्षुरेकायनमेवछ सर्वेषाछ रसानां जिहेकायनमेवछ सर्वेषाछ रूपाणां चक्षुरेकायनमेवछ सर्वेषाछ शब्दानाछ श्रोत्रमेकायनमेवछ सर्वेषांछ संकल्पानां सन एकायनमेवछ सर्वासां विद्यानाछ हृदयमेकायनमेवछ सर्वेषां कर्मणाछ ह्रस्तावेकायनमेवछ सर्वेषामानन्दानामुपस्य एकायनमेवछ सर्वेषां विसर्गाणां पायुरेकायनमेवछ सर्वेषामध्वनां पादावेकायनमेवछ सर्वेषां वेदानां वागेकायनम् ॥

पदच्छेदः।

सः, यथा, सर्वासाम्, अपाम्, समुद्रः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्,

स्पर्शानाम्, त्वक्, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, गन्धानाम्, नासिके, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रसानाम्, जिह्वा, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रह्यान्नाम्, क्रायाम्, चक्षुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, शब्दान्नाम्, श्रोत्रम्, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, संकल्पानाम्, मनः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, क्रमणाम्, हस्तौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, श्रानन्दानाम्, खपस्थः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, क्रमणाम्, एवम्, सर्वेषाम्, विसर्गाणाम्, पायुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, अप्रवनम्, एवम्, सर्वेषाम्, वेदानाम्, वाक्, एकायनम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्चन्वयः

पदार्थाः

+ द्यत्र=इस विवे सः=यह प्रसिद्ध + द्यान्तः ⇒दशन्त है कि यथा=जैसे सर्वासाम्=सर श्रपाम्=जलों का समुद्रः=समुद्र एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्≕सब स्पर्शानाम्=स्पर्गे का त्वक्=त्वचा एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्≖सब नन्धानाम्≕गन्धों का नासिक=दोनों नासिका पकायनम्=एकायन हें पवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब

रसानाम्≕सों का जिह्ना=जीभ एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब रुपाणाम्=रूवों का चधुः≔नेत्र एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब शब्दानाम्=शब्दों का भ्रोत्रम्=कान एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब संकल्पान।म्=संकल्पां का मन:=मन एकावनम्=एकायन है एवम्=रसी प्रकार सर्वासाम्≃सर

विद्यानाम्=ज्ञानीं का हृद्यम्=हृद्य एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब कर्मगाम्=कर्मे का हस्तौ=रोनीं हाथ एकायनम्=एकायन हैं एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब श्चानन्दानाम्=श्चानन्दीं का उपस्थः=उपस्थ इन्द्रिय एकायनम्=एकायन है एवम्=इसीप्रकार सर्वेषाम्=सब विसर्गाणाम्=स्यागों का

पायुः=पायु इन्द्रिय एकायनम्≔एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्≕सब श्रध्वनाम्=मार्गी का पादी=दोनों पाद एकायनम्=एकायन हैं एवम्=इसी श्रकार सर्वेषाम्=सब वेदानाम्=वेशं का वाक्=वार्या एकायनम्=एकायन है + तथा एव=हसी प्रकार + श्रयम्=यह जीवात्मा + सर्वेषाम्=सब का + एकायनम्=एक।यन है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! याझवल्क्य महाराज फिर भी ट्रष्टान्त देकर मैंत्रेयी महारानी को समभाते हैं, हे प्रियमैंत्रेयि ! जैसे सब जलों की स्थित की एक जगह समुद्र हैं, जैसे सब स्पर्शों के रहने की एक जगह त्वचा है, जैसे सब गन्धों के रहने की एक जगह दोनों नासिका हैं, जैसे सब रसों के रहने की एक जगह जिहा है, जैसे सब रूपों के रहने की एक जगह नेत्र हैं, जैस सब शन्दों के रहने की एक जगह श्रोत्र इन्द्रिय है, जैसे सब संकल्पों के रहने की एक जगह मन हैं, जैसे सब हानों के रहने की एक जगह इत्र हैं, जैसे सब हानों के रहने की एक जगह इत्र हैं, जैसे सब कमी के रहने की एक जगह उपस्थ इन्द्रिय हैं, जैसे सब त्यागों के रहने की एक जगह उदा इन्द्रिय हैं, जैसे सब मार्गों के रहने की एक जगह उदा इन्द्रिय हैं, जैसे सब मार्गों के रहने की एक जगह उदा इन्द्रिय हैं, जैसे सब मार्गों के रहने की जगह दोनों पाद हैं, जैसे सब

बेदों के रहने की एक जगह वासी है, वैसेही है मैत्रेयि ! सब के रहने. का एक स्थान जीवात्मा है ॥ ११ ॥

· मन्त्रः १२

स यथा सैन्धविष्य उदके प्रास्त उदकमेवानुविलीयेत न हास्यो-द्यहणायेव स्याद् यतो यतस्त्वाददीत लवणमेवेवं वा ऋर इदं महद्-भूतमनन्तमपारं विज्ञानघन एव एतेभ्यो भूतेभ्यः समुत्थाय ताम्येवानु विनश्यित न प्रेत्य संज्ञास्तीत्यरे ब्रवीमीति होवाच याज्ञवल्क्यः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, सैन्धविखित्यः, उद्के, प्रास्तः, उदकम्, एव, अनु, विलीयेत, न, ह, अस्य, उद्यहणाय, इव, स्यात्, यतः, यतः, तु, आद्दीत, लबरण्म, एव, एदम्, वै, अरे, इदम्, महत्, भूतम्, अनन्तम्, अपारम्, विज्ञानघनः, एव, एतेभ्यः, भूतेभ्यः, समुत्थाय, तानि, एव, अनु, विनश्यित, न, प्रेरय, संज्ञा, अस्ति, इति, अरे, झवीमि, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

अन्वयः प्राथाः | + श्रत्र=इस विषे सः=प्रसिद्ध + ष्टष्टान्तः=ष्ट्रान्त है कि यथा=जैसे उदके=जन में प्रास्तः=डाला हुआ सैन्धविल्यः=सैन्धव नमक का डन्। उदकम्श्रुज=जन में पव=ही

विर्तायत=गत्नकर स्वय होजाताहै + च=भौर

+ पुनः=िकर श्रस्य=उसके

उद्मह्णाय=बाहरनिकालनेकेलिय

+ कश्चित् } =कोई उपाय उपायः }

न ह इध=निरचय करके नहीं स्यात्=होसका है + च=श्रीर

यतः यतः≕जहां जहां से

श्राददीत=प्रहण करेगे + ततः + ततः=वहां वहां सेः

लवग्रम् एव=नमकही को + आदसे=पावोगे एवम् + एव=हती प्रकार

- प्व≕इसा प्रकार इन्द्रे=हे प्रियमैत्रेवि ? वै=निस्संदेह

र्दम्≐क्र

महत् भूतम्=मंत्रान् श्रास्मा श्रमन्तम्=श्रमन्तः + च=श्रीर श्रपारम्=श्रपार है + च=श्रीर एव्≍िनश्यय करके विद्यानश्चनः=विज्ञानरूप है + श्रयम्=ब्द एतेश्यः=इन भूतेश्यः=सृती से

समृत्थाय=डड कर

तानि=उन्हीं के

अनु एव=बन्तरही

विनश्यात=जबसैन्धवन् श्रद्ध होजाता है + पुनः=फिर श्रेत्य=मरने पर संज्ञा=उसका नाम न=नहीं श्रारेत=रहता है श्रारेत=रहता है श्रारेत=रहता है श्रारेत=रहता है श्रारेत=रहता है श्रारेत=प्रेसा + हित=प्रेसा याञ्चचक्यः=याञ्चचस्य ह=निरचय के साथ उवाच=कहते भये

भावार्थ ।

हे सौन्य ! याझवल्क्य महाराज अपनी प्रियपत्नी को दृष्टान्त देकर समस्ताते हैं, यह कहते हुये कि जैसे जलमें डाला हुआ नमक का ढला गल कर लय होजाता है, आरे उसके वाहर निकालने के लिये कोई उपाय नहीं होसला है. और जहां कहीं से यानी ऊपर नीचे, दृहिने बायें, मध्य से पानी को जो कोई चखना है तो नमकही नमक पाता है. उसी प्रकार हे मैत्रेबि ! यह जीवात्मा निस्संदेह इन पांच तत्त्वों में और उमके कार्यों में अनन्त और अपाररूप से स्थित है, यह विज्ञान-रूप है, इन भूतों से उठकर इन्हीं में जलसैन्धववत् अदृष्ट होजाता है, और फिर शरीर से पृथक् होने पर उस जीवात्मा का कोई नाम नहीं रहता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

सा होवाच मैंत्रेय्यत्रेव मा भगवानमूमुहन्त्र प्रेत्य संज्ञाऽस्तीति स होवाच न वा अरेऽहं मोहं ब्रवीम्यलं वा अर हदं विज्ञानाय ॥ सा, इ, उवाच, मैत्रेयी, आत्र, एव, मा, भगवाच, आमूमुहत्, न, प्रेत्य, संज्ञा, आस्ति, इति, सः, इ, उवाच, न, वै, आरे, आहम्, मोहम्, अवीमि, आजम्, वे, आरे, इदम्, विज्ञानाय ॥

श्रन्थयः सा=बह पदार्थाः | सन्वयः

पदार्थाः

ह=प्रसिद्ध

मैत्रेथी=भैत्रेथी

उदाच=बोजी कि

+ यत्=जो

भगवान्=प्रापमे

+ उक्तम्=कहा है कि

प्रेरय=मरने पर
संझा=उस महान् घारमा

का नाम

म=नहीं

ग्रास्त=रहजाता है

अत्र प्व=हसी विषय में ही

+ भगवान्=धापने

मा=मुक्तको

असुमुहस्=अममें हाज दिया है

+ तदा=सब

सः=वह ह=प्रसिद्ध याज्ञवल्य उचाच=बोबे कि श्रहम्≕भें अरे=हे त्रियमैश्रेवि ! वै=निरचय करके मोहम्=भम में हासने वाली बात को स⇒नहीं व्रवीमि=कहताई + किन्तु=किन्त अरे=हे मैत्रेथि ! इदम्=मेरा यह कहना श्रम्=पूर्ण विश्वानाय=ज्ञानके विये चै=ही है

भाषार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! याज्ञवल्क्य महाराज के बचन को सुनकर मैंत्रेयी ती कि जो आपने सुमास कहा कि मरने पर इस जीवात्मा का कोई नाम नहीं रह जाता है, यह सुनकर मैं बड़ी आन्ति को प्राप्त हुई हूं, ऐसा मालूम होताहै कि आपने सुम्ते अम में डाल दिया है, तब वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि हे प्रियमैंत्रेयि ! ऐसा मत कहो, जो इक्क मैंने तुजसे कहा, वह यथार्थ कहा है, मेरा उपदेश तुम्हारे प्रति भ्रम से निकालने का है न कि भ्रम में डालने का. जो कुछ मैंने तुमसे कहा है, वह तुम्हारे पूर्णाज्ञान के लिये कहा है।। १३॥

मन्त्रः १४

यत्र हि द्वैतिमिव भवति तदितर इतरं जिघ्नति. तदितर इतरं परयति तदितर इतरं परयति तदितर इतरं शृर्णोति तदितर इतरमभिवदति तदितर इतरं मनुते तदितर इतरं विजानाति यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवाभूत्त-त्केन कं जिघ्नेचत्केन कं परयेचत्केन कं शृणुयाचत्केन कमभिवदेच-त्केन कं मन्वीत तत्केन कं विजानीयाद् येनेदः अर्व विजानाति तं केन विजानीयादिकातारमरे केन विजानीयादिति ॥

इति चतुर्थं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

यत्र, हि, द्वेतम्, इव, भवति, तत्, इतरः, इतरम्, जिन्नति, तत्, इतरः, इतरम्, परयति, तत्, इतरः, इतरम्, श्रुगोति, तत्, इतरः, इतरम्, श्रुगोति, तत्, इतरः, इतरम्, श्रुगोति, तत्, इतरः, इतरम्, मनुते, तत्, इतरः, इतरम्, विज्ञानाति, यत्र, वे, श्रस्य, सर्वम्, श्रात्मा, एव, श्रभूत्, तत्, केन, कम्, जिन्नेत्, तत्, केन, कम्, परयेत्, तत्, केन, कम्, श्र्यायात्, तत्, केन, कम्, श्रभवदेत्, तत्, केन, कम्, मन्वीत, तत्, केन, कम्, विज्ञानीयात्, येन, इदम्, सर्वम्, विज्ञानाति, तम्, केन, विज्ञानीयात्, विज्ञातारम्, श्ररे, केन, विज्ञानीयात्, इति ॥ श्रम्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

+ झरे मैं श्रेयि=हे वियमैत्रेयि !

--जिझति=स्ंघता है तत्=वहां

यञ्ज=जहां हि=निरचय करके क्रेतम् इच=द्वेतके समानभावना भवति=होती है तस्=तहां इतरः=मीर इतरम्=भीर को

इतरः=इतर इतरम्=इतर को पश्यात=देखता है तत्=वडां

इतरः=भौर इतरम्=भौर को

श्रुगोति=सुनता है तत्=वहां इतरः=ग्रीर इतरम्=श्रीर को अभिवद्ति=कहता है तत्=वहां इतर:=श्रीर इतरम्=चौर को मनुते=समकता है तत्=वहां इतरः=श्रीर इतरम्=श्रीर को विज्ञानाति=जानता है + परन्तु≔पर यत्र=जहां बै=निश्चय करके सर्वम्=सब अस्य=इस ब्रह्मवित् पुरुष का श्चातमा पच=भारमाही श्रभूत्=होगया है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको जिन्नेत्=सृंघता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको पश्येत्=देखता है तत्=तहां

केतज्ञिस करके कम्=किसको श्युयात्=सुनता है तत्व≕तहां केत=किस करके कम्=किसको श्रभिवदेत्=कहता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको मन्वीत=मानता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको विजानीयात्=जानता येन=जिस भारमा करके इदम्=इस सर्वम्=सबको + पुरुषः=पुरुष विज्ञानाति=जानता है तम=उस भारमा को केन=किस करके विजानीयात्=कोई जानसका है श्चरे=हे प्रियमैत्रेयि ! विशातारम्=विशाता को केन=किस साधन करके विजानीयात् } =कोई जानसका है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज फिर भी अपनी प्रिया मैन्नेयी से कहते हैं

कि, हे मैत्रेयि ! जहां द्वेत की भावना होती है वहांही इतर इत रकी संघता है, वहां ही इतर इतर को देखता है, वहां ही और और को समस्ता है, वहां ही और और को कहता है, वहां ही और और को समस्ता है, वहां ही इतर इतर को जानता है. हे प्रियमेत्रेयि ! जहर सब आत्मा ही होगया है, वहां किस करके किसको कौन संघता है, वहां किस करके किसको कौन देखता है, वहां किस करके किसको कौन समस्ता है, वहां किस करके किसको कौन समस्ता है, वहां किस करके किसको कौन जानता है, वहां किस करके किसको कौन जानता है, जिस आत्मा करके इस सबको पुरुष जानता है उस आत्मा को किस करके कौन जानसक्ता है ? झानस्वरूप आत्मा को किस साधन करके कौन जानसक्ता है ? झानस्वरूप आत्मा को किस साधन करके कोई प्रहरा कर सक्ता है ? झात्मा झानस्वरूप, आनन्दस्वरूप हाने के कारण, अपने को ऐसा नहीं जान सक्ता है ऐसी अवस्थापर इस जीवात्मा के मरने पर कुद्ध नहीं रहजाताहै॥ १४॥

इति चतुर्थं ब्राह्मग्राम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

इयं पृथिवी सर्वेषां भूतानां मध्वस्यै पृथिव्यै सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्यां पृथिव्यां तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायम-ध्यात्मश्र शारीरस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदम-मृतिमदं ब्रह्मेद् छ सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इयम्, पृथिवी, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, आस्ये, पृथिव्ये, सर्वािशा, भूतानि, मधु, यः, च, आयम्, आस्याम्, पृथिव्याम्, तेजोमयः, आमृतमयः, पृश्वेष्यात्मम्, रागीरः, तेजोमयः, आमृतमयः, पृश्वेषः, यः, च, आयम्, आयात्मम्, शारीरः, तेजोमयः, आमृतमयः, पृश्वेषः, आयम्, एव, सः, यः, आयम्, आर्मा, इदम्, अपृतम्, इदम्, श्रद्धाः, इदम्, सर्वम् ॥

श्रम्बयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

इयम्=यह पृथिवी=पृथ्वी सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=पञ्च नहाभूतों का मधु=सार है यानी सबके रस से संयुक्त है + च=धौर श्च∓यै=इस पृथिवयै=पृथ्वी का मधु=सार सर्वाण=सब भूतामि=पांचों महाभृत हैं च=धौर ग्रस्याम्=इस पृथिवयाम्=प्रथिवी में यः=जो श्रयम्=यह सेजोमयः=प्रकाशस्वरूप श्चमृतमयः=प्रमर्थर्मी पुरुषः=पुरुष है च=ग्रीर

श्राधानतमम्=हरयं में श्रयम्≕जो यह शारीरः=शरीर उपाधिवाला तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः#पुरुष है **ध्ययम्**=यही हृदयस्थ पुरुष एव=निश्चय करके सः=वही पृथ्वांसम्बन्धी पुरुष ह च≃ग्रार यः=जो श्चयम्=यह हृदयगत श्चात्मा=भारमा है इदम्=यही असृतम्=धमर है इदम्=यही द्यहा=बह्य है इदम्=यही सर्वम्=सर्वश्रिमान् है

भागार्थ ।

हे सौष्य! या झवर्ल्य महाराज मैंत्रेयी देवी से फिर कहते हैं कि हे देवि! यह पृथिवी सब भूतों का सार है, यानी सब भूतों के रससे संयुक्त है, और इस पृथ्वीका सार पश्चमहाभूत हैं, यानी इसका भाग और तर्त्वों में भी स्थित है, जैसे आरों का भाग इसमें स्थित है. हे देवि! इस पृथ्वी में जो प्रकाशस्वरूप, आमरधर्मी पुरुष है. वही हृदयस्थ, शरीर उपाधिवाला, प्रकाशस्वरूप, आमरधर्मी पुरुष है, यानी दे। में एकही हैं. और जो हृदयस्थ पुरुष है यही आमरहै, यही शक्ष है, यही सर्वशिक्तमान है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

इमा त्रापः सर्वेषां भूतानां मध्वासामपाछ सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमास्वप्सु तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मधः रैतसस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इमाः, आपः, सर्वेवाम्, भूतानाम्, मधु, आसाम्, अपाम्, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, अप्रयम्, आसु, अप्रमु, तेजोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रथम्, श्रध्यात्मम्, रेतसः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृ-तम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

इमाः=यह श्रापः=जल सर्वेषाम्≔सब भूतानाम्=महाभूतों का मधु=सार है + म्ब=श्रौर आसाम्=इन श्रपाम्=जलों का मधु≕सार सर्वााण्≕सब भूतानि=महाभृत हैं आसु=इन श्रप्सु≔जलों में यः=जो अयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशरूप अमृतमयः=चमरभर्मा

अन्वयः

पदार्थाः पुरुषः=पुरुष है च=श्रौर श्रध्यात्मम्=हृदय में

यः=जो श्चयम्=यह रैतसः=वीर्यसम्बन्धी तेजोमयः=प्रकाशरूप

असृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः=पुरुष है

श्रयम्=यही हदयगत पुरुष प्व=निश्चय करके सः=वह है जो जलादि

चन्तर्गत है च=घौर

यः=जो अयम्=यह

आत्मा= हृदयस्थ आत्मा है

इदम्≃यही असृतम्=भमरधर्मी है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म इद्म्=यही सर्वम्=सर्वशक्षिमान् है

भावाथे।

हे सौन्य ! याज्ञवरूक्य महाराज मैंत्रेयी देवी से फिर कहते हैं कि, हे प्रियमैंत्रेयि ! जल सब भूतों का सार है, और जलका सार सब मृत हैं, और हे देवि ! जो जल विषे प्रकाशस्वरूप अमरधर्मी पुरुष है, बही हृदयगत वीर्यसम्बन्धी प्रकाशस्वरूप अमरधर्मी पुरुष है, यानी दोनों एकही हैं, और जो हृदयस्य पुरुष है, यही अमर है, अजर है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशक्तिमान है ॥ २ ॥

मन्त्रः ह

त्रयमिनः सर्वेषां भूतानां मध्वस्याग्नेः सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मित्रग्नो तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यरचायमध्यात्मं वा-ब्ह्ययस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मेद्छं सर्वम् ॥

पदच्छेदः।

अयम्, अग्निः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, अस्य, अग्निः, सर्वाशि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, अग्नी, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, वाड्ययः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, अझ, इदम्, सर्वम् ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह श्राग्निः=माग्न सर्वेषाम्=सन भूतानाम्=यहाभूतों का मञ्ज=सम्र हैं + च=मोर श्चस्य=इस श्रागेः=श्रीम का सर्वा श्व=सब भूतानि=महाभूत मधु=सार है ख=श्रीर

अयम् एव=यही वाणी में रहने यः=जो द्मयम्=यह सः≔वह पुरुष है जो भ्राग्नि ग्रस्मिन्=इस श्चानी=भग्नि में विषे है तेजोमयः=प्रकाशरूप + ख=श्रीर श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी यः≕जो पुरुषः=पुरुष है श्चयम्=यह च=धौर श्चात्मा=वार्षामय **भारमा** है य:=जो इदम्=षही श्चयम्=यह अ्मृतम्=श्रमर है श्रध्यात्मम्=शरीर में इदम्=यही वाङ्मयः=वाणीमय तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप इद्म्=यही श्रमृतमयः≔धमर सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है पुरुषः=पुरुष है भावार्थ ।

हे सौम्य ! याज्ञवल्क्य महाराज फिर मैत्रेयी देवी से कहते हैं कि यह प्रत्यक्ष झ्रान्ति सब महाभूतों का सार है, झौर इस झ्रान्ति का सार सब महाभूत हैं, यानी जैसे इस झ्रान्ति में झ्रपने भाग के सिवाय झाकाश, वायु, जल, पृथ्वी का भाग भी है, वैसेही इस झ्रान्ति का झंश उन चारों में भी प्रवेश है, झौर जो इस झ्रान्ति विषे प्रकाशस्वरूप झमरधर्मी पुरुष है झौर जो वाङ्मय, तेजोमय, झमृतमय पुरुष है, वे दोनों एकई। हैं. हे देवि ! यही वागा में रहनेवाला पुरुष झजन्मा है, झमर है, बझ है झौर सर्वशिक्तमान है।। ३।।

मन्त्रः ४

द्धयं वायुः सर्वेषां भूतानां मध्वस्य वायोः सर्वाणि भूतानि मञ्ज यश्चायमस्मिन्वायौ तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं प्राणस्तेनोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽसमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मेद् सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्चयम्, वायुः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, अस्य, वायोः, सर्वाशि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, वायौ, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, प्राग्गः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इत्म्, अमृतम्, इत्म्, ब्रह्म, इत्म्, सर्वम् ॥

श्चन्यः

पदार्थाः | ग्रन्वयः

पदार्थाः

भ्रयम्≕यह वायुः=वाषु सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=महाभूतों का मधु=सार ह + तथा=तैसेही श्रस्य=इस वायोः=वायु का सर्वागि=सब भूतानि=महाभूत मधु=सार हैं च=भौर यः≕जो श्र**स्मिन्**=इस वायौ=वायु विवे श्रयम्=यह तेजोस्यः=प्रकाशस्वरूप श्रमृतमय:=श्रमरधर्मी पुरुषः=पुरुष है चं=ग्रीर

श्वध्यातमम्=शरीर में
श्रयम्=यह
प्राणः=प्राणरूप
तेजोमयः=प्रकाशात्मक
श्रमृतमयः=अभर
पुरुषः=पुरुष है
श्रयम्=यही हृदयगत पुरुष
प्व=िनश्चय करके
सः=वह पुरुष है जो वायु
विषे रहनेवाला है
ययम्=यह हृदयगत

यः≕जो

श्रमृतम्=भगरधर्मी है इदम्=थही ब्रह्म=ब्रह्म है

इद्म=यही

इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

आतमा=भारमा (पुरुष है)

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! जैसे यह प्रत्यक्ष वायु सब महाभूतों का सार है वैसेही इस वायु का सब महाभूत सार हैं यानी इसका सूक्ष्म अंश सब में प्रभेश है अथवा कारण कार्य एकही हैं और हे मैत्रेयि! जो वायु विषे तेजोमय, अमृतमय पुरुष है और जो हृदय में और ब्रागाइन्द्रियन्यापी, प्रकाशात्मक, अमरधर्मी पुरुष है ये दोनों निश्चय करके एकही हैं. इसमें उसमें कोई भेद नहीं हैं. और हे देवि! जो यह हृदयगत पुरुष है अथवा अगत्मा है, यही अमरधर्मी है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशिक्तमान है ॥ ४॥

मन्त्रः ५

श्रयमादित्यः सर्वेषां भूतानां मध्वस्यादित्यस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिन्नादित्ये तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं चाक्षुषस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

अयम्, आदित्यः, सर्वेवाम्, भूतानाम्, मपु, श्रस्य, आदित्यस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, आयम्, श्रस्मिन्, आदित्ये, तेजोमयः, आमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अध्म्, आध्यात्मम्, चाक्षुषः, तेजोमयः, आमृतमयः, पुरुषः, आयम्, एव, सः, यः, आयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः । ऋन

पदार्थाः

श्रयम्=यह
श्रादित्यः=सूर्य
सर्वेषाम्=सब
भूतः।नाम्=भूतों का
मधु=सार है
+ च=श्रीर
श्रस्य=हस
श्रादित्यस्य=सूर्य का
मधु=सार
सर्वाशि=सब

भूतानि=भत हैं
यः=शे
श्रास्मिन्=इस
श्रादित्ये=सूर्य विषे
श्रयम्=थह
तेजोमयः=भकाशस्वरूप
श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी
पुरुषः=पुरुष है
च= श्रीर
यः=जा

अध्यात्मम्≔शरीर में यः=जो श्रयम्=यह श्रयम्=यह चाश्चषः=नेत्रसम्बन्धी आत्मा=नेत्रगत बात्मा है तेजोमयः=प्रकाशरूप इदम्≔यही श्रमतमयः=श्रमरधर्मवाला पुरुषः=पुरुष है अमृतम्=अमर है इदम=यही श्चयम्=यही एव=निश्चय करके ब्रह्म=बद्य है सः=वह पुरुष है जो सूर्य इदम्≕यही विषे है सर्वम्=सब कुछ है यानी सर्व-च=धीर शक्तिमान् है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! यह दरयमान सूर्य सब भूतों का सार है, स्रोर इस सूर्य का सार सब भूत है, यानी जैसे ये सब भूतों में प्रवेशित हैं, वैसेही इसमें सब भूत सूक्ष्म स्रांशों से प्रवेशित हैं, अथवा कारणा कार्य एकही हैं. स्रोर जो तेजोमय, अमृतमय पुरुष हैं, स्रोर जो यह नेत्रविषे प्रकाशहरूष्ण स्रमरधर्मवाला पुरुष है, ये दोनों एकही हैं. स्रोर हे मैत्रेवि ! यही नेत्र बिषे स्थित पुरुष स्थातमा स्रमरधर्मी है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशक्तिमान है, यही सब का श्राधिष्ठान है ॥ ४॥

मन्त्रः ६

इमा दिशः सर्वेषां भूतानां मध्वासां दिशाश सर्वाणि भूतानि मधु यश्वायमासु दिश्च तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्वायमध्या-त्मश्च श्रोत्रः पातिश्चत्कस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽय-मात्मेदममृतमिदं ब्रह्मोदश्च सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इमाः, दिशः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मघु, झासाम्, दिशाम्, सर्वाणि, भूतानि, मघु, यः, च, झायम्, झासु, दिक्षु, तेजोमयः, क्रामृतमयः, पुरुषः, यः, च, अप्यम्, क्राध्यात्मम्, श्रोत्रः, प्रातिश्रुत्कः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः । श्रन्वयः

अन्वयः

इमाः≔ये दिश:=दिशार्वे

सर्वेषाम=सब भूतानाम्=प्राणियों को

मधु=^{त्रिय} हैं _ स=ग्रीर

त्रासाम्=इन दिशाम्=दिशायों को

सर्वागि=सब भूतानि=प्राणी मघु=त्रिय हैं

+ च=धौर यः=जो

ग्रासु=इन दिश्च=दिशाश्चों में

अयम्=^{यह} तेजामयः=प्रकाशस्बरूप

अमृतमयः=धमरधर्मी पुरुषः=पृरुष है

च=ग्रीर य:=जो

अध्यात्मम्=शरीर में

श्रयम्=^{यह}

श्रीत्रः=कर्षेद्यापी प्रातिश्रुत्कः=प्रातिध्वनिरूप

तजोमयः=तेजोमय श्रमृतमयः=श्रमृतमय

पुरुषः=पुरुष है

श्रयम् एव=यही यानी कर्ण-

ब्यापी पुरुष सः≔वह दिशा ब्यापी

पुरुष है च=श्रौर

य:=जो त्रयम्=य**६ कर्य**ाचापी श्रात्मा=श्रात्मा है

इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमरधर्मी है

इद्म्=यही ब्रह्म=बद्य है इद्म=यही

सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! याज्ञबस्कय महाराज मेत्रेयी देवी से कहते हैं कि, ये दिशायें सब प्राणियों को प्रिय हैं झौर इन दिशाओं को सब प्राणी≉ प्रिय हैं क्योंकि विना दिशा के किसी प्रार्गी का आपना जाना नहीं होसकता है. सब कार्य दिशा के झाधीन हैं. कमेंन्द्रिय, झानेन्द्रिय, मन,

बुद्धि, चित्त, आहंकार और पांचों प्राण् ये सब दिशा केही आधीन है, विना दिशा की सहायता के किसी कार्य के करने में आसमर्थ हैं. इस लिये दिशा यें सब प्राण्यों को प्रिय हैं और जो वस्तु प्रिय होती है उसी को लोग आपने में रखते हैं और चूंकि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण दिशाओं में सब चराचर सृष्टि ज्याप्त हैं इस लिये दिशा को सब प्रिय हैं, हे देवि! जो प्रकाशस्त्रक्ष, आमर्थमीं पुरुष इन दिशाओं में हैं और जो शरीर में करण्ड्यापी, प्रतिध्वनिध्यापी, तेजोमय, अस्तमय पुरुष है वे दीनों एकही हैं. और जो करण्ड्यापी, प्रतिश्वनिध्यापी पुरुष है, यही ब्रह्म है, यही आमर्थमीं है, यही सर्वट्यापी है, यही सर्वट्यापी है, यही सर्वशिक्तमान है, यही सत्र का अधिष्ठान है।। है।।

मन्त्रः ७

श्रयं चन्द्रः सर्वेषां भूतानां मध्वस्य चन्द्रस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिश्वश्चन्द्रे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं मानसस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मोद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

अयम्, चन्द्रः, सर्वेषाम्, मृशनाम्, मधु, अस्य, चन्द्रस्य, सर्वाणि, मृतानि, मधु, यः, च, अयम्, अिमन्, चन्द्रे, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, मानसः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आस्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, अस्न, इदम्, सर्वम् ॥

द्यन्वयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह चन्द्रः=चन्द्रमा सर्वेषाम्=सब भृतानाम्=प्राथियों को मधु=प्रिय दै श्रस्य=इस भन्द्रस्य=चन्द्रको सर्वाणि=सब भृतानि=प्राणी मधु=प्रिय हैं

+ ख≔और पुरुषः=पुरुष है यः=जो श्रयम् एव=यही मनसम्बन्धी श्र(रेमन्=इस पुरुष चन्द्रे=चन्द्रमा में सः=वह चन्द्रमासम्बन्धी परुष है श्रयम्=यह ==ग्रीर तेजोमयः=प्रकाशरूप यः=जो श्रमतमयः=श्रमरधर्मा पुरुषः=पुरुष है श्रयम्=यह च≕धौर श्रातमा=मनोब्यापी घातमा है यः=जो इदम्=यही अमृतम्=त्रमर है ऋयम्=यह श्रध्यातमम्=इस शरीर में इदम्=यही मानसः=मनोब्यापी व्रह्म=बद्य है ते जोमयः=तेजोमय इदम=यही सर्वम्=सर्वशक्रिमान् है अमृतमयः=अमृतमय

भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महागाज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! यह चन्द्रमा सव प्राणियों को प्रिय है, झौर इस चन्द्रमा को सब प्राणी प्रिय हैं, जो प्रिय होता है उसी की तरफ लोग देखा करते हैं, सब प्राणी चन्द्रमा की तरफ देखा करते हैं, इस ज़िये चन्द्रमा सबको प्रिय है, झौर चन्द्रमा भी सब की तरफ देखा करता है, इस ज़िये सब चन्द्रमा को प्यारे हैं, हे देवि ! जो चन्द्रमा विषे प्रकाशस्वरूप, झमरधर्मी पुरुष है झौर जो इस शरीर में मनोव्यापी, तेजोमय, झमृतमय पुरुष है येदोनों एकही हैं, झौर जो मनोव्यापी आत्मा है, यही झमर है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशक्तिमान है ॥ ७॥

मन्त्रः द

इयं विद्युत्सर्वेषां भूतानां मध्वस्ये विद्युतः सर्वाणि भूतानि मधु यरचायमस्यां विद्युति तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यरचायमध्यात्मं तैजसस्तेजोमयोऽमृतमयःपुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मेद् ७ सर्वम् ॥

पदच्छेदः।

इयम् ,विद्युत् , सर्वेषाम् , भूतानाम् ,मधु,श्चस्ये, विद्युतः, सर्वाशाः, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्याम्, विद्युति, तेज्ञोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, तैजसः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अप्यम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, ब्रह्म्, इदम्, सर्वम्।।

श्चन्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

इयम्=यह विद्युत्=विजली सर्वेषाम्=सर भूतानाम्=प्राणियों को मधु=िय है + च=बौर श्रस्यै=इस वियुतः=विजली को सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी मधु=ित्रय हैं च=श्रीर ब:=जो श्रस्याम्=इस विगृति=विजनी में श्रयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप अमृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः=पुरुष है च=ग्रीर

यः=जो श्रध्यातमम्=शरीर में श्रयम्=यह तैजसः=स्वरासम्बन्धी

तेजोमयः=प्रकाशरूप भ्रमृतमयः=भ्रमरधर्मी पुरुष:=पुरुष है

श्रयम् एव=यही स्वचासम्बन्धी पुरुष निश्चय करके सः=वह है यानी विद्युद्

व्यापी पुरुष है यः≕जो

श्रयम्=यही त्वचासम्बन्धी आत्मा=म्रात्मा है

इद्म्=यही श्रमृतम्=धमर है

इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है

इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महाराज मेंत्रेथी देवी से कहते हैं कि हे देवि ! ये वक्ष्य-

माग् विजली सब प्राणियों को प्रिय है झौर इस विजली को सब प्राणी प्रिय हैं, जब वर्षा काल विषे काल बादलों में विजली चमकती है तब सब का बड़ी प्रिय लगती है, जो वह सब के स्ममने बार बार प्रकाशित होती है जसी से मालूम होता है कि सब उस को झित प्रिय हैं, हे देवि ! जो प्रकाशस्वरूप, अमरधर्मी पुरुष इस विजली विषे हैं, बही प्रकाशस्वरूप, अमरधर्मी पुरुष इस शरीर की त्वचा में है, यानी दोनों एकही हैं, और हे देवि ! जो यह त्यचासम्बन्धी पुरुष है, यही आत्मा है, यही अमर है, यही ब्रह्म है, यही स्वश्राहमान् है ॥ दा ॥

मन्त्रः ६

श्रयश्रं स्तनिथित्तुः सर्वेषां भ्तानां मध्वस्य स्तनिथत्नोः सर्वाणि भ्तानि मधु यश्चायमस्मिन्स्तनिथित्नौ तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मश्रं शाब्दः सौवरस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मेदश्रं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

अयम्, स्तनियत्तुः, सर्वेपाम्, भूतानाम्, मधु, श्रस्य, स्तनियत्तोः, सर्वाग्गि, भूतानि, मधु, यः, च, श्रयम्, अध्मात्मन्, स्तनियत्तौ, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रध्यात्मम्, शान्दः, सौवरः, तेजो-मयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह स्तनधित्तुः=मेष सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतों का मधु=सार है ष्रथवा सब प्राचियों को प्रिय है + च=श्रीर

ग्रस्य=इस स्तनयिक्षोः=मेघ का सर्घार्या=मब भूतानि=भृत मधु=सार हैं ग्रथवा इस मेघ को सब प्राणी प्रिय हैं च=ग्रीर यः=जो
श्रिक्तिन्द्स्स
स्तनियजी=मेघ में
श्रयम्=यह
ते जोमयः=प्रकाशरूप
अमृतमयः=श्रमरधर्मी
पुरुषः=पुरुष है
श्रयम् एव=यही
सः=वह है
यः=जो
श्रध्यात्मम्=देह विषे
श्रयम्=यह
शाबदः=शबदश्यापी
सोवदः=स्वदश्यापी

तेजोमयः=प्रकाशकप
अमृतमयः=धमरधर्मा
पुरुषः=पुरुष है
च=धौर
यः=जो
श्रयम्=यह शब्द धौर स्वर
व्यापी
श्रातमा=श्रातमा है
इदम्=यही
अमृतम्=श्रद्धतमय है
इदम्=यही
झ्रह्म=ब्रह्म है
इदम्=यही
स्वेम्=सर्वश्रिमान् है

भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! नाद करनेवाला मेघ सब भूतों का सार है, अथवा सब प्राणियों को प्रिय है, और इस मेघका सार सब भूत हैं, अथवा इस मेघको सब मनुष्यादि प्राणी प्रिय हैं, और हे मैत्रेयि ! इस मेघिविषे जो यह प्रकाशस्वरूप अमर-धर्मी पुरुप है, यही वह है जो देहिविषे स्वर्गव्यापी अथवा स्वरव्यापी, तेजोमय, अमृतरूप पुरुष है, यानी दोनों में कोई भेद नहीं है, और हे मैत्रेयि ! जो इस देह में शब्दव्यापी और स्वरव्यापी पुरुष है वही अमररूप है, यही सर्वशक्तिमान है, यही तुम्हारा रूप है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

श्रयमाकाशः सर्वेषां भूतानां मध्वस्याऽऽकाशस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्वायमस्मिक्षाकाशे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्वायमध्या-त्मक्ष हृद्यकाशस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेद-ममृतमिदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥ श्चान्वयः

पदच्छेदः ।

श्रयम्, श्राकाशः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, श्रस्य, श्राकाशस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, श्रयम्, श्रस्मिन्, श्राकाशे, तेनोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रथ्यात्मम्, हृदि, श्राकाशः, तेनोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्, श्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

पदार्थाः

श्रयम्=यह श्राकाशः=ग्राकाश सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतें का मधु=सार है भ्रथवा सब प्राणियों को प्रिय है श्चस्य=इस श्चाकाशस्य=त्राकाश के सर्वाग्रि=सब भूतानि=भूत मधु=सार हैं श्रथवा श्राकाश को सब प्राणी प्रिय हैं च=ग्रीर यः≕जो श्रस्मिन्=इस द्याकाशे≕श्राकाश में श्रयम्=यह

तेजोमयः=प्रकाशरूप

श्चमृतमयः=श्रमरधर्मी

पुरुषः=पुरुष है

पदार्थाः श्रन्वयः श्रयम् एव≕यही सः=वह है यः=जो श्रध्यात्मम्=देह में हृदि=हृदय विषे श्रयम्≐यह श्चाकाशः=श्चाकाशब्यापी तेजोमयः=तेजोमय श्रमृतमयः=ग्रमृतमय पुरुषः=पुरुष है च=ग्रौर य:=जो स्रयम्=यह हृदयसम्बन्धी श्चातमा=श्चातमा यानी पुरुष है इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमर है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्रिशाली है

भावार्थ।

हे मेन्नेयि, देवि ! यह दश्यमान आकाश सब भूतों का स्नार है, आध्या सब प्राणियों को प्रिय है, और सब भूत आकाश के सार हैं, अथवा आकाश को सब प्राम्मी प्रिय है, और हे देवि ! जो आकाश में प्रकाशस्वरूप, अमरधर्मी पुरुष है, यह वही है जो हृद्यविषे आकाश-व्यापी, तेजोमय, अमृतमय पुरुष है, यानी दोनों एकही हैं, और जो हृद्यगत पुरुष है, यही अमरधर्मी है, यही व्यापक है, यही सर्व-शिक्तमान है, यही तुम्हारा रूप है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

श्चयं धर्मः सर्वेषां भृतानां मध्वस्य धर्मस्य सर्वाणि भृतानि मधु यश्चावमस्मिन्धमें तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं धार्म-स्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रक्षे-दथ्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्चरम, धर्मः, सर्वेषाम्, भूतःनाम्, मधु, श्वस्य, धर्मस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, श्चरम्, श्चास्मन्, धर्मे, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्चयम्, श्वध्यात्मम्, धार्मः, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम्, एव, सः, यः, श्चयम्, श्चात्मा, इदम्, श्चमृतम्, इदम्, श्रद्धः, इदम्, सर्वम् ॥

श्रन्वयः

श्रन्वयः पदार्थाः श्रयम्=यह धर्मः=श्रोतस्मात्तं धर्म सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=महास्तों का मधु=सार है स्रथवा सब प्रावियोंको भिय है स=सीर श्रस्य=इस धर्मस्य=धर्म के सर्वोखि=सब भूतानि=महासृत

भाषु= श्रिय हैं

स्व च्यारे

अयम् एष=यही
सः=वह है
यः=जो
अयम्=यह
अध्यातमम्=शरीर में
धार्मः=धर्मन्यापी
तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप
अमृतमयः=प्रकाशस्वरूप
पुरुषः=पुरुष है
यः=जो

श्चयम्=यह श्चारमा=धर्मेन्यापी धारमा यानी पुरुष है इद्म्=यही श्चम्तम्=श्चम्तरूप है इद्म्=यही ब्रह्म=श्वहरूप है इद्म्=यही स्वम्=यही सर्वम्=यही

भावार्थ।

हे मैत्रेयि, देवि! यह श्रोतस्मार्त्त धर्म सब महामूर्तो का सार है, श्रथका सब प्राणियों को प्रिय है, श्रोर इस धर्म का सार सब महामूर्त हैं, श्रथका इस धर्म को सब प्राणी प्रिय हैं, श्रोर हे देवि! जो इस धर्म में यह प्रकाश-स्वरूप, श्रमरधर्मी पुरुष है, यही वह है जो शरीर विषे धर्मव्यापी, तेजोमय, श्रमुतमय पुरुष है, यानी दोनों एक ही हैं, इन में कोई भेद नहीं हैं, श्रोर हे प्रियमैत्रेयि! जो यह धर्मव्यापी शरीर विषे पुरुष है, यही श्रमुत-रूप है, यही ब्रह्मरूप है, यही ब्रह्मरूप है, यही ब्रह्मरूप है, यही ब्रह्मरूप है, यही सर्वशिक्त मान है, यही तुम्हारा रूप है। १९॥

मन्त्रः १२

इद छ सत्य छ सर्वेषां भूतानां मध्वस्य सत्यस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिन्सत्ये तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं सत्यस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मदममृतिमदं ब्रह्मेद् छ सर्वम् ॥

पद्च्छेदः ।

इदम्, सत्यम्, सर्वेताम्, भूतानाम्, मत्तु, श्वस्य, सत्यस्य, सर्वातिा, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, सत्ये, तेजोमयः, अमृतमयः पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, सत्यः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, अद्य, इदम्, सर्वम्।। श्चन्वयः

पदार्थाः ऋषयः

पदार्थाः

इदम्=गह सत्यम्=सत्य सर्वेषाम्=सव भृतानाम्=भृतों का

मधु⇒सार है श्रथवा सब भूतों को प्रिय है

+ च=श्रौर ग्रस्य=इस

सत्यस्य=सध्य का सर्वाणि=सब

स्वााख-सर भूतानि=भूत

मधु=सारहें यानी इस सत्य को सब प्राणी प्रिय हैं

च=भौर यः=जो

श्रस्मिन्=इस सत्ये=सत्य में

श्वयम्=यह तेजामयः=प्रकाशस्वरूप

श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी

पुरुषः=पुरुष है

श्चयम्-एव=यहीः निरचय करके सः=वह है

यः≕जो

धाध्यात्मम्≔हृदयसम्बन्धी

द्ययम्=यह सत्यः=सत्य

तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप

श्चमृतमयः=श्रमरथर्मी पुरुषः=पुरुष है

च=मौर

यः⇒जो श्रयम्=यह हृदयस्थ

श्चातमा=बातमा है यानी पुरुष है

इदम्=यही ऋमृतम्=स्रमर है इदम्=यही + ब्रह्म=ब्रह्म है

इदम्=यही सर्वम् =सर्वशक्रिमान् **है**

भावार्थ ।

हे मेत्रेयि, देवि! यह परिच्छिन्न सत्य सब भूनों का सार है, झाथवा सब प्राणियों को प्रिय है, झौर इस झपरिच्छिन्न सत्य का सब भूत सार हैं, यानी सब इसको प्रिय हैं, झौर हे देवि! जो प्रकाशस्वरूप, झमरधर्मी पुरुष इस सत्य में रहता है वही निश्चय करके हृदय बिषे सत्य है, वही प्रकाशस्वरूप, झमरधर्मी पुरुष हृदय विषे रहता है, यानी दोनों एकही हैं इन दोनों में कोई भेद नहीं है, झौर हे देवि! जो हृदयस्थ झात्मा है यानी हृदय विषे जो पुरुष शयन किये हुये है, यही झमर है, यही झझ है, यही सर्वशिक्तमान है, यही तुम्हारा रूप है। १२।

मन्त्रः १३

इदं मानुष्क सर्वेषां भूतानां मध्वस्य मानुषस्य सर्वाणि भूतानि
मधु यश्चायमस्मिन्मानुषे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं
मानुष्ततेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमिदं
बह्मद्रेष्ठं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

अन्वयः पदार्थाः इदम्≔यह मानुपम्=मनुष्यजाति सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतों का मधु=सार है प्रथवा सब प्राणियों को प्रिय है + स्र≃श्रीर श्रास्य=इस मानुषस्य=भनुष्यजाति का सर्वाणि=वव भूतानि=भूत मधु=सार हे अथवा सब प्रार्गा। इसका प्रिय हैं च=श्रौर य:=जो श्चयम्≔यह ग्रस्मिन्=इस

पदार्थाः श्रन्वयः मानुष=मनुष्यजाति में ते जो मयः=प्रकाशरूप असृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः≔पुरुष ई + च=ग्रीर यः=जा श्रयम्=यह श्चारमम्=शरीरविषे मानुषः=मनुष्यव्यापी तेजे(मय:=तेजोमय श्रमृतमयः=श्रमृतमय पुरुष:=पुरुष ह श्चयम्=यही एव=निश्चय करके सः=वह है यानी जो हृदय में स्थित है च्च=श्रीर

यः≕जो

याम्=यह हदयगत श्रातमा=श्रातमा है इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमर है इदम्=यही

ब्रह्म=ब्रह्म है

इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

भाषाधे ।

हे मैंत्रीय, देवि! यह मनुष्यजाति सब भूतों का सार है, अध्यवा सब प्राणियों को प्रिय है, अ्रोर सब भूत इस मनुष्यजाति के सार हैं, अध्यवा सब प्राणी इसको प्रिय हैं, यानी जैसे यह अ्रोरों को चाहता है बैसेही अ्रोर प्राणी भी इसको चाहते हैं, अ्रोर हे देवि! जो इस मनुष्यजाति में प्रकाशस्वरूप अभरधर्मी पुरुष है अ्रोर जो इदय में प्रकाशरूप अमरधर्मी पुरुष है ये दोनों एकही हैं, कोई उनमें भेद नहीं है, और हे देवि! जो यह हृदयगत पुरुष है, यही अभर है, यही अक्षा है, यही सर्वशिक्तमान है, यही तुन्हाग रूप है॥ १३॥

मन्त्रः १४

श्रयमात्मा सर्वेषां भूतानां मध्वस्या इत्सनः सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिन्नात्माने तेजोमयो इमृतमयः पुरुषो यश्चायमात्मा तेजोमयो इमृतमयः पुरुषो इयमेव स यो इयमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मे-दळ सर्वम् ॥

पद्रच्छेदः ।

अयम्, आत्मा, सर्वेषाम्, भृतानाम्, मधु, श्रस्य, आत्मनः, सर्वाणि, भृतानि, मधु, यः, च, श्रयम्, श्रस्मिन्, श्रात्मिनि, तेजो-मयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रात्मा, तेजोमयः, श्रमृत-मयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्, ब्रह्म, सर्वम् ॥

श्चन्यः

पदार्थाः भन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह परिव्हिन्न श्रातम्=त्रातमा सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भ्वां का

मधु=सार है श्रथवा सब प्राश्चियों को प्रिय है + ख=ग्रीर ग्रस्य≔इस आत्मनः=चपरिच्छित्र सर्वागि=सब भृतानि=मृत मञ्च=सार है श्रथवा सब प्राची इसको प्रिय हैं च=श्रीर य:=जो श्रस्मिन्≡इस श्चातमनि=श्रपरिच्छित श्रास्मा में त्रयम्=यह तजोमयः=प्रकाशस्वरूप श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी

पुरुषः=पुरुष है श्रयम-एव=यही निश्चय करके सः=वह है य:=जो आत्मा=परिच्छित्र बारमा तेजोमयः=तेजोमय त्रमृतमयः=ध**मु**तमय पुरुषः=परुष है यः=झो श्रयम्=यह आत्मा=परिच्छित्र चारमा है इदम्≔यही श्रमृतम्=श्रमरधर्मा है इदम्≕यही ब्रह्म=बद्धा है इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्रिमान् है

भावार्थ ।

दे मैत्रेयि, देवि! यह जो परिच्छिन बुद्धि है, यह सन भूतों का सार है, अथवा सन भूतों को प्रिय है, अभैर इस अपरिच्छिन बुद्धि का सन भूत सार हैं, अथवा सन प्रागी इसको प्रिय हैं, और जो अपरिच्छिन बुद्धि में प्रकाशरूप, अमरधर्मी पुरुष हैं, और जो परिच्छिन बुद्धि में तेनोमय पुरुष हैं, यह दोनों एक ही हैं, और हे देनि! जो परिच्छिन बुद्धि निषे पुरुष हैं, यही अमर हैं, यही ब्रह्म हैं, यही सर्वशक्तिमान हैं, और यही तुम्हारा रूप है।। १४॥

मन्त्रः १५

स वा अयमात्मा सर्वेषां भूतानामिषपतिः सर्वेषां भूतानाधः राजा तद्यथा रथनाभा च रथनेमा चाराः सर्वे समर्पिता एवमेवा- स्मिन्नात्मिन सर्वाणि भूतानि सर्वे देवाः सर्वे लोकाः सर्वे प्राणाः सर्वे एत श्रात्मानः समर्पिताः ॥

पदच्छेदः ।

सः, ते, अयम्, आत्मा, सर्वेषाम्, मूतानाम्, अधिपतिः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, राजा, तत्, यथा, रथनाभी, च, रथनेमी, च, अराः, सर्वे, समर्पिताः, एवम्, एव, अस्मिन्, आत्मिन, सर्वािष्ण, भूतानि, सर्वे, देवाः, सर्वे, जोकाः, सर्वे, प्राग्णाः, सर्वे, एते, आत्मानः, समर्पिताः।। अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

वै=निरचय करके

एवम् एव=इसी प्रकार निरचय

सः≔वही

श्रयम्=यह श्रात्मा=परमात्मा

सर्वेषाम्=सब

भूतानाम्=भूती का

श्रधिपतिः=प्रिष्यति है सर्वेषाम्=सब

सवपाम्=सर्व भूतानाम्=प्राणियों में

राजा=प्रकाशस्त्ररूप है तत्=सो

यथा=जैसे

रथनाभौ=रथचक की नाभिमें

रथनेमो=स्थचक की परिधिमें सर्वे=सब

ग्रराः=घरे समर्पिताः=जगे रहते हैं

भावार्थ ।

करके श्रीसमन्=इस श्चात्मनि=परमारमा में सर्वाणि=सब भूतानि=ब्रह्मा से खेकर तृश पर्यन्त मृत सर्वे⇒सब देवाः=भ्रग्न्यादि देवता सर्वे=सब लोकाः=भूरादिलोक सर्वे≕सब प्राशाः≔वागादि इन्द्रियां च=धीर पते=थे सर्वे≔सब श्चात्मानः≕जीवारमा समर्पिताः=समर्पित रहते हैं

हे मैत्रेयि, देवि ! यही परमात्मा सव भूतों का आधिपति है, यही सब प्रायायों में प्रकाशस्वरूप है, और जैसे स्थवक की नामि में और परिधि में सब आरे लगे रहते हैं, इसी प्रकार इस प्रमात्मा में सब ब्रह्मा से लेकर तृग्य पर्यन्त सब भूत, सब अग्नि आदि देवता, सब भूरादि लोक, सब बागादि इन्द्रियां, सब जीव समर्पित रहते हैं, यानी कोई विना आधार परमात्मा के रह नहीं सक्ता है, यानी इसी से सबकी उत्पत्ति हैं, इसीमें सबकी लय है, इसीमें सबकी रिथति हैं, ऐसा यह परमात्मा सबका आत्मा है, यही तुम्हारा स्वरूप है।। १४॥

मन्त्रः १६

इदं वे तन्मधु दध्यङ्ङाथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच तदेतदृषिः पश्य-त्रवोचत्। तद्दां नरा सनये दछंस उग्रमाक्ष्य्कृणोमि तन्यतुर्ने दृष्टिम्। दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीष्णो प्र यदीमुवाचेति ॥ पद्यक्षेत्रः।

इदम्, वे, तत्, मधु, दध्यक्, श्राथर्वणः, श्राधिवभ्याम्, खवाच, तत्, एतत्, श्राविः, परयन्, श्रावोचत्, तत्, वाम्, नराः, सनये, दंसः, उशम्, श्राविः, कृणोमि, तन्यतुः, न, वृष्टिम्, दध्यक्, ह, यत्, मधु, श्राथर्वणः, वाम्, श्रश्वस्य, शीष्णां,प्र, यत्, ईम्, उवाच, इति ॥ श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

न्वयः पद्धाः
+ मैत्रेयि=हे पियमैत्रेयि !
चै=ित्रवय करके
सहम्=मैं
इदम्=इस
तत्=इस
मधु=नझविद्या को
+ वदिस्यामि=कहता हुं
यत्=ित्रको
साधर्वणः=धर्यवदेरी
इस्यक्=द्रथक्षिने
स्रिवस्याम्=धरिवनीकुमारों के
प्रति

+ सः≔वह दश्यक्ति विषाम्≕वह दश्यक्ति विषाम्≕वति विषाम् द्वान्येषा अवोचन्=कहता भया कि नराः≔हे अधिवनीकुमारो ! वाम्=तुम दोनों के जिये तत्=उसी एतत्=इस बद्धविषा को युवयोः≔तुन्हारे सनये≔ज्ञाम के जिये इति≃पेसा साफ आविष्कुणों मि=मकाश करूमा

न≖जैसे

तन्यतुः≔िषणुत् वृश्चिम्=षृष्टि के भाने को + सुन्नयति=बताती है तत्पश्चात्=इसके बाद तत्=उस उग्नम्=उम दंसः=कर्म को पश्यन्=ग्रनुभव करता हुआ स्राधर्येगः=सर्थवेवरी दश्यङ्=दश्यङ्ग्रिषि स्रश्यस्य=धोदे के शीदणी=शिर के द्वारा तेषाम्=उनको मधु=बद्यविद्या को प्रोवाच=कहता भया

भावार्थ ।

हे प्रियमैत्रेयि ! एक समय दोनों अधिवनीकुमार देवताओं के वैद्य, अथर्ववेदी दध्दङ्भूषि के पास गये, और सविनय प्रार्थना किया. यह कहत हुये कि हे प्रभी ! हम लोगों के प्रति आप कृपा करके ब्रह्म-विद्या का उपदेश करें, अपृषि महाराज ने कहा कि में उपदेश करने को तैयार हुं, परन्तु मुक्त का इन्द्र का भय है, क्योंकि उसने कहा है कि अगर तुम कभी ब्रह्मविद्या का उपदेश किसी को करोगे तो तुम्हारा शिर मैं काट डाल्ंगा, सो अगर मैंने तुम को उपदेश किया तो वह मेरा शिर अवश्य काटडालेगा. ऐसा सुन कर अश्विनीकुमारों ने भाषि को आश्वासन देकर कहा कि आप न घवडाइये हम आपके शिर की काट कर अलग रखदेंगे, और एक घोडे के शिर को काट कर आपकी गर्दन पर लगा देंगे, उसके द्वरा आप हम को उपदेश करें. जब इन्द आकर घोड़ेवाके आपके शिर को काटडालेगा तब हम फिर आप के पहिले शिर को आपकी गर्दन से जोड़ देंगे. यह सुन कर दध्य इक्सृपि श्चारिवनीकुमारों को उपदेश के लिये उद्यत हुये, श्चौर श्चारिवनीकुमार्गे ने अपने कहने के अनुसार दध्यङ्कृषि का शिर काट कर आक्षा रख दिया, श्रीर एक घोड़े का शिर काट कर दध्य इसृषि की गर्दन से जोड़ दिया, तब भृषि ने उस घोड़े के शिर के द्वारा अश्विनीकुमारों को ब्रस्तिचा का उपदेश किया, जब यह हाल इन्द्र को मालूम हुआ। तब इन्द्र आन कर दृश्यक् मृषि के घोड़ेवाले शिर को काट कर चलागया तत्परचात् अश्विनीकुमारों मे अपृषि महाराज के पहिलेवाले शिर को जाकर उनकी गर्दन से जोड़ दिया, इस आख्यायिका से ब्रह्मविद्या का महत्त्व दिखाया गया है, ब्योर हे मेत्रेयि ! उसी ब्रह्मविद्या को मैं तम से कहता हूं।। १६ ।।

मन्त्रः १७

इदं वै तन्मधु दध्यङ्काथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच । तदेतद्दिषः पश्यक-वोचत् । श्राथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यक्षं शिरः प्रत्यैरयतं स वां मधु मबोचदतायन्त्वाष्ट्रं यदस्राविप कक्ष्यं वामिति ॥

इदम्, वे, तत्, मधु, दध्यक्, आधर्तगाः, आश्वभयाम्, उत्राच, तत्, एतत्, ऋषिः, पश्यन्, अत्रोचत्, आर्थवंगाय, अश्विना, दधीचे, श्चारत्यम्, शिरः, प्रत्येरयतम्, सः, वाम्, मणु, प्रवोचत्, शृतायन्, त्वाष्ट्रम्, यद्, दस्त्री, भ्रापि, कक्ष्यम्, वाम्, इति ॥ पदार्थाः श्चन्ययः

+ मैत्रेयि=हे मैत्रेयि ! द्याथर्वगः=श्रथर्ववेदी द्रध्यक्=द्रध्यक्ऋवि अश्विभ्याम्=अश्वनीकुमारी के

तत्≕उस इदम्=इस मधु=मधुनामक वश-उवाच=कहता भया तत्≕तिसी प्तत्=इसी दध्यक् की कही हुई बहाविद्या को ऋषिः=एक ऋषि

षदार्थाः श्रन्वयः पश्यन्=देखता हम्रा

+म्रश्चिनी- } कुमारी =षश्वनीकुमारों से

> + इति=ऐसा श्रवोचत्≔कहता भवा कि अश्विना=हे अश्विनीकुमारो ! + युवाम्=तुम दोनों ने + य₹पे=जिस म्रधर्वाय=मधर्ववेदी

द्धीचे=दध्यक् के किये स्रश्व्यम्-शिर:=धरव के शिर को प्रत्यैरयतम्=प्राप्त कराया है

सः=उसी दध्यकृऋवि ने बाम्=तुम दोनों के विषे

श्चृतायन् १ अपने वचन को + सन् } पालन करता हुआ

मधु रे मधुविद्या का स्रवीचत् रे उपदेश किया

+ च=श्रीर द्स्री=हे शत्रुहन्ता धश्विनी-कुमारो ! यत्=जो

त्वाह्रम्=चिकित्सा शाध-सम्बन्धी ज्ञान है श्चाचि=श्रीर + यत्≕ओ कश्यम्≕भात्मविज्ञान है + ते=उन दोनों को वाम्=तुम दोनों के जिये इति=इस प्रकार + अवोचत्=उपदेश करता भया

हे मैत्रेयि, देवि ! जिस मधुनामक ब्रह्मविद्या को अधिवनीकुमारों के लिये अधर्ववेदी दध्य इन्नाधि ने उपदेश किया उसी ब्रह्मविद्या के उप-देश को सुन कर एक ऋषिने भी ऋदिवनीकुमारों से ऐसा कहा. हे ऋदिवनी-कुपारो ! जिस दध्यङ्कृषि के शिर को काट कर तुम लोगों ने श्रालग कर दिया श्रीर उसकी जगह पर घोड़े के शिर को लाकर लगा दिया, तिसी दध्यङ्कृति ने तुम्होर कल्याग्रार्थ स्रोर स्रपने वाक्य-पालनार्थ ब्रह्मविद्या का उपदेश तुम दोनों को किया, श्रीर हे शतुहन्ता. श्चारिबनीकुमारो ! जो चिकित्साशास्त्रसम्बन्धी ज्ञान है, श्चीर जो श्चातम-सम्बन्धी ज्ञान है, उन दोनों का भी उपदेश तुम्हारे क्लिंथ किया. इस मन्त्र से यह प्रकट होता है कि दृष्यङ्कृषि से चिकित्साशास्त्र झीर भात्मज्ञान, भारिवनीकुमारों को मिले हैं ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

इदं वैतन्मधु दध्यङ्काथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच तदेतहिषः पश्यम-वोचत् पुरर को द्विपदः पुरस्चके चतुष्पदः पुरः स पक्षी भूत्वा पुरः पुरुषः त्राविशदिति स वा अयं पुरुषः सर्वासु पूर्ष पुरिशयो नैनेन किंचनानाष्टतं नैनेन किंचनासंद्रतम् ॥

इदम, वै, तत्, मधु, दध्यङ्, आयर्वगाः आप्रिवभ्याम्, उवाच,

तत्, एतत्, अर्थिः, पश्यन्, अवोचत्, पुरः, चक्रे, द्विपदः, पुरः, चक्रे, चतुष्पदः, पुरः, सः, पक्षी, भूत्वा, पुरः, पुरुषः, आविशत, इति, सः, वै, अयम्, पुरुषः, सर्वासु, पूर्षुं, पुरिशयः, न, एनेन, किंचन, आनावृतम्, न, एनेन, किंचन, असंवृतम् ॥

पदार्थाः श्चन्यः + मेत्रेथि=हे प्रियमैत्रेथि ! व=निश्चय करके तत्=उसी इदम्=इस मधु=मधु ब्रह्मविया को आथर्वणः=अथर्ववेदी द्ध्यङ्=दध्यङ्ऋषि **अश्विभ्याम्=श्र**रिवनीकुमारी के प्रति उवाच=कहता भया तत्=डसी एतत्=इस मधु बहाविद्या को पश्यन्≕देखते हुये ऋषिः≔एक ऋषि ने श्रवोचत्=कहा कि सः=वह परमात्मा द्विपदः=शे पादवाले पुर:=पक्षी और मनुष्यों के शरीरों को चतुष्पदः=चार पादवासे पुरः≔पशुम्रा के शरीरों को चके=बनाता भया + सः=वही परमात्मा पुरः⇒पहिले पक्षी:=तिङ्गशरीर

भूत्व(=डो कर

श्रन्वयः पदार्थाः पुरः=शरीरों में पुरुष यानी पुर में पुरुषः = / रहनेवाला ऐसा + सन् = / श्रर्थपाही नाम / धारख करता हुन्ना श्राविशत् इति=प्रवेश करता भया ' सः { =वही श्रयम्=यह परमात्मा सर्वासु=सब पूर्ष=शरीरों में पुरिशयः } =सोनेवाला है एनन=इसी पुरुष करके किञ्चन=कुछ भी श्रनावृतम्=श्रनाच्छादित न= पुरुष करके सब चराचर श्रद्धाःग्रह आच्छादित है

+ तथा=तैसेही

किञ्चन=कुछ भी

एनेन=इसी पुरुष करके

्र अनुप्रवेशित नहीं है असंवृतम् ्रेसा नहीं है यानी

सब कुछ इसी परुष (करके प्रवेशित है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं है मैत्रेयि ! उसी मधुनामक ब्रह्माविया का उपदेश अध्यविदी दृष्यङ्कृषि ने आरिवनीकुमारों के प्रति कहा और तिसी मधुनामक ब्रह्माविया को जानता हुआ एक ऋषि उन अरिवनी-कुमारों से ऐसा कहता भया कि हे आरिवनीकुमारो ! वह परमात्मा दो परवाले पक्षी और मनुष्य के शरीरों को और फिर चार पैरवाले पश्चीं को शरीरों को बनाता भया. वही परमात्मा आदि में लिङ्गशरीर होकर शरीरों में पुरुष यानी पुर में रहनेवाला ऐसा अर्थश्राही नाम धारणा करता हुआ प्रवेश करता भया. वही परमात्मा सब शरीरों में सोने वाला पुरुष है, इसी पुरुष करके सब आच्छादित है यानी इसी पुरुष करके सब चराचर ब्रह्मायड ज्यात है और इसी पुरुष करके कुळ भी अननुप्रविशत नहीं है यानी सब कुळ प्रवेशित है, अथवा सब में यह ज्यात है. हे मैत्रेयि, देवि ! जो कुळ दृष्टिगोचर है वह सब ब्रह्मरूपही है ॥ १८॥

मन्त्रः १६

इदं वै तन्मधु दध्यङ्ङाथर्वणोऽश्विभ्यामुनाच तदेतदृषिः पश्य-भवोचत् रूपछं रूपं प्रतिरूपो वभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता बस्य हरयः शता दशेति अयं वै हरयो-ऽयं वै दश च सहस्राणि वहूनि चान्तानि च तदेतद्रस्रापूर्वमनपर-मनन्तरमवाश्वमयमात्मा ब्रह्म सर्वानुभूरित्यनुशासनम् ॥

इति पञ्चमं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

इदम्, वै, तत्, मधु, दध्यङ्, आधर्त्रगः, अश्विभ्याम्, उवाच, तत्, एतत्, मृषिः, पश्यन्, अवीचत्, रूपम्, रूपम्, प्रतिरूपः, वभूव, तत्, अस्य, रूपम्, प्रतिचक्षगाय, इन्द्रः, मायाभिः, पुरुरूपः, ईयते, युक्ताः, हि, अस्य, हरयः, शता, दश, इति, अयम्, वै, हरयः, अयम्, वै, दश, च, सहस्राणि, बहूनि, च, अनन्तानि, च, तत्, एतत्, व्रक्ष,

अंपूर्वम्, अनपरम्, अनेन्तरम्, अवाद्यम्, अयम्, आत्मा, ब्रह्मः सर्वा-नुमूः, इति, अनुशासनम् ॥

अन्वयः पदार्थाः

+ मैत्रेयि=हे विषमेत्रेयि, देवि ! वै=निश्चय करके

तत्=इस

इदम् } =इस मधुविद्या को मधु } आधर्वणः=ग्रथर्वनेदी

द्रध्यङ्=द्रध्यङ्ऋषि

अश्विभ्याम्=श्रारवनीकुमारीके प्रति

उघाच=कहता भया

तत्=उसी

पतत्=इस मधुविया को पश्यन्=देखता हुन्ना

ऋषिः=एक ऋषि

अवोचत्=कहता भया कि

+ सः=वह परमास्मा रूपम् रे ======

रूपम् } = इरएक रूप में रूपम्

प्रतिरूपः=प्रतिबिम्बरूप धभूव=होता भया

+किमर्थमिदम्=यह प्रतिविम्बरूप

क्यों होता भया + उच्यते=उत्तर यह कहा जाता

ग्रस्य≔इस श्रातमा का

तत्=बह

रूपम्=प्रतिबिम्बरूप

प्रतिचक्षग्।य=भारमत्व सिद्धि के लिये

+ अस्ति≔है यानी बदि प्रतिबिम्ब व हो तो बिम्ब का

ज्ञान नहीं हो सक्रा है

श्चन्वयः पदार्थाः

इन्द्रः=परमात्मा

मायाभिः=नाम रूप उपाधि करके पुरुद्धपः=षहुत रूपवाला

ईयते=जाना जाता है

यथा=जैसे

+ रध=रथ में

युक्ताः=बगे हुवे

हरयः=धोदे

+ राधनम्=रथी को

+ स्वदृष्टदेशम्=श्रपनं नेत्र के सामने के देश की तरफ

+ नयन्ति=ने जाते हैं

+ तथा=तैसेही

अस्य=इस प्रत्यगात्मा को

+ शरीरे=शरीर में युक्ताः=युक्त हुई

> हरयः=विष्यहरण करने वाकी इन्द्रियां भी

+ नयन्ति=ते जाती हैं ते=वे हान्द्रयां

+ यदि=श्रगर

दश { दश शांता (ची हैं तो :

इति=उतनाही

श्चयम्=यह प्रस्यगासमा भी वै=निरचय करके

अस्ति=है

. ख≕भौर

+ यदि=भगर + ते=वे इन्दियां दश } <u>= दश</u> सहस्राणि } हजार है तो इति=उतनाही श्रयम्=यह प्रत्यगारमा भी है च=श्रीर + यदि=श्रगर त=वे इन्द्रियां बहुनि=बहुत च=धौर द्यतन्तानि=असंख्य हैं तो द्वाते=**उतना**ही

+ अरे मैंत्रेयि=हे मैत्रेयि !

तत्=सोई एतत्=यह ब्रह्म=ब्रह्म-अनपरम्=जातिरहित है द्यनन्तरम्=व्यवधानरहित है श्चबाह्यम्=सर्वब्यापी है श्चयम=यही प्रत्यगातमा ब्रह्म=ब्रह्म है सर्वातुभू:=सबका अनुभव करने वाला है इति=इस प्रकार + श्रारे=हे वियमेश्रेयि ! श्रयम्=यह प्रत्यगातमा भी है श्रनुशासनम्=यह सब वेदान्त का सपदेश है

भागार्थ ।

हे प्रियमैत्रेयि ! इसी मधु ब्रह्मविद्या को अधर्ववेदी दध्यङ्गृषि अविवनीकुमारों के प्रति कहता भया और उसी विद्या की जानता हुआ एक अनुषि भी इत्येन शिष्य अवश्विनीकुमारों से कहता भया कि वह परमात्मा हरएक रूप में प्रतिविम्बरूप से स्थित हुआ है. प्रश्न होता है. वह क्यों ऐसा होता भया. उत्तर मिलता है कि वह प्रतिबिम्ब बिम्ब की सिद्धि के लिये होता भया है, क्योंकि विना प्रतिबिम्ब के ज्ञान के बिम्ब का ज्ञान नहीं होसक्ता है, हे मैत्रेयि ! वह परमात्मा नामरूप उपाधि करके वहरूपत्राका जाना जाता है, वास्तव में उसका एकडी रूप है. हे प्रियमेंत्रेयि ! जैसे स्थ में लगे हुये घोड़े स्थी को अपने नेत्र के सामने के देश की तरफ़ केजाते हैं, तैसेही इस प्रत्यगात्मा यानी जीव को शरीर में जगी हुई विषयहरण करनेवाली इन्द्रियां भी विषय की तरफ लेजाती हैं, वे इन्द्रियां एक हज़ार हैं, दश हज़ार हैं, बहुत हैं, असंख्य हैं, यानी जितनी वे हैं उतनाही यह प्रत्यगात्मा भी दिख-

लाई देता है. यही प्रत्यगात्मा ज्यापक ब्रह्म है, यही अब्रितीय है, यही सब ज्यवधानों से रहित है, यही प्रत्यगात्मा सबका अनुभवी है, हे प्रियमैत्रेयि ! यही वेदान्त का उपदेश है ॥ १६ ॥ इति पश्चमं ब्राह्मग्राम् ॥ ४ ॥

नाथ हुए सहस्तामा ।

श्रथ षष्ठं बाह्मग्रम् । मन्त्रः १

श्रथ वर्धशः पौतिमाष्यो गौपवनाद्गौपवनः पौतिमाष्यात्पौति-माष्यो गौपवनाद्गौपवनः कौशिकात्कौशिकः कौएडन्यात्कौएडन्यः शारिद्रल्याच्छारिहल्यःकोशिकाच गौतामाच गौतमः॥ १॥ श्रीग्न-ं वेश्यादाग्निवेश्यः शाण्डिल्याचानभिम्लाताचानभिम्लात त्र्यान-भिम्लातादानभिम्लात आनभिम्लातादानभिम्लातो द्रौतमः सैतवपाचीनयोग्याभ्याधं सैतवप्राचीनयोग्यौ पाराशर्या-त्पाराशयों भारद्वाजाद्वारद्वाजो भारद्वाजाच गौतमाच गौतमो भार-द्वाजाद्भारद्वाजः पाराशर्यात्पाराशर्यो बैजवापायनाह्रैजवापायनः कौशिकायनेः कौशिकायनिः ॥ २ ॥ घृतकौशिकाद्यृतकौशिकः पाराशयीयणात्पाराशयीयणः पाराशयीत्पाराशयीं जातुक्रष्यीज्ञा-तुकर्ण्य त्रासुरायणाच यास्काचाऽ ऽसुरायणस्त्रेवणेस्त्रेविरारीपजन्धने रौपजन्धनिरासुरेरासुरिर्भारद्वाजादुभारद्वाज त्रात्रेयादात्रेयो माएटे-र्मारिटर्गीतमाद्गौतमो गौतमाद्गौतमो वात्स्याद्वात्स्यः शारिडल्या-च्छाएडल्यः कैशोर्यात्काप्यात्कैशोर्यः काप्यः कुमारहारीतात्कुमार-हारीतो गालवाद्गालवो विदर्भीकौएडन्याद्विदर्भीकौएडन्यो व-त्सनपातो बाभ्रवाद्वत्सनपादुबाभ्रवः पथः सौभरात्पन्थाः सौभरो ऽयास्यादाङ्गिरसाद्यास्य त्र्याङ्गिरस त्र्याभृतेस्त्वाष्ट्रादाभृतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽश्विभ्यामश्विनौ दुधीच आथ-र्वणाइध्यङ्गाथर्वणो दैवादथर्वादैवो मृत्योः प्राध्वधंसनान्मृत्यु-

प्रध्वश्रमनः प्रध्वश्रमनात्मध्वश्रमना एकपेरेकपिविप्रचिचेविप्रचि-चिर्च्यष्टेर्व्यिष्टः सनारोः सनारः सनातनात्मनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठिनः परमेष्ठी ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भु ब्रह्मणे नमः ॥ ३ ॥ इति पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥

्रात पष्ठ ब्राह्मराम् ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि द्वितीयोऽघ्यायः ॥ २ ॥

श्रथ वंशः।

की विमाह्य ने गीपबन से हिला प्राप्त की. गीपबन ने पौतिमाध्य से बिला प्राप्त की. पौतिमाध्यने गौपवनसे, गौपवनने कौशिक से, कौशिकने कौगिडन्यसे. कौगिडन्यने शागिडल्यसे, शागिडल्यने कौशिक श्रीर गौतमसे, गौतमने आग्निवेश्यसे, आग्निवेश्यने शागिडत्य और अन्भि-म्लातसे, अनिभम्लातने आनिभम्लातसे, आनिभम्लातने आनिभम्लात से. श्रानभिम्लातने गौतम से. गौतमने सेतव श्रीर प्राचीनयोग्यसे. सेतव श्रीर प्राचीनयोग्य ने पाराशर्य से, पाराशर्य ने भारद्वाजसे, भारद्वाजने भारद्वाज श्रीर गौतमसे, गौतमने भारद्वाज से, भारद्वाज ने पाराशर्य से. पाराशर्य ने बैजवापायनसे. बैजवापायनने कौशिकायनि से. कौशिकायनिने घृतकौशिकसे, घृतकौशिकने पाराशर्यायगासे, पारा-शर्यायसाने पाराशर्य से, पाराशर्य ने जातकसूर्य से, जातकसूर्य ने श्रासुरायण श्रीर यास्करे, श्रासुरायण श्रीर यास्कन त्रैविशासे. त्रैविश्विन श्रीपत्रन्थनिसे, श्रीपत्रन्थनिने श्रासुरिसे, श्रासुरिने भारद्वात से, भारद्वाजने आत्रेयसे, आत्रेयने माग्रिटसे, माग्रिटने गौतम से, गौतमने गौतमसे, गौतमने वास्यसे, वात्स्यने शाधिडल्यसे, शाशिडल्य कैशोर्यकाप्यसे, कैशोर्यकाप्यने कुमारहारीतसे, कुमारहारीतने गालवसे. गालवने विदर्भिकौ रिडन्यसे, विदर्भिकौ रिडन्यने वत्सन-पातवाभ्रवसे, बत्सनपातवाभ्रवने पन्था श्रीर सीभरसे, पन्था श्रीरं सीभरने श्रायास्य श्रीर श्राङ्गिरसस, श्रायास्य श्राङ्गिरसने श्राभूति-

त्वाष्ट्रसे, आभूतित्वाष्ट्रने विश्वरूपत्वाष्ट्रसे, विश्वरूपत्वाष्ट्रने अश्विद्वय से, अश्वि ने दृष्यङ्ख्याथर्वण्यासे, दृष्यङ्ख्याथर्वण्याने अथर्वादेवसे, अथर्वादेवने मृत्यु प्राध्वंसनसे, मृत्युप्राध्वंसनने प्रध्वंसनसे, प्रध्वंसनने एकर्षिसे, एकर्षिने विप्रचित्तिसे, विप्रचित्तिने व्यष्टिसे, व्यष्टिने सनारुसे, सनारुने सनारुन से, सनातनने सनगसे, सनगने प्रमेष्टीसे, प्रमेष्टीने ब्रह्मसे, ब्रह्म स्वयंभू है, उस ब्रह्मको नमस्कार है ॥ १।३॥

इति षष्ठं ब्राह्मसाम् ॥ ६ ॥

इति श्रीबृहद्।रगयकोपनिषदि भाषानुवादे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

श्रीगगोशाय नमः।

अथ बृहदारएयकोपनिषदि तृतीयाध्याये

जनकाश्वमेधप्रकरणम् ।

श्रथ प्रथमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

*ॐजनको ह † वैदेहो ‡बहुदिसिर्णन यज्ञेनेजे तत्र ह कुरुपश्चालानां ब्राह्मणा श्रिभिसमेता वभूबुस्तस्य ह जनकस्य वैदेहस्य विजिज्ञासा वभूवकःस्विदेषां ब्राह्मणानामनूचानतम इति स ह गवाछ सहस्रम-वस्रोध दश दश पादा एकैकस्याः शृक्षयोराबद्धा वभूबुः॥

पदच्छेदः ।

्रम्, जनकः, ह, वैदेदः, बहुदक्षियोन, यज्ञेन, ईजे, तत्र, ह, कुरु-पश्चालानाम्, ब्राह्मयाः, अभिसमेताः, बभूवुः, तस्य, ह, जनकस्य, वैदेहस्य, विजिज्ञासा, बभूव, कः, स्वित्, एपाम्, ब्राह्मयानाम्, अन्-चानतमः, इति, सः, ह, गवाम्, सहस्रम्, अवरुरोध, दस, दश, पादाः, एकैकस्याः, श्रक्कयोः, आवद्धाः, बभूवुः ॥

^{*} जितने मिथिलादेश के राजा हुये हैं वे सब जनक नाम से प्रसिद्ध हुये हैं , क्योंकि वे अपनी प्रजा के ऊपर पिता के सदश कृपा रखते थे ॥

[†] नैदेह—इस रान्द में नि उपसर्ग है, जिसका धर्थ नहीं है, बीर देह का श्रर्थ शरीर है, वैदेह नह पुरुष कहा जाता है जिसका रारीराभिमान नष्ट होगया है, चूंकि मिथिलादेश के राजा जितने हुये हैं वे सब निद्वान् श्रद्धानिद देहाभिमानराहित हुये हैं, इस कारण ने वैदेह कहलाते रहे ॥

[‡] बहुद्दिया वह यज्ञ है जिसमें बहुत दृष्टिया ब्राह्मयों को दिया जाय, ऐसे यक्क अञ्चलेश और राजस्यादिक हैं॥

श्चन्ययः

पदार्थाः । श्रन्वयः

श्चन्वयः इति=ऐसी पदार्थाः

अम्=अम् ह=मसिद वैदेह:=विदेह देशका राजा जनकः=जनक बहुदक्षियोन=बहुदक्षियासम्बन्धी यन्नेन=यज्ञ करके ईजे=यज्ञ करता भया च≕श्रौर + यदा=जब तत्र=उस यज्ञ में कुरुपञ्चालानाम्=कुरु श्रीर पद्माल देश के ह=परम प्रसिद्ध ब्राह्मण्यः=विद्वान् ब्राह्मण् ग्रमिसमेताः=एकत्र बभूद्यः=होते भये वैदेहस्य=विदेहदेश के राजा जनकस्य=जनक को

विजिज्ञासा=तीत्र जिज्ञासा

यभूव=उरपज्ञ होती भई कि

एषाम्=इन उपस्थितमान्य

ब्राह्मणानाम्=ब्राह्मणों के मध्य में

कः=कौन

स्वित्=सा ब्राह्मण श्रम्चानतमः=धित ब्रह्मवेचा है

+ प्वंविचार्य=ऐसा विचार करके

एकैकस्याः=एक एक गौके

श्रङ्गयोः=दोनों सींगों में

दश दश=दस दस

पादाः=पाद सुवर्थ

बभूद्यः=हुये गवाम् सहस्रम्=एक सहस्र गौत्रों को सः ह=वह राजा श्रवहरोध=एक जगह रखवाता

श्रावद्धाः=वँ**धे**

भावार्थ ।

हे सीम्य ! एक समय मिथिलादेश के राजा जनक ने बहुद्किशानामक यक्षको किया, उस यक्ष में देश देशान्तर के ब्रह्मविद् ब्राह्मश्र कुलाये गये, उसमें से विशेष करके कुरु और पश्चालदेशके ब्राह्मश्र थे, ऐसा विचार कर राजा जनक ने इस यक्ष का आरम्भ किया कि जो ब्रह्मवित् पुरुष इस यक्ष निमित्त यहां एकत्र होंगे उनमें से कीन अति-श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता निकलेगा, जो मेरे को उपदेश करने को योग्य होगा, ऐसी विशेष जिक्कासा करके एक सहस्न नवीन दुग्धवती गौकों को सींगों में सुवर्ण क पत्र महवाकर दान निमित्त एकत्र करवाया ॥ १॥

मन्त्रः २

तान्होवाच ब्राह्मणा भगवन्तो यो वो ब्रह्मिष्टः स एता गा उद-जतामिति ते ह ब्राह्मणा न दृष्टुषुरथ ह याज्ञवल्क्यः स्वमेव ब्रह्म-चारिणमुवाचैताः सोम्योदन सामश्रवा २ इति ता होदाचकार ते ह ब्राह्मणारचुकुधुः कथं नो ब्रह्मिष्ठो ब्रुवीतेत्यथ ह जनकस्य वैदेहस्य होताऽश्वलो वभूव स हैनं पप्रच्छ त्वं नु खलु नो याज्ञवल्क्य ब्रह्मिष्टोसी २ इति स होवाच नमो वयं ब्रह्मिष्टाय कुर्मो गोकामा एववय १ सम इति तथे ह तत एव मध्दुं दथे होताश्वलः ॥

पदच्छेदः ।

तान्, ह, उवाच, ब्राह्मणाः, भगवन्तः, यः, वः, ब्रह्मिष्टः, सः, पताः, गाः, उदजताम्, इति, ते, ह, ब्राह्मणाः, न, द्धृषुः, श्रथ, ह, याज्ञवल्कयः, स्त्रम्, एव, ब्रह्मचारिग्रम्, उवाच, एताः, सोम्य, उदज, सामश्रवाः, इति, ताः, ह, उदाचकार, ते, ह, ब्राह्मणाः, चुकुषुः, कथम्, नः, ब्रह्मिष्ठः, ब्रुवीत, इति, श्रथ, ह, जनकस्य, वैदेहस्य, होता, श्रश्वलः, वमूत्र, सः, ह, एनम्, पपन्छ, त्वम्, नु, ख्रत्नु, नः, याज्ञवल्कय, ब्रह्मिष्ठः, श्रास्त, इति, सः, ह, उवाच, नमः, वयम्, ब्रह्मिष्ठाय, कुमैः, गोकामाः, एव, वयम्, समः, इति, तम्, ह, ततः, एव, प्रष्टुम्, द्धे, होता, श्रश्वलः।।

श्चान्वयः प्र

पदार्थाः स्रम्बयः

पदार्थाः

सः ह=वह प्रसिद्ध राजा जनक तान्=डन ब्राह्मणों से

इति=ऐसा उवाच=इहता भया कि

+ हे ब्राह्मणाः=हे ब्राह्मणो ! यूयम्=म्राप

भगवन्तः=सबही पूज्य हैं

+ परन्तु=परन्तु

वः=भापकोगों में यः=जो ब्रह्मिष्ठः-भति बद्यानिष्ठ हो सः=वह प्ताः=इन माः=गीओं को

उद्जताम्=भपने घर ले जाय + यदा=जब

· यदा=जब ते≕वे ब्राह्मशाः=ब्राह्मश + गाः=उन गौभों को न≕नहीं दधृषुः=प्रहश करते भये श्रथ=तब ह=पृज्य

याज्ञवल्क्यः=यःज्ञवल्क्य ने स्वम् ब्रह्म- रे अपने एक ब्रह्मवारी चारिसम् रे शिष्य से

> इति=ऐसा उवाच=कहा कि सामश्रवाः=हे सामवेदिन्, सोम्य=सौम्य !

+ त्वम्=तृ एता:=इन गौथों को उदज=मेरे घर लेजा ह=तब

+ सः≔वह शिष्य एताः=उन गौश्रों की उदाचकार=गुरु के घर ले गया

> ह=उस पर ते≕वे

ब्राह्मगाः=ब्राह्मग चुकुधुः=कोध करते भये + च=धौर इति=ऐसा + ऊचुः=कहते भये कि

नः=इम लोगों में ब्रह्मिष्ठः=श्रधिक ब्रह्मवेत्ता अस्मि=हं मैं + त्यम्=तूने

कथम्=कैसे ऐसा ब्रवीत=धपने को कहा द्मध=तिसके पश्चात् ह=तव चैदेहस्य=विदेह देश का राजा

जनकस्य=जनक का €=पूज्य श्चाश्चाताः=श्रश्वतानामक ऋषि यः=जो होता=यज्ञ में होता बभूव=हुन्ना था सः=वह एनम्=इस याज्ञवल्वय से

ह=स्पष्ट पप्रच्छ=पूंछता भया कि याञ्चयन्त्रय=हे याज्ञवस्क्य ! नु=क्या

खलु=निरचय करके त्वम्=न् नः=हम लोगों में ब्रह्मिष्ठः=श्रतिब्राह्म

असि=है इति=ऐसा + श्रुत्वा=तिरस्कार वाक्य को

सुन कर सः ह=वह पृष्य याज्ञवस्क्य उवाच=कहता भया कि वयम्≕में ब्रह्मिष्ठाय=वस्रवेत्तात्रों को

> नम:=नमस्कार कुर्मः=करता हूं

बयम्≕भें

एव=केवन्न गोकामाः स्मः≕गोन्नों की कामना

वासा हूं इति=तब तम=उस य!इवल्क्य से

भ्=०त गर्धनसम्ब

ततः एव=ब्रह्मिष्ठ प्रतिशा स्वी-कार करने के कारख अश्चलः=भरवलनामक होता=होता

प्रश्वलः=भरवलनामक होता=होता प्रदुम्=प्रश्नों का करना दथं=श्रारम्भ किया

हें सौम्य ! अब राजा जनक न देखा कि सब ब्राह्मगा एकत्र हो गये हैं तब उनसे बोले कि है माननीय, पूज्य, ब्राह्मणो ! आप कोगों में से जो अतिशय करके ब्रह्मविद् हों वे इन गौओं को अपने घर लेजायें, इतना कह कर चूप होगये, यह सुनकर सब ब्राह्मण एक दूसरे की तरफ देखने लगे, पर उनमें से किसी को साहस न हुआ कि वह उन गौओं को अपने घर ले जाय, जब याज्ञवत्क्य ने देखा कि कोई लेने को समर्थ नहीं होता है. तब उन्होंने अपने प्रिय शिष्य सामश्रवा से कहा कि हे प्रिय! तू इन गौओं को मेरे घर के जा, ऐसा सुनकर वह उन सब गौओं को केकर याज्ञवल्क्य के घर चला गया, यह देख कर समस्त ब्राह्मण कृद्ध हो एक-बारगी बोल उठे कि यह याज्ञवहक्य हम लोगों में अपने को अति ब्रह्मनिष्ठ श्रीर ब्रह्मविद कैसे कह सकता है ? इसके पीछे राजा जनक का होता श्राश्वल नामक ब्राह्मशा क्रोधित होकर याज्ञवल्क्य से कहता है अरे याज्ञवल्क्य ! क्या तही सबसे श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता है याज्ञवत्क्य ने कहा है होता. श्राश्वल ! मैं श्रपने को ऐसा नहीं समभता हूं, मैं ब्रह्मवेत्ता पुरुषों का दास हूं, उनको मैं नमस्कार करता हूं, मैंने अपने को गौत्रों की कामनावाला आर्र आप कोगों को गौओं की कामना से रहित पाकर गौओं को अपने घर भेज दिया है, ऐसा सुनकर श्राश्वल ने कहा यह बात नहीं तु श्रापने को श्रावश्य श्चिति श्रेष्ठ मानता है, मैं प्रश्न करता हूं, तू उनका उत्तर है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्छ सर्वं मृत्युनाप्तछं सर्वे मृत्युनाभि-

पत्रं केन यजमानो मृत्योराप्तिमतिमुच्यत इति होत्रर्त्विजाग्निना वाचा वाग्वे यक्षस्य होता तचेयं वाक्सोयमग्निः स होता स मुक्तिः सातिमुक्तिः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, ज्वाच, यत्, इदम्, सर्वम्, मृत्युना, आप्तम्, सर्वम्, मृत्युना, अभिपन्नम्, केन, यजमानः, मृत्योः, आप्तिम्, अतिमु-च्यते, इति, होत्रा, अमृत्विजा, अग्निना, वाचा, वाग्, वे, यज्ञस्य, होता, तत्, या, इयम्, वाक्, सः, अयम्, अग्निः, सः, होता, सः, मुक्तिः, सा, अतिमुक्तिः ॥

पदार्थाः

चन्चयः

इति=ऐसा

श्रुत्वा=सुन कर उवाच ह=ग्रश्वल कहता भया कि

याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

यत्=जो इदम्=यह

सर्वम्=सब पदार्थ यज्ञ बिषे दीखते हैं

तत्=वह मृत्युना=मृत्यु करके स्राप्तम्=प्रस्त हैं च=स्रोर

सर्वम्=सब पदार्थ मृत्युना=मृत्यु करकेही म्राभिपन्नम्=वशीकृत हुये हें

+पतद्दशायाम्=पेसी हालत में केन=किस साधन करके

यजमानः=यजमान

मृत्योः=मृत्यु के

श्चन्वयः

ायः

श्राप्तिम्=ब्रहोरात्ररूप पाश को श्रतिमुच्यते=उल्लह्धन करसक्का है

पदार्थाः '

+ याज्ञचल्दयः=याज्ञवल्क्य

+ उवाच=कहते भये कि
 + अश्वल=हे अश्वल!

हात्रिवजा=होतारूप ऋत्विज्

श्चरिनना=ऋत्विज्रूप श्रामन वाचा=श्चरिनरूप वाणी करके

+ सः=वह यजमान

+ मुच्यते=मृत्यु के पाश से

मुक्त होजाता है

+ हि≔क्योंकि

यज्ञस्य=यज्ञका होता=होताही

वाक्=वाक्य है

तत्=इस विये

इयम्=यह या≕जो

वाक्=वाक्य है

सः≔वही

ज्ञयम्≔यह झरिनः=झरिन है सः=वही होता=होताहै सः=वही होतारूपी झरिन मुक्किः≔मुक्रि है बानी मुक्कि का साथन है + च=धौर सा=चढी मुक्ति बानी वही मुक्ति का साधन अतिसुक्तिः≐ग्रतिमुक्ति है

भावार्थ ।

ŧ

हे याज्ञवल्क्य ! यज्ञ में जो कुछ वस्तु दिखाई देती हैं, वे सब मृत्यु से प्रसित हैं, ऐसी हाजत में किस के द्वारा यजमान मृत्यु की पाश से छूट जाता है, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि होता नामक अमृत्विज् की सहायता करके यजमान मृक्त होजाता है, वह होता अग्निरूप है, अग्निसे तात्पर्य वाक्य से हैं, यानी जब होता शुद्ध वाणी से उदात्त, अगुदात्त, स्वरित स्वरों के साथ वैदिकमन्त्रों का उचारण यज्ञ विषे करता है तब देवता प्रसन्न होकर यजमान को स्वर्ग में ले जाते हैं, इस लिये हे अग्निक होता ही यज्ञ का होता है, वही अग्नि है, और वही मुक्ति का साथन है। 3 ।।

मन्त्रः ४

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्धं सर्वमहोरात्राभ्यामाप्तधं सर्वम-होरात्राभ्यामभिपन्नं केन यजमानोऽहोरात्रयोराप्तिमतिमुच्यत इत्य-ध्वर्युणार्त्विजा चक्षुषादित्येन चक्षुर्वे यज्ञस्याध्वर्युस्तद्यदिदं चक्षुः सोसावादित्यः सोध्वर्युः स मुक्तिः सातिमुक्तिः ॥

पवच्छेदः ।

याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इद्म्, सर्वम्, झहोरात्राभ्याम्, आप्तम्, सर्वम्, झहोरात्राभ्याम्, आभिपन्नम्, केन, यज्ञमानः, झहो-रात्रयोः, आप्तिम्, अतिसुच्यते, इति, अध्वर्युगा, ऋतिज्ञा, चक्षुषा, आदित्येन, चक्षुः, वै, यज्ञस्य, अध्वर्युः, तत्, यत्, इद्म्, चक्षुः, सः, अस्ते, आदित्यः, सः, अध्वर्युः, सः, सुक्तः, सा, अतिसुक्तिः ॥

श्चान्त्रयः

पदार्थाः ग्रन्वयः + ग्राश्वलः=श्रश्वल ने इति=ऐसा उवाच=कहा कि थाञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्=जो इदम्≃यह सर्वम्=सब सामग्री + दृश्यते=यज्ञ विषे दिखाई देती हैं तस्≔वह सब श्रहोरात्राभ्याम्=दिन रात्रि करके आप्तम्=गृहीत हैं च=श्रीर सर्वम्=सर सामग्री श्रहोरात्राभ्याम्=दिन रात्रि करके श्राभिपन्नम्=वशीकृत हुई हैं + एतइशायाम्=ऐसी हालत में केन=किस साधन करके यजमानः=यजमान ब्रहोरात्रयोः=ब्रहोरात्र के श्चाप्तिम्=पाश को श्रतिमुच्यते=उत्तहन करके मुक्रे हो जाता है + याञ्चन्द्रयः=याज्ञन्द्रय ने + उवाच=उत्तर दिया कि + अश्वल=हे अश्वल!

अध्वर्युणा=अध्वर्युरूप

ऋत्विजा=ऋत्विज् चक्षुपा=ऋत्विज्रूप चक्षु आदित्येन=चक्षरूप भादित्य + सः=वह जीव + मुख्यते=मुक्त होता है हि=क्योंकि यशस्य=यश का **श्च**ध्वर्युः=श्रध्वर्यु वै=ही चश्चः=नेत्र है यत्=जो इदम्=यह चक्षुः=नेत्र है सः=वही श्रसौ=यह ऋादित्यः=सूर्व है सः=वडी सूर्य श्चार्य्युः=श्रध्वर्यु हे सः=वही श्रध्वर्यु मुक्ति:=यजमान की मुक्ति का कारण है सा=वही

श्रतिमुक्तिः=उसकी श्रतिमुक्ति का

भी कारण है

पदार्थाः

भावार्थ।

प्रथम प्रश्न के उत्तर के पाने से समाधान होकर अध्यक्त होता सन्तष्ट होता हुआ फिर प्रश्न करता है, हे याझवल्क्य ! इस संसार में यावद् वस्तु हैं सब दिन श्रीर रात्रि से गृहीत हैं, ऐसी हालत में किस उपाय करके यह का कर्ता यानी यजमान श्रहोगत्र के पाश की उल्लिखन करके मुक्त हो जाता है, इस के उत्तर में याह्मवल्क्य कहते हैं कि हे श्रश्वल ! अध्वर्युनामक जो ऋत्विज् है, उसकी सहायता करके यह का कर्ता यजमान मुक्त हो जाता है, हे श्रश्वल ! श्रध्वर्यु के कहने से मेरा मतलब नेत्र श्रीर सूर्य है, जब यजमान नेत्र के द्वारा भली प्रकार विधिप्रके यह करता है, तब सूर्यदेवना श्रापनी रश्मियों द्वारा उस यहकर्ता को श्रह्मलोक को ले जाकर श्रावागमन में गुक्त करदेता है, इस लिये यजमान का शुद्ध वश्रु ही श्रध्वर्यु है। । ४ ॥

मन्त्रः ५

याज्ञवल्वयेति होवाच यदिद् अ सर्व प्रविपक्षापरपक्षाभ्यामाप्त अ सर्व प्रविपक्षापरपक्षाभ्यामभिषकं केन यजमानः प्रविपक्षापरपक्षयो- राप्तिमतिमुच्यत इत्युद्धात्रार्त्विजा वायुना प्राणेन प्राणो वे यज्ञस्यो- द्वाता तथोयं प्राणः स वायुः स उद्घाता स मुक्तिः साऽति नुक्तिः ॥

पदच्छदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इत्म्, सर्वम्, पूर्वपक्षापरपद्धा-भ्याम्, आप्तम्, सर्वम्, पूर्वपक्षापरपक्षाभ्याम्, अभिपन्नम्, केन, यज्ञ-मानः, पूर्वपक्षापरपक्षयोः, आप्तिम्, आतिमुन्यते, इति, उद्गाता, ऋदिजा, वायुना, प्रास्तेन, प्रास्तः, वै, यज्ञस्य, उद्गाता, तत्, यः, अयम्, प्रास्तः, सः, वायुः, सः, उद्गाता, सः, म्रोक्तः, सा, अतिमुक्तिः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ अश्वलः=अश्वल ने

तत्व=वह सब

+ उवाच=कहा कि याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

पूर्वपक्षापर- } =शुक्र कृष्ण पक्ष करके पक्षाभ्याम् अस्तिम्=प्रस्त हैं

यत्≔नो इंदम्≔यह सर्वम्≕सब पशर्थ यज्ञ विषे हैं

+ च≓धौर सर्वम्=वही सब

पूर्वपक्षापर- (_शुक्र भीर कृष्य पक्ष पक्षाभ्याम् 🕽 करके श्चांभपन्नम्=वशीकृत हुये हैं + पतहशायाम्=ऐसी हालत में + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! .यज्ञमानः=यजमान क्त=किस साधन करके पूर्वपक्षापर-पक्षयोः आप्तिम्=पाश को श्रातिम्चयते=उल्लंबन करके मुक्र होता है + याझचल्क्यः=याझवस्क्य + उवाच=कहते भये कि + अश्वल=हे धरवल ! उद्गात्रा=उद्गातारूपी ऋत्विजा=ऋत्विज् वायुना=ऋत्विज्रूप वायु प्राणन=वायुरूप प्राण करके सः=वह यजमान

+ सुख्यते=मुक्त हो जाता है हि=क्योंकि यक्रस्य=यज्ञ का प्राणः=प्राय ही उद्गाता=उद्गाता है तत्=इस बिये यः=जो श्रयम्≔यह प्राणः=प्राण है सः≔वही वायुः=बाद्यवायु है सः=वही उद्गाता=उद्गाता है सः=बही मुक्तिः=यजमान के मुक्ति का साधन है सा=वही मुक्ति श्रतिमुक्तिः=श्रतिमुक्ति का भी साधन है

भावार्थ ।

श्चाश्वक होता फिर प्रश्न करता है, हे याज्ञवल्क्य ! संसार में सव पदार्थ कृत्या श्चीर शुक्तपक्ष करके व्याप्त हैं, ऐसी श्चावस्था में हे याज्ञ-वल्क्य ! किस उपाय करके पूर्वपक्ष श्चीर श्चारपक्ष की व्याप्ति से यञ्चकर्ता शुक्त होता है, इस के उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि हे श्चारवल ! उद्गातानामक ऋत्विज्ञ की सहायता से यज्ञमान दोनों पक्षों की व्याप्ति से छूट जाता है, मनुष्यसम्बन्धी उद्गाता से मेरा मतलव नहीं है, विक्त घारावायु से श्चीर याह्यवायु से मतलव है, हे श्चारवल ! यह घारावायु प्रारावायु है, यही उद्गाता है, यही बाह्य-वायु है, यही प्रारा है प्राराही को इन्द्रियों भी कहते हैं, प्रत्येक इन्द्रियों का ग्रुद्ध करना ही परम साधन है जब इन्द्रियां ग्रुद्ध होजाती हैं तब इनकी सहायता करके यजमान का कल्यागा होता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

याज्ञवन्त्रयेति होवाच यदिदमन्तरिक्षमनारम्वणिमव केनाऽऽक्र-मेण यजमानः स्वर्ग लोकमाक्रमत इति ब्रह्मणित्विंजा मनसा चन्द्रेरा मनो वे यज्ञस्य ब्रह्मा तद्यदिदं मनः सोऽसौ चन्द्रः स ब्रह्मा स मुक्लिः सातिमुक्लिरित्यतिमोक्षा अथ संपदः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवत्क्य, इति, ह, ज्ञाच, यत्, इदम्, अन्तरिक्षम्, आनार-म्बर्गम्, इव, केन, आक्रमेग्ग्, यजमानः, स्वर्गम्, लोकम्, आक्रमः।, इति, ब्रह्मग्गाः, अनृत्विजा, मनसा, चन्द्रेग्ग्, मनः, वे, यज्ञस्य, ब्रह्मा, तत्, यत्, इदम्, मनः, सः, असौ, चन्द्रः, सः, ब्रह्मा, सः, मुिकः, सा, अतिमुक्तिः, इति, आतिमोक्षाः, अथ, संपदः ॥

पदार्थाः आक्रमते=प्राप्त होता है + याज्ञचल्कयः=याज्ञवस्कय ने + उवाच=कहा ब्रह्मगा=ब्रह्मारूप **ऋ**त्विजा=ऋत्विज् मनसा=ऋत्विज्रूप मन + च=श्रीर चन्द्रेग्=मनरूप चन्द्र करके आक्रमते=प्राप्त होता है हि=क्योंकि यञ्चस्य=यजमान का म्रनः=मन वै=ही ब्रह्माः ज्वा है तत⇒इस ाजये

यत्=जो इदम्=यह मनः=मन है सः=वही श्रःसी=यह च्यु:=चन्द्रमा है सः=वही च-द्रमा ब्रह्मा=ब्रह्मा है सः=वही वन्द्रमा मुक्तिः=यजमान के मुक्ति का
साधन है
सा=वह मृक्ति
आतिमुक्तिः=अतिमृक्ति है
इति=इस प्रकार
अतिमोक्षाः=यजमान तापत्रय से
खूट जाता है
अथ=अव आगे
संपदः=पुरुषार्थक संपत्तियाः
+ कथ्यन्ते=कडी जाती हैं

भावार्थ ।

अप्रतल फिर प्रश्न करता है, हे याज्ञवत्कय ! यह सामने का अन्त-रिक्ष यानी आकाश निराजम्ब प्रतीत होता है, और स्वर्गलोक इससे अगो हैं, तब किसकी सहायता से यजमान स्वर्गलोक को पहुँचता है, इस पर याज्ञवत्कय कहते हैं कि हे अप्रवल ! ब्रह्मानामक अपृत्विज की सहायता से यजमान स्वर्गलोक को चढ़ता है, हे अप्रवल ! ब्रह्मा से भेरा मतलब मनरूपी चन्द्रमा से है, जब यजमान का कल्यागा होगा तब केवल शुद्ध मन करकेही होगा यही मन यज्ञ का ब्रह्मा है, इस लिये जो यह मन है वही चन्द्रमा है, वही ब्रह्मा है, वह चन्द्रमाही मुक्ति का साधन है, इस लिये शुद्ध मनही यजमान को चन्द्रलोक में पहुँचा कर उसको अत्यन्त सुखाभेगी बनाता है।। है।।

मन्त्रः ७

याक्रवल्क्येति होवाच कितिभरयमद्यिभर्होताऽस्मिन् यक्ने करिष्य-तीति तिस्रिभिरिति कतमास्तास्तिस्न इति पुरोनुवाक्या च याज्या च शस्येव तृतीया किं ताभिर्जयतीति यत्किश्चेदं प्राणभृदिति ।।

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कतिभिः, श्रयम्, श्रयः, श्राप्तिः, होता, श्रस्मिन्, युक्के, करिष्यति, इति, तिसृभिः, इति, कतमाः, ताः, तिस्रः, इति, पुरोतुवाक्या, च, याज्या, च, शस्या, एव, तृतीया, किम्, ताभिः, जयित, इति, यत्, किच्च, इत्म्, प्राण्यस्त्, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ अश्वलः=अश्वल ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा कि याज्ञवल्कय=हे याज्ञवरूव ! श्रयम्≕यह होता=होता ग्रदा=ग्राज कतिभिः=िकतनी क्राग्भिः=ऋचात्रों करके श्चारिमन्=इस संमुख यक्र≡यज्ञ में करिष्यति=स्तुति करता हुन्ना श्रपना कार्य करेगा इति=ऐसा सुन कर + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि तिस्भिः=तीन ऋचाश्रों करके

+ श्राह्यतः=भ्रश्वतः ने + श्राह्यहा ताः=वे

कतमाः=कौनसी

तिस्तः=तीन ऋचायें हैं

करेगा

इति≔इस पर

+याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ उवाच=कहा

पुरोजुवाक्या=पहिली पुरोनुवाक्या है याज्या=बुसरी याज्या है

च=धोर तृतीया=तीसरी शस्या=शस्या है ततः=तिसके पीछे

ततः=तसक पाछ + ऋश्वलः=ऋश्वल ने

+ पप्रच्छ=पूंछा

ताभिः=उन तीन ऋचाओं

करके

यजमानः=यजमान किम्=किसको जयति=जीतता है इति=इस पर

+ याक्क्चल्क्यः=याज्ञबल्क्य ने

+ श्राह=कहा यत् किञ्च=जितने इस जगत् में प्राण्भृत्=प्राण्धारी हैं उन

सब को

भावार्थ ।

अध्यक्त फिर प्रश्न करता है, हे याज्ञवल्क्य ! कितनी अनुचाओं से आज यह होता प्रस्तुत यज्ञ में हवनादि कार्य करेगा, उसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं, तीन अनुचाओं करके होता अध्यना कार्य करेगा, फिर झरवल पूंछता है, हे याझवल्क्य ! वह तीन भृचार्ये कौन कौनसी हैं, इसके उत्तर में याझवल्क्य कहते हैं, हे झरवल ! पहिली भृचा पुरोनुवाक्या है, दूसरी याज्या है, तीसरी शस्या है, यानी जो भृचार्ये कार्यारम्भ के पहिले पढ़ी जाती हैं, वे पुरोनुवाक्या हैं, झौर जो भृचार्ये प्रत्येक विधि में पढ़ी जाती हैं, वे याज्या कही जाती हैं, झौर जो झन्त में स्तुतिनिमित्त बहुतसी भृचार्ये पढ़ी जाती हैं, वे शस्या कहलाती हैं, उन्हीं सब भृचाओं को पढ़ कर होता झाज यझ करेगा, उसको सुन कर फिर झरवल पूंछता है कि हे याझवल्क्य ! इन तीन प्रकार की भृचाओं से यजमान का क्या लाभ होताहें ? इस पर याझवल्क्य उत्तर देते हैं कि हे झरवल ! जगत् में जितने प्राग्णी हैं वे सब यजमान को प्राप्त होते हैं ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

याइवल्क्येति होवाच कत्ययमद्याध्वर्युरिस्मन् यह आहुतीर्होष्य-'तीति तिस्न इति कतमास्तास्तिस्न इति या हुता उज्ज्वलन्ति या हुता अतिनेदन्ते या हुता अधिशेरते किं ताभिर्जयतीति या हुता उज्ज्वलन्ति देवलोकमेव ताभिर्जयति दीप्यत इव हि देवलोको या हुता अतिनेदन्ते पितृलोकमेव ताभिर्जयत्यतीव हि पितृलोको या हुता अधिशेरते मनुष्यलोकमेव ताभिर्जयत्यध इव हि मनुष्यलोकः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, इ, उवाच, कित, ध्रयम्, ध्रद्य, ध्राध्वर्युः, ध्रास्मिन्, यज्ञे, ध्राहृतीः, होष्यित, इति, तिस्रः, इति, कतमाः, ताः, तिस्रः, इति, याः, हृताः, ष्राधिशे-रते, किम्, ताभिः, जयित, इति, याः, हृताः, पञ्ज्वलन्ति, वेवलोकम्, एव, ताभिः, जयित, दीप्यते, इव, हि, देवलोकः, याः, हृताः, ध्रति-नेदन्ते, पिनृलोकम्, एव, ताभिः, जयित, इताः, ध्रती-नेदन्ते, पिनृलोकम्, एव, ताभिः, जयित, ध्रतीव, हि, पिनृलोकः, याः,

हुनाः, श्राधिशेरते, मनुष्यज्ञोकम्, एव, ताभिः, जयति, श्राघः, इव, हि, मनुष्यजोकः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

ग्रन्वयः

पदार्थाः

+ अध्वतः=अश्वत ने इति=इस प्रकार उवाच=पृंजा कि याज्ञवल्क्य=इ याज्ञवल्क्य !

श्रद्य=ग्राज ग्रदम्=यह ग्रध्वर्युः=ग्रध्वर्यु

श्चास्मिन्=इस यक्के=यक्चमें कति=कितनी

श्चाहुतीः=ग्चाहुनियां होध्यति=होम करेगा इति=हस पर

+ याञ्चचल्क्यः=याज्ञवल्∓य ने

त्राह=कहा तिस्नः≔्तीन श्राहुतियां होच्यति=होस करेगा इति=तब सः=वह धश्वज

उघान्च=बोला ताः=वे तिस्नः=तीन

कतमाः=कौन ब्राहुतियां हैं १ + याब्रवह्क्यः=इसके उत्तर में

> याज्ञवस्य **कथयति=क**हते हैं

याः≕जो

हुताः=ग्राहुतियां कुण्ड में हाली हुई

उज्ज्वलन्ति=ऊपर को प्रज्वित होती हैं या:=जो स्राहुतियां

हुनाः=कुण्ड में डाजी हुई श्रतिनेदन्ते=अत्यन्त नाद करती हैं याः=जो बाहुतियां

हुता:=कुबड में डाबी हुई ऋधिशंरते=ऊपर जाकर नीचे को बैठ जाती हैं

+ इति=इस पर ग्रश्वलः=ग्रश्वल ने उवाच=पृंद्या कि

ताभिः=उन बाहुतियों करके + यजमानः=यजमान किम्=किसको जयति=जीतता है ?

> इति=इस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं

याः≔जो हुताः=म्राहृतियां उउज्वलन्ति⇒कपर ज्वलित होती हैं ताभिः=उन करके

देवलोकम्=देवलोक को एच=श्रवश्य जयति=जीतता है

हि≕क्योंकि

देवलोकः=देवलोक
दीप्यते इच=प्रकाशवान् सा
दिखता है
याः=जा
हुताः=प्राहुतियां
अतिनेदन्त=प्रति नाद करती हैं
ताभिः=डन प्राहुतियों करके
पितृलोक म्=पिनृलोक को
पव=प्रवश्य
जराति=जीतता है
दि=क्योंकि
पितृलोक:=पिनृलोक

श्चतीव=श्चत्यन्त राज्य करते हैं

याः=जो

हुताः=श्चाहुतियां
श्चिथोरते=नीचे बैठती हैं

ताभिः=उन करके

मनुष्यलोकम्=मनुष्यलोक को

जयात=जीतता है

हि=क्योंकि
श्यम्=यह

मनुष्यलोक:=मनुष्यलोक

श्चाः=तीचे विश्वत है

भावार्थ ।

पुनः श्राश्वल प्रश्न करना है कि हे याज्ञवल्क्य ! आज यह श्राध्वर्युं किननी आहुतियां को इस यज्ञ विषे देगा ! इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि तीन आहुतियां, फिर अर्र्यल पूंछना है वे तीन आहुतियां कौन कौन सी हैं ! याज्ञवल्क्य कहते हैं पहिली आहुति वे हैं जो अ्राग्निकुगड में डालने पर अपर को प्रज्वलित होती हैं, दूमरी वे हैं जो अ्राग्निकुगड में डालने पर अस्यन्त नाद करती हैं, तीसरी वे हैं जो अ्राग्निकुगड में डालने पर नीचे को बैठनी हैं, इन तीन आहुतियों के साथ अपर कही हुई तीन प्रकार की अग्र्वायं पढ़ी जाती हैं, तिस पर अर्थन कही हुई तीन प्रकार की अग्र्वायं पढ़ी जाती हैं, तिस पर अर्थन कही हुई तीन प्रकार की अग्र्वायं पढ़ी जाती हैं, तिस पर अर्थन कही हुई तीन प्रकार की अग्र्वायं पढ़ी जाती हैं, तिस पर अर्थन किस वस्तु को पाता है ! आप कहें, इस पर याज्ञवल्क्य समाव्यान करते हैं कि हे अर्थन्त ! जो आहुतियां उत्पर को प्रज्वलित होती हैं उन करके यजमान देवलोक को जय करता है, क्योंकि देवलोक प्रकाशवान् है, इस कारणा देवलोक की प्राप्त प्रज्वलित आहुतियों करके कही गई है, जो आहुतियां अपित नाद करती हैं उन करके यजमान पितृलोक को जय करता है, क्योंकि पितृलोक में पितर

पदार्थाः

फोग सुख के कारण उन्मत्त होकर नाद करते हैं, इस कारण पितृ-फोक की प्राप्ति नाद करती हुई झाहुतियों करके कही गई है, जो झाहुतियां नीचे को बैठती हैं, उन करके वह मनुष्यकोक को जय करता है, क्योंकि मनुष्यकोक नीचे है, इसी कारण इसकी प्राप्ति उन झाहुतियों करके कही गई है जो नीचे को जाती हैं ॥ □ ॥

मन्त्रः ६

याज्ञवल्क्येति होवाच कतिभिरयमध ब्रह्मा यज्ञं दक्षिणतो देवताभिर्गोपायतीत्येकयेति कतमा सैकेति मन एवेत्यनन्तं वै मनो-ऽनन्ता विश्वेदेवा अनन्तमेव स तेन लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कितिभः, आयम्, आदा, ब्रह्मा, यज्ञम्, दक्षिगातः, देवताभिः, गोपायति, इति, एकया, इति, कतमा, सा. एका, इति, मनः, एव, इति, आनन्तम्, वै, मनः, धनन्ताः, विश्वेदेवाः, आनन्तम्, एव, सः, तेन, लोकम्, जयति ॥

श्रान्वयः पदार्थाः स्रान्वयः
+ स्रश्वलः=ध्रवल ने
हित=ऐसा
- उवाध=पृंहा + याञ्चवः
याञ्चवत्वयः हे याञ्चवत्वयः !
स्रद्य=भाज
स्रयम्=यह
स्रह्मा=नद्या
दक्षिग्पतः=दक्षिग् दिशा में
+ स्थित्वा=वैठ कर
कतिभिः=कितने
देवताभिः=देवता करके
यञ्चम्=यज्ञ की
गोपायति=रक्षा करेगा

प्रन्वयः इति≕इस पर

३।त−२० ५२ + याझवल्क्यः=याझवल्क्य ने + उवाच=कहा

एकया=एक देवता करके इति=तव

+ सः=डसने

पप्रच्छ=पूंछा कि सा=बह

सा=बह कतमा=कीनसा

एका=एक देवता है

इति=इस पर + सः=डसने

+ आह : उत्तर दिया कि

मनः≔मन
एव=ही
तत्=वह देवता है
चै=और
मनः≔मन
झनन्तम्=वृत्तिभेद करके
अनन्त है
+ तस्य=उस मन के

विश्वेदेवाः=विश्वेदेवता भी
श्रानन्ताः=धनन्त हैं
तेन⇒उसी कारण
सः=वह यजमान
श्रानन्तम्=धनन्त लोकम्=खोक को
एव=ध्रवरय
ज्ञायिक्जीतता है

भावार्थ।

श्चारवल फिर प्रश्न करता है कि हे याज्ञवल्क्य ! यह श्रक्षा दक्षिण दिशा में बैठ कर कितने देवताश्चों से यज्ञ की रक्षा क्रेगा ? इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि केवल एक देवता करके यज्ञ की रक्षा होती है, इस पर श्चारवल पूंछता है कि वह एक कौनसा देवता है ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि वह एक देवता मन है, मन यद्यपि एक है, पर उसकी दित्तयां श्चानन्त हैं, इस कारण मनसम्बन्ध करके विश्वे-देवता भी श्चानन्त हैं, ऐसे मन करके यज्ञमान श्चानन्तलोंकों को जीतता है।। है।।

मन्त्रः १०

याज्ञवल्क्योति होवाच कत्यसम्बन्धिंगातास्मिन् यहे स्तोत्रिया स्तोष्यतीति तिस्र इति कतमास्तास्तिस्र इति पुरोनुवाक्या च याज्या च शस्यैव तृतीया कतमास्ता या अध्यात्मिनित माण एव पुरोनुवाक्यात्मी याज्या व्यानः शस्या किं तामिर्जयतीति पृथिवीलोकि सेथ पुरोनुवाक्यया जयत्यन्तरिक्षलोकं याज्यया चुलोकछ शस्यया तति ह होताश्वल उपरराम ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, कति, अयम्, अय, उद्गाता, अस्मिन, यहो, स्तोत्रियाः, स्तोष्यति, इति, तिस्रः, इति, कतमाः, ताः,

तिस्रः, इति, पुरोनुवाक्या, च, याज्या, च, शस्या, एव, नृतीया, कतमाः, ताः, याः, ऋष्यात्मम्, इति, प्राग्गः, एव, पुरोनुवाक्या, अपानः, याज्या, व्यानः, शस्या, किम्, ताभिः, जयति, इति, पृथिवी-स्रोकम्, एव, पुरोनुवाक्यया, जयति, अन्तरिक्षस्रोकम्, याज्यया, द्युस्रो-कम्, शस्यया, ततः, ह, होता, अश्वकः, उपरशम ॥

श्चयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

+ अश्वलः=अश्वल ने इति=इस प्रकार उवाच=पृंद्धा कि याञ्चवल्कय=हे याज्ञवल्क्य ! श्रदा=श्राज श्रयम्=यह उदुगाता=उद्गाता श्रस्मिन्=इस यश्च=यज्ञ में कति=कितनी स्तोत्रियाः=ऋग्वेद श्रीर सामवेद की ऋचाओं की स्तोष्यति=स्तुति करेगा इति=इस पर + सः=उसने + उचाच=कहा कि तिखः=तीन ऋचा इति=तब किर पप्रच्छ=पृंछा कि ताः=वे कतमाः=कौनसी तिस्रः=तीन ऋचा हैं इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा पूरोजुवाक्या=प्रोनुवाक्या पहिली ऋचा है च=श्रीर याज्या=दसरी याज्या ऋचा है च=श्रीर तृतीया=तीसरी एच≕निश्चय करके शस्या=शस्या ऋचा है + पूनः प्रश्नः=िकर प्रश्न है कतमाः≔कौनसी ताः=वे ऋचा हैं ? याः=जो श्रध्यात्मम्=श्रध्यात्मविषा से + सम्बन्धनः=सम्बन्ध रखती हैं + सः≔याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि प्राणः=प्राण पव⇒ही पुरोनुवाक्या=पुरोनुवाक्या ऋषा है स्रपानः=धपान याज्या=याज्या ऋचा है

ब्य र नः =व्यान

शस्या=गस्या खखा है
+ पुनः प्रश्नः=किर प्रश्न है कि
ताभिः=तीन खखा करके
+ यज्ञमानः=यज्ञमान
किम्=किसकी
जयति=जीतता है
हति=इस पर
+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने
उवाच=उत्तर दिया कि
पुरीजुवाक्यया=पुरीनुवाक्या खखा
करके
पृथिवीलोकम्=पृथिवीजोक को
+ सः=वह यजमान

प्य=सवरय
जयित=जीतता है
याज्यया=याज्या ऋचा करके
अन्तरिक्षम्=सन्तरिक्षलोक को
+ जयित=जीतता है
शस्यया=शस्या ऋचा करके
युलाकम्=स्वर्गलोक को
+ जयित=जीतता है
ततः ह=तव
होत(=होता
अश्वलः=सरवल
उपरराम=च्य होगया

भावार्थ ।

द्रारति फिर प्रश्न करता है कि हे याज्ञवल्क्य ! इस यज्ञ विषे धाज उद्गातानामक भृत्विज् किन्ने स्तोत्र पहेगा, तब याज्ञवल्क्य उसके उत्तर में कहते हैं कि जो अध्यात्मसम्बन्धी है वह तीन स्तोत्र पहेगा, तब अध्यक्ष पृंद्धता है कि वह तीन स्तोत्र कौन से हैं ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं प्रथम पुरोनुवाक्या भृचा है, दूसरी याज्यानामक भृचा है, तीसरी शस्यानामक भृचा है, फिर अध्यक्ष पृंद्धता है कि हे याज्ञवल्क्य ! पुगेनुवाक्या ध्यादि भृचाओं से आपका क्या तात्पर्य है ? इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि पुरोनुवाक्या भृचा से मेरा मतल्जव प्राग्णवायु से है, याज्या भृचा से मेरा मतल्जव प्राग्णवायु से है, याज्या भृचा से मेरा मतल्जव अपानवायु से है, शस्या भृचा से मेरा मतल्जव ज्ञानवायु से है, फिर अध्यक्ष पृंद्धता है कि हे याज्ञवल्क्य ! यदि इन तीनों भृचाओं करके यज्ञ कियाजाय तो उन से क्या प्राप्ति होगी ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि, ह अध्यक्ष ! पुरोनुवाक्या भृचा से यजमान पृथ्वीक्षोक को जीतता है, याज्या भृचा करके वह

अन्तरिक्षलोक को जीतता है, और शस्या ऋचा करके होता है, ऐसा सुन कर अश्वल चुप होगया ॥ १० ॥ इति प्रथमं ब्राह्मसाम् ॥ १ ॥

प्राप्त

श्रंथ दितीयं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

भ्रथ हैनं जारत्कारव आर्त्तभागः पप्रच्छ याज्ञवन्क्येति होवाच कति ग्रहाः कत्यातिग्रहा इति अष्टौ ग्रहा अष्टावितग्रहा इति ये तेऽष्टौ ग्रहा ऋष्टावतिग्रहाः कतमे त इति ॥

पवच्छेदः ।

द्मथ, ह, एनम्, जारत्कारवः, आर्तभागः, पप्रन्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कति, प्रहाः, कति, आतिप्रहाः, इति, श्रष्टी, प्रहाः, अष्टो, अतिप्रहाः, इति, ये, ते, अष्टो, प्रहाः, अष्टो, अतिप्रहाः, कतमे, ते, इति ॥ पदार्थाः

श्रान्ययः

पदार्थाः

अथ ह=अरवल के चुप होने

एनम् ह=उस प्रसिद्ध याज्ञवस्वय से

जरत्कारचः=जरस्कारुके वंश का आर्त्तभागः=कार्त्तभाग

इति पप्रच्छ=ऐसा पृष्ठता भया कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

कति=कितने ग्रहाः=पह हैं ?

+ च=ग्रीर कति=कितने श्चान्वयः

श्रतिप्रहाः=त्रतिप्रह हैं ? इति=इस पर

ह≕साक्र साक्र

याञ्चयत्क्यः=याञ्चवस्क्यने उवाच=कहा

ग्रहाः=प्रह हैं + च=भौर ग्राष्ट्री=भाठ श्रतिप्रहाः=श्रतिप्रह

इति=पेसा

+ अत्या=सुन कर

+ पुनः प्रश्नः=फिर प्रश्न किया कि ये=जो ते=बे ऋष्टो=स्राठ ग्रहाः=प्रह हैं + च=स्रीर द्राष्ट्री=भाठ आतिग्रहाः≔भातेग्रह हैं कतमे=उनमें से कितने ते=वे ग्रह भौर कितने भ्रतिग्रह हैं

भावार्थ ।

जब आरवल चुप होगया, उसके पीछे जरत्कार के पुत्र आर्त्तभाग ने प्रश्न करना आरम्भ किया, यह कहता हुआ कि हे याज्ञवल्क्य ! प्रह कितने हैं ? और आतिप्रह कितने हैं ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि आठ प्रह हैं, और आठहीं आतिप्रह हैं, पुनः आर्त्तभाग पूंछता है हे याज्ञवल्क्य ! वे आठ प्रह कौन कौन हैं, और आठ आतिप्रह कौन कौन हैं।। १।।

मन्त्रः २

प्राणो वै ग्रहः सोपानेनातिग्राहेण गृहीतोपानेन हि गन्धा-ञ्जिप्रति ॥

पदच्छेदः ।

प्रार्गः, वै, प्रहः, सः, श्रपानेन, श्रतिप्राहेगा, गृहीतः, श्रपानेन, हि, गन्थान्, जिन्नति ॥

अन्वयः पदार्थाः अन्वयः + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्यने अ + श्राह=उत्तर दिया कि प्राणः=प्राचीन्द्रय वै=ही प्रह:=प्रह है सः=वही प्राणेन्द्रिय अतिप्राहेण=अत्यन्त प्रहण कराने व

ĺ

वयः पदार्थाः
श्रपानेन=श्रपानवायु करके
गृहीतः=गृहीत है
हि=न्योंकि
+ लोकः=लोक
श्रपानेन=श्रपानवायु करके
गन्धान्=गन्धों को
जिन्नति=स्वता है

भावार्थ ।

आतंभाग के प्रश्न को सुन कर याज्ञवरक्य कहते हैं कि हे आर्त-भाग ! उन आठ प्रहों में से प्रथम प्रह आगोन्द्रिय है, और इसका विषय सुगन्धी और दुर्गन्धी अतिप्रह हैं, इस किये वह आगारूप इन्द्रिय प्रह विषयरूप अतिप्रह करके गृहीत हैं, क्योंकि अपानवायु करके आगोन्द्रिय नाना प्रकार के गन्धों को प्रह्मा करता है, याज्ञवरूक्य के कहने का तात्पर्य यह है कि आठ प्रह यानी इन्द्रियां हैं, और आठही उनके अतिप्रह हैं, यानी विषय हैं और चूंकि विषय इन्द्रियों को दवा लेते हैं, इसिलये इन्द्रियों की अपेक्षा विषय बलवान होते हैं, और यदी कारमा है कि विषयों का नाम अतिप्रह हैं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

वाग्वेग्रहः स नाम्नातिग्राहेण गृहीतोवाचा हि नामान्यभि-वदति ॥

पदच्छेदः ।

वाक्, वै, ग्रहः, सः, नाम्ना, अतिप्राहेशा, गृहीतः, वाचा, हि, नामानि, अभिवदति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

वाक्=वागिन्दिय वे≕ही गृहीतः=गृहीत है हि=क्योंकि

ग्रहः=ग्रह है सः=वही बागिन्द्रियरूपग्रह

+ लें(कः=लोक बान्चा=वासी करके

नाम्ना=नामरूप स्रतिग्राहेण=त्रित्रह यानी

नामानि=नामों को

विषय स

्रा अभिवद्ति=कहता है

भावार्थ।

वागिन्द्रिय ग्रह है, वह वागिन्द्रिय काणी ऋौर नाम ऋतिप्रह से गृहीत है, क्योंकि जितने नाम हैं वे सत्र काणी के प्रकाशक हैं, और वास्ती वागिन्द्रिय का प्रकाशक है, बरौर नाम के वास्ती की सिद्धि नहीं होसकती है, जैसे किसी वस्तु की सिद्धि वरेंगर नाम के नहीं होसकती है. यह घट है, यह पट है, यह ब्रह्म है, यह जगत् है, इन सबकी सिद्धि नाम करके ही होसकती है, यदि नाम न हो तो किसी वस्तु की सिद्धि कभी नहीं होसकती है, और यदि वास्ती न होय तो वागिन्द्रिय यानी मुख की सिद्धि नहीं होसकती है, इस किये वागिन्द्रिय से वास्ती श्रेष्ठ है, और वास्ती से नाम श्रेष्ठ है, वागिन्द्रिय को प्रह (बन्धक) इस कारस्त कहा है कि वह पुरुषों को बांधती है, क्योंकि संसार में असत्यादिक अधिक कहेजाते हैं, यदि वागिन्द्रिय से सत्यादिक अधिक कहा जाय तो वही वागिन्द्रिय उस कहनेवाले को मुक्ति का कारसा होसकती है, यहां पर संसार के व्यवहार की अधिकता के कारसा वागिन्द्रिय को प्रह कहा है।। ३।।

मन्त्रः ४

जिह्ना वै ग्रहः स रसेनातिग्राहेण ग्रहीतो जिह्नया हि रसा-न्विजानाति ॥

पदच्छेदः ।

जिह्ना, वै, प्रहः, सः, रसेन, भ्रातिप्राहेगा, गृहीतः, जिह्नया, हि, रसान्, विज्ञानाति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः पद जिह्ना=जीभ यै=ही श्रहः=श्रह है सः=वही जीभ रसेन=रसरूप श्चतिग्राहेण=ष्वित्रह करके यानी

भावार्थ ।

जीभ ग्रह है, और इनका विषय रस श्रातिप्र है, रस करके ही जीभ गृहीत है, क्यों के जीभसेही विविध प्रकार के रसों का ज्ञान होता है, यह जीभ श्रानेक प्रकार के रस यानी विषयसम्बन्धी स्वाद को ग्रहण करती है, इस जिये जीवके बन्धन का हेतु है। ४॥

मन्त्रः ५

चक्षुर्वे ग्रहः स रूपेणातिग्राहेण गृहीतश्चक्षुपा हि रूपाणि पश्यति।। पदच्छेदः ।

चक्षुः, वै, ब्रहः, सः, रूपेग्, अनिब्राहेग्ग, गृहीतः, चक्षुपा, हि, रूपाग्गि, पश्यति ॥

श्चन्ययः

ं पदार्थाः

ष्यवयः

पदार्थाः

च्युः=नेत्र वै=हीं ग्रंहः=प्रह है सः=बही नेत्र रूपेग्=रूपस्वरूप ग्रातिग्राहेग्=ग्रातिग्रह यानी विषय करके

गृहीतः=गृहीत है हि=क्योंकि + लोकः=लोक चश्चषा=नेत्र करके ही रूपाणि=रूपों को पञ्चति=देखता है

भावार्थ ।

नेत्र निश्चय करके ग्रह है, झौर रूप उसका श्रातिग्रह है, रूप करके नेत्र गृहीत है, क्योंकि पुरुष चक्षु करकेही श्रानेक प्रकार के रूपों को देखता है, चूंकि रूप करके पुरुष बन्धन में पड़ता है, इस कारगा चक्षु को ग्रह यानी बांधनेवाला कहा है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

श्रोत्रं वै प्रहः स शब्देनातिप्राहेण गृहीतः श्रोत्रेण हि शब्दा-व्याणित ॥

पदच्छेदः ।

श्रोत्रम्, वै, ब्रहः, सः, शब्देन, श्रविब्राहेगा, गृहीतः, श्रोत्रेगा, हि, शब्दान्, शृगोिति ॥

श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रोत्रम्=कर्ण ग्रहः=मह है स्तः=वही कर्ण शब्देन=शब्दरूप श्रतिग्राहेण्=श्रतिग्रह गानी विषय करके गृहीतः=गृहीत है हि=क्योंकि + लोकः=बोक श्रात्रेण=कान करके शब्दान्=शब्दों को श्रुणोति=सनता है

भावार्थ ।

श्रोत्रेन्द्रिय निरचय करके ब्रह है, शब्द झातिब्रह है, क्योंकि शब्द करकेही श्रोत्रेन्द्रिय गृहीत है, चूंकि विषयसम्बन्धी शब्द पुरुष को बांधता है, इस कारणा श्रोत्रेन्द्रिय को ब्रह यानी बांधनेवाला कहा है। ६॥

मन्त्रः ७

मनो वे ग्रहः स कामेनातिग्राहेण यृहीतो मनसा हि कामा-न्कामयते ।।

पदच्छेदः ।

मनः, वै, ब्रहः, सः, कामेन, ऋतिब्राहेशा, गृहीतः, मनसा, हि, कामान्, कामयते ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः

पदार्थाः

मनः=मन
वं=िनश्चय करके
ग्रहः=प्रह है
सः=वहीं मन
कामन=कामनाइप
सितिग्रोहेण्=प्रतिग्रह णनी

गृहाँतः=गृहीत है हि=क्योंकि + लोकः=बोक मनसा=मन्करकेही कामान=हज्ज्जित पदार्थों की

कामयते=इच्छा ,करता है

आस्तरकी ।

मन इन्द्रिय ग्रह है, कामरूप उसका आतिग्रह है, क्योंकि कामना करके मन गृहीत होरहा है, यानी मनसही आनेक कामना पुरुष करता है, चंकि विषय की कामना में पुरुष फँसा रहता है, इस कारगा मन को ग्रह यानी बांधनेवाला कहा है ॥ ७ ॥

मन्त्रः ट

हस्तौ वै ग्रहः स कर्मणातिग्राहेण गृहीतो हस्ताभ्याथं हि कर्म करोति ॥

पदच्छेदः ।

हस्ती, वै, प्रहः, सः, कर्मणा, श्रातिप्राहेण, गृहीतः, हस्ताभ्याम्, हि, कर्म, करोति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः बै=निश्चय करके हस्तौ=दोनों हाथ ग्रहः=प्रह हैं स्तः=वही दोनों हाथ कर्मगा=कर्मरूपी श्रतिब्राहेण=ग्रतिब्रह यानी विषय करके

पदार्थाः

गृहीतः=गृहीत है हि=वयोंकि + लोकः=लोक हस्ताभ्याम्=हाथों से करोति=करता है

भावार्थ ।

दोनों हाथ ग्रह हैं, ऋौर कर्म उसका ऋतिग्रह है, दोनों हाथ कर्म करके गृहीत हैं, क्योंकि हाथों करके ही पुरुष कर्म को करता है, चूंकि अधिक करके हाथ करकेही बुरे कर्म किये जाते हैं, जिससे कि कर्मकर्त्ता बन्धन में पड़ता है, इसी लिये दोनों हाथों को प्रह यानी बांधनेवाला कहा है।। 🗆 ।।

सन्त्रः ६

त्वग्वै ग्रहः स स्पर्शेनातिग्राहेण गृहीतस्त्वचा हि स्पर्शान वेद-यत इत्येतेऽष्टी ग्रहा ऋष्टावतिग्रहाः ॥

पदच्छेतः।

त्वक, वै, ब्रहः, सः, स्पर्शेन, श्रातिप्राहेगा, गृहीतः, त्वचा, हि, स्पर्शान्, वेदयते, इति, एते, बाही, ब्रहाः, बाही, श्रातिप्रहाः ॥ पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः ऋत्वयः

त्वक=स्वगिन्द्रिय व=निश्चय करके ग्रहः=प्रह है स्यः=वही त्वग्रप ग्रह क्यार्थे। न=स्पर्शरूप श्चातिब्राहण=श्चातिब्रह करके गृहीतः=गृहीत है

हि=क्योंकि त्वचा=स्वचा करकं ही स्पर्शान=अनेक प्रकार के

स्पन्नों का

+ पुरुषः=पुरुष वंदयते=जानता है इति=इस प्रकार

प्रते≈ये

श्रष्टी=श्राठ

ग्रहाः=प्रह हैं

+ च=श्रौर श्चर्णे≃श्वाट

श्रातिग्रहाः=श्रातिग्रह हैं

भावार्थ ।

त्वक् इन्द्रिय प्रह है, स्त्रीर स्पर्शरूप उसका स्नातिशह है, त्वित-न्द्रिय स्पश से गृहीत है, क्योंकि स्विगिन्द्रिय से ही विविध प्रकार के स्पर्शों को पुरुष जानता है, चूंकि त्विगन्द्रिय द्वारा अनेक प्रकार के स्पर्श को भोगता है, अोर भंग कर बन्धन में पड़ता है, इस लिये त्विगिन्दिय को ग्रह यानी बांबनेवाला कहा है ॥ १ ॥

मन्त्रः १०

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्धं सर्वे मृत्योरनं कास्वित्सा देवता यस्या मृत्युरत्रमित्यग्निर्वे मृत्युः सोऽपामन्नमपपुनर्मृत्युं जयति ॥ पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, सर्वम्, मृत्योः, अन्नम्, का, स्वित्, सा, देवता, यस्याः, मृत्युः, अज्ञम्, इति, आग्निः, वै, मृत्युः, सः, भ्रापाम्, श्रन्नम्, श्राप, पुनः, मृत्युम्, जयति ॥

पदार्थाः श्चरवयः + अर्तिभागः=श्रार्तभाग ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा याश्चयल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्≕जो इदम्⊐यह सर्वम्=सब वस्तु दष्ट व श्रदष्ट स्थृल व सृक्ष्म है + तत् सर्वम्=वह सब मृत्योः=प्रह श्रतिप्रहरूप मृत्यु का श्रन्नम्=माहार है का=कौन स्वित्≕सा सा=वह देवता=देवता है यस्याः=जिसका श्रन्नम्=माहार

पदार्थाः ग्रन्वयः मृत्युः=मृत्यु है इति≔ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + याञ्चयत्क्यः=याज्ञवस्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि श्चारितः=श्चरिन वै=निरचय करके मृत्युः=उसका सृत्यु है सः=वह श्रगिन श्रपाम्=जल का श्रन्नम्=भक्ष्य है + यः=जो पुरुष + इति=इस प्रकार विज्ञान।ति=जानता है सः=वह पुनः=फिर मृत्युम्=मृत्यु को श्रपजयति=जीत लेता है

भावार्थ।

जरत्कारु के पुत्र झार्तभाग ने देखा कि याज्ञवत्क्य का उत्तर ठीक है तब द्वितीय प्रश्न इस प्रकार करता भया कि जो यह सब दष्ट झारष्ट अथवा मूर्त झमूर्त अथवा स्थूल सृक्ष्म दिखाई दता है वह सब प्रह और आतिप्रहरूप मृत्यु का झाड़ार है तब वह कौन देवता है ? जिसका झाड़ार यह झित्यहरूप मृत्यु है, याज्ञवत्क्य महाराज उत्तर देते हैं कि वह देवता झिन है, वह झिन जल का भक्ष्य है, जो मनुष्य इस विज्ञान को जानता है, वह मृत्यु का जय करता है, याज्ञवत्क्य महाराज ने जो ऐसा दृष्टान्त देका मृत्यु का मृत्यु बताया है उतसे उनका मतलब यह है कि संसार में जितने पदार्थ हैं सब मृत्यु से प्रसित हैं, जो मृत्यु से

प्रसित नहीं है उसका अन्वेषणा करना उचित है वही ब्रह्म ज्ञान का साधन है, वही ब्रह्म ज्ञान ईश्वर का साक्षात् कराता है और तभी पुरुष सब दुःखों से छूट जाता है।। १०।।

मन्त्रः ११

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रायं पुरुषो म्रियत उदस्मात्पाणाः क्राम-न्त्याहो ३ नेति नेति होवाच याज्ञवल्क्योऽत्रैव समवनीयन्ते स उच्छ्व-यत्याध्मायत्याध्मातो मृतः शेते ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उजाच, यत्र, श्रयम्, पुरुषः, म्रियते, उत्, श्रस्मात्, प्राणाः, क्रामन्ति, श्राहो, न, इति, न, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, श्रत्र, एव, सम्, श्रव, नीयन्ते, सः, उच्छ्क्रयति, श्राध्मा-यति, श्राध्मातः, मृतः, शेते ॥

श्चन्वयः

श्रन्वयः पदार्थाः + ख्रार्त्तभागः=श्रातभाग ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा कि याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्र=जिस समय श्रयम्=यह पुरुषः=ज्ञानी पृरुष ब्रियते=मरता है + तदा=तब श्रस्मात्=इस मरे हुये पुरुष से प्राणाः=प्राणादि इन्द्रियां उत्=ऊपर को कामन्ति=जाती हैं आहो=श्रथवा न≕नहीं

इति-ऐसा
+ मम प्रश्नः मेरा प्रश्न है
+ याझवत्क्यः च्याझवत्क्य ने
ह=स्पष्ट
इति=ऐसा
उवाच=उत्तर दिया कि
न=नहीं
+ क्रामित=अपर को जाती हैं
अत्र एव=यहीं पर यानी
उसी मेही
समवनीयस्ते=कीन होजाती हैं
+ न्र=भीर
सः=वह झानी पुरुष
उच्छ्रयति=अर्थ्य को रवास केने
क्रामा है

पदार्थाः

पुनः≔िकर श्वाध्मायति≕लरलराहट का शब्द करने जगता है ततः≔तिसके पीछे आध्मातः≔वायु से धोंकनी की तरह फूला हुआ मृतः=मरा हुआ शेते≕सोता है

भावार्थ।

श्रार्तभाग फिर दितीय प्रश्न करता है, हे याज्ञवल्क्य ! जब यह ज्ञानी पुरुप ग्रह श्रातिग्रहरूप मृत्यु से छूट कर मरता है तब उस मरे हुये पुरुष से सब इन्द्रियां वासना सहित उत्पर को जाती हैं या नहीं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर में कहा कि इन्द्रियां उत्पर को नहीं जाती हैं उसी में कीन होजाती हैं, श्रीर वह ज्ञानी श्रानन्दपूर्वक देह को त्यागता है, श्रीर सोया हुआ सा प्रतीत होताहै ॥ ११॥

मन्त्रः १२

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रायं पुरुषो म्रियते किमेनं न जहातीति नामेत्यनन्तं वै नामानन्ता विश्वेदेवा अनन्तमेव स तेन लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, यत्र, श्रायम्, पुरुषः, स्नियते, कि.म्, एतम्, न, जहाति, इति, नाम, इति, श्रानन्तम्, वै, नाम, श्रानन्ताः, विश्वे, देवाः, श्रानन्तम्, एव, सः, तेन, लोकम्, जयति ॥

पदार्थाः श्रन्वयः ग्रस्त्रयः पदार्थाः कार्सभागः=ग्रार्सभाग ने + तर्हि=तब किम्=कौनसा पदार्थ इति=इस प्रकार एनम्=इस विद्वान् को उवाच=कहा कि याञ्चयक्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! . न≕नहीं यत्र≕ितस समय जहाति≕त्यागता है इति=ऐसा श्रयम्=यह + मम प्रश्नः=मेरा श्रश है पुरुषः=ज्ञानी पुरुष ब्रियते=मरता है + याञ्चयत्क्यः=याज्ञवस्क्य ने

+ उवाचःः उत्तर दिया कि
नामः नाम

+ न जहातिः = नहीं त्यागता है
नामः = नाम
अनन्तम् = अनन्त है
विश्वेटे वाः = विश्वेटेव
अनन्ताः = अनन्त है

तेन≃तिस कारख सः≔यह पुरुष अनन्तम्=ितस्य ब्रह्म स्रोकम्=लोक को जयति=जीतता है यानी

भावार्ध ।

आतंभाग सम्बोधन करके फिर पृंद्यता है कि हे याज्ञवत्क्य ! जब ज्ञानी पुरुष मर जाना है, तब क्या छोड़ जाता है ? इसके उत्तर में याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं कि अपने पीछे अपना नाम छोड़ जाता है, यानी जो जो श्रेष्ठ कार्य करता है जिस के कारण वह प्रसिद्ध होजाता है, उस अपने नाम का छोड़ जाता है, जैसे पाणिनि श्रृषि की बनाई अप्रध्याथी के पठन पाठन का प्रचार रहने से पाणिनि का नाम अभीतक चला जाता है, इसी प्रकार ज्ञानी पुरुष के मरने के पीछे उसका नाम बना रहता है, चृंकि नाम अमनत हैं और लोक भी अनन्त हैं, और उनके अभिमानी देवता भी अनन्त हैं, इस लिये वह विद्वान जिसने अनेक सुभ कार्यों करके अनेक नाम अपने पीछे छोड़ा है, उन नामों करके अनेक देवताओं के लोकों के अविनाशी कोक को वह जीतता है यानी प्राप्त होताहै ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रास्य पुरुषस्य मृतस्याग्नि वागप्येति वातं प्राणश्चश्चरादित्यं मनश्चन्द्रं दिशः श्रोत्रं पृथिवी छ शरीरमा-काशमात्मोषधीलोंमानि वनस्पतीन्केशा अप्सु लोहितं च रेतश्च निधीयते कायं तदा पुरुषो भवतीत्याहर सोम्य हस्तमार्चभागावामे-वैतस्य वेदिष्यावो नावेतत्सजन इति तौ होत्क्रम्य मन्त्रयाञ्चकाते तौ ह यद्चतुः कर्म हैंब तद्चतुरथ यत्प्रशश्छसतुःकर्म हैव तत्प्रशश्छ सतुः पुष्यो वै पुष्येन कर्मणा भवति पापः पापेनेति ततो ह जार-त्कारव आर्त्तभाग उपरराम ॥

इति द्वितीयं बाह्मणम् ॥ २ ॥ पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्र, श्रास्य, पुरुषस्य, मृतस्य, श्रानिम्, बाक्, आप्येति, वातम्, प्रासाः, चक्षुः, आदित्यम्, मनः, चन्द्रम्, दिशः, श्रोत्रम्, पृथिवीम्, शरीरम्, श्राकाशम्, श्रात्मा, श्रीपधीः, लोगानि, वनस्पतीन्, केशाः, श्राप्तु, स्नोहितम्, च, रेतः, च, निधीयते, क, श्रयम्, तदा, पुरुषः, भवति, इति, श्राहर, सोम्य, हस्तम्, श्रार्तभाग, श्रावःम्, एव, एतस्य, वेदिष्यावः, नौ, एतत्, सजने, इति, तौ, ह, उत्क्रम्य, मन्त्रयाञ्चकाते, तो, ह, यत्, ऊचतुः, कर्म, ह, एव, तत्, कचतुः, त्राथ, यत्, प्रशशंसतुः, कर्म, ह, एव, तत्, प्रशशंसतुः, पुरायः, वै, पुरायेन, कर्मसा, भवति, पापः, पापन, इति, ततः, ह, जारत्कारवः, श्चार्त्तभागः, उपरराम ॥

पदार्थाः

श्रन्वयः + ऋर्त्तभागः=त्रार्त्तभाग ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! यत्र=जिस काल में स्य≃इस मृतस्य=मरे हुये पुरुषस्य=ज्ञानी पुरुष की व (क्=वागिनिद्रयशक्रि श्रग्निम्=श्रग्नि में अध्येति=पवेश कर जाती है प्रागुः=प्राग वातम्=बाद्यवायु में चश्चः≔नेत्र

आदित्यम्=सूर्य में

श्चन्वयः

पदार्थाः

मनः=मन चन्द्रम्=चन्द्रमा में श्रोत्रम्=कर्ण दिशः=दिशा में त्रातमा=शरीर का श्राकाश श्राकाशम्=बाह्य श्राकाश में शरीरम्=शारीरक पार्थिवभाग पृथिवीम्=पृथ्वी में लोमानि=रोवां श्रीषर्धाः=श्रीषधी में केशाः=केश वनस्पतीन्=वनस्पति में च=श्रीर लोहितम्=रक्र यानी रजोगुकः जकीय भाग

रेतः=वीर्य श्रप्सु=जल में निर्धायते=जा मिलते हैं तदा=तब श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष क=िस आधार पर भवति=स्थित रहता है ? + तदुत्तरे=इसके उत्तर में याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा सोम्य } =हे सौम्य, ब्रार्त्तभाग ! + त्वम्=तृ +माम्=मुक्को हस्तम्=हाथ श्राहर=दे श्रावाम्=हम तुम ्र एतस्य } वेदितव्यम् } =इस जामने योग्य को एव=श्रवश्य वेदिष्यावः=जानेंगे पतत्=यह वस्तु नौ=हमारे-तुम्हारे + निर्णेतुम्=निश्चयं करने के लिये सजन=जनसमृह में न=नहीं शक्यते≂शक्य है ह≕तब तौ≔दोनों

उत्क्रम्य=डठ कर्

+ एकान्तम्=एकान्त जगह में + गत्वा=जा कर मन्त्रयाञ्जकाते=विचार करते अये + च=बौर + विचार्य=विचार करके यत=जो कुछ **ऊचतुः=उन** दोनों ने कहा + तत्=वह कर्म ह एच=कर्मही को कहा श्रथ=इसके पीछे यत्≕जो कुछ प्रशशंसतुः=प्रशंसा करते भये तत्=बह कर्म=कर्मकीही प्रशशंसतुः=प्रशंसा करते भये हि=क्योंकि वै=निश्चय से पुरायेन=पुरयजनक कर्म से पुरायः=पुगय च=श्रौर पापन=पापजनक कर्म से पाप:=पाप भवति=होता है इति=ऐसा + भ्रत्वा=सुन कर ततः=तत्पश्चात् जारत्कारवः=जरत्कारु गोत्र का ग्रार्त्तभागः=**प्रार्त्तभाग** उपरराम=डपराम यानी चुप होता भया

ध्याय ३ ब्राह्मसा २ भाषार्थ।

धार्त्तभाग ने बहुत कठिन प्रश्न किया, पर उनका यथार्थ उत्तर पाकर अपित प्रसन्त हुआ। अब अदिनीय प्रश्न करता है, यह कहता हम्मा कि हे याज्ञवल्क्य ! जिस काल में इस मरे हुँ। पुरुष की वागि-न्दिय शक्ति अगिन में नष्ट होजाती है, और हृदयस्थ उष्णाता चली जाती है प्रामा बाह्यवायु में मिल जाता है, दर्शनशिक चक्ष आदित्य में चली जाती है, मन की वृत्ति चन्द्रमा में लय होजाती है, श्रवग्र शक्ति दिशाक्यों में मिल जाती है, शारीम्क स्थूल पार्थिव भाग प्रश्वी के साथ जा मिलता है. शरीर के अभ्यन्तरीय आकाश, बाह्य आकाश में प्रवेश कर जाता है. शरीर के रीम श्रीषधी में मिल जाते हैं, श्रीर शरीर के माथे के केश वनस्पति में प्रवेश कर जाते हैं, शरीर के रक्त श्रीर रक्त के साथ अपन्यजलीय भाग वीर्य श्रथवा वीर्य के तुल्य श्चन्य पदार्थ जल में मिल जाते हैं श्चर्थात जब कार्य कार्ण में लय होजाता है, तब यह 9रुप कहां श्रीर किस आधार पर रहता है ? हे याज्ञवल्क्य ! इसका उत्तर आप मुमको दें. याज्ञवल्क्य कहते हैं. हे प्रिय, झार्चभाग ! इस प्रश्न का उत्तर जनसमूहों में देना ठीक नहीं है. अपना हाथ हमको देव. उठी चलो, इस प्रश्न के विषय में जो कुछ विचारणीय है उसकी हम तुम दोनों एकान्त में विचार करेंगे. इस प्रश्न के उत्तर को इस सभा में कोई नहीं समसेगा, इस क्रिये उसका कहना सभा के मध्य में श्रयोग्य है, इस पर वे दोनों कहीं एकान्त में जाकर विचार करने लगे श्रीर विचार करते करते ऐसा निश्चय किया कि कर्मही श्रेष्ठ है, कर्मकेही आश्रय पुरुष की स्थिति है, जबतक पुरुष कर्म करता गहेगा तबतक वह बना गहेगा, उसकी मुक्ति नहीं है, पुगयजनक कर्म से पुगय होताहै, श्रीर पापजनक कर्म से पाप होताहै, प्रयुक्तमं मोक्ष का साधक है, श्रीर पापकर्म बन्ध

का कारण है, ऐसा यथार्थ उत्तर पाकर जरत्कारु का पुत्र आर्त्तभाग चुप होगया ॥ १३ ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्राम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

अथ हैनं भुज्युर्लाह्यायनिः पप्रच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच मद्रेषु चरकाः पर्यव्रजाम ते पत्रञ्चलस्य काष्यस्य गृहानैम तस्यासीहुहिता गन्धर्वगृहीता तमपृच्छाम कोऽसीति सोऽब्रवीत्सुधन्वाङ्गिरस इति तं यदा लोकानामन्तानपृच्छामाथैनमबूम क पारिक्षिता अभवानिति क पारिक्षिता अभवन्ति त्वा पृच्छामि याज्ञवल्क्य क पारिक्षिता अभवनिति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एनम्, अुज्युः, लाह्यायनिः, पप्रस्त्व, याज्ञवस्क्य, इति, ह, उवाच, मद्रेषु, चरकाः, पर्यव्रजाम, ने, पतश्वलस्य, काप्यस्य, गृहान्, ऐम, तस्य, श्रासीन्, वृहिता, गन्धर्वगृहीना, तम्, श्रपृच्छाम, कः, श्रासि, इति, सः, श्रव्रवीत्, सुधन्वा, श्राङ्गिरसः, इति, तम्, यदा, लोकानाम्, श्रान्तान्, श्रपृच्छाम, श्रथ, एनम्, श्रव्रम्, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, इति, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, सः, त्या, पृच्छामि, याज्ञवस्क्य, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, सः, त्या, प्रच्छामि, याज्ञवस्क्य, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, इति ॥

अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

झथ=इसके पीछे लाह्यायनिः=लःह्यायनि भुज्युः=भ़ज्य नं इति=ऐसा प प्रच्छ⇒प्रश्न किया + च=श्रोर उवाच=कहा कि याझबल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! मद्रेषु=मददेशों में वयम्=हम सब

चरकाः=वत करने वाले विवाधीं होकर पर्यव्रजाम=पर्यटन करत भये + पुनः=फिर ते=वे हमलोग काप्यस्य=कपिगोत्र वासे पतञ्चलस्य=पतञ्चन के गृहान्=घर को ऐम=जाते भये तस्य=ंडस पतञ्चल की दुहिता=कन्या गन्धर्वगृहीता _गन्धर्वगृहीत थी याने श्रासीत् ⁼ उसको गन्धर्व लगाथा तम्≔उस गन्धर्व से + वयम्=हम लोगों ने अपृच्छाम=प्ंछा त्वम्=तू कः=कौन ग्रास=है + तदा≕तब सः≔उस गन्धर्व ने इति=एंसा श्रव्रवीत्=कहा कि + श्रहम्=भैं श्राङ्गिरसः=ग्राङ्गिरस गोत्रवाला सुधन्वा=सुधन्वानाम वाला हूं तम्≕उस गन्धर्व से

यदा=जब वयम्=हमलोगों न स्रोकानाम्=लोकों के अन्तान्=अन्त को **श्चपृ**च्छामः-प्ंडा ग्रथ=धौर प्नम्=उस से त्र्रब्म=कहा कि पारिक्षिताः=परिक्षित वंश के लोग क=कहां श्रभवन्=गये ? + तदा≔तब + सः=इसने + श्रव्रचीत्=सब वृत्तान्त कहा + इदानीम्=श्रब + ग्रहम्=भें त्वा=तुभ याज्ञवल्क्य से पृच्छामि=प्ंइता हूं कि पारिाक्षताः=परिक्षित वंश के लोग क=कहां श्रभवन्=गये ? याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! पारिक्षिता:=परिक्षित वंश के लोग क=कहां स्रभवन्=जाते भये ? इ्ति=ऐसा मेरा प्रश्न है

भावार्थ।

आर्त्तभाग के चुप होजाने पर लाह्यायनि भुज्युनामक ब्राह्मस्य याज्ञवत्क्य से पृंछ्रता है कि अप्रसी हुआ जब हम सब विद्यार्थी ब्रता-चरसपुर्वक मद्रदेश में विचरते थे, और काप्य पतश्वल के घर पर आये, वहां देखा कि उनकां कन्या गन्धर्वगृहीत हो रही थी, उस गन्धर्व से जो उसके शरीर विषे स्थित था, हमलोगों ने पूंछा, आप कौन हैं, आपका क्या नाम हैं ? उसने कहा में गन्धर्व हूं, मेरा नाम सुधन्वा है, आङ्गिरस गोत्र में उत्पन्न हुआ हूं, उससे हमलोगों ने अनेक लोकों के बारे में प्रश्न किया, इसका उत्तर उसने यथायोग्य दिया, जब हमलोगों ने उससे पूंछा कि हे गन्धर्व ! इस समय पारि-श्चित यानी आश्वमेध यज्ञकर्ता के वंश वाले कहां हैं ? जो कुछ उसने उत्तर दिया वह मुक्तको मालून है, आप कृपा करके बताइये कि पारिश्चित कहां पर हैं ? अगर आप ब्रह्मिनष्ठ हैं जैसा आप अपने को समक्रते हैं तो मेरे इस प्रश्न का उत्तर यथार्थ देंगे ॥ १ ॥

मन्त्रः २

स होवाचोवाच वै सोऽगच्छन्वै ते तद्यत्राश्वमेधयाजिनो गच्छ-न्तीति क न्वश्वमेधयाजिनो गच्छन्तीति द्वात्रिध्शतं वै देवरथाक्वया-न्ययं लोकस्तर्ध्ध समन्तं पृथिवी द्विस्तावत्पर्येति ताध्धं समन्तं पृथिवी द्विस्तावत्समुद्रः पर्येति तद्यावतीः क्षुरस्य धारा यावद्वा मक्षिकायाः पत्रं तावानन्तरेषाकाशस्तानिन्द्रः सुपर्णो भूत्वा वायवे मायच्छत्ता-न्वायुरात्मनि घित्वा तत्रागमयद्यत्राश्वमेधयाजिनोभविन्तरेवमिव वै स वायुमेव प्रशश्धंस तस्माद्वायुरेव व्यष्टिर्वायुः समष्टिरपपुन-र्मृत्युं जयति य एवं वेद ततो ह भुज्युर्लाक्षायनिरुपरराम ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥ पदच्छेतः।

सः, ह, उवाच, उवाच, वे, सः, अगन्छन्, वे, ते, तन्, यत्र, अप्रवमेश्याजिनः, गन्छन्ति, इति, क, नु, अप्रवमेश्याजिनः, गन्छन्ति, इति, क, नु, अप्रवमेश्याजिनः, गन्छन्ति, इति, द्वात्रिंशतम्, वे, देवस्थाह्नयानि, अयम्, लोकः, तम्, समन्तम्, पृथित्रीम्, द्विः, तावत्, पर्येति, ताम्, समन्तम्, पृथित्रीम्, द्विः, तावत्, समुद्रः, पर्येति, तत्, यावतीः, क्षुरस्य, धारा, यावत्, वा, मिक्षकायाः, पश्म, तावान्, अन्तरेता, आकाशः, तान्, इन्द्रः, सुपर्याः, मूला,

वायेब, प्रायच्छत् , तान् , वायुः, आत्मिनि, धित्वा, तत्र, आगमयत् , यत्र, प्रश्वमेधयाजिनः, श्रमवन् , इति, एवम् , इत्, ते, सः, वायुम् , एव, प्रशशंस, तस्मात् , वायुः, एव, व्यष्टिः, वायुः, समष्टिः, अप, पुनः, मृत्युम् , जयति, यः, एवम् , वेद, ततः, ह, भुज्युः, लाह्यायिनः, उपरराम ॥ स्रत्युम् , प्रयाद्याः पदार्थाः । प्रत्याद्याः

ह=तब
सः=वह याज्ञवल्कय
उवाच=कहते भये कि
+ चरक=हे चरक !
सः=वह गम्धर्व
चै=निश्चय करके
+ त्वाम्=तुक्त से
इति=ऐसा
उवाच=पारिक्षितों का हाल
कहता भया कि
यत्र=जहां

ग्रश्वमेघ- } = ग्रश्वमेघ करने वाले याजिनः } ग्रच्छान्ति=जाते हैं तत्=वहां ते=वे पारिक्षित वै≕निस्संदेह

> श्चगच्छ्रन्≕जाते भर्षे इति≔ऐसा + श्रुत्वा≕सुन कर नु≕भैने प्रश्न किया कि

अश्वमेधः } याजिनः } =श्रश्वमेध करने वाले क्ष=कहां

गच्छुन्ति=जाते हैं ? + श्राञ्चवस्यः=याञ्चवस्य ने ।न्वयः पदार्थाः + उदाच=उत्तर दिया कि भुज्यु=हे भुज्यु !

द्वरथाह्नयानि= { सूर्यकारथएक दिन रात में जितने देश में जाता है

तस्य=उसका
द्वात्रिशतम्=चत्तीसगुना
श्रयम्=यह
स्रोकः=स्रोकयानी भारतवर्ष हे
+ झतःपरम्=इसके वपरान्त
+ परमलोकः=चन्तरिक्ष स्रोक है
तम्=उसको
तावद द्विः=उतनाही द्विगुगा

प्रमाखनाबा समन्तम्=चारों तरफ़ से पृथिवी=पृथ्वी पर्येति=घेरे है + च=च्रीर ताम्=डस

पृथिवीम्=पृथ्वी को समन्तम्=चारों तरफ्र से तावत्=उतनाही

द्धिः=दूने प्रमाणवासा समुद्रः=समुद्र पर्येति=धेरे है

तत्=ऐसा होने पर

अश्वमेधः } याजिनः }=श्रश्वमेध कर्त्ताः श्चन्तरेग=उसके बन्दर आकाशः=श्राकाश व्यास है श्रभवन्=जाते हैं + सः=वह एवंइववै=इसी प्रकार तावान्=उतना ही सूक्ष्म है यावत्=जितनी सः=वह गम्धर्व वागुम्पव=वायु कीहा **ध्रुरस्य**=इ्रा की प्रशशंस=प्रशंसा करता भया धारा=धार यानी श्रयभाग तस्मात्=इस निये वा=श्रौर वायुः=वायु याचत्=जितना + एव≕ही मक्षिकायाः=मक्षिका का ज्याष्टः=ज्यष्टिरूप है पञ्जम्≕पंख स्क्ष्म है वायुः≕वायु + तत्र=वहां एव=ही इन्द्र:=परमात्मा समिष्टिः=समिष्टरूप है सुपर्गः=पक्षी +भुज्यु=हे भुज्य ! भूत्वा=हो कर एवम्=इस प्रकार तान्=उन श्रश्वमेध यज्ञ यः=जो करने वालों को चेद्≔जानता है वायवे=वायु के + सः≔वह प्रायच्छत्=सिपुर्द करता भया पुनः=फिर मृत्युम्=मृत्यु को वायुः=वायू श्रपजयति=जीतता है तान्=उनको श्चातमनि=श्रपने में ततःह=इस प्रकार याज्ञवल्क्य के उत्तर पाने पर धित्वा=रख कर तत्र≕वहां लाह्यायनिः=लाह्य का पुत्र अगमयत्≕ले जाता भया भुज्युः=भुज्यु उपरराम=चुप होगया तत्र≔वहां

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि हे लाह्यायिन, भुज्यु ! श्राप सुनो मैं कहता हूं. उस गन्धर्व ने श्राप से इस प्रकार कहा, पारिक्षित वहां गये सहां अश्वमेध्यज्ञ के करनेवाले जाते हैं, वह लोक कैसा है ? उसको

भी तुम सुनो, जितना सूर्यदेव का रथ एक दिन रात्रि में निरन्तर काता श्राता है, उसके ऊपर श्रन्तिश्विलोक है, उस लोक के चारों तरफ द्विगुर्मा परिमाम्यवाला पृथ्वीलोक है, उस पृथ्वी के चारों तरफ द्विगुर्मा परिमाम्यवाला पृथ्वीलोक है, उस पृथ्वी के चारों तरफ द्विगुर्मा परिमाम्यवाला पृथ्वीलोक है, उन दोनों यानी श्रन्तिश्व श्रीर पृथ्वीलोक के मध्य में आकाश ज्याप्त है, वह इतना सूक्ष्म है जितना छुरा का श्रम्रभाग श्रीर मिक्षका का पर होताहै, ऐसे अतिस्वर्ध श्रीर दुर्विज्ञेय देश में परमात्मा पक्षी के श्रमकार में होकर उन पारिश्वितों को वायु श्रमिमानी देवता के सिपुर्द करता भया श्रीर वह वायु उन्हें श्रमने में रख कर वहां ले गया जहां श्रम्यन्यकर्ता रहते थे. इस उत्तर के देने से याज्ञवल्क्य महाराज ने वायु की प्रशंसा की इस जिथे साग ब्रह्मायड श्रीर उसके श्रम्यन्तर सारी सृष्टि, ज्यष्टि श्रीर समष्टि वायु करके ज्याप्त है जो विद्वान् पुरुष वायु या प्राम्म को इस प्रकार जानता है श्रीर उसकी उपासना करता है वह मृत्यु को जय करता है श्रीर श्रम, श्रमर होजाता है. ऐसा सुन कर लाखायिन मुज्य चुप होगया ॥ २ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मण्म् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

श्रथ हैनमुषस्तश्चाकायणः पमच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच यत्सा-भादपरोक्षाद्व्रद्ध य श्रात्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त श्रात्मा सर्वान्तरः कतमो याज्ञवल्क्य सर्वान्तरो यः प्राणेन प्राणिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो योऽपानेनापानिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो यो व्यानेन व्यानिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो य उदानेनोदानिति स त श्रात्मा सर्वान्तर एप त श्रात्मा सर्वान्तरः ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एनम्, उपस्तः, चाकायगाः, पप्रच्छ, याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, साक्षात्, श्रपरोक्षात्, ब्रह्म, यः, श्रात्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एपः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवक्ष्य, सर्वान्तरः, यः, प्राग्णेन, प्राग्णिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, ज्यानेन, श्रपानेन, श्रपानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, व्यानेन, व्यानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, उदानेन, उदानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, एषः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः ॥

पदार्थाः अन्वयः श्रन्वयः श्रथ ह=तत्पश्चात् चाक्रायग्ः=चक्र का प्र उपस्तः=उपस्त एनम्≈उस याज्ञवल्क्य से पप्रच्छ=पूंछता भया + च=श्रार इति=ऐसा उवाच=कहता भया कि + याझवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्=जो साञ्चात्=साञ्चात् श्रपरोक्षात्=श्रपरोक्ष ब्रह्म≔बद्य है यः=जो त्रात्मा=**धात्मा** सर्वान्तरः=सब के अभ्यन्तर है तम्=उसको रे:=मेरे लिये

व्याचक्व=कह

इति=ऐसा

श्रुत्वा=सुन कर

पदार्थाः याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि एषः=यह ते=तेरा श्चातमा=श्रात्मा सर्वान्तरः=सब के अभ्यन्तर विराजमान है + पुनः≕िकर + उपस्तः=उषस्त ने आह=कहा याञ्चल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + श्रसौ=यह कतमः=कौनसा सर्वान्तरः=ग्रात्मा सर्वान्तर है + याज्ञवलक्येन=याज्ञवल्क्य ने + उत्तरम्≃उत्तर + दत्तम्≕दिया कि यः≃जो श्रात्मा प्राणेन=प्राणवायु करके प्राणिति=चेष्टा करता है

सः=वही

ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वोन्तरः=सर्वोन्तवर्गमी है
यः=जो
श्चपानित=चेष्टा करता है
सः=वह
ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वोन्तर:=सर्वोन्तवर्गमी है
यः=जो
स्थानित=चेष्टा करता है
सः=वह
सर्वोन्तर्थमी है
सः=वह
स्थानिति=चेष्टा करता है
सः=वह

ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है
यः=शो
उदानेन=उदान वायु करके
उदानित=वेद्या करता है
सः=वद्द ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है
एषः=ऐसा कहा हुशा
ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है

भावार्थ ।

जब जाहायिन भुज्यु चुप होगया तब चक्र के पुत्र उपस्त ब्राह्मण् ने याज्ञवल्क्य महाराज से पृंद्धना स्त्रारम्भ किया कि हे याज्ञवल्क्य ! जो प्रत्यक्ष ब्रह्म है, स्त्रोर जो सब के स्त्रभ्यन्तर है, उसको मेरे प्रति कहिये. यह सुनकर याज्ञवल्क्य महाराज उत्तर देते हैं. हे उपस्त ! तेरा हृद्यगत स्त्रात्मा सब में विराजमान है, इस उत्तर को पाकर सन्तुष्ट न होकर उपस्त फिर याज्ञवल्क्य से पृंद्धता है. हे याज्ञवल्क्य ! कोनसा स्त्रात्मा सर्वान्तर है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया. हे उपस्त ! सुन जो प्रात्मा वायु करके चेष्टा करता है वही तेरा स्त्रात्मा सर्वान्तर है, जो ज्यान वायु करके चेष्टा करता है वही तेरा स्त्रात्मा सर्वान्तर है, जो उदान वायु करके चेष्टा करता है वही तुम्हारा स्त्रात्मा सर्वान्तर है, जो उदान वायु करके चेष्टा करता है वही तुम्हारा स्त्रात्मा सर्वान्तर है, उद तेरा स्त्रात्मा सब के स्रभ्यन्तर रिथत है ॥ १ ॥

मन्त्रः २ सहोवाचोषस्तरचाक्रायणो यथा विवृयादसौ गौरसावश्वहत्ये- वमेवैतद् व्यपदिष्टं भराति यदेव साक्षादपरोक्षाद्बह्म य त्रात्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त त्रात्मा सर्वान्तरः कतमो याज्ञवल्क्य सर्वान्तरः। न दृष्टेर्द्रष्टारं परयेर्न श्रुतेः श्रोतार ७ श्रुण्या न मतेर्मन्तारं मन्वीथा न विज्ञातेर्विज्ञातारं विजानीयाः। एष त त्रात्मा सर्वान्तरो तोन्यदार्चं ततो होषस्तरचाक्रायण उपरराम ।।

इति चरुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, उपस्तः, चाकायणः, यथा, विश्रूयात्, असौ, गौः, असौ, अश्वः, इति, एवम्, एव, एतद्, व्यपदिष्टम्, भवति, यत्, एव साक्षात्, अपरोक्षात्, श्रक्ष, यः, आत्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एवः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवत्क्य, सर्वान्तरः, न, दृष्टेः, द्रष्टारम्, पश्येः, न, श्रुतेः, श्रोतारम्, श्रुणुयाः, न, मतेः, मन्तारम्, मन्वीथाः, न, विज्ञातेः, विज्ञातारम्, विज्ञानीयाः, एषः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, अतः, अन्यत्, आर्तम्, ततः, ह, उपस्तः, चाका-यणः, उदराम ॥

पदार्थाः अन्वयः श्चन्त्रयः पदार्थाः ग्रसी=यह ह≔तब श्रश्वः=श्रश्व है चाक्रायगुः=चक्र का पुत्र एवम् एव=उसी प्रकार सः≔वह उषस्तः=उपस्त एतत्=यह उवाच=कइता भया कि व्यपदिष्टम्=न्नाप करके कहा हुआ + यान्नवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! त्रहा≔ब्रह्म यथा=जैसे भवति=होता है + कश्चित्≕कोई + परन्तु=परन्तु विव्यात्=कहे कि श्रसौ=यह + त्वम्=श्राप मी:=गी है न≕नहीं

दिखाते हो अर्थात् जसे कोई सामने की वस्तु को दिखा ~ + दर्श्यते≕ घोड़ा है ऐसी आप ने श्रारमा के दिखाने की प्रतिज्ञा की है + याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्≕जो एव=निश्चय करके साक्षात्=पत्यक्ष + च=ग्रौर **अपरोक्षात्**≕साक्षी है + च=श्रीर यः=जो सर्वान्तरः=सबका श्रन्तर्गामी श्रात्मा=भारमा है तम्≕उसको मे≕मेरे जिये ग्राचश्च=प्राप कर्हे इति=ऐसा मम प्रश्नः=मेरा प्रश्न है + याक्रवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि एषः=यह ते=तेरा **बा**त्मा=ब्रात्मा एव=ही

सर्घान्तर:=सबका श्रन्तर्यामी है

+ पुनः≕फिर

+ उघस्तेन=उपस्त ने + प्रश्नः=प्रश्न + कृतः≕िकया कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कतमः=कीनसा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी स्नारमा है? + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा + उषस्त=हे डषस्त ! + शृ्गा=त् सुन हृष्टे:=दर्शनशक्ति के द्रष्टारम्=इष्टा को न=नहीं पश्येः=तृ देख सका है श्रुते:=श्रवग्रशक्ति के श्रोतारम्=सुनने वाले को न शृगुयाः=त् नहीं सुन सक्रा है मतेः=मननशक्ति के मन्तारम्=मनन करने वाले को न मन्वीथाः=नहीं तु मनन कर सका है च≕धौर विज्ञाते:=विज्ञानशक्ति के विश्वातारम्=विज्ञाता को न विजानीयाः=नहीं तृ जान सक्ना है एषः=यही ते=तेरा आत्मा=त्रात्मा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्वामी है श्रतः=इससे अस्यत्=भौर सब

श्चार्त्तम्=दुःखरूप है ह=तब ततः=उत्तर पाने के पीछे

चाक्रायणः≔चक का पुत्र उपस्तः≔श्वस्त उपरराम=उपरत होता भया

तः=७॥१ याग च गाउ | भावार्थ |

याज्ञवल्क्य के उत्तर को पाकर, सन्तुष्ट न होकर उपस्त फिर प्रश्न करता है, हे याज्ञवत्क्य ! आपने ऐसा कहा था कि मैं आत्मा को ऐसा स्पष्ट जानता हूं जैसे कोई कहै कि यह गी है. यह घोडा है. परन्त आप ऐसा नहीं दिखाते हैं, श्रत्र श्राप श्रात्मा को प्रत्यक्ष करके बतावें. में पुनः आप से पृंछता हूं, जो सबका आत्मा है, जो सब के मध्य में विराजमान है, उसे श्राच्छी तरह समक्ता कर बतावें. ऐसा सन कर याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं. हे उपस्त ! जो आत्मा सबके अन्दर विराजमान है, वही तेरा आत्मा है, वह दोनों एकही हैं, भेद आत्मा में नहीं है, केवल शरीरों में है, फिर उपस्त प्रश्न करता है वह कौन सा आत्मा है ? जो सर्वान्तर्यामी है, उपस्त भूषि के पूर्वोक्त प्रश्न को सुन कर याज्ञवस्क्य भौर रीति से कहते हैं, हे उपस्त ! सन दर्शनशिक के दश को त गौ अश्वादिक की तरह नहीं देख सक्ता है, यानी जिस शक्ति करके दर्शनशक्ति अपने सामने के पदार्थों को देखती है उसे आपने पीछे स्थित हुई शक्ति को वह दर्शनशक्ति नहीं देख सकती है, इसी प्रकार हे उपस्त ! जो अवसाशिक्त का ओता है उसको त नहीं सुन सकता है, अर्थात् जिस शक्ति करके अवगाशिक बाह्य वस्त के शब्दों को सनती है उस शक्ति को अवगाशक्ति नहीं सन सक्ती है, हे उपस्त ! मननशिक्त के मन्ता की तू मनन नहीं कर सक्ता है. अर्थात जिस शक्ति करके मन मनन करता है उस शक्ति को मनन-शक्ति मनन नहीं कर सक्ती है, हे उपस्त ! विज्ञानशक्ति के विज्ञाता को तुम नहीं जान सकते हो, ध्यर्थात् हे उपस्त ! उस शक्ति को विज्ञान शिक्त नहीं जान सकती है जो दृष्टि का द्रष्टा है, श्रुति का श्रोता है.

मित का मन्ता है, विज्ञप्ति का विज्ञाता है, वही तेग आत्मा है, वही सव के अन्दर विराजमान है. इस आत्मविज्ञान से अतिरिक्त जो वस्तु है, वह दु:ख मय है, ऐसा सुन कर चक्र का पुत्र उपस्त चुप होगया।। २।।

इति चतुर्थे ब्राह्मण्म् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

श्रथ हैनं कहोलः कौषीतकेयः पप्रच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच यदेव साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म य श्रात्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त श्रात्मा सर्वान्तरा योऽशनायापिपा- से शोकं मोहं जरां मृत्युमत्येति । एवं वे तमात्मानं विदित्वा ब्राह्म- एषाः पुत्रेषणायाश्च वित्तेषणायाश्च लोकेषणायाश्च व्युत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति या ह्येव पुत्रेषणा सा वित्तेषणा या वित्तेषणा सा लोकेपणाभे ह्येते एषणे एव भवतः। तस्माद्ब्राह्मणः पाण्डित्यं निर्विद्य वाल्येन तिष्ठासेत् । वाल्यं च पाण्डित्यं च निर्विद्याथ मुनिरमौनं च मौनं च निर्विद्याथ। ब्राह्मणः स ब्राह्मणः केन स्याचेन स्यात्तेनेदृश एवातोन्यद्वर्णं ततो ह कहोलः कौषीतकेय उपरराम ।।

इति पंचमं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, एनम्, कहोलः, कोपीतभेयः, पपच्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, चवाच, यत्, एव, साक्षात्, अपरोक्षात्, ब्रह्म, यः, आत्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एपः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवल्क्य, सर्वान्तरः, यः, अशनायापिशसे, शोकम्, मोहम्, जराम्, मृत्युम्, अत्येति, एतम्, वै, तम्, आत्मानम्, विदित्वा, ब्राह्मगाः, पुत्रे-षणायाः, च, वित्तेषणायाः, च, कोकेषणायाः, च, व्युत्थाय, अथ, भिक्षाचर्यम्, चरन्ति, या, हि, एव, पुत्रेषणा, सा, वित्तेषणा, या, वित्तेषणा, सा, कोकेषणा, उमे, हि, एते, एषणो, एव, भवतः, तमात्,

ब्राह्मणः, पायिडत्यम्, निर्विद्य, बाल्येन, तिष्ठासेत्, बाल्यम्, च, पायिडत्यम्, च, निर्विद्य, श्रथः, मुनिः, श्रमोनम्, च, मौनम्, च, निर्विद्य, श्रथः, ब्राह्मणः, सः, ब्राह्मणः, केन, स्यात्, येन, स्यात्, तेन, ईट्टरः, एव, अतः, श्रन्यत्, श्रार्त्तम्, ततः, ह, कहोलः, कोषीतकेयः, उपरग्रमः।।

श्चत्वयः

पदार्थाः ऋ

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे कौपीतकयः=कुपीतक का पुत्र कहोलः=कहोन पप्रच्छ=प्रश्न करता भया

ह=श्रार इति=ऐसा उक्त्वा=कह कर उवाच=सम्बोधन किया कि याश्चयल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्त=जो

एव=निरचय करके साक्षात्=साक्षात् + च=ग्रार

श्रपरोक्षात्=प्रत्यक्ष ब्रह्म=ब्रह्म है

> + च=श्रीर यः≕जो

या-जा झात्मा=त्रात्मा सर्वोन्तरः=सब के श्रभ्यन्तर है तम्=उस श्रात्मा को मे⇒मेरे खिये

व्याचक्ष्य=कहिये + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+उवाच=कहा

+ कहोल=हे कहोल !
एषः=यही हृदयस्थ
ति=तेरा

श्चात्मा=श्रात्मा

सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है

+ पुनः≕फिर + कहोलः=कहोल ने

पप्रच्छ=पूंछा कि याञ्चन्दनय=हे याज्ञवल्क्य !

+ सः=वह

कतमः=कीनसा श्रात्मा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है ?

+ एषः≕यह

+ मम प्रश्नः=मेरा प्रश्न है याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

> उवाच=कहा यः=जो श्रासा

श्रशनाया- } = भूख प्यास को

शोकम्=शोक मोहम्=मोह को जराम्=जरा मृत्युम्=सृत्यु को अत्येति=उष्णञ्चन करके विद्यमान है

+ सः एव=वही + ते आस्मा=तेरा आस्मा है + सः एव=वही सर्वान्तर:=सब के ग्रभ्यन्तर है वै=निश्चय करके तम्≂उसी एतम्=इस **श्चात्मानम्**=श्रात्मा को विदिश्वा=जान कर श्चर्य=श्रार पुत्रेषणायाः च=पुत्र की इच्छा से वित्तेषगायाः=वित्त की इच्छा से लोकंषगायाः=लोककी इच्छा से ब्यत्थाय=छुटकारा पा कर ब्राह्मणाः = ब्राह्मण भिक्षाचर्यम्=भिक्षावत को चरन्ति=करते हैं या पुत्रेपसा(≔जो पुत्र की इच्छा है सा≃वही हि एव=निश्चय करके वित्तैपणा=द्रव्य की इच्छा है सा=वही लोकेषणा≔लोक की इच्छा है उभे=ये दोनों निकृष्ट एपरो=इच्छायें एक दूसरे एव भवतः=अवश्य होती हैं तस्मात्=इस लिये ब्राह्मणः=बाह्मण पारिडरः म्=शास्त्रसम्बन्धीज्ञानको निर्विद्य=स्याग कर बाल्यन≕ज्ञान विज्ञान शक्ति के भाश्रित होकर

तिष्ठासेत्=रहने की इन्छा करे तत्पश्चात्=इसके पीवे बाल्यम्=ज्ञान विज्ञान च≃ग्रीर पारिडत्यम्=शास्त्रीयज्ञान को निर्विद्य=स्थाग करके सः=वह ब्राह्मश म्निः=मननशील मनि भवति=हाता है च्च पुनः≔र्थार फिर श्रामानम्) = ज्ञान, विज्ञान श्रीर च मोनम्) मननवृत्ति का निर्द्धिद्य=स्याग करके ब्राह्मग्रः=ब्रह्मविन् भवति=होता है स्यः=चह ब्राह्मसु:=ब्राह्मस् युन=जिम केन=किशी साधन करके ∓यात=हो तेन=उसी साधन करके ईद्दश:=ऐसा कहे हुये प्रकार ब्रह्मवंत्ता स्यात्=होता है श्चतः=इस बिये श्चन्यत्≔श्रोर सब साधन श्चार्त्तम्=दुःखरूप है ततः ह=याज्ञवल्क्य महाराज से उत्तर पाने के पी छे कोषीतकेयः≔कुपीतक का पुत्र कहोलः≔कडोल

उपरराम=उपरत होता भया

भावार्थ ।

जब चाकायरा। उपस्त चुप होगया, तदनन्तर कहोल ब्राह्मरा याज्ञवलक्य से प्रश्न करने लगा यह कहता हुआ कि. हे याज्ञवलक्य ! जो ब्रह्म साक्षात् आत्मा के नाम से पुकारा जाता है, श्रीर जो सब प्राशियों के अध्यन्तर में स्थित है, उस ब्रह्म के विषय में मैं आपका व्याख्यान सनना चाहता हूं. इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे कहोल ! वह ब्रह्म तुम्हारा आत्माही है, वही सब के अध्यन्तर स्थित है, वही अन्तर्यामी है, इसको सन कर उपस्तवत कहोल ने पूंछा हे याज्ञवर्क्य ! वह कौनसा आदमा सर्वान्तर है ? याज्ञवल्क्य कहते हैं. हे कहोल ! जो आतमा क्षया पिपासा से रहित है: जो शोक, मोह, जग, मृत्य से रहित है: वही आपका आत्मा है, वही सर्वान्तर है, वही सब का अन्तर्यामी है. हे कहोल ! जब पुत्रेषगा, वित्तेषगा, लोकैषगा से रहित होकर ब्राह्मणा की वृत्ति आत्माकार होती है, यानी लगातार अपने चैतन्य आत्मा की तरफ चला करती है, तब केवल शरीर निर्वाहार्थ भिक्षावृत्ति वह करता है. हे कहोल ! ये तीनों इन्द्वार्थ एकही हैं. ये तीनों निकृष्ट इच्छायें हैं, इनको त्याग कर शास्त्रसम्बन्धी ज्ञ:न का आश्रय लेवे फिर उसको भी त्याग करके ज्ञान विज्ञान शक्ति के आश्रय होवे और अपने ज्ञान के वल फरके स्थित होवे. जब वह ब्राह्मण ऐसा करता है, तब वह ब्राह्मण मुनि कहलाता है, अर्थात् श्रापने वास्तविकरूप का मनन करता है, श्रीर करते करते कुछ काल के पीछे अभीन होजाता है, तय वह ब्रह्मवित होता है. ऐसे ज्ञान से अतिरिक्त और साधन दुःखरूप हैं. याज्ञवल्क्य से ऐसा उत्तर पाकर श्रीर उसके तात्पर्य को समम कर, क्रवीतक का पत्र कहोता स्तव्ध होता भया ॥ १ ॥

इति पञ्चमं ब्राह्मराम् ॥ ५ ॥

श्रथ पष्टं बाह्मग्रम् । मन्त्रः १

श्रथ हैनं गार्गी वाचक्रवी पप्रच्छ याक्षवल्क्येति होवाच यदिद्छं सर्वमप्स्वोतं च प्रोतं च कस्मिन्नु खल्वाप श्रोतारच प्रोतारचेति वार्यो गार्गीति कस्मिन्नु खल् वायुरोतरच प्रोतरचंत्यन्तरिक्षलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व वायुरोतरच प्रोतारचंति गन्धवंलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व गन्धवंलोका श्रोतारचं प्रोतारचंति गन्धवंलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्वादित्यलोका श्रोतारचं प्रोतारचंति चन्द्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व चन्द्रलोका श्रोतारच प्रोतारचेति नक्षत्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व चन्द्रलोका श्रोतारच प्रोतारचेति विक्षत्रत्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व देवलोका श्रोतारच प्रोतारचेति देवलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व प्रजापतिलोका श्रोतारच प्रोतारचेति प्रजापतिलोकेषु गार्गीत कस्मिन्नु खल्व प्रजापतिलोका श्रोतारच प्रोतारचेति स होवाच गार्गि मातिप्राक्षीर्मा ते मूर्घा व्यपप्ततित्ररूप्यां वे देवतामतिपृच्छित गार्गि मातिप्राक्षीरिति ततो ह गार्गी वाचक्रव्यपरराम ।।

इति पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥ पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एतम्, गार्गी, वाचक्रवी, पप्रच्छ, याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, सर्वम्, श्रप्तु, श्रोतम्, च, प्रोतम्, च, कस्पित्, नु, खलु, श्रापः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, वायौ, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, वायुः, श्रोतः, च, प्रोतः, च, इति, श्रान्तिःश्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, श्रान्तिःश्रलोकाः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, गन्धवंकोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, गन्धवंकोकाः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, द्रि, श्रादित्यलोकेषु, गार्गि, इति,

कस्मिन, नु, खलु, आदित्यलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, इति, चन्द्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, चन्द्रलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, इति, नक्षत्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, नक्षत्रलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, इति, देवलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, देवलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, इति, इन्द्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, इन्द्रलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, प्रजापतिलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, प्रजापतिलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, इति, व्रञ्जलोकाः, च्रोताः, च, प्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, कस्मिन, नु, खलु, ब्रज्जलोकाः, आताः, च, प्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, सः, ह, उनाच, गार्गि, मा, आतिप्राक्षीः, मा, ते, मूर्था, व्यपप्रत्, आनिप्रश्चिः, सा, ते, स्थां, व्यपप्रत्, आतिप्रश्चीः, हति, ततः, ह, गार्गि, वाचक्रवो, उपरराम ।।

भ्रन्वयः पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे धाचक्रवी=वचक्नुकी कन्या गार्गी=गार्गी एनम्=इस याज्ञवल्क्य से प्रबच्छ=प्रश्न करती भई च≕ग्रीर उदाच=बोजी कि याञ्चयत्यय=हे याज्ञवल्क्य ! तत्≕जो इदम्=यह सर्वम्=सब दश्यमान वस्तु श्रप्यु≕जलमें ऋोतम्≕श्रोत च=श्रीर प्रोतम् च=प्रोत है સુ=તો

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रापः=जल
कर्षिमन्=किसमें
खलु=निश्चय करके
श्रोताः=श्रोत
च=श्रोर
प्रोताः च=मोत हैं
इति=यह मेरा प्रश्न है
+ याझचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने
+ उवाच=उत्तर दिया कि
गागि=हे गागि !
वायो=वायु में जल श्रोत
श्रोत हैं
इति=ऐसा
+ श्रुत्वा=सुनकर
+ सा=बह बोली

वागुः=वायु

कस्मिन्=िकसमें श्रोतः≕श्रोत च≕भौर प्रोतः च=प्रोत है इति=ऐसा + शुत्वा=सुनकर + सः=वह याज्ञवल्क्य + उवाच=बोने कि गार्गि=हे गार्गि ! श्चन्तरिक्ष∙) झन्तरिक्ष खोक में खोकेषु) वह श्रोत प्रोत है इति शुत्वा=यह सुन करके सा=वह गार्भ + पप्रच्छ=बोबी कस्मिन्नु≕िकसमें खलु=निश्चय करके श्चन्तरि- } = श्चन्तिश्व कोक क्षत्वोकाः } श्रोताः=श्रोत च=ग्रीर प्रोताःच=प्रोत हैं इति=इस पर सः=वह याज्ञवल्क्य + उवाच=बोबे गार्गि=हे गार्गि ! गन्धर्वलोकेषु=गन्धर्वलोकों में व श्रोत प्रोत हैं इति=इस पर गार्गी=गार्गी + उवाच=बोत्ती कस्मिन्=किसर्मे नु खलु=निश्चय करके

गन्धर्वलोकाः=गन्धर्वलोक श्रोताः=श्रोत च=श्रीर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=यह + श्रुत्वा=सुन कर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + झाह=कहा गार्गि=हे गार्गि ! चन्द्रलोकेषु=चन्द्रलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति=इस पर गार्गी=गार्गी उवाच=बोली चन्द्रलोकाः=चन्द्रलोक कस्मिन्=िकसमं नु खलु=निश्चय करके श्रोताः=श्रोत च≕ग्रीर प्रोताः च=प्रांत हैं इति=ऐसा होने पर याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि + गार्गि=हे गार्गि ! नक्षत्रलोकेषु=नक्षत्र सोकों में वह श्रोत प्रोत है इति=ऐसा उत्तर पाने पर सा=वह गागीं + उवाच=बोबी नक्षत्रलोकाः=नक्षत्रबोक कस्मिन्=िकस में

ञ्चाताः=श्रोत

ख=भौर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=ऐसा प्रश्न होने पर याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने श्चाह=उत्तर दिया गार्गि=हे गार्गि ! देवलोकेष=देवलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति=यह सुन कर गार्गी≕गार्गी वे पुनः पप्रच्छ=किर पंछ। कस्मिन्तु=किसमें खलु=निश्चय करके देवलोकाः=देवलोक श्रोताः=श्रोत च=ग्रीर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=इस पर + सः=वह याज्ञवस्वय उवाच=बोला गार्गि=हे गार्गि ! इन्द्रलोकेषु=इन्द्रलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति=ऐसा उत्तर पाने पर शार्गी=गार्गी ने + पुनः≕िकर प्रबच्छ=पूंछा कस्मिन्=किस में नु खलु=निश्चय करके इन्द्रलोकाः=इन्द्रजोक श्रोताः≔श्रोत

च=धौर

श्रोताः च=श्रोत हैं इति=यह सुन कर याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा गार्गि=हे गार्गि ! प्रजापति- रे प्रजापति लोकों से लोकेषु } वह स्रोत प्रोत हैं इति=यह स्न कर गार्गी=गार्गी + उवाच=बोली प्रजापति } =प्रजापति लोक कस्मिन्=किसमें नु खलू=निश्चय करके श्चोताः=श्रोत च=भौर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=ऐसा प्रश्न सुन कर + सः=वह याज्ञवल्न्य उवाच=बोजे गार्गि=हे गार्गि ! ब्रह्मलोकेषु=ब्रह्मलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति ⇒ऐसा उत्तर पाने पर गार्गी=गार्गी उवाच=बोली ब्रह्मलोकाः=ब्रह्मजोक कस्मिन्=किसमें श्रोताः=श्रोत च≕शौर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=ऐसा प्रश्न होने पर ै याझवहक्यः≔याज्ञवहक्य ह=स्पष्ट उवाच=कहते भये कि गाःशिं=हे गार्गि ! मा=मत मा=मुक्तते श्रतिप्राक्षीः=श्रविक पृंष्ठ श्रन्यथा=नहीं तो ते=तेरा मुर्था=मस्तक ज्यपसत्=गिरपड़ेगा श्चनतिप्रश्न्याम्≕जो देवता चित प्रस् किये जाने योग्य नहीं है देवताम्≔उस देवता के प्रति श्चतिपृच्छुस्ति=बारग्वार तृ पृंख्नती है गार्गि=हे गार्गि ! इति=इस प्रकार मा=सत श्रतिप्राक्षीः=श्चिक पृंख् ततः ह=तव वाचक्कवी=वचक्नु की कन्या गार्गी=गार्गी उपरराम=चुष होगई

भावार्थ ।

जब कहोल चुप होगया तब उसके पीछे श्रीमती श्रद्धवादिनी वाचकशी गागीं याज्ञवल्क्य महाराज से प्रश्न करने लगी, हे याज्ञवल्क्य ! जो यह सब वस्तु दिखाई देती है, वह जलमें आोत प्रोत है यानी जिस प्रकार कपड़ में ताना वाना सूत एक दूसरे से प्रथित रहते हैं वैसेही सब जल में दश्यमान पदार्थ प्रथित हैं, ऐसा शास्त्र कहता है, आप कृपा करके वतलाइथे कि वह जल किसमें ओत प्रोत हैं, याज्ञवल्क्य इसके उत्तर में कहते हैं, हे गागिं ! वह जल वायु में आोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वायु किसमें आोत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह वायु अन्तरिक्षलोक में ओत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! यान्धविलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! गन्धविलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! यान्धविलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! यान्धविलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह आदित्यलोक चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह आदित्यलोक चन्द्रलोक में आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह आदित्यलोक चन्द्रलोक में आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह व्याज्ञवल्क्य ! याज्ञवल्क्य ! वह नक्षत्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह व्याज्ञवल्क्य ! वह नक्षत्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक किसमें आत प्रोत हैं, हे गागिं ! वह चन्द्रलोक

किसमें स्रोत प्रोत है, हे गार्गि ! वह नक्षत्रलोक देवलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह देवलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे गार्गि ! वह देवलोक इन्द्रलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह इन्द्रलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे गार्गि ! वह इन्द्रलोक प्रजापतिलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह प्रजापतिलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह प्रजापतिलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह स्रजापतिलोक क्रह्मलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य ! वह स्रज्ञापतिलोक क्रह्मलोक में स्रोत प्रोत है, वह सुन कर याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि, हे गार्गि ! तू स्रातिप्रश्न करती है, सहावेत्तास्रों से स्रातिप्रश्न करना उचित नहीं है, यदि तू स्रातिप्रश्न करेगी तो तेग मस्तक तेरे घड़ से गिरजायगा, हे गार्गि ! ब्रह्मलोक से परे कोई लोक नहीं है, सबका स्राधार ब्रह्म है. याज्ञवल्क्य से ऐसा उत्तर पाकर गार्गी चुप होगई ॥ १ ॥

इति पष्ठं त्राह्मराम् ॥ ६ ॥

श्रथ सप्तमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

श्रथ हैनमुद्दालक श्रारुणिः पप्रच्छ याज्ञवन्त्रयेति होवाच महेण्ववसाम पतश्चलस्य काप्यस्य गृहेषु यज्ञमधीयानास्तस्यासीद्धार्या
गन्धर्वगृहीता तमपृच्छाम कोऽसीति सोऽश्रवीत्कवन्ध श्राथर्वण इति
सोऽश्रवीत्पतश्चलं काप्यं याज्ञिका छश्च वेत्थ नु त्वं काप्य तत्स्पृत्रं
येनायं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि संदृष्धानि
भवन्तीति सोऽश्रवीत्पतश्चलः काप्यो नाहं तद्धगवन्वेदेति सोऽश्रवीत्पतश्चलं काप्यं याज्ञिका छश्च वेत्थ नु त्वं काप्य तमन्तर्यामिणं य
इमं च लोकं परं च लोकछ सर्वाणि च भूतानि योऽन्तरो यमयशीति सोऽश्रवीत्पतश्चलः काप्यो नाहं तं भगवन्वेदेति सोऽश्रवीत्

पतश्चलं काप्यं याज्ञिका छश्च यो वै तत्काप्य सूत्रं विद्यानं चान्तर्या-मिर्णामिति स ब्रह्मवित्स लोकवित्स देवित्स वेद्वित्स भूतवित्स आत्मवित्स सर्वविदिति तेभ्योऽ ब्रवीत्तदहं वेद तचेन्तं याज्ञवल्क्य सूत्र-मविद्वा छक्तं चान्तर्यामिणं ब्रह्मगवीरुद्जसे मूर्या ते विपतिष्यतीति वेद वा ब्रहं गौतम तत्सूत्रं तं चान्तर्यामिणामिति यो वा इदं कश्चिद् ब्र्याद्वेद वेदेति यथा वेत्थ तथा ब्रहीति ॥

पदच्छेदः ।

श्राथ, ह, एनम्, उद्दालकः, श्रारुग्तिः, पप्रच्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, मद्रेषु, श्रवसाम, पतश्वलस्य, काप्स्य, गृहेषु, यज्ञम्, श्रधी-यानाः, तस्य, आसीत्, भार्या, गन्धर्वगृहीता, तम्, अपृच्छाम, क:, श्रसि, इति, सः, श्रत्रवीत्, कबन्धः, श्राथर्वग्रः, इति, सः, श्रत्रवीत्, पतञ्जलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, वेत्थ, नु, त्वम्, काप्य, तत्, सृत्रम्, थेन, श्रयम्, च, लोकः, परः, च, लोकः, सर्वाणि, च, भूतानि, संदृष्यानि, भवन्ति, इति, सः, श्रश्रवीत्, पतश्र्वातः, काप्यः, न, श्रह्म, तत्, भगवन्, वेद, इति, सः, श्रव्रवीत्, पतञ्चलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, वेत्थ, नु, त्वम्, काप्य, तम्, श्रान्तर्यामिगाम्, यः, इमम्, च, लोकम्, परम्, च, लोकम्, सर्वाणि, च, भूतानि, यः, अन्तरः, यम-यति, इति, सः, अत्रवीत्, पतश्चलः, काष्यः, न, अहम्, तम्, भगवन, बद, इति, सः, श्रव्रवीत्, पतञ्चलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, यः, वै, तत्, काप्य, सूत्रम्, विद्यात्, तम्, च, अन्तर्यामिगाम्, इनि, सः, महादित्, सः, लोकवित्, सः, देववित्, सः, वेदवित्, सः, भूतवित्, सः, ब्रात्मवित्, सः, सर्ववित्, इति, तेभ्यः, ब्रावर्वात्, तत्, ब्राह्म्, वेद, तत्, चेत्, त्वम्, याज्ञवल्क्य, सूत्रम्, अविद्वान, तम्, च, म्रान्तर्यामिसाम्, ब्रह्मगवीः, उदजसे, मूर्चा, ते, विपतिष्यति, इति, वेद, वे, श्रहम्, गौतम, तत्, सूत्रम्, तम्, च, श्रन्तर्यामिगाम्, इति, यः, वे, इदम्, कश्चित्, ब्रूयात, वेद, वेद, इति, यथा, वेत्थ, तथा, ब्रूहि, इति ॥

श्चन्धयः

पदार्थाः

अथ ह=गार्गी के चुप होने

वर

पर आरुपिः=श्ररुष का पुत्र उद्दालकः=उदालक ने एनम् ह=इस याज्ञवश्क्य से पप्रच्छ=प्रश्न किया + च=श्रीर

उवाच=बोला कि याज्ञवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य !

याझवएक्य≔र पारावरण + वयम्=हमनोग

काप्यस्य=किपगोत्र के

पतञ्चलस्य=पतञ्चल के

गृहेषु=धर यञ्जम्=यज्ञशास्त्र को

श्चर्घायानाः=पदते हुये मद्गेषु=मद्गदेशों में

मद्रुषु=मद्रदेशा म श्राचसाम=विचरते थे तस्य=उसकी

भार्या=की

साया=ज्ञः शन्धर्चगृहीता=गन्धर्वगृहीत

ग्रासीत्=थी तम्=इस गन्धर्व से

तम्=अस गन्धव स श्रपृच्छाम=हमलोगोंने पूंछा कि

+ त्वम्=त् कः=कौन

ग्रसि≕है ?

र्शते=तब सः=वह गन्धर्व

सः≔वह गन्धव अन्नवीत्=बोखा कि

+ ऋहम्=में

आधर्वणः=बथर्वा का पुत्र

द्यस्वयः

पदार्थाः

कवन्धः=कवन्धनामक हूं इति=इसके पीछे

सः=उस गन्धर्व ने

काप्यम्=कपिगोत्रवाते वर्ञक्य=पन्छल

पतञ्चलम्=पतञ्चल च=ग्रीर

याध्रिकान्=उसके शिष्यों से स्रव्रवीत्=पृंका

काप्य=हे काप्य !

नु=क्वा

त्वम्=त्

तत्=उस स्त्रम्≕स्त्र को ू

वेत्थ=जानता है ?

येन=जिस करके

त्रयम्=यह स्रोकः=स्रोक

ब≕ग्रीर परः=पर

लोकः=बोक च=ब्रौर

सर्घाणि=संपृर्णे भूतानि=प्राणी

संहब्धानि } =गुधे हैं भवन्ति }

इति=ऐसा प्रश्न + श्रुत्वा=सुन कर

सः≔वह

काप्यः=कपिगोत्रवासा

पतश्चतः=पतत्रव स्रव्रवीत्=वोवा कि

श्रहम्≕में तत्=डस स्त्रास्मा को भगवन=हे पुज्य ! न≕नहीं वेद=जानता हुं इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर सः=वह गन्धर्व काप्यम्=किपगोत्रवाले पतञ्चलम्=पतञ्चलसे च=घौर याश्चिकान्=हम याह्निकों से श्रव्रवीत्=परन करता भया काप्य=हे किपगोत्रवाले ! नु=क्या त्वम्=त् तम्=उस अन्तर्यामिणम्=अन्तर्यामी को यः=जो इमम्=इस लोकम्=लोक को च=धौर परम्=पर लोकम्≕लोक को यमयति=नियम में रखता है च=श्रौर यः=जो **ग्रन्तरः**=श्रन्तर्यामी सर्वागि=सब भूतानि=भूतों को यमयति=नियम में रसता है वेत्थ=जानता है

इति=ऐसा + श्रत्वा=सुन कर सः=वह काप्यः=कपिगोत्रवासा पतञ्चलः=पतञ्चल श्रव्रवीत्=बोबा कि ग्रहम्=मैं भगवन्=हे पृज्य ! तम्=उस बन्तर्यामी को वेद=जानता हं इति=ऐसा श्रुत्वा=सुन कर सः=वह गन्धर्व काप्यम्=किपगोत्र के पतञ्चलम्=पतञ्चल से च=ग्रौर याजिकान्=हम याज्ञिकों से अववीत्=बोला कि काप्य=हे कपिगोत्रवाले ! यः≕जो वै=िनश्चण करके तत्=उस सूत्रम्=सूत्र च≕ग्रीर तम्=उस म्नन्तर्यामिणम्=मन्तर्यामी को विद्यात्=जानजावे तो सः=वह ब्रह्मवित्=ब्रह्मवित् सः=वह लोकवित्=बोकवित्

सः≔वह देववित्=देववित् सः=वह बद्वित्=वेदवित् सः=वह भूतवित्=मृतवित् सः=वह श्रात्मवित्=श्रारमवित् सः=वह सर्ववित्=सर्ववित् + भवति=होता है इति=इसके पीछे यत्=जो कुछ गन्धर्वः=गन्धर्व ने तेभ्यः=डन बोगों से अवधीत्=कहा तत्=उस सबको श्रहम्=में याञ्चाचल्य=हे याज्ञवल्क्य ! चेद्≕जानता हूं चेत्≕ग्रगर त्वम्=तृ तत्=डस सुत्रम्=सूत्र को च=श्रीर तम्=उस **भ**न्तर्यामिग्रम्=ग्रन्तर्यामी को श्रविद्वान्=भहीं जानता हुश्रा ब्रह्मगदी:=ब्राह्मणों की गौश्रों को उदजसे≕िलये जाता है तो ते=नेरा

मुर्धा=मस्तक

विपतिष्यति=गिरपदेगा इति=ऐसा + अत्वा=सुन कर + याञ्चयत्कयः=याज्ञवल्क्य ने कहा वि गीतम=हे गीतम ! श्रहम्=मैं तत्=डस सूत्रम्=सृत्र त्रात्मा को च=श्रीर तम्=इस श्चन्तर्यामिणम्=श्रन्तर्यामी को वै=भन्नी प्रकार वेद्=जानता हूं इति≕तव + गौतमः=गीतम ने + आह=कहा कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यः कश्चित्=जो कोई यानी सब कोई इदम्≔यह वृयात्=कइते हैं कि वेद्=मैं जानता हूं चेद=मैं जानता हुं नु≔क्या त्वम्≃तुम तथा=वैसा

व्यात्=कहोगे

यथा=जैसा

+ यदि ब्यात्=भगर कहोगे तो मृहि=कहिये

वत्थ=जानत हो

भावार्थ ।

जब याइवल्क्य महाराज को दुर्धर्ष श्रीर श्रज्ञच विद्वान् पाकर प्रश्न करने से गार्गी उपरत होगई, तब श्रहण श्रृषि के पुत्र उहालक ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न करना आरम्भ किया, ऐसा सम्बोधन करता हुआ। कि, हे याझवल्क्य ! हम लोग एक बार कपिनाम के गोत्र में उत्पन्न हुये पतञ्चलनामक विद्वान के गृह गये, ऋौर यज्ञशास्त्र पढ़ने के निमित्त वहां ठहरे, उनकी भार्या गन्धर्वगृहीत थी, उस गन्धर्व से इमलोगों ने पृंद्धा कि आप कौन हैं ? उसने उत्तर दिया कि मैं आधर्वा ऋषि का पुत्र हूं, मेरा नाम कबन्ध है, इसके पीछे उस गन्धर्व ने किप-गोत्र बिषे उत्पन्न हुये पतञ्चल श्रीर यज्ञशास्त्र के श्रध्ययन करनेवाले र हमलोगों से पूंद्रा, ऐसा सम्बोधन करता हुआ कि हे पत≅बल ! तू उस सूत्र को जानता है जिस करके यह दृश्यमान लोक स्रौर इसका सुक्ष्मकारण, श्रीर परलोक श्रीर उसका सूक्ष्मकारण श्रीर समस्त जीव जन्तु सब प्रथित हैं, इसके उत्तर में काप्य पतश्चल ने कहा हे भगवन् ! उसको मैं नहीं जानता हूं, फिर उस गन्धर्व ने काप्य पतथ्वल और हम यज्ञशास्त्र के अध्ययन करनेवालों से पृंद्धा हे काप्य ! क्या तू उस झन्तर्यामी को जानता है ? जिस करके यह दरयमान लोक अपने कारण सहित और सब भूत जो उसमें विराजमान हैं प्रथित होरहे हैं ? काप्य पतथ्बक्त ने कहा हे पूज्यपाद, भगवन् ! में उसको नहीं जानता हूं, जब गन्धर्व ने इप्रपने दोनों प्रश्नों का उत्तर नहीं पाया, तत्र उसने काप्य पतञ्चल श्रौर यज्ञशास्त्र के श्रध्ययन करनेवाले हम लोगों से कहा कि हे पतश्वल ! जो विद्वान् उस सूत्र को झ्रोर उस अन्तर्यामी पुरुष को अस्त्री प्रकार जानता है वह ब्रह्मवित्, मृः, सुवः, स्वः लोकवित्, वह श्राग्नि, सूर्य श्रादि देववित्, वह श्रृक्, यजुः, साम, आथर्ववेदवित्, वह भूतवित्, वह आत्मवित्, वह सर्ववित् कहलाता है, यानी सब का ज्ञाता होता है, हे काप्य, पतव्वल ! जब ख्राप उस सूत्र को और अन्तर्यामी को नहीं जानते हैं तब अध्यापकवृत्ति कैसे करते हैं ? इस पर पतञ्चल और हमलोगों ने कहा, यदि आप उस सूत्र को और अन्तर्यामी को जानते हैं, तो हमारे लिये कहें, इसके उत्तर में उस गन्धर्व ने कहा में जानता हूं, फिर उस सूत्र और अन्तर्यामी का उपदेश हमलोगों से किया. हे याझवल्क्य ! मैं उस गन्धर्व के उपदेश किये हुये विज्ञान को जानता हूं, यदि आप उस सूत्र और उस अन्तर्यामी को न जानते हुये ब्रह्मवेत्ता निमित्त आई हुई गौओं को उन ब्रह्मवेत्ताओं का निरादर करके ले गये हैं तो आपका मस्तक अवश्य गिर जायगा, इसके उत्तर में याझवल्क्य कहते हैं कि, हे गौतम ! मैं उस सूत्र को और उस अन्तर्यामी को मली प्रकार जानता हूं, इस पर उदालक ऋषि कहते हैं कि ऐसा सबही कहते हैं, मैं जानता हूं, मैं जानता हूं, यदि आप जैसा जानते हैं तो वैसा कहें, अर्थात् गर्जने से क्या प्रयोजन है, यदि आप जानते हैं तो उस विषय को कहें ॥ १ ॥ मन्नाः २

स होवाच वायुर्वे गौतम तत्स्त्रं वायुना वै गौतम सूत्रेणायं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि संदृष्यानि भवन्ति तस्मादै गौतम पुरुषं प्रेतमाहुर्व्यस्रश्रंसिषतास्याङ्गानीति वायुना हि गौतम सूत्रेण संदृष्यानि भवन्तीत्येवमेवतयाङ्गवन्त्रयान्तर्यामिणं बूहीति॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, वायुः, वे, गौतम, तत्, सूत्रम्, वायुना, वे, गौतम, सूत्रेग्ग, अप्रयम्, च, क्षोकः, परः, च, क्षोकः, सर्वािग्ण, च, भृतािन, संदब्धािन, भवन्ति, तस्मात्, वे, गौतम, पुरुषम्, प्रेतम्, आहुः, व्यसं-सिषत, अस्य, अङ्गािन, इति, वायुना, हि, गौतम, सूत्रेग्ण, संदब्धािन, भवन्ति, इति, एवम्, एत्, एत्, याज्ञवक्त्य, अन्तर्यामिग्णम्, ब्रूहि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

सः≔वह याज्ञवस्क्य ह=स्पष्ट उवाच=बोक्षे कि गौतम=हे गौतम !

लत्=वह सूत्रम्=सूत्र बै=निरचय करके वायुः≔वायु है गौतम=हे गौतम ! वायुना=वायुरूप सूत्रेग्ज=सृत्र करके श्रयम्=यह लोकः च=लोक च=धौर परः च=पर लोकः=लोक + च=श्रीर सर्वाशि≂सब भूतानि=प्राणी संदब्धानि } = प्रथित हैं तस्मात्=इस निये गौतम=हे गौतम ! प्रतम्=मरे हुवे पुरुषम्=पुरुष को

चै≕निस्सन्देष्ठ आहु:=कहते हैं कि श्च**स्य**=इसके श्रङ्गानि=ग्रङ ब्यसंस्पत=हीने होगये हैं हि≔क्योंकि गौतम=हे गौतम ! वायुना≈वायुरूप सूत्रेण=सूत्र करके संदृष्धानि } =सब श्रङ्ग ग्रथित होतेहैं भवन्ति इति=ऐसा + श्रत्वा=सुन कर गौतमः=गीतम ने आह=कहा याशवल्यय=हे याशवल्य ! एतत्=यह विज्ञान एवम एव=ऐसाही है जैसा भाप कडते हैं + अथ=अव श्रन्तर्यामिणम्=भन्तर्यामी को मृहि=भाप कर्ढे

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य ने कहा हे गौतम ! आप सुर्ने, मैं कहता हूं. वायु ही वह सूत्र है, जिसको गन्धर्व ने आप से कहा था, वायुरूप सूत्र करके ही कारण सहित यह दृश्यमान लोक, और आकाश विषे स्थित दृश्यादृश्य संपूर्ण लोक, प्राणी और पदार्थ जो उनके अन्दर हैं, प्रथित हैं, हे गौतम ! जब पुरुष सृत्यु को प्राप्त होजाता है, तब उसके सृतक शरीर को देखकर मनुष्य कहते हैं, कि इस पुरुष के सब अवयव ढीले पड़गये हैं, जैसे माला में से सुत्र के निकल जान पर उसके मिशा इधर

उधर गिर पड़ते हैं, इस उदाहररा से आपको मालूम होसक्ता है कि वायुरूप सूत्र करके ही सब पदार्थ मधित हैं, ऐसा सुन कर गौनम उदालक कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! यह विज्ञान ऐसाही है जैसा आपने कहा है, हे याज्ञवल्क्य ! आप कृपा करके अन्तर्यामी विषय के प्रशन का उत्तर देवें ।। २ ।।

मन्त्रः ३

यः पृथिन्यां तिष्ठन्पृथिन्या अन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः॥ पदच्छेदः।

यः, पृथिव्याम्, तिष्ठन्, पृथिव्याः, श्रन्तरः, यम्, पृथिवी, न, वेद, यस्य, पृथिवी, शरीरम्, यः, पृथिवीम्, श्रन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्रात्मा, श्रन्तर्यामी, श्रमृतः ॥

श्चन्वयः पदार्थाः

यः=जो

पृथिव्याम्=पृथ्वी में

तिष्ठन=स्थित है

+यः=जो

पृथिव्याः=पृथ्वी के

श्चन्तरः=बाहर है

यम्=जिसको

पृथिवीं=पृथ्वी

न=नहीं

वेद=जानती है

यस्य=जिसका

श्ररीरम्=शरीर

श्वन्वयः पदार्थाः
पृथिवी=पश्ची है
यः=जो
श्वान्दरः=पृश्ची के बाहर
भीतर रहकर
पृथिवीम्=पृश्ची को
यमयति=स्व ब्यापार में जगाकर
शासन करता है
एषः=वही
ते=तेरा
श्रमुतः=मरण्यमंरहित
श्रारमा=श्रासम

श्चन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ।

याज्ञवक्क्य महाराज कहते हैं कि, हे गौतम ! जो पृथ्वी में रहता हुआ वर्त्तमान है वही अपन्तर्यामी है, गौतम कहते हैं हे याज्ञवक्क्य ! पृथ्वी में तो सब पदार्थ रहते हैं क्या सबही अन्तर्यामी हैं ? याझवरक्य कहते हैं, हे गौतम ! ऐसा नहीं, जो पृथ्वी के अपन्तर है, जो पृथ्वी के बाहर है, जो पृथ्वी के उपर है, जो पृथ्वी के नीचे हैं, जिसको पृथ्वी नहीं जानती है, जो पृथ्वी को जानता है, जिसका पृथ्वी रागीर है, जो पृथ्वी के बाहर भीतर रहकर पृथ्वी को उसके व्यापार में लगाता है आँर जो अविनाशी है, निर्विकार है, और जो तुम्हारा और सब का आदमा है, बही हे गौतम ! अपन्तर्यामी है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

योऽप्सु तिष्टन्नद्भचोऽन्तरो यमापो न विदुर्यस्यापः शरीरं योऽपोन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, श्राप्तु, तिष्ठन्, श्राद्भयः, श्रान्तरः, यम्, श्रापः, न, विदुः, यस्य, श्रापः, रारीरम्, यः, श्रापः, श्रान्तरः, यमयति, एपः, ते, श्रात्मा, श्रान्तर्यामी, श्रामृतः ॥

श्चन्वयः पदार्थाः
यः=जो
श्चरसु=जल में
तिष्ठन्=रहता है
+ च=शीर
श्चर्दशः=जल के
श्चन्तरः=बाहर भी स्थित है
यम्=जिसकी
श्चापः=जल
न=नहीं
विदुः=जानते हैं
+ च=शीर

य∓य≕जिसका

शरीरम्=शरीर

श्चन्ययः पदार्थाः
श्चापः=जल है
यः=जो
श्चन्तरः=जलके श्रभ्यन्तर
रह कर
श्चपः=जल को
यमयति=स्वव्यापार में लगाता
है
पषः=वही
त=तेरा
श्चारमा=श्चारमा

अन्तर्यामी=अन्तर्यामी है

बृहदारगयकोपनिषद् स०।

भावार्थ ।

हे गीतम ! जो जल में रहता है, झीर जो जल के बाहर भी है, जिसको जल नहीं जानता है, झीर जिसका शरीर जल है, झीर जो जल के बाहर भीतर रह कर उसकी शासन करता है, बही तुम्हारा आत्मा है, वही अविनाशी है, वही निर्विकार है, यही वह अन्तर्यामी है। ४॥

मन्त्रः ५

योऽग्नौ तिष्ठन्नग्नेरन्तरो यमग्निर्न वेद यस्याग्निः शरीरं बीऽग्निमन्तरो यमयत्येष ते त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः॥

पदच्छेदः ।

यः, अग्नो, तिष्ठन्, अग्नेः, अन्तरः, यम्, अग्निः, न, वेद, यस्य, अग्निः, रागीरम्, यः, अग्निम्, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आस्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

पदार्थाः

द्मन्वयः यः=जो

श्चरनी=श्चरिन में तिष्ठन्=रहता है

+ च=धौर

+ यः≕जो अस्तरेः≔ऋतिन के

अन्तरः=भीतर स्थित है

यम्=जिसको श्राप्तिः=श्राप्ति

शा•सः–अः **न**≔नहीं

चेद्≕जानता है

य∓य=जिसका

अन्वयः

पदार्थाः

शरीरम्=शरीर अग्नि:=श्रीन है

यः≕जो

श्चन्तर:=श्रीन के भीतर रह कर

अभिनम्=ग्रमिन को

यमयति=शासन करता है

एपः=वही

ते≕तेरा

श्रमृतः=ग्रविनाशी

श्रात्मा=त्रात्मा श्रन्तर्यामी=त्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

हे गौतम ! ऋौर भी सुनो, जो अभिन के अन्दर और बाहर स्थित

है, जो अग्नि का शरीर है, जिसकी अग्नि नहीं जानता है, और जो अगिन को जानता है, और जो अगिन के बाहर भीतर रह कर अगिन को शासन करता है, जो अमृतरूप आपका आरमा है यही वह अन्त-र्यामी है।। १।।

मन्त्रः ६

योऽन्तरिक्षे तिष्ठन्नन्तरिक्षादन्तरो यमन्तरिक्षं न वेद यस्यान्तरिक्षं शरीरं योऽन्तरिक्षमन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमतः ॥ पदच्छेदः ।

यः, श्रान्तरिक्षे, तिष्ठन्, श्रान्तरिक्षात्, श्रान्तरः, यम्, श्रान्तरिक्षम्, न, वेद, यस्य, श्रन्तिरिक्षम्, शरीरम्, यः, श्रन्तिरिक्षम्, श्रन्तरः, यम-यति, एष:, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥ पदार्थाः श्चरचय:

यः=ओ

श्चन्तरिक्षे=श्राकाश में

तिप्रन=स्थित है

यम्य=जिसका

पदार्थाः श्चन्धयः

श्वरीरम्=शरीर अन्तरिक्षम्=श्राकाश है

यः=जो

+ च=श्रौर

श्चन्तरः=श्चाकाश में रह कर + यः≔जो

श्चन्तरिक्षम्=श्राकाश को श्चन्तरिक्षात=श्राकाश के यमयति=नियमबद्ध करता है श्चन्तरः≔बाहर है

> यम्=जिसको पषः=वही

त=तेरा **अन्तरिक्षम्=भाकाश**

श्रमृत:=श्रविनाशौ न=नहीं

वेद्≕जानता है **यात्मा**ःश्रात्मा

श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ ।

हे गौतम ! जो अन्तरिक्ष में रहता है, और जो अन्तरिक्ष के बाहर स्थित है, जिसको अन्तरिक्ष नहीं जानता है, और जो अन्तरिक्ष को जानता है, जिसका शरीर अन्तरिक्ष है, और जो अन्तरिक्ष के बाहर भीतर स्थित होकर अन्तरिक्ष को शासन करता है, अगैर जो आपका द्यविनाशी आत्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।। ६।।

मन्त्रः ७

यो वायौ तिष्ठन वायोरन्तरो यं वायुर्न वेद यस्य वायुः शरीरं यो वायुमन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, वायौ, तिष्ठन , वायोः, श्चन्तरः, यम्, वायुः, न, वेद, यस्य, बायुः, शरीगम्, यः, वायुम्, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्रात्मा, श्चन्तर्यामी, श्रमृतः ॥

बास्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

य:=जो वायौ=वायु में तिष्टन्=स्थित है

+ यः≕जो वायोः=वाय के

श्चान्तरः=बाहर है यम्=जिसको

वायु:=वायु न≕नहीं

चेट=जानता है यस्य≕जिसका

श्ररीरम्=शरीर

वायुः=वायु है

य:=जो

श्चन्तरः=वायु के श्रभ्यन्तर

रह कर

च।युम्=वायुको

यमयति=नियमबद्ध करता है

प्पः=वही

ते≕तेश अमृत:=श्रविनाशी

आत्मा=श्रात्मा

श्चन्तर्यामा=भन्तर्यामा है

भावार्थ।

जो वायु के बाहर भीतर रहता है, जिसको बायु नहीं जानता है, ड्योर जो वायुको जानता है, जिसका वायु शरीर है, जो वायुके भीतर बाहर रह कर वायु को शासन करता है, जो आपका अविनाशी निर्विकार आत्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।। ७।।

मन्त्रः ८

यो दिवि तिष्ठन्दिवोऽन्तरो यं द्यौर्न वेद यस्य द्यौः शरीरं यो दिवमन्तरो यमयत्येष त स्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

य:, दिवि, तिष्ठन्, दिवः, अन्तरः, यम्, द्यौः, न, वेद, यस्य, द्यौः, शरीरम्, यः, दिवम्, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अम्रतः॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यः=जो दिवि=स्वर्ग में तिष्ठम्=स्थित है + च=चौर + यः=जो दियः=स्वर्ग के

झन्तरः≔बाहर है यम्=जिसको द्यौः=स्वर्ग न=नहीं वेद=जानता है

यस्य=जिसका

शरीरम्=शरीर द्यौः=स्वर्ग है यः=जो

श्चन्तरः=स्वर्ग में रह कर

दिवम्=स्वर्ग को यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=वही ते=तेरा श्रमृतः=धविनाशी श्रातमा=श्रासा

अन्तर्यामी=अन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो घुलोक में स्थित है, जो घुलोक के बाहर है, जिसको घुलोक नहीं जानता है, झौर जो घुलोक को जानता है, जिसका शरीर घुलोक है, झौर जो घुलोक के बाहर मीतर स्थित रह कर युलोक को शासन करता है, झौर जो झिवनाशी झापका झात्मा है, यही वह अन्तर्यामी है। दा।

मन्त्रः ६

य त्रादित्ये तिष्ठशादित्यादन्तरो यमादित्यो न वेद यस्यादित्यः शरीरं य त्रादित्यमन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

: 1

यः, आदित्ये, तिष्ठन्, आदित्यात्, अन्तरः, यम्, आदित्यः, न, वेद, यस्य, आदित्यः, शरीरम्, यः, आदित्यम्, अन्तरः, यमयित, एपः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः श्चन्वयः यः≕जो शरीरम=शरीर द्यादित्ये=सूर्य में आदित्यः=सूर्य है तिष्टन्=स्थित है + यः=जो श्चान्तरः=सूर्य के भीतर रह करः श्रादित्यात्=सृर्य के श्रादित्यम्=सूर्य को श्रन्तरः=वाहर है यमयति=नियमबद्ध करता है यम्=जिसको प्पः=वही श्चाद्दित्यः=सूर्य ते=तेरा न=नहीं श्रमृतः=श्रविनाशी चंद=जानता है श्चातमा=श्चातमा यस्य=जिसका श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो ख्रादित्य के भीतर बाहर रह कर स्थित रहता है, जिसको आदित्य नहीं जानता है, जो खादित्य को जानता है, जिसका शरीर आदित्य है, जो ख्रादित्य के भीतर बाहर रह कर ख्रादित्य को शासन करता है, ख्रीर जो श्रविनाशी आपका धात्मा है, यही वह ख्रान्तर्यामी है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

यो दिश्व तिष्ठन्दिग्भ्योऽन्तरो यं दिशो न विदुर्यस्य दिशः शरीरं यो दिशोऽन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥ पदच्छदः।

यः, दिक्षु, तिष्ठन्, दिग्भ्यः, अन्तरः, यम्, दिशः, न, विदुः, यस्य, दिशः, शरीरम्, यः, दिशः, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, अन्तरामा, अमृतः ॥

अन्वयः

ाः पदार्थाः
यः≔जो
दिश्च=दिशायों में
तिष्ठच=स्थित है
यः≕जो
दिगभ्यः=दिशायों के
द्यान्ताः=वशायों के
द्यान्तिसको
दिशः=दिशायें
न=नहीं
चिद्धः=जानती हैं
यस्य=जिसका
शरीरम=शरीर

श्रन्वयः

रः पदार्थाः दिशः≔दिशायं हेँ यः≔तो श्रन्तरः≔दिशाशों के भीतर रह कर दिशः≕दिशाशों को यमयति=नियमयद करता है

एषः≔वही ते=तेरा ऋमृतः≔श्रविनाशी श्रात्मा=श्रात्मा अन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ।

जो दिशाओं के अभ्यन्तर रहता है, जो दिशाओं के बाहर है, जिसको दिशायें नहीं जानती हैं, जो दिशाओं को जानता है, जिस का शरीर दिशायें हैं, जो दिशाओं के भीतर दाहर स्थित होकर दिशाओं का शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतरूप है, यही वह अन्तर्यामी है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

यश्चन्द्रतारके तिष्ठश्रेश्चन्द्रतारकादन्तरो यं चन्द्रतारकं न वेद् यस्य चन्द्रतारकथं शरीरं यश्चन्द्रतारकमन्तरो यमयत्येष त श्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, चन्द्रतारके, तिष्ठन्, चन्द्रतारकात्, श्रन्तरः, यम्, चन्द्र-तारकम्, न, वेद, यस्य, चन्द्रतारकम्, शरीरम्, यः, चन्द्रतारकम्, श्रन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्रात्मा, श्रन्तर्यामी, श्रमृतः ॥ ग्रन्वयः

पदार्थाः यः≕जो

चन्द्रतारके=चन्द्रतारों में तिष्ठन=स्थित है + यः≕जो चन्द्रतारकात्=चन्द्रतारीं के श्चान्तरः=बाहर है यम=जिसको

चन्द्रतारकम्=चन्द्रतारे त=नहीं

> यस्य=जिसका शरीरम=ग्रीर

बेट=जानते हैं

पदार्थाः प्रास्त्रयः चन्द्रतारकम्=चन्द्र और तारे हैं

यः≕जो

श्चान्तरः≔चन्द्र श्रीर तारों के

श्राभ्यत्तर रह कर

चन्द्रतारकम=चन्द्र तारीं को

यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=यही

ने=नेरा

श्चमृतः=श्रविनाशी

श्चातमा=श्चात्मा श्चन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो चन्द्रमा ख्रीर तारों के भीतर बाहर स्थित है, जिसको चन्द्रमा श्रीर तारे नहीं जानते हैं, जो चन्द्रमा श्रीर तारों को जानता है, जिस का शरीर चन्द्रमा और तारे हैं, जो चन्द्रमा श्रीर तारों के भीतर रह कर उनको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतरूप है. यही वह अपन्तर्यामी है।। ११।।

मन्त्रः १२

य आकाशे तिष्टनाकाशादन्तरो यमाकाशो न वेद यस्याकाशः शरीरं य त्राकाशमन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमतः ॥

पदच्छेदः।

यः, आकाशे, तिष्ठन्, आकाशात्, अन्तरः, यम्, आकाशः, न, वेद, यस्य, आकाशः, शरीरम्, यः, आकाशम्, अन्तरः, समयति. एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

पदार्थाः ध्रत्वयः पदार्थाः

यः≕जो

द्याकाशः=अकाश है

द्याकाशे=श्राकाश में

तिष्ठन=स्थित है + यः≕जो

श्राकाशात=भाकाश से श्चन्तरः≔बाहर है

यम्=जिसको

श्चाकाश:=श्चाकाश

न=नहीं

वेद=जानता है

यस्य=जिसका श्ररीरम्=शरीर

य:=जो

श्चान्तर:=श्चाकाश के अभ्यन्तर

रह कर

आकाशम=श्राकाश को यमयति=नियमबद्ध करता है

एष:=बही

ते≕तेरा

श्चमृतः=श्रविनाशी

श्चात्मा=श्रात्मा श्चन्तर्यामो=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो श्राकाश के भीतर वाहर स्थित है, जिसको श्राकाश नहीं जानता है, जो आकाश को जानता है, जिसका शरीर आकाश है, जो श्राकाश के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो श्चापका श्चारमा है, जो श्चमतस्वरूप है, यही दह श्चन्तर्यामी है।। १२।।

मन्त्रः १३

यस्तमास तिष्ठछंस्तमसोऽन्तरो यं तमो न वेद यस्य तमः शरीरं यस्तमोऽन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याभ्यमतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, तमसि, तिष्ठन्, तमसः, अन्तरः, यम्, तमः, न, वेद, यस्य, समः, शरीरम्, यः, तमः, भ्रान्तरः, यमयति, एपः, ते, भ्रात्मा, ध्यन्तर्यामी, श्रमृतः ॥

शन्वयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो तमसि=भ्रन्थकार में तिष्टन=स्थित है

+ यः≕जो तमसः=बन्धकार के भ्रान्तरः=बाहर है

यम् तमः≔जिसको धन्यकार न चेद्=नहीं जानता है यस्य=जिसका श्रारिम्≔शीर तमः≔तम है यः≕जो अन्तरः=अन्यकार के भीतर

बाहर रह कर

तमः≔षन्धकार को यमयति≔नियमबद्ध करता है एषः≔वही ते⇒तेरा अमृतः≔स्रविनाशी आत्मा=स्रात्मा अन्तर्योमी=स्रुत्वर्यामी है

भावार्थ ।

जो तमके भीतर बाहर रहता है, जिसको तम नहीं जानता है, जो तमको जानता है, जिसका शरीर तम है, जो तम के अन्तर और बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो अमृतस्वरूप है, और जो आपका आत्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।। १३।।

मन्त्रः १४

यस्तेजिस तिष्ठथ्रस्तेजसोऽन्तरो यं तेजो न वेद यस्य तेजः शरीरं यस्तेजोऽन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृत इत्यिषदे-वतमथाधिभूतम् ॥

पदच्छेदः ।

यः, तेजसि, तिष्ठम्, तेजसः, श्रन्तरः, यम्, तेजः, न, वेद, यस्य, तेजः, शरीरम्, यः, तेजः, श्रन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्रात्मा, श्रन्तर्यामी, श्रमृतः, इति, श्राविदेवतम्, श्रथ, श्राविभूतम्।।

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः यः=जो श्चन्तरः≔षाहर् है तेत्रस्रि=जेत्र में यग्न≕जिसको

तेजिस=तेज में तिष्ठन्=स्थित है + यः=जो तेजसः=तेज के यम्≕िजसको तेजः≔तेज न=नहीं वेद=जानता है यस्य=जिसका शरीरम्=शरीर तेजः=वेज है

यः=जो श्चन्तरः=तेज के भीतर रह कर

तेजः=तेज को यमयति=नियमबद्ध करता है

> **एषः**=वही ते=तेरा

श्चमृतः :श्वविनाशी श्चारमा=त्रास्मा श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

इति=इस प्रकार

श्रधिदैवतम्= { देवता के उरेश्य से श्रमिदैवतम्= { श्रम्तर्गमा विषय कहा है

श्रथ≔प्रब

म्राधिभूतम्=भौतिक विषय कहेंगे

भावार्थ।

जो तेज के भीतर बाहर रहता है, जिसको तेज नहीं जानता है, जो तेज को जानता है, जिसका शरीर तेज है, जो तेज के भीतर बाहर स्थित रह कर उसको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो आमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है इस प्रकार अधिदेव का वर्णन होकर अधिभृत का प्रारंभ होता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १५

यः सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्सर्वे भ्यो भूते भ्यो अन्तरो यर्छ सर्वाणि भूतानि न विदुर्यस्य सर्वाणि भूतानि शरीरं यः सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तयो स्यस्त इत्यधिभूतमथाध्यात्मम् ॥

पद्च्छेदः ।

यः, सर्वेषु, भूतेषु, तिष्ठन्, सर्वेभ्यः, भूतेभ्यः, झन्तरः, यम्, सर्वाणि, भूतानि, न, विदुः, यस्य, सर्वाणि, भूतानि, शरीरम्, यः, सर्वाणि, भूतानि, झन्तरः, यमयित, एषः, ते, झात्मा, झन्तर्यामी, झमृतः, इति, झिभभूतम्, झथ, झध्यात्मम् ॥

शन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यः≕जी सर्वेषु=सब भूतेषु=प्राणियों में तिष्कृन्≕स्थित है यः≕क्षो सर्वेभ्यः=सब भूतेभ्यः=माखियों के द्यम्तरः=बाहर है यम्=जिसको सर्वािख=सब भूतानि=प्राणी न=नहीं विदुः≕जानते हैं यस्य=जिसका श्ररोरम्=शरीर रूर्वाणि=सब भतानि=प्राणी हैं य:=जो श्चन्तर:=प्राधियों के श्रभ्यन्तर रह कर

सर्वागि=सब

भूतानि=प्राणियों को

यमयति=नियमबद्ध करता है एषः=वडी ते≔तेरा श्रमृतः=ग्रविनाशी श्चातमा=श्चातमा अन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है इति=इस प्रकार श्रधिभूतम्=ग्रधिभृत का वर्णन होचुका ग्राध=स्रब श्चध्यात्मम्=श्रध्यात्म का वर्णन होगा

भावार्थ ।

जो सब भूतों में रहता है, जो सब भूतों के बाहर भी स्थित है, जिसको सब भूत नहीं जानते हैं, जो सब भूतों को जानता है, जिस का शरीर सब भूत हैं, जो सब भूतों के भीतर बाहर रह कर उनको शासन करता है, जो अमृतस्वरूप है, जो निर्विकार है, जो आपका श्चात्मा है, यही वह अन्तर्यामी है, इस प्रकार अधिभूत का वर्सान होकर अध्यात्म का आरम्भ होता है ॥ १५ ॥

मन्त्रः १६

यः प्राणे तिष्ठन्त्राणादन्तरो यं प्राणो न वेद यस्य प्राणः शरीरं यः पाणमन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, प्राग्रो, तिष्ठन्, प्राग्रात्, श्चन्तरः, यम्, प्राग्रः, न, वेद, यस्य, प्रासाः, शरीरम्, यः, प्रासाम्, अधन्तरः, यमयति, ६षः, ते, आस्मा, श्चन्तर्यामी, श्रमृतः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

प्रातो≔प्राय में

प्राणात्=प्राण् के
स्रन्तरः=बाहर दे
स्रम्=जिसको
प्राणः=प्राण
न=नहीं
वेद⇒जानता हे
सस्य=जिसका
शरीरम्=प्रागर
प्राणः=प्राण् हे

ग्रः≔को
श्चन्तरः≔प्राण में रह कर
प्राण्म्म्=प्राण को
ग्यमयति≕नियमवद्ध करता है
एषः≔वही
ते≕तेरा
श्चमृतः≔ष्रविनाशी
श्चारमा=श्चारमा
श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो प्राग्त के अन्तर रहता है, और बाहर भी रहता है, जिस को प्राग्त नहीं जानता है, जो प्राग्त को जानता है, जिसका शरीर प्राग्त है, जो प्राग्त के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो आपका श्रात्मा है, जो अविनाशी है, यही वह अन्तर्यामी है।। १६।।

मन्त्रः १७

यो वाचि तिष्ठन्वाचोऽन्तरो यं वाङ् न वेद यस्य वाक् शरीरं यो वाचमन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, वाचि, तिष्ठन्, वाचः, ऋन्तरः, यम्, वाक्, न, वेद, यस्य, वाक्, शरीरम्, यः, वाचम्, अन्तरः, यमयित, एषः, ते, झात्मा, इप्रन्तर्यामी, अमृतः ॥

श्चन्वयः पदार्घाः यः=जो वाचि=वायी में तिष्ठन्=स्थित है + यः=जो वाचः=त्रायी के भ्रन्तरः≔बाहर है

यम्=जिसको

ग्रन्वयः पदार्थाः वार्षो≔गर्षा न=नहीं वेद=जानती है यस्य=जिसका शरीरम्≕गरीर वाक=बाबी **है**

यः≕जो

श्चम्तरः=वाणी में रह कर बाचम्=वाणी को यमयति=नियमबद्ध करता है

प्रचः=वही

ते=तेरा ग्रमृत:=प्रविनाशी ग्रारमा=प्रात्मा ग्रस्तर्गमी=प्रन्तर्गमी है

भावार्थ ।

जो वाग्गी के अन्तर स्थित है, जो वाग्गी के बाहर स्थित है, जिसको वाग्गी नहीं जानती है, जो वाग्गी को जानता है, जिसका शरीर वाग्गी है, जो वाग्गी के भीतर वाहर रह कर वाग्गी को शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो आमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है।। १७॥

मन्त्रः १८

यरचक्षुषि तिष्ठश्रंश्चक्षुषोऽन्तरो यं चक्षुर्न वेद यस्य चक्षुः शरीरं यश्चक्षुरन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, चक्कुंषि, तिष्ठन्, चक्कुषः, ऋन्तरः, यम्, चक्कुः, न, वेद, यस्य, चक्कुः, शरीग्म, यः, चक्कुः, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो चश्चिष्ठ=नेत्र में तिष्ठन्=स्थित है + यः≕जो चश्चिषः=नेत्र कें ऋन्तरः=बाहर है यम्=जिसको शरीरम्≔शरीर चक्षुः=नेत्र है यः=जो अन्तरः=नेत्र में रह कर चक्षुः=नेत्र को यमयति=नियमबद्ध करता है एषः=बही

न=नहीं घेद्=जानता है यस्य=जिसका ते=तेरा अमृतः=घविनाशी आत्मा=धात्मा अन्तर्यामी=धन्तर्यामी है

पदार्थाः

भावार्थ ।

जो चक्षु के अन्तर स्थित है, जो चक्षु के बाहर स्थित है, जिसको चक्षु नहीं जानता है, जो चक्षु को जानता है, जिसका शरीर चक्षु है, जो चक्षु के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अविनाशी है, यही वह अन्तर्यामी है।। १८ ।।

मन्त्रः १६

यः श्रोत्रे तिष्ठञ्छ्रोत्रादन्तरो यथं श्रोत्रं न वेद यस्य श्रोत्रथं शरीरं यः श्रोत्रमन्तरो यमयत्येष त झात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, श्रोत्रे, तिष्ठन्, श्रोत्रात्, झन्तरः, यम्, श्रोत्रम्, न, वेद, यस्य, श्रोत्रम्, शरीरम्, यः, श्रोत्रम्, झन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, झन्तर्यामी, झमृतः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

द्यान्वयः
यः=जो
श्रोत्रे=कर्ण में
तिष्ठन्=स्थित है
+ यः=जो
श्रोत्रात्=कर्ण के
श्रन्तरः=बाहर है
यम्=जिसको
श्रोत्रम्=कर्ण
म=नहीं
वेद=जानता है

श्ररीरम्=शरीर

श्रोत्रम्-कर्य है
यः=जो
श्रान्तरः=कर्य के सभ्यन्तर
रह कर
श्रोत्रम्=कर्य को
यमयति=नियमबद्ध करता है
एषः=वही
ते=तेरा

ग्रमृतः=श्रविनाशी श्रात्मा=श्रात्मा श्रात्मा=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो श्रोत्र के झभ्यन्तर स्थित है, जो श्रोत्र के बाहर स्थित है, जिसको श्रोत्र नहीं जानता है, जो श्रोत्र को जानता है, जो श्रोत्र के अभ्यन्तर और वाहर स्थित होकर श्रोत्र को शासन करता है, जी आप का आत्मा है, जो अमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है।।१६॥

मन्त्रः २०

यो मनिस तिष्टन्मनसोऽन्तरो यं मनो न वेद यस्य मनः शरीरं यो मनोऽन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, मनसि, तिष्ठन्, मनसः, श्चन्तरः, यम्, मनः, न, वेद, यस्य, मनः, शरीग्म्, यः, मनः, श्चन्तरः, यमयति, एपः, ते, श्चात्मा, श्चन्त-र्यामी, श्चमृतः ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः द्यान्यय: शरीरम्=शरीर य:=जो मनसि=मन में मनः=मन है तिष्ठन्=स्थित है यः≕जो + यः=जो श्चन्तरः=मन में रह कर मनसः=मन के मनः=मनको श्चन्तर:=बाहर है यमयति=नियमवद्ध करता है यम्=जिसको ष्रषः=वशी ते≕तेरा सनः=मन श्चमृतः=श्रविनाशी **न**=नहीं बेद=जानता है श्चातमा=श्रातमा यस्य=जिसका श्चन्तर्यामा=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो मन के बाहर भीतर स्थित है, जिसको मन नहीं जानता है, जो मनको जानता है, जिसका शरीर मन है, जो मन के भीतर बाहर रह कर मनको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृत-स्वरूप है, यही वह अपन्तर्यामी है ॥ २०॥

मन्त्रः २१

यस्त्वचि तिष्ठश्रंस्त्वचोऽन्तरो यं त्वङ् न वेद यस्य त्वक् शरीरं यस्त्वचमन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पद्च्छेदः ।

यः, त्वचि, तिष्ठन्, त्वचः, अन्तरः, यम्, त्वक्, न, वेद, यस्य, त्वक्, शरीरम्, यः, त्वचम्, अन्तरः, यमयित, एपः, ते, आस्मा, आन्तर्यामी, असृतः ॥

SET	271	73	:

पदार्थाः
यः=जो
त्यचि=व्यचा में
तिप्रन्=िथ्यत है
+ यः=जो
त्यचः=त्यचा के
अन्तरः=वाहर है
यम्=जिसको
त्यक्=व्यच म=नहीं
येद=जानती है
यस्य=जिसका श्रस्वयः पदार्था शरीरम्=शरीर त्यक्=त्वचा है यः=जो श्रस्तरः=त्वचा में रह कर त्वचम्=त्वचा को

यमय ति≕नियमयद्ध करता है

एषः=वही

ते⇒तेरा

अमृतः=अविनाशी
आत्मा=आत्मा
अन्तर्यामा=अन्तर्यामी है

भाषार्थ ।

त्रो त्वचा के भीतर वाहर रहता है, जिसको त्वचा नहीं जानती है, जो त्वचा को जानता है, जिसका शरीर त्वचा है, जो त्वचा के भीतर वाहर रह कर त्वचा को शासन करता है, जो आपका आसा है, जो अस्तस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है ॥ २१ ॥

मन्त्रः २२

 यो विज्ञाने तिष्ठन्विज्ञानादन्तरो यं विज्ञानं न वेद यस्य विज्ञानंश्र शरीरं यो विज्ञानमन्तरो यमयत्येष त त्र्यात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, विज्ञाने, तिष्ठन्, विङ्गानात्, ग्रन्तरः, यम्, विज्ञानम्, न, वेद, यस्य, विज्ञानम्, शरीरम्, यः, विज्ञानम्, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अगृतः ॥ श्रन्वयः

पदार्थाः य:=जो विज्ञाने=विज्ञान में तिष्ठन=स्थित है यः=जो विज्ञानात्=विज्ञान के श्चान्तरः=बाहर है यम्=जिसको विज्ञानम्=विज्ञान **न**=नहीं चेद=जानता है यस्य=जिसका

ग्रन्ययः

पदार्थाः शरीरम्≕शरीर विज्ञानम्=विज्ञान है यः=जो श्चन्तरः≕विज्ञान में रह कर विज्ञानम=विज्ञान को यमयति=नियमबद्ध करता है प्रचः=वही ते=तेरा श्रमृतः=श्रविनाशी

श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो विज्ञान के इप्रन्तर स्थित है, जो विज्ञान के वाहर स्थित है, जिसको विज्ञान नहीं जानता है, जो विज्ञान को जानता है, जिसका शरीर विज्ञान है, जो विज्ञान के भीतर वाहर स्थित होकर विज्ञान को शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतस्वरूप है, यही वह क्रान्तर्यामी है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

यो रेतसि तिष्टन् रेतसोऽन्तरो यथं रेतो न वेद यस्य रेतः शरीरं यो रेतोऽन्तरो यमयत्येप त आत्मान्तर्याम्यमृतोऽदृष्टो द्रष्टाऽश्रुतः श्रोतामतो मन्ताविज्ञातो विज्ञाता नान्योऽतोस्ति द्रष्टा नान्योऽतोस्ति श्रोता नान्योऽतोस्ति मन्ता नान्योऽतोस्ति विज्ञातैप त त्रात्मान्तर्या-म्यमृतोऽतोन्यदार्चं तता होदालक त्रारुणिरुपरराम ॥

इति सप्तमं ब्राह्मणम् ॥ ७ ॥

पदच्छेदः ।

क्षाः, रेतम्म, तिष्ठत्, रेतसः, अन्तरः, यम्, रेतः, न, वेद, यस्य, रेतः, शरी म्, यः, रेतः, अन्तरः, यमयति, एपः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः, अटटः, ट्रष्टा, अश्रुतः, श्रोता, अमतः, मन्ता, श्रविज्ञातः, विज्ञाता, न, अन्यः, श्रातः, अस्ति, द्रष्टा, न, अन्यः, अतः, अस्ति, श्रोता, न, अन्यः, श्रातः, अस्ति, मिन्ता, एषः, अन्यः, श्रातः, अस्ति, विज्ञाता, एषः, ते, श्रात्मा, अन्तर्यामी, श्रामृतः, श्रातः, अन्यत्, श्रार्त्तम्, तः, ह. उद्दालकः, आरुसिः, उपस्तम ॥

ज्ञन्वसः

पदार्था अन्वयः

पद र्मः

य:=जो रेतिस=वीर्य में तिष्ठन्≕स्थित है + यः≕जो रेतसः=वीर्य के श्रन्तर:=बाहर है यम्=जिसको रेतः=वीर्य न=नहीं चेद=जानता है यस्य=जिसका शरीरम्=शरीर रेतः=वीर्य है यः=जो श्चान्तरः=वीर्यं में रह कर रेतः=वीर्य को यमयति=नियमबद्ध करता है एषः≕वही ते=तेरा श्चात्मा=श्चात्मा श्चमृतः=श्रविनाशी धमृत-स्वरूप है + एषः≔यही आह्यः=सहद्व होता हुंमा द्रधा=द्रष्टा है

+ एपः=यही
श्रश्नतः=श्रश्नतः होतः हुआ
श्रोता=श्रोता है
एपः=यही
श्रमतः=श्रमत होता हुआ
मन्ता=मन्ता है पानी मनन
करने वाला है
+ एपः=यही
श्रविज्ञातः=श्रविज्ञात होता हुआ
विज्ञातः=श्रविज्ञात हे ता हुआ
विज्ञातः=विज्ञाता है

श्राता=वर्गता के
श्रातः=इससे
श्रम्यः=श्रम्य कोई
द्रश=द्रश
न=नहीं
श्रास्त=है
श्रातः=इससे
श्राना=श्रोता
न=नहीं
श्रास्त=है

श्रास्त=६ श्रात्ः=इससे श्रान्यः=श्रन्य कोई मन्ता=मन्ता न=नईां श्रास्ति=है श्चतः=इससे
श्चन्यः=श्चन्य कोई
विद्याता=विज्ञाता
न=नहीं
श्चस्ति=है
+ एषः=यही
ते=तेरा
श्चमुतः=श्चितारा

श्रन्तर्यामी=धन्तर्यामी है श्रतः=इससे श्रन्यत्=प्रथक् ग्रॅं.र सक् श्रात्तेम्=दुःखरूप है ततः ह=इसके पीछे स्पष्ट श्रारुणिः=श्ररुण का पुत्र उदाखकः=उदाखक उपरराम=च्य होता भया

भावार्ध ।

जो वीर्य के भीतर वाहर स्थित है, जिसको वीर्य नहीं जानता है, जो वीर्य को जानता है, जिसका शरीर वीर्य है, जो वीर्य के भीतर थाहर रह कर वीर्य को शासन करता है, वही अप्रष्ट होता हुआ द्रष्टा है, वही अप्रुत होता हुआ श्रोता है, वही अमन्ता होता हुआ मनन करने वाला है, और आवज्ञात होता हुआ विज्ञात है, वही आपका आत्मा है, वही अमृतस्यरूप है, इससे पुष्यक् और कोई द्रष्टा नहीं है, इससे पुष्यक् कोई वृह्मरा श्रोता नहीं है, इससे अन्य कोई मन्ता नहीं है, इससे अन्य कोई मन्ता नहीं है, इससे अन्य कोई विज्ञाता नहीं है, यही तरा अविनाशी आत्मा अन्तर्यामी है, इससे पुष्यक् और सन दुःखरूप है, इसके पीछे अक्सा का पुत्र उद्दालक चुप होता भया ॥ २३ ॥

इति सप्तमं ब्राह्मराम् ॥ ७ ॥

श्रथाष्टमं ब्राह्मग्रम् । मन्त्रः १

श्रथ ह वाचक्रव्युवाच ब्राह्मणा भगवन्तो हन्ताहमिमं द्वौ प्रश्नौ प्रक्ष्यामितो चेन्मे वक्ष्यति न जातु युष्माकमिमं कश्चिद्धह्मोद्यं जेतेति पृच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, वाचकवी, उवाच, ब्राह्मगाः, भगवन्तः, हन्त, श्रह्म, हमम्, द्वौ, प्रश्नौ, प्रक्ष्यामि, तौ, चेत्, मे, वक्ष्यति, न, जातु, युष्माः कम्, इमम्, कश्चित्, ब्रह्मोयम्, जेता, इति, प्रन्छ, गार्गि, इति ॥ श्रन्थयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

प्रवयः पदाया त्रश्य ह=हसके बाद वाचक्रवी≕गार्गी उवाच≔बोर्जा कि ब्राह्मणाः } =हे पूज्य, ब्राह्मणो ! भगवन्तः }

> हन्त=यदि श्रापकी श्रनु-मति हो तो इमम्=इन याम्रवस्क्य से द्वी=दो प्रश्नी=प्रश्न

ऋहम्=में प्रक्ष्यामि=ृङ्गी चेत्=त्रगर

+ सः=वह मे=मेरे

तौ=उन दोनों प्रश्नों का

वक्ष्यति=उत्तर देंगे तो युष्माकम्=ग्रापलोगीं में कश्चित्=कोई भी

इमम्=इस ब्रह्मोद्यम=ब्रह्मवादी याज्ञवल्क्य

> को जा:तु=कभी न=न

जेता=जीत पावेगा

इति=इस प्रकार + श्रुत्वा=सुन कर

+ ब्राह्मणाः≔ब्राह्मण

+ श्राहुः=बोले कि गार्गि=हे गार्गि ! पृच्छ=तुम पृको

दृति=ऐसा सर्वो ने कहा

भावार्थ।
श्राहिता उदालक के चुप होने पर वह प्रसिद्धा वाचकवी गार्गी वोली
कि हे ब्रह्मवेत्ताश्चो ! हे परमपूज्य, महात्माश्चो ! यदि श्रापलोगों की
श्राह्मा हो तो मैं इन याज्ञवल्क्य महाराज से दो प्रश्न पृष्ठूं, हे ब्राह्माणो !
यदि वह उन मेरे दोनों प्रश्नों का उत्तर कह देंगे तो मुक्कि निश्चय
होजायगा कि श्रापलोगों में से कोई भी ब्रह्मवादी याज्ञवल्क्य महाराज को जीत नहीं सकेगा, गार्गी के इस वचन को मुन कर सब
ब्राह्मण प्रसन्न होते हुये बोले कि, हे गार्गि ! तुम श्रापनी इच्छानुसार
याज्ञवल्क्य से श्रवरय प्रश्न करो ॥ १॥

मन्त्रः २

सा होवाचाहं वै त्वा याज्ञवल्क्य यथा काश्यो वा वैदेहो बोग्र-पुत्र उज्ज्यं धनुरधिज्यं कृत्वा द्वौ वाणवन्तौ सपत्नातिव्याधिनौ इस्ते कृत्वोपोत्तिप्टेदेवमेवाहं त्वा द्वाभ्यां प्रश्नाभ्यामुपोदस्थां तौ मे ब्रहीति पुच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उत्राच, श्रहम्, त्रे, त्वा, याज्ञवल्क्य, यथा, काश्यः, वा, विदेहः, वा, उप्रपुत्रः, उज्ज्यम्, धनुः, अधिज्यम्, कृत्वा, द्वौ, बागावन्तौ, सपन्नाति-व्याधिनौ, हस्ते, कृत्वा, उपौत्तिष्टेत्, एवम्, एव, श्रहम्, त्वा, द्वाभ्याम्, प्रश्नाभ्याम्, उपोद्स्थाम्, तौ, मे, ब्रुह्, इति, पुच्छ, गार्गि, इति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः । श्चन्वयः सा ह=वह गार्गी उद्याच=बोबी कि याञ्चवत्कय=हे याञ्चवत्क्य ! यथा≔जैसे काश्यः=काशी वा=ग्रथवा वैदेहः≔विदेह के उग्रपुत्रः=शूरवीरवंशी राजा उज्ज्यम्=प्रत्यञ्चारहित धनुः≔धनुप् को श्रिधिज्यम् } =प्रत्यञ्जा चढ़ा करके सपताति-) शत्र के बेधन करने द्याधिनी) वाले वारावन्ती=तीक्ष्णाप्र बार्यो को हस्ते≔हाथ में कृत्वा≔षेकर

पदार्थाः उपोत्तिष्टेत्=शत्रुहनन के लिये उपस्थित होवे एयम् एव=वैसंहा श्रहम्=भें त्या=तुम्हारे निकट द्वाभ्याम्=दो प्रश्नाभ्याम्=प्रश्नों के बास्ते उपोद्स्थाम्=उपस्थित हूं तौ=उन दोनों परनों के उत्तर को मे= मेरे जिये वृहि=कहिये इति=रेसा + श्रुत्वा=सन कर + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह≔कहा कि गार्गि=हे गार्गि ! पृच्छ इति इतुम उन प्रश्नों को पृक्को

भावार्थ।

हे याज्ञवल्क्य ! वह मेरे दो प्रश्न कैसे हैं सो सुनिये. जैसे काशी अथवा विदेह के शूरवीरवंशी राजा प्रस्यश्वारहित धनुष् पर प्रत्यश्वा चढ़ा करके शत्रु के हनन के िकये उपस्थित होवें वैसेही में आपके सामने आपके पराजय के निमित्त दो प्रश्नों को लेकर उपस्थित हूं, आप उन दोनों प्रश्नों के उत्तर को मेरे िकये कहिये, ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा हे गार्गि ! तुम उन प्रश्नों को प्रसन्नतापूर्वक सुम्म से पृत्नो, इसके उत्तर में गार्गी कहती है, आप घवड़ाइये नहीं, में अवश्य पृत्नुंगी ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच यद्ध्वं याज्ञवल्क्य दिवो यदवाक्पृथिव्या यदन्तरा द्यावापृथिवी इमे यद्भ्तं च भवच भविष्यचेत्याचक्षते कस्मिः स्तदोतं च प्रोतं चेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, खवाच, यत्, ऊर्ध्यम्, याज्ञवल्क्य, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिन्याः, यत्, अन्तरा, यावापृथिवी, इमे, यत्, भूतम्, च, भवत्, च, भविष्यत्, च, इति, आचक्षत्, क्रिमन्, तत्, अोतम्, च, प्रोतम्, च, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चरयः श्रन्वयः म्मा=वह गार्गी यत्≔जो प्रधिद्याः=प्रध्यीलोक के ह=स्पष्ट उवाच=पृद्धती भई कि श्रवाकु=नीचे ह यद्न्तरा≕िजसके बीच में याञ्चयत्क्य=हे याश्वरूक्य ! इमे=ये यत्=जो द्यावाप्रथिवी=चुलोक श्रीर पृथ्वी दिव:=गुलोक के ऊर्ध्वम्=अपर है बोक े

यत्=जिसको + पुरुषाः=पुरुष भृतम्=भूत ष=भीर भवत्=वर्तमान च=शीर

भविष्यत्=भविष्यत्

म्राचक्षते=कहते हैं तत्=वह सब कस्मिन्=किसमें म्रोतम्=भीत च=भीर

प्रोतम् इति=प्रोत है ऐसा प्रश्न किया

पदार्थाः

भावार्थ ।

तदनन्तर वह गार्गी पृद्धती है कि, हे याज्ञवल्क्य ! जो शुलोक के ऊपर है, जो पृथ्वीलोक के नीचे है, श्रीर जो शुलोक श्रीर पृथ्वी लोक के मध्य में है, श्रीर जिसको लोक भृत, वर्तमान, भविष्यत् नाम करके कहते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वह सब किस में श्रीत प्रांत है, यानी किसके श्राश्रित है, यह भेरा प्रथम प्रश्न है, श्राप इसका उत्तर हैं !! ३ !!

मन्त्रः ४

स होवाच यद्र्र्ध्वं गार्गि दिवो यदवाक् पृथिन्या यदन्तरा द्यावाष्ट्रिथेवी इमे यद्भ्तं च भवच भविष्यचेत्याचक्षत त्र्याकाशे तदोतं च प्रोतं चेति ।।

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, यत्, उर्ध्वम्, गार्गि, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिव्याः, यदन्तगा, द्यावापृथित्री, इमे, यत्, भृतम्, च, भवत्, च, भविष्यत्, च, इति, आवक्षते, आकाशे, तत्, आतम्, च, प्रोतम्, च, इति ॥

द्यान्वयः पदार्थाः सन्वयः सः=वह याज्ञवल्क्य यत्=जो ह=स्पष्ट दिवः=धुत्रोक के उवाच=कहता भया कि ऊर्ध्वम्=अपर है गार्गि=हे गार्गि! यत्=जो पृथिवयाः=प्रथ्वीकोक के
श्रवाक्=नीचे हैं
यद्न्तरा=जिसकं बीच में
हमे=थे
द्यावापृथिवी=चुकोक श्रीर पृथ्वी
कोक हैं
यत्=जिसको
पुरुषाः=पुरुष
भृतम्≕भृत
भयत्=वर्तमान

मविष्यत्⇒भविष्यत् इति=करके श्राचञ्चने⇒क्डते हैं तत्=वह सब श्राकाशे=झाकाश मं श्रोतम्=भोत च=बौर मोतम्=भोत है इति=ऐसा उत्तर दिया

भावार्थ ।

गार्गी के प्रश्न को सुन कर याज्ञवल्क्य मदाराज बोले हे गार्गि! जो सुलोक के उत्पर है, जो पृथ्वीलोक के नीचे है, झ्रोर जो सुलोक झ्रोर पृथ्वीलोक के मध्य में है, झ्रोर जिसको विद्वान्त्रोग भूत, वर्तमान, भविष्यत् नाम करके वहने हैं वह सब झ्राकाश में प्रथित हैं झर्थात् झ्राकाश में झ्रोतप्रोत हैं, हे गार्गि! यह तुम्हारे प्रश्न का उत्तर है। । ।

मन्त्रः ५

सा होवाच नमस्तेऽस्तु याज्ञवल्क्य यो म एतं व्यवोचोऽपरस्मै धारयस्वेति पृच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, नगः, ते, ध्यस्तु, याज्ञवत्कय, यः, मे, एतम्, व्यवोचः, श्चपरस्मे, धारयस्व, इति, पृच्छ, गार्गि, इति ॥

श्रन्वयः

श्चन्वयः पदार्थाः स्मा≔बह गार्गी हु=फिर स्पष्ट उवाच=कहती भई कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! ते=आपके क्षिये

नमः≔नमस्कार श्चस्तु≔होवे यः≕जिसने मे≔मेरे एतम्≕इस परन को

पदार्थाः

व्यवोचः=यथायोग्य कहा + ग्रधुना=श्रव + मम=मेरे श्रपरस्मै=दूसरे प्रश्न के लिये धारयस्व=श्रपने को तैयार करो इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर +याज्ञवत्क्यः=याज्ञवस्क्य ने + श्राह=कहा कि गार्गि=हे गार्गि ! पृच्छु इति=तुम पूछो

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महागाज के समीचीन उत्तर को सुन कर गार्गी अतिप्रसन्न हुई, भ्रोर विनयपूर्वक बोली कि, हे याज्ञवल्क्य ! स्थापको मेरा नम-स्कार है, आपने मेरे पहिले प्रश्न का उत्तर विशेषरूप से व्याख्यान किया है, भेरे दूसरे प्रश्न के लिये स्थाप अपने को दहतापूर्वक तैयार करें, गार्गी के इस वचन को सुन कर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे गार्गि ! तुम अपने दूसरे प्रश्न को भी पूत्रो, में उत्तर देनेको तैयार हूं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

सा होवाच यर्ध्वं याज्ञवल्क्य दिवो यदवाक् पृथिच्या यदन्तरा द्यावापृथिवी इमे यद्भूतं च भवच भविष्यचेत्याचक्षते कस्मिछंस्त-दोतं च भोतं चेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, खवाच, यत्, ऊर्ध्वम्, याज्ञदरुक्त्य, दिवः यत्, अप्रवाक्, पृथिन्याः, यदन्तरा, दावापृथिवी, इमे, यत्, भूतम्, च, भदत्, च, भित्यत्, च, इति, आचक्षते, कस्मिन्, तत्, आतम्, च, प्रोतम्, च, प्रोतम्, च, इति ॥

त्रान्वयः पदार्थाः त्रान्वयः सा=वद्द गार्गी ह=ःपष्ट उवाच=बोजी कि याज्ञवल्क्य≔इे याज्ञवल्क्य ! . पूर्व दिवः≕युजोक से

वयः पदार्थाः यत्≕गो ऊर्ध्वम्≔जपर है यत्≕जो पृथिव्याः≔पृथीबोक से श्रवाकु≕नीचे है यद्दन्तरा≕िजसके बीच में इसे=थे द्याव ृथिवी=शुक्षोक घाँगर पृथ्वी कोक स्थित है च=घोैर यस्=िनसको पुरुषाः=पुरुष भूतम्=भृत भवत्=बर्षमान च=घोैर

भविष्यत्=भविष्यत् श्राचश्चते=कहते हैं तत्=वह सव कस्मिन्=किसमें श्रोतम्=श्रोत च=श्रीर प्रोतम्=श्रोत है यानी किसमें प्रथित है धृति=इस प्रकार गार्गी का प्रश्न हुश्चा

भाषार्थ ।

याझवत्क्य महाराज की आझा पा करके गागीं बोली कि, है याझ-बल्क्य ! जो दिवलोक के ऊपर है, जो पृथ्वीकोक के नीचे है, और जो दिवलोक और पृथ्वीकोक के मध्य में है, और जिसको विद्वान् लोग भूत, वर्त्तमान, भविष्यत् नाम से कहते हैं, वह सब किसमें ओत प्रोत है यानी किसमें प्रथित है, इस प्रकार गागीं का प्रश्न हुआ। । ६ ॥

मन्त्रः ७

स होवाच यद्र्ध्वं गागि दिवो यदवाक् पृथिव्या यदन्तरा चावा-पृथिवी इमे यद्भूतं चभवच भविष्यचेत्याचक्षत आकाश एव तदोतं च प्रोतं चेति कस्मिन्नु खल्वाकाश आोतश्च प्रोतश्चेति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उत्राच, यत्, ऊर्ध्वम्, गार्गं, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिव्याः, यदन्तरा, द्यावापृथिवी, इमे, यत्, भूतम्, च, भनत्, च, भविष्यत्, च, इति, आचक्षते, आकाशे, एव, तत्, श्रोतम्, च, प्रोतम्, च, इति, कस्मिन्, नु, खक्कु, आकाशः, अोतः, च, प्रोतः, च, इति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः सः=वह याज्ञवहन्य उवाच=त्रोते कि ह⇒स्पष्ट गार्गि≔हे गार्गि !

यत्=जो दिवः=धुलोक के ऊर्ध्वम्=जपर है यत्=जो पृथिउयाः=पृथ्वीलोक के ध्रवाक्=नीचे है यदन्तरा=जिसके बीच में इमे=ये द्यादापृथिवी=चलोक श्रीर पृथ्वी-लोक स्थित हैं यत्=िजसको पुरुषाः=लोग भूतम्=भृत भवत्=वर्त्तमान च=धौर भविष्यत=भविष्यत् नाम से

श्राचश्रते=कहते हैं
तत्=वह सब
श्राकाशे=श्राकाश में
श्रोतम्=श्रोत
च=श्रीर
प्रोतं च=श्रोत हैं
हति=ऐसा सुन कर
नु=किर गार्गी ने प्रश्न
किया कि
श्राकाशः=श्राकाश
किस्मन्=किसमें
खलु=निश्चय करके
श्रोतः=श्रोत
च=धीर
प्रोतः च=श्रोत हैं
हति=हस प्रकार प्रश्न किया

भावार्थ ।

गार्गी का प्रश्न सुनकर याझवहन्य वोले कि हे गार्गि ! जो दिव-लोक के उत्पर है, और जो पृथ्वीलोक के नीचे हैं, श्रोर जो दिव-लोक श्रोर पृथ्वीलोक के मध्य में हैं, श्रोर जिसको विद्वानलोग भूत, वर्त्तमान, भविष्यत् नाम से कहते हैं, वह सब श्राकाश में श्रोत प्रोत हे श्रार्थात् श्राकाश के श्राश्रय है, ऐसा सुनकर गार्गी पुन: पूछती हैं कि, हे याझवल्कय ! वह श्राकाश किसमें श्रोत प्रोत है. इसका उत्तर श्राप सुकसे सविस्तार कहें ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

स होवाचैतद्दै तदक्षरं गार्गि ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनएव-हस्यमदीर्घमलोहितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाय्वनाकाशमसङ्गमरसम-गन्यमचञ्जष्कनश्रेत्रमयागमनोतेजस्कमशाणममुखममात्रमनन्तरम-बाह्यं न तदश्नाति किंचन न तदश्नाति कश्चन ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, एतत्, वै, तत्, श्रक्षग्म्, गार्गि. ब्राह्मगाः, श्रमि-बद्नित, श्रस्थूलम्, श्रनणु, श्रहस्वम्, श्रदीर्घम्, श्रलोहितम्, श्रस्नेहम्, श्राच्छायम्, अतमः, अवायुः, अनाकाशम्, असङ्गम्, अरसम्, अग-न्धम्, अचक्षुष्कम्, अश्रोत्रम्, अवाक्, अमनः, अतेजस्कम्, अप्रात्मम्, श्रमुखम्, श्रमात्रम्, श्रनन्तरम्, श्रवाद्यम्, न, तत्, श्ररनाति, किंचन, न, तत्, अश्नाति, कश्चन ॥

द्यस्वयः

पदार्थाः सः=वह याज्ञवल्क्य ह=स्पष्ट उवाच=कहते भये कि शार्गि=हे गार्गि ! तत्=वह एतत्=यह ग्रक्षरम्=ग्रविनाशी है श्रस्थूलम्=न वह स्थृल है श्चनगु=न वह सृक्ष्म है श्रहस्वम्=न वह छोटा है श्चद्रीर्घम्≃न वह बड़ा है श्रलोहितम्=न वह जाल है श्च**रनेहम्**=न वह संसारी जीव-वत् स्नेहवाबा है श्राच्छायम्=न उसका प्रतिविम्ब है श्रतमः=वह तमरहित है श्रवायुः=वायुराहित है श्रनाकाशम्=श्राकाशरहित है असङ्गम्=भसङ्ग है **अरसम्**=स्वादरहित है श्चगन्धम्=गन्धरहित हे श्रचश्रुष्कम्=नेत्ररहित है

पदार्थाः ग्रन्वयः श्रश्रोत्रम्=श्रोत्ररहित है श्रव:कु=वाणीरहित है श्रमनः=मनरहित है श्रतेजस्कम्=तेजरहित है अप्राणम्=प्राणरहित है श्रमुखम्=मुखरहित है श्रमात्रम्=परिमाणरहित है श्चनन्तरम्=श्रन्तररहित है श्चबाह्यम्≔वाह्यरहित है न=न तत्≕वह किंचन≔कुछ श्रश्नाति=खाता है च≃योर न≃न कश्चन=कोई पदार्थ तत्=उसको श्रश्नाति=खाता है गार्गि=हे गार्गि ! इति=इस प्रकार ब्राह्मणाः=ब्रह्मवेत्ता श्रमिवद्गित=कहते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्य बोले हे गार्गि ! जिसमें सब श्रोत प्रोत हैं वह श्रावि-नाशी है, वह न स्थूल है, न स्ट्रम हे, न छंटा है, न बड़ा है, न वह जाल है, न वह संसारी जीव की तरह पर स्नेहवाला है, वह श्रावरण् रहित है, तमरहित है, वायुरहित है, स्वाद्रहित है, गन्धरहित है, नेत्रर-हित है, श्रोत्ररहित है, वार्णीरहित है, सनरहित है, तजरहित है, प्राण्डित है, मुख्यरहित है, परिमाण्डित है, श्रन्तररहित है, बाह्यरहित है, न वह छुळ खाता है, न उसको कोई खाता है, हे गार्गि ! जिसमें श्राकाश भी श्रोत प्रोत है, उसको श्रह्मवेत्ता इस प्रकार कहते हैं ॥ ⊏ ॥

मन्त्रः ६

एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गागि सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठत एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गागि द्यावाषृथिव्यौ विधृते तिष्ठत एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गागि निमेषा मुहूर्ता अहोरात्राएयर्थ-मासा मासा ऋतवः संवत्सरा इति विधृतास्तिष्ठन्त्येतस्य वा अक्ष-रस्य प्रशासने गागि पाच्योऽन्या नद्यः स्यन्दन्ते श्वेतेभ्यः पर्वतेभ्यः प्रतीच्योऽन्या यां यां च दिश्यन्वेतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गागि ददतो मनुष्याः प्रशांश्वतन्ति यजमानं देवा दवीं पितरोऽन्वायत्ताः ॥

पदच्छेदः ।

एतस्य, वा, अक्ष्रस्य, प्रशासने, गार्गि, सूर्याचन्द्रमसो, विधृतो, तिष्ठतः, एतस्य, वा, अक्ष्रस्य, प्रशासने, गार्गि, दावापृथिव्यो, विधृते, तिष्ठतः, एतस्य, वा अक्ष्रस्य, प्रशासने, गार्गि, निमेषाः, म्रहूर्ताः, अहोरात्राग्ति, अर्थमासाः, मासाः, भृतवः, संवत्सराः, इति, विधृताः, तिष्ठन्ति, एतस्य, वा, अक्ष्रस्य, प्रशासने, गार्गि, प्राच्यः, अन्याः, नदः, स्यन्दन्ते, श्वेतेभ्यः, पर्वतेभ्यः, प्रतीच्यः, अन्याः, याम्, याम्, च, दिशम्, अनु, एतस्य, वा, अक्ष्रस्य, प्रशासने, गार्गि, दद्तः, मनुष्याः, प्रशंसन्ति, यभमानम्, देवाः, द्वीम्, पितरः, अन्वायत्ताः ॥

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

गार्गि≔हे गार्गि ! बा≕निश्चय करके एतस्य=इसी श्रक्षर∓य=श्रक्षर के प्रशासने=आज्ञा में सूर्याचन्द्रमसी=सूर्य श्रीर चन्द्र विधृतौ=नियमित होकर तिव्रतः=स्थित हैं वा=श्रीर वा=िश्चय करके एतस्य=इसी श्रक्षरस्य=ग्रक्षर के प्रशासने=श्राज्ञा में गार्गि=हे गार्गि ! द्याचापृथिव्यौ=स्वर्ग भौर पृथ्वी विधाते=नियमित होकर तिप्रतः=स्थित हैं **एतस्य=**इसी श्रक्षरस्य=श्रक्षर के प्रशासने=श्राज्ञा में गार्गि=हे गार्गि ! निमेषाः≕निमेष मुहूर्त्ताः=पुहुर्त्त श्रहोरात्राणि=दिन रात श्चर्धमासाः=श्चर्यमास ग्रातवः=ऋत् संवत्सरा:=संवत्सरादि विधृताः=नियमित हुये इति=इस प्रकार तिष्ठन्ति=स्थित हैं

गार्गि=हे गार्गि !

एतस्य=इसी श्वक्षरस्य=श्रक्षर के प्रशासने=श्राज्ञा सं नद्यः=कुछ नदियां श्वेतं भ्यः=श्वेत यानी बरफवाले पर्वतेभ्यः=पहाड़ों सं निकल कर प्राच्यः=पूर्व दिशा को स्यन्दन्ते=बहती हैं श्चन्याः=ऋछ नदियां प्रतोच्यः=पश्चिम दिशा को + स्यन्दरते=बहती हैं । याम्=जिम याम्=जिस दिशम्=दिशाको श्रनु=जाती हैं + ताम=उस + ताम्=उस दिशम=दिशा को **न**⇒नहीं व्यभिचरन्ति≕द्वोडती हैं गार्गि=हे गार्गे ! चै=निश्चय करके एतस्य≔इसी श्रक्षरस्य=श्रक्षर की प्रशासने=ब्राज्ञा में मनुष्याः=मन्ष्य ददतः=दान देनेवालों की प्रशंसिन्त=प्रशंसा करते हैं + च=धौर देवाः=देवता यजमानम्=यजमान के

श्चन्वायत्त्रः=अनुगामी होते हैं + च=त्रीर पितरः=पितरलोग दवींग्=दवींहोम के श्रम्बायत्ताः=श्राधीन होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्स्य कहते हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से सूर्य और चन्द्रमा नियमित होकर स्थित हैं, इसी अक्षर की आज्ञा से धुक्तीक और पृथ्वीकोक नियमित होकर स्थित हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से निमेप, मुहुर्च, दिन, रात, मास, अर्थमास, ऋतु, संवत्सरादिक नियमित होकर स्थित हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से कोई कोई निदयां वरफवाले पहाड़ से निकल कर पूर्व को बहती हैं, और कोई कोई निदयां पश्चिम को भी वहतो हैं इसी अक्षर की आज्ञा को पा करके जिस जिस दिशा को जो जो निदयां बहती हैं इस उस दिशा को वह नहीं छोड़ती हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से मतुष्य-गण्ण दानी को प्रशंसा करते हैं, देवता यज्ञमान के अनुगामी होते हैं, और जित्राचीण दिये हुये दवीं पिएड को प्रहग्ण करते हैं, इस अक्षर की महिमा अपार है ॥ ६॥

मन्त्रः १०

यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्मिल्लोके जुहोति यजते तपस्त-प्यते वहूनि वर्षसहस्राण्यन्तवदेवास्य तद्भवति यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्माल्लोकात्प्रैति सक्रुपणोऽथय एतदक्षरं गार्गि विदि-त्वास्माल्लोकात्प्रैति स ब्राह्मणः ॥

पदच्छेदः ।

यः, वा, एतत्, श्राख्रस्म्, गार्गि, श्राविदित्वा, श्रास्मन्, लोके, जुद्गेति, यज्ञते, तपः, तप्यतं, बहूनि, वर्षसहस्राणि, श्रान्तदत्, एव, श्रास्य, तत्, भवति, यः, वा, एतत्, श्राक्षस्म, गार्गि, श्राविदित्वा, श्रास्मात्, जोकात्, प्रेति, सः, कृपणः, श्राथ, यः, एतत्, श्राक्षस्म, गार्गि, विदित्वा, श्रामात्, लोकात्, प्रेति, सः, हाह्मणः ॥

पदार्थाः श्राम्सराः सार्शि≔हे गार्गि ! यः≕जो चै=निश्चय करके एतम्=इस श्रक्षरम्=श्रक्षर को श्राविदित्वा=न जान कर अस्मिम्≕इस लोके=लोक में ज्ञहोति=होम या यज्ञ करता है यजते=एजा करता है बहु नि=प्रनेक वर्षसहस्राणि=सहस्रों वर्ष तक तपः तप्यतं=तप करता है श्चास्य=उसका तत्⊐वह सब कर्म श्चन्तवत्=नाश एव≕भवश्य भवति=होता है गार्गि=हे गार्गि !

यः=जो

श्चराः

पदार्थाः

दतत्≔इस ब्रक्षरम्≔बक्षर को श्रविदित्वा=न जान कर अस्मात्=इस लोकात्=लोक से धेति=मर कर जाता है सः≔वह कृपणः=कृपण होता है श्रथ=भौर यः=जो गार्गि=हे गार्गि ! पतत्=इस श्रक्षरम्≖श्रक्षर को विदित्वा=जान कर श्रस्मात्ञइस लोकात्=लोक से मैति=जाता है सः≔वह ब्राह्मग्रः=ब्राह्मग्र + भवति=होता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज फिर कहते हैं, हे गार्गि ! सुनो जो पुरुष इस अक्षर को न जानकर इस लोक में होम या यज्ञादि करता है या पूजा करता है या सहस्रों वर्ष तक तप करता है उसका वह सब कर्म निष्फल होता है, अपेर हे गार्गि ! जो पुरुष इस अक्षर को न जानकर इस लोक से मर कर चला जाता है वह जब फिर संसार में उत्पन्न होता है, तो बड़ा कुपगा दिरद्र होता है, पर हे गार्गि ! जो इस अक्षर को जानकर इस लोक से प्रयाग करता है वह ब्राह्मगा होता है यानी ब्रह्म के तुस्य होजाता है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

तदा एतदक्षरं गार्ग्यदृष्टं द्रष्ट्रश्रुत् अनेत्रमतं मन्त्रविज्ञातं विज्ञातः नान्यद्तोस्ति द्रष्टु नान्यद्तोस्ति श्रोतृ नान्यद्तोस्ति मन्तृ नान्यद-तोस्ति विज्ञात्रेतस्मिन्नु खल्वक्षरे गार्ग्याकाश त्रोतश्च प्रोतश्चेति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, वा, एतत्, श्रक्षरम्, गार्गि, श्रदृष्टम्, द्रष्ट्र, श्रश्रुतम्, श्रोतृ, अमतम्, मन्तृ, अविज्ञातम्, विज्ञातृ, न, अन्यत्, अतः, अस्ति, द्रष्टृ, न, अन्यत्, अतः, अस्ति, श्रोतृ, न, अन्यत्, श्रतः, अस्ति, मन्तृ,न, श्रान्यत्, श्रातः, श्रास्ति, विज्ञातृ, एतस्मिन, नु, खल्लु, श्राक्षरे, गार्गि, श्राकाशः, श्रोतः, च, प्रोतः, च, इति ॥

श्चन्यः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

गार्गि=हे गार्गि ! तत् वै=वही एतत्=यह श्रक्षरम्=श्रक्षर श्रद्रष्टम्=श्रद्ष्य होते हुये द्रष्ट्=द्रष्टा है श्रश्रुतम्=ग्रश्रुत होते हुये भी श्रोतृ=श्रोता है

श्रमतम्= { मनन इन्द्रिय का श्रमतम्= { श्रविषय होते (हुये भी

मन्तृ=मनन करनेवाला है श्रविज्ञातम्=श्रविज्ञात होते हुये भी विज्ञातृ=जाननेवाला है श्रतः=इससे पृथक् श्चन्यत्=श्रौर कोई दृसरा

द्रष्टृ=देखनेवाला न=नहीं श्रस्ति=है श्चतः=इससे प्रथक् श्रन्यत्=दूसरा कोई विज्ञातृ=नाननेवाला न=नहीं श्रस्ति≕है पतस्मिन्=इसी श्रक्षरे=श्रक्षर में नु खलु≕निश्चय करके गार्गि=हे गार्गि ! त्राकाशः≔श्राकाश

श्चांतः≕श्रोत च=धौर

प्रोतः च=श्रोत है भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज फिर बोले, हे गार्गि ! वही यह आक्षर आदृष्ट

होते हुये भी द्रष्टा है, अपर्धात् इस अप्रक्षर को किसी ने नेत्र से नहीं देखा है, क्योंकि वह दृष्टि का अविषय है, परंतु वह स्वयं सब का द्रष्टा है, यानी देखनेवाला है, यही श्रक्षर अश्रत होता हुआ भी श्रोता है, यानी वह किसी के श्रोत्र इन्द्रिय का विषय नहीं है, पर्न्तु सबका सुननेवाला है, वही अक्षर परमात्मा मनन इन्द्रिय का अविषय होते हये भी सब का मनन करनेवाला है, हे गार्गि ! वही झन्त-र्यामी आत्मा सब को अविज्ञात होते हुये भी सब का विज्ञाता है. हे गार्गि ! इससे पृथक कोई दूसरा मनन करनेवाला नहीं है, हे गार्गि ! इससे पृथक् कोई दूसरा जाननेवाला नहीं है, हे गार्गि ! निश्चय करके इस अविनाशी परमारमा में आकाश ओत प्रोत है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

मन्येध्वं यदस्मात्रमस्कारेण मुच्येध्वं न वै जातु युष्माकमिमं कश्चिदब्रह्मोद्यं जेतेति ततो ह वाचक्रव्युपरराम ॥ इत्यष्टमं ब्राह्मणम् ॥ = ॥

पदच्छेदः ।

मन्येध्वम्, यत्, श्रास्मात्, नमस्कारेगा, मुच्येध्वम्, न, वै, जात. युष्माकम्, इमम्, कश्चित्, ब्रह्मोद्यम्, जेता, इति, ततः, ह, वाचक्रवी. उपरराम ॥

अन्वयः

पदार्थाः + सा=वह गार्गी

+ ह=स्पष्ट

+ उचाच=बोली कि

+ भगवन्तः } =हे भेरे पूज्य ब्राह्मणो !

+ तत् एव=यही

+ बहु=बहुत मन्येध्वम=मानने के योग्य हैं यानी कुशल समक्ता

चाहिये

पदार्थाः श्रह्ययः

यत्र≕जो द्यस्मात्≔इस याज्ञवल्क्य से नमस्कारेगा=नमस्कार करके मुच्येध्यम्=श्रापलोग छुटकारा पाजावें वै≕निस्सन्देह युष्माकम्=श्रापनोगों में से कश्चित्=कोई भी

इमम्=इस

ब्रह्मोद्यम्≔ब्रह्मवादी याज्ञवस्यव

बातु=कभी च=नहीं जेता=जीत सकेगा इति=इसप्रकार +उक्त्या=कहकर ततः=िकर वाचक्कर्वा=गार्गी उपरराम=उपराम होती मई

भावार्थ ।

याज्ञवहत्त्य महाराज के उत्तरको सुनकर, सबकी तरफ सम्बोधन करके गार्गी बोकी कि, हे मेरे पूज्यब्राह्मणो ! यदि आपकोर्गो का छुटकारा याज्ञवहत्त्वय महाराज से नमस्कार करके होजावे तो छुराज समिमिन, हे ब्राह्मणो ! आपकोर्गो में से कोई ऐसा नहीं है जो याज्ञ-वहत्त्वय महाराज को जीतसके इसप्रकार कह करके और उपराम होकर वह गार्गी बैटगई।। १२।।

इत्यष्टमं ब्राह्मग्रम् ॥ = ॥

श्रथ नवमं ब्राह्मणुम्।

मन्त्रः १

श्रय हैंनं विदग्धः शाकल्यः पपच्छ कित देवा याइवल्ययेति स हैतयेव निविदा प्रतिपेदे यावन्तो वैश्वदेवस्य निविद्युच्यन्ते त्रयश्च त्री च शता त्रयश्च त्री च सहस्नेत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेति त्रयस्त्रिश्रशिदत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेति पिहत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेति होनच कत्येव देवा याइवल्ययेति होनच कत्येव देवा याइवल्ययेति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेत्यध्यर्ष इत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेत्यध्यर्ष इत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्ययेत्यक इत्योमिति होवाच कत्येत त्रयश्च त्री च शता त्रयश्च त्री च सहस्नेति ॥ पदच्छेदः।

इध्य, ह, एनम्, विदग्धः, शाकल्यः, पप्रच्छः, कति, देवाः, याझ-वहन्य, इति, सः, ह, एतया, एव, निविदा, प्रतिपेदे, यावन्तः, बैश्व-देवस्य, निविदि, उच्यन्ते, त्रयः, च, त्री, च, शता, त्रयः, च, त्री, च, सहस्र, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, त्रयस्त्रिशत्, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, षट्, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, त्रयः, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, द्वौ, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, श्रध्यर्द्धः, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, श्रध्यर्द्धः, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, किते, एव, देवाः, याझवत्क्य, इति, एकः, इति, श्रोम्, इति, ह, उवाच, कतमे, ते, त्रयः, च, त्री, च, शता, त्रयः, च, त्री, च, सहस्र, इति ॥

पदार्थाः । श्चान्वयः अथ ह=इस के उपरान्त शाकल्यः=शकलका पत्र विद्रम्धः=विद्रम्ध एनम्=उसी याज्ञवल्क्य से इति=इसप्रकार पप्रच्छ=पृष्ठता भगा कि याज्ञयल्बन्य≔हे याज्ञवल्बय ! कति=कितने देवाः=देव हैं इति=यह मेरा प्रश्न है सः=उस याजवल्क्य ने ह=स्पष्ट एतया निविदा=इस मंत्रसमूह के विभागद्वारा प्रतिपेदे=उत्तर दिया कि यावन्तः=जितने वैश्वदेवस्य=विश्वेदेवों के निविदि=मन्त्रों में + सन्ति=विखे हैं तावन्तः=उतने डी उच्यन्ते≔कहे जाते हैं

t

द्यन्वयः पदार्थाः + चा≕धौर इमाः=ये त्रयः=तीन च=श्रीर श्री=तीन च=धौर त्रयः=तीन शता=सौ च=ग्रीर श्री=तीन सहस्र=हजार हैं इति=पेसा + श्रुत्वा=सुनकर + शाकल्यः } = शाकस्य विदग्धने स्राह् } = कहा स्रोम्=हां ठीक है + पुनः≕किर + सः=शाकल्य विदग्ध ने + पप्रच्छ=पूछा कि याज्ञसल्क्य=हे याज्ञबल्क्य !

+ आह=डत्तर दिया त्रयास्त्रिशत्=तेतीस हैं इति=ऐसा + शुत्वा=सुनकर शाकल्यः=शाकल्य ने श्राह=कहा श्रोम्=हां ठीक है पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य विदग्ध ने उवाच=कहा कि याञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य ! कति एव=उनके अन्तर्गत कितने देवाः=देवता हैं इति=इसपर + याश्रवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने + श्राह=उत्तर दिया षट=दः हैं इति=ऐसा सुनकर शाकल्यः=शाकस्य ने श्राह=कहा झोम्=हां ठीक है पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य ने उवाच=पृद्धा + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कति एव=कितने उनके बन्तर्गत + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

कति एव=इनके बन्तर्गत

देवाः=देव हैं

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्स्य ने

इति=इसपर

कितने

देवाः=देवता हैं इति=ऐसा सन कर याञ्चयत्क्यः ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट उवाच=कहा त्रयः=तीन देवता हैं इति=इस पर शाकल्यः=शाकस्य ने + आह=कहा श्रोम्=हां ठीक है + शाकल्यः=शाकल्य ने उव।च=पृद्धा याञ्चयत्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! कति पव=िकतने उसके श्चन्तर्गत देवाः=देवता हैं इति=ऐसा सुन कर याञ्चवत्क्यः=याज्ञवक्क्य ने ह≕स्पष्ट उवाच=कहा द्धौ=दो हैं इति=ऐसा सुन कर + शाकल्यः=शाकल्य ने + आह=कहा श्रोम्=हां ठीक है + पुनः≕फिर + शाकल्यः=शाकस्य ने उवाच=पूड़ा + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कति एव=उसके अन्तर्गत कितने + देवाः=देवता हैं

+ ब्राह=कहा श्राध्यद्धी:=श्रध्यर्ख है शाकल्यः=शाकल्य विवस्थ ने उवाच=कहा श्रोम्=हां ठीक है इति=ऐसा सुनकर + पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य ने उवाच=पद्धा याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + कतिपच≕उस के श्रन्तर्गत कितने देवाः=देवता हैं + याञ्चतत्क्यः=याञ्चवल्क्य ने उच(च=उत्तर दिया एकः=एक है इति=इसपर + शाकल्यः=शाकल्य ने + पुनः≕फिर

+ पप्रच्छ=पृद्धा याञ्चयस्यः=याज्ञवह उवाच=कहा ਜੇ≕ਰੇ त्रयः=तीन च=श्रीर श्री≔तीन च=श्रौर त्री=तीन शता=सौ च=धौर त्रयः=तीन सहस्र=हजार है + शाकल्यः=शाकल्य ने + पुनः≕फिर + प्रवच्छ=पद्या

कतमे एव= { उसके अम्तर्गत

भावार्थ ।

तिसके पीछे शाकल्यऋषि के पुत्र विदग्ध ने कहा है याज्ञवत्कय ! मैं तुम से पूछता हूं, आप बताइये कि कितने देवता हैं, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदग्ध! जितने विश्वेदेवसम्बन्धी मन्त्रों में देवता जिस्ते हैं, उतने ही हैं, और उनकी संख्या तीन और तीनसी और तीन और तीन हजार है. इस उत्तर को सुनकर विदग्ध ने कहा हां ठीक है, जितनी देवसंख्या आप कहते हैं उतनीही है. फिर शाकल्य ने पूछा हे याज्ञवल्क्य! उनके आन्तर्गत कितने देवता हैं, ऐसा सुन

कर याज्ञवल्क्य ने कहा, हे विदग्ध ! उनके अन्तर्गत तेतीस देवता है, ऐसा सुनकर शाकल्य विदग्ध ने कहा हां ठीक है, फिर शाकल्य विदग्ध ने पूछा हे याज्ञवल्क्य ! उन तेंतीसों के अन्तर्गत कितने देवता हैं, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा है विद्राध ! छः देवता हैं, इसको सुनकर शाकल्यने कहा हां ठीक है, फिर शाकल्य ने पूछा है याज्ञ-बल्क्य ! उनके श्चन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने कहा तीन हैं फिर शाकल्यने पुद्धा उन तीन के अपन्तर्गत कितने देवता है, याझबब्दय ने कहा दो हैं, फिर शाकल्यने पूछा हे याज्ञवल्क्य ! उन दो के अन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने कहा, हे विद्य्य ! उस दो के अपन्तर्गत श्राध्यर्द्ध देवता है यानी वह सुक्ष्म वायुरूप सत्ता है जिसके रहने पर सब स्थावर जंगम पदार्थ परमवृद्धि को प्राप्त होते रहते हैं, श्लीर यही कारण है कि उस वायुदेव को अध्यर्द्ध कहते हैं, शाकल्यने कहा हां ठीक है, तदनन्तर विदाय ने पद्घा हे याज्ञवल्क्य ! उसके ब्रान्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया एक है, शाकल्य ने फिर पूछा कि उसके श्चन्तर्गत कितने देवता हैं. याज्ञवल्क्य ने कहा वे तीन धौर तीनसौ श्रौर तीन हजार हैं, फिर विदग्ध पूछता है, हे याज्ञवल्क्य ! वे तीन भौर तीनसौ श्रौर तीन श्रौर तीनसहस्र कौन देवता हैं।। १।।

मन्त्रः २

स होवाच महिमान एवैपामेते त्रयिक्षिष्ठशास्त्रेव देवा इति कतमे ते त्रयिक्षिष्ठशदित्यष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्यास्त एक-त्रिष्ठशदिन्द्रश्रेव प्रजापतिश्र त्रयिक्षिष्ठशाविति ॥

पद च्छेदः ।

सः, ह, डवाच, महिमानः, एव, एषाम्, एते, त्रयिक्षशत्, तु, एव, देवाः, इति, कतमे, ते, त्रयिक्षशत्. इति, ऋष्टी, वसवः, एकादश, रुद्राः, द्वादश, क्यादित्याः, ते, एकत्रिंशत्, इन्द्रः, च, एव, प्रजापतिः, च, त्रयस्त्रिशौ, इति ॥

भ्रन्वयः

पद्यार्थाः

पदार्थाः

सः=वह याज्ञवरक्य
ह=स्पष्ट
उवाच=बोजे कि
एषाम्=इनमें से
एव=निश्चय करके
प्रते=वे
त्रयस्त्रिशत्=तेतीस देवता
महिमानः=महिमा के योग्य हैं
+ पृच्छति=एका कि
ते=वे
कतमे=कोनसे
त्रयास्त्रिशत्=तेतीस
देवाः एष=देवता हैं

इति=इस पर

+याध्ववस्वयः=याज्ञवस्वयं ने

श्रन्वयः पद्
+ श्राह्=उत्तर दिया
श्रष्टौ=श्राठ
वसवः=वसु
पकादश=स्वारह
रुद्राः=रुद्र
द्वादश=वारह
श्रादित्याः=सूर्य
द्वि=इस प्रकार
पक्षिशस्==एक तीस दुवे
च=श्रीर
इन्द्रः=इन्द

प्रजापतिः=प्रजापति

इति=लेकर

त्रयास्त्रशौ=तेतीस हुये

भावार्थ।

तव याज्ञद्दस्य बोक्ष कि, हे विद्रम्थं ! इन में से निश्चय करके केवल तेतीस देवता महिमा के योग्य हैं, विद्रम्थ ने फिर याज्ञव्दस्य से पृद्धा कि वे कौन तेतीस देवता हैं, यह सुन कर याज्ञवद्स्य ने उत्तर दिया, हे विद्रम्थं ! आठ वसु, ग्यारह रुद्ध, बारह सूर्य मिलाकर एकतीस हुये, बत्तीसवां इन्द्र है, तेतीसवां प्रजापति है।। २।।

मन्त्रः ३

कतमे वसव इत्यग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं चादित्यश्च द्यौश्च चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चैते वसव पतेषु हीद् छ सर्वे छ हित-मिति तस्माद्वसव इति ॥ कतमे, वसवः, इति, श्राग्निः, च, पृथिवी, च, वायुः, च, श्रान्तरिक्षम्, च, श्रादित्यः, च, चौः, च, चन्द्रमाः, च, नक्षत्राणि, च, एते, वसवः, एतेषु, हि, इदम्, सर्वम्, हितम्, इति, तस्मात्, वसवः, इति ॥ श्रान्वयः पदार्थाः | श्रान्वयः पदार्थाः

श्चन्ययः प् + विद्रभ्धः=विद्रभ्य + पृच्छिति=पृछ्ता है कि ते=वे कतमे=कौन से चसवः=आठ वसु हैं + याझवरुक्यः=याज्ञवरुक्य + विक्क=कहते हैं कि श्चग्निः=ग्रग्नि पृथिवी=पृथ्वी चागुः=वागु श्चन्तरिक्षम् च=श्चाकाश श्चादित्यः च=स्प्रै चौः च=स्वर्ग चन्द्रमाः=चन्द्रमा

> इति=ऐसा कथ्यन्ते⇒कहे जाते हैं

भावार्थ ।

विद्ग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वे आठ वसु कौन कौन हैं, याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विद्ग्ध ! सुनो आगिन, पृथिवी, वायु, आकाश, सूर्य, स्वर्ग, चन्द्रमा, नक्षत्र यही आठ वसु हैं, इन्हीं आठ वसुओं में दश्यमान सव जगत् स्थित है, इस लिये वसु इस कारण कहलाते हैं कि वे आपने ऊपर जीवमात्र को बसाये हुये हैं ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

कतमे रुद्रा इति दशेमे पुरुषे प्राणा त्रात्मैकादशस्ते यदास्माच्छ-रीरान्मर्त्यादुत्कामन्त्यथ रोदयन्ति तद्यद्रोदयन्ति तस्माद्धद्रा इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, रुद्राः, इति, दश, इमे, पुरुषे, प्राखाः, आस्ता, एकादशः, ते, यदा, अस्मात्, शरीरात्, मत्यात्, उत्कामन्ति, अथ, रोदयन्ति, तत्, यत्, रोदयन्ति, तस्मात्, रुद्राः, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः |

श्रन्वयः

पदार्थाः

न्वयः प्रशासन्वयः + विदग्धः=विदग्धः + पृञ्क्षति=फिर पृष्ठता है याज्ञबल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + ते=वे ग्यारह कतमे=कीन से रुद्राः=रुद्र हैं द्वति=इस पर

इति=इस पर + याञ्चवरूयः=याज्ञवरूवय + गदति=कहते हैं कि पुरुषे=पुरुष के विषे इमे=ये दश=दश माणाः=पांच कमॅन्द्रिय चीर पांच ज्ञानेन्द्रिय

> च=ग्रीर एकादशः=ग्यारहवां श्रात्मा=मन

+ एते=येही मावार्थ।

रुद्राः=ग्यारह रुद्र हैं यदा=जब ते=वे रुड श्रस्मात्=इस मर्त्यात्=मरणधर्मवाले शरीरात्=शरीर से उत्फ्रामस्ति=निकखते हैं श्राश=तब रोद्यन्ति=मरने वाले के सम्ब-निधयों को रुखाते हैं यत्≕चृंकि तत्=मरण समय में + ते=वे रोदयन्ति=रुवाते हैं तस्मात्=इस लिये रुद्धाः=वे रुद्ध

इति=करके

कथ्यन्ते=कहे जाते हैं

विदम्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वे ग्यारह रुद्र कौन कौन हैं, इनके नाम झाप बतावें. याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे विदम्ध ! जो पुरुप के विषय पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय, एक मन है येही ग्यारह रुद्र हैं. जब वह रुद्र इस मरग्ग्यभमंबाले शरीर से निकलते हैं तब मरने बाले के सम्बन्धियों को रुलाते हैं चूंकि मरग्ग्समय में वे रुलाते हैं इस कारग्ण वे रुद्र कहे जाते हैं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

कतम त्र्रादित्या इति द्वादश वै मासाः संवत्सरस्येत त्र्रादित्या एते हीद् अर्वमाददाना यन्ति ते षदिद् अर्थमाददाना यन्ति तस्मादादित्या इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, आदित्याः, इति, द्वादश, वै, मासाः, संवत्सगस्य, एते, आदित्याः, एते, हि, इदम्, सर्वम्, आददानाः, यन्ति, ते, यत्, इदम्, सर्वम्, आददानाः, यन्ति, तस्मात्, आदित्याः, इति ॥

श्चान्ययः + विदग्धः=विदग्ध पुनः=फिर + ऋाह≕पृछता है कि याञ्चयन्त्रय=हे याज्ञवल्क्य ! कतमे=वे कौन से श्चादित्याः=बारह सर्व हैं + याञ्चयलक्यः=याज्ञवल्क्य ने + उचाच=कहा कि संवत्सरस्य=वर्ष के द्वादश=बारह मासाः=मास वै=ही पते=ये + द्वादश=बारह श्रादित्याः=सूर्व हैं

पटार्थाः । श्रन्वयः पदार्थाः पते हि=येही इव्म्=इस सर्वम्=सब को श्चाददानाः=लिये <u>ह</u>ये यान्त=गमन करते हैं यत्=जब कि श्रादित्याः≔वे सूर्य इदम् सर्वम्=इस सब को श्राददानाः=प्रहण करते हुये यन्ति=चलं जाते हैं तस्मात्=इसी से **ऋा**दित्याः=श्रादित्य इति=करके + कथ्यन्ते=वे कहे जाते हैं

भावार्थ ।

विदम्य फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! आप कपा करके बताइये वे बाग्ह सूर्य कौन कौन हैं इस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदम्ध ! संवस्सर के यानी वर्ष के जो बारह मास होते हैं, वेही बारह सूर्य हैं, बेही इस संपूर्ण जगत को लिये हुए गमन करते हैं, चूंकि वे सूर्य इस सब को प्रहर्ण किये हुये चलते हैं, इसी कारण वे आदित्य कहे जाते हैं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

कतम इन्द्रः कतमः प्रजापतिरिति स्तनयित्तुरेवेन्द्रो यज्ञः प्रजाप-तिरिति कतमःस्तनयित्तुरित्यशनिरिति कतमो यज्ञ इति पशव इति॥ पदच्छेदः।

कतमः, इन्द्रः, कतमः, प्रजापितः, इति, स्तनियत्तुः, एव, इन्द्रः, यज्ञः, प्रजापितः, इति, कतमः, स्तनियतुः, इति, श्रशिनः, इति, कतमः, यज्ञः, इति, पशवः, इति ॥

पदार्थाः श्चन्वयः + विदग्धः=विदग्ध + पुनः≕फिर + श्राह≕पृछता है कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! इन्द्रः=इन्द् कतमः≔कौन है प्रजापति:=प्रजापति कतमः=कौन है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवस्क्य + आह=बोले कि स्तनयित्नुः≕स्तनथित्नु एव=ही इन्द्रः=इन्द्र है + च=श्रीर

यञ्चः=यज्ञ

प्रजापतिः=प्रजापति है

पदार्थाः श्रन्वयः इति≕ऐसा + शुत्वा=सुन कर + विदग्धः=विदग्ध पुनः=फिर पुरुळ्ति=पृष्ठता है कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कतमः=कौन स्तनयित्नः=स्तनयित्न है इति≕ऐसा प्रश्न + श्रुत्वा=सुन कर + याश्वयत्वयः=याज्ञवस्क्य + आह=बोने कि श्रशनिः=विजती स्तनयित्नुः=स्तनयित्नु है इति=ऐसा उत्तर पाने पर + पुनः≕िकर शाकल्यः=विदग्ध उवाच=बोले

यझः≔यज्ञ कतमः≔कोन है इति≔इस पर

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

उवाच=कहा

पश्चः≔पशु

यज्ञः=यज्ञ हैं

भावार्थ ।

विदाय फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! इन्द्र कीन है, प्रजापित कीन है, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं, हे विद्रम्थ ! मेघ इन्द्र हैं, झोर यज्ञ प्रजापित है, ऐसा सुनकर विद्रम्थ फिर पूछते हैं, हे याज्ञ-वल्क्य ! मेघ कीन हैं, याज्ञवल्क्य इस के उत्तर में कहते हैं विद्युत् मेघ है, ऐसा उत्तर पानेपर फिर विद्रम्थ पूछते हैं कि यज्ञ कीन हैं, इस पर याज्ञवल्क्य बोलते हैं पशु यज्ञ हैं ॥ है ॥

मन्त्रः ७

कतमे पडित्यग्निश्च पृथियी च वायुथान्तरिक्षं चादित्यश्च यौँश्वेते पडेते हीद्छ सर्वेछ पडिति ॥

पद्च्छेदः ।

कतमे, पट्, इति, अधिनः, च, पृथिवी, च, वायुः, च, अधन्तरि-क्षम्, च, आदित्यः, च, द्योः, च, एते, पट्, एते, हि, इदम्, सर्थम्, पट्, इति ॥

षट्, इति ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः श्चन्यः अन्तरिक्षम् च=धाकाश + शाकल्यः=शाकल्य विदग्धने श्चादित्यः च=सूर्य + पप्रच्छ=पृद्धा कि द्योः च=स्वर्ग ते कतम=वे कीन चट्ट=छः देवता हैं एत=यही षट=छः देवता हैं इति=इस पर एत=इन्हीं + याज्ञवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने षट्र=छः देवतास्रों के + उवाच=उत्तर दिया श्रधीन श्चारिनः च=श्राग्न इदम्=यह पृथिवी च=पृथ्वी सर्वमू=सब हैं वायुः च=वाय

भावार्थ ।

शाकल्य विदग्ध याज्ञवल्क्य से पूळते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जो श्चापने छ: देवता गिनाये हैं वे कौन कौन हैं, याज्ञवल्क्य कहते हैं कि, हे विदग्ध ! अपिन, पृथिवी, वायु, आकाश, सूर्य, स्वर्ग ये ही छ: देवता हैं, इन्हीं के आधीन यह सब जगत् हैं ॥ ७ ॥

मन्त्रः द

कतमे ते त्रयो देवा इतीम एव त्रयो लोका एपु हीमे सर्वे देवा इति कतमी तौ द्वौ देवावित्यन्नं चैव प्राणश्चेति कतमोऽध्यर्द्ध इति योऽयं पवत इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, ते, त्रयः, देवाः, इति, इमं, एव, त्रयः, कोकाः, एपु, हि, इमे, सर्वे, देवाः, इति, कतमो, तो, द्वो, देवो, इति, श्रन्नम्, च, एव, प्राग्यः, च, इति, कतमः, श्रम्यर्द्धः, इति, यः, श्रयम्, पवते, इति ॥ श्रन्वयः पदार्थाः | श्रन्वयः पदार्थाः

श्चन्ययः पद्राः
ते=वे
 त्रयः=तीन
 देवाः=देवता
 कतमे=कीन हैं
 द्वित=ऐसा प्रश्न
 + श्रुत्वा=सुन कर
+ याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने
 + ज्ञाह=कहा कि
 + ते=वे
 द्वे=ही
 त्रयः=तीनी
 सोकाः=लोक हैं
 द्वि=क्योंकि
 प्ष्य=हनमें ही

इमे=थे
सर्वे=सव
देवाः=देवता
इति=स्रन्तर्गत हैं
+ पुनः=फिर
शाकस्यः=विदग्ध
+ पप्रच्छ=पृङ्गे हैं कि
ती=वे
द्वी=देवता
कतमा=कीन हैं
इति=इस पर
+ याइच्छक्यः=चाज्रवक्य ने
श्वाह=डसर दिया
+ ती=वे दोनों देवता

एव=निरचय करके
अन्नम्=भन्न
च=भौर
प्राणः=प्राण हैं
इति=इस उत्तर पर
+ पुनः=फिर
पप्रच्छ हि=प्डते हैं कि
धाञ्चवस्य=हे याज्ञवस्स्य !
अध्यर्दः=अध्यर्द्द
कतमः=कौन देवता है

इति=इसको + श्रुत्वा=सुन कर + याञ्चवस्प्रयः=याज्ञवस्प्य ने + श्राह=कहा यः=जो श्रयम्=यह वायु इति=ऐसा पचेते=चलता है सः=वही यह स्रध्यर्ख है

भावार्थ ।

विदग्ध पुछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! आपने पहिले कहा था कि सीन देवता हैं, स्प्राप क्या करके बताइये कि वे तीन देवता कीन कीन हैं, इस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदम्ध ! वे तीन देवता यही तीनों स्रोक हैं. क्योंकि वे सब देवता इन्हीं तीनों स्रोकों में रहते हैं. मतस्रब इसका यह है कि एक लोक पृथिवी है, उसमें श्राग्न देवता रहता है. दसरा लोक अन्तरिक्ष है, उसमें वायुद्वता रहता है, तीसरा लोक द्युलोक है, उसमें आदित्य देवता रहता है, यानी इन्हीं तीनों देवताओं में सबका अन्तर्भाव होता है, पहिले आठ देवताओं को हा: देवताओं में अन्तर्भाव किया, फिर उन छहों को तीन में अन्तर्भाव किया, फिर विदम्ब पुछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वे दोनों देवता कीन कीन हैं, जिस को आप पहिले कह आये हैं, याजवहन्य कहते हैं उन दोनों में से एक देवता प्रागा है, दसरा अन्न है, यहां पर प्रागा शब्द से नित्य पटार्थ का प्रहणा है, आरे अन से अनित्य पटार्थ का महणा है, अधवा पहिला कारगरूप है, दूसरा कार्यरूप है, इन्हीं दोनों में सब श्रोत-प्रोत हैं, इसके पश्चात् विदुग्ध पूछते हैं हे याज्ञवह्नय ! श्रध्यर्द्ध कीन है. याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं जो बहता है वह अध्यर्द्ध है, हे विदग्ध ! वायुको अध्यर्छ कहते हैं।। 🗆 ।।

सन्त्रः ६

तदाहुर्यदयमेक इवैव पवतेऽथ कथमध्येर्द्ध इति यदस्मिन्निद्ध सर्वमध्याध्नोंत्तेनाध्यर्द्ध इति कतम एको देव इति प्राण इति स ब्रह्म त्यंदित्याचक्षते ॥

पदच्छेदः ।

तत्, आहुः, यत्, अयम्, एकः, इव, एव, पवते, अथ, कथम्, ब्राध्यर्द्धः, इति, यत्, ब्रस्मिन्, इट्म्, सर्वम्, श्राधि, श्राध्नोत्, तेन, श्चाध्यर्द्ध:, इति, कतमः, एकः, देवः, इति, प्राग्गः, इति, सः, ब्रह्म,स्यत्, इति, आचक्षते ॥

म्रान्वयः

पदार्थाः तत्=तिस विषय में श्राहुः≕विद्वान् कहते हैं कि यत्=जब अयम्=यह वायु एक:=एक होता हुआ uव=निश्चय करके पवते=बहता है श्राथ=तो प्रश्न है कि सः=वह श्चध्यर्द्धः=श्रध्यर्द्ध है इच≓ऐसा कथम्=क्यों श्राहुः=कहते हैं इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवस्वय ने आह=कहा कि यत्=जिस कारण

श्चान्वयः

पदार्थाः **ग्रस्मिन्=इ**स वायु में ही इद्म्=यइ दृश्यमान सर्वम्=सब जगत् श्चाध्याध्नोत्=श्रधिक वृद्धि को प्राप्त होता है तेन=तिस कारण +सः=वह श्राध्यक्ती:=श्रध्यक् इति=नाम करके + कथ्यते≔कहा जाता है

+ विद्ग्धः=विदग्ध ने + ऋाह=पृद्धा कि + सः=वह एकः≕एक

+ पुनः≕िफर

देवः=देव कतमः=कौन है

१ अध्याप्नोंति=प्रधि+ऋढि, अधि=अधिक, ऋढि=बृद्धि, जो अधिक बृद्धि की करे, वह अध्यर्द्ध कहलाता है २ त्यत् और तत् ये दोनों शब्द एकही अर्थ के बोधक हैं।

इति=इस पर याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने आह=कहा

स्यत्=वह ब्रह्म=ब्रह्म इति=ऐसा क्यान्नध्ये=लोग

सः=वह प्राग्ः=प्राग् करके विरूयात है

आचक्षते=लोग कहते हैं

नः=सोई प्रार्थ

भावार्थ ।

तिस विषय में विदाय कहते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! जब यह वायु एक होता हुआ बहता है तब उसको लोग अध्यर्द्ध क्यों कहते हैं. इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदाध ! जिस कारण इस वायु में ही यह सब टर्ड्यमान जगत् अधिक वृद्धि को प्राप्त होता है तिसी कारण उसको अध्यर्द्ध नाम करके कहते हैं. अध्यर्द्ध दो शब्दों से मिलकर बना है, अधि ऋदि=अधिका अर्ध आधिक्य है और ऋदि का अर्ध ख्राधिक्य है है. चूंकि वायु करके सबकी वृद्धि होती है इसिक्षये वायु को अध्यर्द्ध है. चूंकि वायु करके सबकी वृद्धि होती है इसिक्षये वायु को अध्यर्द्ध है. चूंकि वायु करके सबकी वृद्धि होती है इसिक्षये वायु को अध्यर्द्ध नाम से कहा है. किर विदाध पृद्धते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! वह एक देवता कौन है जिसको आपने पहिले कहा था. उस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदाध ! वह एक देवता प्राण्य है वही प्राण्य बड़ा है ऐसा लोक कहते हैं. इस मन्त्र में त्यत् शब्द का अर्ध तत् है यानी जो तत् है वही त्यत् है ॥ ह ॥

मन्त्रः १०

पृथिव्येव यस्यायतनमिनलोंको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्कय वेद वा
आहं तं पुरुष्छ सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायछ शारीरः
पुरुषः स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेत्यमृतमिति होवाच ॥

पदच्हेवः ।

पृथिकी, एव, यस्य, आयतनम्, अग्निः, लोकः, मनः, ख्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुपम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायण्म, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवत्कय, वेद, वा, श्रहम्, तम्, पुरुपम्, सर्वस्य, **अ**ात्मनः, परायस्म्, यम्, श्चात्थ, यः, एव, श्चयम्, शारीरः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, श्रमृतम्, इति, ह, उवाच ॥

अन्वयः

पदार्थाः

ऋन्वयः

पदार्थाः

यस्य≕जिस पुरुष का श्चायतनम्=शरीर एव=निश्चय करके पृथिवी=पृथिवी है लोकः≔रूप ऋग्निः=श्रग्नि है मनः=मन ज्योतिः=प्रकाश है य:=जो सर्वस्य=सब **क्रात्मनः**=जीवों का परायगम्=उत्तम आश्रय है तम्=इस पुरुषम्=पुरुष को यः=जो विद्यात्=जानता है

याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! वेदिता=ज्ञाता स्यात्=होता है + न श्चन्यः≖दूसरा नहीं

सः≔वह

वै=धवश्य

+ इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर

याज्ञवल्क्यः=पाज्ञवल्क्य कहते हैं कि

यः=जो सर्वस्य=सब के

श्रात्मनः=श्रात्मा का परायगम्=परम आश्रय है

तम्≕उस युरुषम्=पुरुष को यम्=जिसको श्चात्थ=तुम कहते हो

श्रहम्≕मैं वेद=जानता हूं

यः=जो ग्रयम्=यह

शारीर:=शरीरसम्बन्धी पुरुषः≕पुरुष है सः≔वही

एव=निश्चय करके

एखः=यह सबका भातमा है श्वाकल्य=हे शाकल्य !

एञ=भवरब बद=तुम पूछो + पुनः≕फिर

शाकल्यः=शाकस्य ने श्राह=पूद्धा कि तस्य≔उस पुरुष का

देवता=देवता (कार्य)

का=कौन है + ५ति श्रुत्वा≔ऐसा सुन कर + य[ज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

> ह⊃स्पष्ट उवाच≔कहा कि

अमृतम्=अमृत है यानी वीर्य है

भावार्थ ।

विदुग्ध कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शारीर पृथिती है, रूप अग्नि है, मन प्रकाश है, जो सब जीवों का उत्तम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है वह अवश्य हे याज्ञवल्क्य ! उस पुरुष का ज्ञाता होता है, दूसरा नहीं, क्या आप उस पुरुष को जानते हैं ? यदि आप जानते हैं तो मैं आपको अवश्य ब्रह्मवेत्ता मानूंगा. ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदुग्ध ! जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम ऐसा कहते हो उस पुरुष को मैं जानता हूं, जो यह शारीरसम्बन्धी पुरुष है, वही निश्चय करके सब जीवमात्र का आश्रय है, हे विदुग्ध ! तुम ठहरो मत, पृक्षते चले चलो, मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देता चलूंगा, इस पर विदुग्ध ने पृद्धा, हे याज्ञवल्क्य ! उस पुरुष का कारण कोन है, याज्ञवल्क्य ने कहा उसका कारण अमृत यानी वीर्य है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

काम एव यस्यायतन १० हृदयं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्क्य वेद वा श्रहं तं पुरुषछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायं काममयः पुरुषः स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति स्त्रिय इति होवाच ॥

पदच्छेदः ।

कामः, एव, यस्य, आयतनम्, हृदयम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्रम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्नय, वेद, वै, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्रम्, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, काममयः,पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, खियः, इति, द्व, उवाच ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

यस्य=जिस पुरुष का

श्रायतनम्=शरीर

कामः≔काम है हृदयम्≕हृदय

लोकः≔रहने की जगह है

मनः=मन

ज्योतिः=प्रकाश है

यः=जो

सर्वस्य=सब के

ञ्चात्मनः=जीवात्मा का परायग्रम्=परम श्राश्रय है

तम्=उस

पुरुषम्=पुरुष को

याञ्चवत्क्य=हे याज्ञवत्क्य ! यः=जो

विद्यात्=जानता है

सः=वही

वै=निश्चय करके

सर्वस्य=सब का

वेदिता=ज्ञाता

स्यात्=होता है

+इति श्रुत्वा=ऐसा सुन कर

याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

उवाच=कहा

्यः≕जो

सर्वस्य=सबके

श्चात्मनः=भात्मा का

परायग्रम्=उत्तम श्राश्रय है

अन्वयः

पदार्थाः

तम्≕उस

पुरुषम्=पुरुष को श्रहम्=मैं

वेद्=जानता हं

यम्=जिसको

आत्थ=तुम कहते हो

यः=जो

एव=िश्चय करके

श्रयम्=यह

काममयः=कामसम्बन्धी

पुरुषः=पुरुष है

सः प्य≔वही

एपः≕यइ सब का भ्रात्मा है

शाकल्य=हे शाकल्य ! वद=तुम पृक्षो

+ पुनः≕फिर

+ शाकल्यः=शाकल्य

+ आह=बोले कि

याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवहक्य !

तस्य=उसका देवता=देवता यानी कारण

का=कौन है

इति=इस पर

याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

ह्=स्पष्ट

उवाच=कहा कि

स्त्रियः≔कामका कारण वियां हैं

भावार्थ ।

विदग्ध पूद्धते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शरीर काम

है, हृदय रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सब जीवातम का परम आश्रय है, जो उस पुरुष को जानता है, वह हे याज्ञवल्क्य! सब का ज्ञाता है, हे याज्ञवल्क्य! क्या तुम उस पुरुष को जानते हो? यदि आप जानते हैं, तो मैं आपको सब का ज्ञाता मानूंगा, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि जो सब के आत्मा का उत्तम आश्रय है, उस पुरुष को मैं जानता हूं, जिसके निसवत आप पृद्धते हैं उसको हे विद्ग्य! सुनो, जो यह कामसम्बन्धी पुरुष है वही जीवमात्र का उत्तम आश्रय है, हे विद्ग्य! आंर जो उन्ह पूछने की इच्छा हो पृद्धो, शाकल्य विद्ग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य! उसका कारण कोन है, इस पर याज्ञवल्क्य ज्ञाब देते हैं, हे विद्ग्ध! काम का कारण क्यां क्यां हैं।। ११॥

मन्त्रः १२

रूपाएयेव यस्यायतनं चक्षुर्लोको मनो ज्योतिर्यो वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्ळस वै वेदिता स्यात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुष्ळ सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थय एवासावादित्ये पुरुषः स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति सत्यमिति होवाच॥

पदच्छेदः ।

रूपाणि, एव, यस्य, श्रायतनम्, चक्षुः, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायण्यम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्नय, वेद, वै, श्रहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायण्यम्, यम्, श्रात्थ, यः, एव, श्रासों, श्रादित्ये, पुरुषः, सः, एपः, वद, एव, शाकक्य, तस्य, का, देवता, इति, सत्यम्, इति, ह, उवाच ॥

श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यस्य=जिस पुरुष का रूपाणि एव=रूपही श्चायतनम्=श्राश्रय है चक्षुः≔नेत्रही

लोकः=रहने की जगह है मनः≔मन ही ज्योतिः=प्रकाश है यः=जो सर्वा∓य=सब के श्रात्मनः=श्रात्मा का परायग्म्=उत्तम भाश्रय है. तम्=उस पुरुषम्=पुरुषको य:=जो बै=निश्चय के साथ विद्यात्=जानता है सः=वह याञ्चयक्य=हे याज्ञवल्स्य वेदिता=वेता स्यात्=होता है + इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा + शाकल्य=हे विदम्ध ! यः=जो सर्वस्य=सब के श्चात्मनः=श्रात्मा का परायणम्=परम ऋक्षय है च=श्रार यम्=जिसको त्वम्=तुम सर्वस्य≔सब

श्चात्मनः≕जीवों का परायग्रम्=परम श्राश्रय आत्थ=कहते हो तम्=उस पुरुष को श्चहम्**≕**में चेद्=जानता हं श्रस्रो≔यही पुरुप आदित्य=सूर्य में है सः≔वही एपः=यह **पुरुषः=**पुरुष + द्रास्ति=हैं जो तुम्हारे विधे स्थित है शाकल्य=हे शाकल्य ! वद एव=तुम पृक्षो ठहरो मत इति=इस पर + शाकल्यः=शाकल्य ने + पप्रच्छ=पृद्धा तस्य=उस पुरुष का देखता=देवता यानी कारण का=कौन है इति=शाकल्यके इस प्रश्क

पर

+ याझवरुक्यः=पाज्ञवरुक्य ने इति=ऐमा ह=स्वष्ट उवाच=कहा कि तत्त्=बह सत्यम्=ब्रह्म हे

भावार्थ ।

विदग्ध फिर प्रश्न करते हैं कि, हे याज्ञदल्क्य ! जिस पुरुष का रूप ही आश्रय है, नेत्रही रहने की जगह है, मन ही प्रकाश है, जो सवके आत्मा का उत्तम आश्रय है, जो उस पुरुष को निश्चय के साथ जानता है, वह है याज्ञवहत्त्वय ! सबका बेत्ता होता है, क्या आप उस पुरुषको जानते हैं ? आगर आप जानते हैं तो मैं आपको सबका वेत्ता मानूंगा, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा है विदग्ध ! जो सबके श्रात्मा का परम श्राश्रय है, श्रीर जिसको तम सब जीवों का परम आश्रय कहते हो मैं उस पुरुपको जानता हूं वही पुरुष सूर्य है, वही पुरुष तुम्हारे विषे स्थित है, हे शाकल्य, विदम्ब ! पृद्धो स्र्योर क्या पुछते हो, इसपर विद्ग्धने पूछा, उस पुरुष का कारणा कीन है, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि इसका कारणा ब्रह्म है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

श्राकाश एव यस्यायतनथ श्रोत्रं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुपं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्थं स वै वेदिता स्यात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुषछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायछं श्रीत्रः प्रातिश्रुत्कः पुरुषः स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति दिश इति होवाच ॥

पटच्छेटः ।

श्राकाशः, एव, यस्य, श्रायतनम्, श्रोत्रम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायणम्, सः,वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद, वे, श्रहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायण्म्, यम्, श्रात्थ, यः, एव, श्रयम्, श्रीत्रः, प्राति-श्रात्कः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, दिशः, इति, ह, उवाच ॥

पदार्थाः

श्रन्वयः

य∓य≕जिस परुप का **आयतनम**=श्राश्रय पच≕निश्चय करके

आकाशः≔श्राकाश है

ग्रन्वयः

पदार्थाः श्रोत्रम्≔कर्ण लोकः=रहनेकी जगह है

ग्रसः≃मन ज्योतिः=प्रकाश है

यः=जो सर्वस्य≃सब के श्चात्मनः=श्रात्मा का परायग्रम्=परम श्राश्रय है तम्=उस पुरुषम्,≈पुरुष को वै≕निश्चय करके विद्यात्=जानता है सः=वह याञ्चवल्यय=हे याज्ञवल्क्य ! वेदिता=सब का ज्ञाता स्यात्=होता है + इति श्रुत्वा=ऐसा सुन कर याश्चवह्ययः=याज्ञवह्रय ने उवाच=कहा शाकल्य=हे शाकल्य ! यः≕जो सर्वस्य=सब के श्चात्मनः=श्रात्मा का परायग्रम्=परम आश्रय है च≃ग्रौर यमू=जिसको

त्वम्=तुम इति=ऐसा ब्रात्थ=कहते हो तम्=उस पुरुषम्≔पुरुष को श्रहम्=में बै=निस्संदेह वेद=जानता हूं श्रथम्=यह श्रोत्रः=श्रोत्रसम्बन्धी प्रातिश्रुत्कः=श्रवण साक्षी पुरुषः=पुरुष है . एषः=यही तुम्हारा श्रात्मा है शाकल्य=हे शाकस्य ! वद एव=तुम पूछो + शाकल्यः=माकल्य ने + श्राह=पूछा तस्य≔डसका देवता=देवता यानी कास्ण का≔कौन है ? इति=इस पर उवाच ह=याज्ञवल्क्य ने कहा दिशः=दिशा हैं

भावार्थ ।

शाकल्य विदग्ध कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शरीर आकाश है, कर्मागोलक रहने की जगह है, मन प्रकाश है, और जो सब जीवों का परम आश्रय है, उस पुरुप को जो मली प्रकार जानता है वहीं ज्ञानी होसकता है, यदि आप उस पुरुप को जानते हैं तो आपही ज्ञानी और सबमें श्रेष्ठ हैं, यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया, हे शाकल्य ! जिस पुरुप के बाबत आप कहते हैं और जो सब

जीवों का उत्तम आश्रय है और जो श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष है उसकों में निस्संदेह जानता हूं, हे शाकल्य ! वही श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष तुम्हारा भी आत्मा है, हे शाकल्य ! जो तुम्हारी इच्छा हो पूछो ? मैं उस का उत्तर अवश्य दूंगा ऐसा सुन कर शाकल्य ने प्रश्न किया श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष का देवता यानी कारण कौन है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दिशा हैं ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

तम एव यस्यायतनथ्धं हृद्यं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्धं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्क्य वेद् वा ऋहं तं पुरुषथं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायं छाया-मयःपुरुषः स एप वदेव शाकल्य तस्य का देवतेति मृत्युरिति होवाच ॥ पदच्छेदः ।

तमः, एव, यस्य, श्रायतनम्, हृद्यम्, कोकः, मनः, उयोतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायस्म्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवक्वय, वेद, वे, श्राहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायस्म, यम्, श्रात्थ, यः, एव, श्रायम्, द्यायामयः, पुरुषः, सः, एषः, वद्, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, मृत्युः, इति, ह, ज्वाच ॥ श्रात्थः पदार्थाः । श्रात्वयः पदार्थाः

ान्वयः पद्।य

यस्य=जिस पुरुष का

श्रायतनम्=श्राश्रय

तमः=तम

एव=ही है

हृद्यम्=हृदय

लोकः=रहने की जगह है

मनः=मन

ज्यातिः=प्रकाश है

+ यः=जो

सर्वस्य=सब के

श्राहमनः=श्रातमा का

न्त्रथः पद्याधः
पदायण्म्=परम याश्रय है
तम्=उस
पुरुषम्=पुरुष को
यः=जो
विद्यात्=जानता है
याज्ञवरुक्य !
सः=वह
वेदिता=सक्का ज्ञाता
स्यात्=होता है
+ इति=ऐसा
+ श्रत्वा=सुनकर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने छायामयः≖षज्ञानसम्बन्धी पुरुष है + आह=कहा य:=जो सः≔वही सर्वस्य≔सबके एषः=यह तुम्हारा पुरुष है ब्रात्मनः=श्रात्मा का शाकल्य=हे शाकल्य! परायग्रम्=परम श्राश्रय है एव≕षवश्य + च=श्रीर वद=पृद्धो यम्=जिसको + शाकल्यः=शाकस्य ने त्वम्≕तुम + आह⊐पृद्धा आत्थ=पूछते हो तस्य=उसकी तम्=उस देवता=देवता यानी कारण पुरुषम्≔पुरुष को का=कौन है वै=निस्सन्देह इति=इस पर श्रहम्≕में उवाच ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट चेद=जानता हुं उत्तर दिया कि श्रयम्=वह मृत्यः=मृत्यु है एच=ही

भावार्थ।

जिस पुरुष का शरीर तम है, हृद्य रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है, वह सबका जाता होता है, क्या आप उस पुरुष को जानते हैं, अगर आप जानते हैं तो अवश्य आप श्रद्धवित् हैं, आरे अगर नहीं जानते हैं तो उपार अहंकार करते हैं, याज्ञवरूक्य ने उत्तर दिया कि में उस पुरुष को जानता हूं जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, और जिसके निसबत तुम पूछ्ते हो, हे शाकरूब ! वही पुरुष अज्ञान विषे स्थित है, वही तुम्हारे विषे स्थित है, हे शाकरूब ! यदि आप और कुछ पूछना चाहो तो पूछो, में उसका उत्तर दूंगा इस पर शाकरूब पूछते हैं हे याज्ञवरूक्य ! ऐसे तमसम्बन्धी पुरुष का देवता कीन है ? याज्ञवरूक्य ने उत्तर दिया कि हे शाकरूब ! वह मृत्यु है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १४

रूपाएयेव यस्यायतनं चक्षुर्लोको मनो ज्योतिर्यो वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवन्त्य वेद वा ऋहं तं पुरुषछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ यएवायमादर्शे पुरुषः स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेत्यसुरिति होवाच॥

पदच्छेदः ।

रूपाणि, एव, यस्य, आयतनम्, चक्षुः, खोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वें, तम्, पुरूषम्, विद्यात्, सर्वस्य, झात्मनः, परायराम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद, वै, श्रहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्चात्मनः, परायगाम्, यम्, श्चातथ, यः, एव, श्चयम्, श्चादर्शे, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, श्रासुः, इति, ह, उवाच ∦

श्रन्वयः

श्चन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः यस्य=जिस पुरुष का रुपाणि=रूप एव≔ही त्रावतनम्≔शरीर है चश्चः=नेमगोलक लोक:=रहने की जगह है मनः≔मन ज्योतिः=अकाश है सर्वस्य=सब के आत्मनः=श्रात्मा का परायसम्=परम आश्रय है यः=जो तम्=उस पुरुषम्=पुरुष को

विद्यात्=जानता है

बाज्ञवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! सः वै=बह ही वेदिता=सबका ज्ञाता स्यात्=होता है + याज्ञवल्क्यः=पाज्ञवल्क्य ने + श्राह=कहा यः≔जो सर्वस्य=सब के आत्मनः=बात्मा का परायग्रम्=परम श्राश्रय है + च=भौर यम्=जिसको त्वम्=तुम

इति=ऐसा

तम्⇒डस

आत्थ=कहते हो

पुरुषम्=पूरुष को

चेद=जानता हूं झयम्=वही पुरुषः=पुरुष झादरों=दर्पेग विषे हैं सः=वही एषः=यह तुम्हारे विषे हैं +शाकत्थ=हे शाकत्य !

कल्य≔हे शाकल्य ! प्रच≕श्रवश्य चद्≄तुम पृक्षो इति=इस पर

+ शाकल्यः≔शाकल्य ने + पप्रच्छ्र=पृद्धा

तस्य=उस पुरुष का

देवता=देवता यानी कारण का=कौन है ?

का=कान हा

इति=यह सुन कर उवाच ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट

उत्तर दिया कि

भावार्थ ।

जिस पुरुष का रूपही शरीर है, नेत्रगोलक रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, ऐसे पुरुष को जो जानता है, वह सबका ज्ञाता होता है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि हे शाकल्य ! जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम ऐसा कहते हो उस पुरुष को में भली प्रकार जानता हूं, वही पुरुष दर्पण विषे है, वही पुरुष तुम्हारे विषे है, हे शाकल्य ! जो इन्छ पूछ्रना हो पूछ्रते चन्नो, में उत्तर दूंगा ऐसा सुन कर शाकल्य पूछ्रते हैं कि उसका देवता कौन है ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि उसका देवता प्राण् है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

आप एव यस्यायतनश्र हृदयं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायगाश्र स वै वेदिता स्यात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुषश्र सर्वस्यात्मनः परायगां यमात्थ य एवायमप्सु पुरुष स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति वरुण इति होवाच।। पदच्छेदः।

आपः, एव, यस्य, आयतनम्, हृदयम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः,

वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, झात्मनः, परायग्राम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवत्क्य, वेद, वै, झहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, झात्मनः, परायग्राम्, यम्, झात्थ, यः, एव, झयम्, झप्सु, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, वरुग्यः, इति, द्रा प्रवः, इति, वरुग्यः, इति, वरुग्यः, इति, वरुग्यः।

अन्वयः पदार्था श्रन्वयः पदार्थाः यस्य=जिस पुरुष का यः≕जो श्रापः=जब सर्वस्य=सबके एव≕ही श्चात्मनः=भारमा का श्रायतनम्=रहने की जगह है परायगम्=परम श्राश्रय है हृद्यम्=हदय + च=श्रीर लोकः=मह है यम्=जिसको मनः≕मन त्वम्=तुम ज्योतिः=प्रकाश है इति=ऐसा यः=जो आत्थ=कहते हो सर्वस्य=सबके तम=उस श्रात्मनः=श्रात्मा का पुरुषम्=पुरुष को परायग्म्=परम श्राश्रय है श्रहम्≕मैं तम्=उस वै≕भवश्य पुरुषम्=पुरुष को वेद=जानता हूं यः=जो श्रयम्=वही विद्यात्=जानता है पुरुषः≔पुरुष सः≔वह अप्सु=जलविषे है याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! सः=वही वेदिता=सबका ज्ञाता ष्पः=तुम्हारे विषे है स्यात्=होता है शाकल्य=हे शाकल्य ! + इति=ऐसा एव=श्रवश्य + श्रुत्वा=सुन कर वद=पृक्षो 🕂 याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य मे इति=इस पर + आह्=कहा + शाकल्यः=शाकल्यने

+ ब्राह=पृद्धा कि
तस्य=उस पुरुष का
देवता=देवता यानी कारण
का=कीन है ?

इति=ऐसा सुन कर उद्याच ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट उत्तर दिया कि श्वहताः=वरुषा i

भावार्थ ।

जिस पुरुप के रहने की जगह जल है, हृदय यह है, मन प्रकाश है, जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, उस पुरुप को हे याज्ञवहनय ! जो जानता है वह सबका ज्ञाता होता है, यि आप उस पुरुप को जानते हैं तो वताइये, ऐसा सुन कर याज्ञवहन्य कहते हैं कि हे शाकल्य ! जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, आँर जिसको तुम ऐसा कहते हो, उसको में अवश्य जानता हूँ, वही पुरुप जलविषे हैं और वही पुरुप तुम्हारे विषे है, हे शाकल्य ! और क्या पूछते हो, पृछो ? में उत्तर देने को तथ्यार हूं, इस पर शाकल्य पूछते हैं कि उसका देवता कीन है ? याज्ञवहन्य उत्तर देते हैं उसका देवता वस्ता है। १६॥

मन्त्रः १७

रेत एव यस्यायतन छ हृदयं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्क्य वेद वा अहं तं पुरुपछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायं पुत्रमयः पुरुषः स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति प्रजापतिरिति होवाच ॥

पद्च्छेदः ।

रेतः, एव, यस्य, श्रायतनम्, हृद्यम्, कोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायण्म्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद, वै, श्राहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायण्म्, यम्, श्रात्थ, यः, एव, श्रयम्, पुत्रमयः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकस्य, तस्य,का, देवता, इति, प्रजापतिः, इति, ह, ज्वाच॥

श न्वयः	पदार्थाः	अ न्वयः	पदार्थाः
यस्य≕जिस पुरु		श्चात्थ=	तुम कहते हो
रेतः≔वीर्य		तम्=	
एव=ही		पुरुषम्=	पुरुष को
श्चायतनम्=रहने की	जगह है		-
मनः=मन		वै=	:भन्नी प्रकार
ज्योतिः=प्रकाश है	į.	वेद=	जानता हूं
य:=जो		श्रयम्=	वह
सर्वस्य≔सबके		एव=	: ह ी
आत्मनः =श्रारमा व	व	पुत्रमयः=	पुत्रसम्बन्धी
परायग्।म्= परम श्रा	श्रय है	ुषुरुषः≖	
तम्=उस		सः=	:वही
पु रुपम्=पुरुष को		एषः=	-तुम्हारे विषे है
यः=जो		शाकल्य=	=हेशाकल्य!
विद्यात्≕जानता है	2	एव=	- श्रवश्य
सः=वह			नुम पूछो
याञ्चवल्क्य वै=हे याज्ञवल	त्क्य ! निश्चय	+ शाकल्यः=	शाकल्य ने
करके		+ श्राह=	पृद्धाकि
वेदिता=सबका ज्ञ	ा ता	तस्य=	उसका
स्यात्=होता है		का=	कौन
+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क	य ने	देवता=	देवता यानी कारण है
+ आह≔डत्तर दिः	याकि	इति=	इस पर
यम्=जिसको		याञ्चवस्यः=	थाज्ञवरुक्य ने
सर्वस्य=सबके		ह=	:स्पष्ट
ञात्मनः =श्रात्माका	1	उवाच=	कहाकि

भावार्थ ।

परायगम्=परम आश्रय

प्रजापतिः=प्रजापति है

हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुप के रहने की जगह वीर्य है, मन प्रकाश है, जो सबके आदमा का परम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है, वह हे याज्ञवल्क्य ! निश्चय करके सबका ज्ञाता होता है, क्या आप उस पुरुप को जानते हैं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया हे शाकल्य ! जिस

पुरुष को आप सबका परम आश्रय कहते हैं, उस पुरुष को मैं भली प्रकार जानता हूं, यह वहीं पुरुष जो तुम्हारे बिषे स्थित है, आँर को पुत्र बिषे स्थित है, है शाकल्य ! आँर जो पूछना हो पूछों, मैं उत्तर हैने को तैयार हूं, इस पर शाकल्य पूछते हैं कि उसका देवता कौन है ! आप कुपा कर बताइये, याज्ञवल्क्य ने कहा कि उसका देवता प्रजापति हैं।। १७ ।।

मन्त्रः १८

रशाकल्येति होवाच याज्ञवल्क्यस्त्वार्छ स्विदिमे ब्राह्मणा अङ्गारा-वक्षयणमञ्जता ३ इति ॥

पदच्छेदः ।

शाकल्य, इति, ह, उवाच, याज्ञवत्क्यः, त्वाम्, स्वित्, इमे, ब्राह्मणाः, श्रङ्गारावक्षयणम्, श्रक्रता, इति ॥

श्चन्वयः प्र

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने ह=स्पष्ट इमे=इन ब्राह्मशाः=बाह्मगों ने त्वाम्=श्रापको

इति=ऐसा उवाच=कहा कि शाकल्य=हे शाकल्य !

श्रङ्गाराव- } =श्रगाठा क्षयणम् }

स्वित≔क्यों

अकता इति=बना रक्खा है

भावार्थ ।

याज्ञवल्य ने स्पष्ट ऐसा कहा कि, हे शाकल्य ! क्यों इन ब्राह्माएं ने ख्रापको कॅंगीठी बना रक्खा है, यानी मेरा उत्तररूपी जो वचन है वह अगिन तुल्य है, ख्रार ख्राप कॅंगीठी बने जा रहे हैं छाप इसको समकलें ॥ १८॥

मन्त्रः १६

याज्ञवल्क्येति होवाच शाकल्यो यदिदं कुरुपश्चालानां ब्राह्मणा-नत्यवादीः किं ब्रह्मविद्वानिति दिशो वेद सदेवाः सप्रतिष्ठा इति यदिशो वेत्थ सदेवाः सप्रतिष्ठाः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, शाकल्यः, यत्, इत्म्, कुरुप्ञाला-नाम्, ब्राह्मग्रान्, श्रत्यवादीः, किम्, ब्रह्म, विद्वान्, इति, दिशः, वेद, सदेवाः, सप्रतिष्ठाः, इति, यत्, दिशः, वेत्थ, सदेवाः, सप्रतिष्ठाः ॥

अन्वयः पदार्थाः याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य !

्रत्रन्वयः पदार्थाः ∤+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

याञ्चवल्क्य=ह याज्ञवल्क्य ! इति=ऐसा सम्बोधन करके

+ श्राह=उत्तर दिया कि

शाकल्यः=शाकल्य ने

यत्=जैसे

ह=स्पष्ट उवाच=कहा कि

+ त्वम्=तुम सदेवाः=देवता सहित

यत्=जो इदम्=यह

सद्याः=द्यता सहत सप्रतिष्ठाः=स्थान सहित

कुरुपञ्चाः } =कुरु श्रीर पञ्चाल के लानाम् }

दिशः=दिशाश्रों को वेत्थ=ज्ञानते हो ताः=उन्हीं

ब्राह्मणान्=ब्राह्मणों को ऋत्यवादीः≔श्रापने कठोर वचन कहा है किम्=क्या

दिशः≔दिशाश्रीं को सदेवाः≔देवता सहित सप्रतिष्ठाः≔स्थान सहित

विद्वान् इति=श्वापने जानते हुये कहा है + ऋहम्=में वेद् इति=जानता हूं

भावार्थ ।

शाकरूप कहते हैं, हे याज्ञवस्क्य ! आपने कुरुपश्चाल के ब्रह्मवा-दियों को कहा है कि थे सब ब्राह्मण स्वयं डरकर तुमको श्रामीठी बना रक्खा है. यदि आप ब्रह्मवेत्ता हैं तो यह आपका निरादर सहनीय हैं, यदि आप ब्रह्मवेता नहीं हैं तो ऐसा निरादर असहनीय है, आपसे पूछता हूं क्या आप ब्रह्मको जानते हैं ? याज्ञवरूक्य उत्तर देते हैं, हे शाकरूप ! में नहीं कहसका हूं कि में ब्रह्मको जानता हूं, और न यह कहसका हूं कि ब्रह्मको नहीं जानता हूं क्योंकि जानना श्रीर न जानना बुद्धि के धर्म हैं, सुक्त श्रातमा के नहीं हैं, मैं ब्रह्मनिष्ठ
पुरुपों को वारंवार प्रस्माम करना हूं, में पूर्विद्शाओं को श्रीर उनके
देवता प्रतिष्ठा को जानता हूं जिनको श्राप भी जानते हैं, यदि उनके
वारे में कुछ पूछना हो तो श्राप पूछें, शाकल्य कोध में श्राकर पूछते
हैं. हे याज्ञवल्क्य ! यदि श्राप देवता सहित प्रतिष्ठा सहित दिशाश्रों
को जानते हैं तो बताइये प्राची दिशा में कौन देवता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

किंदेवतोऽस्यां प्राच्यां दिश्यसीत्यादित्यदेवत इति स स्रादित्यः किस्मिन्प्रतिष्टित इति चक्षुपीति किस्मिन्न चक्षुः प्रतिष्टितमिति रूपेष्विति चक्षुपा हि रूपाणि पश्यति किस्मिन्न रूपाणि प्रतिष्टितानीति हृदय इति होवाच हृदयेन हि रूपाणि जानाति हृदये क्षेव रूपाणि प्रतिष्टितानी भवन्तीत्येवमेवैतद्याज्ञवल्भय ।।

पदच्छेदः ।

किंदेदतः, अस्याम्, प्राच्याम्, हिशि, श्रासि, इति, श्रादिःयदेवतः, इति, सः, श्रादिःयः, किस्मन्, प्रतिष्ठितः, इति, चक्षुपि, इति, किस्मन्, नु, चक्षुः, प्रतिष्ठितम्, इति, रूपेषु, इति, चक्षुपा, हि, रूपाणि, पश्यित, किस्मन्, नु, रूपाणि, प्रतिष्ठितानि, इति, हृदये, इति, ह, उवाच, हृद्येन, हि, रूपाणि, जानाति, हृद्दये, हि, एव, रूपाणि, प्रतिष्ठितानि, भवन्ति, इति, एवम्, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य ॥

श्चन्यः पदार्थाः श्चन्ययः पदार्थाः + श्राकल्यः=शाकल्य ने किंदेवतः=कौन देवतावाजे + श्चाह=कहा + याझवल्क्य=हे याज्ञवल्ल्य ! श्चस्याम्=इस प्राच्याम्=इस प्राच्याम्=पूर्व सन्वयः=याज्ञवलक्य ने

+ आह=कहा कि

विशि=दिशा में

भिं पूर्व का सूर्यदेवता आदित्य- वाका हूं यानी पूर्व देवतः में सूर्यदेवता का प्र-थाने मानता हं + शाकल्यः=शाकल्य ने + आह=पूछा कि सः=व ह **श्रादि**त्यः=सूर्य कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितः=स्थित है इति=इस पर + याञ्चवल्यसः=पाज्ञवरूप ने + आह=कहा कि चक्ष्मि=नेत्र में स्थित है इति=इस पर + शाकल्यः=शाकल्य ने + आह=पूछा कि चक्षुः=नेत्र नु कस्मिन्≕केस में प्रतिष्ठितम्=स्थित है ? इति=इस पर + याञ्चवल्ययः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि रूपेषु=रूपमं है हि=क्योंकि + जनः≔पुरुष चञ्जूषा=नेत्र करके इति=ही रुपाणि=रूपों को पश्यति=देखता है

+ पुनः≕फिर +शाकल्यः=शाकल्य ने + झाह≔कहा रूपाणि=रूप कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितानि=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति≔इस पर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने ह=स्पष्ट उवाच=कहा कि हृदये=हृदय में हि=क्योंकि हृदयन=हदय करके ही रूपाशि=रूप को + जनः≔पृरुष जानाति=जानता है हि=कारण यह है कि द्वदये=हृदय में एव=ही रूपाणि=रूप प्रतिष्ठितानि=स्थित भवन्ति=रहता है + शाकल्क्यः=शाकल्य ने + श्राह=कहा कि याञ्चयस्य=हे याज्ञवस्य ! एतत्=यह एवम् एव=ऐसा ही श्रास्त इति=है जैसा तुम कहते हो

भावार्थ।

शाकल्य पूछते हैं हे याज्ञवल्क्य ! आप पूर्व दिशा में किस देवता

को प्रधान मानते हैं ? इस पर याज्ञवल्क्यने उत्तर दिया कि मैं सूर्य देवता को पूर्वदिशा का अधिपति मानता हूं, फिर शाकल्यने पूछा कि वह सूर्य किसमें स्थित है ? यह सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा वह सूर्य किसमें स्थित है, इस पर शाकल्य ने पूछा नेत्र किसमें स्थित है, याज्ञ-वल्क्य ने उत्तर दिया रूप में स्थित है, क्योंकि पुरुष रूप को नेत्र करके ही देखता है, फिर शाकल्य ने पूछा रूप किसमें स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि रूप इदय में स्थित है, क्योंकि पुरुप रूप को हृदय करके ही जानता है, कारगा इसका यह है कि रूप हृदय में ही रहता है, इस पर शाकल्य ने कहा कि हे याज्ञवल्क्य ! दुम सत्य कहते हो ॥ २०॥

मन्त्रः २१

किंदेवतोऽस्यां दक्षिणायां दिश्यसीति यमदेवत इति स यमः कस्मिन्यतिष्ठित इति यज्ञ इति कस्मिन्नु यज्ञः अतिष्ठित इति दक्षिणाया-मिति कस्मिन्नु दक्षिणा मितिष्ठितेति अद्धायामिति यदा ह्येव अद्धन्तेऽथ दक्षिणां ददाति अद्धायां छे ह्येव दक्षिणा प्रतिष्ठितेति कस्मिन्नु अद्धा प्रतिष्ठितेति हृदय इति होवाच हृदयेन हि अद्धां जानाति हृदये ह्येव अद्धा प्रतिष्ठिता मवतीत्येवमेवैतद्याज्ञवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

किंदेवत:, इमस्याम्, दक्षिणायाम्, दिशि, श्रसि, इति, यमदेवत:, इति, सः, यमः, किसमन्, प्रतिष्ठितः, इति, यज्ञः, इति, किसमन्, नु, यज्ञः, प्रतिष्ठितः, इति, दक्षिणायाम्, इति, किसमन्, नु, दक्षिणा, प्रतिष्ठितः, इति, श्रद्धायाम्, इति, यदा, हि, एव, श्रद्धत्ते, श्राथ, दक्षिणाम्, ददाति, श्रद्धायाम्, हि, एव, दक्षिणा, प्रतिष्ठिता, इति, किसमन्, नु, श्रद्धा, प्रतिष्ठिता, इति, हृद्ये, इति, हृ, उवाच, हृद्येन, हि, श्रद्धाम्, जानाति, हृद्ये, हि, एव, श्रद्धा, प्रतिष्ठिता, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रस्याम्=इस दक्षिणायाम्=दक्षिण दिशि=दिशा में

+ त्वम्=तुम

(किस देवतावाले यानी किस देवता को तम दक्षिण दिशा का अधिपति मानते

श्रसि=हो

इति=इस पर

+ याज्ञचल्क्यः=याज्ञचल्क्य ने + स्त्राह=कहा कि

> यमदेवतावाला मैं यमदेवतः= हुं यानी यम को प्रिधिपति मानताहुं

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ ऋाह=फिर पृद्धा कि

सः=वह

यमः=यम देवता

कस्मिन्=िकसमें

प्रतिष्ठितः=स्थित है इति=इस पर

+याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=कहा कि

यज्ञे= { यम देवता यज्ञ में स्थित है यानी यम यज्ञ में पृज्य है

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ स्राह=पूछा कि

यज्ञ:=यज्ञ

अन्वयः

पदार्थाः

कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितः=स्थित है

नु=यह मेरा प्रश्न है

इति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=कहा कि

दक्षिणायाम्=दक्षिया में स्थित है

इति=इस पर

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ श्राह=पृद्धा कि दक्षिणा=दक्षिणा

दाक्षणा=दाक्षणा कस्मिन्=किसमें

प्रतिष्ठिता=स्थित है

नु=यह मेरा प्रश्न है

+ याञ्चयत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ ब्राह=कहा कि

श्रद्धायाम्=श्रद्धा में स्थित है

हि=क्योंकि

यदा=जव

पुरुष:=पुरुष श्रद्धत्तं=श्रद्धा करता है

श्रथ एव=तबही

दक्षिणाम्=दक्षिणा को

ददाति=देता है

हि=कारण यह है कि

थद्धायाम्=श्रद्धा में

दक्षिणा=दक्षिणा

एव≕निश्चय करके

प्रतिष्ठिता=स्थित है

इति=इस पर

+ शाकत्यः=शाकत्य ने जान

+ श्राह=पृष्णु कि

श्रद्धा=श्रद्धा

कस्मिन्=किसमें

प्रतिष्ठिता=स्थित है

नु=यह मेरा प्रश्न है

याञ्चयत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने स्थाज्ञवत्क्यः=याज्ञवत्क्य है

उवाच ह=कहा कि

हद्ये=श्रद्धा हदय में स्थित शाक्व

है

हि=क्योंकि याञ्चव

+ जनः=पृरुष प्रम

श्रद्धाम्=श्रद्धा को

जानाति=जानता है
हि=कारया यह है कि
हृदये=हृदय में
श्रदा=श्रदा
प्रतिष्ठिता=स्थित
भवति=रहती है
हृति=हृस पर
शाकल्य:=श्रक्लय ने
श्राह=कहा
याज्ञवल्क्य=ह याज्ञवल्क्य !
एतत्=यह
एवम् एव=ऐसाही
श्रादि=कैसा तम कहते हो

भावार्थ ।

हे याज्ञवल्क्य ! इस दक्षिण दिशा में किस देवताको प्रधान मानते हो ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि मैं यमदेवता को प्रधान मानता हूं, शाकल्य ने फिर पूछा कि वह यमदेवता किसनें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वह यमदेवता यज्ञ में स्थित है यानी यज्ञ में उसका पूजन होता है फिर शाकल्य ने पूछा कि यज्ञ किसमें स्थित है याज्ञ-वल्क्य ने उत्तर दिया कि दक्षिणा में स्थित है क्योंकि दिना दक्षिणा के यज्ञ की पूर्ति नहीं होती है फिर शाकल्य ने पूछा कि दक्षिणा किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि अद्धा में स्थित है, क्योंकि जब पुरुष अद्धा करता है तभी दक्षिणा देता है, इसिलेथे दक्षिणा अद्धा में स्थित है फिर शाकल्य ने पूछा कि अद्धा किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि अद्धा हिसमें स्थित है, इस पर शाकल्य ने कहा जैसा तुम कहते हो वैसाही है ॥ २१॥

मन्त्रः २२

किंदेवतोऽस्यां प्रतीच्यां दिश्यसीति वरुणदेवत इति स वरुणः किस्मिन्प्रतिष्ठित इत्यप्स्वित किस्मिन्न्वापः प्रतिष्ठिता इति रेतसीति किस्मिन्तु रेतः प्रतिष्ठितमिति हृदय इति तस्मादिष प्रतिरूपं जातमा- हुईद्यादिव स्प्तो हृदयादिव निर्मित इति हृदये होव रेतः प्रतिष्ठितं भवतीत्येवमेवैतद्याइवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, अस्याम्, प्रतीच्याम्, दिशि, श्रास, इति, वरुण्देवतः, इति, सः, वरुणः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, श्राप्तु, इति, कस्मिन्, नु, श्रापः, प्रतिष्ठितः, इति, कस्मिन्, नु, रेतः, प्रतिष्ठितम्, इति, हृद्ये, इति, तस्मात्, श्रापः, प्रतिरूपम्, जातम्, श्राहुः, हृद्यात्, इव, स्माः, हृद्यान्, इव, निर्मितः, इति, हृद्ये, हि, एव, रेतः, प्रतिष्ठि-तम्, भवति, इति, एवम्, एवम्, एवत्, याज्ञवल्क्य ॥

अ न्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पदार्थाः
+ शाकल्यः=श	ाकल्य ने		्वरुण देवतावाला
+ पप्रच्छ=पृ	छाकि	वहरादेवतः≔	्रु यानी वहता को
श्रस्याम्=इः	व		र यानी वरण की में अधिपति मा- नता हूं
प्रतीच्याम्=पश्चिम दिशि=दिशामॅ त्वम्=तुम		इति=इस पर + शाकल्यः=शाकल्य ने + पप्रचळ=पक्षा कि	
किंदेवतः_	देवताको तम प-	वरुगः≔	
श्रास	श्चिम दिशा का	कस्मिन्=	
(, श्रिधिपति मानते हो	प्रतिष्ठितः≔	स्थित है
इति=इ			यह मेरा प्रश्न है
+ याज्ञवल्क्यः=य	।ज्ञवल प य ने	इति=	इस पर
+ श्राह≕क	हाकि	+ याञ्चलक्यः=	पाज्ञव एव य ने

+ आह=कहा कि श्चरसु=जल में स्थित है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + शाकल्यः=शाकस्य ने + आह=पृद्धा कि श्रापः=जल कस्मिन्=िकस में प्रतिष्रिताः=स्थित है जु≔यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + ऋाह=उत्तर दिया कि रेतिस=वीर्य में स्थित है इति=इसके बाद + शाकल्यः=शाकल्य ने + स्राह=पृद्धा कि रेतः=वीर्य कस्मिन्=िकस में प्रतिष्ठितम्=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि हृदये इति=हृदय में स्थित है

झपि≕शौर तस्मात्=उसी हदय से जातम्=पैदाहुये पुत्र को श्रनुरूपम्=िपता के सदश श्रादुः=कहते हैं हि= व्योंकि हृद्यात् इव=हरय से ही सृप्तः=पुत्र निकला है हृदयात् इव=हृदय से ही निर्मितः=निर्माण हुन्ना है + च=श्रीर हृदये=हृदय में एव=ही रेतः≔वीर्य प्रतिष्ठितम्=स्थित भवति=रहता है इति=ऐसा श्रुत्वा=सुन कर शाकल्यः=शाकस्य ने आह=कहा याज्ञचल्क्य=हे याज्ञबल्क्य ! पतत्=यह एवम् एव=ऐसाही है जैसा तुम

कहते हो

भावार्थ ।

शाकल्य ने पूछा कि तुम पश्चिम दिशा में किस देवता को प्रधान मानते हो ? याज्ञवल्क्य ने कहा वरुगादेवता को प्रधान मानताहूं, शाकल्य ने पूछा वह वरुगादेवता किसमें स्थित हैं, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा वह जलविषे स्थित हैं, ऐसा सुनकर शाकल्य ने पूछा जल किसमें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वीर्य में स्थित है, फिर शांकस्य ने पूछा वीर्य किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने कहा वीर्य हृदय में स्थित है, भीर उसी हृदय से पैदाहुये पुत्र को पिता के सदश कहते हैं, क्योंकि हृदय से ही पुत्र उत्पन्न हुआ है, हृदय से ही पुत्र निर्माण हुआ है, श्रीर हृदय में ही वीर्य स्थित रहता है, यह सुन कर शांकल्य ने कहा हे याज्ञवल्क्य ! जैसा तुम कहते हो वैसाही है ॥ २२॥

मन्त्रः २३

किंदेवतोऽस्यामुदीच्यां दिश्यसीति सोमदेवत इति स सोमः किंदिनन्त्रितिष्ठत इति दीक्षायामिति किंदमन्त्रु दीक्षा प्रतिष्ठितेति सत्य इति तस्मादिष दीक्षितमाहुः सत्यं वदेति सत्ये श्चेव दीक्षा प्रतिष्ठितेति किंदमन्त्रु सत्यं प्रतिष्ठितमिति हृदय इति होवाच हृदयेन हि सत्यं जानाति हृदये श्चेव सत्यं प्रतिष्ठितं भवतीत्येवमेवतवा इवल्क्य ।।

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, अस्याम्, उदीच्याम्, दिशि, असि, इति, सोमदेवतः, इति, सः, सोमः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, दीक्षायाम्, इति, कस्मिन्, न्तु, दीक्षा, प्रतिष्ठिता, इति, सत्ये, इति, तस्मात्, अपि, दीक्षितम्, आद्धः, सत्यम्, बद, इति, सत्ये, हि, एव, दीक्षा, प्रतिष्ठिता, इति, कस्मिन्, नु, सत्यम्, प्रतिष्ठितम्, इति, हृदये, इति, हृ, उवाच, हृदयेन, हि, सत्यम्, जानाति, हृदये, हि, एव, सत्यम्, प्रतिष्ठितम्, भवति, इति, एवम्, एव, एत्, एत्, याज्ञवक्ष्य ॥

श्चन्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पदार्थाः
अ स्याम्=इस			(कौन देवतावाले हो
उदीच्याम्=उत्तर		किं देवतः_	यानी किस देवता को तुम उत्तर दिशा
दिशि≔दिशा में		आ से =	र का तुम उत्तर दिशा का अधिपति मानते
त्व म्=तुम	ŀ		हो ?

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा≔सुनकर

+ याज्ञबल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=उत्तर दिया कि

सोमदेवतः= { सोम देवतावाला हूं यानी चन्द्रमा को प्रधान मानता हूं

+ पुनः प्रश्नः≕िकर शाकल्य का प्रश्न हुत्रा कि

हुआ। ।क

सः=वह स्रोमः=चन्द्रसम्बन्धी स्रोमन्नता

कस्मिन्=िकस में

प्रतिष्ठितः≕स्थित है ?

इति=इस पर

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=उत्तर दिया कि

दीक्षायाम्=दीक्षा में स्थित है इति=इस पर

+ शाक्त्यः=शाकस्य ने

+ त्राह=प्डा

दीक्षा=दीक्षा

कस्मिन्=किसमें

प्रतिष्ठिता=स्थित है ?

नु=यह मेरा प्रश्न है

इति≕ऐसा

+ भुत्वा≕सुन कर

+याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ ऋाह≔कहा कि

सत्ये इति=सत्य में स्थित है

श्रपि≕श्रौर

तस्मात्=इसी कारण

दीक्षितम्=दीक्षित यानी दीक्षा खेनेवाचे को

सत्यम्=सत्य

आहुः=कहते हैं

क्षा-स्य

त्वम्=तुम

सत्यम्=सत्य वद्=सहो

हि=क्योंकि

दीक्षा=दीक्षा

सत्ये=सत्य में

एव≔ही

प्रतिष्ठिता=प्रतिष्ठित है

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा⇒सुन कर

+ शाकल्यः=शाकस्य ने

+ आह=पूद्धा कि

सत्यम्⇒सस्य

कस्मिन्=किस में प्रतिष्ठितम्=स्थित है

जु=यह मेरा प्रश्न है

इति=ऐसा

+ श्रुत्त्रा=सुन कर

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

ह उवाच=स्पष्ट डक्तर दिया

हृद्ये=इदय में स्थित है

हि=क्योंकि

इदयेन=हृदय करके

सत्यम्=सत्य को

+ पुरुषः=पुरुष

जानाति=जानता है हि एव=इसी कारण

6 dd-541 aic

इद्ये=ह्दय में

सत्यम्=सत्य प्रतिष्ठितम्=स्थित + भवति=रहता है + शाकल्य श्राह=शाकल्य ने कहा याञ्चवत्क्य=हे याजवत्क्य !

पतत्=यह बात

पतम् पच=ऐसीही हे जैसा तुम

कहते हो

भावार्थ ।

शाकल्य पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! उत्तर दिशा में आप किस देवता को प्रधान मानते हैं ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि चन्द्रमा देवता को प्रधान मानता हूं, फिर शाकक्य ने प्रश्न किया वह चन्द्रमासम्बन्धी सोमलता किसमें स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दीक्षा में स्थित है, शाकल्य ने पूछा दीक्षा किसमें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया सत्य में, और इसी कारणा दीक्षा लेनेवाले को सत्य भी कहते हैं, और यज्ञकर्म के आरम्भ में दीक्षा लेनेवाले को कहते हैं कि तुम सत्य बोलो क्योंकि, दीक्षा सत्य में ही स्थित है, फिर शाकल्य ने पूछा सत्य किसमें स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया सत्य हृदय में स्थित है, क्योंक हृदय करकेही सत्य को पुरुष जानता है, और इसी कारणा हृदय सत्य में स्थित है, इस पर शाकल्य ने कहा जो तुम कहते हो ठीक है ॥ २३॥

मन्त्रः २४

किंदेवतोऽस्यां ध्रुवायां दिश्यसीत्यग्निदेवत इति सोग्निः कस्मिन्यतिष्ठित इति वाचीति कस्मिन्वाक्यतिष्ठितेति हृदय इति कस्मिन्नु हृद्यं प्रतिष्ठितमिति ॥

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, श्रास्याम्, श्रुवायाम्, दिशि, श्रासि, इति, श्रान्निदेवतः, इति, सः, श्रान्तः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, वाचि, इति, कस्मिन्, वाक्, प्रतिष्ठिता, इति, हृदये, इति, कस्मिन्, नु, हृदयम्, प्रति-श्वितम्, इति ॥

श न्धयः	पदार्थाः	अ न्वयः	पदार्थाः
श्चस्याम्=इस		+ श्रुत्वा=सुन व	र
ध्रुवायाम्=ध्रुव		+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञव	एक्य ने
दिशि=दिशा में		+ श्राह=कहा	कि
+ त्वम्=तुम	A 1	वाचि इति=वाणी	में श्रग्नि स्थितहै
(कीन	देवतावाले हो	+ शाकल्यः=शाकर	श्य ने
र्कोन [ः] किंदेवतः≔ र्यानी पति।	ध्रुव दिशाधि-	+ पप्रच्छु≕पृङ्गा	कि
	कसका मानत	वाकु=वाणी	
श्रसि=हो	>	कस्मिन्≕िकस	¥
+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्	ru -	प्रतिष्ठिता=स्थित	
म्राह=कहा कि		+ इति श्रुत्वा=ऐसा	
्रिया विकास के किया किया किया किया किया किया किया किया	। दवतावाला जी भननिकार	_	•
श्राग्तदेवतः= $\begin{cases} $	पा भुषावसा प्रमी श्रमिन को	याज्ञवल्क्यः≕याज्ञव	*
(मान		+ श्राह=उत्तर	
इति=इस पर			हदय में स्थित है
+ शाकल्यः=शाकल्य	ने	इति=इस	गर
+ श्राह=पृद्धा		पुनः≕िकर	
सः≔वह		शाकल्यः≔शाक	ल्य ने
श्राग्नः=श्राग्न		उवाच=पृद्धा	कि
कस्मिन्=िकस में		हृदयम्=हृदय	
प्रतिष्ठितः=स्थित है		कस्मिन्=किसं	i
इति≕यइ		प्रतिष्ठितम्=स्थित	

भावार्थे।

शाकल्य ने पूछा ध्रुव दिशा में आप कीन देवता को प्रधान मानते हैं ? याज्ञवल्क्य ने कहा अग्निदेवता को, शाकल्य ने पूछा वह आनि किस में स्थित है ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा बाग्गी में स्थित है, फिर शाकल्य ने पूछा वाग्गी किस में स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वाग्गी हृदय में स्थित है, इस पर शाकल्य ने पूछा हृदय किस में स्थित है। २४॥

मन्त्रः २५

श्रहन्निकेति होवाच याज्ञवल्क्यो यत्रैतद्न्यत्रास्मन्मन्यासै यद्धचे-तदन्यत्रास्मत्स्याच्छ्वानो वैनद्धुर्वयाश्रंसि वैनद्विमध्नीरिमति ॥

पदच्छेदः ।

ब्राहल्लिक, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्य:, यत्र, एतत्, ब्रान्यत्र, अस्मत्, मन्यासे, यत्, हि, एतत्, अन्यत्र, अस्मत्, स्यात्, श्वानः, वा, एनत्, आद्युः, वयांसि, वा, एनत्, विमध्नीरन्, इति ॥ पदार्थाः

श्रास्वयः

इति=ऐसा सुन कर

यान्नवल्क्यः=यान्नवल्क्य ने ह=स्पष्ट

उवाच=कहा कि

ग्रहित=श्ररे निशाचर, + शाकल्य=शाकल्य !

यत्र=जब

इति=ऐसा

मन्यासै मन्यसे=मानोगे कि

एतत्=यह भातमा (हदय)

अस्मत्=इस हमारे देह से श्चन्यत्र≔पृथक् है तो

यत्≕जो

अन्वयः

पदार्थाः एतत्=यह श्रात्मा

ग्रस्मत्=इस शरीर से

ऋन्यत्र=पृथक्

स्यात्=हो तो

पनत्=इस शरीर को

श्वानः=कुत्ते

श्रद्य:=साराजें

व(=भोर

वयांसि=पक्षी

पनत्≔इस शरीर को

वा≕श्रवस्य

अश्नीरन् इति=खाडाखें

भावार्थ ।

ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा अरे दुष्ट निशाचर, शाकस्य ! जब तुम ऐसा मानोगे कि यह हृदय इस हमारे शरीर से पृथक् है तो जो यह हृदय इस शरीर से पृथक हो तो इस शरीर को कुत्ते आर पक्षी खाजायँ॥ २४ ॥

मन्त्रः २६

किस्मिश्च त्वं चात्मा च प्रतिष्ठितौ स्थ इति प्राण इति किस्मिश्च

प्राग्तः प्रतिष्ठित इत्यपान इति किस्मिन्न्वपानः प्रतिष्ठित इति व्यान इति किस्मिन्नु व्यानः प्रतिष्ठित इत्युदान इति किस्मिन्न्दानः प्रतिष्ठित इति समान इति स एष नेति नेत्यात्माऽगृद्धो न हि गृद्धतेऽशीर्यो न हि शीर्यतेऽसङ्गो न हि सज्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यति । एतान्यष्टावा-यतनान्यष्टी लोका अष्टी देवा अष्टी पुरुषाः स यस्तान्पुरुषािकरुष्ध प्रत्युद्धात्यक्रामत्तं त्वीपनिषदं पुरुषं पृच्छामि तं चेन्मे न विवक्ष्यसि मूर्या ते विपतिष्यतीति । तथ्ध ह न मेने शाकल्यस्तस्य ह मूर्या विपपातािष हास्य परिमोिपगोस्यीन्यपजहरन्यन्मन्यमानाः ॥

पदच्छेदः ।

कस्मिन्, तु, त्वम्, च, आत्मा, च, प्रतिष्ठिती, स्थः, इति, प्राखः, इति, कस्मिन्, तु, प्राखः, प्रतिष्ठितः, इति, अपाने, इति, कस्मिन्, तु, अपानः, प्रतिष्ठितः, इति, क्याने, इति, कस्मिन्, तु, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, व्याने, इति, कस्मिन्, तु, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, व्याने, इति, व्याने, इति, कस्मिन्, तु, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, समाने, इति, सः, एषः, न, इति, न, इति, आत्मा, अगृह्यः, न, हि, गृह्यते, अशीर्यः, न, हि, शार्यते, असङ्गः, न, हि, सव्यते, असितः, न, व्यथते, न, रिष्यति, एतानि, अष्टौ, आयतनानि, अष्टौ, जोकाः, अष्टौ, देवाः, अष्टौ, पुरुषाः, सः, यः, तान्, पुरुषान्, निरुष्य, प्रत्युद्ध, अत्यकामत्, तम्, तु, औपनिषद्म, पुरुषम्, पृरुष्यानि, तम्, चेत्, मे, न, विवक्ष्यसि, मूर्धा, ते, विपति-ष्यति, इति, तम्, ह, न, मेने, शाकल्यः, तस्य, ह, मूर्धा, विपपात, अपि, ह, अस्य, परिमोषिगाः, अस्थीनि, अपज्ञहः, अन्यत्, मन्यमानाः ॥

अन्वयः + शाकल्यः=शाकल्य ने + श्राह=पृद्धा कि

त्वम्=बाप स्वम्=बाप

श्चातमा च=मापका घारमा कस्मिन्=किस में

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्रतिष्ठितौ=स्थित स्थः=द्दे जु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर

+ याझचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + ऋाह्=उत्तर दिषा

प्राणे=प्राय में है + पुनः≕फिर + पप्रच्छ=शाकस्य ने पृछा कि प्राग्ः=प्राग्र क€्मिन्=िकस में प्रतिष्ठितः=स्थित है इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि अपाने=अपान में है इति≕फिर + प्रश्नः=शाकल्य ने पृद्धा कि श्रपानः=श्रपान कस्मिन्=किस में प्रतिप्रितः=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर याञ्चवरुक्यः=याज्ञवरुक्य ने उवाच=उत्तर दिया व्याने=व्यान में + शाकल्यः=शाकल्य ने + उवाच=पृद्धा व्यानः=व्यान कस्मिन्=िकस में प्रतिष्रितः=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य + उत्तरम्≃उत्तर + ददाति=देते हैं कि उदाने=उदान में इति≔इस पर

उढानः=उढाम कस्मिन्=िकस में प्रतिष्रितः=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर याञ्चयत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि समाने≃समान में यः≕जो (वेद में) न इति≕नेति न इति≔नेति इति=करके + निर्दिष्टः=कहा गया है सः=वही पपः=यह है श्रातमा=श्रारमा अगृह्यः=अग्रह्य है हि=क्योंकि सः=वह भारमा न=नहीं गृह्यते=प्रहृण किया जा सक्राहै + सः=वह श्रशीर्यः=क्षवरहित है हि=वयोंकि न शीर्यते=नहीं क्षीण किया जा सका है + सः≔वह असङ्गः=सङ्गरहित है हि=क्योंकि सः=वह न=नहीं सज्यते=संग किया जासका है

+ सः=वह श्रसितः=बन्धन रहित है हि=क्योंकि सः=वह न≕नहीं द्यथते=पीड़ित हो सक्ना है च≕ग्रौर न≐न रिष्यति=नष्ट होसका है शाकल्य=हे शाकल्य! ऋष्टें≔ग्राठ आयतनानि=स्थान पृथ्वी धादि है अधौ=श्राह लोकाः=लोक अग्नि यादि हैं श्रधौ=श्राठ देवाः=देव श्रमृत श्रादि हैं ऋष्टौ=आउ पुरुषाः=पुरुष शरीर श्रादि हैं सः≕सो यः≕जो कोई तान्=उन पुरुषान्=पुरुषों को निरुह्य=जानकर + च=श्रीर प्रत्युह्य=श्रपने श्रन्तःकरखमें रखकर अत्यकामत्=मतिकमण करता है तम्=डस श्रीपनिषदम् रे _उपनिषत्सम्बन्धी पुरुषम् रे तस्ववित्पुरुष को

जानवि=जानता है पृच्छामि≕में पृञ्जता हूं चेत्=श्रगर तम्=उसको भे=मुक्तसे न=न विवस्यसि=कहेगा तू तो ते=तेरा मुर्घा=मस्तक विपतिष्यति स्तमा में गिरजायगा साकल्यः=शाकल्य तम्=उस पुरुष को स=नहीं मेने=जानता भया + तस्मात्=इसिबये तंस्य=उसका मूर्धा=मस्तक ह=सबके सामने विपपात=गिरपड़ा श्रिप ह=श्रीर श्र∓य=उसकी श्रस्थोनि=हड्डियां यानी सृतक शरीर को अन्यत्=भौर कुछ मन्यमानाः≔समकते हुवे परिमोषिगः=चोर श्रपजहुः≔लेकर भाग गये

भावार्थ । शाकस्यने फिर पूछा आप और आपका आत्मा यानी हृदय किस में स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया प्रारा में, फिर शाकक्य ने पद्धा प्राचा किस में स्थित है ? याज्ञवल्क्यने कहा अपान में, शाकल्य ने पहा अपान किस में स्थित है ? याज्ञवहन्त्रयने कहा ज्यान में, फिर शाकल्यने प्रश्न किया व्यान किसमें स्थित है, इस पर याज्ञवल्क्यने कहा चदान में, फिर शाकल्यने पूछा उदान किस में स्थित है ? याज्ञ-वरुक्यने कहा समान में. परन्त हे शाकरूय ! झात्मा जिसमें सब स्थित हैं झौर जो वेद में "नेति नेति" करके कहा गया है वही यह आत्मा अप्राह्म है, क्योंकि वह प्रहुशा नहीं किया जासका है, वही क्षयरहित है क्योंकि वह क्षीगा नहीं किया जासका है. वह संगरहित है क्योंकि वह संग नहीं किया जासका है, वह बन्धनरहित है क्योंकि वह पीडित नहीं होसका है, और न नष्ट होसका है, हे शाकल्य ! सनो जो आठ स्थान प्रथ्वी आदि हैं, आठ लोक अग्नि आदि हैं. आठ देव अमृत आदि हैं, आठ पुरुष शरीर आदि हैं जो कोई उन पुरुषों को जानकर ख्रीर ख्रान्त:करगा में रख कर उत्क्रमगा करता है, यानी आरीर को त्यागता है तुम उस उपनिपदतत्त्ववित्परुष को जानते हो, मैं तुमसे प्रश्न करता हूं श्चगर तुम उसको मुक्त से नहीं कहोंगे. तो तुम्हारा मस्तक सभा में गिरजायगा, शाकल्य उस पुरुषको नहीं जानता भया इसिंजिये उसका मस्तक सबके सामने गिरपडा, और चोरों ने उसके दाह के निमित्त उसको लेजाते हुये शरीर को देख कर भ्रोर उसको भ्रोर कुछ समम कर उस शरीर को लेकर भाग गये ॥ १६ ॥

मन्त्रः २७

श्रथ होवाच ब्राह्मणा भगवन्तो यो वः कामयते स मा पृच्छतु सर्वे वा मा पृच्छत यो वः कामयते तं वः पृच्छामि सर्वान्वा वः पृच्छामीति ते ह ब्राह्मणा न दघुषुः ॥

पदच्छेदः।

द्भाथ, ह, उवाच, ब्राह्मियाः, भगवन्तः, यः, वः, कामयते, सः, मा, पुच्छतु, सर्वे, वा, मा, पुच्छत्, यः, वः, कामयते, तम्, वः, पुच्छामि, सर्वान्, वा, वः, पुच्छामि, इति, ते, ह, ब्राह्मियाः, न, दधुषुः ॥

पदार्थाः **छ**न्धयः श्रथ ह=तरपश्चात् उवाच=याज्ञवक्स्य बोले कि भगवन्तः } =हे प्ज्य बाह्ययो ! ब्राह्मयाः } घः≔भापकोगों में यः=जो कोई कामयते=चाहता है सः≔वह मा=मुक्ससे पृच्छुतु=प्रश्न करे घा≔या सर्वे=सब कोई मिलकर मा⇒मुक्से पृच्छत=परन करें + भ्रथवा=या

ग्रन्वयः पदार्थाः **धः=**मापलोगों में यः=जो कोई कामयते=चाहता हो तम्≕डससे पुच्छामि=मैं प्रश्न कर्ड या≕या घः=भाप सर्वान्=सब जनों से पृच्छामि=मैं प्रश्न करूं इति=इस पर ते≕उन ब्राह्मणाः≔ब्राह्मणां ने न्≕नहीं द्धृषु:=पूछने का साहस किया

भावार्थ ।

तत्परचात् याज्ञवक्क्य ने ब्राह्मगाों को सम्बोधन करके कहा कि, हे पूज्य ब्राह्मगाों ! आपकोगों में से जो कोई अकेला प्रश्न करना चाहता है, वह अकेला प्रश्न करे, या आप सबलोग मिलकर मुक्त से प्रश्न करें या आपकोगों में से जो अकेला चाहता है उस अकेले से में प्रश्न करूं, या आप सब लोगों से मैं प्रश्न करूं, मैं हर तहर से प्रश्नोत्तर करने को तैयार हूं, इसमें उन ब्राह्मगाों में से उत्तर देने का किसी को साहस नहीं हुआ ॥ २७॥

मन्त्रः २७-१

यथा द्वक्षो वनस्पतिस्तर्थेव एरुषोमृषा । तस्य लोगानि पर्णानि त्वगस्योत्पाटिका बहिः॥

पदच्छेदः ।

यथा, बृक्षः, वनस्पतिः, तथा, एव, पुरुषः, श्रमृषा, तस्य, स्नोमानि, पर्गानि, त्वकु, श्रस्य, उत्पाटिका, बहि: भ

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ याश्चवल्क्यः=याश्रवल्क्य ने

+ पप्रच्छ=कहा

यथा=ैनेसे वनक्पतिभ=वनका पति

युक्षः=वृक्ष है तथैय=तैसे ही

पुरुषः≕सब प्राणियों में पुरुष श्रेष्ठ है

श्रमपा=इसमें सन्देह नहीं है तथा एव=वैसेही तस्य=उसपरुप के

लोमानि=शेवें पर्गानि=इक्षके पत्तों के तुल्य हैं

==धौर

श्रस्य=उस परपका

इति=जैसे वहि:=बाह्य त्वक=चर्म है

उत्पाटिका=रक्ष का खचा है

भावार्थ ।

याज्ञदल्क्य ने कहा कि, हे ब्राह्मणों ! जैसे वन का पति ब्रक्ष हे. वेंसेहो सब प्रारिएयों का पति पुरुप है, इसमें सन्देह नहीं कि उस पुरुष के रोवें बुक्ष के पत्तों के तुस्य हैं, और पुरुष का बाह्यचर्म बुक्ष के त्वचा के समान है ॥ २७-१ ॥

मन्त्रः २७-२

त्वच एवास्य रुधिरं प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः । तस्मात्तदात्रएगा-त्मैति रसो द्वशादिचाहतात ॥

पदच्छेदः।

त्वचः, एव, श्रास्य, रुधिरम् , प्रस्यन्दि, त्वचः, उत्पटः, बस्मात , तदा. आतृरगात्, प्रेति, रसः, वृक्षात्, इव, आहतात् ॥

अन्वयः

पदार्थाः स्रन्वय

पदार्थाः

श्रस्य=उस पुरुष के
त्वचः=चर्म से
किथरम्=किषर
प्रस्यन्दि=निकलता है
प्व=बैसेही
त्वचः=वृक्षकी त्वचा से
उत्पद्य=गोंद निकलता है

इव=नैसे

श्चाहतात्=कटे हुये चृक्षात्=चृक्ष सं रसः=रस निकज्जता है तस्मात्=उसी प्रकार त्रातृरण्णात्=कटे हुये पुरुष से

तत्=व र खून प्रैति=निकलता है

भावार्थ ।

जैंसे पुरुष के चर्म से रुधिर निकलता है वैसेही वृक्ष के स्वचा से गोंद निकलता है झौर जैंसे कटे हुये वृक्ष से रस निकलता है वैसेही कटे हुयं पुरुष से रक्त निकलता है ॥ २७-२ ॥

मन्त्रः २७-३

मार्थक्तान्यस्य शकराणि किनाटथ्रं स्नाव तत्स्थरम् । श्रस्थी-न्यन्तरतो दारूणि मज्जा मज्जोपमा कृता ॥

पदच्छेदः ।

मांसानि, श्रास्य, शकराग्णि, किनाटम्, स्नाव, तत्, स्थिरम्, श्रस्थीनि, श्रान्तरतः, दारूग्णि, मज्जा, मज्जोपमा, कृता ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

इव=जैसे श्रस्य=इस पुरुप के मांसानि=मांस शकराणि=तह दरतह हैं तत्=वैसेही किनाटम्=टक्षकी खुख

स्नाव=पंद्रकी तरह

स्थिरम्=स्थित है

इच=वैसे श्रम्थीनि } =पुरुप के श्रन्तर हाड़ हैं श्रन्तरतः } तथाएव=वैसेही

दाकाण=दृक्षके भीतर लकड़ी है मजा=पुरुष का मजा मजो(पमा=मजा के तुल्य कृता=मानी गई है

भावार्थ ।

जैसे पुरुष के मांस तह दरतह (परतदार) हैं वैसेही वृक्षकी छाज पट्टे की तरह तह दरतह (परतदार) स्थित हैं झौर जैसे पुरुष के झन्तर हड़ी स्थित है वैसेही वृक्ष के भीतर लकड़ी स्थित है जैसे पुरुष के भीतर शारीर में मजा होताहै वैसेही वृक्ष में मजा होताहै ॥ २७-३॥

मन्त्रः २७-४

यदृष्टक्षो द्वन्यो रोहति मृलान्नवतरः युनः। मर्त्यः स्विन्मृत्युना दृन्यः कस्मान्यूनात्मरोहति ॥

पव्च्छेदः।

यत्, दृक्षः, दृक्षाः, रोहति, मूकात्, नवतरः, पुनः, मर्त्यः, स्वित्, मृत्युना, दृक्षाः, कस्मात्, मूकात्, प्ररोहति ॥

श्चन्यः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यत्=जो चृक्ष्णः=काटा हुद्या चृक्षः=चृक्ष है + तस्मात्=डसके मृ्लात्=जद से नवतरः=नवीन चृक्ष रोहति=डस्पन होता है मृत्युना=मृत्यु करके चृक्ष्याः=काटा हुमा मर्त्यः=मनुष्य कस्मात्=िकस मृतात्=मृत से प्ररोहति=अपन्न होता है स्वित्=यह मेरा परन है

भावार्थ।

हे ब्राह्मगो ! जो कटा हुझा वृक्ष है उसकी जड़ से नवीन वृक्ष उत्पन्न होते हैं यह आपको विज्ञात है तब बताइये मृत्यु करके कटा हुआ मनुष्य किस मूल यानी जड़ से उत्पन्न होता है यह मेरा प्रश्न है इसका उत्तर आप लोग दें ॥ २७-४॥

मन्त्रः २७-५

रेतस इति मा वोचत जीवतस्तत्प्रजायते । धानारुह इव वै हुन्नो-ज्ञसा पेत्य संभवः ॥

पदच्छेदः ।

रेतसः, इति, मा, वीचत्, जीवतः, तत्, प्रजायते, धानारुहः, इव, वै, वृक्षः, झल्जसा, प्रेत्य, संभवः ॥

पदार्थाः ध्यन्वयः ग्रन्वयः पदार्थाः रेतसः=मरे हुये पुरुष के वार्यसे च≔श्रीर + रोहति=पुरुष प्रादुर्भृत होता है धानारुहः≔बीज से उत्पन्न हम्रा द्रति=ऐसा वृक्षः इव=वृक्ष मा≔नहीं घोचत=कह सक्ने हैं ग्रञ्जसा=शीघ हि≕क्योंकि प्रेत्य=नष्ट होकर तत्=वह वीर्य वे=भी जीवतः=जीते हुये पुरुष से धानातः=बीज से मजायते=उत्पन्न होता है मरे से नहीं संभवः=उत्पन्न हो श्राता है

भावार्थ ।

अपन वृक्ष आरे पुरुष की समानता दिखलाकर याज्ञवस्क्य प्रश्न करते हैं हे ब्राह्मणों! जब जड़ छोड़ कर वृक्ष काटा जाता है तब पुनः मूलसे आरे नवीन वृक्ष उत्पन्न होता है यह आपलोग प्रत्यक्ष देखते हैं परन्तु जब मरणाधर्मी पुरुष को मृत्यु मार लेता है तब फिर वह पुरुष किस मूल से उत्पन्न होता है यदि आप कहें कि वीर्य से मनुष्य उत्पन्न होता है यदि आप कहें कि वीर्य से मनुष्य उत्पन्न होता है तो यह बात ठीक नहीं है क्योंकि वीर्य तो जिंदा पुरुष में रहता है परन्तु कट वृक्ष की जड़ तो बनी रहती है अथवा उसका वीर्य बना रहता है उससे दूसरा वृक्ष उत्पन्न हो आता है पर मनुष्य के मरजाने पर उसका कोई मूल कारणा नहीं दीखता है जिससे उसकी उत्पत्ति कही जाय इसकी उत्पत्ति का वृक्षवत् कोई कारणा होना चाहिये॥ २७-४॥

मन्त्रः २७-६

यत्समूलमाष्ट्रहेयुर्देक्षं न पुनराभक्षेत्र । मर्त्यः स्थिनमृत्युना द्वक्णाः कस्मान्यूलात्प्ररोहति ॥

परच्छेदः ।

यत्, समूलम्, श्रावृहेयुः, वृक्षम्, न, पुनः, श्राप्तत्रन्, मर्स्यः, स्वित्, मृत्युना, वृक्गाः, कस्मात्, मूलात्, प्रगेहति ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यत्=जो समूलम्=जइ सहित वृक्षम्=बृक्षको श्राबृहेयुः=नष्ट करदें तो पनः=फिर न=नहीं बह

श्राभवेत्=अत्यन्न होवे + परम्=परन्तु

प्टत्युना बृक्णः=मृत्यु करके छिन्न किया हुआ

> मत्र्यः≔पुरुष कस्मात्=किस मृतात्=मृत से प्रशेहति=उत्पन्न होता है स्वित्=यह मेरा प्रश्न है

भावार्थ ।

याज्ञबल्क्य कहते हैं कि, हे ब्राह्मग्री ! जो वृक्ष जड़ सहित नष्ट कर दिया जाता है फिर उससे नवीन बृक्ष उत्पन्न नहीं होता है तव श्राप बताइये यह मृत्यु करके छिन्न हुन्चा पुरुप किस मूज से उत्पन्न होता है ॥ २७-६ ॥

मन्त्रः २७-७

जात एव न जायते को न्वेनं जनयेत् पुनः । विज्ञानमानन्दं ब्रह्म रातिर्दातुः परायगं तिष्ठमानस्य तद्दिद इति ॥

इति नवमं ब्राह्मणम् ॥ ६॥

इति श्रीबृहदारएयकोपनिपदि तृतीयोध्यायः ॥ ३॥ पदच्छेदः ।

जातः, एव, न, जायते, कः, नु, एनम्, जनयेत्, पुनः, विज्ञानम्, श्चानन्दम्, ब्रह्म, रातिः, दातुः, परायग्यम्, तिष्ठमानस्य, तद्विदः, इति ॥

य

जातः = जो उत्पन्न हुआ है सः= वह फिर जह काटे जाने वाद प्रव=निःसंदेह न=नहीं जायंत= उत्पन्न होता है यु=तव यह मेरा प्रश्न है कि पन्म=इस स्तक पुरुष को पुनः=फिर कः=कौन उत्पन्न करेगा जब किसी बाइया ने उत्तर नहीं दिया तव याज्ञवहत्त्वय ने स्वयं निम्न प्रकार उत्तर दिया पराण्म=परमगित है विकामनस्य=ज्ञान में हत है	ान्वयः	पदार्थाः	भ्रन्वयः पदार्थाः
जाने बाद एव=निःसंदेह न=नहीं जायंत=उरपन्न होता है नु=तब यह मेरा प्रश्न है कि एनम्=इस स्तक पुरुष को पुनः=फिर कः=कौन उरपन्न करेगा जब किसी माझ्य ने उत्तर नहीं दिया तव याज्ञवरूक्य ने स्वयं निम्न प्रकार		_	चि ज्ञानम् ≛विज्ञानस्वरूप
प्व=निःसंदेह न=नहीं जायंत=उत्पन्न होता है न=तब यह मेरा प्रश्न है कि प्नम्=इस स्तक पुरुष को पुनः=फिर कः=कौन उत्पन्न करेगा जब किसी माझ्य ने उत्तर नहीं दिया तव याज्ञवरूक्य ने स्वयं निम्न प्रकार परायण्म्=परमगित है	•		भानन्द्रम्=भानन्दस्व रूप
न=नहीं यः=जी जायंत=उत्पन्न होता है तु=तब यह मेरा प्रश्न दातुः=हेनेवाले हैं यानी है कि यज्ञकर्ता हैं एनम्=इस स्तक पुरुष को यः=जो पुनः=फिर तिष्ठमानस्य=ज्ञान में दृ हैं कः=कौन च=ग्रीर तिरुद्धानस्य=ज्ञान में दृ हैं तिरुप्धानस्य=ज्ञान में दृ हैं विरुद्धानस्य=ज्ञान में द्व हैं विरुद्धानस्य=ज्ञान में दृ हैं विरुद्धानस्य=ज्ञान में दृ हैं विरुद्धानस्य=ज्ञानमें विरुद्धानस्य=ज्ञानमें विरुद्धानस्य=ज्ञानमें विरुद्धानस्य=ज्ञानस्य परायण्यम्=परमगित हैं	जाने बाद		·
न=नहां जायतं=उरपन्न होता है न=तब यह मरा प्रश्न है कि पनम्=इस स्तक पुरुष को पुनः=फिर कः=कौन उत्पन्न करेगा जब किसी बाइण ने उत्तर नहीं दिया तब याज्ञवरूनय ने स्वयं निम्न प्रकार पातः=घन के रातः=घन के यातुः=रेनेवाले हैं यानी यज्ञकर्ता हैं यः=जो विष्ठमानस्य=झान में हढ़ हैं व=और तिष्ठमानस्य=जान में हढ़ हैं वाले हैं उनका प्रसः=ब्रह्म परायणम्=परमगित है	एच=िन:संदेह		
जायत = उत्पन्न होता है गु=तब यह मेरा प्रश्न है कि पनम्=इस सृतक पुरुष को पुनः=फिर कः=कौन उत्पन्न करेगा जब किसी झाडाया ने उत्पर्न नहीं दिया तब याज्ञवरूक्य ने स्वयं निम्न प्रकार पीतिः=घन के पातिः=घन के याःचर्न के याः=जो याः=जो याः=जो विष्ठमानस्य=झान में दृढ़ हैं वाको हैं उनका झान्येत्=इस	न≕नहीं		•
है कि य्यज्ञकर्ता हैं पनम्=इस स्तक पुरुष को यः=जो पुनः=फिर तिष्ठमानस्य=ज्ञान में दद हैं कः=कौन च=भौर उत्पन्न करेगा जब तिद्धदः=जो अक्ष के जानने किसी बाइए ने उत्तर नहीं दिया जनयेत्= तव याज्ञवरुक्य ने स्वयं निम्न प्रकार परायसम्=परमगित है	• • •	ाता है	रातिः=धन के
है कि यज्ञकर्ता हैं पनम्=इस स्तक पुरुष को यः=जो पुनः=िकर तिष्ठमानस्य=शन में दढ़ हैं कः=कौन च=भौर उत्पन्न करेगा जब तिष्ठदः=जो ब्रह्म के जानने किसी बाह्मण ने वाले हैं उनका जनयेत्= तव याज्ञवल्लय ने स्वयं निम्न प्रकार परायणम्=परमगित है	न=तब यह	मेरा प्रश्न	द्यातुः≔रेनेवाले हैं यानी
पुनः=फिर तिष्ठमानस्य=ज्ञान में दृढ़ हैं कः=कौन च=भ्रोर ठत्पन्न करेगा जब तिष्ठदः=जो झुझ के जानने किसी झाझ्य ने झाले हैं उनका जनयेत्= र्रतर नहीं दिया झुझ=झुझ तब याज्ञवरुक्य ने स्वयं निम्न प्रकार परायसम्=परमगित है			यज्ञकर्ता हैं
पुनः=फिर तिष्ठमानस्य=ज्ञान में इद हैं कः=कौन च=भौर उत्पन्न करेगा जब तिद्धदः=जो ब्रह्म के जानने किसी बाह्म ने वाले हैं उनका जनयेत्= तव याज्ञवरूक्य ने स्वयं निम्न प्रकार परायसम्=परमगित है	एनम्=इस स्तव	पुरुष को	यः≕जो
कः = कौन च=भौर ्रत्यम्भ करेगा जब तिद्धिदः = जो म्रह्म के जानने किसी माद्याय ने वाजे हैं उनका उत्तर नहीं दिया म्रह्म = मह्म तव याज्ञवरूक्य ने मह्म = परायश्म = परा			तिष्ठमानस्य=ज्ञान में दद हैं
किसी बाह्य ने वाजे हैं उनका उत्तर नहीं दिया ब्रह्म=ब्रह्म तब याज्ञवरूक्य ने ब्रह्म=ब्रह्म स्वयं निम्न प्रकार परायसम्=परमगति है			च=भौर
उत्तर नहीं दिया जनयेत्= तव याज्ञवरूक्य ने प्रस=जहा स्वयं निम्न प्रकार परायण्म्=परमगित है	(उत्पन्न	करेगा जब	तद्धिदः≔जो ब्रह्म के जानने
जनयेत्= र् उत्तर नहीं दिया ब्रह्म=ब्रह्म तब याज्ञवल्क्य ने प्रायण्यम्=परमगति है र उत्तर दिया इति=ऐसा उत्तर दिया	जनयेत्= उत्तर नहीं दिया तब याज्ञवल्क्य ने स्वयं निम्न प्रकार	वाले हैं उनका	
्रस्वयं निम्न प्रकार परायण्यम्=परमगित है ८ उत्तर दिया इति=ऐसा उत्तर दिया		ब्रह्म=ब्रह्म	
उत्तर दिया इति=ऐसा उत्तर दिया		निम्न प्रकार	परायणम्=परमगति है

भाषार्थ ।

याज्ञवरस्य फिर पूळते हैं जो दृक्ष जड़से काटागया है वह फिर नहीं उत्पन्न होता है तब मृतक पुरुष कैसे उत्पन्न होगा यानी उसकी उत्पत्तिका कारण कौन हो सका है. जब किसी ब्राह्मण ने इसका उत्पत्तिका कारण कौन हो सका है. जब किसी ब्राह्मण ने इसका उत्पत्तिका कारण वाज्ञवरस्यने स्वतः कहा कि मरे हुये पुरुष की उत्पत्ति का कारण ज्ञानश्वरूप अधानन्दस्वरूप ब्रह्म है वह यज्ञ करने वालों का और ब्रह्मज्ञानियों का परम आश्रय है। २७-७॥

इति नवमं ब्राह्मग्राम् ॥ ६ ॥

इति श्रीबृहदारगयकोपनिपदि भाषानुवादे तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ ३ ॥

श्रीगगोशाय नमः ॥

ऋथ चतुर्थोध्यायः।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

जनको इ वैदेह त्रासांचक्रेऽथ इ याज्ञवल्क्य स्रावत्राज । तथ्ठ होवाच याज्ञवल्क्य किमर्थमचारीः पश्निच्छन्नएवन्तानिति । उभय-मेव सम्राडिति होवाच ॥

पदच्छेदः ।

जनकः, ह, बैदेहः, आसांचके, अध्य, ह, याज्ञवल्क्यः, आवन्नाज, तम्, ह, उवाच, याज्ञवल्क्य, किमर्थम्, अवारीः, पश्न्, इच्छन्, अगवन्तान्, इति, जभयम्, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यदा=जन ह=प्रसिद्ध वैदेहः≔विदेहाधिपति जनकः≕राजा जनक श्रासांचके=गदीपर वैटे थे श्रथ≔तव

ह=प्रसिद्धं चाझवरुक्यः=विद्वान् याज्ञवरूक्य श्रावझाज=चाते भये + जनकः=राजा जनक ने तम्=उन याज्ञवरुक्य से ह=स्पष्ट

उवाच=प्रश्न किया कि + भगवन्तः=हे पूज्य! भ्राप

किमर्थम्=किस अर्थ

त्वयः पदाधाः अचारीः≔त्राये हैं पश्ज्=पशुत्रों की + श्रथवा=त्रथवा अएवन्तान्=सृक्ष्म उपदेश देने के

श्चर्थ

इच्छन्≃इच्छा करते हुये + ऋचारीः≖माये हैं ह=तब

याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा कि

> सम्राट्=हे जनक ! उभयम्=दोनों के लिये

एव=निश्चय करके + श्रगमम्=श्राया हुं

भावार्थ ।

जब प्रसिद्ध विद्वान् विदेहपति राजा जनक गद्दी पर बैठे थे तब

प्रसिद्ध सर्व पूज्य विद्वान् याज्ञवल्क्य ध्राते भये, उनको देखकर खाँर उनका विधिवत् पूजन करके उनको खासन पर बैठाला, खाँर प्रसन्न सुख से बोले कि हे महाराज, याज्ञवल्क्य ! ध्राप किस निमित्त इस समय मेरे पास ध्राये हैं, क्या पशु धन की इच्छा करके ध्राये हैं, या ध्रत्यन्त सूक्ष्म गुह्य वस्तु के विचारार्थ ध्राये हैं, द्रार्थात् जो कुछ अन्य आचार्यों ने सुमको उपदेश किया है वह यथार्थ किया है छोर मेने उसको यथार्थ सममा है इसके जानने के लिये ध्राप पधार हैं, राजा के इस वचन को सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा मैं दोनों के ध्र्यं ध्राया हूं, अर्थात् पशुपहणार्थ और तत्त्वनिर्ण्यार्थ दोनों के लिये ध्राया हूं।। १।।

मन्त्रः २

यसे कश्चिदब्रवीत्तच्छृणवामेत्यब्रवीनमे जित्वा शैलिनिर्वाग्वे ब्रह्मेति यथा मातृमान्पितृमानाचार्यवान्यूपात्तथा तच्छेलिनिर्व्ववीन्द्वाग्वे ब्रह्मेत्यवद्तो हि किछं स्यादित्यब्रवीत्तु ते तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेब्रवीदित्येकपाद्वा एतत्सम्राहिति स वे नो ब्र्हि याज्ञवल्क्य । वागेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा प्रक्षेत्येनदुपासीत । का प्रज्ञता याज्ञवल्क्य । वागेव सम्राहिति होवाच । वाचा वे सम्राद् वन्तुः प्रज्ञायत ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोथर्वाङ्गिस्स इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः रलोकाः स्त्राययतुच्याख्यानानि व्याख्यानानीष्ट्यं हुतमाशितं पायितमयं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि वाचैव सम्राद् प्रज्ञायन्ते वाग्वे सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं वाग्वहाति सर्वाण्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते । हस्त्यृपभयः सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः । स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतेति ।।

पदच्छेदः ।

यत्, ते, कश्चित्, अप्रवीत्, तत्, शृः सावाम, इति, अप्रवीत्, मे, जित्वा, शैलिनिः, वाक्, वे, ब्रह्म, इति, यथा, मानुमार, पिनुमान्, आचार्यवाय, त्र्यात्, तथा, तत्, शेक्तिनः, अन्नवीत्, वाक्, वै, न्रक्ष, इति, अवदतः, हि, किम्, स्यात्, इति, अन्नवीत्, तु, ते, तस्य, आय-तनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अन्नवीत्, इति, एकपाद्, वा, एतत्, सम्नाद्, इति, सः, वै, नः, न्रूहि, याज्ञवत्क्य, वाक्, एव, आयतनम्, आकाराः, प्रतिष्ठा, प्रज्ञा, इति, एनत्, उपास्नीत्, का, प्रज्ञता, याज्ञवत्क्य, वाक्, एव, सम्नाद्, इति, ह, उवाच, वाचा, वै, सम्नाद्, वन्षुः, प्रज्ञायते, अ्रव्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथवाङ्गिरसः, इतिहासः, पुराण्म्, विद्या, उपानिपदः, रक्षोकाः, स्त्राण्, अनुव्याख्यानानि, व्याख्यानानि, इष्टम्, हतम्, आशितम्, पायितम्, अयम्, च, लोकः, परः, च, लोकः, सर्वाण्, च, मृतानि, वाचा, एव, सम्नाद्, प्रज्ञायन्ते, वाक्, वे, सम्नाद्, प्रमम्, न्रज्ञा, न, एनम्, वाक्, जहाति, सर्वाणि, एनम्, भृतानि, अभिक्षरन्ति, देवः, भृत्वा, देवाच, अपि, एति, यः, एवम्, विद्वान, एतत्, उपास्ते, हस्त्यृवभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवक्वयः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननुशिष्य, हरेत, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्ययः + जतक≂हे जनक ! श्रव्रवीत्=कहा है कि कश्चित्=जिस किसी ने वाकू=वाणी ते=तुम्हारे लिये बै=ही यत्=जो कुछ ब्रह्म≔ब्रह्म है श्रव्रवीत्=कहा है इति=इस पर तत्≕उसको + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने श्यग्वाम=में सुनना चाहता हूं + उवाच=कहा जनकः=जनक ने यथा=जैसे उवाच=उत्तर दिया कि मातृमान् पितृमान् = { माता, पिता श्रोर गुरु करके सुधि-श्राचायवान् } शै।लिनिः≔शैकिनिका पुत्र जित्या=जित्वा ने मे=मुभ से + शिष्याय≃श्रपने शिष्य के लिये

व्यात्=उपदेश करता है तथा=वैसेही श्रीतितः=शैविति ने इति=ऐसा अव्रवीत्=श्रापसे कहा है कि वाक्=वाणीही ब्रह्म=ब्रह्म है हि=क्योंकि अवद्तः=गूंगे पुरुष से किम्=क्या भर्थ स्यात्=निकल सक्रा है त्=परन्त<u>ु</u> तस्य=बद्य के श्चायतनम्≕श्राक्षय + च=श्रौर प्रतिष्टाम्=प्रतिष्ठा को तु=भी श्रव्रवीत्=उसने कहा है + जनकः=जनक ने +श्राह=उत्तर दिया म=मुक्तसे + सः=उसने न=नहीं अव्रवीत्=क्हा है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + याञ्चवत्क्यः=याज्ञवस्क्य ने + आह=कहा कि इति=तब + सम्राट्=हे सम्राट् ! वै=निस्पंदेह धतत्=यह उपदेश

एकपात्=एक चरखवाना हे + तस्मात्=इस निये तत्त्याज्यम्=वह त्याज्य है हि=क्यांकि

एतत्) उपासनम् (यह एक चरण एकम् (की उपासना है चरणम्)

इति=इस पर

+ जनकः=जनक ने

+ उवाच=कहा इति=यदि ऐसा है तो

याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! सः=वह श्राप

नः=मेरे लिये बृहि=ग्रायतन श्रीर

प्रतिष्टाको कहें + याझवल्क्यः=याझवल्क्य ने

+ श्राह=कहा कि

चाक्=वाणी एव=निश्चय करके

आयतनम्=शरीर है

+ च=श्रीर श्राकाशः=परमारमा

श्राकाराः=परमात्मा प्रतिष्ठा≔वाची का ब्राक्षय है इति=इस प्रकार

प्रज्ञा=नाना हुआ

पनत्=उस ब्रह्म की उपासीत=उपासना करे

+ जनकः≔जनक ने

+ पप्रच्छ=कहा कि

याञ्चयल्क्य=हे याज्ञवल्क्य!

पतस्य=इसका प्रज्ञता=शास्त्र का=कौन है + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच ह=जगब दिया कि समाद=हे जनक ! वाक्=वाणी प्य=िनश्चय करके प्रज्ञता=इसका शास्त्र है हि=क्योंकि सम्राट=हे राजन् ! वन्धुः=सब सम्बन्धी वै=िनस्संदेह वाचा=वाणी करके ही प्रशायते=जाने जाते हैं + च=ग्रौर **ऋ**ग्वेदः=ऋग्वेद यजुर्वेदः=यजुर्वेद सामवेदः=सामवेद श्रथवाङ्गिरसः=ग्रथर्वण्येद इतिहास:=इतिहास पुरागम्=पुराग विद्याः=पश्विद्या वृक्षविद्या उपनिपदः=ब्रह्मविद्या श्लोकाः=मन्त्र सूत्राणि=सृत्र श्रीर श्रनुव्याः { = उनके भाष्य ख्यानानि { व्याख्यानानि=छः प्रकार के व्याख्यान इष्टम्=यज्ञसम्बन्धी धर्म हुतम्=होमसम्बन्धी धर्भ आशितम्=अञ्चसम्बन्धी दान

पायितम=पान करने बोग्य जलदान श्चयम्=यह लोकः=बोक च=भौर पर:=पर लोकः=लोक + ख=ग्रीर सर्वाणि च=संपूर्ण भूतानि=प्राणी सम्राट्ट=हे जनक ! वाचा एव=वाणी करके ही प्रज्ञायन्ते=जाने जाते हैं सम्राट्=हे जनक ! वाक्=वाणी वै=ही परमम्=श्रेष्ठ ब्रह्म=त्रहा है + यथोक्क- } = जो जपर कहे हुये ब्रह्मवित् } प्रकार ब्रह्मवेत्ता है प्नम्=उसको वाक्=वाक्शास न=नहीं जहाति=स्यागता है च=श्रौर एनम्=उस ब्रह्मवेत्ता को सर्वाणि=सब भूतानि=प्राची श्रमिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं यः=जो कोई एवम्=इस प्रकार पतत्=इस ब्रह्म को

विद्वान्=जानता हुआ उपासते⇒उसकी उपासना करता है स्नः≃वह देवः=देवता भृत्वा=होकर देवान श्रापि=शरीर पात के बाद देवतायों कोही पति=प्राप्त होता है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सन कर वैदेह:=विदेहाधिशति जनक:=राजा जनक उवाच ह=बोले कि थाज्ञचल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य । ह्रस्त्रृषभम्=हाथी के ऐसे सांड सहित

सहस्रम्=एक हजार गौधों को टटामि=विद्या की दक्षिणा में में अर्पण करता हं इति=इसके जवाब में बाजवल्क्यः=याज्ञवल्क्य महाराजने ह=स्पष्ट

> उद्याच=कहा कि सम्राट्ट हे राजन ! मे=मेरे पिता=पिता

अमन्यत=उपदेश कर गये हैं कि

श्रान्य को भली-श्रननुशिष्य= श्रीर कृतार्थ किये न हरेत≖दक्षिया न बेना चाहिये

भागार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे जनक ! जिस किसी ने तुम्हारे किये उपदेश किया है उसको मैं सुनना चाहता हूं, इस पर जनक महा-राज ने जबाब दिया कि शिक्षिन ऋषि के पत्र जित्वा ने मुमासे कहा है कि वासीही ब्रह्म है, इस पर याज्ञ बरूक्त ने कहा कि जित्वा ऋषि ने ठीक कहा है, जैसे माता पिता गुरु करके सुशिक्षित पुरुष श्रपने शिष्य को उपदेश करता है वैसेही जित्वा ने आपसे कहा है, निस्संदेह वागाी ब्रह्म है, क्योंकि विना वागाी के पुरुष गूंगा कहलाता है उससे कोगों का क्या अर्थ निकल सका है परन्त आप यह तो बताइये कि जित्वाने ब्रह्मके आश्रय श्रीर प्रतिष्ठा को भी बताया है, जनक महाराज ने उत्तर दिया कि इसका उपदेश तो मुम्मसे नहीं किया है, तब याज्ञ-वल्क्य ने कहा हे सम्राट्! यह उपदेश एक चरण के ब्रह्मका है, इस

क्रिये यह त्यागने योग्य है क्योंकि एक चरना की उपासना निष्फल है. यह सनकर जनक ने कहा कि यदि यह ऐसा है तो आप कृपा करके बताइये कि वासी की आयतन श्रीर प्रतिष्टा क्या है. इसपर याज्ञवल्क्य ने कहा हे राजन ! वाणीही वाणी का आश्रय है और परमात्मा वाणी की प्रतिष्ठा है, इसप्रकार जानता हुआ वास्त्रीरूपी ब्रह्मकी उपासना करे. जनक राजाने कहा, हे याज्ञवल्क्य ! वासी जानने के लिये कीन शास्त्र है, याज्ञवह्नय महाराजने उत्तर दियाः हे जनक ! वाखीही इसका शास्त्र है, क्योंकि हे राजन् ! वागाी करकेही बंधु, मित्र, अपने पराये, सव जाने जाते हैं, वाग्गी करकेही भाग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, श्रथर्वगा-वेद, इतिहास, पुगरा, प्युविद्या, वृक्षविद्या, भूगोलविद्या, श्राध्यातम-विद्या. इलोकवद्ध काव्य, अतिसंक्षिप्त सारवाले सूत्र आदि सब जाने जाते हैं, स्रोर विविवयागसम्बन्धी धर्म, स्रत्नदान धर्म, पृथ्वीक्षोक, सूर्यलोक जो विद्यमान हैं, श्रीर उन लोकों के श्रन्दर श्राकाशादि महा-भूत, ऋौर उन महाभूतों में जो प्राणी ऋादि सृष्टि स्थित है, हे राजन ! सव वाणी करकेही जानेजाते हैं, हे सम्राट् ! वाणीही परमब्रह्म है, जो कोई उपासक इसप्रकार जानते हुये वास्मीक्ष्पी शास्त्र का ध्यान करता है, उसको वाक्षशास्त्र नहीं त्यागता है, उस उपासक की सब प्राग्री रक्षा करते हैं, भ्रीर वह उपासक अपूर्ववस्तुओं को पाता है, भ्रीर फिर देवता होकर शरीर त्यागने के बाद देवरूप को प्राप्त होता है, ऐसा सुनकर विदेहपति राजा जनक बोले, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! हाथीके समान एक सांड सहित हजार गौत्रों को विद्या की दक्षिणा में अर्पण करताहं. इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन ! मेरे पिता का उपदेश है कि शिष्यको भलीप्रकार बोध कराये स्प्रौर कृतार्थ किये विना दक्षिगा न लेना चाहिये ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

यदेव ते कश्चिदव्रवीत्तच्छृगावामेत्यव्रवीन्म उदङ्कः शौल्वायनः

पाणो वै ब्रह्मेति यथा मातृपान िवृत्यानाचार्यवान्त्र्यात्तथा तच्छीरवायनोत्रत्रीत् पाणो वै ब्रह्मेत्यपाणतो हि किछ स्पादित्यव्रतीतु
ते तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेव्रश्नीदित्येकपाद्वा एतत्सम्राहिति स वै
नो बूहि याज्ञवर्ण्य पाण एवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा श्रियमित्येतदुपासीत का मियता याज्ञवर्ण्य पाण एव सम्राहिति होवाच पाणस्य
वै सम्राद् कामायायाज्यं याजयत्यप्रतिमृह्णस्य प्रतिमृह्णात्यिष
तत्र वपाणक्षं भवति यां दिशमेति पाणस्यैव सम्राद्कामाय पाणो वै
सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं पाणो जहाति सर्वाएयेनं भूतान्यभिक्षरन्ति
देवो देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हर्स्त्यूषभछ सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवर्ण्यः पिता मेमन्यत
नाननुशिष्य हरेतेति ॥

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अप्रवीत्, तत्, श्र्यावाम, इति, अप्रवीत्, मे, उदङ्कः, शौल्वायनः, प्राणः, वै, ब्रह्म, इति, यथा, मातृमान्, पितृ-मान्, आचार्यवान्, ब्रूयात्, तथा, तत्, शौल्वायनः, अप्रवीत्, प्राणः, वै, ब्रह्म, इति, अप्रवात्, हि, किम्, स्यात्, इति, अप्रवीत्, प्राणः, वे, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अप्रवीत्, इति, एकपात्, वे, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, ब्रूहि, याझवल्क्य, प्राणः, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्ठा, प्रियम्, इति, एतत्, उपासीत, का, प्रियता, याझवल्क्य, प्राणः, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, प्राणस्य, वै, सम्राट्, कामाय, अयाज्यम्, याजयति, अप्रतिगृह्यस्य, प्रतिगृह्वाति, अपि, तत्र, वधाशङ्कम्, भवति, याम्, दिशम्, एति, प्राणस्य, एव, सम्राट्कामाय, प्राणः, वै, सम्राट्, परमम्, ब्रह्म, न, एतम्, प्राणः, जहाति, सर्वाणि, एनम्, भूतानि, अभिक्षरन्ति, देवः, देवान्, अपि, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यूवभम्, सङ्क्षम्, ददामि,

इति, ह, उवाच, जनकः, वैदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननुशिष्य, हरेत, इति ॥

अन्वयः पट

पदार्थाः । स्रन्वयः

पदार्थाः

सम्राट्=हेराजराजेश्वरजनक! + भवान्=धाप

+श्रोतेकाचा- । अनेक श्राचायों के यसेवी क्षेत्राकरनेवालेहुयहैं

> + ग्रतः≔इसिलये यत्≕नो कुछ कित्चत्=किसी श्राचार्य ने ते≕त्रापके लिये

श्रव्रचीत्=उपदेश किया है तत्=उसको

श्रहम्=में श्रुख्याम=युनना चाहता हूं इति=ऐसा

+ पृच्छामि=मेरा प्रश्न है

+ सम्राट्=जनक ने

+ स्राह=जवाब दिया कि

+ याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! शोल्बायनः=शुल्बका पुत्र

> उदङ्का≔उदङ्क न मे≔मुक्तसे

अव्रवीत्=कहा है कि वै=निश्चय करके

> प्राणः=प्राण वै=ही

ब्रह्म=ब्रह्म है इति=इसपर

+ याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=कहा कि

यथा=जैसे

मात्मान् पितृमान् ज्ञाचार्यवान्

> + शिष्याय=श्रपने शिष्य से वृयात्=कहे

तथा=तैसेही शौल्वायनः=शुल्बके पुत्र उदद्वने तत्=उस बच्च को

अवित्=आपसे कहा है कि

वै=निस्संदेह प्राणः=प्राण

ब्रह्म=ब्रह्म है हि=क्योंकि

श्रमाणतः=माणरहित पुरुष से

किम्≔क्या लाभ स्यात्≔होसक्रा है

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ पप्रच्छ=फिर पूछा कि

तु=वया

तस्य=उस ब्रह्म के आयतनम्=भाश्रय भौर

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को भी अत्रवीत्=उदह ने कहा है

+ सम्राट्र=राजा ने

+ आह=कहा कि

मे=मुक्तसे न=नहीं

श्रव्रवीत्=कहा है इति=इसपर + याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य + आह≔बोले कि सम्राट=हे जनक ! एतत=यह प्रायात्मक बह्म की उपासना एकपात्=एक चरणवाली + अब्रवीत्=श्रापसे कही है इति≃इसपर स्म:=जनकने + आह=कहा नः=हमारे लिये याञ्चवत्रय=हे ऋषे, याज्ञवत्क्य ! वृहि=उस ब्रह्मको भ्रापही +याञ्चवत्कयः=याज्ञवत्क्य ने + आह=कहा प्राणः=प्राण पव=ही श्रायतनम्=प्राण का भ्राभय है प्रतिष्ठाः=प्रतिष्ठा आकाशः=बद्य है एतत्=इस प्रायहर प्रियम्=त्रियको इति=ऐसा मानकर उपासीत=उपासना करे + पुनः≕फिर + जनकः=जनकने + आह=पृद्धा कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! प्रियता⇒िशय

का=स्या है + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उद्याच=जवाब दिया कि समाट=हे राजन् ! प्राणः एव=प्राणही द्यै=निश्चय करके + प्रियता=प्रिय है + हि=क्योंकि सम्राट्ट हे सम्राट ! प्राणस्य=प्राणके ही कामाय=ग्रर्थ अयाज्यम्=पतितादिकों से भी याजयति=यज्ञ कराते हैं अप्रतिगृह्यस्य=श्रपति गृह्य पुरुष से प्रतिगृह्णाति=दान जेते हैं श्चवि=धीर याम्=जिस दिशम्=दिशा में वधाशङ्कम्=चोरादि करके अपने सस्ते का भय भवति=होता है तत्र=उस दिशामें भी सम्राटकामाय=सर्कारी काम के बिये प्राण्स्य एव=श्रपने प्राण् के ही वियत्वे=निमित्त पति=जाते हैं + श्रतः≔इसीसे सम्राट=हे राजन ! प्रागः=प्राग्रही वै=निश्चय करके **परमम्**=परम ब्रह्म= प्रेयवस्त् है

वेदेहः=वैदह एवम्=इसमकार यः=जो जनकः=जनक विद्वान्=विद्वान् उघाच=बोले कि पतत्=इस बद्यकी उपास्ते=उपासना करता है + याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! हस्त्यृषभम्=सहित एक सांद पनम्≔उसको प्रागः=प्राग डाथी के समान स=नहीं सहस्रम्=सहस्र गौद्रों को जहाति=त्यागता है ददामि=ग्रापको देता हं एनम्=उसकी + तदा=तब सर्वाणि=सब ह=प्रसिद्ध भूतानि=प्राणी सः=वह श्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य + च=श्रीर उवाच ह=बोले कि + सः=वह म=हमारे देवः=देवरूप पिता=पिता + भूत्वा=होकर इति=ऐसा देवान श्रापि=मरनेबाद देवताश्री श्रामन्यत=डपदेश करगये हैं कि को ही अनुत्रीराज्य=शिष्यको बोध कराये पति=पाप्त होता है + एतत्=यह न हरेत=नहीं धन खेना चाहिये + श्रुत्वा=सुनकर

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज द्वितीय वार राजा जनक से पूछते हैं, हे सम्राट्ट ! जो कुछ आपसे किसी ने कहा है उसको में सुनना चाहता हूं, इसका उत्तर जनक महाराज देते हैं. हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! शुल्य के पुत्र उदङ्क ने सुम्मसे कहा है कि प्राग्मही ब्रह्म है, ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा कि हे राजन्! आपसे उदङ्क अनुषि ने वैसेही कहा है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य के लिये कहना है, निस्संदेह प्राग्मही ब्रह्म है, क्योंकि प्राग्मरहित

पुरुष से क्या लाभ दोसक्ता है, याज्ञवहक्य महाराज ने फिर पुछा कि क्या उदहू आचार्य ने आपको प्रामा के आयतन और प्रतिष्ठा को बताया है, इस पर राजा ने कहा कि उन्होंने मुक्ससे नहीं कहा, तब याज्ञवल्क्य महाराज वोले हे राजा जनक ! ये जो प्राग्रात्मक ब्रह्मकी उपासना है, वह केवल एक चर्यावाली है, इस पर जनक महाराज ने कहा कि, हे हमारे पज्य, आचार्य ! आपही कृपा करके ब्रह्म का उपदेश दें, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा, प्रागाही प्रागा का श्राश्रय है, श्रीर प्रतिष्ठा ब्रह्म है, इस प्रायारूपको प्रिय मान कर इसके गुर्गों का ध्यान करे, तब जनक महाराज ने पृछा, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! प्रिय क्या है, याज्ञवल्क्य महाराज ने उत्तर दिया प्रागाही प्रिय है, क्यों कि प्राण के ही अपर्थ पतित आदिकों से ही लोक यज्ञ कराते हैं, श्रीर श्राप्रतिगृह्य पुरुष से दान लेते हैं, श्रीर जिस दिशा में चौरादिकों करके मारे जाने का भय होता है उस दिशा में भी सर्कारी काम के लिये प्राणा के ही निमित्त लोग जाते हैं इसी कारणा है राजन ! प्रागाही निश्चय करके परमप्रिय वस्त है, हे राजा जनक ! इस प्रकार जानता हुआ जो विद्वान् प्राग्गात्मक ब्रह्मकी उपासना करता है उसको प्रागा नहीं त्यागता है, यानी पूर्ण आयुतक जीता रहता है, और उसकी सब प्रांगी रक्षा करते हैं, श्रीर वह देवरूप होकर मरने के पीछे देवताओं को ही प्राप्त होता है, यह सुनकर वैदेह राजा जनक बोले, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! सहस्र गौध्यों को, सहित एक सांड हाथी के समान में आपको ब्रह्मविद्या की दक्षिगा में देता हूं, तब वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि हे राजा जनक ! हमारे पिता का उपदेश है कि शिष्य से विना बोध कराये हुये धन न जेना चाहिये॥ ३॥

मन्त्रः ४

यदेव ते कश्चिदब्रवीत्तच्छ्रणवामेत्यब्रवीनमे वर्कुर्वार्ष्णश्चश्चवै

ब्रह्मोति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान् ब्रूयात्तथा तद्वाष्णों ब्रवी-च्रह्में ब्रह्मेत्यपश्यतो हि किछं स्यादित्यब्रवीचु ते तस्यायतनं मतिष्ठां न मेब्रवीदित्येकपादा एतत्सद्यादिति स वै नो ब्रह्मे याक-वल्क्य च्रुप्तेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा सत्यमित्येनदुपासीत का सत्यता याज्ञवल्क्य च्रुप्तेव सम्राद्धिति होवाच च्रुपा वै सम्राट् पश्यन्तमाहुरद्राभीतिति स प्राहाद्राक्षमिति तत्सत्यं भवति च्रुप्तें सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं च्रुप्तिहाति सर्वाष्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्यति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्युपभछं सहस्रं ददा-मीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतिति ॥

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, श्रव्रवीत्, तत्, शृरावाम, इति, श्रव्रवीत्, मे, वर्द्धः, वार्तााः, चक्षः, वे, व्रह्म, इति, यथा, मातृमान्, पितृमान्, श्राचार्यवान्, व्रूयात्, तथा, तत्, वार्पाः, श्रव्रवीत्, चक्षुः, वे, व्रह्म, इति, श्रव्रवीत्, त्रूपत्, तथा, तत्, वार्पाः, श्रव्रवीत्, तु, ते, तस्य, श्राय-तनम्, प्रतिष्ठाम, न, मे, श्रव्रवीत, इति, एकपात्, वे, एतत्, सम्राद्, इति, सः, वे, नः, व्रूहि, याज्ञवल्वय, चक्षुः, एव, श्रायतनम्, श्राकाशः, प्रतिष्ठा, सत्यम्, इति, एतत्, उपासीत, का, सत्यता, याज्ञवल्वय, चक्षुः, एव, सम्राद्, इति, ह, उवाच, चक्षुपा, वे, सम्राद्, परयन्तम्, श्राहुः, श्रद्धाक्षीः, इति, सः, श्राह, श्रद्धाक्षम्, इति, तत्, सत्यम्, भवति, चक्षुः, वे, सम्राद्, परमम्, व्रह्म, न, एनम्, चक्षुः, जहाति, सर्वािग्, एनम्, भृतािन, श्रमिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवान्, श्रपि, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यृपमम्, सहस्त्रम्,ददािम, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, श्रमन्यत, न, श्रन्तुशिष्य, हरेत, इति ॥

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

याज्ञधलकयः=बाज्ञवल्क्य ने पप्रचछु=जनक से पृद्धा कि यत्=जो कुछ कश्चित्=किसी म्राचार्थ ने ते=भाप से अव्रवीत्=कहा है तत्=उसको श्युणवाम=में सुनना चाहता हूं + जनकः=जनक ने + आह=कहा वार्ष्णः=बृष्णाचार्यं के पुत्र बर्कुः=बर्कु श्राचार्य न मे=मुक्तसे श्रव्रवीत्=कहा है कि चशुः≔नेत्र वै=ही ब्रह्म=ब्रह्म है इति=इस पर याञ्चयस्यः=याज्ञवस्क्य ने उवाच=कहा यथा=जैसे शिष्याय=शिष्य के लिये मात्मान्) माता, पिता, गुरु पितृमान् } =करके सुशिक्षित श्राचार्यवान्) पुरुष

मृयात्=उपदेश करता है तथा=तैसेही वार्ष्यः=वर्कुं ने अन्नवीत्=ज्ञापसे कहा कि तस्=वह नक्ष=मञ्ज

चभुः=नेत्र वै=ही है हि=क्योंकि अपश्यतः=नेत्रहीन पुरुष को किम्=क्या स्यात्=लाभ होसका है + याञ्चयल्क्यः=याज्ञवल्क्य + पुनः≕फिर + पप्रच्छ=पृष्ठते भये कि ते=श्रापमे तस्य=उस बहा के श्चायतनम्=श्राश्रय को + च=ग्रौर प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को अववीत्=बर्कुने कहा है + जनकः=जनक ने

न=नहीं श्रायवीत्=कहा है + याज्ञवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने + श्राह=कहा सम्राट्=हे जनक ! एतत्=यह ब्रह्मकी उपास ना च=निस्संदेह

+ श्राह=उत्तर दिया कि

मे≃मुक्त से

एकपात्=एक चरखवाली है इति=इस पर + जनकः=जनक ने + झाह=कहा

याज्ञचल्क्य≔हे याज्ञवक्स्य ! सः=प्रसिद्ध + त्वम्=श्राप नः=इमसे

+ तत्⇒उस ब्रद्ध को ब्र्हि=उपदेश करो + याज्ञचल्क्यः≕याज्ञवल्क्य ने स्राह≕कहा कि

चञ्चः≔चक्षु इत्द्रिय का एव≕निश्चय करके

द्यायतनम्=चक्षु इन्द्रिय गोलक द्यायतन है

श्चाकाशः≔श्रीर बद्ध प्रतिष्ठाः=प्रतिष्ठा है इति=इस प्रकार

पनत्=इस चक्षु ब्रह्म को सत्यम्=सत्य + मत्या=मानकर

उपासीत=डपासना करे + जनकः=जनक

+ श्राह=बोते कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

सत्यता=सत्य का=क्या है

+ याञ्चवत्क्यः=याज्ञवरुक्य ने

+ उवाच=कहा सम्राट्र=हे जनक !

चक्षुः≔नेत्र एव≔ही

+ सत्यम्=सत्य है + हि=क्योंकि

+ ।ह≕क्याक सम्राट्=हे जनक !

चक्षुषा=नेत्र करके ही

पश्यन्तम्=देखनेवाके पुरुष से

आहुः≔लोग पूछते हैं कि

+ किम्=क्या

+ त्वम्=तुमने श्रद्राक्षीः=देखा है

इति=इस पर सः≔वह द्रष्टा

श्राह=कहता है कि हौ

+ ग्रहम्=मैंने अद्राक्षम्=देखा है इति=तबही

तत्=उसका कथन

सत्यम्=सच भवति=समस

भवति=सममा जाता है सम्राट्=हे राजन् !

यः≕जो विद्वान्-विद्वान्

एवम्=इस प्रकार एतत्=इस ब्रह्म की

उपास्ते=उपासना करता है कि

चक्षुः=नेत्रही परमम्=परम

> ब्रह्म=ब्रह्म है एनम्=उस ब्रह्मवेत्ता को

चक्षुः=नेत्र

न=नहीं जहाति=स्यागता है

एनम्≔इस ब्रह्मवेत्रा को

सर्वागि=सब भूतानि=प्रागी

ग्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं + च=भौर

सः≔वह

देवः=देवता
+ भूत्वा=होकर
देवान्=देवताओं को
श्राप्येति=प्राप्त होताहै
हति=ऐसा
+ श्रुरवा=स्व कर
चेदेहः=विदेहपति
जनकः=जनक ने
उवाच=कहा
हह्त्यूषभम्=हाथी के समान एक
सांद्र सहित
सहस्रम्=एक हजार गौओं को
+ त्वाम्=आपको

इदामि=दक्षिणा में देता हूं
ह=तव
सः=वइ
याइवल्क्यः=याइवल्क्य
उवाच=वोले कि
मे=मेरे
पिता=पिता
ऋमन्यत=स्राज्ञा दे खुके हैं कि
+ शिष्यम्=शिष्य को
झानजुशिष्य=वोष कराये विना
न हरेत=दक्षिणा नहीं लेना
वाहिशे

भावार्थ

याझवहन्य महाराज नृतीयवार पूळते हैं कि हे राजा जनक ! औ

फुछ आपसे किसी ने कहा है उसकी में सुनना चाहता हूं, जनक
महाराज कहते हैं कि, वृज्याचार्य के पुत्र वर्जुनामक आचार्य ने सुम्को
उपदेश किया है कि नेत्रही बहा है, इस पर याझवहन्य महाराज कहते
हैं कि बर्कु आचार्य ने वैसेही आपको उपदेश किया है जैसे कोई पुरुष
माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य के लिये
उपदेश देता है, निःसंदेह नेत्रही ब्रह्म है, क्योंकि चश्रुहीन पुरुष को
क्या लाम होसक्ता है, किर याझवहन्य महाराज पूछते हैं कि, हे राजा
जनक ! क्या आपको बर्कु आचार्य ने ब्रह्म के आयतन और प्रतिष्ठा
को भी बताया है ? इस पर जनक राजा ने उत्तर दिया कि यह तो
सुमको नहीं बताया है, इस पर याझवहन्य महाराज कहते हैं कि,
हे सम्राद् ! यह उपासना एक चरण की है, अर्थात् तीन चरणों से
हीन है, इसलिये निष्फल है, तब जनक महाराज ने कहा है हमारे
पूज्य, याझवनन्य, महाराज ! आपही हमको ब्रह्मकी उपासना का

उपदेश करें, तब याज्ञबल्क्य महाराज ने कहा, हे जनक ! चक्षइन्द्रिय का चक्षगोलकही आयतन यानी शरीर है, और अन्त में ब्रह्मही इसका आश्रय है, इस चक्षुरात्मक प्रिय वस्तु को सत्य मानकर इसके गुर्गों का ध्यान करे. इस पर जनक ने कहा, हे याज्ञबल्क्य, महाराज ! इसकी सत्यता क्या है, तब याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि, हे जनक ! चक्ष इन्द्रिय की सत्यता चक्षही है, क्योंकि जब एक द्रष्टा और एक श्रोता विवाद करते हुये किसी वस्त के निर्णय के लिये मध्यस्थ के पास जाते हैं, तो जिसने नेत्र से देखा है उससे वह मध्यस्थ पूज्रता है कि क्या तूने अपने नेत्रों से देखा है, इस पर अगर वह कहता है कि हां मैंने अपनी आंखों से देखा है तब उसका वाक्य सत्य माना जाता है, क्योंकि आंखों से देखी हुई वस्तु में व्यभिचार नहीं होसक्ता है, श्रीर जो यह कहता है कि भैंने नेश्रों से नहीं देखा है, पर कानों से सुना है तो उसकी बात ठीक नहीं समभी जाती है, क्योंकि इसमें संभव है कि वह असत्य हो, इस कारण चक्षुही सत्य है, श्रीर उसकी सत्य मानकर उसके गुर्णों का ध्यान चक्षुरात्मक में करे, हे राजन ! चक्षही परम आदरस्तीय प्रिय वस्तु है, जो विद्वान इस प्रकार जानता हम्रा नेवात्मक ब्रह्मकी उपासना करता है तो उस ब्रह्मवेत्ता को नेव नहीं त्यागता है यानी वह कभी श्रम्धा नहीं होता है, उसकी रक्षा सब प्रांगी करते हैं, वह देवता होकर देवताओं को प्राप्त होता है. ऐसा सुनकर विदेहपति राजा अनक ने कहा में एक हजार गौधों को हस्ति तुल्य सांड सहित श्रापको दक्षिगा में देता हूं, तब वह याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि भेरे पिता की आजा है कि शिष्य से विना उसकी बोध कराये दक्षिगा न लेना चाहिये ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

यदेव ते कश्चिदब्रवीत्तच्छ्रग्गवामेत्यव्रवीन्मे गर्दभीविषीतो भार-द्वाजः श्रोत्रं वै ब्रह्मोति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान्द्र्यात्तथा तद्भारद्वाजोब्रवीच्ब्रोतं वे ब्रह्मेत्य शृएवतो हि किछ स्यादित्यब्रवीचु ने तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेब्रवीदित्येकपादा एतत्सप्राहिति स वे नो बृहि याइवल्कय श्रोत्रमेवायतनपाकाशः प्रतिष्ठानन्त इत्येनदुपासीत कानन्तता याइवल्क्य दिश एव सम्राहिति होवाच तस्माद्दे सम्राहिप यां कां च दिशं गच्छित नैवास्या अन्तं गच्छित्यनन्तता हि दिशो वे सप्राद् श्रोत्रछे श्रोत्रं वे सप्राद परमं ब्रह्म नैनछं श्रोत्रं जहाति सर्वाएयेनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवान्ययेति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यूषभं सहस्रं ददामीति होवाच जनको वेदेहः स होवाच याइवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतेति।।

परच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, श्रव्रवीत्, तत्, श्र्यावाम, इति, श्रव्रवीत्, मे, गर्दभीविपीतः, भारद्वाजः, श्रोत्रम्, वे, ब्रह्म, इति, यथा, मातृमान्, पितृमान्, श्राचार्यवान्, ब्रूयात्, तथा, तत्, भारद्वाजः, श्रव्रवीत्, श्रोत्रम्, वे, ब्रह्म, इति, श्रश्र्यवतः, हि, किम्, स्यात्, इति, श्रव्रवीत्, वु, ते, तस्य, श्रायतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, श्रव्रवीत्, इति, एकपाद्, वे, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, ब्रूहि, याज्ञवल्क्य, श्रोत्रम्, एव, श्रायतनम्, श्राकाशः, प्रतिष्ठा, श्रन्तनः, इति, एनत्, उपासीत, का, श्रन्ततता, याज्ञवक्व्य, दिशः, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, तस्मात्, वे, सम्राट्, श्रपि, याम्, काम्, च, दिशम्, गच्छति, न, एव, श्रस्याः, श्रन्तम्, गच्छति, श्रनन्तताः, हि, दिशः, दिशः, वे, सम्राट्, श्रोत्रम्, श्रोत्रम्, वे, सम्राट्, प्रमम्, ब्रह्म, न, एनम्, श्रोत्रम्, जहाति, सर्वाणि, एनम्, भूतानि, श्रभिक्षरन्ति, देवः, म्त्वा, देवान्, श्रपि, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्युपभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञद्वन्यः, पिता, मे, श्रवन्यत, न, श्रन्तशिष्ठा, हरेत, इति ॥

पदार्थाः

द्यस्वयः + राजन्=हे जनक !

यस्⊐जो कुछ

कश्चित्=िकसी बाचार्व ने ते=ग्रापसे

ग्रव्रवीत्=कहा है तत्=उसके।

श्रृगावाम=में सुनना चाहता हूं इति=इस पर

+ जनकः=राजा जनक मे + ग्राह⊐कहा कि

भारद्वाजः=भारद्वाज गोत्रवाला

गर्दर्भाविपीतः=गर्दभीविपीत श्चाचार्य मे

मे=मुक्स

श्रव्रवीत्=कहा कि

ओत्रम्=भोत्र

ਹੈ=ਗੀ

ब्रह्म=बह्म है इति=इस पर

+ याञ्चयत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने

+ उवाच=कहा कि यथा≕जैसे

मातुमान्) माता, पिता, गुरु पितृमान् > =करके सुशिक्षित झाचार्यवान्) पुरुष

+ शिष्याय=भपने शिष्य प्रति ब्र्यास्=उपदेश करता है तथा=वैसेडी

तत्=उस बद्य को

भारद्वाजः=भारद्वानगोत्रवाता गर्दभीविपीत ने

ग्रन्वयः

पढार्थाः

अब्रवीत्=म्रापसे कहा है कि श्रोत्रम्=श्रोत

ਕੈ=ਵੀ

हि=क्योंकि

श्चश्यग्वतः=न सुननेवाले पुरुषसे

किम्=क्या लाभ स्यात्=होसका है

इति=इस पर

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=पृद्धा कि

+ राजन्=हे जनक !

तु=क्या

ते=तुमसे

तस्य=उस बद्य के आयतनम्=धाश्रय को

प्रतिष्ठाम्=भौर प्रतिष्ठा को

श्रव्रवीत्=भारद्वाज ने कहा है

+ जनकः=जनक ने

+ आह=उत्तर दिया

+ याझवल्क्य=हे याजवल्क्य !

मे⇒मुकसे स=नहीं

अव्रवीत्=कहा है

इति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह≕कहा

सम्राट्ट=हे जनक !

एतत्=यइ ब्रह्मकी उपासना एकपात्=एक चरण वाली है

इति=इस पर

+ जनकः=जनक ने + आह=कहा कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! स्यः=प्रसिख + त्वम्=भाप नः≔हससे ब्रहि=ब्रह्मके ग्रायतन और प्रतिष्ठा को उपदेश करें + याझवल्क्यः=याज्ञवक्क्य ने + आह=कहा श्रोत्रम्=श्रोत्र इन्द्रिय एव=ही श्चायतनम्≔श्राश्रय है श्चाकाशः=बह्य त्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा है एनत्=यह श्रोत्ररूप ब्रह्म=ब्रह्म अनन्तः=अनन्त है इति=ऐसा मत्वा=मानकर उपासीत=उपासना करे + जनकः=राजा जनक ने + आह=कहा याञ्चवलक्य≔हे याज्ञवस्क्य ! अनन्तता=धनन्तता का=क्या है याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया सम्राट्=हे राजन् ! दिश:=दिशा पच≕ही अनन्तता=भनन्तता है

तस्मात्=इसीसे सम्राट्=हे राजन् ! याम्=जिस काम्=किसी दिशम्=दिशाको गच्छति=चादमी जाता है श्चस्याः=उस दिशा के अन्तम्=धन्त को न पच≔नहीं गच्छति=पहुँचता है हि=च्योंकि दिशः=दिशा अनन्ताः=धनन्त हैं सम्राट्ट=हे जनक ! दिश:=दिशा श्रोत्रम्=कर्य हैं सम्राट्=हे राजन् ! श्रोत्रम्=कर्ण ही परमम्=परम ब्रह्म=बद्ध है इति=ऐसे एतम्=बद्यवेत्ता को श्रोत्रम्≕र्ग न=नहीं जहाति≕यागता है एनम्=इस ब्रह्मवेत्ता को सर्वाणि=सब भूतानि=पाणी श्राभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं च=घौर यः=जो विद्वान्=विद्वान्

प्रवम्=कहे हुये प्रकार
प्रतन्=इस ब्रह्मकी
उपास्ते=उपासना करता है
सः=वह
देवः=देवता
भूत्वा=होकर
दवान्=देवताश्रों को
श्रापे=ही मरने बाद
प्रति=प्राप्त होता है
वैदेहः=विदेहपति
जनकः=जनक ने
हति=ऐसा श्रान्
श्रुत्वा=सनकर न हो

हस्त्यृषभम्=हाथी के समान एक
वेज सहित
सहस्रम्=एक हजार गौकों को
दश्मि=दक्षिया में भापको
देता हूं
याझवत्क्यः=याज्ञवल्य ने
उवाच=कहा कि
मे=मेरे
पिता=पिता
ग्रमन्यत=श्राज्ञा रेगये हैं कि
शिष्यम्=शिष्य को
श्रान्यशिष्य कराये विना
न हरेत हति=दक्षिया नहीं लेना

भावाथे।

याझवल्कय महाराज राजा जनक से फिर पूछते हैं कि, जिल किसी आचार्य ने आपसे जो कुछ कहा है उसको में सुनना चाहता हूं, इस पर जनक महाराज ने कहा कि, भारद्वाज गोत्रवाले गर्दभीविपीत आचार्य ने सुमसे कहा है कि श्रोत्रही ब्रह्म है, तब याझवल्क्य महाराज ने कहा कि गर्दभीविपीत आचार्य ने वैसेही प्रेम के साथ आपको उपदेश किया है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य प्रति उपदेश करता है, हे राजा जनक ! निस्सन्देह श्रोत्र इन्द्रिय ब्रह्म है, क्योंकि न सुननेशले पुरुष को क्या लाभ होसका है, फिर याझवल्क्य महाराज पूछते हैं कि हे जनक ! क्या तुम से गर्दभीविपीत आचार्य ने श्रोत्रात्मक ब्रह्मकी उपासना का आयतन और प्रतिष्ठा भी कही है, इसके उत्तर में जनक महाराज कहते हैं कि, हे याझवल्क्य, महाराज ! उन्होंने मुमसे यह नहीं कहा है, इस पर याझवल्क्य ने कहा यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणावाली

है, तब जनक महाराज ने कहा कि आप हमारे पुष्य आचार्य हैं, आप कृपा करके श्रोत्रश्रह्म के स्नायतन स्त्रीर प्रतिष्ठा का उपदेश देवें. तव यालवल्क्य महाराज ने कहा कि श्रोत्र इन्द्रिय का स्नायतन श्रोत्र इन्द्रियही है, ख्रीर परमात्मा उसका आश्रय है इस श्रीत्र ब्रह्मको अनन्त मान कर उपासना करे, जनक महाराज ने पूछा कि इसकी अपन-न्तता क्या है, याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे राजन ! इसकी अनन्तता दिशा हैं, क्योंकि जो कोई जिस किसी देश के जाता है उस देश का अन्त नहीं पाता है, इस जिये दिशायें अनन्त हैं, हे जनक ! दिशा श्रीय है, श्रीर श्रीत परम ब्रह्म है, ऐसा जो जानता है उस ब्रह्मवेत्ता को श्रोत्र नहीं त्यागता है, उस ब्रह्मवेत्ता की सब प्राग्ती रक्षा करते हैं, ऋौर जो विद्वान इस कहे हुथे प्रकार ब्रह्मकी उपासना करता है वह देवता होकर देवताओं कोही बाद मरने के प्राप्त होता है, ऐसा सनकर विदेहपति जनक ने कहा कि. हे याज्ञवरक्य. महाराज ! मैं श्चापको एक सहस्त्र गौत्रों को हाथी के समान सांड सहित देता है. इस पर याज्ञ ३ लक्य महाराज ने कहा कि, हे अनक ! मेरे पिता आज्ञा दे गये हैं कि शिष्य को विना बोध कराये दक्षिगा न लेना चाहिये ॥ ४॥

मन्त्रः ६

यदेव ते कश्चिद बनी चच्छ णवामेत्य ब्रवीन्मे सत्यकामो जावालो मनो वे ब्रह्मेति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान्यूयाच्या तज्जावालो ब्रवीन्मनो वे ब्रह्मेत्यमनसो हि किछ स्यादित्य ब्रवीचु ते तस्यायतनं मितृष्ठां न मेब्रशीदित्येकपाद्धा एतत्स श्राहिति स वे नो ब्रूहि या ब्रवल्क्य मन एवायतनमाकाशः प्रतिष्ठानन्द इत्येनदुपासीत कानन्दता या ब्रवल्क्य मन एव सम्राहिति होवाच मनसा वे सम्राद् स्विग्मिभहार्यते तस्यां प्रतिख्यः पुत्रो जायते स ज्ञानन्दो मनो वे सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं मनो जहाति सर्वाष्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो मृत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यूषभछ सहस्रं

ददामीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः ।पेता मेम-न्यत नाननुशिष्य हरेतेति ।।

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अन्नवीत्, तत्, शृ्यावाम, इति, अन्नवीत्, मे, सस्यकामः, जावाजुः, मनः, वे, न्रह्म, इति, यथा, मानृमान्, पितृ-मान्, आचार्यवाम्, न्रूयात्, तथा, तत्, जावाजः, अन्नवीत्, मनः, वे, न्रह्म, इति, अमनसः, हि, किम्, स्यात्, इति, अन्नवीत्, तु, ते, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अन्नवीत्, इति, एकपाद्, वा, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, न्रूहि, याज्ञवह्नय, मनः, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्ठा, आनन्दः, इति, एनत्, उपासीत, का, आनन्दता, याज्ञवह्नय, मनः, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, मनसा, वे, सम्राट्, क्षियम्, अभिहायते, तस्याम्, प्रतिरूपः, पुत्रः, जायते, सः, आनन्दः, मनः, वे, सम्राट्, एगमम्, न्रह्म, न, एनम्, मनः, जहाति, सर्वाणि, एनम्, भूतानि, अभिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवान्, अपि, एति, यः एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यूपभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननुशिष्य, हरेत, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ राजन्=हे राजा जनक !

यत्=जो कुछ
किश्चित्=किसी बावार्य ने
ते=बायसे
अववीत्=कहा है
तत्=उसको
अध्यावाम=मैं सुनना चाहता हूं
हित±इस पर
+ जनकः=राजा जनक ने

+ आह=कहा कि

जावालः=जनव का पुत्र सत्यकामः=सत्यकामने मे=मुक्तसे अन्नवीत्=कहा कि मनः वै=मनही ब्रह्म=बद्ध है इति=इस पर + याझवल्क्यः=बाक्षबक्ष्य ने + उवाच=कहा कि

यथा=जैसे

मातृमान्) माता, पिता, गुरु पितृमान् >=करके सुक्षिक्षित प्राचार्यवान) पुरुष

शिष्याय=श्रपने शिष्य से

ब्यात्=कहता है _ तथा=वैसेही

तत्=डस ब्रह्मकी

उपासना को

जाबाल:=सत्यकामने आपसे

श्रव्रवीत्=कहा है

बै=निश्चय करके

मनः=मन

व्रह्म=ब्रह्म है

हि=च्यांकि

श्रमनसः=मनरहित पुरुष से किम्=क्या लाभ

स्यात्=होसका है

+ पुनः=फिर

+ याज्ञयल्क्यः=याज्ञयल्क्य ने

+ आह=कहा

+जनक≔हे जनक!

तु=क्या

ते=श्रापसे तस्य=उस ब्रह्म के

आयतनम्=श्रायतन श्रीर

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को भी श्रव्रवीत्=सत्यकामने कहा है

+ जनकः=जनक ने

+ आह=कहा

+ याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

मे=मुक्तसे

न≕नडीं

त्रव्रवीत्=कहा है इति=इस पर

+याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह≃कहा

सम्राट्=हे जनक !

एतत्=यइ बहाकी उपासना पकपाद्=एक चरणवाली है

इति=ऐसा

श्रुत्वा=सुबकर

+ जनकः=जनक ने

+ आह≃कहा

याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवरूव !

सः=वह

+ त्वम्=भाष

तः≂हमको

ब हि ≂िवाधिपूर्वक उपदेशक्तें

+ याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

श्राह=कहा

+ मतः=मन

+ एव≔ही

श्रायतनम्=ब्रह्म का शरीर है

श्राकाशः≔शकाश ही

प्रतिष्ठा=भाश्रय है

मनः=मन

एव=ही

त्रानन्दः=भ्रानन्द है

इति=इसी बुद्धि से

एनत्=इस बहा की उपासीत=डपासना करे

सम्राट्=राजा जनक ने

उवाच≔पूषा

याज्ञवल्कय=हे याज्ञवल्क्य !

ग्रानन्दता=मानन्द का=क्या इ याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया सम्राट्र=हे जनक ! मनः≔मन एव=ही श्चानन्दः=भ्रानन्द है + द्वि=क्योंकि सम्राट्=हे जनक ! मनसा=मन करके ही श्चियम्=स्नी के पास अभिहार्यते=पुरुषलेजायाजाताह तस्याम्=उसी स्नी में प्रतिरूपः=पिता के सहश पुत्रः=बढ्का जायते=पैदा होता है सः=वह खड़का श्चानन्दः=भानन्द का कारण होता है सम्राट्=हे राजन् ! मनः=मन वै=ही परमम्=परम ब्रह्म=ब्रह्म है यः=जो पवम्=इस प्रकार विद्वान्=जानता हुआ पतत्=इस बहा की उपास्त=उपासना करता है पनम्=उसको मनः=मन

न=नहीं जहाति=स्यागता है एनम्=उस बहावेत्ता को 'सर्वा शि=सब भूतानि=प्राणी श्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं च=घौर सः=वह देवः≕देव भूत्वा=होकर देवान् अपि=देवतात्रों को ही पति=प्राप्त होता है इति=ऐसा श्रुत्वा=सुनकर वैदेह:=विदेहपति जनकः=जनक उवाच=बोले कि हस्त्यृषभम् } = हाथीकेतुल्यएकसांद सहस्रम् } सहितहजारगीश्रोंको ददामि=मैं दक्षिणामें श्रापको देता हं इति=इस पर सः=वह + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य + उवाच=बोले कि + सम्राट्=हे राजन् ! मे=हमारे पिता=पिता श्रमन्यत=कह गये हैं कि + शिष्यम्=शिष्य को श्चननुशिष्यः बोध कराय विना दांक्षणाम्=दांक्षणा का

इति=कभी न=नहीं हरेत इति⇒केना चाहिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज छठी बार राजा जनक से पूछते हैं कि हे राजा जनक ! जिस किसी आचार्य ने आपसे जो कुछ कहा है उसको मैं सुनना चाहता हूं, यह सुनकर राजा जनक ने कहा कि जावाल के पुत्र सत्यकाम ने कहा है कि मनही ब्रह्म है, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा यह ठीक है, आपको सत्यकाम ने बैसेही उपदेश दिया है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित हुन्ना अपने शिष्य प्रति उपदेश करता है, निस्संदेह मनही ब्रह्म है, क्योंकि मनरहित पुरुष से क्या साभ होसका है, फिर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा है सम्राट जनक ! क्या आपसे सत्यकाम ने उस ब्रह्म के आयतन और प्रतिष्ठा को भी कहा है, सम्राद्द ने उत्तर दिया कि मुम्तसे उन्होंने नहीं कहा. इस पर याज्ञवल्क्य ने जनक से कहा कि है राजन ! यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणवाली है, पूरी नहीं है, ऐसा सुनकर जनक ने कहा हे प्रभो ! आपही हमको विधिपूर्वक उपदेश करें, याज्ञवल्क्य ने कहा सुनो कहता हूं मनही ब्रह्म का शरीर है, यानी रहने की जगह है, आकाश श्रथवा परमात्मा उसका आश्रय है, मनही आनन्द है. ऐसा जानकर इस ब्रह्मकी उपासना करे, राजा जनक ने फिर पूछा कि हे याज्ञवल्क्य ! स्थानन्द क्या है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया हे राजन्! मनही स्नानन्द है, क्योंकि मनही की प्रेरणा करके पुरुष स्त्री के पास जाता है, उस स्त्री मेंही पिता के सदश जड़का पैदा होता है, हे राजन ! मनही परम ब्रह्म है, जो पुरुष इस प्रकार जानता हुआ ब्रह्मकी उपासना करता है, उसको मन नहीं त्यागता है, उस ब्रह्मवेत्ता की सब प्रासी रक्षा करते हैं, वह देव होकर देवता को ही प्राप्त होता है, ऐसा सुनकर विदेहपति जनक बोले हाथी के तुल्य एक सांड सहित हजार गौओं को

आपको दक्षिगा में देता हूं, इस पर याज्ञवरूक्य महाराज ने कहा हे राजन् ! मेरे पिता कह गन्ने हैं कि विना शिष्य को बीध कराय दक्षिगा कभी न लेना काहिये ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

यदेव ते कश्चिद्ववीत् तच्छृणवामेत्यव्रवीन्मे विदग्धः शाकल्यो हृद्यं वै ब्रह्मेति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान्ब्र्यात्तथा तच्छा-कल्योव्रवीद्भृदयं वै ब्रह्मेत्यहृदयस्य हि किछ स्यादित्यव्रवीत्तु ते तस्यायतनं पतिष्ठां न भेव्रवीदित्येकपाद्वा एतत्सम्राहिति स वै नो व्र्हि याज्ञवल्क्य हृदयमेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा स्थितिरित्येनदुपासीत का स्थितता याज्ञवल्क्य हृद्यमेव सम्राहिति होवाच हृद्यं वे सम्राद् सर्वेषां भूतानामायतनछ हृद्यं वे सम्राद् परमं व्रह्म नैनछ हृद्यं जहाति सर्वाएयेनं भूतान्य-भिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यृष-भछ सहस्तं ददाभीति होवाच जनको वेदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुश्ष्य हरेतेति ।।

इति प्रथमं ब्राह्मसम् ॥ १॥ पदच्छेदः।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अववात्, तत्, शृरावाम, इति, अववीत्, मे, विदग्धः, शाकल्यः, हृदयम्, वे, व्रह्म, इति, अथा, मानृमान्, पितृ-मान्, आचार्यवान्, व्रूयात्, तथा, तत्, शाकल्यः, अववीत्, हृदयम्, वे, व्रह्म, इति, अवद्यस्य, हि, किम्, स्थात्, इति, अववीत्, हु, ते, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्टाम्, न, मे, अववीत्, इति, एकपाट्, वा, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, क्रूहि, याज्ञवल्क्य, हृदयम्, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्टा, स्थितः, इति, एनत्, उपासीत, का,

ाद्, सर्वेषाम्, भूतामाम्, आयतनम्, इति, ह, उवाच, हृदयम्,

षाम्, भूतानाम्, प्रतिष्ठाः, इदये, हि, एव, सम्राट्, सर्वाधाः, भूतानि, प्रतिष्ठितानि, भवन्ति, इदयम्, वै, सम्राट्, परमम्, ब्रह्स, न, एनम्, इदयम्, जहाति, सर्वाधाः, एनम्, भूतानि, श्र्याभिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवस्त, श्र्यपि, एति, यः, एरम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यृषभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वैदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, श्रमन्यत, न, श्रमनुशिष्य, हरत, इति ॥

पदार्थाः श्चन्वयः + राजन्≕हे जनक ! यत्=जो कुछ कश्चित्=किसी ग्राचार्य ने ते≕ग्रापसे श्रव्रवीत्=कहा है तत्≂उसको श्टण्याम=में सुनना चाहता हूं इति=इस पर जनकः≕जनकने श्राह=कहा शाकल्यः=शकल के पुत्र विदग्धः=विदग्धने म=पुक्तसे अववीत्=कहा है कि हृद्यम् वै=हृदयही ब्रह्म=त्रक्ष है + इति श्रुत्वा≕ऐसा सुनकर + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच≃कहा यथा≕जैसे मातृमान् } माता, पिता, गुरु पितृमान् } =करकं सुशिक्षित श्राचार्यवान्) पुरुष

अन्वयः पदार्थाः + शिष्याय=श्रपने शिष्य से ब्यात्=कहता है तथा=तैसही तत्=उसको यानी हृदयस्थ ब्रह्मकी उपासना को शाकल्यः=शकल के पुत्र विदग्ध ने श्रव्रवीत्=श्रापसे कहा है वै=निश्चय करके हृदयम्=हृदय वै≕ही व्रह्म=बद्ध है हि=क्योंकि श्रहृदयस्य=हदय रहित पुरुष को किम्=क्या जाभ स्यात्=होसक्रा है पुनः=फिर + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + ऋाह≕कहा कि + जनक=हे जनक ! तु=क्या

ते=धापसे

तस्य≕डस ब्रह्म के

श्चायतनम्=श्रायतन श्रीर प्रतिष्टाम्=प्रतिष्ठा को भी श्रव्रव(त्=विदग्ध ने कहा है + जनकः=जनक ने + श्राह=कहा याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! मे न=मुक्तमे नहीं श्रव्रवीत्=कहा है इति=इस पर + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने श्राह=कहा सम्राट्≔हे जनक ! एतत्=यह बहाकी उपासना एकपाद्=एक चरण वाली है इति=इस पर + जनकः=जनक ने + श्राह=कहा याञ्चवस्यय=हे याज्ञवस्वय ! सः + त्वम्=श्रापशी + तत्=उस उपासना को नः≔हमसे बृहि≕कहें + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवलस्य ने + आह=कहा हृद्यम्=ह्रय , एव=ही श्रायतनम्=श्रायतन है आकाशः=परमात्माही प्रतिष्ठा=श्राश्रय है पनत्=यही ब्रह्म स्थिति:=स्थिति है यानी परम स्थान है

इति=ऐसी एनत्=इस हृदयस्य ब्रह्मकी उपासीत=उपासना करे सम्राट्=जनक ने उवाच=कहा याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! स्थितता=स्थिति का=क्या वस्तु है याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने उवाच=कहा सम्राट=हे राजन् ! हृद्यम्=हरय एच=ही + एतस्य=इसकी + स्थितता=स्थिति है हि=क्यांकि सम्राट्र=हे राजन् ! सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राणियों का श्रायतनम्=स्थान हृद्यम्=हदय है सम्राट्=हे राजन् ! हृदयम्=हृदय वै=ही सर्वेषाम्≕सब भूतानाम्=प्रावियों का प्रतिष्ठा=श्राश्रय है हि=क्योंकि सम्राट्=हे जनक ! सर्वाखि=सब भूतानि=प्राची इदये=हदय में

एव≕ही प्रतिष्ठितानि=स्थित भवन्ति≕हैं सम्राट=हे जनक ! हृद्यम्=हृद्य वै=निस्सम्देह षरमम्=परम ब्रह्म=ब्रह्म है यः=जो एवम्=इस प्रकार विद्वान्=जानता हुआ एतत्=इस त्रहा की उपास्ते=उपासना करता है पनम्≕उसको हृद्यम्=हृद्यात्मक ब्रह्म न≕नहीं जहाति≈स्यागता है एनम्≃इस बद्यवेत्ता को सर्वाणि=सब भूतानि=प्राची श्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं + च=श्रीर + सः=वह देवः=देवता भृत्वा=हांकर

देवान्=देवतात्रों को श्चिप्यच्ही पति=प्राप्त होता है इति=इस पर वैदेह:=विदेहपति जनक:=जनक उवाच=बोले कि याञ्चवत्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! हस्त्यृषभम्=हाथी के समान एक सांइ सहित सहस्रम्=हजार गौश्रॉ को ददामि त्वाम्=दक्षिणा में श्रापको देता हं सः=वह याज्ञवल्कयः=याज्ञवल्क्य उवाच=बोले कि मे=हमारे पिता=पिता इति=ऐसा श्रमन्यत=कइ गये हैं कि + शिष्यम्=शिष्य को श्चननुशिष्य=बोध कराये विना + दक्षिणाम्=दक्षिणा न≃नहीं

हरेत=प्रहण करना चाहिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज सातर्जीवार राजा जनक से कहते हैं कि, जो कुछ किसी आचार्य ने आपसे कहा है उसको में सुनना चाहता हूं. इस पर राजा जनक ने कहा, शकल के पुत्र विदग्ध ने सुमत्से कहा है कि हृदय ही ब्रह्म है, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा उन्हों ने ठीक

कहा है, जैसे कोई माता, पिता ख्रीर गुरु करके सुशिक्षित पुरुष अपने प्रिय शिष्य प्रति उपदेश करता है वैसेही उन्होंने आपके प्रति कहा है. निस्सन्देह हृदयही ब्रह्म है. क्योंकि हृदयरहित पुरुष को क्या जाम होसका है, फिर याज्ञवल्क्य ने कहा कि है जनक ! क्या आपसे विद्रश्व आचार्य ने उस हृदय के आयतन और प्रतिष्ठा को भी कहा है ? जनक महाराज ने कहा, हे प्रभो ! उन्हों ने मुक्सेस यह नहीं कहा है. तब याज्ञबल्क्य ने कहा यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणा बाली है, परी नहीं है, इस पर जनक ने कहा हे हमारे पुज्य याज्ञवल्क्य, ब्रह्म-ऋषि ! आपही हमको उपदेश करें, याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा सनो. हृदयही उसका आयतन है, और आकाश अथवा परमात्माही उसका श्राश्रय है, यही ब्रह्मस्थित है, यानी परम स्थान है, ऐसी बुद्धि करके इस हृदयस्थ ब्रह्मकी उपासना करे, ऐसा सुनकर जनक महाराज ने कहा है याज्ञवल्क्य ! स्थिति क्या वस्त है ? याज्ञवल्क्य ने कहा. हे राजन ! हृदयही इसकी स्थिति है, क्योंकि सब प्राणियों का स्थान हृदयही है, हे राजन ! हृदयही सब प्राशियों का आश्रय है, क्योंकि हे राजा जनक ! सब प्राणी हृदय में ही स्थित हैं, हे जनक ! हृदय निस्सन्देह परमब्रह्म है, जो विद्वान इस प्रकार जानता हुआ इस ब्रह्मकी उपासना करता है, उसको हृदयात्मक ब्रह्म नहीं त्यागता है, इस ब्रह्म-वेत्ता की सब प्राणी रक्षा करते हैं, वह देवताओं को प्राप्त होता है. इस पर विदेहपति जनक बोले कि में आपको हाथी के समान एक सांड सिहत एक हजार गौद्यों को दक्षिणा में देता हूं, याज्ञवहक्य महाराज ने कहा कि भेरे पिता कह गये हैं कि शिष्य को विना वौध कराये दक्षिणा नहीं प्रहृण करना चाहिये ॥ ७ ॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

अथ द्वितीयं ब्राह्मणम्।

मन्त्रः १

जनको ह वैदेहः क्वीदुपावसर्पञ्चाच नमस्तेस्तु याज्ञवल्क्यानु-माशाधीति स होवाच यथा वै सम्गण्महान्तमध्वानमेष्यन्यं वा नावं वा समाददीतैवमेवैताभिरूपनिपद्भिः समाहितात्मास्येवं दृन्दारक श्राढचः सन्नधीतवेद उक्कोपनिपत्क इतो विमुच्यमानः क गमिष्यसीति नाहं तद्भगवन् वेद यत्र गमिष्यामीत्यथ वै तेहं तद्भथामि यत्र गमिष्यसीति अवीतु भगवानिति ॥

पदच्छेदः ।

जनकः, ह, वैदेहः, कूर्चात्, उपावसर्पन्, जवाच, नमः, ते, अस्तु, याज्ञवल्क्य, आनुमाशाधि, इति, सः, ह, जवाच, यथा, वै, सम्राट्, महान्तम्, अध्वानम्, एध्यन्, रथम्, वा, नावम्, वा, समाददीत, एवम्, एव, एताभिः, जपनिषद्भः, समाहितात्मा, आसि, एवम्, वृष्दा-रकः, आह्यः, सन्, अधीतवेदः, उक्तोपनिष्कः, इतः, विमुच्यमानः, कः, गमिष्यसि, इति, न, आहम्, तत्, भगवन्, वेद, यत्र, गमिष्यामि, इति, आथ, वै, ते, आहम्, तत्, वह्यामि, यत्र, गमिष्यसि, इति, अवीतु, भगवान्, इति ॥

अन्वयः

पदार्थाः म्रन्वयः वैदेहः=विदेहपति पदार्थाः

जनकः≔राजा जनक
कूर्चात्=सिंहासन से उठकर
उपावसर्पन्=याज्ञवस्कय के पास
जाकर
उपाच=बोले कि
याझवस्कय=हे याज्ञवस्कय !
ते≠आपके लिथे
नमः≔मेरा नमस्कार
अस्तु≔होवे

मा=मुकको
+ त्वम्=भाग
श्रनुशाधि=उपदेश दें
द्वि=तव
सः=वह याज्ञवरक्य
उवाच=बोले कि
सम्राट्=दे राजन्!
यथा=जैसे
महान्तम्=स्रात्का

ध्रयन्=जानेवाला पुरुष + जनकः=जनक ने रथम्≂रथ + ब्राह=कहा भगवन्=हे पूज्य याज्ञवस्क्य ! चा=या नाचम्=नाव को यत्र=जहां समाददीत=प्रहण करता है गमिष्यामि=में जाऊंगा एवम् एव=उसी प्रकार तत्=उसको श्चहम्=में एताभिः=इन कहे हुये उपनिषद्भिः=ज्ञान विज्ञान करके न≕नहीं समाहितातमा=श्रापका श्रातमा वेद=जानता हूं असि=संयुक्त है श्रध=तब + च=धौर याज्ञवलक्यः=याज्ञवलक्य ने एवम्=वैसेही उदाच=जवाब दिया कि त्वम्=श्राप तत्=उसको बृत्दारकः=लोगोंकरकेपुज्यश्रीर ते=श्रापसे वै=धवश्य श्चाद्यः=धनाव्य सन्=होने पर भी वश्यामि=में कहंगा श्रधीतंबदः=वेदों को पढ़े हो यत्र=जहां उक्रोपनिषत्कः=उपनिषदों का ज्ञान गमिष्यासि=श्राप जायंगे आपसे कहा गयाहै इति=इस पर + ब्रहि=तुम कहो कि जनकः=जनक ने इतः=इस देह से स्राह=कहा मुख्यमानः≔मुक्त होते हुये भगवान्=हे भगवन् ! क=कहां को + त्वम्=श्राप गमिष्यसि=जावोगे इति=ऐसा श्रवश्य ब्रव्शेतु≔कहें इति=इस पर

भावार्थ ।

निदेहपति राजा जनक महाराज सिदासन से उठकर याज्ञवल्क्य महाराज के पास जाकर बोले कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! आपको मेरा नमस्कार होने, मुक्तको आप कृपा करके उपदेश देनें, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन ! जैसे बहुत दूर मार्ग का चक्षने वाजा पुरुष रथ या नाव को प्रहुश्य करता यानी आश्रय

लेता है उसी प्रकार इन कहे हुये ज्ञान विज्ञान करके आपका आत्मा संयुक्त है, और लोगों करके पूज्य और धनाढ्य होने पर भी वेदों को आपने पढ़ा है, और अपूषि लोगों ने उपनिषदों का ज्ञान आपसे कहा है, आप बताइये इस देह को त्यागते हुये कहां को जाओगे, इस पर राजा जनक ने कहा है पूज्य, याज्ञवल्क्य, महाराज ! जहां में जाऊंगा उसको में नहीं जानता हूं तव याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा उसको में आपसे अवश्य कहूंगा जहां आप जायँगे. इसको सुनकर राजा जनक ने कहा, हे भगवन ! आप उसको अवश्य कहें।। १॥

मन्त्रः २

इन्घो ह वै नामैप योयं दक्षिणेक्षनपुरुपस्तं वा एतमिन्घछं सन्त-मिन्द्र इत्याचक्षते परोक्षेणैव परोक्षिया इव हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः ॥

पद्च्छेदः ।

इन्धः, ह, वे, नाम, एषः, यः, श्रयम्, दक्षिगो, श्रक्षन्, पुरुषः, तम्, वा, एतम्, इन्थम्, सन्तम्, इन्द्रः, इति, श्राचक्षते, परोक्षेगा, एव, परोक्षप्रियाः, इव, हि, देवाः, प्रत्यक्षद्विपः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यः=गो

श्रयम्=यह
दक्षिणे=यहिने
श्रश्नम्=थाल में
पुरुषः=पुरुष है
एषः ह=यही
वै=निस्सन्देह
इन्धः नाम=इन्ध नाम से प्रसिद्धहै
तम्=उसी
वै=प्रसिद्ध
एतम्=इस

सन्तम्=सत्य
पुरुषम्=पुरुष
इन्धम्=इन्ध को
इन्द्रः=इन्द्र
इति=करके
परोक्षेण=परोक्ष नाम से
पत्र=ही
आहु:=पुकारते हैं
हि=क्योंकि
देवा:=देवगण

परोक्षित्रयाः } =परोक्ष त्रिय इव } =परोक्ष त्रिय + सन्तः=होते हैं + च=मोर

प्रत्यक्षद्विषः=प्रत्यक्ष वस्तु से द्वेष करने वाले + भवन्ति=होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! जो यह दिनी आंख में पुरुष बीखता है वह इन्ध नामसे प्रसिद्ध है, इसी इन्धको परोक्ष नाम इन्द्र करके पुकारते हैं, क्योंकि देवगणा परोक्षप्रिय होते हैं, ब्योर प्रत्यक्षप्रिय नहीं होते हैं, जो गुप्त अथवा अव्यक्त है (स्पष्ट न हो उसको परोक्ष कहते हैं, ब्योर जो व्यक्त हो अथवा स्पष्ट हो अथवा प्रसिद्ध हो उसको प्रत्यक्ष कहते हैं) वेदों में इन्द्र नाम बहुधा आया है, इन्ध ऐसा नाम नहीं आया है, इन्ध गुप्त नाम है, इसीसे इसकी शोभा है, इसी प्रकार जीवातमा भी शरीर में गुप्त व्यापक है, इसी कारणा वह भी शोभायमान है, परमात्मा भी जगत्रूष्णी महाशरीर में गुप्त व्यापक है, इस जिथे वह भी बड़ी शोभा का देनेवाला है, इसी परमात्मा के निकट अप्रथक् जो आत्मा है ब्योर वह हृदयाकाश विषे स्थित है उसी के पास आपको जाना होगा ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रयैतद्वामेक्षणि पुरुषरूपमेपास्य पत्नी विरार् तयोरेष संश्रस्तावो य एषोन्तर्हृदय श्राकाशोथैनयोरेतदः य एषोन्तर्हृदय लोहितपि-एडोथैनयोरेतत्त्रावरणं यदेतदन्तर्हृदये जालकिमिवाथैनयोरेषा स्रतिः संचरणी येपा हृदयादृर्ध्वा नाङ्गुचरित यथा केशः सहस्रधा भिन्न एवमस्येता हिता नाम नाड्योन्तर्हृदये प्रतिष्ठिता भवन्त्येताभिर्वा एत-दास्त्रवदास्त्रवति तस्मादेष प्रविविक्ताहारतर इवैत्र भवत्यस्माच्छारीरा-दात्मनः ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एतत्, वामे, अक्षिणि, पुरुषरूपम्, एषा, अस्य, पत्नी, विराद्,

तयोः, एषः, संस्तावः, यः, एषः, आन्तर्हृद्ये, आकाशः, आथ, एनयोः, एतत्, श्रन्नम्, यः, एषः, अन्तर्हृद्ये, लोहितिपिएडः, श्रथ, एनयोः, एतत्, प्रावरसाम्, यत्, एतत्, अन्तर्हृद्ये, जालकम्, इव, अथ, एनयोः, एषा, प्रावरसाम्, यत्, एतत्, अन्तर्हृद्ये, जालकम्, इव, अथ, एनयोः, एषा, स्त्रिः, संचरसा, या, एषा, हृदयात्, ऊर्ष्वा, नाड़ी, उचरति, यथा, केशः, सहस्रधा, भिन्नः, एवम्, अस्य, एताः, हिताः, नाम, नाड्यः, अन्तर्हृद्ये, प्रतिष्ठिताः, भवन्ति, एताभिः, वा, एतत्, आस्वत्, आस्वत्, आस्वति, तस्मात्, एषः, प्रविविक्ताहारतरः, इव, एव, भवति, अस्मात्, शारीरात्, आत्मनः ॥

पदार्थाः ऋन्वयः ऋथ=इसके उपरान्त यत् एतत्=जो यह पुरुषरूपम्=पुरुषाकार वामे=बायें श्रक्षशि≔नेत्र में + अस्ति=प्रतीत होती है एपा=यह **ऋस्य=उस पुरुप की** विराट्=विराट् नामक पत्नी=स्री है + च=भौर यः≕जो एष:=यह श्चन्तर्हृद्ये=हृदय के भीतर आकाशः=माकाश है एष:=सोई तयोः=उन दोनों जी पुरुष के संस्तावः=मिवापकी जगह है यः=जो प्षः=यह अन्तर्हेद्ये=इदय के भीतर

अन्वयः पदार्थाः
ले।हितपिएडः=लाल मांसपिषढ है

पतत्=यही

पनयोः=हन दोनों का
अञ्चम्=भन्न है
अथ=भीर
यत्=जो
पतत्=यह
अन्तर्हद्ये=हदय के भीतर
जालकम् इच=जालकी तरह फैला
चादर है

पतन्=यह।
पनयोः=उनका
प्रावरणम्=भोडना है

+ च=श्रोर

या=जो

एषा≔यह

हृदयात=हृदय से

ऊर्ध्वा=जपर

नाडी=नादी उद्यरति=जाती है

प्या=यही

श्चनयोः=इन दोनों के संचरणी=गमन का स्तिः=मार्ग है यथा≕जैसे केश:=एक केश सहस्रधा=सहस्र भिन्नः=टकड्। किया हन्ना + सुक्ष्मः=श्रति सुक्ष्म + भवति=होता है एवम्=इसी तरह श्रस्य=इस देह की हिताः नाम=हित नामवाली नाड्यः=श्रतिसक्ष्मनाहियां हैं श्चन्तर्हृद्ये=हृद्य के भीतर प्रतिष्टिताः=स्थित भवन्ति=हैं

वै=निरवव करके

पताभिः=इन नाक्ष्यों द्वारा

पतत्=यह श्रव रस

श्रास्त्रवत्=जाता हुश्रा

श्रास्त्रवति=सव जगह पहुँचता है

तस्मात्=इसी कारण

पपः=यह जीवारमा

श्रस्मात्=इस

शारीरात्=शारीरी

शारमनः=श्रारा से श्रयोत्

स्थूल देह की श्रयेका

प्रविविक्ताहारतरः

इव एव≕निस्सन्देह

भवति=होता है

भावार्थ ।

इसके उपरान्त रह पुरुपाकार व्यक्ति जो बांयें नेत्र में प्रतीत होती है यह उस पुरुप की विराट नामक स्त्री है, आरे जो हृदय के भीतर आकाश है सोई दोनों यानी इन्द्र इन्द्राग्गी के मिलने की जगह है, और जो हृदय के भीतर लाल मांसपियड है वही इन दोनों का अल है, और जो हृदय के मध्य में जाल के समान अनेक छिद्र युक्त चादर है यही उन दोनों के ओड़ने का वस्त्र है, और जो हृदय से उपर नाड़ी गई है वही इन दोनों के गमन का मार्ग है, और आगे अनेक नाड़ियों का हाल बताते हैं, जैसे एक केश सहस्र दुकड़ा किया हुआ अतिस्क्ष्म होता है उसी तरह इस देह की हिता नामवाली अति स्क्ष्म नाड़ियां हृदय के भीतर हैं, इन्हीं नाड़ियों के द्वारा अलगस्स को प्राग्ण सब जगह पहुँचाता है, इसी कारण यह जीवारमा स्थूल देह की अपेक्षा अति शुद्धाहारी प्रतीत होता है।। ३।।

मन्त्रः ४

तस्य प्राची दिक्पाश्चः प्राणा दक्षिणा दिग्दक्षिणे प्राणाः प्रतीची दिक्पत्यश्चः प्राणा उदीची दिगुदश्चः प्राणा उध्वी दिगुदश्चः प्राणा उध्वी दिगुदश्चः प्राणा अवाची दिगवाश्चः प्राणाः सर्वा दिशः सर्वे प्राणाः स एव नेति नेत्यात्मागृह्यो न हि गृह्यतेशीयों न हि शीर्यतेसङ्गो न हि सञ्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यत्यभयं वै जनक प्राप्तोसीति होवाच याज्ञवलक्यः । स होवाच जनको वैदेहोभयं त्वा गच्छता- याज्ञवलक्य यो नो भगवन्नभयं वेदयसे नमस्ते स्त्विमे विदेहा अयम्हमस्मि ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥ पदच्छेदः ।

तस्य, प्राची, दिक्, प्राच्यः, प्राचाः, दक्षिणा, दिक्, दक्षिणो, प्रामाः, प्रतीची, दिक्, प्रत्यच्यः, प्रामाः, उदीची, दिक्, उदच्यः, प्रामाः, उद्ध्वी, दिक्, उद्ध्यः, प्रामाः, उद्ध्वी, दिक्, उप्रवाच्यः, प्रामाः, सर्वाः, दिक्, उप्रवाच्यः, प्रामाः, सर्वाः, दिक्, सर्वे, प्रामाः, सः, एपः, न, इति, न, इति, आतमा, अगृद्धः, न, हि, गृद्धते, अशीर्यः, न, हि, शीर्यते, असङ्गः, न, हि, सज्यते, असितः न, व्यथते, न, रिष्यति, अभयम्, ने, जनक, प्राप्तः, असितः न, व्यथते, न, रिष्यति, अभयम्, ने, जनक, प्राप्तः, असितः हते, ह, उवाच्य, याज्ञवत्वयः, सः, ह, उवाच्य, जनकः, वेदेदः, अभयम्, त्वा, गच्छतात्, याज्ञवत्वयः, यः, नः, भगवन्, अभयम्, वेद्यसे, नमः, ते, अस्तु, इमे, विदेहाः, अयम्, अहम्, अहम्, अस्म। ।। अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

तस्य=इस जीवात्मा के प्राची=पूर्व दिक्=दिशा में प्राञ्चः=पूर्वगत प्राणाः=प्राण हैं + तस्य=इस जीवात्मा के दक्षिणे=दक्षिण दिशा में ाः पदार्थाः दक्षिणाः=दक्षिण दिशा गत प्राणाः=प्राण हैं + तस्य=इस जीवासा के प्रतीची=परिचम दिक्=दिशा में प्रत्यञ्चः=परिचम गत प्राणाः=प्राण हैं

+ तस्य=इसके गृह्यते=महत्यकियाजासकाई उदीची=उत्तर + सः≔वही दिक=दिशा में अशीर्यः=अक्षय है उद्भः=उत्तर गत हि=द्योंकि प्राणाः=प्राण हैं + सः≔वह + तस्य=इसके न≃कभी नहीं ऊध्वी=अपर की शीर्यते=श्रीण होता है दिशा=दिशा में + सः≔वह ऊध्वी=अपर गत असङ्गः=सङ्ग रहित है प्राणाः=प्राण हैं हि=क्योंकि तस्य≔इस जीवात्मा के सः=वह श्रवाची=नीचे की न=कडीं नहीं दिक=दिशा में सज्यते=बासक होता है अवाञ्चः=नीचे गत + सः=वह प्राणाः=प्राण हैं असितः=बन्धन रहित है तस्य=इसके + हि=क्योंकि सर्चाः=सब न≕न दिश:=दिशाओं में सः=वह सर्वे≕सव गत व्यथते=पीदित होता है माणाः=प्राय है न रिष्यति=न हिंसित होता है सः=वडी जनक≔हे जनक ! एषः=यह चै=निश्चय करके अत्मा=श्रात्मा अभयम्=अभय पद को नेति≕नेति प्राप्तः=तुम प्राप्त नेति=नेति असि=हो चुके हो + इति=करके इति=ऐसा + उक्तः=कहा गया है याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + सः=वही उवाच ह=कहा अगृह्यः=बयाद्य है ह≕तब हि=न्योंकि वैदेह:=विदेहपति + सः=वड जनकः=जनक न=नहीं उद्यास=बोले कि

याञ्चवत्कय=हे याज्ञवत्कय !
त्वा=ज्ञायको भी
अभयम्=अभय पद
गच्छतात्=शास होवे
भगवन्=हे पूज्य !
यः=जो ज्ञाप
नः=हमको
अभयम्=जभय बहा
वेदयसे=सिखलाते हैं
किच्छापके जिये

नमः=मस्कार
सन्तु=होवे
स्मृषे=हे ऋषे !
हमे=यह
विदेहाः=कुल विदेह देश
तवप्रति=धापके लिये हैं
ह्यम्=यह
सहम=में

भावार्थ ।

इस जीवात्मा की पूर्व दिशा में जो प्रागा है वह पूर्व की आरेर जाता है, स्रोर जो दक्षिण दिशा में प्राण है वह दक्षिण की स्रोर जाता है, आरोर जो पश्चिम दिशा में प्राणा है वह पश्चिम की अरोर जाता है. इसके ऊर्ध्व दिशा में जो प्राण है वह ऊपर को जाता है. इसके नीचे की दिशा में जो प्राणा है वह नीचे को जाता है, जो सब दिशास्त्रों में प्रामा है वह सब तरफ जाता है. ऐसी दशा में वह आतमा वाणी करके नहीं कहा जा सक्ता है, यह आतमा अग्रह्म है. क्योंकि इसका ग्रहणा नहीं हो सक्ता है. यह आतमा अक्षय है, क्योंकि इसका नाश नहीं होता है. यह आत्मा असङ्ग है, क्योंकि इसका संग नहीं होता है, यह आत्मा बन्धरहित है, क्योंकि यह न व्यथित होता है न हिंसित होता है, ऐसा उपदेश देते हुये याज्ञवल्क्य बोले कि, हे राजा जनक ! आप निर्भयता को प्राप्त होगये हैं, जहां जाना था वहां पहेंच गये हैं अपन आप क्या चाहते हैं ? इस पर राजा जनक ने कहा, हे याज्ञवल्क्य ! आपको भी श्रामय पद प्राप्त होवे, हे परम पूज्य ! जो आप हमको अभय ब्रह्म का उपदेश देते हैं. श्रापको हमारा नमस्कार हो, हे अपने ! में संपूर्ण विदेह देश को आपके चरण कमल में अपर्ण

करता हूं, मैं आपका दास उपस्थित हूं, आप जो आज्ञा दें, उसको करने को तैयार हूं।। ४।।

इति द्वितीयं त्राह्मग्रम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

जनकथं ह वैदेहं याज्ञवल्क्यो जगाम स मेने न विदिष्य इत्यय ह यज्जनकश्च वैदेहो याज्ञवल्क्यश्चाग्निहोत्रे समूदाते तस्मै ह याज्ञ-वल्क्यो वरं ददौ स ह कामप्रश्नमेव वन्ने तथं हास्मै ददौ तथं ह सम्राहेव पूर्व पप्रच्छ ।।

पदच्छेदः ।

जनकम्, ह, वैदेहम्, याझवल्क्यः, जगाम, सः, मेने, न, विद्ष्ये, इति, श्रथ, ह, यत्, जनकः, च, वैदेहः, याझवल्क्यः, च, श्राग्निहोत्रे, समृदाते, तस्मे, ह, याझवल्क्यः, वरम्, द्दौ, सः, ह, कामप्रश्नम्, एव, वन्ने, तम्, ह, श्रास्मे, द्दौ, तम्, ह, सम्राट्, एव, पूर्वम्, पप्रच्छ ॥

श्चन्वयः पदार्थाः
+ कदाचित्=एक समय
याञ्चवत्क्य
चैदेहम्=चिदेहपति
जनकम्=राजा जनक के पास
जगाम=गये
इति=ऐसा
मेन=विचार करते हुये
कि श्वाज

+ किंचित्=जुड़ न=नहीं चदिष्ये=कहूंगा अथ=पर पहुँचने पर सन्यः पदार्थाः
यत्=नो कुषु
चैदेहः=विदेहपति
जनकः=राजा जनक
ह=श्रद्धापृर्वक
+ पप्रच्छ=पृष्ठते थे
+ तत्=डसको
+ याझवल्क्यः=याझवल्क्य
+ प्रतिपेदे=कहते थे
+ कदाचित्=किसी समय पहिले
झार्गनहोत्रे=अग्निहोत्र के विषय में

समुदाते=संवाद करते समय

ह=निश्चय करके

याञ्चवल्क्यः =याञ्चवल्क्य महाराज ने
स्म् च्यम्=प्रश्न करने का वरदान
द्वौ=जनक को दिया
ह=तक
सः=उस राजा जनक ने
कामप्रश्नम्=इच्छानुसार प्रश्न
करने का
स्मे=वरदान मांगा
तदा=तब

श्चर्मै=उसके किये
तम्=उस कामग्रश वर को
द्दी =याज्ञवल्य महाराज
देते भये
ह=इसी कारण
सम्राट्=जनक ने
पूर्वम् एव=पिक्षेत्री
प्रमञ्ज=विना साज्ञा पृक्षा

भावार्थ।

एक समय याज्ञवह्नय महाराज यह श्रापने मनमें ठानकर जनक महाराज के निकट चले कि आज मैं राजा को कुछ भी उपदेश नहीं दंगा, केवल चुपचाप बैठा हुआ जो छुछ वह कहेंगे उसको सुनता रहूंगा, जब याज्ञबरूक्य महाराज राजा जनक के पास पहुँचे तब जनक ने जीवात्मा के बारे में प्रश्न किया, उसका उत्तर महाराज ने दिया इस पर शंका होती है कि जब याज्ञबल्क्य ने ठान लिया था कि मैं कुछ न कहुँगा तो फिर जनक के प्रश्न का उत्तर क्यों दिया इस शंका का समायान यों करते हैं कि एक समय जब कर्मकागड में सब कोई प्रवृत्त थे उस समय भ्राग्निहोत्र के विषय में राजा जनक और अन्य राजा याज्ञवत्क्य महाराज श्रीर श्रन्य मुनिगगा श्रापस में संवाद करने लगे, उस समय राजा जनक की नियुग्ता देख संतुष्ट हो याज्ञवल्क्य मुनि ने राजा से पूछा कि क्या तुम वर मांगते हो, राजा ने काम-प्रश्न रूप वर मांगा अर्थात् जब भैं चाहूं तब आपसे प्रश्न करूं, चाहे श्राप किसी दशा में हों, यह वर चाहता हूं, इस वरको याज्ञवल्क्य महाराज ने दिया, यह कहते हुये कि हे राजा जनक ! जब तुम चाही मुम्मसं प्रश्न कर सक्ते हो, इसी कारण याज्ञवल्क्य महाराज को अपनी इच्छात्रिरुद्ध बोलना पडा ॥ १ ॥

मन्त्रः २

याज्ञवल्क्य किंज्योतिर्यं पुरुष इति । त्र्यादित्यज्योतिः सम्रा-हिति होवाचादित्येनैवायं ज्योतिषास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्ये-तीत्येवपेवैतद्याज्ञवल्क्य ॥

परच्छेतः ।

याज्ञवल्क्य, किंज्योतिः, अयम्, पुरुषः, इति, आदित्यज्योतिः, सम्राट्, इति, ह, उवाच, आदित्येन, एव, अयम्, ज्योतिषा, आस्ते, परुवयते, कर्म, क्रुरुते, थिपल्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य ॥ पदार्थाः श्चन्यः श्रम्बयः पदार्थाः याञ्चयल्क्य=हे मने ! श्रयम्=यह पुरुष

श्रयम्=यह पुरुष:=पुरुष यानी यह

किंज्योतिः = { किंस ज्योति वाला है यानी उसको इति | ज्यांति कहां से ग्राती है

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=जवाब दिया कि सम्राट=हे जनक !

्यह पुरुष सूर्य के आदित्य-आदित्य- (वाला है यानी इसको प्योतिः (सूर्य से प्रकाश मिलता है

हि=पर्गेकि

द्यादित्येन रे स्वर्थ के प्रकाश ज्योतिषा रे करके ही आस्ते=बैठता है

प्रवयतं=इधर उधर फिरता है

कर्म=कर्म कुरुते=करता है

विपल्यंति= { कर्म करके फिर विपल्यंति= { अपने स्थान पर वापस खाता है

इति=इसपर + जनकः=जनक ने + आह=कहा याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

पतस्=यह एवम् एव=ऐसेही है यानी ठीक है

भाषार्थ ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! जो जीवात्मा शरीर विषे स्थित है, उसको प्रकाश कहां से मिलता है, यानी किसके प्रकाश करके बह प्रकाशित होता है ? इसके उत्तर में याज्ञबद्दय महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! यह जीवात्मा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है, यानी सूर्य के प्रकाश करके यह पुरुष अपना सारा काम करता है, इधर उधर बैठता है, और फिरता है, और कर्म करके फिर अपने स्थान को वापस आ जाता है, जनक महाराज ने ऐसा सुनकर कहा कि, यह ऐसाही है जैसा आपने कहा है।। २।।

मन्त्रः ३

श्चस्तमित श्रादित्ये याज्ञवल्क्य किंज्योतिरेवायं पुरुष इति चन्द्रमा एवास्य ज्योतिर्भवतीति चन्द्रमसैवायं ज्योतिषास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीत्येवमेवैतचाज्ञवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

श्चस्त्रमिते, श्चादित्ये, याज्ञवत्क्य, किंज्योतिः, एव, श्चयम्, पुरुषः, इति, चन्द्रमाः, एव, श्चस्य, ज्योतिः, भवति, इति, चन्द्रमसा, एव, श्चयम्, ज्योतिषा, श्चास्ते, पत्ययते, कर्म, कुरुते, विपत्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवक्क्य ॥

पदार्थाः परार्थाः श्रन्वयः श्चन्ययः एव≕ही याञ्चलक्य=हे याज्ञवस्कय ! ज्योतिः=प्रकाश वाला आदित्ये⇒सूर्य के श्चस्त्रामिते=इबने पर अयम्=यह पुरुषः=पुरुष इति=श्योंकि पव=निश्चय करके श्रयम्=यह पुरुष चन्द्रमसा एव=चन्द्रमा ही के ज्योतिषा=प्रकाश करके द्यास्ते=बैउता है पल्ययते=इधर उधर घृमता है याज्ञचलक्यः=याज्ञवरूव बोले कर्म=कर्म ग्रस्य=इस पुरुष को कुरुते=करता है खन्द्रमाः=चन्द्रमा

विपल्येति= { क्में करके अपने स्थान को लौट आता है इति=इस पर

इ।त=इस पः जनकः=जनक श्राह=बोबे याझवल्क्य≔हे याझवल्क्य ! एतत्≕यह बात एवम् एव≕ऐसीही है यानी ठीक है

भावार्थ ।

जनक महाराज प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! जब सूर्य ध्यस्त होजाता है, तब यह पुरुष किस के प्रकाश करके ध्रपना व्यवहार करता है. याज्ञवत्क्य महाराज ने उत्तर दिया कि यह पुरुष चन्द्रमा के प्रकाश से प्रकाश वाका होता है, क्यों कि यह जीवातमा चन्द्रमा के ही प्रकाश करके बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, ध्रौर कर्म करके ध्रपने स्थान को लौट ध्राता है. यह सुनकर जनक महाराज बोले, हे याज्ञवत्क्य ! यह ऐसाही है जैसा ध्रापने कहा है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अस्तिमत आदित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तिमते किंज्योतिरेवायं पुरुष इत्यग्निरेवास्य ज्योतिर्भवतीत्यग्निनेवायं ज्योतिपास्ते पल्ययते कर्म कुस्ते विपल्येतीत्येवमेवेतवाज्ञवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

अस्तिमिते, आदित्ये, याझवत्क्य, चन्द्रमसि, अस्तिमिते, किंज्योतिः, एव, अयम्, पुरुपः, इति, अग्निः, एव, अस्य, ज्योतिः, भवति, इति, अग्निना, एव, अयम्, ज्योतिपा, आस्ते, परूययते, कर्म, कुरुते, विपरूयिते, इति, एवम्, एव, एतत्, याझवत्क्य ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

याज्ञयहर्म्य=हे याज्ञवह्वय ! श्रादित्ये=सूर्य के श्रस्तमिते=श्रस्त होने पर चन्द्रमसि=धन्द्रमा के श्रस्तमिते=श्रस्त होने पर द्मयम्=यह पुरुषः=पुरुष प्य=निश्चय करके किउयोतिः=किस प्रकाश वाका

एव=ही ग्रास्ते=बैठता है पत्ययते =इधर उधर चलता इति=इस पर फिरता है + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवरुक्य कर्भ=कर्भ + आह=बोबे करुते=करता है विपल्येति= { कर्म करके श्रपनी जगह पर जौट श्राता है श्चास्य=इस पुरुष की ड्योतिः=ज्योति श्चारेनः=श्रीन + इति अत्वा=यह सुन कर पच≕ही जनकः=जनक ने भवति=होती है श्राह⊃कहा हि=वयांकि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! श्रयम्=यह पुरुष पतत्=यह अग्निना (=श्राग्नि के प्रकाश करके एवम एव=ऐसेही है

भावार्थ ।

जनक महाराज ने प्रश्न किया कि, हे मुने ! जब सूर्य श्रीर चन्द्रमा होनों श्रस्त होजाते हैं तब यह पुरुष किस के प्रकाश करके श्रपना व्यवहार करता है ? याज्ञवल्क्य महाराज ने उत्तर दिया कि यह पुरुष सूर्य श्रीर चन्द्रमा के श्रस्त होने पर श्रीन की ज्योति करके प्रकाश-मान होता है यानी काम करन के योग्य होता है क्योंकि यह पुरुष श्रीन के प्रकाश करके बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, श्रीर कर्म करके श्रपने स्थान पर वापस श्रा जाता है, ऐसा सुनकर जनक महाराज ने कहा, हे मुने ! यह ऐसाही है जैसा श्रापने कहा है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

अस्तामित आदित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तमिते शान्तेग्नौ किं-ज्योतिरेवायं पुरुष इति वागेवास्य ज्योतिर्भवतीति वाचैवायं ज्योति-षास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीति तस्माद्दै सम्राडपि यत्र स्वः पाणिर्न विनिर्कायतेथ यत्र वागुचरत्युपैव तत्र न्येतीत्येवमेवैतद्या-ज्ञवल्क्य ॥

श्चस्तमिते, श्रादित्ये, याज्ञवल्क्य, चन्द्रमित, श्रस्तमिते, शान्ते, श्रान्ते, किंज्योतिः, एव, द्ययम् , पुरुषः, इति, वाक्, एव, द्यस्य,ज्योतिः, भवति, इति, वाचा, एव, अध्यम्, ज्योतिषा, श्रास्ते, परूपयते, कर्म, कुरुते, विपल्थेति, इति, तस्मात्, वै, सम्राट्, भ्रापि, यत्र, स्वः, पासिः, न, विनिर्क्वायते, द्राथ, यत्र, वाक्, उचरति, उप, एव, तत्र, न्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य ॥

पदार्थाः

ऋन्वयः श्चादिस्ये=सूर्य के श्चस्तमित=श्रस्त होने पर चन्द्रमसि=चन्द्रमा के अस्तमिते=श्रस्त होने पर अग्नी=अग्नि के शान्ते=अस्त होने पर याज्ञवल्क्य=हे ऋषे ! श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष यहा≕जर्ब इति≕ऐसा + जनकः=जनक ने + आह=पूछा ह≕तव याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा कि

पदार्थाः भ्रान्वयः ब्रस्य=इस पुरुष का ज्योति:=प्रकाश u्च≕निश्चय करके वाक्=वासी है हि=क्योंकि श्चयम्≕यह पुरुष वाखा=वाणी करके एच=ही आस्ते=बेटता है पल्ययते≕गमन करता है कर्म=कर्म कुरुते=करता है विपल्येति=कर्म करके अपने स्थान पर खोटता है सम्राट्≔हे जनक ! तस्मात् वै=इस खिये यत्र=जहां **∓वः**=श्रपना पाणिः=हाथ भी

न≔नहीं विनिर्कायते=जाना जाता है यानी नहीं दीखता है अथ=पर यत्र=जहां चाक्=वायी उच्चरति=उच्चरित होती है तत्र=वहां यानी उस उपन्येति=पुरुष बाखी करके
पहुँचता है

इति शुत्वा=पेसा सुन कर
जनकः=जनक ने
प्राह=कहा
याझवल्म्य=हे याझवल्म्य !
पतत्=यह
पवम् पव=पेसाही है जैसा
न्नापन कहा है

भावार्थ ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं, हे मुने ! जब सूर्य झ्रस्त है, चन्द्रमा अस्त है, अगिन भी नहीं है, तब यह पुरुप किस प्रकाश से प्रकाशवाला होताहे ? इस पर याज्ञवर्लस्य महाराज कहते हैं कि, इस पुरुप का प्रकाश वागा करके होता है, क्योंकि यह जीवात्मा वागा करके ही बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, कर्म करके अपने स्थान को वापस आता है, इसिलये हे जनक ! जहां अपना हाथ भी नहीं दिखाई देता है, परन्तु जहां वागा उचरित होती है वहां यानी उस अन्धेर में पुरुष वागा करके पहुँचता है, यह सुनकर राजा जनक ने कहा यह ऐसाही है जैसा आपने कहा है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

श्रस्तिभत श्रादित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तिभिते शान्तेग्नौ शान्तायां वाचि किंज्योतिरेवायं पुरुष इत्यात्मैवास्य ज्योतिभवतीत्यात्मनैवायं ज्योतिपास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीति ॥

पदच्छेदः ।

आस्तमिते, आदित्ये, याज्ञवल्कय, चन्द्रमसि, अस्तमिते, शान्ते, आग्नौ, शान्तायाम्, वाचि, किंज्योतिः, एव, अयम्, पुरुषः, इति, आत्मा, एव, आस्य, ज्योतिः, भवति, इति, आत्मना, एव, अयम्, ज्योतिषा, आस्ते, पक्ययते, कर्म, कुरुते, विपक्षेति, इति ॥ श्रन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

प्याज्ञचल्कय=हे याज्ञवल्कय !

ग्रादित्ये=सूर्य के
श्रस्तमिते=मस्त होने पर
चन्द्रमसि=चन्द्रमा के
श्रस्तमिते=श्रस्त होने पर
ग्रागी=भिन्न के
शान्त=शान्त होने पर
चाचि=वाणी के
शान्तायाम्=बन्द होने पर
श्रयम्=यह
पुरुषः=पुरुष
एच=निरुचय करके

किस प्रकाशवाला दिज्योतिः= { होताहै यानी किसके प्रकाश करके प्रकाश वाला होता है

इति ≃इस पर याझवत्क्यः ≔गज्ञवत्क्य ने उवाच=कहा कि अस्य=इस पुरुष का आस्य=इस पुरुष का पव=ही
ज्योतिः=ज्योतिवासा
भवति=होताहै
हि=क्योंकि
अयम्=यह पुरुष
श्चातमा=श्रपने ही
ज्योतिपा=श्रकाश करके
श्चास्ते=बैठता है
पल्ययते=हभर उधर किरता है
कर्म=कर्म
कुरुते=करता है

श्राता है इति≕ऐसा + थ्रुत्वा≕सुन करके

+ जनकः=जनक ने + उवाच=कहा

+ याञ्चयत्क्य=हे याज्ञव्यस्य !

+ पतत्=यह

+ पवम् । = ऐसाही हे जैसा

+ एवं । = आप कहते हें

भावार्थ ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! सूर्य के आस्त होने पर, चन्द्रमा के आस्त होने पर, अग्नि के शान्त होने पर, वाग्गी के बन्द होने पर यह पुरुप किसक प्रकाश करके प्रकाशवाला होता है ? इसके उत्तर में याझकल्य महाराज कहते हैं कि, इस पुरुप का आत्माही ज्योतिवाला है, क्योंकि यह पुरुप अपने ही प्रकाश करके बैठता है, इधर उपर फिरता है, कर्म करता है, और कर्म करके अपने स्थान को जौट आता है, ऐसा मुनकर जनक राजा ने कहा, हे मुने ! यह ऐसाही है।। है।।

पदार्थाः

मन्त्रः ७

कतम त्रात्मेति योयं विज्ञानमयः प्राग्णेषु हृद्यन्तरुर्योतिः पुरुषः समानः सञ्जभौ लोकावनुसंचरति ध्यायतीव लेलायतीय स हि स्वमो भूत्वेमं लोकमतिकामति मृत्यो रूपािण ॥

पदच्छेदः ।

कतमः, आतमा, इति, यः, अयम्, विज्ञानमयः, प्राग्णेषु, हृदि, अन्तरुवोंतिः, पुरुषः, समानः, सन्, उभौ, लोकौ, अनुसंचरति, ध्यायति, इव, लेलायति, इव, सः, हि, स्वप्नः, भूत्वा, इमम्, लोकम्, अति-क्रामति, मृत्योः, रूपागि ॥

पदार्थाः अन्वयः त्रास्वयः + जनकः=राजा जनक + पृच्छति=पृद्धते हैं + याञ्चवल्कय=हे याज्ञवल्क्य कतमः=कौनसा सः≔वह श्रात्मा=श्रात्मा है याञ्चवत्क्यः=याञ्चवक्क्य ने उवाच=कहा यः=जो श्रयम्=यह प्रागेषु=इन्द्रियों विषे विज्ञानमयः=विज्ञानस्वरूप है यः=जो हृदि=बुद्धि विषे श्चन्तउयोतिः=श्चन्तर् प्रकाशवाला पुरुषः=पुरुष है सः हि=वही

समानः=बुद्धि रूप सन्=होता हुन्ना उभी=दोनों लोकौ=बोकों में संचरति=फिरता है ध्यायति इव=धर्म भ्रथमं का ध्यान करता है लेलायति इव=श्रति श्रभिकाषा करता है . सः=वही स्वप्रः=स्वप्र श्रवस्था में भूत्वा=होकर इमम्=इस लोकम्=लोक को मत्योः=मृत्यु के रूपाणि=रूप को यानी दुःख को अतिकामति=उजहन करता है

भाषार्थ ।

राजा जनक पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! आपने कहा है

इस पुरुष का आत्माही ज्योतिवाला है, यानी वह स्वयं ज्योतिःस्वरूप है, पर इस शरीर में इन्द्रिय झीर झन्तःकरण भी स्थित हैं, तो क्या वह ज्योति:स्वरूप पुरुष उन इन्द्रियों और अन्त:करण से उत्पन्न हुआ है, या इनले वह कोई अतिरिक्त परुष है, आप क्रपाकरके मुक्ते सममाकर कहें. कि क्या इन्द्रिय अथवा अन्त:करगा अथवा इन्द्रियसहित शरीर-समुदाय आत्मा है, या इनसे वह भिन्न है, इसके जवाब में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं. जो इन्टियों बिषे विज्ञानरूप से स्थित है आरे जो बद्धि बिष अन्त: प्रकाशवाला पुरुष है, वही आतमा है, अथवा जो मनके द्वारा सब इन्द्रियों के निकट जाकर उन सबको सजीवित कर प्रज्वलित करता है, श्रीर जैसे राजा श्रापने सहचारियों को लेकर इधर उधर बिचरता है तद्वतु जो इन्द्रियों के साथ विचरनेवाला है वह आत्मा है, अथवा जो हृदय में रहता है ख्रीर जिसके अभ्यन्तर सूर्यवतः स्वयं ज्योतिःस्वरूप सत्र शरीरों में रमण करता है वह आत्मा है, फिर शंका होती है कि वह जीवात्मा टीपक के समान यहांही लयभाव को प्राप्त हो जाता है अर्रीर इसका कोई अन्य कोक नहीं है, इस शंका का समाधान याज्ञवल्क्य महाराज करते हैं कि, वह जीवात्मा सामान्य रूप से दोनों लोकों में गमन करता है, अर्थात देहादि से भिन्न कोई कर्त्ता भोक्ता है जो मरकर दूसरे जन्म में अपने कर्मफल को भोगता है, क्योंकि जिस समय यह जीवात्मा मुर्च्छित होकर ख्रीर वेखबर होकर शरीर को त्यागने लगता है तो निज उपार्जित धर्म अधर्म को याद करने लगता है, यह सोचते हुये कि इन सबको में त्यागुंगा क्या ये सब मुम्मको फिर मिलेंगे ? ये कैसे जाना जाता है इस बात के जानने के लिये स्वप्न का दृष्टान्त आगे कहते हैं, ह राजन ! जब पुरुष स्वप्न अप्रवस्था को प्राप्त होता है तभी वह स्वप्न में देखता है कि मैं सुखी हं, मुक्तमें किंचित् भी दुःख नहीं है, इसी तरह इस जोक में भी परलोक के सुख का अनुभव करता है, और सममता है कि परलोक कोई भिन्न

वस्तु है, याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं कि, जो जागरण और स्वप्ना-वस्था में सामान्यरूप से विचरण करता है वही झात्मा है, झौर जैसे जागरणावस्था में और स्वप्नावस्था में कुळ भेद नहीं है वैसेही इस लोक और परलोक में भी कोई भेद नहीं है जो कुळ यहां कमाता है उसका फल वहां भोगता है ॥ ७॥

मन्त्रः द

स वा श्रयं पुरुषो जायमानः शरीरमिशसंपद्यमानः पाप्पभिः संध्ये सुज्यते स उत्क्रामन्ध्रियमागाः पाप्मनो विजहाति ॥

पद्च्छेदः ।

सः, वै, श्रयम्, पुरुषः, जायमानः, शरीरम्, श्राभिसंपद्यमानः, पाप्मभिः, संसुज्यते, सः, उत्क्रामन्, छियमागाः, पाप्मनः, विजहाति ॥ स्रन्वयः पदार्थाः । श्रन्वयः पदार्थाः

च=धौर

पाप्मिभिः=श्रशुभ कर्मजन्य श्रथमाँ से संस्कृत्यते=संगत करता है च=श्रीर सः=वडी म्रियमाग्ः=मरता हुश्रा उत्कामन्=जपर को जाता हुश्रा पाप्मनः=सब पापों को विज्ञहाति=होड़ देता है

भावार्थ ।

यहां किसी पुगयशाली पुरूष का व्याख्यान है, बहुत से पुगयशाली पुरूष पूर्व पापजन्य दुःखों के भोगने के लियेही शरीर धारण करते हैं, ऐसे पुरूष जब एक शरीर को त्यागकर दूसरे शरीर में उत्पन्न होते हैं, तो श्रशुभकर्मजन्य श्रथमों से संयुक्त होते हैं परन्तु जब मरने को प्राप्त होते हैं तो ज्ञान से संपन्न होने के कारण सब पापों को इसी लोक में तष्ट कर देते हैं ॥ ८ ॥

मन्त्रः ६

तस्य वा एतस्य पुरुषस्य द्वे एव स्थाने भवत इदं च परलोकस्थानं च संध्यं तृतीयक्ष स्वप्तस्थानं तिस्मिन्संध्ये स्थाने तिष्ठकोते उभे स्थाने परयतीदं च परलोकस्थानं च । अथ यथाक्रमोऽयं परलोकस्थाने भवति तमाक्रममाक्रम्योभयान्पाप्मन आनन्दार्थःश्च पश्यति स यत्र प्रस्तिपत्यस्य लोकस्य सर्वोवतो मात्रामपादाय स्वयं विद्वत्य स्वयं निर्माय स्वेन भासा स्वेन ज्योतिपा प्रस्विपत्यत्राऽयं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति ।।

पदच्छेदः ।

तस्य, वै, एतस्य, पुरुषस्य, द्वे, एव, स्थाने, भवतः, इद्म्, च, पार्-लोकस्थानम्, च, संध्यम्, तृतीयम्, स्वप्तस्थानम्, तस्मिन्, संध्ये, स्थाने, तिष्ठम्, एते, उभे, स्थाने, परयति, इद्म्, च, परलोकस्थानम्, च, आथ, यथाकमः, आयम्, परलोकस्थाने, भवति, तम्, आक्रमम्, आक्रम्य, उभयान्, पाप्मनः, आनन्दान्, च, परयति, सः, यत्र, प्रस्व-पिति, आस्य, लोकस्य, सर्वावतः, मात्राम्, आपादाय, स्वयम्, विहत्य, स्वयम्, निर्माय, स्वेन, भासा, स्वेन, ज्योतिषा, प्रस्विपिति, आत्र, आयम्, पुरुषः, स्वयम्, ज्योतिः, भवति ॥

अन्वयः	पदार्थाः	श्चन्वयः	पदार्थाः	
तस्य=उस	,	इदम्=एक तो यह लोक यानी		
प्तस्य=इस		जायत् ग्रवस्था		
पुरुषस् य=पुरुष यानीः द्वे =दो	जीवास्मा के	परलाक- स्थानम्	(दूसरा परलोक यानी सुषुद्धि स्रवस्था	
पव=ही		च=धार		
स्थाने=स्थान		तृतीयम्≕	रीसरा	
च=भवरय		संध्यम=	(इन दोनों लोकों या अवस्थाओं को मिलानेवाला	
भवतः≕हें			मिलानेवाला	

स्वप्रस्थानम्=स्वप्रस्थान है तस्मिन्=तिस संध्ये=बीच के स्थाने=स्थान में यानी स्वप्न में जाकर प्ते=यह जीवाश्मा उभे=दोनों स्थाने=स्थानोंको यानी इदम्=इस जन्म च=धौर परलोक- । ज्ञानेवाले जन्मसहित स्थानम् । कर्मफलको पश्यति=देखताहै यानी भोगता च=श्रीर ऋयम्≕यही जीव परस्रोकस्थाने=परबोक में यथाक्रमः=कर्मानुसार फ्लाश्रय भवति=होता है + पुनः≕िकर तम्=उसी द्याश्रयम्=बाश्रय को आक्रम्य=प्रहण करके उभयान्=दोनों यानी पाप्मनः=भ्रधर्मजन्य दुःखोंको च≕मौर श्चानन्दान्=धर्मजन्य सुर्खो को स्वयम् ज्योतिः=स्वयंप्रकाश वाला पश्यति=भोगता है

+ पुनः=फिर सः=वह जीवात्मा यत्र≕जब मस्विपिति=सोता है + तत्र≖तव सर्वावतः=सब वासनासे यक श्रस्य≖इस लोकस्य=जाप्रत् लोक के मात्राम्=श्रंशको श्रपादाय=जेकर + च पुनः=भौर फिर स्वयम्=स्वतः चिहत्य=उसको मिटाकर स्वयम्=भपने से ही निर्माय=उसे निर्माणकर स्वेन=ग्रपने निज भासा=प्रकाशकरके + च=श्रीर स्वेन=ग्रपने निज ज्यो।तिषा=तेजकरके प्रस्वपिति=बहुप्रकार स्वमकी कींड़ा को करता है श्रत्र=इस श्रवस्था में अयम्=यह पुरुष:=जीवात्मा भवति=होता है

भावार्थे ।

पूर्व में जो कुछ कहागया है उसी को स्वप्न के दृष्टान्त से कहते हैं, इस जीवात्मा के रहने के दोही स्थान हैं, एक तो यह जोक आर दूसरा

परलोक है अथवां एक जाप्रतस्थान है, अगेर दूसरा सुष्प्रिस्थान है, भीर इन दोनों की संधि तृतीय स्वप्रस्थान है, इस तृतीय स्थान में स्थित होकर यह जीवात्मा दोनों स्थानों को देखता है, श्रीर जैसे जन्म के अनन्तर मरमा और मरमा के अनन्तर जन्म होता है, वैसेही जाग-एए के अनन्तर स्वप्न अर्थीर स्वप्न के अनन्तर जागरण होता है. और जैसे जागरमा के छोर स्वप्न के मध्य में एक अवस्था होती है, वैसेही स्रोक क्योर परलोक के मध्य एक संधि होती है, वही स्वप्रक्रवस्था है. दसीमें जीवात्मा इस जन्म श्रीर श्रिप्रम जन्म के कर्मफल को देखता है. भ्यार वहीं जीव परलोक में कर्मानसार फलाश्रयवाला होता है. स्रोर फिर उसी आश्रय को प्रहरा। करके दोनों यानी अधर्मजन्य द:खों को श्रीर धर्मजन्य सुखों को भोगता है, श्रीर जब वह जीवात्मा सो जाता है तब सब वासनार्ध्यों से मुक्त होताहुआ जाप्रतुखबस्था के अंश को प्रहत्मा कर ख्रीर फिर उसको मिटाकर अपने से ही निर्माण कर अपने निज प्रकाश करके बहुत प्रकार स्वप्नकी कीड़ा को करता है, इस अवस्था में यह जीवात्मा स्वयं प्रकाशवाला होता है, सूर्याद ज्योतिकी श्चपेक्षा नहीं रखता है, श्चपनीही ज्योतिकी सहायता करके श्चनेक कीडा को करता है।। १।।

मन्त्रः १०

न तत्र रथा न रथयोगा न पन्थानो भवन्त्यथ रथान्थयोगा-न्पथः सजते न तत्रानन्दा सुदः प्रमुदो भवन्त्यथानन्दान्मुदः प्रमुदः सजते न तत्र वेशान्ताः पुष्करिएयः। स्रवन्त्यो भवन्त्यथः वेशान्तान्पुष्करिणीः स्रवन्तीः सजते स हि कर्षा ।।

पदच्छेदः ।

न, तत्र, रथाः, न, रथयोगाः, न, पन्थानः, भवन्ति, श्रथ, रथान्, रथयोगान्, पथः, सृजते, न, तत्र, श्रानन्दाः, सुदः, प्रसुदः, भवन्ति, श्रथ, श्रानन्दान्, सुदः, प्रसुदः, सृजते, न, नत्र, वेशान्ताः, पुष्करिययः, स्रवस्त्यः, भवन्ति, श्रथः, वेशान्तान्, पुष्करिग्गीः, स्रवन्तीः, सृजते, सः, हि, कर्त्ता ॥

अन्वयः पर्

पवार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्र=डस स्वमावस्था में म=न रथाः=स्थादिक भवन्ति=होते हैं न=न रथयोगाः≔षोड़े द्यादिक होते हैं च≔धीर न=न पन्थानः=सस्ते होते हैं

पन्थानः=रास्त हाते हैं ऋथ=पर*तु सः=वह जीवान्मा रथान्=रथोंको

रधान्=तथीको रथयोगान्=घोदों को पधः=मार्गों को + स्वक्रीडार्थम्=श्रपनीक्रीडा के लिये

स्त्रजेतं=रचलेता है तत्र=उस स्वमावस्था में श्रानन्दाः=प्रयजन्य भानन्द सुदः=हर्ष प्रमुदः=श्रतिहर्ष

न=नहीं भवन्ति=होते हैं

न्त=हात ह

श्चथ=परन्तु श्चानन्दान्=श्चानन्द मुदः=मोद प्रमुदः=प्रमोद को सृजते=पैदा करखेता है तत्र=उस स्वप्नावस्था में

त न-०५ रवर वेशान्ताः=सरोवर पुष्करिरायः=ताक्षाव स्रवन्त्यः=नदियां न=नहीं भवन्ति=होती हैं

श्रथ=परन्तु वेशान्तान्≕सरोवरों + च=श्रोर पुष्करिगीः=तालावों

+ च=घौर स्रवन्तीः=नदियाँ को सुजते=बनालेता है

हि=क्योंकि सः=वह + स्वप्ने=स्वप्नावस्था में कर्ता=कर्ता धर्ता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन्! स्वप्रश्चवस्था में न रथादिक होते हैं, न घोड़े आदिक होते हैं, और न मार्ग होते हैं, पग्नतु स्वप्रद्रष्टा रथोंको, घोड़ों को, मार्गों को आपनी कीड़ा के किये रच लेता है, उसीतरह सामान्य सुख, पुत्रादिसम्बन्धी हुए, आतिहुई, स्वप्ना- वस्था में नहीं होते हैं, परन्तु यह जीवातमा आनन्द और मोद और प्रमोद को रचलेता है, और इसीप्रकार स्नान अथवा जलकीड़ा के लिये सरोवर, तालाव, नदियों को जो स्वप्रश्चवस्था में नहीं होती हैं यह जीवातमा रचलेता है, क्योंकि स्वप्रश्चवस्था में वह पुरुष कर्त्ता धर्ता होता है।। १०॥

मन्त्रः ११

तदेते श्लोका भवन्ति । स्वमेन शारीरमभिपहत्यासुप्तः सुप्ता-नभिचाकशीति । शुक्रमादाय पुनरेति स्थानथः हिरएमयः पुरुष एकहथंक्षः ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एते, रलोकाः, भवन्ति, स्वप्नेन, शारीरम्, श्र्वभिष्रहत्य, श्रासुप्तः, सुप्तान्, श्राभिचाकशीति, शुक्रम्, श्रादाय, पुनः, एति, स्थानम्, हिर-रामयः, पुरुषः, एकहंसः ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः

अम्बयः

पदार्थाः

पुनः=िफर सुक्रम् =सब इन्द्रियों की तेज

-मन्त्र मात्राको -प्रमाण श्रादाय=लेकर

न्ति=हैं स्थानम्≕जागरित स्थान को प्रोत≕स्वप्र के द्वारा प्रति≕जाता है

> + सः=वही हिरगमयः=प्रकाशमान

पुरुषः≕सव पुरियों में रहने-वाला है

सः एव=वही

प्कहंसः= { चकेबा लोकों में यमनागमन करने-वाला है

तत्=उस प्योंक विषय में
पते=ये आगेवाले
श्लोकाः=मन्त्र
प्रमाखाः=प्रमाख
भवनि=हैं
स्वप्रेत=स्वप्र के द्वारा
शारीरम्=पाश्चभौतिक शरीर को
श्रमप्रदृत्य=इन्द्रियों के सहित
चेष्टारहित करके
असुप्तः=स्वयम् जागताहुत्रा
सुप्तान्=

्रिश्तान्=

्रिश्तान्=

्रिश्तान्=

सुप्तान्=

सुप्तान्=

सुप्तान्=

सुप्तान्=

सुप्तान्=

सुप्तान्व

अभिचाकशीति=देखता है + च=भीर

आवार्ध ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं. हे राजा जनक ! यह जीवातमा स्वप्न के द्वारा स्थल पाञ्चभौतिक शरीर को और इन्द्रियों को चेष्टारहित करके स्वयं जागता हुआ। अन्तःकरणा की वृत्ति के सब पदार्थों को देखता है, यानी उसका साक्षी बनता है, इतना स्वप्नश्रवस्था का वर्णन करके याज्ञवल्क्य महाराज फिर कहते हैं कि. हे जनक राजा ! यह जीवात्मा इन्द्रियों के तेज को लिये हुये स्वप्नस्थान से जामतुस्थान को आता है, यही प्रकाशमान होता हुआ सब पुरियों में रहनेवाला है. यही अकेला लोकों में गमनागमन करनेवाला है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

पाणेन रक्षत्रवरं कुलायं बहिष्कुलायादमृतश्चरित्वा । स ईयते-मतो यत्र कामछं हिरएमयः पुरुष एकहछंसः ॥

पवच्छेदः।

प्राग्तेन, रक्षन्, अवरम्, कुलायम्, बहिः, कुलायात्, अमृतः. चरित्वा, सः, ईयते, अमृतः, यत्र, कामम्, हिरगमयः, पुरुषः, एकहंसः ॥ पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः चान्वयः बहिश्चरित्वा=बाहर विचरता हुमा

प्राशात=प्राण करके

श्वरम्=श्रुद कुकायम्=शरीर को

रक्षन्=रक्षा करता हुआ अमृतः=मरण धर्म से रहित होता हम्रा

हिरएमयः=स्वयं ज्योतिःस्वरूप पुरुष:=सबशरीरों में रह नेवाला एकहँसः=प्रकेता लोकों में मगन

करनेवासा जीवात्मा

भावार्थ ।

कामम्=कामना की ईयते=इच्छा करता है

तत्र=उसी उसी में

अमृतः=अमृतरूप होता हुआ

यत्र=जिस जिस विषय में

+ सः≔वह पति=पास होता है

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! प्रात्म करके

अध्युद्ध शरीर की रक्षा करता हुआ, मरगाधर्म से रहित होता हुआ, स्वयं क्योति:स्वरूप, सब शरीरों में रहनेवाला, अकेला जो लोकों में गमन करनेवाला जीवात्मा है वह बाहर विचरता हुआ और अधृत-रूप होता हुआ जिस जिस विषय की कामना करता है उसी उसी को बह प्राप्त होता है।। १२।।

मन्त्रः १३

स्वमान्त उच्चावचमीयमानो रूपाणि देवः कुरुते बहूनि । उतेव स्त्रीभिः सह मोदमानो जक्षद्वतेवापि भयानि पश्यन् ॥

पदच्छेदः ।

स्वप्रान्ते, उश्वावचम्, ईयमानः, रूपाणि, देवः, कुरुते, बहूनि, उत, इव, स्त्रीभिः, सह, मोदमानः, जक्षत्, उत, इव, स्त्रपि, भयानि, पश्यन्।। श्रान्वयः पदार्थाः श्रान्वयः पदार्थाः

उद्यावचम्=भनेक अंच नीच

योतियों को

जक्षत् इव= { बन्धु मित्रादिकों के साथ ईसता हुआया और कभी

ईयमानः=प्राप्त होता हुआ देवः=दिव्य गुणवाला

जीवास्मा

बहुनि=बहुत से

रूपाणि=रूपों को

कुरुते=वासनावश उरपन्न

करता है

उत=श्रोर कभी इष=मानो स्त्रीभिः=िक्वयों के सह=साथ मोदमानः=रमण करता हुन्ना + अथवा=अथवा भयानि=भयजनक व्यावसिंह व्यदि को

पश्यम्=देखता हुन्ना स्वप्नान्ते=स्वप्नस्थान में

+क्रीडमानः } =कीड्। करता है

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह दिव्य गुरा-वाका जीवात्मा ऊंच नीच योनियों को प्राप्त होता हुआ अनेक रूपों को वामनावश उत्पन्न करता है, और उनके साथ विहार करता है, कभी विद्वान होकर शिष्य को पढ़ाता है, और कभी शिष्य बनकर पढ़ता है, कभी बन्धु मित्र आदिकों के साथ हैंसता है, और कभी क्रियों के साथ रमग्रा करता है, और कभी भयानक व्याघ्र बिंह आदि जीवों को देखता है, इस प्रकार यह स्वप्नमें अनेक कीड़ा करता है। १३।

मन्त्रः १४

श्चाराममस्य पश्यन्ति न तं पश्यति कश्चनेति । तं नायतं बोध-येदित्याहुः । दुर्भिषज्यथं हास्मै भवति यमेष न प्रतिपद्यते । श्रयो खक्वाहुर्जागरितदेश एवाऽस्यैष इति यानि क्षेव जाग्रत्पश्यति तानि सुप्त इत्यत्राऽयं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति सोऽहं भगवते सहस्रं ददा-स्यत ऊर्ध्व विमोक्षाय बृहीति ॥

पदच्छेदः ।

आरामम्, अस्य, पश्यन्ति, न, तम्, पश्यति, कश्चन, इति, तम्, न, आयतम्, बोधयेत्, इति, आहुः, दुर्भिषच्यम्, ह, अस्मे, भवति, यम्, एवः, न, प्रतिपद्यते, अथो, खल्लु, आहुः, जागरितदेशे, एव, अस्य, एवः, इति, यानि, हि, एव, जामत्, पश्यति, तानि, सुप्तः, इति, अत्र, अयम्, पुरुषः, स्वयम्, ज्योतिः, भवति, सः, आहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, अतः, ऊर्ध्वम्, विमोक्षाय, ब्रूहि, इति ॥

झन्वयः पदार्थाः + जनाः=सब खोग श्रस्य=इस जीवास्मा के श्रारामम्=कीकास्थान को तो पश्यन्ति=वेखते हें

> + परन्तु=परन्तु कश्चन=कोई भी

तम्=उस जीवात्मा को + ऋतिसूक्ष्मात्=ऋतिसृक्ष्म होने के

> कारण न≂नडीं

श्चन्वयः

ः पदार्थाः पश्यति=रेखता है

+ यथा=जैसे + शिशः=बातक

+क्रोडया } नेवार्यमाणः } =कीड़ा की समाप्ति पर

> + उदास्ते≃उदास भगसम होजाता है

+ तथा एवम्=वैसेही

+ सुप्तात्=स्वम से

+ पुरुषः उत्थाय=पुरुष उठ कर

+ उदास्ते=मसप्रव होजाता है + अतः=इस विये आयतम्=सोये हुवे पुरुष को न≕महीं बोधयेत्=जगाना चाहिये इति=ऐसा आहु:=कोई माचार्य कहते हैं + हि=नयांकि यम्≕िनस देश में एषः=यह पुरुष न=नहीं चित्रवद्यते=जा सका है ह≕निश्चय करके श्चरमै=उस देश के जिये दुर्भिषज्यम् } विकित्सा दुष्कर भवति } होजाती है अधो=कोई आचार्य खलु≕निरचय करके आहुः≔कहते हैं कि श्चस्य=इस सोये पुरुष की एषः=यह दशा एव≕निस्सन्देह जागारितदेशे=जामत् अवस्था की ऐसी है हि=क्योंकि यानि=जिनको

जाप्रत्=जागताहुमा पश्यति=देखता है तानि=उन्हीं को स्रप्तः=सोताहचा सम्राट्ट=हे राजन् ! अत्र=इस स्वमावस्था में पश्यति=रेखता है श्रयम्=यह पुरुष:=पुरुष स्वयम् =स्वयम् ज्योतिः=प्रकाशस्वरूप भवति=होता है इति≕ऐसा + श्रुत्वा=मुनकर जनकः=राजा जनक उवाच=बोले कि सः≔वही श्रहम्=मैं बोधित हुआ भगवते=भाप पुज्य के किये सहस्रम्=हजार गौधों को ददामि=देताई श्रतः≔इसके अर्ध्वम्=मागे विमोक्षाय=मोक्ष विषयक बृहि=भाप उपदेश करें

भावार्थ ।

याझवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! सब लोग जीवात्माकी क्रीड़ा को तो देखते हैं, पर कोई जीवात्मा को अस्तिस्क्ष्म होनेके कारणा नहीं देखता है, जैसे शिशु क्रीड़ा करते करते जब निवा- रगा होजाता है, तब वह अप्रसन्न या उदासीन प्रतीत होता है, इसी प्रकार स्वप्न में क्रीड़ा करनेवाले जीवात्मा को जब कोई जगाता है तब भ्रागर वह श्राच्छा स्वप्न देखता है तो जागने पर श्रप्रसन्न प्रतीत होता है, क्यों कि जो झानन्द उसको उस स्वप्न में मिल रहा था वह दूर होगया इस ख्याल से कोई कोई आचार्य कहते हैं कि सुपुत पुरुष को विशेष करके जब वह गाढ निद्रा में रहता है एकाएक न जगाना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से उसके शरीर को हानि पहुँचती हैं, श्रीर दूसरा पुरुष उसके पास उस श्रवस्था में न पहुँचने के कार्गा इस सोयेहुये पुरुष की दवाई नहीं करसक्ता है, कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि, जाप्रत् श्रीर स्वप्न में कोई भेद नहीं है, जिस पदार्थ को पुरुष जाप्रत् में देखता है, उसीको स्वप्न में भी देखता है, न जीवात्मा कहीं जाता है, न कहीं श्राता है, इसिलये समूत पुरुष के सहसा जगाने में कोई क्षति नहीं है, हे राजा जनक ! स्वप्नद्भावस्था में यह पुरुष स्वयं प्रकाशरूप होता है, ऐसा सुनकर राजा जनक बोले हे मुने ! मैं बोधित होताहुआ आप पुज्यपाद के लिये एक सहस्र गौद्यों को देताहूं, हे भगवन् ! आप कृपा करके मुक्तिविषयक उपदेश मुम्तको करें।। १४ ॥

मन्त्रः १५

स वा एष एतस्मिन्संप्रसादे रत्वा चरित्वा दृष्ट्वैव पुएयं च पार्प च पुनः मतिन्यायं प्रतियोन्याद्रवति स्वमायैव स यत्तत्र किंचित्प-रुयत्यनन्वागतस्तेन भवत्यसङ्गो ह्ययं पुरुष इत्येवमेवैतद्याइवल्क्य सोऽहं भगवते सहस्रं ददाम्यत ऊर्ध्वे विमोक्षायैव ब्रूहीति ।।

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, एतस्मिन्, संप्रसादे, रस्त्रा, चरित्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, आद्रवित, स्त्रप्राय, एत, सः, यत्, तत्र, किंचित्, पश्यति, अनन्वागतः, तेन, भवति, असङ्गः, हि, अयम्, पुरुषः, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवह्नयः,

सः, श्रहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, श्रातः, ऊर्ध्यम्, विमोक्षाय, एव, ब्रुहि, इति ॥

भ्रान्ययः

पदार्थाः ग्रम्बयः

पदार्थाः तेन=स्वप्रपदार्थ से

सः वै≔वही एष:=यह जीवास्मा

रत्वा=बन्धु स्त्री आदिकों से

क्रीडा करके

चरित्वा=इथर उधर विचरकरके पुगयम्=पुरयजन्य सुखको

च≕ग्रौर

पापम् च=पापजन्य दुःख को

एव=ग्रवश्य

ष्ट्रा=देखकर

एतस्मिन् रे इस सुपुप्ति श्रवस्था संप्रसादे ५ में

+ याति=जाता है पुनः=फिर

व्यतिन्यायम्=जिस शहसे गयाथा उसके

प्रतियोनि=प्रतिकृत मार्गकरके स्वप्नाय एव=स्वमस्थान के वास्ते आद्रवति=जोट त्राता है

हि=क्योंकि

यत=जो

किंचित्≕कुष

सः=वह जीवास्मा

तत्र=स्वप्त मे

पश्यति=देखता है

अनन्धागतः=भनुबद्ध नहीं

भवति=होता है

+ हि ≃क्योंकि

श्रयम्=यह

पुरुषः=पुरुष

+ वस्तुतः=वास्तव करके श्रसङ्गः=श्रसङ्ग है

+ जनकः=जनक ने

+ श्राह=कहा

यास्वल्क्य=हे याज्ञबरु∓य महा-

राज !

एतत्=यह पवम् पय=ऐसाही है जैसा भाप

कइते हैं सः=वही

श्रहम्=भैं

भगवते=भाप प्रमके लिये

सहस्रम्=इजार गौधों को द्दामि=दक्षिणा में देताहं

श्रतः≔इससे

ऊर्ध्वम्≕गागे

विमोक्षाय=मुक्ति के निये बृहि इति=उपदेश दीजिये

भाषार्थ ।

याज्ञवहक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा

स्वप्रधावस्था में बन्धु, मित्र, स्त्री द्यादिकों के साथ की इा करके इधर विचर करके पुरायजन्य सुख को, पापजन्य दु:ख को भोग करके सुप्राध्यजन्य सुख को, पापजन्य दु:ख को भोग करके सुप्राध्यजन्य सुख को, पापजन्य दु:ख को भोग करके सुप्राध्यजन्य में किसको संप्रसाद क्ष्यवस्था भी कहते हैं प्रवेश करता है वहांपर जाग्रत और स्वप्न में देखी वस्तु को भूजजाता है, ब्योर कुछ कास्त रहकर जिस मार्ग से गया था उसके प्रतिकूल मार्ग करके स्वप्नावस्था के लिये लीट काता है, क्योंकि जो कुछ वह स्वप्नात्मा स्वप्न में देखता है उस स्वप्रपदार्थ से वह नहीं वछ होता है, क्योंकि वह पुरुष वास्तव करके छसङ्क है, इसपर जनक महाराज कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! यह ऐसाही है जैसा खापने कहा है, वहीं में झाप पूज्य के लिये सहस्र गौझों को दक्षिशा में देताहूं, झाप कृपा करके मुक्ति के लिये उपदेश दीजिये ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

स वा एप एतस्मिन्स्वमे रत्वा चरित्वा दृष्ट्वैव पुएयं च पापं च पुनः मितन्यायं मितयोन्याद्रवति बुद्धान्तायैव स यत्तत्र किंचित्पश्य-त्यनन्वागतस्तेन भवत्यसङ्गो द्वयं पुरुष इत्येवमेवैतचाज्ञवल्क्य सोऽदं भगवते सद्दस्नं ददाम्यत उद्ध्वं विमोक्षायैव बूद्दीति ॥

पदच्छेदः।

सः, वै, एषः, एतिस्मन्, स्वप्ने, रत्वा, चिरत्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, आद्रवित, बुद्धान्ताय, एव, सः, यत्, तत्र, किंचित्, परयित, आनन्वागतः, तेन, भवित, आसङ्गः, हि, आयम्, पुरुषः, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य, सः, आहम्, भगवते, सहस्रम्, दृदामि, आतः, ऊष्वर्म्, विमोक्षाय, एव, बूहि, इति ॥

त्रस्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

सः वै=वही एषः=यह जीवात्मा पतस्मिन्=इस स्वप्रे=स्वम में

रत्वा=मित्रों से रमण करके चरित्वा=बहुत जगह विचर करके पुरायम् च=पुरायजन्य सुखको च=म्रोर पापम्≕पापजस्य दुःख को एव=श्रवश्य दृष्टा=भोग करके ुपुनः=िकर पीछे प्रतिन्यायम्=जिस कम से गया था उससे उद्धरा प्रतियोनि=मपने स्थान के प्रति बुद्धान्ताय=जायदवस्था के लिये आद्रवति=दीइता है सः=वह जाम्रत् भारमा यत्=जो किंचित्=कुछ स्वप्न=स्वप्न में पश्यति=देखता है तेन=तिस करके सः=वह अनन्वागतः=बद्ध नहीं भवति=होता है

हि=क्योंकि श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष हि=निस्सन्देह ग्रसङ्गः=भसङ्ग है इति=इस पर जनकः=राजा जनक ने याह=कहा + याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! पतत्=यह एव=निश्चय करके एवम्=ऐसाही है याज्ञवल्क्य=हे ऋषे ! सः=वोधित हुन्ना वही श्रहम्=में भगवते=आप पुज्य के लिये सहस्रम्=हजार गौश्रों को ददामि=त्रापके लिये ऋपंग करता हं श्रतः=इससे ऊर्ध्वम्=त्रागे विमोक्षायैव=मुक्ति के लिये ही बृहि=उपदेश करिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा स्वप्न में मित्रों से रमण् करके बहुत जगह बिचर करके झौर पुरायजन्य सुखको, पापजन्य दु:ख को भोग करके स्वप्न के दूर होजाने पर जिस मार्ग से यह गया था उसके प्रतिकृत मार्ग से अपने जाप्नत् स्थान के लिये दौड़ झाता है, झौर जो कुछ कि स्वप्न में देखा है उस करके बद्ध नहीं होता है, क्योंकि यह पुरुप असङ्ग है, इस पर राजा जनक

कहते हैं कि, हे मुने, याज्ञवल्क्य ! निस्सन्देह यह ऐसाही है जैसा आपने कहा है, मैं आप पूज्य के लिये एक सहस्र गौओं को आपकी सेवा में ऋर्पण करता हूं, इसके आगे मुक्ति के प्रकरण को उठाइये, भौर उपदेश कीजिये ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

स वा एष एतिसमन्बुद्धान्ते रत्वा चरित्वा दृष्ट्वैव पुष्यं च पापं च पनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्याद्ववि स्वमान्तायैव ॥

पदच्छेदः।

सः, वै, एषः, एतस्मिन्, बुद्धान्ते, रत्वा, चरित्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्,च,पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, श्राद्रवति, स्वप्नान्ताय, एव ।। पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चान्चयः

स्तः चै=वही एषः=यह जीवात्मा **ध**तस्मिन्=इस बुद्धान्ते=जाप्रत् श्रवस्था में चरित्वा=बहुत जगह विचर

प्राथम च=प्राथ को

च≕श्रीर पापम्=पाप को ह्या=देख करके पुनः≕िकर रत्वा=मित्रों से रमण करके प्रतिन्यायम्=प्रत्यागमन से प्रतियोनि=अपने प्रतिकृत स्थान स्वप्नान्ताथैव=स्वप्नश्रवस्था के ब्रियेही श्राद्ववति=दौदता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे सम्राट्! जाप्रत् अवस्था में मित्रों से रमगा करके बहुत जगह बिचर करके पुरायजन्य सुख की श्रीर पापजन्य दुःख को भोग करके यह जीवात्मा फिर प्रत्यागमन से अपने स्थान स्वप्नावस्था के लिये दौड़ता है ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

तचथा महामत्स्य उभे कूले अनुसंचरति पूर्वे चाऽपरं चैवमेनाऽयं पुरुष एताबुभावन्तावनुसंचरति स्वमान्तं च बुद्धान्तं च ॥

पदच्छेदः।

तत्, यथा, महामत्स्यः, उभे, कूले, अनुसंचरति, पूर्वम्, च, आपरम्, च, एवम्, एव, आयम्, पुरुषः, एतौ, उभौ, अन्तौ, अनुसंचरति, स्वप्नान्तम्, च, बुद्धान्तम्, च॥

श्रन्वयः

पदार्थाः अञ्चयः

पदार्थाः

तत्=ऊपर कहे हुथे विषय में + दृष्टान्तः=दृष्टान्त है कि यथा≕जैसे

महामत्स्यः=बड़ी मछुती पूर्वम्=नदी के पूर्व

च=धौर

अपरम्=श्रपर उमे=दोनों तीरों में

श्रनुसंचरित=िकरती रहती है

एवम्=हसी प्रकार

एच=िरचय करके

श्रयम् एव=यह पुरुषः=पुरुष

> एव=निश्चय करके एतौ=उन दोनों यानी

स्वप्नान्तम्

च स्वप्न के भार बुद्धान्तम् जागरण के बन्त

अन्ती

उभौ=शेनों स्थानों को श्रनसंचरति=भाता जाता रहता है

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! उत्पर जो विषय कहा गया है, उस विषय में नीचे एक दृष्टान्त है उसको सुनो, मैं कहता हूं; जैसे मत्स्यराज नदी के दोनों तटों के बीच घूमा फिरा करता है कभी इस पार और कभी उस पार इसी प्रकार यह जीवात्मा कभी जागरण से स्वप्न को जाता है और कभी स्वप्न से जागरण को आता है ॥ १८॥

मन्त्रः १६

तचथास्मित्राकारो स्येनो वा सुपर्णो वा विपरिपत्य आन्तः सध्ध-इत्य पक्षौ संलयायैव ध्रियत एवमेवाऽयं पुरुष एतस्मा अन्ताय धावति यत्र सुप्तो न कंचन कामं कामयते न कंचन स्वमं पश्यति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, भ्रास्मिन्, श्राकाशे, श्येनः, वा, सुपर्गाः, वा, विपरि-

पत्य, श्रान्तः, संहत्य, पक्षी, संलयाय, एव, ब्रियते, एवम्, एव, श्रायम्, पुरुष:. एतस्मै, अन्ताय, धावति, यत्र, सुप्तः, न, कंचन, कामम्, काम-यते, न, कंचन, स्वप्नम्, पश्यति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

यह पुरुष स्वमान्त श्रीर बुद्धान्त स्थानों तत् को छोड़ सुप्रि / श्रवस्था को चाहता

+ हप्रान्तः=दृष्टान्त दिया जाता

यथा=जैसे

श्येनः≃बाज

पुरुषः=जीवात्मा एतस्मै=इस श्चन्ताय=सुषुप्ति स्थान **के क्रिये** धावति=दौडता है

एवम् एव=इसी प्रकार

श्रयम=यह

श्चाकाशे=श्चाकाश में यत्र≂जिसमें सुप्तः=वह सोया हुन्ना

वा≈ग्रथवा कंजन=किसी सुपर्गः≔गरुइ कामम्=विषय की विपरिपत्य=उड़ कर

आन्तः=थका हक्रा न=नहीं भंत्रयाय=विश्राम के लिये कामयते=इच्छा करता है पक्षी=अपने दोनों पक्षों को + च≂धौर

संहत्य=फैलाकर न कंचन≕न किसी भ्रियते=अपने घोंसले स्वप्नम्=स्वप्न को जाकर बैठता है पश्यति=देखता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जैसे पुरुष स्वप्न अवस्था से जाप्रत्अवस्था में जाता है, या जैसे जाप्रत्अवस्था से स्वप्न अवस्था को जाता है, या जैसे स्वप्न से सुप्रति में जाता है, इसके विषय में नीचे दृष्टान्त दियाजाता है, श्राप सुनें, मैं कहताहूं, हे राजन् ! जैसे आकाश में रयेन (बाज) नामक पक्षी आथवा गरुड़ जीविकार्थ या केवल कीड़ार्थ उडते उडते थक जाता है और विश्राम के लिये अपने

दोनों पश्चों को पसारेहुये आपने घोंसले में जाकर बैठ जाता है, उसी प्रकार यह जीवात्मा जाप्रत् और स्वप्रश्चवस्था में श्चनेक कार्य करता हुआ जब विश्वाम नहीं पाता है, तब वह इस प्रसिद्ध सुपुप्तिश्चवस्था के लिये दौड़ता है, जिसमें पहुँचकर न किसी वस्तु की इच्छा करता है, और न स्वप्न को देखता है, यह श्चवस्था उसको श्चतिसुखदायी होती है। १९ ।।

मन्त्रः २०

ता वा अस्यैता हिता नाम नाड्यो यथा केशः सहस्रथा भिन्न-स्तावताि स्ता तिष्ठन्ति शुक्रस्य नीलस्य पिङ्गलस्य हरितस्य लोहि-तस्य पूर्णा अथ यत्रैनं घ्रन्तीव जिनन्तीव हस्तीव विच्छाययति गर्ताभिव पतित यदेव जाग्रद्धयं पश्यति तदत्राऽविद्यया मन्यतेऽथ यत्र देव इव राजेवाऽहमेवेद्छं सर्वोऽस्मीति मन्यते सोऽस्य परमो लोकः ॥

पदच्छेदः ।

ताः, वा, अस्य, एताः, हिताः, नाम, नाडवः, यथा, केशः, सह-स्नवा, भिन्नः, तावता, श्रागिन्ना, तिष्टन्ति, शुक्कस्य, नीकस्य, पिङ्गकस्य, हरितस्य, लोहितस्य, पूर्गाः, अथ, यत्र, एनम्, प्रन्ति, इव, जिनन्ति, इव, हस्ती, इव, विच्छाययति, गर्तम्, इव, पति, यत्, एव, जाप्रत्, भयम्, पश्यति, तत्, त्रत्रत्र, अविद्यया, मन्यते, अथ, यत्र, देवः, इव, राजा, इव, श्रहम्, एव, इदम्, सर्वः, अस्मि, इति, मन्यते, सः, अस्य, परमः, लोकः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः पदायाः श्रस्य=इस स्वप्रद्रष्ट पुरुपकी ताः=चे पताः=चे नाम=प्रसिद्ध दितानाड्यः=हितानामक नाहियां हैं

च=शीर यथा=जैसे केशः=एक वालके सहस्राधा=हजार टुकड़े भिन्नः=भिन्न भिन्न प्रतिसक्ष्म

+ भवति=होते हैं तथा=तैसेही तावता=उसीतरह + एताः=ये नाहियां भी श्राणिसा=श्रीतसृक्ष्मता के साथ तिष्ठन्ति=शरीर में स्थित हैं च=धौर ताः=वे शक्रस्य=सफेद नीलस्य=नीबे पिङ्गलस्य=पीबे हरितस्य=हरे सोहितस्य=बाबरङ्गाँके रसाँकरके पुर्णाः=परिपर्ण हैं হ্যথ=খ্ৰ यत्र=जिस स्वमावस्था में श्चविद्या- } =श्चविद्या के कारण कारणात् } + प्रतीतिः र यह प्रतीत होता है भवति (क पनम्=इस स्वप्नद्रष्टा को इव=मानो + चोराः=चोर घन्ति=मार रहे हैं इव≔मानो जिनन्ति=कोई भ्रपने वश में कर रहे हैं इव≕मानो हस्ती=हाथी विच्छाययति=भगाये ब्रियेजाता है इच=मानो + एषः=यह

गर्तम्≕किसी गड़े में पति=गिर रहा है + सम्राट=हे राजन् ! जाग्रत=जाग्रत् श्रवस्था में यत्=जो जो वस्तु एव=निश्चय सहित पश्यति=देखता है तत्=उसी उसी को श्रत्र=स्वप्तमें भी स्वम को कहते हैं ऋथ≕और यत्र=जिस समय + स्वप्रद्रुष्टा=स्वम का देखनेवाला मन्यते=मानता है कि श्रहम् इच=में विद्वान् के ऐसा हं देवः इव=देव के समान हं श्रहम्=मैं राजा=राजा हं इद्म्=यह सब दश्यमात्र अहम एव=मैं ही हं तदा=तब ग्रस्य=इस जीवात्मा का सः≔वह परमः=श्रेष्ठ

लोकः=भवस्था है

भावार्थ ।

याज्ञबल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा अनक ! जीवारमा की क्रीड़ा के जिये इस शरीर में बहुत सी प्रसिद्ध नाड़ियां हैं. वे हितानाम करके कही जाती हैं, क्योंकि वे हित करनेवाली हैं, ये नाडियां एक बाल के सहस्र टुकड़ों के एक टुकड़े के बराबर श्रातिसूक्ष्म हैं, अपीर ये नाड़ियां नीले, पीले, श्वेत, हरित और लोहित रंगकी हैं, हे जनक ! जिस स्वप्न अवस्था में अविद्या के कारणा स्वप्नद्रहा को ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कोई उसको मार रहा है, मानो कोई उसको अपने वश में कर रहा है, मानो हाथी उसको भगा रहा है, हे राजन ! यह जीवात्मा जागता हन्ना जो जो भयादिक देखता है उसी उसी को स्वप्न अवस्था में भी देखता है, श्रीर श्रज्ञानता के कारणा उसको उस अवस्था में सत्य मानता है, हे जनक ! यह निकृष्ट स्वप्न का वर्णान है, आगे उत्तम स्वप्न को सुनो मैं कहता हं. हे राजा जनक ! जिस स्वप्न में स्वप्रद्रष्टा देखता है कि मैं विद्वान हूं, मैं राजा हूं, मेरे पास सव प्रजा निर्माय के लिये आती है, मैं नियह अनुवह करने में समर्थ हूं, जब वह इस प्रकार स्वप्ने में देखता है, तब बड़े स्थानन्द की प्राप्त होता है, आरे यह फल जामत अवस्था में शुभ विचार का है, जिसकी वह स्वप्ने में देखता है ॥ २०॥

मन्त्रः २१

तद्वा श्रस्थैतद्तिच्छन्दा श्रपहतपाप्माऽभयथ्धं रूपम् । तद्यथा त्रियया स्त्रिया संपरिष्वक्षो न वाद्यं किंचन वेद नान्तरमेवमेवाऽयं पुरुषः प्राज्ञेनात्मना संपरिष्वक्षो न वाद्यं किंचन वेद नान्तरं तद्वा श्रस्यैतदाप्तकाममात्मकाममकामथ्धं रूपथ्धं शोकान्तरम् ॥

पदच्छेदः ।

तत्, वा, अस्य, एतत्, श्रतिच्छन्दाः, अपहतपाष्म, अभयम्, रूपम्, तत्, यथा, प्रियया, स्त्रिया, संपरिष्वक्तः, न, बाह्यम्, किंचन,

वेद, त, अन्तरम्, एवम्, एव, अयम्, पुरुषः, प्राज्ञेन, आस्मना, संप-रिष्वकः, न, बाह्यम्, किंचन, वेद, न, अन्तरम्, तत्, वा, अस्य, एतत्, आप्तकामम्, आस्मकामम्, अकामम्, रूपम्, शोकान्तरम् ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्रन्वयः श्चन्धयः श्चस्य=इस सुपुप्त पुरुष का पुरुषः=सुषुप्त पुरुष आत्मना=श्रपने तत्=वही प्राज्ञेन=विज्ञान श्रानन्द से एतत्=यह रूपम्=रूप संपरिष्वक्रः रे =त्राखिङ्गित होता हुन्ना + सन् (श्चतिच्छन्दाः=कामरहित श्चपहतपाष्म=पाप पुरुवरहित किंचन=किसी श्रभयम्=भयरहित बाह्यम्=बाहरी वस्तु को + श्रस्ति=है तत्=इस विषय में वेद=जानता है च=श्रीर + द्रष्टान्तः=दृष्टान्त दिखाया जाता न=म म्रन्तरम्=ग्रान्तरिक वस्तु को यथा=जैसे वेद्=जानता है + स्वप्रियया=निज प्यारी तत् वै=इसी कारण स्त्रिया=बीके साथ श्रह्य=इस पुरुष का संपरिष्वक्रः=ग्रालिङ्गित हुन्ना एतत्≕यह + पुरुषः=पुरुष बाह्यम्=वाहरी वस्तु को रूपम्=सुपुप्तावस्थारूप वै=िनश्चय का के किंचन=कुछ भी न=नहीं चेद्≕जानता है च=ग्रीर एतत्=यह न≂न श्रात्मकाम है यानी श्चन्तरम्=भ्रान्तरिक वस्तु को इसमें केवल बहाकी प्राप्ति की कामना + घेद्≕जानता है प्यम् एव=इसी प्रकार अकामम्≔कामरहित है श्रयम्=यह

+ श्र=श्रीर श्रीकान्तरम्=श्रोकरहित भी है भावार्थ।

याज्ञवरुक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! इस सुपुत पुरुष का यह वक्ष्यमार्गा रूप कामरहित, पापरहित, भयरहित है, इसी विषय में एक दृष्टान्त देते हैं, उसको सुनो, जैसे कोई पुरुष स्वप्रिया भार्या से आिलिङ्गित होता हुआ किसी बाहरी वस्तु को नहीं जानता है, इसी के अनुसार सुपुति अवस्था में सुखभोक्ता पुरुष ज्ञान और आनन्द से युक्त होता हुआ न वह बाहरी किसी वस्तु को उस अपनी अवस्था में जानता है, न आन्तरिक किसी वस्तु को जानता है, इसी कारगा इस पुरुष का सुपुति अवस्थासम्बन्धी रूप निश्चय करके आप्त-काम है, यानी इसमें सब कामनायें प्राप्त हैं, अकाम भी वह है यानी ब्रह्मकी कामना से इतर और कोई उसको कामना नहीं है, और वह शोकान्त भी है, क्योंक वह शोकान्त है ॥ २१॥

मन्त्रः २२

श्रत्र पितापिता भवति मातामाता लोका श्रलोका देवा श्रदेव। वेदा श्रवेदाः । श्रत्र स्तेनोऽस्तेनो भवति श्र्णहाऽश्रूणहा चाएडा-लोऽचाएडालः पौल्कसोऽपौल्कसः अमणोऽश्रमणस्तापसोऽतापसो-नम्वागतं पुण्येनान्वागतं पापेन तीर्णो हि तदा सर्वाञ्च्छोकान्ह्-दयस्य भवति ॥

पदच्छेदः ।

श्चत्र, विता, श्रविता, भवति, माता, श्रमाता, लोकाः, श्रलोकाः, देवाः, श्रदेवाः, वेदाः, श्रवेदाः, श्रतेनः, श्रदेवः, भवति, श्रूग्हा, श्रश्र्म्णहा, चाएडालः, श्रवायडालः, पौल्कसः, श्रमणः, श्रश्र्मगः, तापसः, श्रतापसः, श्रनन्वागतम्, पुर्ययेन, श्रनन्वाश्वतम्, पापेन, तीर्णः, हि, तदा, सर्वान्, शोकान्, हृदयस्य, भवति ॥

पदार्थाः ग्रस्वयः स्वयः अत्र=गादी सुषुप्ति में पिता=पिता श्रिपता भवति=पितृसम्बन्ध से मुक्र होता है माता=माता श्रमाता } = मातृसम्बन्ध से मुक + भवति } = होती है लोकाः=प्रभित्ववित लोक श्रालोकाः = | श्रालोक होजाते हैं श्रालोकाः = | अवन्ति | श्रालोक की ह्व्हा नहीं रहती है देवाः=देवता श्चदेवता होजाते हैं गानी किसी देवता इसदेवाः= का श्राश्चय नहीं रहता है वेदाः≔वेद श्रवेदाः = श्रवेद होजाते हैं श्रवेदाः = यानी वेद पढ़ने की भवन्ति = हुन्छा नहीं रहती हैं द्यत्र=इस ग्रवस्था में स्तेन:=चोर **अ**स्तेनः=श्रचोर भवति=होजाता है भूगाहा≕गर्भपातकी श्रश्र्णहा } =श्रगभेपातकीहोजाताह

चाग्डालः=महानीच पतिस चा-य्डाल भी

अचाग्डाल:=कवावडाल

+ भवित=होजाता है

पोत्कसः=गृद्धसे क्षत्रियक्षेत्र में

उत्पन्न पुरुष

अपीत्कसः=अपने जातिदोष से

मुक्र

+ भवित=होजाता है

अमगुः=संन्यासी

अभगुः=असंन्यासी

+ भवित=होजाता है

तापसः=तपस्वी

अतापसः=तपस्वी

अतापसः=इस सुवृत पुरुष का

रूप

पुर्यन=पुरुष करके

अनन्वागतम्=असंबद है

पुरायन=पुषय करक अनन्वागतम्=भसंबद्ध है पापेन=पाप करके अनन्वागतम्=भसंबद्ध है हि=क्योंकि

तदा=उस भवस्था में + पुरुषः=पुरुष इदयस्य=हदय के सर्घान्≕सव शोकान्≕शोकों को

तीर्ग्यः=पार करनेवाला (होता है यानी अवित= उसके पास कोई शोक नहीं बाता है

मावार्थ। याज्ञवल्क्य कहते हैं कि, हे राजा जनक ! गाड़ सुपुप्ति अवस्था में

जीवारमा को किसी पदार्थ का बोध नहीं रहता है, इसीको विस्तार पर्नक दिखकाते हैं, पिता पितृसम्बन्ध से रहित होजाता है यानी जो पिता पुत्र का घनिष्ठसम्बन्ध है उसका ज्ञान सुपुत्रपुरुप को नहीं रहता है, न पुत्रको पिता का, न पिताको पुत्र का कुद्ध अनुभन होता है इसी प्रकार माता मातसम्बन्ध से रहित होती है यानी न माता को पत्र का झान श्रीर न पत्र को माता का ज्ञान रहता है. परुप को जाम्रत् अवस्था में बाद मरने के अवन्त्रे लोकों को यानी स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होऊं ऐसी इच्छा रहती है पर इस अवस्था में यहभी इच्छा नहीं रहती है. देवता श्रदेवता होजाते हैं यानी किसी देवता का आश्रय नहीं रहता है, वेद अवेद होजाता है यानी वेद पढ़ने की इच्छा नहीं रहती है इस अवस्था में चौर अवोर होजाता है यानी चोर की चोरी करने का जान किंचितमात्र भी नहीं रहता है. गर्भपातकी को श्रपने गर्भपातक श्राधर्म का ज्ञान नहीं होता है, महानीच, पतित, चायडाल भी श्रवायडाल होजाता है, शुद्र के बीजकरके क्षत्रियक्षेत्र में उत्पन्न हुत्र्या पुरुष श्रपने जातिदोष से मुक्त हुन्या रहता है, संन्यासी भी असंन्यासी हुन्या दीखता है, तपस्वी श्चतपस्वी हुआ दीखता है, पूर्व करके असम्बद्ध और पाप करके अस-म्बद्ध होता है, क्योंकि उस अवस्था में पुरुष हृद्य के सब शोकों को पार करजाता है यानी उसके पास कोई शोक नहीं आता है।। २२।।

मन्त्रः २३

यद्दै तत्र पश्यित पश्यन् वै तत्र पश्यित न हि द्रष्टुर्द्देष्टेविंपरि-लोपो विद्यतेऽविनाशित्वात् । न तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्नं यत्पश्येत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, ने, तत्, न, पश्यति, पश्यन्, ने, तत्, न, पश्यति, न, हि, द्रष्टुः, हष्टेः, निपरिलोपः, निद्यते, आस्तिमाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विती-यम्, आस्ति, ततः, आस्यत्, निभक्तम्, यत्, पश्येत् ॥

प्रन्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पदाश	ាំ
+ सः≔वइ जी	वात्मा		=क्योंकि =	
तत्=उस सु	षुप्तावस्था में	द्रष्टुः	=देखनेवाले जीवा	स्मा
न=नहीं			की	
पश्यति=देखता	है	ह्छेः≔दर्शनशक्तिका		
यत्≕जो		विपरिकोपः	=नाश	
इति=ऐसा		श्रविनाशित्वात्	=ग्रविनाशी हो	ने के
+ मन्यसे=ग्राप	मानते हैं		कारण	
तत्=सो			: ≕नहीं	
+ न≕नहीं		विद्यते	=होता है	
+ यथार्थः=ठीक है		ব্ৰ	=परन्तु	
+ सः=वह जी		तस्	=डस सुषुप्तिश्रवस	या में
+ सः=वह जा स्रे=निश्च		ततः	=उससे	
•		ग्रन्यत्	=भौर कोई	
पश्यन्= देखता	हुआ	विभक्तम्	=पृथक्	
भ =नहीं		्रित <u>ी</u> यम्	=दूसरी वस्तु	
्रदेखता है यानी वह भ्रपने को धार पश्यांते= देखता है धोरों को नहीं देखता है	न	=नहीं है		
	न का धार	यत्=जिसको		
	न लगवयाक। ताहै झोरों को	सः	=चह	
	पश्येत्=देखे			

भावाथे।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुपुतिअवस्था में नहीं देखता है सो ठीक नहीं है, यह आत्मा उस अवस्था में भी देखता हुआ विद्यमान है, यानी जो उसका स्वरूप आनन्द है, और अज्ञान जिस करके वह आहत है दोनों को अजुभव करता है, क्योंकि जब सोकरके पुरुष उठता है तब पूछ्नेपर कहता है कि ऐसा आनन्द से सोया कि खबर न रही, यदि उसको आनन्द और अज्ञान का अजुभव सुप्रिय में न होता तो जाप्रत्होंनेपर उसको स्मृतिज्ञान न होता, स्मृतिज्ञान करकेही जाना जाता है कि जीवात्मा सुप्रिय अवस्था में जो वस्तु वहां स्थित रहतीं हैं उनको वह

देखता है, और जो नहीं रहती हैं उनको वह नहीं देखता है, दर्शन-शिक्त तो उसको उस अवस्था में भी अवश्य है, क्योंकि द्रष्टा अवि-नाशी हैं इसिलेय उसकी दर्शनशिक्त भी सदा विद्यमान रहती है, ऐसा होनेपर प्रश्न उठता है कि अन्य वस्तु को क्यों नहीं देखता है इसका उत्तर यही है कि उस आत्मा से अतिरिक्त कोई अन्य वस्तु नहीं है, जिसको वह सुपुप्ति अवस्था में देखे ॥ २३॥

मन्त्रः २४

यद्दै तम जिन्नति जिन्नन्वै तम जिन्नति न हि न्नातुर्न्नातेर्विपरि-लोपो विचतेऽविनाशित्वाचतु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यज्जिन्नेत्।। पवच्छेदः।

यत्, वै, तत्, न, जिम्नति, जिम्नन्, वै, तत्, न, जिम्नति, न, हि, मातुः, म्रातेः, विपरिलोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तद्, द्वितीयम्, अस्ति, ततः, अन्यत्, विभक्तम्, यत्, जिम्नेत्।।

पदार्थाः श्रन्वयः श्चान्वयः + सः=वह जीवात्मा तत्=डस सुषुधि भवस्था में स≕नहीं जिन्नति=संघता है यत्≕जो इति=ऐसा + मन्यसे=श्राप मानते हैं तत्≕सो + स=नहीं +यथार्थः=हिक है + सः≔वह जीवात्मा बै=निश्चय करके जिञ्जन्=सूंचता हुआ न=नहीं

ान्वयः पदार्थाः
जिन्नति=स्ं्वता है
हि=क्योंकि
न्रातुः=स्ं्वनेवाले जीवासमाकी
न्रातिः=नाशाशकि का
विपरिकोपः=नाश
श्रविना- } = भविनाशि होनेके
शिरवात् } कारण
न=नहीं
विद्यते=होता है
तु=वरन्तु
तत्=उस सुषुप्तिभवस्था में
ततः=उससे
भान्यत्=भीर कोई
विभक्तम्=ष्टथक्

हितीयम्=दूसरी बस्तु न=नहीं है यत=जिसको + सः=वह पश्यत्=देखे

भाषार्थ ।

याज्ञवह्नय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जो आप ऐसा मानते हैं कि सुपुप्ति अवस्था में जीवात्मा नहीं स्ंघता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान है, और उसकी बाग्य-शिक्त भी विद्यमान है, चूंकि वह जीवात्मा अविनाशी है, इसलिये उस की बाग्यशिक्त भी नाशरिहत है परन्तु वह उस अवस्था में क्यों नहीं स्ंघता है इसका कारगा यह है कि उससे पृथक् कोई दूसरी वस्तु स्ंघने के लिये वहा स्थित नहीं है जिसको वह सुंघे ॥ २४॥

मन्त्रः २५

यद्वे तत्र रसयते रसयन्वे तत्र रसयते न हि रसयित् रसयते-र्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वात्र तु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यद्रसयेत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, रसयते, रसयन्, वै, तत्, न, रसयते, न, हि, रसयितुः, रसयतेः, विपरिकोपः, विद्यते, श्रविनाशिःवात्, न, तु, तत्, द्वितीयम्, श्रह्ति, ततः, श्रव्यत्, विभक्तम्, यत्, रसयेत् ॥

पदार्थाः पदार्थाः । अन्वयः श्रन्वयः + सः=वह जीवासमा + न≂नहीं + यथार्थः=ठीक है तत्=उस सुप्तावस्था में न≕नहीं + सः=वह जीवात्मा रसयते=स्वाद लेता है वै=निश्चय करके यत्=जो रसयन्=स्वाद लेता हुन्ना इति=ऐसा न≕नहीं + मन्यसे=ग्राप मानते हैं रसयते=स्वाद बेता है तत्त≔सो हि=क्योंकि

रसिथितुः=रस सेनेवासे जीवास्मः के रसयतेः=रसज्ञानशक्षि का विपरिलोपः=नाश श्रविनाशि- } बास्मा के श्रविनाशी त्वात् ∫ होनेके कारय न=नहीं विद्यते=होता है त=गरन्त

तत्=इस सुषुतावस्था में

ततः=उससे
श्रन्यत्=श्रीर कोई
विभक्तम्=पृथक्
द्वितीयम्=दूसरी वस्तु
न=नहीं है
यत्=जिसको
+ सः=वह
रसयेत्=स्वाद लेवे

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! अगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुपुप्तिअवस्था में नहीं स्वाद लेता है सो टीकं नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी स्वादमहण्यातिक भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारण उसकी स्वादमहण्याशक्ति भी नाशरहित होती है, इसिलिये वह स्वाद लेसका है परन्तु जब कोई स्वाद लेने का विषय वहां नहीं है, तो फिर किसका स्वाद वह जीवात्मा लेवे ॥ २४॥

मन्त्रः २६

यद्दै तन्न बद्ति वदन्वै तन्न बद्ति न हि वक्कुर्वक्रेविंपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वात्र तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्दिभक्नं यद्ददेत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, वे, तत्, न, वद्ति, वद्न्, वे, तत्, न, वद्ति, न, हि, वक्तुः, वक्तः, विपरिकोषः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तद्, द्वितीयम्, श्रक्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, क्त्, वदेन् ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ सः≔वह जीवात्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में न=नहीं

वदति=बोलता है यत्=जो इति=ऐसा

+ मन्यसे=भाष मानते हैं द्मविनाशि- (_द्यारमा के प्रविनाशी त्वात 🚾 होने के कारण तत्त≕सो ल≔नहीं + ल≃नहीं विद्यते=होता है + यथार्थः=शेक है त्=परन्त + सः=वह जीवात्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में वै=निश्चय करके ततः≔डससे ऋन्यत्≕भौर कोई घदन्=बंतिता हुन्ना चिभक्तम्=पृथक् न=नहीं धदति=बोलता है द्वितीयम्=दूसरी वस्तु हि≕क्योंकि न=नहीं है यत्≕िजसको चक्र:=जीवात्मा की घक्रः=वचनशक्रिका + सः≔वह विपरिलोपः=नाश वदेत=कहे

भागार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवातमा सुपुनिश्चवस्था में नहीं बोजता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी वचनशिक्त भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारण उसकी वचनशिक्त भी नाशरहित रहती है इस जिये वह वोज सक्ता है, परन्तु जब वचन का कोई विषय वहां नहीं है तो किससे वह जीवात्मा बोले ॥ २६॥

मन्त्रः २७

यद्वै तत्र शृर्णोति शृष्यन्त्रै तत्र शृर्णोनि न हि श्रोतुः श्रुतेर्वि-परिलोगो विचतेऽविनाशित्वाच तु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यच्छृगुयात् ॥

पर्च्छेदः ।

यत्, ते, तत्, न, शृशोति, शृशवन्, ते, तत्, न, शृशोति, न, हि, श्रोतुः, श्रुतेः, त्रिपरिकोषः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्,

द्वितीयम्, श्रस्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, यत्, शृणुयात् ॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चान्सय: + सः=वह जीवात्मा श्रतेः=अवस्तराक्ति का तत्=उस सुषुप्तावस्था में विपरिस्तोप:=नाश न=नहीं श्चविमा- } = भारमा के भविनाशी शित्वात् } = होने के कारख श्यगोति=सुनता है यत्≕जो न≃नहीं इति≕ऐसा विद्यते=होता है + मन्यसे≃श्राप मानते हैं त=परन्त् तत्≔सो तत्=उस सुपुष्तावस्था में + न≕नहीं + यशार्शः≔ठीक है ततः=उसमे अन्यस्=ग्रीर कोई + सः=वह जीवातमा वै=िन:सन्देह विभक्तम्=पृथक् द्वितीयम=दूसरी वस्तु श्टरावन्=सुनता हुन्ना न=नहीं है न=नहीं यत्=जिसको श्वाोति=सनता है

भावार्थ ।

+ सः=वह

श्रुग्रयात=सुने

हि=क्योंकि

श्रोतः=श्रोता जीवात्मा के

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! अगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवारमा सुपुिष्ठअवस्था में नहीं सुनता है सो ठीक नहीं है, यह जीवारमा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी अवस्थारिक भी विद्यमान रहती है, और जीवारमा के अविनाशी होने के कारमा उसकी अवस्थाशक्ति भी नाशरहित होती है, इस जिये वह सुन सक्ता है परन्तु जब कोई अवस्या का वहां विषय नहीं है तो किसको वह जीवारमा अवस्य करे।। २७॥

मन्त्रः २८ यद्वे तत्र मनुते मन्वानो वे तत्र मनुते न हि मन्तुर्मतेविंपरिलोपो

विद्यतेऽविनाशित्वास त तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यदिभक्तं यन्मन्वीत ॥ पदच्छेदः ।

यत्, बै, तत्, न, मनुते, मन्बानः, बै, तत्, न, मनुते, न, हि, मन्तः, मतेः, विपरिकोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विती-यम्, अस्ति, ततः, अन्यत्, विभक्तम्, यत्, मन्वीत ॥

ज्ञान्ययः पढाधोः + सः≔वह जीवारमा

तत्=उस सुपुप्तावस्था में न=नहीं मनुते=मानता है

यत्=जो इति=ऐसा

+ मन्यसे=धाप मानते हैं तत्=सो

+ स≕नडीं

+ यथार्थः=ठीक है

+ सः=वह जीवात्मा वै=निरचय करके

मन्वानः=मनन करता हुणा

न≕नहीं मनुते=मनन करता है

हि=क्योंकि

मन्तुः=मन्ता जीवारमा की

भावार्थ ।

श्चास्य : पदार्थाः मते:=मननशक्ति का विपरिलोप:=नाश द्यविना- रें ज्ञात्मा के भविनाशी. शित्वात् रें होने के कास्य त=नहीं विद्यते=होता है तु=परन्त् तत्=उस सुषुप्तावस्था में ततः=डससे अन्यत्=श्रीर कोई विभक्तम्=पृथक् द्वितीयम्=दूसरी वस्तु न=नहीं है यत्=जिसको + सः≔वड

मन्वीत=मनन करे

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक प्रिमार आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुष्ति अवस्था में नहीं मनन करता है सो ठीक नहीं है. यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी मननशक्ति भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कार्या उसकी मननशक्ति भी नौशरहित होती

है, इस जिये वह मनन कर सक्ता है, परन्तु जब कोई मन्तव्य विषय वहां नहीं है तो वह किसको मनन करे।। २८॥

मन्त्रः २६

यद्दै तम स्पृश्ति स्पृशन्वै तम स्पृशाति न हि स्प्रष्टुः स्पृष्टेर्वि-परिलोपो विचतेऽविन।शित्वान तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्नं यत्स्प्रशेत ॥

पदच्छेदः।

यत्, वै, तत्, न, रपृशति, स्पृशन्, वै, तत्, न, स्पृशति, न, हि, स्प्रष्टुः, स्पृष्टेः, विपरिक्षोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात् , न, तु, तत् , द्विती-यम्, श्रस्ति, ततः, श्रान्यत्, विभक्तम्, यत्, स्पृशेत् ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

+ सः=वह जीवातमा तत्= सुपुति धवस्था में न=नहीं स्पृश्वि=स्पर्श करता है यत्र्≕जो इति≕ऐसा + मन्यसे=ब्राप मानते हैं तत्≕सो + न=नहीं + यथार्थः=डीक है + सः≔वह जीवात्मा वै=िनश्चय करके स्पृश्नन्≔स्पर्श करता हुआ न≔नहीं स्प्रशति=स्पर्श करता है हि=क्योंकि स्प्रष्टुः≔स्पर्श करने वास्रे जीवास्मा की

स्पृष्टेः=स्पश्चेशक्ति का विपरिलोपः=नाश

श्रविना- रे बारमा के भविनाशी शित्वात् रे होने के कारण

न≕नहीं

विद्यते=होता है

सु≔परन्त्

तत्=उस सुषुप्तावस्था में

त्रतः≕उससे

अन्यत्=त्रौर कोई

विभक्तम्=पृथक् द्वितीयम्=दूसरी वस्त

न=नहीं है

यत्=जिसको

+ सः≔वह स्पृशेस्=स्पर्ध करे

भावार्थ।

याझवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक! अगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुषुप्तिअवस्था में नहीं स्पर्श करता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी स्पर्शशिक्त भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारणा उसकी स्पर्शशिक्त भी नाशरिहत है, इसिजये वह स्पर्श करसक्ता है, परन्तु जब कोई स्पर्शशिक्त का विषय वहां नहीं है तो वह जीवात्मा किसको स्पर्श करे।। २६ ।।

मन्त्रः ३०

यद्दै तन्न विजानाति विजानन्वे तन्न विजानाति न हि विज्ञातु-विज्ञातेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वान्न तु तहितीयमस्ति ततोऽन्यं-द्विभक्तं यद्विजानीयात्।।

पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, विजानाति, विजानन्, वै, तत्, न, विजानाति, न, हि, विज्ञातुः, विज्ञातेः, विपरिकोपः, विद्यते, अधिवाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विनीयम्, अस्ति, ततः, अन्यत्, विभक्तम्, यत्, विजानीयात्।। अस्वयः पदार्थाः अन्ययः पदार्थाः

+ सः≔वह जीवात्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में न=नहीं विज्ञानाति=जानता है

> यत्≕जो इति≕ऐसा

+ मन्यसे=भाप मानते हैं तत्=सो

+ न=नहीं + यथार्थः=ठीक है

+ सः≔वह जीवात्मा

चै=निस्संदेह

विजानन्=जानता हुमा

न=नहीं विज्ञानाति=जानता है

> हि=क्योंकि विज्ञातु:=ज्ञाता जीवात्मा की विज्ञाते:=ज्ञानशक्ति का

विपरिक्रोप:=गारा

अविनाशि: } आस्माके अविनाशी त्वात् } होनेके कारण

न=गेहीं

विद्यशे=होता है तु=परन्तु द्वितीयम्=रूसरी वस्तु

तत्=उस सुबुप्तावस्था में

न=नहीं है यत्=जिसको

ततः=उससे श्रन्यत्=और कोई

+ सः≔वह

विभक्तम्=१थक्

विजानीयात्=जाने

भावार्थ ।

याझवल्क्य महागाज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर ऐसा आप मानते हैं कि जीवात्मा सुपृप्ति आवस्था में नहीं जानता है, सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस आवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी झानशिक भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के आविनाशी होनेके कारणा उसकी झानशिक भी नाशरहित होती है, इसिकिये वह जान सक्ता है परन्तु जब कोई झेयविषय वहां नहीं है तो किस वस्तु को वह जीवात्मा जाने ॥ ३० ॥

मन्त्रः ३१

यत्र वा श्रन्यदिव स्यात्तत्रान्योऽन्यत्पश्येदन्योऽन्यज्जिघ्नेदन्योऽन्य-द्रस्येदन्योऽन्यद्देदन्योऽन्यत्त्र्युः गुयादन्योऽन्यन्मन्वीतान्योऽन्यत्स्पृशे-दन्योऽन्यद्विजानीयात् ॥

पदच्छेदः ।

यत्र, वा, श्रन्यत्, इव, स्यात्, तत्र, श्रन्यः, श्रन्यत्, पश्येत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, जिन्नेत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, रसयेत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, वदेत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, श्र्णुयात्, श्रन्यः, श्रन्यत्, मन्वीत, श्रन्यः, श्रन्यत्, स्पृशेत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, विज्ञानीयात् ॥

सन्वयः

ः पदार्थाः ग्रन्थयः यत्र वै≔जिस जागरित श्रोर श्रन्थः

न्वयः पदार्थाः सन्यत् इव=मतिरिक्त मौर कोई

स्वमधवस्था सं

वस्तु

+ आत्मनः=भारमा से

स्यात्=होवे तो

तत्र=उत धवस्था में

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्यत्=देखे

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य वस्तु का

रस्येत्=स्वाद खेव

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य पुरुष

ग्रान्य:=भ्रान्य वस्तु का

वदेत्=मर्थ

अन्यः=अन्य पुरुष अन्यत्=अन्य अन्यः=अन्य पुरुष अन्यत्=अन्य पुरुष अन्यत्=अन्य को सन्वीत=माने अन्यत्=अन्य पुरुष अन्यत्=अन्य को स्पृशेत्=स्पर्शं करे अन्यत्=अन्य को विजानीयात्=जाने

भाषार्थ ।

जिस जाग्रत् और स्वग्न अवस्था में आत्मा से अतिरिक्त और कोई वस्तु होवे तो उस अवस्था में अन्य पुरुष अन्य वस्तु को देखे, अन्य पुरुष अपने से अन्य वस्तु को सूंचे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु का स्वाद कोवे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को सुने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को सुने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को माने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को स्पर्श करे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को नाने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को स्पर्श करे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को जाने।। ३१।।

मन्त्रः ३२

सित्त एको दृष्टाऽद्वेतो भवत्येष ब्रह्मलोकः सम्राडिति हैनम-नुशशास याज्ञवल्क्य एषाऽस्य परमा गितरेषाऽस्य परमा संपदेषो-ऽस्य परमो लोक एषोऽस्य परम श्रानन्द एतस्यैवानन्दस्याऽन्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति ॥

पदच्छेदः ।

सलिलः, एकः, द्रष्टा, श्रद्धैतः, भवति, एषः, ब्रह्मलोकः, सम्राट्, इति, ह, एनम्, श्रनुशशास, याज्ञवत्क्य, एषा, श्रस्य, परमा, गतिः, एवा, श्रस्य, परमा, संपत्, एवः, श्रस्य, परमः, लोकः, एवः, श्रस्य, परमः श्रानन्दः, एतस्य, एव, श्रानन्दस्य, श्रन्यानि, भूतानि, मात्राम्, उपजीवन्ति ॥

भन्वयः

पदार्थाः श्रम्वयः

पदार्थाः

सम्राद=हे जनक! + श्रात्मा=श्रात्मा सालिलः=पानीकी तरह साफहै पकः=श्रकेला है द्रष्टा≔देखनेवाला है श्चाद्वेतः=श्रद्वितीय है एषः=यही ब्रह्मालोक:=ब्रह्मालोक भवति≕है इति=इसप्रकार याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने एनम्=इस राजा जनक को अनुशशास=उपदेश किया सम्राट=हे राजन् ! ग्रस्य=इस जीवात्मा का एषा=यही परमा=परम गतिः=गति है श्चस्य=इसकी

परमा≔यही क्षेत्र संपत्=संपत्ति है श्चस्य=इसका एषः=यही परमः≕परम स्रोकः=जोक है श्रस्य=इसका एपः=यही परमः≔परम आनन्दः=श्रानन्द है राजन्=हे राजन् ! **ग्र**न्यानि=सब भृतानि=प्राची प्तस्य≔इस पव≕ही श्रानन्दस्य=ब्रह्मानन्द की

मात्राम् } =एक मात्रा को लेकर श्रादाय } उपजीवन्ति=श्रानन्दपूर्वक जीते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवह्म्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आत्मा जलकी तरह शुद्ध है, एक है, द्रष्टा है, अद्वितीय है, यही ब्रह्मजोक है, इससे भिन्न और कोई ब्रह्मजोक नहीं है, इसप्रकार याज्ञवह्मय महाराज ने उस राजा जनक को उपदेश किया, याज्ञवह्मय महाराज कहते हैं कि, इस जीवात्मा की ब्रह्मप्राप्तिही परमगति है, इस जीवात्मा की यही श्रेष्ठ संपत्ति है, इसका यही परम कानन्द है,

हेराअन् ! इसी ब्रह्मानन्द् के एक लेशमात्र से सब प्रायाी जीते हैं स्पीर स्थानन्द करते हैं।। ३२।।

मन्त्रः ३३

स यो मनुष्याणा श्र राद्धः समृद्धो भवत्यन्येषामिथितिः सर्वेर्मानुष्यकैभेंगिः संपन्नतमः स मनुष्याणां परम आनन्दोऽथ ये शतं मनुष्याणां पत्म आनन्दोऽथ ये शतं मनुष्याणां पत्म आनन्दोऽथ ये शतं पितृणां जितलोकानामानन्दाः स एकः गम्धवेलोक आनन्दोऽथ ये शतं गम्धवेलोक आनन्दोऽथ ये शतं कर्मदेवानामानन्दो ये कर्मणा देवत्वमिभसंपद्यन्तेऽथ ये शतं कर्म देवानामानन्दाः स एक आजान्देवानामानन्दाः स एकः प्रजापतिलोक आनन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथ ये शतमानान्देवानामानन्दाः स एकः प्रजापतिलोक आनन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथ ये शतमानान्देवानामानन्दाः स एकः प्रजापतिलोक आनन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथेष एव परम आनन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथेष एव परम आनन्द एष ब्रह्मलोकः सम्चाद्यित होवाच याज्ञवल्क्यः सोऽहं भगवते सहस्रं ददाम्यत ऊर्ध्व विभोक्षायैव ब्रह्मीत्यत्व ह याज्ञवल्क्या विभयांचकार मेथावी राजा सर्वेभ्यो मान्तेभ्य उद्दैतिसीदिति ॥

पदच्छेदः ।

सः, यः, मनुष्याग्याम्, राद्धः, समृद्धः, भवति, अन्येषाम्, अधिपतिः, सर्वैः, मानुष्यकैः, भोगैः, संपन्नतमः, सः, मनुष्याग्याम्, परमः,
आनन्दः, अथ, थे, रातम्, मनुष्याग्याम्, आनन्दाः, सः, एकः, पितृग्याम्, जितलोकानाम्, आनन्दः, अथ, ये, रातम्, पितृग्याम्, जितलोकानाम्, आनन्दाः, सः, एकः, गन्धर्वक्षोके, आनन्दः, अथ, थे,
रातम्, गन्धर्वलोके, आनन्दाः, सः, एकः, कर्भदेवानाम्, आनन्दः, ये,
कर्मग्या, देवस्वम्, अभिसंपद्यन्ते, अथ, ये, रातम्, कर्मदेवानाम्,
आनन्दाः, सः, एकः, आजानदेवानाम्, आनन्दः, यः, च, श्रोत्रियः,
आनुजिनः, अकामहतः, अथ, ये, रातम्, आजन्दः, आन्तःः,

सः, एकः, प्रजापतिलोके, आनन्दः, यः, च, श्रोत्रियः, अवृत्तिनः, श्रकामहतः, अथ, ये, शतम्, प्रजापतिलोके, आनन्दः, सः, एकः, श्रह्मलोके, आनन्दः, यः, च, श्रोत्रियः, अवृत्तिनः, अकामहतः, अथ, एषः, एवः, एवः, प्रतान्दः, एपः, श्रह्मलोकः, सम्राट्, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्कयः, सः, अहम्, भगवते, सहस्रम्, द्दामि, अतः, उर्ध्वम्, विमोक्षाय, एव, श्रूहि, इति, अत्र, ह, याज्ञवल्कयः, विभयांचकार, मेधावी, राजा, सर्वेभ्यः, मा, अन्तेभ्यः, उद्गैत्सीत्, इति ॥

अन्वयः

पदार्थाः | ऋन्वयः

यः पदार्थाः

मनुष्याखाम्=मनुष्यों में
यः=जो पुरुष
यः=जो पुरुष
राद्धः=तम्दुरुस्त है
समृद्धः=सुख करके संपन्न है
श्रम्येषाम्=सब मनुष्यों का
श्राधिपतिः=द्याधपति है
च=श्रोर
मानुष्यकैः=मनुष्यसम्बन्धी
सर्वेः=सव
भोगैः=सुरुखें करके
संपन्नतमः=भरा पुरा
मवति=है

सः=वह मनुष्यासाम्=मनुष्येः म परमः=परम

प्रमः=परम श्रानन्दः=श्रानन्द है श्रथ=श्रीर

ये=जो ऐसे

मनुष्यागाम्=मनुष्यों का शतम्=सागुना स्रानन्दाः=त्रानन्द है

सः=वह

जितलोकानाम्=लोकविजयी पितृगाम्=पितरीं का

एकः=एक स्रानन्दः=स्रानन्द है स्रथ=स्रोर

जितले।कान।म्=लोकविजयी पितृशाम्=पितरों का

ये=जो शतम्=सौगुना श्रानन्दाः=त्रानन्द है

सः≔वह गन्ध्रवलोकं=गन्धर्वलोक में एकः=एक

> छ।नन्दः=म्रानन्द के बराबर है श्रथ=श्रीर

ये=जो शतम्=सौगुना स्रानन्दाः=श्रानन्द

गन्धर्वलोके=गन्धर्वज्ञोक में + श्रस्ति=है

कर्मदेवानाम्=कर्मदेवता का

एकः=एक ञ्चानन्दः=ज्ञानन्द है ये=जो कर्मगा=यज्ञ करके देवत्वम्=देवपद को अभिसंपद्यन्त=प्राप्त होते हैं ते=वे कर्मदेवाः=कर्मदेव हैं श्रथ=श्रीर य≃जो शतम्≕संगुना श्चानन्दः=ग्रानन्द कर्मदेवानाम्=कर्मदेवों का है श्राजानदे- } =जन्मदेवतावाँ का एक आनन्दः=एक थानन्द है च=ग्रोर अवृजिनः=वैदिक कर्मीं के अनु-ष्टानसे पापरहित हुन्ना च=श्रीर अकामहतः=कामनारहित होता हुआ श्रो(त्रिय:=जो वेद का पढ़ने वाला है तस्य=उसका एक:=एक श्रानन्दः=श्रानन्द श्राजान- } =जन्मदेवतायों के देवानाम् } श्चानन्दः=ग्रानन्द के बराबर है श्रथ=श्रीर

ये≕जो श्तम्≕सौगुना श्राजानदे- रे =जन्मदेवीं का आनन्दाः=भानन्द है सः=वह प्रजापतिलोके=प्रजापतिलोक में एकः=एक आनन्दः=आनन्द के बराबर है च=ग्रीर यः च=जो श्चोत्त्रियः=वेद के पढ़ने वाले श्रवृज्ञिनः=पापरहित श्रकामहतः=कामनारहितों के श्रानन्दाः=श्रानन्द हैं श्रथ=थार ये=जो श्तम्=सौगुना प्रजापतिलोके=प्रजापति लोक में आनन्दाः=आनन्द हैं सः=वह व्रह्मलोके=ब्रह्मकोक में एकः=एक त्रानन्द:=श्रानन्द के बराबर है च=श्रीर यः=जो श्रोत्रियः=वेदको पढ़ा है श्रवृज्ञिनः=पापरहित है अकामहतः=इच्छारहित है + तस्य=उसका + श्रानन्दः=धानन्द + ब्रह्मलोकेन्=मद्यक्षेक के समानहै

श्रथ=इसके बाद याञ्च बल्क यः=याज्ञवरुवय उवाच=कडते भये कि सम्राट्ट=हे जनक ! प्रषः=यही परमः=भेष्ठ ञ्चानन्दः=आनन्द है एषः=यही ब्रह्मलोकः=ब्रह्मकोक है जातकः=जनक श्राह=बोले सः=वही श्रहम औ भगवने=श्रापके विये सहस्रम्=इजार गौवीं को ददामि=रेता हं

श्चतः=इसके ऊर्ध्वमू=म्रागे विमोक्षाय=मोक्ष के लिये 00=धवश्य मृहि=उपदेश करें इति=इस पर श्राच=यहां याञ्चयस्यः=याज्ञवस्क्य बिभयांचकार=हरगये इतिहि=ऐसा निरचय करके मेघावी=बुद्धिमान् राजा≔राजा ने मा=मुक्तको सर्वे ४यः=सब श्चन्ते¥यः=ज्ञानतस्य से उद्दोत्सीत्=श्नय कर दिया है भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जीवात्मा के आनन्द की सीमा को में कहता हूं सुनो. जो पुरुष हुए पुष्ट बिलाए हैं; धन, धान्य, पग्नु, पुत्र, पौत्र से भरा पुरा है, पृथ्वी के सब मनुष्य-मात्र का अधिपित है, स्वतन्त्र राजा है, मनुष्यसम्बन्धी सब भोग उसको प्राप्त हैं उसका सौगुना जो आनन्द है वह पितरों के एक आनन्द के बराबर है, पितरों का सौगुना आनन्द गन्धर्वलोक के एक आनन्द के बराबर है, जो गन्बर्वलोक में सौगुना आनन्द है वह कमदेवों के एक आनन्द के बराबर है, जो गन्बर्वलोक में सौगुना आनन्द है वह कमदेवों के एक आनन्द के बराबर है, जो कर्म करके देवपदवी को प्राप्त होते हैं वह कमदेव कहलाते हैं ऐसे कमदेवों का सौगुना जो आनन्द है वह वह वेद के पढ़ने वालों और वैदिककर्मों के करने वालों और निष्काम कर्मों के करने वालों को एक आनन्द के बराबर है और इन्हीं के बराबर है और इन्हीं के बराबर है और इन्हीं के बराबर का जन्मदेवों का भी आनन्द है, जन्मदेव उसको कहते हैं जो

जन्मही से देवता है. जन्मदेवता का जो सौगुना आनन्द है वह प्रजापतिलोक में एक आनन्द के बराबर है इसी आनन्द के बराबर वेट पढने वालों, पापरहित निष्कामियों का भी है यानी इनका आनन्द प्रजापति के आनन्द के बरावर है, प्रजापति लोक का सौगुना आनन्द ब्रह्मलोक के एक आनन्द के बराबर है और जो श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ, पापरहित, निष्कामी हैं उनका भी आनन्द ब्रह्मानन्द के बराबरही है ऐसा कहकर याज्ञवल्क्य बोले हे राजा जनक ! यही परम आनन्द है, यही ब्रह्मकोक है, यह सुनकर राजा जनक बोले हे पूज्यपाद भगवन् ! में आपको एक सहस्र गौ देताहूं आप कुपा करके इसके आगे मोक्ष के जिये सम्यक् ज्ञानको मेरे प्रति उपदेश करें, यह सुनकर याज्ञवल्क्य महाराज डरगये । क्यों डरगये ? इसका समाधान यों करते हैं, याज्ञवल्क्य महाराज ने विचार किया कि यह राजा परम ज्ञानी है, संपूर्ण धनको सुमे देने को तैयार है, सहस्रों गौ देचुका है श्रीर देताजाता है, क्या सब मुम्तको देकर वह निर्धनी हो बैठेगा इस बातसे डरे अथवा इस बात से डरे कि यह परमज्ञानी राजा मुक्तसे पूछ पूछ्रकर ज्ञानतत्त्वरूपी धन मुक्तसे लेकर मुक्तको उस धनसे शून्य किये देता है, अपन आगे इसको में क्या उपदेश करूंगा, पर पहिला अर्थ ठीक मालूम होता है दूसरा अर्थ ठीक नहीं मालूम होताहै॥३३॥

मन्त्रः ३४

स वा एष एतस्मिन्स्वमान्ते रत्वा चरित्वा दृष्ट्वेव पुएयं च पापं च पुनः मतिन्यायं मतियोन्याद्रवति बुद्धान्तायैव ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, एतस्मिन्, स्वप्नान्ते, रत्वा, चरित्वा,, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतिद्भोनि, आद्रवित, बुद्धान्ताय, एव ॥

सन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः=सोई
प्रयः=यह जीवास्मा
प्रतस्मिन्=इस
स्वप्नान्त=स्वप्नस्थान में
रत्वा=श्रेनकपदार्थों के साथ |
क्रीदा करके
चरित्वा=बाहर धूम फिर करके |

पापं च=पापको
द्यष्ट्वा=भोगकरके
पुनः=पुनःपुनः
प्रतिन्यायम्=उत्तदे मार्ग से
प्रतियोान=अनंक योनियोंप्रति
बुद्धान्तायेव=जाप्रत् अवस्था के

आद्भवति=दौइता है

भावार्थ ।

याज्ञवत्कय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा स्वप्रस्थान में अनेक पदार्थों के साथ कीड़ा करके, बाहर भीतर घूमं करके, पुराय पाप को भोग करके पुनः पुनः उलटे मार्ग से अनेक योनियों प्रति जाप्रत् श्रवस्था के लिये ही दौड़ता है।। ३४।।

मन्त्रः ३५

तद्ययानः सुसमाहितमुत्सर्जवायादेवमेवाऽयथं शारीर श्रात्मा प्राज्जेनाऽऽत्मनाऽन्वारूढ उत्सर्जन्याति यत्रैतदृर्वीच्छ्कासी भवति ॥ पदच्छेदः।

तत्, यथा, श्रानः, सुसमाहितम्, उत्सर्जत्, यायात्, एवम्, एव, श्रायम्, शारीरः, श्रात्मा, प्राज्ञेन, श्रात्मना, श्रान्वारूढः, उत्सर्जन्, याति, यत्र, एतत्, अर्थोच्छ्कासी, भवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=शरीर त्यागने के विषय में

+ इंग्रान्तः=यह दशन्त है कि
यथा=जैसे
सुसमाहितम्=भन्नादिक बोक से
वादी हुई
सनः=गाडी

उत्सर्जेत्=चींची शब्द करतीहुई यायात्=जाती है एवम् एव=उसीप्रकार शारीरः=शरीरसम्बन्धी आत्मा=जीक्षतमा

प्राक्षेत }=भ्रपने ज्ञान से आत्मना श्चनबारुदः=संयुक्त यानि≕जाता है

एतत्=वह उत्सर्जन्=देहको छोदता हुन्ना ऊध्योच्छासी=अध्वरवासी भवति=होता है

यञ्च=जब

भावार्थ ।

याज्ञवत्स्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! शरीर के त्यागने के विषय में लोक यह ह्यान्त देते हैं कि जैसे अन्नादिक के बोम्मसे लदीहई गाडी मार्ग में चींची शब्द करतीहई जाती है उसी प्रकार शरीरसम्बन्धी जीवात्मा ज्ञानस्वरूप श्रपने ग्राम श्राश्म कर्म के भारसे संयुक्त होताहुआ वियोगकाल में रोताहुआ जाता है ॥ ३४ ॥

मन्त्रः ३६

स यत्राऽयमितामानं न्येति जस्या वोपतपता वाऽस्मिमानं निग-च्छति तद्यथाम्रं बोदुम्बरं वा पिप्पलं वा वन्धनात प्रमुच्यत एव-मेवाऽयं पुरुष एभ्योक्नेभ्यः संप्रमुच्य पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्या-द्रवति प्राणायैव ॥

पदच्छेदः ।

सः, यत्र, श्रयम्, श्राणिमानम्, न्येति, जरया, वा, उपतपता, वा, द्माशामानम्, निगच्छति, तत्, यथा, द्याम्रम्, वा, उदुम्बरम्, वा, पिष्पलम् , वा, बन्धनात् , प्रमुच्यते, एवम् , एव, अध्यम् , पुरुषः, एभ्यः. श्रद्धेभ्यः, संप्रमुच्य, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, श्राद्धवति. प्रामाय, एवं ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

यत्र श्रापि≃जिससमय स्यः=वह श्रयम्=यह पुरुष त्राणिमानम्=दुर्वलता को जरया=बुढ़ापा करके न्येति=प्रस होता है

चा=ग्रथवा उपतपता=ज्वरादि करके श्राणिमानम्=दुर्वजता को विगच्छति=मास होता है तत्=उस समय यथा≕जैसे

श्राम्चम्=मानं का पका फल
था=या
रुदुम्बरम्=गूलरं का पका फल
था=या
पिष्पल्लम्=पीपलं का पका फल
बन्धनात्=वन्धनं से
प्रमुख्यते=वायुके वेग करके गिर
पक्ता है
प्रमु एव≐उसीपकार
श्राथम्≕यह

पुरुषः=पुरुष पश्यः=इन श्राङ्गेश्यः=इस्तपादादि श्रव-थवों से प्रमुच्य=ष्ट्रकर पुनः=फिर प्रतिन्यायम्=उत्तटे मार्ग से प्रतियोनि=भीर भीर शरीर की प्रातायेख=भोगार्थ श्राद्वयति=जाता है

भावार्थ ।

याज्ञवरूनय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक! जिससमय जीवास्मा बुढ़ापा करके दुर्वलता को प्राप्त होता है, अथवा ज्वरादिक करके दुर्वलता को प्राप्त होता है, तो उस समय (जैसे आम का पक्का फल या गूलर का पक्का फल, अथवा पीपल का पक्का फल, वायुके वेग करके अपने डंठे से गिर पड़ता है उसीप्रकार) यह जीवात्मा अपने हस्त पादादिक अवयवों से छूटकर और दूसरे शरीर निमित्त कर्मफल भोगार्थ जाता है।। ३६॥

मन्त्रः ३७

तद्यथा राजानमायान्तमुग्राः प्रत्येनसः सूत्रग्रामएयोऽन्धेः पानै-रावसर्थेः प्रतिकल्पन्तेयमायात्ययमागच्छतीत्येवछं हैवंविदछं सर्वाणि भूतानि प्रतिकल्पन्त इदं ब्रह्मायातीदमागच्छतीति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, राजानम्, आयान्तम्, उमाः, प्रत्येनसः, स्त्प्रामएयः, अन्तेः, पानैः, आवसर्थः, प्रतिकल्पन्ते, अयम्, आयाति, अयम्, आग-च्छति, इति, एवम्, ह, एवंविदम्, सर्वािग्, भूतानि, प्रतिकल्पन्ते, इदम्, ब्रह्म, आयाति, इदम्, आगम्छति, इति ॥ पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

तत्-जपर कहे विषय में
+ द्द्यान्तः=द्द्यान्त है कि
यथा=जैसे
उग्राः=भयंकर कर्म करनेवालं
पुर्वेतस श्रादिक
प्रत्येनसः=पाप के द्यु देनेवालं
मजिस्ट्रेट लोग
स्त्यामण्यः=गांव गांव के मुखिया
लोग
श्रकोः=चावल, गेहूं, चनादि
श्रल से
पानः=पीने के योग्य दूध,
द्दी, घृत से
(रहनेके योग्य मकान,
खमा, तस्बू श्रादि से
यानी इन सब को
हरूटा करके

द्यायान्तम्=याते हुये राजानम्=राजा की मितकदपन्ते=राह देखते हैं च=ग्रीर इति=ऐसा घदन्ति⊐कहते हैं कि श्चयम्=पह राजा श्चायाति=श्चा रहा है श्चयम्=यह हति=श्चय श्चागच्छति=श्चा पहुँचता है

प्यम् प्घ=इसी प्रकार सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी यानी सूर्यादि देवता

ह=निरचय करके
(इस प्रकार जानने
प्रचम्चिद्म्= { बाले के लिये यानी
ज्ञानी पुरुष के लिये
प्रतिकरुपन्ते=सह देखते स्हते हैं

+ च=श्रोर इति=ऐसा घदन्ति=कहते हैं कि इदम्=यह ब्रह्म=यद्यवित्पुरुप श्रापाति=श्राता है

इदम्=यह ब्रह्म पुरुष ग्रागच्छति=मा रहा है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! उत्पर कहे हुये विषय में यह टप्टान्त है कि जैसे भयंकर कर्म करनेदाले पुलिसम्रादिक भौर पापकर्म के द्रगड देनेवाले हाकिम भौर गांव गांव के मुख्या लोग स्रानादि स्रोर दूध जल स्रादि स्रोर रहने के लिये मकान, खेमा, सम्यू झादि एकत्र करके स्राते हुये राजा की राह देखे हैं ऐसा कहते हुये कि हमारा राजा आ रहा है, यह स्रा पहुँचा है. इसी प्रकार सब

प्राग्रि वानी सूर्य आदि देवता निश्चय करके इस ज्ञानी के जिये राह देखा करते हैं ऐसा कहते हुये कि देखो वह ब्रह्मवित् आता है वह आ रहा है।। ३७॥

मन्त्रः ३८

तद्यथा राजानं पृथियासन्तमुद्राः पत्येनसः सूतद्रामएयोऽभिस-मायन्त्येवभेत्रेममात्मानमन्तकालो सर्वे प्राणा श्रभिसमायन्ति यत्रैतद्-ध्वीच्छ्वासी भवति ॥

> इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥ पदच्छेदः।

तत्, यथा, राजानम्, प्रयियासन्तम्, उष्राः, प्रत्येनसः, सूत्रशःम्ययः, ऋभिसमायन्ति, एवम्, एव, इमम्, आत्मानम्, अन्तकाले, सर्वे, प्राण्यः, श्रभिसप्तायन्ति, यत्र, एतत्, उध्येन्द्वासी, भवति ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः जीवस्य रे मरणकाल में जी-

जांबस्य रे_ मरणकाल में जी- प्रवम् एव≔इसी प्रकार भ्रान्तकाल रें वास्मा के साथ के =कीन कीन सबें=सब

क=कान कान ग्राच्छन्ति=जाते हैं प्रात्माः=प्राण चक्षुरादि इन्द्रिय तत्न्इस विषय में यज्ञ=जब + दृष्टान्तः=दृष्टान्त देते हैं कि ज्ञान्तकाले=मरण समय

यथा=जैसे एतत्=यह जीवास्मा उद्याः प्रत्यनसः=पुलिस के लोग श्रोर स्वाः प्रत्यनसः=पुलिस के लोग श्रोर स्वाः प्रत्यन्य स्वाः

मिजिस्ट्र त्रादिक अध्याच्छ्वासा=अध्ययसासा + च=त्रीर भवित=होता है स्त्रग्रामएयः≕गांव के मुखिया खोग + तदा=तब प्रयियासन्तम्=वापिस जाने वाले पनम्≕इस राजानम्≕राजा के श्रात्मानम्≕त्रास्मा के

श्रीभस- } संमुख विना बुजाये श्रीभसमायन्ति=सामने उपस्थित मार्यान्त } श्रीते हैं होती हैं

भावाध भरती बेला में जीवारमा के साथ कौन कौन जाते हैं, इस विषय में दृष्टान्त देते हैं कि, जैसे पुलिस के लोग, गांव के मुखिया लोग वापिस जानेवाले राजा के सन्मुख विना बुलाये ध्राते हैं उसी प्रकार सब चक्षुरादि इन्द्रियां जब यह जीवात्मा उर्ध्वश्वासी होता है तब उसके सामने उसके साथ चलने के लिये उपस्थित होजाती हैं ॥ ३८ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मण्म् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

स यत्रायमात्मावर्त्यं न्येत्यं संमोहिभव न्येत्यथैनमेते पारणा स्रामसमायन्ति स एतास्तेजोमात्राः समभ्यादद्वानो हृदयमेत्रान्वव-क्रामिति स यत्रैष चाक्षुषः पुरुषः पराङ् पर्योवर्त्ततेऽथारूपज्ञो भवति ॥ पदच्छेतः।

सः, यत्र, श्रयम्, श्रात्मा, श्रवस्यम्, न्येत्य, संमोहम्, इत्र, न्येति, श्रथ, एनम्, एते, प्रास्ताः, श्रमिसप्तायन्ति, सः, एताः, तेजोमात्राः, समभ्याददानः, हृदयम्, एर, श्रन्वत्रकामति, सः, यत्र, एपः, चाक्षुषः, पुरुषः, पराङ्, पर्यावक्तते, श्रथ, श्रम्वकः, भवति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः
यत्र=जिस समय
सः=वही
श्चयम्=यह
श्चातमा=जीवातमा
ह्य=मानो
श्चयत्यम्=दुर्वजता को
न्येत्य=प्राप्त होकर
संमोहम्=मृच्छी को
न्येति=प्राप्त होता है
श्चथ=तव

श्रन्ययः पदार्थाः
+ वागादयः=वागादि
प्राणाः=इन्दिगां
पनम्=इस पुरुष के
श्राक्षिसमा- } सामने स्थित
यन्ति } होजाती हैं
+ च तदा=श्रीर तबही
सः=जीवारमा
पताः=इन
तेजोमात्राः=तैजस श्रंशों को
समस्याददानः=श्रद्धातरह शरीर के
संब श्रोर से जेताहृश्रा

हृद्यम् एव=हृदय के ही तरफ अन्ववकामति=जाता है अथ=श्रोर यत्र=जिस समय सः=वह एषः=यह चाश्चपः=नेत्रस्थ पुषः≕जीवात्मा

पराक्=बाद्य विषय विभुक्ष होता हुआ पर्यावक्तेते=धन्तर्भुक्ष होता है ऋथ≔तव सः≔वह कक्तों भोक्ना पुरुष ऋरुपक्कः≔रूप का पहिचानने वाला नहीं होता है

भावार्थ ।

इस शरीर से जीवात्मा कैसे निकलता है उसको कहते हैं. हे राजा जनक ! जिस काल में यह जीवात्मा दुर्वलता को प्राप्त होकर मूच्छा को प्राप्त होता है तय बागादि सब इन्द्रियां इस पुरुष के सामने उपस्थित होजाती हैं, ख्रोर उस समय वह जीवात्मा तेजस ख्रंश को भली प्रकार शरीर के सय खड़ों से लेता हुद्या हुद्य के तरफ जाता है, ख्रोर जब वह नेत्रस्थ पुरुप बाह्य विपयों से विमुख होता हुआ झन्तर्मुख होता है तब वह कर्त्ता भोक्ता पुरुपरूप का पहिचाननेवाला नहीं होता है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

एकीभवित न पश्यतित्याहुरेकीभवित न भिन्नतीत्याहुरेकीभवित न रसयत इत्याहुरेकीभवित न वदतीत्याहुरेकीभवित न शृणोती-त्याहुरेकीभवित न मनुत इत्याहुरेकीभवित न स्पृशतीत्याहुरेकीभवित न स्पृशतीत्याहुरेकीभवित न विज्ञानातीत्याहुरेतस्य हैतस्य हृदयस्याग्रं प्रचोतते तेन प्रचोत्तनेनेन श्रात्मा निष्कामित चिष्ठाष्टो वा सूर्जोवाऽन्येभ्यो वा शरीर-देशेभ्यस्तमुत्कामन्तं प्राणोऽन्त्कामित पाणमन्त्कामन्तथ्थ सर्वे प्राणा अन्त्कामिन सविज्ञानो भवित सविज्ञानमेवान्ववक्रामित । तं विद्याकर्मणी समन्वारभेते पूर्वपक्षा च ।।

पदच्छेदः ।

एकीभवित, न, परयित, इति, आहुः, एकीभवित, न, जिल्लति, इति, आहुः, एकीभवित, न, यद्वित, इति, आहुः, एकीभवित, न, यद्वित, इति, आहुः, एकीभवित, न, यद्वित, इति, आहुः, एकीभवित, न, य्रापोति, इति, आहुः, एकीभवित, न, मनुते, इति, आहुः, एकीभवित, न, मनुते, इति, आहुः, एकीभवित, न, विज्ञानाित, इति, आहुः, तस्य, ह, एतस्य, हृदयस्य, अश्म, प्रयोन्तेत, तेन, प्रयोतनेन, एपः, आत्मा, निष्कामित, चल्लष्टः, वा, मूर्त्रः, वा, अन्योतनेन, एपः, आत्मा, निष्कामित, चल्लष्टः, वा, मूर्त्रः, वा, अन्योयमः, वा, रार्पाःदेशेभ्यः, तम्, उत्कामन्तम्, प्रापाः, अन्त्कामित, प्रापाः, अन्त्कामित, प्रापाः, अन्त्कामित, सविज्ञानः, भवित, सविज्ञानम्, एव, अनु, अवकामिति, तम्, विद्याकर्मणी, समन्वार्भते, पूर्वप्रज्ञा, च॥

पदार्थाः श्चन्ययः + मर्णकाले=मरणकाल विपे + वन्धुमि- } = बन्धु मित्रादिक + इति=ऐसा + ऋाहुः=कहते हैं कि + ग्रस्य=इसके + नयनेन्द्रियः=नेत्रइन्द्रिय पकी भवति=हृदय श्रात्मा के साथ एक होरहा है + ऋतः≔इस जिये + सः=वह + नः=इम लोगों को **न**≔नहीं पश्यति=देखता है + यदा=जब + ब्राणशक्रिः=ब्राणशक्रि

न≕नहीं

श्रन्वयः पदार्थाः जिन्नति=संघती है + तदा=तब इति=ऐसा आहु:=वे लोग कहते हैं कि श्रस्य=इसकी घाणेन्द्रिय:=घाणेन्द्रिय पकीभवति=श्रात्मा के साथ एक होगई है श्रतः=इसी कारण सः=वह न जिद्यति=नहीं सृंघता है + यदा=जब रसेन्द्रियः=स्वाद लेनेवाली इन्द्रिय पकीभवति=श्रात्मा के साथ एक होती है + तदा=तव

न रसयते=वह किसी वस्तृ का आहु:=लोग कहते हैं कि स्वाद नहीं केता है सः≔वह + यदा=जब न=नहीं uकी भवति=वागिन्द्रिय श्रात्मा के स्प्रशति=स्पर्श करता है साथ एक होती है + यदा=जब + तदा=तब प्कीभवति= { बुद्धि श्रात्मा के साथ एकभाव को प्राप्त होती है इति=ऐसा आहु:=कहते हैं कि + तदा=तब सः=वह इति=ऐसा न वदति=नर्वे बोबता है आहु:=लोग कहते हैं कि + यदा=जब + सः=वह पकीभवति=श्रोत्रेन्द्रिय श्रात्मा के न≃नहीं साथ एक होती है विज्ञानाति=मानता है + तदा=तब ह=तब इति=ऐसा श्चाहः=लोग कहते हैं कि तस्य≃उस एतस्य=इस ग्रात्मा के सः=वह हृदयस्य=हृदय का न श्रुणाति=नहीं सुनता है श्रयम्=श्रयभाग + यदा=जब प्रयोतते=प्रकाश करने लगता है पकीभवति=मन श्रात्मा के साथ तेन=उसी एक होता है प्रद्यातनेन=हृदयाम प्रकाश करके + तदा=तब + निष्क्रममाणः=निकलता हुआ इति=ऐसा एपः=यह आहः=लोग कहते हैं कि श्चातमा=अन्तरात्मा + सः=वह चक्षुष्टः=नेत्रसे **न**=नहीं वा=या मनुते=मनन करता है मुर्धः=मस्तक से + यदा=जब वा=या पकीभवति=विगिन्दिय जिङ्गातमा श्चन्येभ्यः } =श्चीरइन्द्रियोंकी राहसे श्ररारदेशेभ्यः } के साथ एक होता है + तदा=तब इति=ऐसा निष्कामति=निकलता है

उत्कामन्तम्=निकलते हुये
े तम्=उस जीवात्मा के
अनु=पीछे
े प्राणः=प्राण
उत्कामित=जपर जाता है यानी
निकलने लगता है
अन्त्कामन्तम्=जीवात्माके पीछे जाने
वाले
पाणम्=प्राण के
अनु=पीछे
सर्भ=स्व
प्राणाः=वागादि इन्द्रियां
उत्कामन्ति=जपर को जाती हैं
+ तदा=तय यानी जाते समय

श्रयम्=यह जीवातमा
सिविद्यानः=पूर्ववत् ज्ञानवाजा
भवति=होता है
च=श्रीर
+ सः=वह जीवातमा
सिविज्ञानम्=विज्ञानस्थान को
प्य=ही
श्रम्ववकामिति=जाता है
तम्=जानेवाले श्रातमा के
श्रमु=पीछे
विद्याकर्मण्डां=विश्रा श्रीर कर्म
+ च=श्रोर
पूर्वत्रज्ञा=पूर्व का ज्ञान
समन्वारमत=सम्बक् प्रकार जातेहें

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! पुरूप के मरते समय उसके भाई बन्धु निवादि उसके पास बेठकर ऐसा कहते हैं कि इस पुरूप की नेत्रेन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होरही है इसलिये वह हमको नहीं देखता है, जब उस नी ब्राग्एशक्ति को नहीं देखते हैं, तब ऐसा कहते हैं कि इसकी ब्राग्एइन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होरही है, इसीकारग्ए वह किसी वस्तु के सूँपने में असमर्थ है, जब स्वाद कोने बाली इन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब वह किसी वस्तु का स्वाद नहीं लेता है, जब वागिन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब बेठेडुये लोग कहते हैं कि वह नहीं बोलता है, जब श्रोत्रेन्द्रिय हृद्रयात्मा के साथ एक होजाती है तब लोग कहते हैं कि यह नहीं सुनता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब स्वां एक होजाता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब स्वां होजाता है, जब स्वां एक होजाता है, जब स्वां एक होजाता है, जब स्वां होजाता है, जब स्वं होजाता है, जब स्वां होजाता है स्वां होजाता होजाता है स्वां होजाता होज

ख़द्धि हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब लोग कहते हैं कि यह नहीं पहिचानता है. श्रीर तभी इस जीवात्मा के हृदय का श्रप्रभाग चमकने लगता है, उसी हृदय के अप्रभाग के प्रकाश करके यह जीवातमा नेत्र से अथवा मस्तक से अथवा अौर इन्द्रियों की राह से निकल जाता है, श्रीर उसके निकलने पर उसीके पीछे पीछे प्रामा भी चल देता है. श्रीर प्रामाके पीछे सब इन्द्रियां चलदेती हैं, तब यह जीवात्मा ज्ञानी होता हुन्ना विज्ञानस्थान को जाता है, स्त्रीर उसके पीछे विद्या, कर्म, ज्ञान सव चलदेते हैं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

तद्यथा तृगाजलायुका तृगास्यान्तं गत्वान्यमाक्रममाक्रम्यात्मा-ं नमुवसछहरत्येवमेवायमात्मेदछ शरीरं निहत्याविद्यां गमवित्वा-न्यमाक्रममाक्रम्यात्मानमुपसछहरति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, तृगाजलायुका, तृगास्य, अन्तम्, गत्वा, अन्यम्, श्चाकमम्, त्राक्रम्य, त्रात्मानम्, उपसंहरति, एवम्, एव, श्रयम्, श्चात्मा, इदम्, शरीरम्, निहत्य, श्चविद्याम्, गमयित्वा, श्चन्यम्, श्राक्रमम्, श्राक्रम्य, श्रात्मानम्, उपसंहरति ॥

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्चान्वयः तत्=पुनर्देह के त्रारम्भ में त्रातमानम्=त्रपने को + इप्रान्तः=दृष्टान्त है कि यथा=जैसे तृणजलायुका=तृणजलायुका कीड़ा तृणस्य=तृण के श्चन्तम्=श्चन्तिम भाग को गत्या=पहुँच कर श्चन्यम्=दूसरे धाकमम्=तृष के

ध्याऋस्य=अध्यय को पकड

उपसंहर्रात=संकोच कर श्रगते त्रण पर जाता है एवम् एव=उसी प्रकार श्रयम्=यह श्चारमा=जीवारमा इदम्=इस शरीरम्=जर्जर शरीर को

निहत्य=श्रवेतन बनाकर

+ च=भौर

श्रविद्याम् = (स्वीपुत्रादिक वियोग जन्य शोक को गमयित्वा (दूर करके

आक्रमम्=शरीर को आक्रम्य=ब्राश्रय करके । आरमानम्=अपने बत्तमान देह को

श्चन्यम्=श्रीर दूसरे

उपसंहरति=ष्रोदता है

भावार्थ ।

याज्ञवत्कय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा किस तरह एक शरीर से दूसरे शरीर को प्राप्त होता है, इस विषय में जो दृष्टान्त लोग देते हैं उसको सुनो में कहता हूं, हे राजन् ! जैसे तृगाजलोंका कीड़ा उस तृगा के उपर जिसके उपर वह चढ़ा रहता है जब उसके अन्तिम भाग को पहुँचता है तब दूसरे तृगा को जो उसके सामने रहता है पकड़ कर अपने शरीर को संकोचकर उस अगले तृगा पर जाता है उसी प्रकार यह जीवात्मा अपने जर्जर शरीर को अचेतन बनाकर और स्त्री पुत्रादिक वियोगजन्य शोक को दूर करके दूसरे शरीर को आश्रय लेता हुआ अपने वर्त्तमान देह को लोडता है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

तद्यथा पेशस्कारी पेशसो मात्रामपादायान्यस्रवतरं कल्यास्पतर्थं रूपं तनुत एवमेवायमात्मेद्धं शरीरं निहत्याविद्यां गमधित्वान्यस्र-वतरं कल्यासतर्थं रूपं कुरुते पित्र्यं वा गान्वर्वे वा देवं वा प्राजा-पत्यं वा ब्राह्मं वाऽन्येषां वा भूतानाम् ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, पेशस्कारी, पेशसः, मात्राम्, अपादाय, अन्यत्, नव-तरम्, कल्यागातरम्, रूपम्, ततुने, एवम्, एव , अयम्, आत्मा, इदम्, शरीरम्, निहत्य, अविद्याम्, गमयित्वा, अन्यत्, नवतरम्, कल्याण-तरम्, रूपम्, कुरुते, पिज्यम्, वा, गान्धर्वम्, वा, दैवम्, वा, प्राज्ञा-पत्यम्, वा, ब्राह्मम्, वा, अन्येपाम्, वा, भृतानाम्॥

पदार्थाः पदार्थाः द्यास्त्रयः धारवय: तत=देहान्तरारम्भ के उपा अन्यत्=दूसरा द्दान कारण विषे नघतरम्≔नवीन कल्याणतरम्=श्रेष्ठतर द्रष्टान्तः=द्रष्टान्त है कि रूपम्=देह यथा=जैसे कुरुते=धारण करता है **पेशस्कारी**=सुनार वा=चाहे पेशसः=सोने का तत्=वह देह मात्राम्=एक टुकडा पित्र्यम्=पितरकोकों के श्रपादाय=केकर योग्य हो अन्यत्=दूसरा नवतरम्=पहिले भृषण की वा≖त्रधवा गान्धर्वम्=गम्धर्वजोकके योग्यहो अपेक्षा अधिक नृतन वा=घथवा कल्य। ग्तरम्=भच्छा दैवम्=देवलोक के योग्य हो **रूपम्**=गहना तनुते=बनाता है वा=मधवा प्राजापत्यम्=प्रजापतिबोक के एवम् एव=इसी प्रकार योग्य हो अयम्=यह श्चारमा=जीवारमा वा≕मथवा ब्राह्मम्=ब्रज्ञांक के योग्य हो इदम्=इस शरीरम्=जर्जर शरीर को चा=श्रथवा श्चन्येषाम्=जपरवालों से विरुद्ध निहत्य=स्याग करके भूतानाम्=पशु पक्षी बादिकी श्रविद्याम् । अज्ञानजन्य शोक गमथित्वा } को नाशकर का हो

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, शास्त्रतत्त्ववित् पुरुषों का विचार है कि कोई जीव उर्ध्व को जाता है, कोई मध्य को जाता है, कोई नीचे को जाता है, यह जीव कर्मानुसार फिरा करता है, एक हास्त्रत पर कभी नहीं रहता है, इस विषय में यह दृष्टान्त है कि, जैसे सुनार सुवर्ण के एक दुकड़े को लेकर पहिले भूपण की अपवेक्षा दूसरे भूषण को अधिक नृतन और अच्छा बनाता है, इसी प्रकार यह विद्यासुका

जीवातमा इस अपने जर्जर शरीर को त्याग करके और अज्ञानजन्य शोक को नाश करके दूसरे नवीन उमदा देह को धारण करता है चाहे वह देह पितरलोक के योग्य हो, चाहे वह देह गन्धर्वलोक के योग्य हो, अथवा देवलोक के योग्य हो, अथवा प्रजापतिलोक के योग्य हो, चाहे ब्रह्मलोक के योग्य हो. अथवा अपविद्यासंयुक्त जीवातमा उत्पर कहे हुये के विरुद्ध पशु पक्षियों की योनि के योग्य हो ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स वा श्रयमात्मा ब्रह्म विज्ञानमयो मनोमयः पाणमयश्च श्रुर्भयः श्रोत्रमयः पृथिवीमय श्रापोमयो वायुगय श्राकाशमयस्ते जोमयो- ऽतेजोमयः काममयोऽकाममयः क्रोधमयोऽक्रोधमयो धर्ममयोऽधर्ममयः सर्वमयस्तव्यदेतिदिदं मयोऽदोमय इति यथाकारी यथाचारी तथा भवति साधुकारी साधुर्भवति पापकारी पापो भवति पुष्यः पुष्येन कर्मणा भवति पापः पापेन । श्रयो सल्लाहुः काममय एवायं पुष्य इति स यथाकामो भवति तत्क्रतु भवति यत्क्रतु भवित तत्क्रमे कुरुते यत्क्रतु भवित तद्क्रमे कुरुते यत्क्रते कुरुते तदि भसंपद्यते ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, अयम्, आत्मा, ब्रह्म, विज्ञानमयः, मनोमयः, प्राण्मयः, चक्षुर्मयः, श्रोत्रमयः, पृथिवीमयः, श्रापोमयः, वायुमयः, श्राकाशमयः, क्षेत्रमयः, श्रोत्रमयः, काममयः, श्राकाशमयः, धर्ममयः, अविन्नामयः, काममयः, क्षेत्रमयः, श्रदोमयः, धर्ममयः, सर्वमयः, वत्, यत्, एतत्, इदंमयः, श्रदोमयः, इति, यथाकारी, यथाचारी, तथा, भवति, साधुकारी, साधुः, भवति, पापकारी, पापः, भवति, पुर्यः, पुर्येन, कर्मसा, भवति, पापः, पापेन, आयो, खलु, श्राहुः, काममयः, एव, श्रयम्, पुरुषः, इति, सः, यथाकामः, भवति, तत्कतुः, भवति, यत्कतुः, भवति, तत्, कर्म, कुरुते, यत्, कर्म, कुरुते, तत्, श्रासंपद्ये। ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

सः वै अयम्=वही यह श्चातमा=जीवात्मा ब्रह्म=ब्रह्मरूप है विज्ञानमयः=विज्ञानमय है मनोमयः=मनके अन्दर रहने से मनोमय है प्राणमयः=आणादिक में रहने से प्राणमय है चक्षर्मयः=चक्ष्विशिष्ट होने के कारण चक्षमय है श्रोत्रमयः=श्रोत्रविशिष्ट होने के कारण श्रोत्रमय है पृथिवीमयः=गन्धज्ञान होने के कारण घाणमय है आपोमयः=जलविशिष्ट होने के कारण श्रापोमय है घायुमयः=वायुविशिष्ट होने के कारण वायुमय है श्चाकाशमयः=श्चाकाश में रहने के

तेजोमयः=तेजविशिष्ट होने के कारण तेजमय हैं
अतेजोमयः=तेजरहित है
आममयः=कामना से पूर्ण है
अकाममयः=कामनारहित है
अोधमयः=कोध से भरा है
अकोधमयः=कोधरहित है

कारण ग्रावाशमय है

धर्ममयः=धर्म से भरा है श्रधर्भमयः=धर्मरहित है

सर्वमयः=सर्वमय है यानी जो कुछ है सब इसीमें है यत्≕ितस कारण पतत्=यह जीवात्मा

इदंमयः= { इस लोक की सब वासनाओं करके वासित है

श्रद्दोमयः≔परलोक की वासनाश्रों करके वासित है तत्=इस लिये इति≕ऐसा यानी सर्वमय है यथाकारी=जिस प्रकार के कर्मों को करता है

यथाचारी≔ितस प्रकार क्राचरणों को करता है तथा भवति=ेंथेसेही होता है साधुकारी=श्रव्हें कर्म का

करनेवाला साधुः=साधु है पापकारी=पापकर्मका करनेवाला पापः=पापी भवति=होता है पुरायेन=पुराय कर्मकरके पुरायः=पुरायवान्

पापेन=पाप कर्मणा=कर्म करके पापः=पापी भवति=होता है श्रथो=इसके धनन्तर खलु=निरचय करके

भवति=होता है

खलु=ानस्चय करक स्राहु:=कोई श्राचार्य कहते हैं कि श्चयम् एव=यही
पुरुषः=पुरुष
काममयः=काममय है
हति=हसी कारण
सः=वह
यथाकामः=जिस इच्छावाजा
भवति=होता है
तत्कतुः=वैसाही उसका
परिश्रम
भवति=होता है

यत्क्रतुः=जैसा परिश्रमवाजा भवति=होता है तत्=वैसाही कर्भ=कर्म को कुरुते=करता है यत्=जैसा कर्भ=कर्म कुरुते=करता है तत्=वैसा फल श्राभसंपद्यत=पाता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! वही यह जीवात्मा ब्रह्मस्वरूप है, वही विज्ञानस्वरूप है, वही मन के ब्रान्दर रहने से मनोमय है, प्रामादिकों में रहने से प्राम्यय है, चक्षविशिष्ट होने के कारण चक्तमय है, श्रोत्रविशिष्ट होने के कारण श्रोत्रमय है, गन्ध-विशिष्ट होने के कार्ण आणमय है, जलविशिष्ट होने के कार्ण आपी-मय है, वाप्विशिष्ट होने के कारगा वायमय है, आकाश में रहने के कारणा आकाशमय है, तेज में रहने के कारणा तेजमय है, वही तेज-रहित भी है, क्रोध से भग है, क्रोबरहित भी है, धर्म से पूर्ण है, धर्म-रहित भी है, वही सर्वमय है यानी जो कुछ है वह उसी में है, जिस कारगा यह जीवात्मा इस लोक की सब वासनाओं करके बासित है. श्रीर परलोक की वासनाश्रों करके वासित है, इसी कारण यह आहमा सर्भमय है, जिस प्रकार यह जीवात्मा कमों को करता है, ख्रीर जिस प्रकार आचरणों को करता है, वैसेही वह होता है यानी अच्छे कर्मों का करनेवाला साध होजाता है. ऋौर पाप कमी का करनेवाला पापी हो जाता है, पुरायकर्ता पुरायवान बनता है, पापकर्त्ता पापी बनता है, कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि यह जीवात्मा काममय है, इसी कारण वह जैसी इच्छावाला होता है वैसाही उसका श्रम होता है,

अगेर जैसाही श्रमवाला होता है वैसाही कर्म करता है, और जैसा कर्म करता है वैसा फल पाता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

तदेष रलोको भवति । तदेव सक्रः सह कर्मणैति लिक्नं मनो यत्र निषक्रमस्य । पाष्यान्तं कर्मणस्तस्य यिक्वंचेह करोत्ययम् । तस्माल्लोकात्पुनरेत्यस्मै लोकाय कर्मण इति नु कामयमानोऽथा-कामयमानो योऽकामो निष्काम श्राप्तकाम श्रात्मकामो न तस्य प्राणा उत्कामीनत ब्रह्मैव सन्ब्रह्माप्येति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एषः, रकोकः, भवति, तत्, एव, सकः, सह, कर्मग्रा, एति, किङ्गम्, मनः, यत्र, निष्क्रम्, अस्य, प्राप्य, अन्तम्, कर्मग्रः, तस्य, यत्, किंच, इह, करोति, अयम्, तस्मात्, लोकात्, पुनः, एति, अस्मे, लोकाय, कर्मग्रे, इति, नु, कामयमानः, अथ, अकामयमानः, यः, अकामः, निष्कामः, आप्तकामः, अप्रतम्कामः, न, तस्य, प्राग्राः, उत्कामनित, ब्रह्म, एव, सन्, ब्रह्म, अप्येति ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=जपर कहे हुये
विषय में
पपः=यह
श्लोकः=मन्त्र प्रमायः
भवति=है
यत्र=जिस पानेवाले फल में
श्रास्य=हस पुरुष का
लिङ्गम् मनः≕जिङ्गशीर संयुक्त मन
निषक्तम्=घतिशय खासक
रहता है
तत् प्व=डसी फल को
कर्मण्=कर्म के

पद्मधाः
सह=साधः
सहः=त्रासकः होता हुआः
पति=पुरुष प्राप्त होता है
+ किंच=और
यरिकच=जो कुळः
अयम्=यह पुरुषः
इह=यहां
करोति=करता है
तस्य=उसः
कर्मणः=कर्म के

अन्तम्=फल को

प्राप्य=भोग कर है

निकाम:=जिसमें कोई वासना तस्मात्=उस नहीं है लोकात्=जोक से त्रास्मै≔इस लोकाय=बोक में कर्मण=कर्म करने के लिये पुनः≕िकर पति=भाता है इति=इस प्रकार न=निश्चय करके कामग्रमानः=कामना करनेवासा तस्य=उस परुष की प्राशाः=वागादि इन्द्रियां आवि संसरति=संसारको प्राप्त होताहै न उस्कामन्ति=देह से बाहर नहीं द्याथ=परन्त जाती हैं यः≕जो + सः=वह पुरुष श्वकामयमानः=धिखल कामना रहितहै पच=यहांही घ्रह्म=जद्यवित सः=वह न=महीं सन्=होता हुआ पति=कहीं जाता है घ्रह्म=ब्रह्म को + सम्राट=हे राजन ! ऋषि⇒ही श्रकामः=बाह्य सुख स्पर्शादिक | प्रति=प्राप्त होता है यानी से रहित है जो मुक्र होजाता है

भावार्थ

हे राजा जनक ! मरते समय जीवात्मा का मन जहां और जिस विषय में आसक्त होता है वहांही यह जीवात्मा आसक्त होता हुआ उसी विषय की प्राप्ति के लिये जाता है, और जो कुछ यह जीवात्मा यहां करता है उस कर्म के फल को परलोक में भोग कर उस कोक से इस जोक में फिर कर्म करने को आता है, इस प्रकार कामनावाला पुरुष संसार को वारंवार प्राप्त होता है, हे राजन् ! जो गित काम-रहित पुरुषों की है उसको भी सुनो, जो पुरुष सब कामना से रहित है, वह कहीं नहीं जाता है, हे राजन् ! वह पुरुष जो बाह्य सुख स्पर्शादिक से रहित है, और उसमें कोई वासना नहीं है, और जिसको सब पदार्थ प्राप्त हैं, किसी वस्तु की कमी नहीं है, अथवा जिसमें अपने आत्मा के सिवाय और किसी वस्तु की इच्छा नहीं है, उस पुरुष की वासी आदि इन्द्रियां देह से वाहर नहीं जाती हैं, वह पुरुष यहांही ब्रह्मवित् होता हुआ ब्रह्म कोही प्राप्त हो जाता है। है।।

मन्त्रः ७

तदेष श्लोको भवति । यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा थेऽस्य हृदि श्रिताः । श्रथ मत्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्तुत इति । तद्यथाऽहि-निर्क्वयनी वर्ल्याके मृता प्रत्यस्ता श्यीतैवमेवेदछ श्रीर्छ शेतेऽथा-यमश्रीरोऽमृतः प्राणो ब्रह्मेव तेज एव सोऽहं भगवते सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एषः, इलोकः, भवित, यदा, सर्वे, प्रमुच्यन्ते, कामाः, ये, अस्य, हृदि, श्रिताः, अ्रथ, मर्त्यः, अमृतः, भवित, अत्र, ब्रह्म, समश्तुते, इति, तत्, यथा, अ्रहिनिक्वयनी, वक्मीके, मृता, प्रत्यस्ता, शयीत, एवम्, एव, इदम्, शरीरम्, रोते, अ्रथ, अ्रयम्, अशरीरः, अमृतः, प्राग्यः, ब्रह्म, एव, तेजः, एव, सः, अहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

तत्=कपर कहे हुये विषय में एषः=यह श्लोकः=मन्त्र भवति=प्रमाख है श्रस्य=इस पुरुष के हृदि=हृदय में ये≕जो जो कामाः=कामनायें

श्रिताः=स्थित हैं + च=श्रीर यदा=जब + ते=बे सर्वे=सब कामाः=कामनावें प्रमुच्यन्ते≕निक्ज जाती हैं

श्रथ=तब

मर्त्यः⇒मरख पर्भवाका परुष अमृतः≔ममर भवति=होजाता है च=धीर श्रात्र=यहां**ही** ब्रह्म≔ब्रह्म को समञ्जूते=प्राप्त होता है तत=इसी विषय में इति=ऐसा + द्रष्टान्तः=द्रष्टान्त है ।के यथा=जैसे श्राहितिल्वेयनी=सर्प की खबा मृता=निर्जीवित प्रत्यस्ता≕यागी हुई वरमीके=बामी के जपर शयीत=पदी रहै एवम् एव=इसी प्रकार इदम्=यह शरीरम्=शनी का शरीर + मृतः इव=मुर्दे की तरह शेत=पड़ा रहता है श्रध=इसी कारण

श्रयम्≖वह प्रात्तः=पुरुष . अशरीर:=शरीररहित ग्रमृतः=मरण धर्मरहित + भवति=होता है श्रयम् एव=यही भुरुष ब्रह्म=ब्रह्मस्वरूप + च=श्रीर तेजः=ज्ञानस्वरूप एव=ही है + इति≕ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर जनकः=राजा जनक वैदेह:=विदेह ने ह=स्पष्ट उवास=कहा कि भगवते=भाषके लिये याझवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! स्यः=वह श्रहम्=में सहस्रम्=एक हजार गौधों को ददामि=रेता हं

भावाथ

हे राजा जनक ! इस पुरुष के हृदय में जो जो कामनायें स्थित हैं जब वे सब निकल जाती हैं तब वह पुरुष अमर होजाता है, और वह यहांही ब्रह्मको प्राप्त होजाता है, इस विषय में यह ट्रष्टान्त है, जसे सर्प जब अपनी निर्जीवित त्वचा को त्याग देता है, और वह किसी बामी के उपर पड़ी रहती है, तब वह सर्प न उसकी रक्षा का यक्ष करता है, और न उसे फिर लेना चाहता है, उसी प्रकार झानी का शरीर सर्प की त्यागी हुई त्वचा की तरह जीते जी भी निर्जीवित

पड़ा रहता है, यानी उस शरीर से असंबद्ध रहता है, और इसी कारण यह झानी पुरुष शरीररहित और मरणधर्मरहित होता है, यही पुरुष श्रद्धास्त्ररूप, झानस्त्ररूप होता है, ऐसा सुनकर राजा जनक विदेह ने सविनय कहा, हे परमपूज्य, भगवन् ! मैं एक हजार गौओं को आपके प्रति दक्षिणा में देता हूं ।। ७ ।।

मन्त्रः द

तदेते श्लोका भवन्ति । त्र्रगुः पन्था विततः पुरागो माछं स्पृष्टोऽनुवित्तो मयैव । तेन धीरा श्रपियन्ति ब्रह्मविदः स्वर्गे लोक-मित ऊर्ध्व विमुक्ताः ।।

पदच्छेदः ।

तत्, एते, श्लोकाः, भवन्ति, आणुः, पन्थाः, विततः, पुर'ण्ः, माम्, सृष्टः, आनुवित्तः, मया, एव, तेन, धीराः, आपियन्ति, ब्रह्मविदः, स्वर्गम्, लोकम्, इतः, ऊर्ध्वम्, विग्रुक्ताः ॥
अन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पटार्थाः

तत्=ऊपर कहे हुये मोक्ष अनुविस् विषे + इ

एते=वे

यत-प श्लोकाः=मन्त्र भवन्ति=प्रमाण हैं + जनक=हे जनक ! पुराणः=पुरातन श्राणः=दुर्विजेय श्रतिस्क्षम विततः≔विस्तीर्ण

> पन्धाः=ज्ञानमार्गे मया=मैंने

एव=धवश्य

श्रनुवित्तः=जाना है + च=श्रीर

माम्=मुक्तको

स्पृष्ठः=प्राप्त हुन्ना है तेन=उस मार्ग करकेही

धीराः=धीर ब्रह्मविदः=ब्रह्मज्ञानी इतः=मरने बाद

विमुक्ताः=मुक्त होते हुये

स्वर्गम् लोकम्=स्वर्गलोक को यानी मोक्ष को

अपियन्ति=प्राप्त होते हैं

भावार्थ ।

याझवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जो कुछ मैं

ऊपर कह आया हूं उस विषय में ये मन्त्र प्रमाण हैं. यह ब्रह्मविद्या मार्ग अतिस्क्ष्म है चारों तरफ फेल रहा है और पुरातन है भि-को शंका नहीं कि यह नवीन मार्ग है, यह वेदविहित मार्ग एपा-चला आता है, इस मार्ग को में बड़े परिश्रम के बाद प्राप्त हुक्ष है यानी इसके लिये मैंने श्रवण, मनन, निद्ध्यासन किया है, द्रं ॥ ब्रह्मवित् परमझानी पुरुष इस स्क्ष्म मार्ग को प्रहण करेंगे वे भी सुखमय धाम को प्राप्त होंगे. कब होंगे, जब वे स्थूल शरीर के छोड़ के पहिलेही सब सम्बन्धों से मुक्त होजायँगे, अथवा जीवन्मुक्त होकर आवागमन से रहित होजायँगे ॥ ८ ॥

मन्त्रः ६

तस्मिञ्छुक्रमुत नीलमाहुः पिङ्गलथ्धं हरितं लोहितं च । एष पन्था ब्रह्मणा हानुविचस्तेनैति ब्रह्मवित्पुएयक्रुनैजसश्च ॥

पदच्छेदः ।

तस्मिन्, शुक्तम्, उत, नीलम्, श्राहुः, पिङ्गलम्, हरितम्, लोहि-तम्, च, एषः, पन्थाः, श्रह्माग्।, ह, श्रमुवित्तः, तेन, एति, श्रह्मवित्, पुर्यकृत्, तेजसः, च।।

श्चन्ययः

पदार्थाः अन्वयः

त्यः पदार्थाः पिङ्गलम्≕सूर्यं के पीले रूप को + स्राहुः≕मुक्तिमार्गं कहते हैं +केचित्≕कोई

+ विवादः≕विवाद है
+ केचित्≕कोई खाचार्य
शुक्कम्=सूर्य के शुक्क रूप को
श्राहुः≕मुक्षिमार्ग कहते हैं
उत=और

तिस्मन्=उस मोक्षसायन

मार्ग के विषय में

+ आहु:=पुक्तिमार्ग कहते हैं च=धौर + केचित्=कोई

+ केचित्=कोई नीलम्=सूर्य के नील रूप को + श्राहुः=मुक्ति मार्न कहते हैं लोहितम्=सूर्यं के जाजरूप को + आहु:=मुक्रिमार्ग कहते हैं

हरितम्=सूर्य के हरे रूप को

+ केचित्=कोई

एषः=यह पन्धाः=मार्ग

ब्रह्मसा=ब्रह्मवेत्ताओं करके श्रनुवित्तः=जाना गया है हेन एव=इसी मार्ग करके प्रियकृत्=पुष्य करनेवासा

तैज्ञसः=तेजस्वीस्त्रहूप ब्रह्मचित्=ब्रह्मवेत्ता + सूर्यलोकम्=सूर्यकोक को

भावार्थ ।

हे अनम ! सूर्य में पांच तत्त्वों के पांच रंग स्थित हैं, उन रंगों की उपासना आचार्यों ने अपने अपने मत के अनुसार की है. किसी आचार्य ने सूर्य के शुक्त रूप को मुक्तिमार्ग कहा है, किसी ने सूर्य के नील रूप को मुितमार्ग कहा है, किसी ने सूर्य के पीले रूप को मुित-मार्ग कहा है और किसी ने सूर्य के हरे रूप की मिक्कमार्ग कहा है. किसी ने सूर्य के लाल रूप को मुक्तिमार्ग वहा है. ये कहे हुये मार्ग ब्रह्मवेत्ताओं करके जाने गये है, इन्हीं मार्गों करके पुराय करने वाले बेजस्वी ब्रह्मवेत्ता पुरुष सूर्यलोक को जाने है ॥ ६ ॥

' मन्त्रः १०

श्रन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यसुपासते । ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाळ रताः ॥

पदच्छेदः।

ुम्बर्भम्, तमः, प्रविशन्ति, मृ, श्रविद्याम्, उपासते, तत., भूय:, इव, 🛣, तमः, ये, उ, विद्यायाम्, रताः ॥ अस्वयः

पदार्थाः

गे=जो ' श्चविद्याम्=यज्ञादि कर्म उपास्तं ⇒करते हैं

+ ते≔वे

अन्धम तमः=भन्धतम में प्रावशानित=प्रतिष्ट होते हैं च=थीर

य≕मो

रताः=अभिरत हैं ते≕वे

ततः≔उस धन्धतम से भूयः इव=बढे घन

तमः=घन्धतम में

प्रविशन्ति=प्रविष्ट होते हैं

भावार्ध ।

हे राजा जनक ! जो पुरुष श्रविद्या की उपासना करते हैं वे श्रन्थ-तम को प्राप्त होते हैं ऋौर जो विद्या की यानी अपरा विद्या की उपा-सना साहंकार करते हैं वे उससे भी ऋधिक अन्धतम को प्राप्त होते हैं क्यों कि इस विद्या करके विशेष रागद्वेष में आसक्त होते हैं।। १०॥

मन्त्रः ११

श्रनन्दानाम ते लोका श्रन्धेन तमसाहताः । तार्थस्ते मेत्या-भिगच्छन्त्यविद्वाक्षसोऽबधो जनाः ॥

पदच्छेदः ।

अनन्दाः, नाम, ते, लोकाः, अन्धेन, तमसा, आवृताः, तान्, ते, प्रेत्य, अभिगच्छन्ति, अविद्वांसः, अवुधः, जनाः ॥ श्चास्यय:

ते≕वे

पदार्थोः अन्वयः आवताः=अवत हैं पदार्थाः

लोकाः=लोक

तान=उन्हीं लोकों को

द्यतन्दाः नाम=घनन्द नाम से प्रसिद्ध हैं थे=जो

श्रविद्वांसः=साधारण अविद्वान श्रव्धः जनाः=श्रज्ञानी परुष

द्यन्धेन=महा धन्धकार तमसा=तम करके

प्रेत्य=मरकर श्रमिगच्छन्ति=प्राप्त होते हैं

भाषार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! वे योनि अनन्द नाम करके प्रसिद्ध हैं जो अन्यकार तम करके आवृत हैं, उन्हीं लोकों को वे साधारण अविद्वान अज्ञानी मरकर प्राप्त होते हैं।। ११।।

मन्त्रः १२

श्रात्मानं चेद्विजानीयादयमस्मीति पुरुषः । किमिच्छन्कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत ॥

पदच्छेदः।

आत्मानम्, चेत्, विजानीयात्, अयम्, आस्म, इति, पृरुषः, किम्, इच्छन्, कस्य, कामाय, शरीरम्, अनुसंज्वरेत् ॥

अन्वयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

श्चयम्=यह श्रेष्ठ पूरुषः=यात्मा श्रहम्=में

श्चास्मि=हूं इति=इस प्र

श्चात्मानम्=उस श्रात्मा को चेत्=श्रगर

इति=इस प्रकार गा=गा=उस शासा

+ कश्चित्=कोई

विजानीयात्=जान केवे तो

किम्=क्या

इच्छन्=इच्छा करता हुमा

च=श्रीर

कस्य=िकस पदार्थ की कामाय=कामना के लिये

शरीरम्=शरीर के पांचे श्रनुसंज्वरेत्=दुःखित होगा

भावार्थ ।

याज्ञवल्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! सब पुरुषों को यह ज्ञात है कि में हूं पर अपने रूप का यथार्थ ज्ञान उनको नहीं है, यि अपने स्वरूप का यथार्थ ज्ञान हो कि में ही प्रद्वाहूं, तब वह ब्रह्मवित् पुरुप किस पदार्थ की कामना के लिये शरीर के पीछे दुःखित होगा यानी जब उसने अपने को ब्रद्धा समस्त लिया है और उनकी सब कामनायें दग्ध होगई हैं तो फिर किस कामना के लिये शरीर को धारण करेगा क्योंकि इच्छा की पूर्ति के लिये ही शरीर धारण किया जाता है ॥ १२॥

मन्त्रः १३

यस्यानुवित्तः प्रतिबुद्धः श्रात्मास्मिन्संदेश्चे गहने प्रविष्टः । स विश्वकृत्स हि सर्वस्य कर्ता तस्य लोकः स उ लोक एव ॥

पद्च्छेदः ।

यस्य, श्रातुवित्तः, प्रतिबुद्धः, श्रातमा, श्रास्मिन्, संदेह्धे, गहने, प्रविष्टः, सः, विश्वकृत्, सः, हि, सर्वस्य, कर्त्ता, तस्य, लोकः, सः, उ, लोकः, एव ॥

श्चान्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यस्य=जिसका श्चात्मा=जीवात्मा श्रस्मिन्=इसी संदेह्ये=संदिग्ध

शहने=कठिन शरीर में प्रविष्टः=श्रन्तर्गत होता हन्ना श्चनवित्तः=श्रवश मननादि करके ज्ञानी है च≃धौर प्रतिबुद्धः=विचारवान् है स्नः=वही विश्वकृत्=सब कार्य का करने

वाला है

सः=वही सर्वस्य=प्रबंका कर्ता=कर्ता है मस्य≃उसीका लोक:=यह लोक है उ≕श्रोग सः एच=वही लोकः=जोकरूप है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! जिसका जीवात्मा इसी कठिन शरीर में अन्तर्गत होता हुआ अवगा मनन निदिध्यासन के द्वारा विचारवान् हुआ है वही सत्र कार्यों का करनेवाला है और वहीं सबका कर्त्ता है उसी का यह लोक है आरे वही लोकस्वरूप भी है जो कुछ दृश्यमान है सब उसी का रूप है।। १३।।

मन्त्रः १४

इहैंव सन्तोऽथ विद्यस्तद्वयं न चेदवेदिर्महती विनिष्टः । ये तदि-दुरमृतास्ते भवन्त्यथेतरे दुःखमेवापियन्ति ॥

पटच्छेटः ।

इह, एव, सन्तः, अथ, विघ्नः, तत्, वयम्, न, चेत्, अवेदिः, महती, विनष्टि:, ये, तत्, विदुः, अमृताः, ते, भवन्ति, अप्थ, इतरे, दुःखम्, एव, अपियन्ति ॥ पदार्थाः

श्चरदयः

श्रस्वयः पदार्थाः + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य महाराज + बदित=कहते हैं + यदि=धगर इह=इसी पव=शरीर में वयम्=हम लोग

सन्तः=रहते हुये तत्=उस ब्रह्म को विद्याः=जानलेवें श्रथ=तो सत्यम्=द्वीक है चेत्≃भगर

तत्≕उस ब्रह्म को घयम्≔इम लोग विद्यः≠ज्ञानें श्रथ=तो अवेदिः=इम लोग धज्ञानी रहेंगे

+ तदा=तब श्रा€मन्≔इसमें

महती=बदी विनिधः=हानि होगी

ये अभी खोग तत्=उस बद्ध को विदुः=जानते हैं

त्रमृताः } भवन्ति }=ममर होजाते हैं

अथ न्योर

इतरे=उनसे पृथक् प्रज्ञानी

दुःलम्=दुःल को

एव=ही

अपियन्ति=शास होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! अगर इसी शरीर में रहते हुये हम लोग उस ब्रह्म को जानलेवें तो बहुतही श्राच्छी बात है और श्रगर उस ब्रह्म को हम लोग न जान पार्वे तो हमारी श्रज्ञानता है, श्रीर बड़ी हानि है, जो लोग उस ब्रह्म को जानते हैं वे श्रमर हो जाते हैं, श्रोर उनसे जो पृथक् श्रज्ञानी हैं वह दुःख चठाते हैं ॥ १४ ॥

मन्त्रः १५

यदैतमनुषश्यत्यात्मानं देवमञ्जसा । ईशानं भूतभव्यस्य न ततो विजुगुप्सते ॥

पदच्छेदः ।

यदा, एतम्, अनुपश्यति, आत्मानम्, देवम्, अञ्जसा, ईशानम्, भूतभव्यस्य, न, ततः, विजुगुप्सते ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः **स**न्वयः

पदार्थाः

यदा अनु=जब भाषार्थ के उप-

देश के पश्चात्

+ साधकः=साधक **श्रञ्जला**=साक्षात्

पतम्≔इस भूतभव्यस्य=तीनों काल के

ईशानम्=स्वामी **आत्मानम्=भारमा** देवम्=देव को पश्यति=देखता है ततः=तो + कस्यचित् } जीवात् }=िकसी के अभि के न=नहीं विञ्जगुल्सते=शृका करता है

मावार्थ।

हे राजा जनक ! जब साथक आचार्य के उपदेश के पश्चात् इस तीनों काल के स्वामी अपने आत्मदेव को देख लेता है यानी साक्षात् कर लेता है तब वह किसी जीव से घृगा नहीं करता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

यस्मादर्वाक्संवत्सरोऽहोभिः परिवर्त्तते । तद्देवा ज्योतिषां ज्योति-राष्ट्रदेंपासतेऽमृतम् ॥

पदच्छेदः ।

यस्मात्, अर्वाक्, संवत्सरः, अहोभिः, परिवर्त्तते, तत्, देवाः, ज्योतिषाम्, ज्योतिः, आयुः, ह, उपासते, अमृतम् ॥

श्चन्यः पदार्थाः यस्मात्=जिस मास्मा के अर्वाक्=पीष्ठे बाहोभिः≔दिन रात से संयुक्त संवत्सरः=संवत्सर परिवत्तीते=जिरा करता दें + यः≕जो

ज्योतिषाम्=ज्योतियां का

श्रान्वयः पदार्थाः ज्योतिः=ज्योति है श्रामृतम्=मरणधर्म रहित है श्रामुः=मार्थामात्र को श्रामु का देनेवाबा है तत्र्हति=डस ऐसे ब्रह्मकी देवाः=विद्वान् उपासते=डपासना करते हैं

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! जिस झात्मा के पीछे पीछे दिन रात संयुक्त संवत्सर फिरा करता है, झौर जो ज्योतियों का ज्योति है, झौर मरण धर्मरहित है झौर जो प्राणीमात्र को झायु देनेवाका है, उसी ऐसे ब्रह्म की उपासना विद्वान लोग करते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

यस्मिन्पश्च पश्चजना आकाशश्च प्रतिष्ठितः । तमेव मन्य आत्मानं विदान्बद्यासृतोऽसृतम् ॥

पदच्छेदः ।

यस्मिन्, पञ्च, पञ्चजनाः, आकाशः, च, प्रतिष्ठितः, तम्, एव, मन्ये. आत्मानम्, विद्वान्, ब्रह्म, अमृतः, श्रमृतम् ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः झन्वयः

पदार्थाः

+ जनक=हे जनक ! यस्मिन्=जिस बहा में पञ्च=पांच प्रकार के

मनुष्य यानी गन्धर्व, पनुष्य याना गान्यत्, अल-पर्णः पितत, देव, भसुर, आतमानम्=अपना आत्मा और राक्षस, अथवा मन्ये=मानता हूं में बाह्यय, क्षत्रिय, + च=और वैरय, शृद्द और निषाद, भथवा + अतः=इसी ज्ञान से अयेत, प्राय, चक्षु, + अहम्=में ओत, और मन विद्वान्=विद्वान्

च=भीर आकाशः=धाकाश

प्रतिष्ठितः=स्थित हैं तम् एव=उसी श्रमृतम्=श्रमृतरूप ब्रह्म=ब्रह्मको

विद्वान्=विद्वान्

त्रमृतः=भमर + आसम्≈भया हूं

भावार्थ ।

हेराजा जनक! जिस में पांच प्रकार के प्रास्ती यानी मनुष्य, गन्धर्व, श्रापुर, देव, राक्षस, श्राथवा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, श्रीर निषाद, अथवा ज्योति, प्रासा, चक्षु, श्रोत्र श्रीर मन श्रीर आकाश र् स्थित हैं, उसी श्रमृतरूप ब्रह्म को में श्रपना श्रात्मा मानता हं, भीर में उसी ज्ञान से विद्वान हो कर अमर भया हूं।। १७॥

मन्त्रः १८

प्राग्यस्य प्राग्यमुत चक्षुपश्चक्षुरुत श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो ये मनो बिदुः । ते निचिक्युर्बस पुरायमप्रचम् ॥

पदच्छेदः ।

प्राग्गस्य, प्राग्गम्, उत, चक्षुपः, चक्षुः, उत, स्रोत्रस्य, स्रोत्रम्, मनसः, ये, मनः, विदुः, ते, निचिक्युः, ब्रह्म, पुराशाम्, अपयम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः । श्रम्वयः श्चन्धयः

ये=जो लोग विदः=जानते हैं कि सः≔वह जीवास्मा

प्राग्रह्य=प्राय का प्राणम्=प्राण है चक्ष्रयः≔नेत्र का चक्षः=नेत्र है उत=श्रीर

श्रोत्रस्य=श्रोत्र का

श्रोत्रम्=श्रोत्र है उत=धीर

मनसः=मन का मनः=मनम करनेवाबा है

ते=वे पुराग्रम्=सनातन श्रग्रयम्=सब के बादि ब्रह्म=ब्रह्म को निचिक्यः=निरचय कर चुके हैं

भावार्थ ।

जो जानते हैं कि यह अपना जीवात्मा प्राग्त का प्राग्त है, नेत्र कानेत्र हैं, अभीर श्रोत्र का श्रोत्र हैं, अभीर मन का मनन करनेवाला है, वेही सनातन सब के आदि ब्रह्मको निश्चय कर चुके हैं ॥ १⊏ ॥

मन्त्रः १६

मनसैवानु द्रष्टुच्यं नेह नानास्ति किंचन । मृत्योः स मृत्युगा-मोति य इह नानेव पश्यति ॥

पवच्छेदः ।

मनसा, एव, ऋतु, द्रष्टत्र्यम्, न, इह, नाना, अस्ति, किंचन, मृत्योः, सः, मृत्युम् , आप्नोति, यः, इह, नाना, इव, पश्यति ।। पदार्थाः ं श्रन्वयः पदार्थाः ग्रन्वयः

इह=इस संसार में मनसा एव=एकाम शुद्ध मन करके ही

श्चनु≔गुरूपदेश के पीछे

+ सः=वह भारमा

द्रष्टव्यम्=देखने योग्य है + यस्मिन्=उस भारमा ब्रह्म में क्रियन=क्ष मा नाना=धनेकत्व

नास्ति=नहीं है

यः≔जो पुरुष इह≔इस संसार में न≀ना इव≔पुरुख को होड़ कर सनेकस्व को

पश्यति=देखता है

सः≔द्द मृत्योः=ऋत्यु से मृत्युम्=मृत्यु को श्राप्नोति=मास होता है

भावार्थ ।

वह आत्मा ब्रह्म है जनक ! गुरू के उपदेश के पीछे एकाप्र शुद्ध मन करकेही जानने योग्य होता है, उस ब्रह्म में कुछ भी अनेकत्व नहीं है. जो पुरुष इस संसार में एकत्व को छोड़कर अनेकत्व को देखता है वह मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

प्कपैवातु द्रष्टव्यमेतद्यमयं ध्रुवम् । विरजः पर श्राकाशादज श्रात्मा महान्ध्रवः ॥

पदच्छेदः ।

एकधा, एव, अनु, द्रष्टव्यम्, एतत्, अप्रमयम्, ध्रुवम्, विरज्ञः, परः, आकाशात्, अजः, आत्मा, महान्, ध्रुवः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पदाया पतत्=यह जीवात्मा श्रप्रमयम्=त्रप्रमेय है ध्रुवम्=निश्चल है विरजः=रजोगुण रहित है श्राकाशात्=त्र्राकाश से मी प्रः=परे है, यानी बति

एव=निस्सन्देह एक प्रकार से यानी अनु एकधा= शिव्यासन करके

+ इति=ऐसा

सूक्ष्म है श्राजः=श्रजम्मा है श्राहम(=व्यापक है

(निद्ध्यासन कर द्रष्ट्व्यम्=देखने योग्य है

महान्=सब से बड़ा है

ध्रवः=श्रविनाशी है

भाषाथे।

हे जनक ! यह जीवात्मा अप्रमेय है, अप्रवक्त है, गुर्गो से रहित है, आप्रकाश से भी परे हैं, यानी अप्रतिस्ट्रम है, अप्रजन्मा है, ब्यापक है, सबसे बड़ा है, ऋविनाशी है, सोई निश्चय करके श्रवण, मनन, निदिध्यासन द्वारा देखने योग्य है ॥ २० ॥

मन्त्रः २१

तमेव धीरो विज्ञाय मज्ञां कुर्भित ब्राह्मणः। नातुध्यायाद्वहूड्च्य-•दान्वाचो विग्लापनछं हि तदिति ॥

पदच्छेदः ।

तम्, एव, थीरः, विज्ञाय, प्रज्ञाम्, कुर्वति, त्राह्मग्यः, न, स्रानुध्या-यात्, बहून्, शब्दान्, वाचः, विज्ञापनम्, हि, तत्, इति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

धीरः=बृद्धिमान् ब्राह्मण्ः=ब्रह्मजिज्ञासु तम् एव=उसही श्रात्मा को विज्ञाय=जानक त्रानुध्यायात्=चिन्तन करे हि=क्योंकि तत्=शब्दोचारण वाचः=वाणी का

विज्ञाय=जानकर
प्रज्ञाम्=श्रपनी बुद्धि को
कुर्वीत्=मोक्षसंपादिका बनावे
बहुन्=बहुत
शब्दान्=प्रन्थों को

कुर्चीत्=मोक्षसंपादिका बनावे विग्लापनम्= है यानी अम का बहुन्=बहुत

(।न्≔प्र÷थों को न≕न इति=ऐसा + श्राहुः=जोग कहते हैं

भावाथे ।

हे जनक ! विद्वान् ब्रह्म जिल्लासु उसी आरमा को जानकर आपनी बुद्धि को मोक्षसंपादिका बनावे, और बहुत प्रन्थों को न चिन्तन करे, क्योंकि वह यानी शब्दों का उचारण वाणी को निष्कल श्रम देनेवाला है अथवा अस में डालनेवाला है ॥ २१॥

मन्त्रः २२

स वा एष महानज श्रात्मा योऽयं विज्ञानमयः माणेषु य एषोऽन्तर्हृदय श्राकाशस्तिस्म्इन्द्रेते सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्व-स्याधिपतिः स न साधुना कर्मणा भूयान्नो एवासाधुना कनीयानेष सर्वेश्वर एष भूताधिपतिरेष भूतपाल एष सेतुर्वियरण एषां लोका- नामसंभेदाय तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यक्नेन दानेन तपसाऽनाशकेनैतमेव विदित्वा मुनिर्भवति । एतमेव प्रवानिनो लोकभिच्छन्तः प्रव्रजनित । एतद्ध स्म वै तत्पूर्वे विद्वाध्यसः प्रजां न कामयन्ते किं प्रजया करिष्यामो येषां नोऽयमात्माऽयं लोक इति ते ह स्म पुत्रेपणायाश्च वित्तेषणायाश्च लोकेषणा-याश्च च्युत्थायाथ भिक्षाच्यं चरन्ति या क्षेत्र पुत्रेपणा सा वित्तेषणा या वित्तेषणा सा लोकेषणोभे ह्येते एषणे एव भवतः । स एष नेतिनेत्यात्माऽमृद्यो न हि मृह्यतेऽशीर्यो न हि शीर्यतेऽसङ्गो न हि सज्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यत्येतमु हैवेते न तरत इत्यतः पापमकरवमित्यतः कल्याणमकरवमित्युभे च हैवेष एते तरित नैनं कृताकृते तपतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, महान्, अजः, आत्मा, यः, अयम्, विज्ञानमयः, प्राणेषु, यः, एषः, अन्तर्हदंगे, आकाशः, तिस्मन्, शेते, सर्वस्य, वशी, सर्वस्य, ईशानः, सर्वस्य, अधिपतिः, सः, न, साधुना, कर्मणा, भूयान्, नो, एव, असाधुना, कनीयान्, एपः, सर्वेश्वरः, एपः, भूताधिपतिः, एपः, भूतपाजः, एषः, सेतुः, विधरणः, एपाम्, जोकानाम्, असंभेदाय, तम्, एतम्, वेदानुवचनेन, श्राक्षणाः, विविदिषन्ति, यक्षेन, दानेन, तपता, अनाशकेन, एतम्, एव, विदित्वा, मुनिः, भवति, एतम्, एव, प्रज्ञाजिनः, जोकम्, इन्छन्तः, प्रज्ञजन्ति, एतत्, ह, स्म, वे, तत्, पूर्वे, विद्वासः, प्रजाम्, न, कामयन्ते, किम्, प्रज्ञया, करिष्यामः, येषाम्, नः, अयम्, आत्मा, अयम्, जोकः, इति, ते, ह, स्म, पुत्रेषणायाः, च, वित्तेषणायाः, च, वोक्षेषणायाः, च, व्युत्थाय, अथ्य, भिक्षाचर्यम्, चरन्ति, या, हि, एव, पुत्रेषणाः, सा, वित्तेषणा, या, वित्तेषणा, सा, कोकेषणाः, उसे, हि, एते, एपणे, एव, भवतः, सः, एषः, न, इति, न, इति, आत्मा, अग्रसः, म्रगुः, न, हि, ग्रास्ते, अशीर्यः, न, हि, शीर्यते,

आसङ्गः, न, हि, सज्यते, आस्ततः, न, व्यथते, न, रिच्यति, एतम्, उ, ह, एव, एते, न, तरतः, इति, अतः, पापम्, अकरवम्, इति, अतः, कल्याग्यम्, अकरवम्, इति, उभे, उ, ह, एव, एषः, एते, तरित, न, एनम्, कृताक्रुते, तपतः ॥

पदार्थाः श्चन्वयः सः वै≔वही वषः=यष्ट आत्मा=जीवात्मा महान्=श्रति बदा है श्चजः=श्रजन्मा है यः=जो श्रयम्=यह भारमा प्रारोषु=चक्ष्रादिक इन्द्रियों में से विज्ञानमयः=चैतन्यरूप स्थित है च=भौर य:=जो एषः≕यह श्चन्तर्हृद्ये=हृद्य के भीतर आकाशः=बाकश है तस्मिन्=उसमें शेतं=शयन करता है + सः=वही सर्वस्य=सबको वशी=अपने वश में रखने हास है + सः≔वर्हा सर्वस्य≔सबका ईशानः=शासन करनेवाला है + सः=वही सर्वस्य=सनका

श्चन्वयः पदार्थाः श्चिपतिः=चिषपति है सः≔वह साधुना=श्रद्धे कर्मणा=कर्म करके न=न भूयान्=पृज्य भवति=होता है च=धौर नो≔न श्रसाधुना=बुरे कर्मणा=कर्म करके कनीयान्=श्रपुज्य + भवति=होता है + सः=वही एषः=यह आत्मा सर्वेश्वरः=सबका ईश्वर है + सः=वही एषः=यह श्रात्मा भृताधिपतिः=सबका मालिक है + सः≔वही एषः=यह भ्रात्मा भूतपालः=सबका पालक है + सः≔वही एषः=यह ऋत्मा सबका पार खगानवाला

सेतः=सेतु है

+ सः≔वही एषाम्=इन लोकानाम्=भूभुवलोंकों की असंभेदाय=स्था के बिये विधर्णः=उनका धारण करने वाला है तम्=डसी एतम्=इस भारमा को ब्राह्मणाः=ब्राह्मण क्षत्रिय बैश्य वेदानुवचनेन=वेदाध्ययन करके यक्षेन=यज्ञ करके दानेन=दान करके तपसा=तप करके श्रनाशकेन=धनशन वत करके विविदिषन्ति=जानने की इच्छा करते हैं च=भौर एतम्=इसी को एच=निस्संदेह विदित्वा=जानकर पुरुषः=पुरुष मुनिः≕मुनि भवति=होता है + स्वम्=धभीष्ट लोकम्=लोक की यानी ब्रह्म-लोक की इच्छन्तः=इच्छा करते हुये प्रवाजिनः=संन्यासी कोग पतम् पव=इसी श्रात्मा का + उद्दिश्य=उपदेश पा करके तत्=उसी प्रवस्था में

एतत्र्≔यही तत्=वह ह स्म वै≕िनश्चय करके + कारणम्=कारण है यानी इसी संन्यस्त धर्मके लियेडी पूर्वे=पूर्वकाल के विद्वांसः=विद्वान प्रजाम्=संतान की न=नहीं कामयन्ते =कामना करते थे प्तम्बि-) = इस प्रकार विचार चारधन्तः) करते हुये कि प्रजया=संतान करके किम्=क्या करिष्यामः=इम करेंगे येषाम्≕िन नः≔हम लोगों का सहायकः=सहायक श्रयम्≔यह आत्मा=धारमा है च=श्रीर इति=इसी कारण ते=वे संन्यासी ह स्म=निश्चय करके पुत्रेषणायाः=पुत्र की इच्छा से वित्तेषणायाः } = दृब्य की इच्छा से लोकेषणायाः } = लोकों की इच्छा से ब्युत्थाय=विरक्त होकर **भिक्षाचर्यम्**=भिक्षानिमित्त प्रवजान्त=सर्व को स्थाग देते हैं चरन्ति=फिरते हैं

या≃जो पुत्रेषसा=पुत्र की कामना है स्या≔वधी हि एच=निस्सन्देह चित्तेषणा=धन की कामना है सा⊐वही स्त्रोकेषणा≔जोक की कामना है प्रते=ये हि=ही उभे=दो प्यतो=इच्छार्थे **प्**व=िम्सन्देह भवतः=होती हैं सः=वही प्रसिद्ध एषः≔वह श्चातमा=श्रात्मा नेति=नेति नेति=नेति इति=शब्द करके भगृह्यः=अप्राह्य है हि=च्योंकि सः≃वड न=नहीं गृह्यते=प्रहण किया जा सका स्यः=वह श्राशीर्थः=श्रहिसनीय है हि=क्योंकि + सः=वह न=नहीं शीर्यते≔मारा जा सका है श्रास्त्रझः=वह असङ्ग है

हि=क्वोंकि स्तः न≕वड नहीं सज्यते=किसी में भासक है द्यासितः=वह बम्धनरहित है हि=क्योंकि स्रः न=षद् नहीं ब्यथते=पीदित होता है स=धार त=न + सः=वह रिष्यति=इत होता है उ≕धौर पापम्=पाप श्रकरचम्≕मेंने किया था श्रतः≔इस लिये दुःल भोगुंगा कल्याग्रम्=पुरव मैंने किया था ग्रतः=इसंबिये सुख भोगूंगा इति=ऐसे पते≕थे उभे=दोनों इच्छार्थे एतम्=इस भारमा को न एच=नहीं तरतः ह=बगती हैं एषः उ ह=यह भारमा प्रव=भवश्य तरति=इन दोनों इच्छाओं को पार कर जाता है एनम्=इस बहावित को कताकते=श्ताकृत कर्म न≃न€ॉ तपतः≕सताते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, जो आतमा चक्षुरादि इन्द्रियों में चैतन्यरूप से स्थित है और जो हृदय के आकाश विषे शयन किये है वही अति वडा है, अजन्मा है, सबको अपने वशमें रखनेवाला है, वही सबका शासन करनेवाला है, वही सबका आधिपति है, वही न अन्छे करके पुज्य होता है, न द्युरे कर्म करके ऋपुज्य होता है, वही सवका ईरवर है, वहीं सब भतों का मालिक है, वहीं सबका पालक है, वहीं यह आतमा सबका पार लगानेवाला सेत है, वही लोकों की रक्षा के लिये उनका धारणा करनेवाला है उसी आत्मा की ब्राह्मणा. क्षत्रिय. वैश्य वेदाध्ययन करके, यज्ञ करके, दान करके, तप करके, अनशन वृत करके जानने की इन्छ। करते हैं स्त्रीर जो उसको जान जाता है वह मुनि कहलाता है, वही ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है, संन्यासी लोग इसी आत्मा के उपदेश को पाकर सबका त्याग कर देते हैं श्रीर इसी संन्यस्त धर्म के लियेही पूर्वकाल के विद्वान लोग संतान की इच्छा नहीं करते थे यह कहते हये कि हम संतान लेकर क्या करेंगे, जब हम लोगों का सहायक अपनाही आतमा है और यही कारणा था कि वे लोग पुत्र की इच्छा नहीं करते थे. द्रव्य की इच्छा से, पुत्र की इच्छा से. लोकों की इच्छा से विरक्त होकर केवल भिक्षानिमित्त विचरा करते थे. हे राजा जनक ! जो पुत्र की कामना है वही धन की कामना है, वहीं लोक की कामना है इन तीनों कामनाओं से यह आत्मा प्रथक है, नेति नेति शब्द करके श्रमाह्य है क्योंकि यह प्रह्मा नहीं किया जा सका है, यह ऋदिंसनीय है क्योंकि मारा नहीं जा सक्ता है, यह श्रमङ है क्योंकि यह किसी वस्तु में आसक्त नहीं है, यह बन्धनरहित है क्योंकि वह पीडित नहीं होता है, न हत होता है, यह वृत्ति कि मैंने पाप किया था इस लिये मैं दुःख भोगूंगा, मैंने पुराय किया था मैं सुख भोगूंगा इस आत्मा को नहीं लगती है. यह आत्मा अवस्य इन

दोनों इच्छाओं को पार कर जाता है और ब्रह्मवित् पुरुष को क्रताकृत कर्म नहीं सताता है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

तदेतदृचाभ्युक्तम् । एष नित्यो महिमा ब्राह्मणस्यं न वर्धते कर्मणा नो कनीयान् । तस्यैव स्यात्पद्वित्तं विदित्वा न लिप्यते कर्मणा पापकेनेति । तस्यादेवंविच्छान्तो दान्त उपरतस्तितिशुः समाहितो भूत्वात्मन्येवात्मानं पश्यित सर्वमात्मानं पश्यित नैनं पाप्मा तरित सर्वे पाप्मानं तरित नैनं पाप्मा तपित सर्वे पाप्मानं तपित विपापो विरजोऽविचिकित्सो ब्राह्मणो भवत्येष ब्रह्मलोकः सम्राडेनं प्रापितोऽसीति होवाच याज्ञवल्क्यः सोऽहं भगवते विदे-

पदच्छेदः ।

तत्, एतत्, भृचा, अभ्युक्तम्, एपः, नित्यः, महिमा, ब्राह्मग्तस्य, न, वर्धते, कर्मग्रा, नो, कनीयान्, तस्य, एव, स्यात्, पद्वित्, तम्, विदित्वा, न, जिप्यते, कर्मग्रा, पापकेन, इति, तस्मात्, एवंवित्, शान्तः, दान्तः, उपग्तः, तितिश्चः, समाहितः, भूत्वा, आदमिन, एव, आत्मानम्, पश्यति, सर्वम्, आत्मानम्, पश्यति, सर्वम्, पाप्मा, तपति, सर्वम्, पाप्मानम्, तपति, विपापः, विरजः, अविचिकित्सः, आह्मग्रः, भवति, एवः, ब्रह्मजोकः, सम्नाद्, एनम्, प्रापितः, अस्ति, इति, ह, उवाच, याज्ञवक्त्यः, सः, आह्म्, भगवते, विदेहान्, ददामि, मां, च, आपि, सह, दास्याय, इति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=वही एतत्=यह संन्यस्त धर्म ऋचा=मन्त्र करके भी अभ्युक्तम्=कहा गया है ब्राह्मग्रस्य=ब्रह्मवित् पुरुष की
प्षः=यह
नित्यः=स्वाभाविक
महिमा=महिमा दे

न≕न + सः≔वह कर्मग्रा=कर्म करके वर्धते=बदता है स=धीर स=ग कनीयान्=द्योटा + भवति=होता है + यदा=जब तस्य एव=उस ब्रह्म के महक्व का सः=वह पद्वित्=श्राता स्यात्=होता है तदा=तब तम्=उस महिमा को विदित्वा=जान कर पापकेन=पाप कर्मणा=कर्म करके स=नहीं लिप्यते=बिस होता है तस्मात्=इस सिये एवंचित्=ऐसा जाननेवासा शान्तः=शान्त दान्तः=दान्त **उप**रतः=उपरत तितिश्चः=तितिश्च समाहितः=सावधान प्वंवित्=समाहित चित्त भूत्वा=होकर आत्मनि एव=भपनेही में आत्मानम्=परमात्मा को पश्यति=देखता है

+ च=बौर यदा=जब सर्घम्=सब जगत् को श्रातमानम्=श्रातमरूपही पश्यति=रेखता है तदा≕तब एनम्=इस ज्ञानी को पाप्मा=पाप न≔नहीं प्राप्नोति=बगता है + किन्तु=किन्तु + सः=वह ज्ञानी सर्घम्=सब पाप्मानम्=पाप को तरति=तरता जाता है एनम्=इस ज्ञानी को पादमा=पाप न=नहीं तपति=तपाता है + किन्तु=किन्तु + सः≔वह ज्ञानी सर्वम्≈सब पाप्मानम्=पाप को तपति=नष्ट कर देता है ब्राह्मग् :=ब्रावित् विपापः=पापरहित विरजः=धर्माधर्म रहित अविचिकित्सः=निस्सन्देह भवति=होता है सम्राट्=हे जनक ! एष:=यही ब्रह्मलोकः=ब्रह्मलोक है

धनम्=इसी लोक को
+ त्वम्=झाप
प्रापितः=पहुँ बाये गये
झार्स=हँ
यदा=जब
इति=इस तरह
याझवल्क्यः=याझवल्क्य ने
उवाच ह=कहा तब
+ जनकः=जनक

+ त्राह=बोले
सः=वही बोधित
ग्रहम्=मैं
भगवते=भाषके लिये
विदेहान्=विदेह देशों को
सह=साथही
माम् च श्रापि=साथ भपने भाषको भी
दास्याय=सेवा के लिये
ददामि=देता हुं

भावार्थ।

हे राजा जनक ! जिस संन्यासी का जैसा वर्णन हो चुका है उसी को मन्त्र भी कहता है, हे राजन् ! ब्रह्मिवत् पुरुष की पूर्वेक्त महिमा स्वाभाविक है वह महिमा कर्म से न बढ़ती है न अल्प होती है, वह ब्रह्मिता पापकर्म से लिप्त नहीं होता है, वह शान्त, दान्त, उपरत, तितिश्च और समाहित चित्त होकर अपनेही में अपने आत्मा को देखता है और जब सब जगत् को अपनाही आत्मारूप देखता है तब वह ज्ञानी सब पापको पार कर जाता है उस ज्ञानी को पाप नहीं तपाता है किन्तु वह ज्ञानी सब पाप को नष्ट कर देता है, वह ब्रह्मिवत् पुरुष पापरहित, धर्मरहित होजाता है. हे जनक! यही ब्रह्मिकों के है, इसी लोक को आप पहुँचाये गये हैं, ऐसा सुनकर जनक महाराज बोले कि, हे प्रभो ! मैं आप के लिये कुल विदेह देशों को और साथही साथ अपने को भी सेवा के लिये अर्पण करता हूं।। २३।।

मन्त्रः २४

स वा एष महानज त्र्यात्मात्रादो वसुदानो विन्दते वसु य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, महान्, श्चनः, श्चात्मा, श्चन्नादः, वसुदानः, विन्दते, बसु, यः, एवम्, वेद ॥ भ्रम्बयः पदाध

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः≔वही

एषः=यह भारमा महान्=सर्वेश्वष्ट

झजः=प्रजन्मा झञ्जादः=प्रजमोक्रा

श्रद्धादः=भक्षभोक्षा बसुदानः=कर्मफक्ष दाता है प्त्यम्=इस प्रकार
यः=जो
वेद=जानता है
+ सः=चह ज्ञानी
वस्य=धन को

विन्दते=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हेराजा जनक ! यह आस्मा सर्वोत्क्रष्ट, अवजन्मा, अन्नभोक्ता, कर्मफल का दाता है जो इस प्रकार आप्तमा को जानता है वह अप्रेनक प्रकार के धनको प्राप्त होता है ॥ २४ ॥

मन्त्रः २५

स वा एप महानज आत्माजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्माभयं वै ब्रह्माभयं है वै ब्रह्म भवति य एवं वेद ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४॥

सः, वा, एषः, महान्, अजः, आस्मा, अजरः, अमरः, अम्रतः, अस्तः, अभयः, ब्रह्म, अभयम्, वै, ब्रह्म, अभयम्, हि, वे, ब्रह्म, भवति, यः, एवम्, वेद ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः श्रम्वयः

पदार्थाः

सः वै≔वही एषः≕यह श्रभयम् ब्रह्म वै=यही श्रभय ब्रह्म है श्रभयम् ब्रह्म हि=यही श्रभय ब्रह्म है

आत्मा=बात्मा महान्=बदा है

एवम्=इस प्रकार

श्रमरः=श्रमर है

यः=जो वेद=जानता है

श्चाजः=धजनमा है श्वाजरः=जरारहित है

सः≔वह

श्रमृतः=मरणधर्मरहित है

ब्रह्म=ब्रह्मस्वरूप भवति=होता है

श्रभयः=भयराहत है

भवात=हाता ह

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! यह आस्मा सब से बड़ा है, अमर है, अजन्मा

है, जरारहित है, मरगाधर्मरहित है, यही झभय है, यही झभय हहा है, जो पुरुष इस प्रकार जानता है वह ब्रह्मस्वरूप होता है ॥ २४ ॥ इति चतुर्थे ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥

त्रथ पञ्चमं ब्राह्मगम्।

मन्त्रः १

श्रय इ याज्ञवल्क्यस्य दे भार्ये बभूवतुर्भेत्रेयी च कात्यायनी च तयोई मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव स्त्रीमज्ञैव तर्हि कात्यायन्यथ ह याज्ञवल्क्योऽन्यदृष्टत्तमुपाकरिष्यन् ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, याज्ञवस्वयस्य, द्वे, भार्ये, बभू तुः, मैत्रेयी, च, कात्यायनी, च, तयो:, ह, मैत्रेयी, ब्रह्मवादिनी, वभूव, स्त्रीप्रज्ञा, एव, तर्हि, कात्या-यनी, श्रथ, ह, याज्ञवल्क्यः, श्रन्यत्, युत्तम्, उपाकरिष्यन् ॥ ्र वदार्थाः अन्वयः के पदार्थाः श्चन्वयः

ह=निश्चय करके याञ्चयत्क्यस्य=याज्ञवल्क्य के

द्वे=दो भार्ये=िबर

बभूवतुः=धीं तयोः=डनमें से भैत्रेयी=एक मैत्रेयी

च=धौर

मैत्रेयी=मैत्रेयी

ब्रह्मवादिनी:=ब्रह्मवादिनी

कात्यायनी=श्रीर कात्यायनी

स्त्रीप्रज्ञा=स्त्रीप्रज्ञा यानी गृहस्य धर्मिग्री

बभूव=थी त्रथ ह=भीर जब

याञ्चवत्ययः=याज्ञवस्य श्रम्यत्≔दूसरे

वृत्तम्=श्रश्यम यानी संन्यास को

कात्यायनी=दूसरी कात्यायनी उपाकरिष्यन्=धारण करने की इच्छावाले

+ श्रासीत्=हुये

भावार्थ ।

क्षीग कहते हैं कि, याज्ञवहक्य महाराज के दो स्त्रियां थीं, उनमें से एक मैत्रेयी थी, दूसरी कात्यायनी थी, मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थी, झौर कात्यायनी स्त्रीप्रज्ञा यानी गृहस्थधर्मिग्गी थी, जब याज्ञवल्क्य महाराज ने गृहस्थाश्रम को त्याग कर संन्यास लेने का विचार किया ॥ १ ॥

मन्त्रः २

मैत्रेयीति होवाच याज्ञवस्वयः प्रव्रजिष्यन्वा श्ररेऽहमस्मत्स्थाना-द्रस्मि इन्त तेऽनया कात्यायन्यान्तं करवागाति ॥

परुच्छेदः।

मैत्रेयि, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, प्रविज्ञष्यन्, वा, श्रारे, श्रहम्, श्चास्मात्, स्थानात्, श्चास्मि, हन्त, ते, अनया, कात्यायन्या, श्चन्तम्, करवाशि . इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

ह=तब मैत्रेयि=हे मैत्रेयि ! इति=ऐसा

+ स्वर्रबाध्य=सम्बोधन करके याज्ञवत्कयः=याज्ञवरूवय

> उवाच=बोबे कि श्चरे=भरे मैत्रेथि !

ग्रहम=मैं श्रस्मात्=इस स्थानात्=गृहस्थाश्रम से श्चन्ययः प्रव्यज्ञिष्यन्=गमन करनेवाला

श्रस्मि=इं

ह्रन्त=यदि तुम्हारी इच्छा

की श्री

श्रनया≔हस

कात्यायन्या=कारयायनी के साथ ते=तुम्हारे

श्चन्तम=धनविभाग को करवाणि इति=प्रथक् करवृं

भावार्थ ।

तब मैत्रेयी को सम्बोधन करके कहा कि अपरे मैत्रेयि ! मैं इस गृहस्थाश्रम से गमन करनेत्राला हूं, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो इस कात्यायनी के साथ तुम्हारे धन के भाग को पृथक कर दूं।। २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच मैत्रेयी यन म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्स्यां न्वहं तेनामृताऽहो ३ नेति नेति होवाच याज्ञवलक्यो यथैवी-पकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितधः स्यादमृतत्वस्य त नाशास्ति विरोनेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैत्रेयी, यत्, तु, मे इयम्, भगोः, सर्वा, पृथिवी, वित्तेन, पृर्गा, स्यात्, स्याम्, नु, श्रहम्, तेन, श्रमृता, श्राहो, न, इति, न, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, यथा, एव, उपकरग्रावताम्, जीवि-तम्, तथा, एव, ते, जीवितम्, स्यात्, श्रमृतत्वस्य, तु, न, श्राशा, श्रमित, वित्तेन, इति ॥

धन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

ह=तव मैत्रेयी=मैत्रेयी उदाच≔बोली कि यत् नु=यदि भगोः=हे भगवन् ! इयम=यह सर्वा=सब पृथिची=पृथिवी वित्तन=धन धान्यादि करके पूर्णा=पूरित होती हुई म=मेरे ही स्यात्=होजाय तो तेन=उस करके + ग्रहम्=में कथम्=िकसी तरह श्रमृता=मुक्त स्याम्=होजाऊंगी

+ इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर

य। ज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

उत्राच=कहा कि इति=ऐसा

न=नहीं होसका है

यथा≕जैसे

उपकरणः } =धनादय का

जीवितम्=जीवन भवति=होता है तथैव=उसी प्रकार त=तुम्हारा भी

जीवितम्=जीवन स्यात्=होगा

तु=मगर श्रमृतत्वस्य=मुक्ति की

ग्राशा=ग्राशा वित्तेन=धन करके

न=नहीं

श्रास्ति=होसकी है

भावार्थ ।

यह सुनकर मैंत्रेयी बोली कि, हे भगवन् ! आप कृपा करके वतार्वे कि यदि सब पृथिवी धन धान्यादि करके पूरित होती हुई मेरेही हो जाय तो क्या उस करके मैं मुक्त हो जाऊंगी ? यह सुनकर याझवल्क्य महाराज ने कहा कि तुम धन आदिके पाने से मुक्त नहीं हो सक्ती हो, हां जैसे धनाट्यादि आपना जीवन करते हैं उसी प्रकार तुम्हारा भी जीवन होगा परन्तु मुक्ति की आशा धन करके नहीं होसक्ती है।। है।।

मन्त्रः ४

सा होवाच मैत्रेथी येनाई नामृता स्यां किमई तेन कुर्यी यदेव भगवान्वेद तदेव मे बूहाति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैंत्रेयी, येन, श्रहम्, न, श्रमृता, स्याम्, किम्, श्रहम्, तेन, कुर्याम्, यत्, एव, भगवान्, वेद, तत्, एव, मे, श्रूहि, इति ॥ श्रन्वयः पदार्थाः । श्रन्वयः पदार्थाः

श्रहम्=भैं ह⇒तब कि.म्=क्या सा=वह मैत्रेयी=मैत्रेथी कुर्याम=करूंगी उवाच=बोली कि भगवान्=श्राप यत्=जिस वस्त को येन=जिस धन से श्रहम्=भें पच=भली प्रकार वेद=जानते हैं श्रमृता=मुक तत् एव=उसही को न=नहां स्याम्=हासकी हं मे=मेरे लिये त्रहि इति=उपदेश करें तंन=उस धन को

भावार्थ ।

उस पर मेंत्रेयी बोली कि जब धन करके मुक्त नहीं होसक्ती हूंतो उस धन को में क्या करूंगी, हे प्रभो ! जिस वस्तु को आराप भली प्रकार जानते हैं उसी को मेरे लिथे उपदेश करें ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच याज्ञवल्क्यः पिया वै खलु नो भवती सती पियम-दृधद्धन्त तर्हि भवत्येसदृचाख्यास्यामि ते न्याचक्षाणस्य तु मे निदि-ध्यासस्वेति ॥

पदच्छेतः।

सः, इ, उवाच, याज्ञवल्क्यः, प्रिया, वै, खल्लु, नः, भवती, सती, प्रियम्, अवृत्वत्, हन्त, तर्हि, भवति, एतत्, ज्याख्यास्यामि, ते, ज्याचक्षागास्य, तु, मे, निदिष्यासस्य, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

ह=तब · **याञ्चवत्क्यः**=याज्ञवरूम्

> उवाच वै=बोबे कि भवती=तु

मधता≔तू **नः**≔मेरी बढ़ी

ष्रिया=प्यारी सती=होकर प्रियम्=प्रिय कोही

श्रव्धत्=चाहती है हन्त तर्हि=श्रद्धा तो भवति=हे मेत्रेयि !

ते=तुम्हारे लिये एतत्=इस मोक्ष को

व्याख्यास्यामि=में कहंगा

त्र≕लेकिन

व्याचक्षाणस्य=बयान करते हुये

भ=मेरे

निदिध्या- } _वातों के मनलब पर सस्य इति } ध्यान रक्खो

भावार्थ ।

यह सुनकर याज्ञवरक्य महाराज बोले कि, हे मैंत्रेयि ! तू पहिले भी मुम्मको अतिप्रिय थी और अब भी तू अतिष्यारी है और प्रिय वस्तु को चाहनेवाली हैं, हे मैंत्रेयि ! मैं तुम्हारे लिथे इस मोक्षमार्ग को बड़ी खुशी से कहूंगा तुम मेरे वचनों को खुत्र थ्यान देकर सुनो ॥ ४॥

मन्त्रः ६

स होवाच न वा छरे पत्युः कामाय पतिः पियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः प्रियो भवति । न वा छरे जायाये कामाय जाया प्रिया भवत्यात्मनस्तु कामाय जाया प्रिया भवत्ति । न वा छरे पुत्राग्णां कामाय पुत्राः प्रिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पुत्राः प्रिया भवन्ति । न वा छरे पिया भवन्ति । न वा छरे वित्तस्य कामाय वित्तं भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं भियं भवति । न वा छरे पश्नां कामाय पशवः प्रिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पशवः प्रिया भवन्त्य।त्मनस्तु कामाय पशवः प्रिया भवन्त्य।त्मनस्तु कामाय पशवः प्रिया भवन्त्य।त्मनस्तु कामाय पशवः प्रिया भवन्ति । न वा छरे

ब्रह्मणः कामाय ब्रह्म भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय ब्रह्म भियं भवति । न वा अरे क्षत्रस्य कामाय क्षत्रं भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय क्षत्रं भियं भवति । न वा अरे लोकानां कामाय लोकाः भिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय लोकाः भिया भवन्ति । न वा अरे देवानां कामाय देवाः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय देवाः पिया भवन्ति । न वा अरे देवानां कामाय देवाः पिया भवन्ति । न वा अरे सूतानां कामाय भूतानि पियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि पियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि पियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि पियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि पियाणि भवन्ति । न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वे भियं भवति । आत्मा वा अरे दृष्टच्यः श्रोतच्यो मन्तच्यो निदिध्यासितच्यो मंत्रेय्यात्मनि खल्वरे दृष्टे श्रुते मते विज्ञात इद्ष्यं सर्वे विदितम् ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, न, वा, अप्रे, पत्युः, कामाय, पितः, प्रियः, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, पितः, प्रियः, भवित, न, वा, अप्रे, जायाये, कामाय, जाया, प्रिया, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, जाया, प्रिया, भवित, न, वा, अप्रे, प्रशाणाम्, कामाय, प्रशाः, प्रियाः, भविति, आत्मनः, तु, कामाय, प्रशाः, प्रयाः, भवित्त, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, न, वा, अप्रे, पश्नाम्, कामाय, पशवः, प्रियाः, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, पशवः, प्रियाः, भवित, न, वा, अप्रे, श्रात्मनः, तु, कामाय, श्रह्म, प्रियम्, भवित, न, वा, अप्रे, श्रह्मत्य, कामाय, श्रह्मम्, प्रियम्, भवित, न, वा, अप्रे, श्रह्मत्य, प्रात्मनः, तु, कामाय, श्रह्म, प्रियम्, भवित, न, वा, अप्रे, श्रह्मत्य, प्रात्मनः, तु, कामाय, कोकाः, प्रियाः, भवित्त, न, वा, अप्रे, देवानाम्, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवित्त, न, वा, अप्रे, वेदानाम्, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवित्त, न, वा, अप्रे, वेदानाम्, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवित्त, न, वा, अरे, वेदानाम्,

कामाय, वेदाः, प्रियाः, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, वेदाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वा, अरे, भूतानाम्, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, न वा, अरे, सर्वस्य, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्माः, वा, अरे, द्रष्टव्यः, अतेतव्यः, मन्तव्यः, निद्ध्यासिन्तव्यः, मैत्रेयि, आत्मनि, खलु, अरे, हंष्ट, श्रुते, मते, विज्ञाते, इदम्, सर्वम्, विद्वतम् ॥

श्चास्य :

पदार्थाः

ह=प्रसिद्ध स्तः=वह याजवलक्य उवाच=कहते भये कि ऋरे=हे भेत्रेयि ! पत्युः=पति की कामाय=कामना के लिये +भार्याम्≕भार्याको पतिः=पति प्रियः=प्यारा त≕नहीं भवति=होता है *न्*द=परन्त् श्चात्मनः=श्रपने जीवारमा की कामाय=कामना के लिये ग्रतिः≔पति + भार्याम्=भार्या को प्रिय:=प्यारा भवति=होता है झरे=हे मैत्रेयि! जायायै=पत्नी की कामाय=कामना के लिये जाया=पत्नी

पदार्थाः श्चन्द्रयः प्रिया=पीत को प्यामी त≔नहीं भवति=होती है त्=परन्तु त्रात्मनः=श्रपंत जीवात्माकी काम।य=कामना के लिये जाया=पवी प्रिया=पति को प्यारी भवति=होती है श्चरे=हे मेत्रेयि! पुत्राणाम्=लड्कों के कामाय=मतलव के लिये पुत्राः=लड्के प्रियाः≔माता पिता को प्यारे न≕नहीं भवन्ति=होते हैं तु≃परन्त् आत्मनः=श्रपने कामाय=मतलब के लिये पुत्राः=लड्के श्रियाः≔माता पिता को प्याहे भवन्ति=होते हैं

अरे=हे मैत्रेयि ! वित्तस्य=धन के कामाय=धर्थ चित्तम्=धंनी को धन प्रिय**म्**=प्यारा चे न=नहीं भवति=होता है तु=परन्तु श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा की कामाय=कामना कालिये वित्तम्=धन प्रयम्=प्यारा भवति=होता है श्रारे=हे मैत्रिय ! ब्रह्मणः=ब्राह्मण के कामाय=मतलब के लिये व्रह्म=ब्राह्मण् प्रियम्=जोगों को प्यारा वै न=नहीं भवति=हाता है तु=परन्त् श्चातमनः=धपने जीवातमा के कामाय=मतत्तव के लिये व्रह्म=ब्राह्मण् **ध्रियम्**=प्यारा भवति=होता है श्चरे=हे मैत्रेयि! क्षत्रस्य=क्षत्रिय के कामाय=मतलब के लिये क्षत्रम्=क्षीत्रय प्रियम्=लोगों को प्यारा न=नहीं

भवति=होता है तु=परन्त् श्चातमनः=श्चपने जीवातमा के कामाय=मतजब के लिये क्षत्रम्=क्षत्रिय वियम्=प्यारा भवति=हाता ह त्रारे=हे मेत्रेयि ! लोकानाम्=कांकों क कामाय=मतलब के लिये लाकाः=लोक ग्रियाः=प्यारे न चे=नहीं भवास्ति=होते हैं तु=परन्त् श्चातमनः=श्चपने जीवात्मा के कमाय=मतलब के लिये लोकाः=लोक प्रियाः=प्यारे भवान्त=होते हैं श्चरे=हे मैश्रेयि ! देवानाम्=देवताश्रों के कामाय=मतलब के लिये देवाः≔देवता प्रियाः=लोगों को प्यारे न चै⇒नहीं भवन्ति=होते हैं तु=परन्तु श्चातमनः=ग्रपने जीवातमा के कामाय≕मतलाब के लिये देवाः=देवता प्रियाः≕पारे

भवास्त=होते हैं आरे≕हे सैत्रेथि ! भूतानाम्=प्राणियों के कामाय=मतलब के लिये भूतानि=श्रीर प्राणी प्रियाशि=प्रिय त बै≔नहीं भवन्ति=होते हैं तु=परन्त् श्चात्मनः=श्रपने जीवात्मा की कामाय=कामना के लिये भृतानि=प्राणी प्रियाशि=प्यारे भवन्ति=होते हैं अरे=हे मेत्रेयि ! सर्वस्य=सब के कामाय=मतजब के जिये सर्वम्≈सब **प्रियम्**=प्यारे न वै≕नहीं भवति=होते हैं त=परन्तु

द्यात्मनः≔त्रपने जीवासा के कामाय=मतजब के जिये सर्नम्≕यब प्रियम्=प्यारे भवति=होते हैं

श्चातमा=यह श्रपना जीवासा द्रष्टव्यः=देखने योग्य है मन्तव्यः=मनन के योग्य है श्चातव्यः=युनने के योग्य है निदिश्या- } =श्यान के योग्य है सितव्यः } श्चोत्यं=हे मैत्रेयि ! श्चात्मि=जीवासा के हुए=देखे जाने पर श्रुत=युने जाने पर मत=मनन किये जाने पर विज्ञाते=जाने जाने पर द्रम्=यह सर्वम्=सारा ब्रह्माण्ड विदितम्=माज्म + भवति=होजाता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे मेंत्रेयि ! पित की कामना के लिये भार्या को पित प्यारा नहीं होता है परन्तु निज जीवात्मा की कामना के लिये पित भार्या को प्यारा होता है, हे मेंत्रेयि ! पत्नी की कामना के लिये पित को प्यारी नहीं होती है परन्तु अपने जीवात्मा की कामना के लिये पित को प्यारी नहीं होती है, हे मेंत्रेयि ! लड़कों की कामना के लिये लड़के माता पिता को प्यारे नहीं होते हैं परन्तु अपने जीवात्मा के लिये लड़के माता पिता को प्यारे होते हैं,

हे मैत्रेयि ! धनके अर्थ धनी को धन प्यारा नहीं होता है. परन्त अपने जीवात्मा की कामना के लिये धन धनी की प्यारा होता है. हे मेंत्रेयि ! बाह्यसा की कामना के लिये लोगों को ब्राह्मसा प्यारा नहीं होता है. परन्त अपने जीवात्मा की कामना के लिये ब्राह्मण लोगों को प्यारा होता है. हे मैत्रेयि ! क्षत्रिय की कामना के लिये क्षत्रिय लोगों को त्यारा नहीं होता है परन्त अपने जीवात्मा के लिये लोगों को क्षिश्चय प्याग होता है, लोकों की कामना के लिये लोक प्रिय नहीं होते हैं परन्त अपने जीवारमा के लिये लोगों को लोक प्यारे होते हैं, हे मैत्रेयि ! देवताओं की कामना के लिये लोगों को देवता प्यारे नहीं होते हैं. पान्त अपने जीवात्मा के लिये देवता लोगों को प्यारे होते हैं, हे मैत्रेयि ! प्राशायों की कामना के लिये प्राशी प्यारे नहीं होते हैं परन्त आपने जीवात्मा की कामना के लिये लोगों को प्राग्ती प्रिय होते हैं. हे मैन्नेयि ! सबकी कामना के लिये सबको सब प्यारे नहीं होते हैं परन्त अपने जीवातमा की कामना के लिये सबको सब प्यारे होते हैं, अरे हे मैत्रेयि ! यही अपना जीवात्मा देखने योग्य है, मनन करने योग्य है, श्रवसा काने योग्य है, ध्यान काने योग्य है, हे मैत्रेयि ! जीवातमा के देखे जाने पर. सने जाने पर, मनन किये जाने पर यह सारा ब्रह्मागड मालम होजाता है।। ६।।

मन्त्रः ७

ब्रह्म तं परादाचोऽन्यत्रात्मनो ब्रह्म वेद क्षत्रं तं परादाचोऽन्यत्रात्मनः क्षत्रं वेद लोकास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो लोकान्वेद देवास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो देवान्वेद वेदास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो वेदान्वेद भूतानि तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो भूतानि वेद सर्वे तं परादाचोऽन्यत्रात्मनः सर्वे वेदेदं ब्रह्मेदं क्षत्रभिमे लोका इमे देवा इमे वेदा इमानि भूतानीद्ध सर्वे यदयमात्मा।।

पदच्छेदः।

क्षक्ष, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, ब्रह्म, वेद, क्षज्ञम्, तं, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, क्षज्ञम्, वेद, लोकाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, लेद, देवाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, देवान्, वेद, वेदाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, वेदान्, वेद, भूतानि, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, सर्वम्, वेद, इदम्, ब्रह्म, क्षत्रम्, इमे, लोकाः, इमे, देवाः, इमे, वेदाः, इमानि, भूतानि, इदम्, सर्वम्, यत्, अयम्, आत्मा।।

श्चरे=हे मैन्नेयि ! ब्रह्म=बद्यस्य शक्रि तमू≔उस पुरुष को परादात्=त्याग देती है यः≕जो भारमनः=ग्रपने जीवारमा से अन्यत्र=गृथक् ब्रह्म=ब्रह्मःव को घेद⇒जानता है क्षत्रम्=क्षत्रियत्व शक्ति तम्=उस पुरुष को परादात्=स्याग देती है यः=जो **शात्मनः=ग्र**पने जीवास्मा से श्चन्यत्र**=पृथक्** क्षप्रम्=क्षियत्व को वेद्≕जानता है लोकाः=स्वर्गादिलोक तम्≕उस पुरुष को परादुः=त्याग देते हैं

यः≕जो श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा से भ्रान्यत्र=पृथक् स्रोकान्=स्वर्गादिसोकों को घेद=जानसा है देवाः=देवता तम्=डसको परादुः≕याग देते हैं य:=जो श्चाहसनः=श्चपने जीवात्मा से अन्यत्र=पृथक् देवान्=देवताओं को घेद=जानता है घेदाः=वेद तम्=उसको परादुः=स्याग देते हैं य:=जो भ्रात्मनः=श्रपने जीवारमा से श्चा**श्यत्र=**पृथक् वेदान्=वेदों को

वेद=जानता है भृतानि=प्राची तम्=उसको परादुः=त्याग देते हैं यः=जो आतमनः=अपने जीवातमा से श्चन्यत्र=पृथक भृतानि=प्राणियों को वेद=जानता है सर्वम्≕सर तम्=उसको परादात्≕याग देते हैं य :=जो श्चातमनः=श्चपने जीवारमा से अन्येत्र≃पृथक् सर्वम्≔सर को वेद=जानता है

इदम्=यह ग्रह्म=बाह्यग इदम्=यह क्षत्रम्=क्षत्रिय इमे=ये लोकाः=लोक द्रमे=ये देवाः=देव इमे=ये वेदाः=वेद इमानि=ये भूतानि=सब ग्राणी इदम्=यह यत्=जो क्छ है श्रयम्=यही सर्वम्=सब श्चातमा=भारमा है

भावार्थ।

याज्ञवल्य महाराज कहते हैं कि, हे प्रिय मैत्रेयि ! ब्रह्मत्व शिक्त उस पुरुष को त्याग देती है जो ब्रह्मत्व को ब्रापने ब्रात्मा से पृथक् जानता है, क्षित्र्यत्व शिक्त उस पुरुष को त्याग देती है जो अपने ब्रात्मा से क्षित्रयत्व को पृथक् समम्ता है, स्वर्गादिलोक उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्रात्मा से स्वर्गादिलोकों को पृथक् जानता है, देवता उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्रात्मा से देवता को पृथक् जानता है, वेद उस पुरुष को त्याग देते हैं जो बेदों को ब्रापने ब्रात्मा से पृथक् जानता है, स्व प्राची उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्रात्मा से पृथक् जानता है, स्व कोई उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्रात्मा से स्वको पृथक् जानता है स्व कोई उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्राह्मा से स्वको पृथक् जानता है स्व कोई उस पुरुष को त्याग देते हैं जो ब्रापने ब्राह्मा से सवको पृथक् जानता है यह ब्राह्मा है, यह क्षित्वय है, यह क्षोक है, यह देवता है, यह कोद है, इस वेद है,

यह प्राग्ती है, जो छुछ है वह सब अपना आतमा है आतमा से अति-रिक्क कुछ भी नहीं है॥ ७॥

मन्त्रः द

स यथा दुन्दुभेईन्यमानस्य न वाह्याञ्ज्ञब्दाञ्ज्ञक्तुयाद्ग्रहणाय दुन्दुभेस्तु ग्रहणेन दुन्दुभ्याघातस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, दुन्दुभेः, हन्यमानस्य, न, बाह्यान्, शब्दान्, शक्तुयात्, प्रह्माय, दुन्दुभेः, तुः, प्रह्मोन, दुन्दुभ्याघातस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथा=जैसे हन्यमानस्य=बजते हुये दुन्दुभेः=ढोल के तु=परन्तु दुन्दुभेः ग्रह्गोन=दोल के पकद्क्षेत्रे से या=अथवा

बाह्यान्=बाहर निकले हुये शब्दान्=शब्दों के ग्रह्मण्य=प्रहण यानी पकदने के जिये + जनः≕कोई पुरुष न≕नहीं

शक्तुयात=समर्थ होसका है

दुन्दुभ्या- } इोल के बजानेवाले घातस्य } को पकद खेने से शब्दः=शब्द का प्रदृष भवति=होता है

+ तथा=वैसेही + सः=वह द्यारमा गृहीतः=प्रहुख किया जाता है

भावार्थ ।

हे मैत्रियि ! जैसे बजते हुये ढोल के शब्द को कोई पकड़ नहीं सक्ता है यानी बन्द नहीं कर सक्ता है परन्तु ढोल के पकड़ लेने से अथवा ढोल के बजानेवाले को पकड़ लेने से शब्द का महर्गा होजाता है यानी बन्द होजाता है उसी प्रकार यह अपना आत्मा जो इस शरीर बिषे स्थित है उसका महर्गा जभी होसक्ता है जब शरीर आत्मा से पृथक् जान लिया जाय या शरीर का चलानेवाला जीवात्मा शरीर से पृथक् जान लिया जाय ॥ ८॥

मन्त्रः ह

स यथा शंखस्य ध्मायमानस्य न बाह्याञ्जब्दाञ्जक्तुयाद्प्रह-णाय शंखस्यतु प्रदृश्णेन शंखध्मस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, शंखस्य, ध्मायमानस्य, न, वाह्यान्, शब्दान्, शक्तु-यात्, प्रह्गाय, शंखस्य, तु, प्रह्मोन, शंखध्मस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथाः जैसे

६मायमानस्य=बजाये हुये

शंखस्य=शंस के

याह्यान्=शहरं कि

ग्रहणाय=पकदने के लिये

+ जनः=कोई पुरुष

न=नहीं

शक्नुयान्=समर्थ होसक्रा है

नु=परन्तु

शंखस्य=शंख के

ग्रह्णेन=प्रहण करने से

बा≃म्रथवा

शंखध्मस्य=शंख के बजानेवाले के
ग्रहरोन=पक्ड लेने ले
श्रहरः=शब्द का
गृहीतः=ग्रहय होजाता है
+ तथेच=डली प्रकार
+ सः=वह भाग्मा
+ गृहीतः=ग्रहय
+ सवत=डोजाता है

भावार्थ ।

हे मेंत्रेयि ! जैसे बजाये हुये शंख के बाहर निकले हुये शब्दों के पकड़ने के लिये कोई पुरुष समर्थ नहीं होता है परन्तु जब शंख को पकड़ लेता है या शंख के बजानेवाले को पकड़लेता है तब शब्द को जो उसके छन्दर स्थित है पकड़ लेता है उसी प्रकार इस जीवातमा का प्रह्मा जभी होसका है जब शरीर से पृथक् करके देखा जाता है या शरीर इससे पृथक् करके देखा जाता है या शरीर इससे पृथक् करके देखा जाता है ॥ ह ॥

मन्त्रः १०

स यथा वीगाये वाचमानाये न बाह्यान्द्रव्दान्द्रक्तुयाद्व्रह्णाय बीगाये तु ब्रह्णेन वीगावादस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यथा, वीर्णाये, वाद्यमानाये, न, बाह्यान्, शब्दान्, शक्तुयात्, प्रह्त्ताय, वीर्णाये, तु, प्रह्मोन, वीर्णावादस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथा≃जैसे

वाद्यमानायै=बजाई हुई

वीत्यायै=वीत्या के

बाह्यान्=बाहर निकले हुये
शब्दान्=शब्दों के

प्रह्माय=प्रह्मा करने के लिये
जनः=कोई पुरुष

न≕नहीं शक्नुयात्=समर्थ होसक्ना है तु=परम्सु वीतायै=बीया के प्रहरोन=प्रहर्ण करने से

वा=मध्या

वीगावादस्य=वीगा के बजानेवाजेके ग्रह्मेन=पक्ष खेने से शब्दः गृह्मेतः=शब्द प्रहण होजाताहै

+ तथैव=डसी तरह + सः=वह भारमा + गृहीतः=धहक

+ भवति≔होजाता है

भावार्थ।

हे मेंत्रेयि ! जैसे वीगा से बाहर निकले शब्द पकड़े नहीं जा सकते हैं परन्तु वीगा के पकड़ लेने से या वीगा के बजाने वाले के पकड़ लेने से शब्द का प्रह्मा होजाता है उसी तरह शरीर से आत्मा को पृथक् करके और आत्मा से शरीर को पृथक् करने से आत्मा का प्रहमा होता है।। १०।।

मन्त्रः ११

स यथाद्वैंघाग्नेरभ्याहितस्य पृथग्यूमा विनिश्वरत्न्येवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतचहग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुज्याख्या-नानि व्याख्यानानीष्ट्रंश्र हुतमाशितं पाथितमयं च लोकः प्रश्च लोकः सर्वाणि च भूतान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निश्वसितानि ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यथा, आर्द्रेधाग्नेः, अभ्याहितस्य, प्रथक्, धूमाः, विनिश्च-

रन्ति, एवम्, वा, श्ररे, श्रस्य, महतः, भूतस्य, निश्वसितम्, एतत्, यत्, ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, श्रथर्वाङ्गिरसः, इतिहासः, पुरागाम्, विद्या, उपनिषदः, श्लोकाः, सूत्राणि, अनुन्याख्यानानि, न्याख्यानानि, इष्टम्, हुतम्, आशितम्, पायितम्, अयम्, च, क्लोकः, परः, च, लोकः, सर्वाशि, च, भूतानि, अस्य, एव, एतानि, सर्वाशि, निश्वसितानि ॥

श्चन्यः

पदार्थाः

यथा=जैसे झभ्याहितस्य=स्थापित की हई आर्दें धारने:=गीवी लक्डी की चारिन में से

धूमाः=धूमावली पृथक्=पृथक् पृथक् विनिश्चरन्ति=चारों तरफ फैलती हैं एवम्=इसी प्रकार

द्यरे=हे मैत्रेवि ! वा=निश्चय करके

श्रस्य=इस भूतस्य=जीवास्मा का एतत्=यह

निश्वसितम्=श्वास है

यत्=जो ऋग्वेदः=ऋग्वेद **यञ्जुर्वेदः**≔यजुर्वेद सामवेदः=सामवेद

श्रधर्वाङ्गिरसः=श्रथर्वण वेद

इतिहासः=इतिहास

श्चारवयः

पदार्थाः

पुरागम्=पुराग

विद्या=गानविद्या उपनिषदः=उपनिपद्

> इलोकाः=मन्त्र सूत्राशि=मृत्र

श्चनुद्या-स्यानानि }=भाष्य

द्याख्यानानि=ध्याख्यान

इप्टम्=यज्ञ

द्यतम्≔होम

आशितम्=त्रन्नदान पायितम्=जलदान

ग्रयम् च=यह

लोकः≕लोक

परः च≃पर लोक:=ढोक

सर्वाशि≈सब

च=श्रौर पतानि=थे

सर्वाणि=सब

भूतानि=प्राणी

अस्य एव=इसी जीवात्मा के निश्वसितानि=स्वामाविक स्वास हैं

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जैसे अग्नि में गीली लकड़ी के डालने से धूम और चिन्गारी आदिक चारों तरफ फैलती हैं उसी प्रकार हे मेत्रेयि ! गुर्णों में सबसे बड़ा और स्वरूप में सबसे अति स्टूम जीवात्मा का ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वगावेद, इतिहास, पुराग्ण, गानविद्या, आत्मविद्या, मन्त्र, सूत्र, भाष्य, ज्याख्यान, होम, अन्नदान, जलदान, यह लोक, परलोक और सब प्राग्णी स्वाभाविक स्वास हैं ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

स यथा सर्वासामपा समुद्र एकायनमेव संवेषा स्पर्शानां स्वगेकायनमेव संवेषां गन्यानां नासिके एकायनमेव संवेषा स्वेषा स्वर्षा स्वर्ण स्वर्षा स्वर्य स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्य स्वर्षा स्वर्य स्वर्षा स्वर्या स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्षा स्वर्या स्वर्षा स्वर्या स्वर्या स्वर्या स्वर्या स्वर्या स्वर्या स्वर्या स्वयं स्वर्या स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वर्य स्वयं स्वर

पदच्छेदः ।

सः, यथा, सर्वासाम्, अपाम्, सनुद्रः, एकायनम्, एवम्, सर्वे-पाम्, स्पर्शानाम्, त्वक्, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, गन्धानाम्, नासिके, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रसानाम्, जिह्वा, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रूपाणाम्, चक्षुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, शब्दा-नाम्, श्रोत्रम्, एकायनम्, एदम्, सर्वेषाम्, संकल्पानाम्, मनः, एकायनम्, एवम्, सर्वासाम्, विद्यानाम्, हृदयम्, एकायनम्, एवम्, सर्वेपाम्, कर्भणाम्, हृस्तौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, आनन्दानाम्, ष्रस्थः, एकायनम्, एवम्, सर्वेपाम्, विसर्गाणाम्, पायुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, अध्वनाम्, पादौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, वेदा-नाम्, वाग्, एकायनम् ॥

भ्रास्वयः

पदार्थाः | अस्वयः

पदार्थाः

यथा=जैसे सर्वासाम्=सब श्चपाम्=जलों का पकायनम्=एक स्थान समुद्रः=समुद्र है एवम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब स्पर्शानाम्=स्पर्शे का एकायनम्=एक स्थान त्वकु=त्वचा है प्वम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब शन्धानाम्=गन्धीं का एकायनम्=एक स्थान नासिक=ब्रायोन्द्रय है प्वम्=इसी तरह **स**र्वेषाम्=स**र** रसानाम्=स्वादीं का एकायनम्=एक स्थान जिह्ना=जिह्ना है प्त्रम्≔उसा प्रकार सर्वेषाम्=सब **रूपाशाम्**=रूपें का एकायमम्≔एक स्थान

ं एचम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब शब्दानाम्=शब्दों का

एकायनम्=एक स्थान श्रोत्रम्=श्रोत्र है प्वम्=इसी प्रकार सर्वेष।म्≕सब संकल्पानाम्⇒संकल्पों का पकायनम्=एक स्थान मनः≔मन है पवम्=इसी तरह सर्वासाम्=सब विद्यानाम्=विद्यात्रीं का पकायनम्=एक स्थान इदयम्=हदय है एवम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब कर्मगाम्=कर्मीका एकायनम्=एक स्थान हस्ता=हाथ हैं . एवम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब ग्रानन्दानाम्=भानन्दों का एकायनम्=एक स्थान उपस्थः=उपस्थ है एवम्≔इसी तरह सर्वेषाम्=सब विसर्गाणाम्=विसर्जनीं का एकायनम्=एक स्थान पायुः≕गुदा है एवम्≔इसी प्रकार

सर्वेषाम्=सव ऋष्वनाम्=मानों का पकायनम्=एक स्थान पादौ=पाद हैं प्वम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सव वेदानाम्=वेदों का

पकायनम्=एक स्थान वाक्चवायी है + तथा एचचितसी प्रकार + सः=वह खास्मा + सर्वेपाम्≕सब + ज्ञानानाम्=ज्ञानों का + एकायनम्=एक स्थान है

भावार्थ ।

हे मैंत्रेयि! जैसे सब जजों का एक स्थान समुद्र है, जैसे सब स्पर्शों का एक स्थान त्वचा है, जैसे सब गन्धों का एक स्थान प्राण्ण इन्द्रिय है, जैसे सब स्वादों का एक स्थान जिह्ना है, जैसे सब रूपों का एक स्थान नेत्र हैं, जैसे सब शन्दों का एक स्थान प्रोत्र हैं, जैसे सब संकल्पों का एक स्थान मन हैं, जैसे सब विद्याख्यों का एक स्थान हृद्य है, जसे सब कमों का एक स्थान हस्त हैं, जैसे सब खानन्दों का एक स्थान उपाय है, जैसे सब विसर्जनों का एक स्थान गुदा है, जैसे सब मार्गों का एक स्थान वास्ति हैं, जैसे सब मार्गों का एक स्थान वास्ति हैं, इसी प्रकार यह अपना खारमा सब झानों का एक स्थान है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

स यथा सैन्प्रयमोऽनन्तरोऽवाद्याः कृत्स्नो रसघन एवैवं वा श्चरेऽयमात्मानन्तरोऽवाद्याः कृत्स्नाः प्रज्ञानचन एवैतेभ्यो भूतेभ्याः समुत्थाय तान्थेवानुविनश्यति न भेत्य संज्ञास्तीत्यरे ब्रवीमीति होवाच याज्ञवस्यः ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यथा, सैन्धवधनः, अनन्तरः, अवाद्यः, कुत्स्नः, रसधनः, एव, एवम्, वा, अरे, अयम्, आत्मा, अनन्तरः, अवाद्यः, कुत्स्नः, प्रज्ञा-नधनः, एव, एतेभ्यः, भूतेभ्यः, समुत्थाय, तानि, एव, अनुविनश्यित, न, प्रेत्य, संज्ञा, अस्ति, इति, अरे, व्यीमि, इति, इ, उवाच, याज्ञवकृत्यः ॥ श्रम्बयः

पदार्थाः श्रन्दयः

पदार्थाः

यथा=जैसे

सः≔वह

सैन्धवधनः=ग्रैन्धवनोन का दता

श्चनन्तरः=भीतर श्रवाह्यः=बाहर से

अवाह्यः-बाहर स रसग्रतः=रसवाता

कृतस्नः=पूर्ण है

एवम् एव=इसी प्रकार

श्चरे=हे मैत्रेयि!

श्रयम्=यह श्रातमा=श्रातमा

ग्रनन्तरः=श्रन्दर

ऋबाह्यः≔बाहर से इति चा≕निश्चय करके

इति वा=नरचय करक प्रज्ञानधनः=ज्ञानस्वरूप है

+ सः=यही श्रात्मा एतेभ्यः=इन एव=ही

भूतेभ्यः=पञ्चमहाभृतीं से समुत्थाय=निकत्न कर

तानि=उन

एव=ही के श्रमु=श्रभ्यन्तर

अनु-वन्त्रतार चिनश्यति=लीन रहता है

श्यात≔लाग रहला ० द्यारे≕हे मैत्रेयि !

ब्रवीमि=में सत्य कहता हूं

प्रत्य=देह छोड़ने के पीछे स्रस्य=इस स्रात्मा की

श्रस्थ=६स आसा मा संज्ञा=विशेष संज्ञा

न=नहीं

श्रास्त=रहती है

इति=ऐसा

|याज्ञवल्क्यः } =याज्ञवल्क्य ने कहा

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जैसे सैन्यवनोन का डला भीतर वाहर रस करके पूर्ण है, उसी प्रकार यह जीवात्मा वाहर भीतर से सत् चित् त्र्यानन्द करके पूर्ण है, यह आत्मा इन्हीं पञ्चतत्त्वों में से प्रकट होकर इन्हीं के अभ्यन्तर लय होजाता है, हे मैत्रेयि ! मैं सत्य कहता हूं देहत्याग के पीछे इस आत्मा की विशेष संज्ञा इस्तु नहीं रहती ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

सा होवाच मैत्रेय्यत्रैव मा भगवान्मोहान्तमापीपिपत्र वा अह-मिमं विज्ञानामीति स होवाच न वा अरेऽहं मोहं ब्रवीम्यविनाशी वा अरेऽयमात्मानुस्छित्तिधर्मा ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैत्रेयि, अत्र, एव, मा, भगवान्, मोहान्तम्, आपीपिपत्, न, वा, अहम्, इमम्, विज्ञानामि, इति, सः, ह, उवाच, न, वा, आरे, आरहम्, मोहम्, ब्रवीमि, आविनाशी, वा, आर्थे, आर्थम्, श्रात्मा, अनुच्छित्तिधर्मा ॥ पदार्थाः

श्चन्वयः

पदार्थाः । अन्वयः

ह≔तब सा=वह मैत्रेयी उवाच=बांबी कि भगवन्=हे भगवन् ! श्रत्रेच=इस विज्ञानधन धारमा विषे मा=मुके स्बम्≕ग्रापने मोहान्तम्=मोहित अवीपिपत्=िकया है इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर कि श्रहम्=मैं वा=निस्सन्देह इमम्=इस भारमा को

न=नहीं विज्ञानामि=जानता हं

सः=वह याज्ञवल्क्य उवाच ह=बोले कि द्वारे=हे मैत्रेवि ! ग्रहम्=में मोहम्=भज्ञान की बात को न वा=नहीं व्रवीमि=कहता हं श्चरे=हे मैत्रेयि ! श्रयम्=यह श्चातमा=श्चातमा श्चविनाशी=विकारराहत है वा=ग्रीर

ह=तब

माशरहित है यानी जो धर्भरहित है अनुचित्रित्तिधर्मा= उसको कोई कैसे जान सक्रा है

भावार्थ।

यह सुनकर मैत्रेयी कहती है कि, हे प्रभी ! आपने इस विज्ञान-घन आत्मा विषे मुक्तको मोहित किया है ऐसा कहकर कि मैं आत्मा को नहीं जानता हूं, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे मैत्रेयि ! में तुमको मोह में नहीं डालता हूं, श्रीर न कोई श्रज्ञान की बात कही है, आरे मैत्रेयि ! यह आपना आत्मा निकाररहित है, और नाशरहित है, यह आत्मा बुद्धि का विषय नहीं है, जब बुद्धि का विषय नहीं तब कैसे मैं कह सक्ता हूं कि मैं इस ख्रात्मा को जानता हूं, अगर यह बुद्धि कश्के जाना जाय तो विकारवाला होजायगा, ख्रौर को विकारवाला होता है वह नाशधर्मवाला होता है, तुम ख्रपने सन्देह को दूर करो ख्रौर मेरे कहे हुये पर विचार करो ॥ १४॥

मन्त्रः १५

यत्र हि द्वैतिभव भवति तदितर इतरं पश्यति तदितर इतरं जिञ्चति तदितर इतरं एस्यते तदितर इतरं मनुते तदितर इतरं भृशुणोति तदितर इतरं मनुते तदितर इतरंछ स्पृशाित तदिन तद्दे स्तरं भृते तदितर इतरंछ स्पृशाित तदिन तर इतरं भिजानाित यत्र त्यस्य सर्वभारमेयाः चलकेन कं पश्येचत्केन कं जिञ्चचत्केन कछ रसयेचत्केन कडि भृशुणाच- त्केन कं मन्धीत तत्केन कछ स्पृशेचत्केन कं विजानीियाद्येनेदछ सर्व विजानाित तत्केन विजानीयात्स एप नेति नेत्यात्माऽमुद्धो न हि मुद्धतेऽशीयों न हि शियतेऽसङ्गो न हि सङ्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यति विज्ञातारमरे केन विजानीयादित्युक्चानुशासनािस मैत्रेय्येतावदरे खल्यमृतत्विति होतत्वा याज्ञयल्क्यो विजहार ॥

इति पश्चमं ब्राह्मसम् ॥ ४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिपदि चतुर्थोऽध्यायः॥ ४ ॥ पदच्छेदः।

यत्र, हि, द्वैतम्, इव, भवति, तत्, इतरः, इतरम्, पश्यति, तत्, इतरः, इतरम्, जिञ्चति, तत्, इतरः, इतरम्, रसयते, तत्, इतरः, इतरम्, अभिवदति, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्याति, तत्, इतरः, इतरम्, मनुते, तत्, इतरः, इतरम्, स्पृशति, तत्, इतरः, इतरम्, विजानाति, यत्र, तु, अस्य, सर्वम्, आत्मा, एव, अभृत्, तत्, केन, कम्, पश्येत्, तत्, केन, कम्, जिञ्चत, तत्, केन, कम्, पश्येत्, तत्, केन, कम्, जिञ्चत, तत्, केन, कम्, स्प्रथत्, तत्, केन, कम्, मन्वीत, तत्, केन, कम्, स्पृश्त्, तत्, केन, कम्, मन्वीत, तत्, केन, कम्, स्पृश्त्, तत्, केन, कम्, विजानीयात्, येन, इत्म, सर्वम्, विजानीति, तत्, केन, विजानीयात्, सः, एषः, न, इति, न,

इति, आतमा, अगृहाः, न, हि, गृह्यते, अशीर्यः, न, हि, शीर्यते, असङ्गः, न, हि, सज्यते, असितः, न, व्यथते, न, रिप्यति, विज्ञातारम्, अरे, केन, विज्ञानीयात्, इति, उक्तानुशासना, असि, मैत्रेयि, एतावत्, अरे, खलु, अमृतत्वम्, इति, ह, उक्त्वा, याज्ञवक्यः, विज्ञहार ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

यत्र=जहां पर द्वैतम् इव=दैत की तरह श्रयम्=यह श्रात्मा भवति=श्राभास होता है तत् हि=तहां ही इतर:=दूसरा इतरम्≔दूसरे को पश्यति=देखता है तत्=वहां ही इतरः≔दूसरा इतरम्=दूसरे को जिन्नति=संघता है तत्=वहां ही इतरः=दूसरा इतरम्=दूसरे को रसयतं=स्वाद केता है तत्=वहां ही इतर:=श्रन्य इतरम्=श्रन्य से श्रमिवदति=कहता है तत्=वहां ही इतरः=ग्रन्य इतरम्=श्रन्य का श्वगाति=सुनता है तत्=वहां

श्रन्वयः

पदार्थाः

इतर:=दूसरा इतरम्=दृसरे को मञ्जे=मानता है तत्=वहां ही इतर:=श्रीर इतरम्=श्रीर को स्प्रशति=स्पर्श करता है तत्=वहां ही इतर:=श्रीर इतरम्=श्रीर को विज्ञानाति=जानता है तु=परन्त् यत्र=जहां श्रस्य=इस पुरुप को सर्वम्=सब जगत् ब्रातमा एव=श्रात्मा ही श्रभूत्=होरहा है तत्≔वहां श्चयम्=यह श्रात्मा केन=किस करके कम्=िकसको पश्यंत्=देखे तत्=वहां केन=किस करके कम्=किसको

जिब्रेत्=संबे तत्=वहां केन=किस करके कम्≕केस का रसयतं=स्वाद लेवे तत्=वहां केन=किस करके कम्=िकसको श्रभिवदेत=कहे तत्=वहां केन=किस करके कम्=िकसको श्र्युयात्=सुने तत्=बहां केन=किस करके कम्=िकसको मन्द्रीत=माने तत्=वहां केन=किस करके कम्=किसको स्पृशेत्=स्पर्श करे तन्=वहां केन=किस करके कम्=िकसको विज्ञानीयात्=जाने यन=जिस करके + पुरुषः≃पुरुष इदम्=इस सर्वम्=सबको विजानीयात्=जानता है तम्≔उसको केन=किस करके

विजानीयात्=कोई जाने सः=वही पषः=यही श्चात्मा=श्वात्मा नेति=नेति नेति=नेति इति=करके श्चगृह्यः=श्रग्राह्य है हि=क्योंकि + सः=वह न=नहीं गृह्यते=ग्रहण किया जा सक्ना है श्रशीर्यः=जीर्णतारहित है हि=क्योंकि स्न:=वह **न**=नहीं शीर्यते=जीर्थ किया जा सका है श्रसङ्गः=वह श्रसङ्ग है हि=क्योंकि सः=वह न सज्यते=िकसी में भासक नहीं श्रसितः=वह भवद्ध है हि=क्योंकि सः=वह न व्यथते=पीड़ित नहीं होता है च=श्रीर स=न रिष्यति=इत होता है अरे=हे मैत्रेयि! विश्वातारम्=उस ज्ञानस्वरूप शारमा

केत=किस के द्वारा विज्ञानीयात्=कोई जाने मैत्रेयि=हे मैत्रेयि ! त् इति=हस प्रकार उक्कानुशासना=उपदेश कीगई असि=है पतावत् खलु=इतना ही
श्रमृतत्वम्=मृक्षि है
द्वाति ह=ऐसा
उक्त्वा=कहकर
याञ्चयः=याःचवक्य
विज्ञहार=विहार करते भये

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जहां पर यह आदमा देत भासता है, तहां ही दूसरा दसरे को देखता है, दूसरा दूसरे को सूंघता है, दूसरा दूसरे का स्वाद केता है, दूसरा दूसरे से कहता है, दूसरा दूसरे का सुनता है, दूसरा दसरे का मनन करता है, दूसरा दूसरे का स्पर्श करता है, दूसरा दूसरे को जानता है, परन्तु जहां इस पुरुष को सब जगत श्रपना श्रात्मा ही हो रहा है, वहां यह आरमा किस करके किसको देखे, किस करके किसको संघे, किस करके किसका स्वाद लेवे, किस करके किससे कहे, किस करके किसको सुने, किस करके किसका मनन करे, किस करके किसको स्पर्श करे, किस करके किसको जाने, जिस करके यह पुरुष सबको जानता है उसको किस करके कोई जाने, वही यह श्रात्मा नेति नेति शब्द करके श्रम्राह्य है, जीर्ग्गतारहित है, वही श्रसङ्ग है, वही श्रवद्ध है. क्योंकि किसी करके वह प्रहत्म नहीं किया जा सक्ता है, न जीर्ग किया जा सक्ता है, न वह किसीमें आसक्त है, न उसको कोई पीड़ा दे सकता है, न वह इत हो सकता है, हे मैत्रेयि ! यह आतमा ज्ञानस्वरूप है, हे मैत्रेयि ! त इस प्रकार उपदेश कीगर्ड है, और तू श्रपने स्वरूप में स्थित है, यही मुक्ति है, श्रव मैं जाता हूं, ऐसा कहकर याज्ञवल्क्य महाराज चल दिये ॥ १४ ॥

इति पश्चमं ब्राह्मण्म् ॥ ४ ॥ इति श्रीवृहदारययकोपनिषदि भाषानुवादे चतुर्थोध्यायः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमोध्यायः॥ श्रथ प्रथमं व्राह्मग्रम्।

अं पूर्णमदः पूर्णमदं पूर्णात्यूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्वते । अं खं ब्रह्म । खं पुराणं वायुरं खमिति इ स्माइ कौरन्यायणीपुत्रो वेदोऽयं ब्राह्मणा विदुर्वेदैनेन यद्देदितन्यम् ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छदः । ॐ, पूर्णम्, झदः, पूर्णम्, इदम्, पूर्णात्, पूर्णम्, उदच्यते, पूर्णस्य, पूर्णम्, श्रादाय, पूर्णम्, एव, श्रवशिष्यते, अं, खम्, ब्रह्म, खम्, पुरात्तम्, वायुरम्, खं, इति, ह, स्म, श्राह, कौरव्यायस्तीपुत्रः, वेदः, श्रयम्, ब्राह्मस्साः, विदुः, वेद, श्रनेन, यन्, वेदितव्यम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चन्ययः श्चन्वयः

ॐ=ॐकाररूप

श्चादः≔यह परोक्ष ब्रह्म पूर्णम्=त्राकाशवत् पूर्णं है अवशिष्यते=त्रच रहता है इदम्=यह दश्यमान नाम रूपात्मक जगत्भी पूर्णम्=पूर्ण है + हि=क्योंकि पूर्णात्=पूर्णं नारणात्मक बहा

+ इदम्=यह पूर्णम्=पूर्यं जगत्रूप कार्य उदच्यते=निकला है + च=श्रीर पूर्णस्य=कार्यात्मक पूर्ण बहा-रूप जगत् की

पूर्णम्=पूर्णता को श्चादाय=पृथक् करने पर

एच≕केवल पूर्णम्=प्रज्ञानघन ब्रह्मरूप

खम्=थाकाश + एव=ः

व्रह्म=त्रह्म है

+ व्रह्म } =ब्रह्म ही

अं≈अं≉कार है

+ तत्व्≕सोई खम्=श्राकाशरूप परमातमा

पुरागम्=निरालम्ब है यत्=जो कुछ वेदितव्यम्=संसार में जानने

योग्य है

+ तत्=उस को

श्रानेन=इस

+ अकारेशा=ॐकार करके कौरव्यावणी- र =कौरव्यायगी का पुत्र वेद=पुरुष जानता है इति≂ऐसा + ग्रतः=इस तिये ह=निरचय करके श्रयम्=यह ॐकार श्राह स्म=कहा है कि वेदः=वेदरूप है धायुरम्= { जितने आकाश धायुरम्= { बिपे सृज्ञात्मा वायु स्यापक हो रहा है + इति=एसा ब्राह्मगाः=ऋपिकोग + तत्=इसी चिदुः=जानते भवे खम=श्राकश्य को

भावार्थ ।

+ आह=कहते हैं

+ परन्तू=परन्तु

यह परोक्ष ब्रह्म आकाशवत् व्यापक है, यही दरयमान नाम रूपा-त्मक जगत् भी है, यदि जगत् अपने अधिष्ठान चेतन ब्रह्म से अलग करके देखा जाय तो केवल प्रज्ञानघन ब्रह्मही पूर्ण वच रहता है, सोई ब्रह्म आकाशरूप है वही ॐकाररूप है, और वही आकाशरूप परमात्मा है, हे शिष्य! जो छुद्ध संसार विषे जानने योग्य है वह इसी ॐकार करके जाना जाता है, इसिलये यह ॐकार वेद है, ऐसा अपृषि लोगों का अनुभव है, और कौरव्यायग्गी के पुत्र ने ऐसा कहा है कि जितने आकाश विषे सूत्रात्मा वायु व्यापक होरहा है, वही आकाशरूप ब्रह्म है, वही ॐकार करके जानने योग्य है।। १।।

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

श्रथ द्वितीयं ब्राह्मणम्। मन्त्रः १

त्रयाः माजापत्याः प्रजापतौ पितिर ब्रह्मचर्यमूषुर्देवा मनुष्या श्रमुरा उपित्वा ब्रह्मचर्य देवा छचुर्बवीतु नो भवानि तेभ्यो है-तदक्षरमुवाच द इति व्यज्ञासिष्टा ३ इति व्यज्ञासिष्मेति होचुर्दाम्यते-ति न श्रात्थेरयोमिति होवाच व्यज्ञासिष्टेति ।।

पदच्छेदः ।

त्रयाः, प्राजापत्याः, प्रजापतौ, पितरि, ब्रह्मचर्यम्, ऊषुः, देवाः, मनुष्याः, श्रमुराः, उपित्वा, ब्रह्मचर्यम्, देवाः, ऊचुः, ब्रवीतु, नः, भवान, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, अक्षरम्, उवाच, द, इति, व्यज्ञासिष्टाः, इति, क्यज्ञासिष्मा, इति, ह, ऊचुः, दाम्यत, इति, नः, आत्थ, इति, क्रं, इति, ह, उवाच, व्यज्ञासिष्ट, इति ॥

पदार्थाः श्चन्वयः प्रजापतौ=प्रजापति पितरि=पिता के पास देवाः=देव मनुष्याः≕मनुष्य श्रसुराः=श्रसुर त्रयाः=तीनों प्राजापत्याः=प्रजापति के पुत्र ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्यं व्रतके विषे ह=निश्चयकरके ऊषुः≔वास करते भये देवाः=रेवता लोग ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्य त्रत को उषित्वा=करके + प्रजापतिम्=प्रजापति से ह=स्पष्ट इति=ऐसा ऊचुः=कहा कि भवान्=श्राप नः=हम लोगों को **श्रनुशासनम्**=श्रनुशासन ब्रचीतु=देवैं इति=ऐसा

भुत्वा=सुन कर

श्चन्ययः पदार्थाः इति≔इस प्रकार तेभ्यः≔देवों के निमित्त पसत्=इस

> द=द श्रक्षरम्=त्रक्षर को

ह=स्पष्ट उचाच=प्रजापति कहता भया

+ च=धौर

+ पुनः≕िकर इति≕ऐसा

\$10-341

+ उक्तवा=कहकर

+ पप्रच्छ=पूछता भया कि यूयम्=तुम जोगों ने

व्यश्वासिष्टाः=इसका श्रर्थ जान

ब्रिया

इति=ऐसा सुनकर

+ देवाः=देवतों ने ऊचुः=कहा कि

व्यज्ञासिष्म हम लोग ऐसा समक इति विगये कि

> दाम्यत=इन्द्रियोंको दमन करी इति नः=ऐसा हमसे

आत्थ=माप कहते हैं

इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + प्रजापतिः=प्रजापति उवाच≕बोले ॐ=ठीक

ड्य**हा**सिष्ट=तुम सब समभे

भावार्थ ।

प्रजापित के तीन पुत्र देवता, मनुष्य धौर ध्यस् हैं, तीनों प्रजापित के पास ब्रह्मचर्य व्रत के निमित्त वास करते रहे, इनमें से प्रथम देवता प्रजापित के पास जाकर बोले कि हे भगवन ! आप हम लोगों को कुछ उपदेश देवें, प्रजापित ने उनको "द" ध्यक्षर का उपदेश दिया, और फिर उनसे पूछा कि क्या तुम लोगों ने "द" इस ध्यक्षर का अर्थ समम्म लिया है ? देवताओं ने कहा हां हमलोग समम्म गये हैं, आप हमसे कहते हैं कि तुम सब लोग इन्द्रियों का दमन किया करो, इस पर प्रजापित बोले कि हां तुम लोगों ने इस "द" ध्यक्षर का ध्यर्थ ठीक समम्म लिया है, इसका भाव ऐसाही है जैसा तुम लोगों ने समम्म हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः २

श्रथ हैनं मनुष्या ऊचुर्बवीतु नो भवानिति तेभ्यो हैतदेवाक्षर-मुवाच द इति व्यझासिष्टा है इति व्यझासिष्मेति होचुर्दचेति न श्रात्थेत्योमिति होवाच व्यझासिष्टेति ।।

पदच्छेदः ।

आथ, ह, एतम्, मनुष्याः, ऊचुः, ब्रवीतु, नः, भवान्, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, एव, आक्षरम्, च्याच, द, इति, व्यक्षासिष्टाः, इति, व्यक्षा-सिष्म, इति, ह, ऊचुः, दत्त, इति, नः, आत्थ, इति, ॐ, इति, ह, खवाच, व्यक्षासिष्ट, इति ॥

झन्वयः पव झथ ह=इसके वपरान्त

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

भ्रथ ह=इसके उपरान्त मनुष्याः=मनुष्य एनम्=इस प्रजापति से इति=ऐसा ऊचुः=कहते भये कि भवान्=भाष

नः≔हम लोगों को ब्यश्वासिष्टाः=स्या तुम सब समझ गये हो ब्रवीतु=बनुशासन करें इति≕तव इति=ऐसा ऊचुः=मनुष्य बोले कि + धृत्वा=सुन कर व्यक्कासिष्म } =हम सब ऐसासमके कि ते भ्यः=मनुष्यों के विषये भी पतत् पव=पही वत्त इति=दान करो ऐसा नः≔हस से र=द **आत्थ=आप कहते हैं** श्रक्षरम्=श्रक्षर इति=करके ह=तब उपवेश उचाच=प्रजापति इति=ऐसा + प्रजापति:=प्रजापति करता भया + च=श्रीर उवाच=मनुष्यों से कहता पुनः=किर भया कि + पप्रच्छ इति=मन्ध्यों से ऐसा पृंछता ನೀ=ನಿಹ भया कि व्यञ्जासिष्ट=तम सब समक गये हो

भावार्थ।

देवताओं के पश्चात् मनुष्यासा प्रजापित के पास पहुँचे श्रीर कहा है भगवन् ! हमको भी श्राप उपदेश दें, इनको भी इसी श्रक्षर " द '' का उपदेश प्रजापित ने दिया, श्रीर फिर उनसे पूंछा कि क्या तुमने " द '' श्रक्षर का अर्थ समम्म लिया है, इस पर मनुष्यों ने कहा है पितामह ! जो श्रापने " द '' श्रक्षर का उपदेश किया है उससे श्रापने हमलोगों से कहा है कि तुम सब कोई दान किया करो, ऐसा हमारे समम्म में श्राया है, सो ठीक है या नहीं इस पर प्रजापित ने कहा कि तुम सब लोगों ने हमारे श्राशय को भली प्रकार समम्म लिया है, जाव ऐसाही किया करो ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

अथ हैनमसुरा ऊचुर्बवीतु नो भवानिति तेभ्यो हैतदेवाक्षरसु-वाच द इति व्यज्ञासिष्टा इति व्यज्ञासिष्मीति होचुर्दयध्वमिति न श्रात्थेत्योमिति होवाच व्यज्ञासिष्टेति तदेतदेवेषा दैवी वागनुवदति स्तनिथत्नुर्देदद इति दाम्यत दत्त दयध्विभिति तदेतत्रयथं शिक्षेदमं दानं दयामिति ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥ पदच्छेदः ।

अथ, ह, एनम्, श्रमुराः, ऊचुः, ब्रवीतु, नः, भवान्, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, एव, प्रक्षरम्, उवाच, द, इति, व्यज्ञासिष्टाः, इति, व्यज्ञा-सिष्म, इति, ह, ऊचुः, दयध्यम्, इति, नः, आत्थ, इति, 🛶, इति, ह, उवाच, व्यज्ञासिष्ट, इति, तत्, एतत्, एव, एपा, दैवी, वाक्, श्रानु-बद्ति, स्तनयित्तुः, द्दद्, इति, दाम्यत, दत्त, दयध्वम्, इति, तत्, एतत्, त्रयम्, शिक्षेत्, दमम्, दानम्, दयाम्, इति ॥

श्रास्त्रयः

पदार्थाः ं श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=मनुष्यगण के पींछे एनम्=प्रजापति से श्चसुराः=दैत्यलोग इति=ऐसा ऊचुः=बोलते भये कि नः=हमारे लिये भी भवान्=हे भगवन् ! म्राप +श्रनुशासनम्=उपदेश व्रजीत्=देवें इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर द=द इति=ऐसे एतत् एव=इस श्रक्षरम्=एक श्रक्षर को तेभ्यः=ग्रसुरी के जिये भी

उवाच=प्रजापति कहता भया

+ च=श्रोर

+ पुनः≕िकर इति=ऐसा पप्रच्छ=पूछता भया कि व्यज्ञासिष्टाः=क्या तुम सन समक गये इति=इस पर ऊचुः इति=ग्रसुर ऐसा बोले कि नः≔हम से त्रात्थ=त्राप कहते हैं कि द्यध्वम्=दया करो इति=ऐसा व्यज्ञासिष्म=हम जोग समभे हैं + प्रजापतिः=प्रजापति इति≔तब उवाच ह=बोबे कि व्यञ्चासिष्ट≔तुम सब ठीक समक गये हो तदेघ=वर्हा

एतत्=यह प्रजापति का दस्त=रान करो अनुशासन है द्यध्यम्=दया करो तत्=इसी को इति=इस प्रकार एषा=यह पतत्=यह त्रयम्=तीन प्रकार का हैवी=देवसम्बन्धी अनुशासन है **स्तन**यित्नुः=मेघस्थ + स्रतः=इसलिये वाक=वाणी ददद≔ददद शब्द मनुष्यमात्रम्=मनुष्यमात्र दमम्=इन्द्रियद्मन इति=करके श्चानुवद्ति=मनुवाद करती है दानम्=रान दयाम्=दया को शिक्षेत्=सीखे यानी करे टाम्यत=इन्द्रियों को दमन करो

भावार्थ ।

मनुष्यगण् के पीछे असुरगण् भी प्रजापित के पास गये, स्नौर उनसे इच्छा प्रकट की कि स्नाप हम जोगों को यथाउचित उपदेश करें, उनको भी प्रजापित ने "द" स्नक्षर का उपदेश किया स्नौर फिर उनसे पूंछा कि क्या तुम सममेही, श्रसुरों ने कहा है भगवन्! स्नापने कहा है कि तुम सब जोग सब जीवों पर दया किया करों, प्रजापित ने कहा हां तुमने हमारे स्नयं को ठीक समफ िया है, संसार में आकर ऐसाही किया करों, इसी उपदेश को देवी मेघस्थ वाणी भी स्नतुवादित करती है, यानी जो मेघ में गर्जना ददद की होती है, वह भी तीन दकारों के भाव को बताती है यानी इन्द्रियदमन करों, दान दो स्नौर दया करों, स्नाज कलभी सबको उचित है कि इन तीनों शिक्षा को, यानी इन्द्रियदमन, दान, स्नौर दया को भलीप्रकार स्वीकार करें॥ ३॥ शानी इन्द्रियदमन, दान, स्नौर दया को भलीप्रकार स्वीकार करें॥ ३॥

श्रथ तृतीयं बाह्मणम्। मन्त्रः १

एष प्रजापतिर्यद्वदयमेतद्ब्रह्मैतत्सर्व तदेत इयक्षरॐ हृदयमिति हृ इत्येकमक्षरमभिइरन्त्यस्मै स्वाश्चान्ये च य एवं वेद द इत्येकमक्षरं ददत्यस्मै स्वारचान्ये च य एवं वेद यमित्येकमक्षरमेति स्वर्ग ब्बोकं य एवं वेद ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

एषः, प्रजापतिः, यत्, हृदयम्, एतत्, ब्रह्म, एतत्, सर्वम्, तत्, एतत्, त्र्यक्षरम्, हृदयम्, इति, हु, इति, एकम्, श्रक्षरम्, श्रमिहरन्ति,-श्चस्मे, स्वाः, च, अपन्ये, च, यः, एवम्, वेद, द, इति, एकम्, श्रक्षरम्, ददति, श्रास्मे, स्वा:, च, श्रान्ये, च, यः, एवम्, वेद, यम्, इति, एकम्, श्चक्षरम्, एति, स्वर्गम्, लोकम्, यः, एवम्, वेद ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

यत्=जो

ह इति एकं } = 'ह' ऐसे एक श्रक्षरको श्रक्षरम्

एषः≔यही प्रजापतिः=प्रजापति है एतत्=यही

वेद=जानता है श्रास्मै=उस पुरुष के विषये स्वाः=इन्द्रिय च=ग्रीर

श्चन्ये=शब्दादि विषय

एतत्=यही सर्वम्=सन कुछ है तत्≕सोई ऽयक्षरम्=तीन श्रक्षरवाता एतत्=यह हृद्यम्=हृद्यबद्ध + उपास्यम्=सेवनीय है

अपने अपने कार्य की करतेहैं यानी इन्द्रियां श्रमिहरान्त_ विषय ग्रहण करती हैं एवम् और विषय अपने को श्रर्पण करते हैं इसी प्रकार

यः=जो प्वम्≔इस प्रकार

स्त्र=ग्रीर द इति=द ऐसे एकम्=एक

श्वक्षरम्=श्वक्षर की

यः=जो

वेद=जानता है

श्वस्म=उस पुरुष के विये
स्वाः=श्रपने ज्ञाति

च=श्रीर

श्रम्ये=गैर ज्ञाति के जोग
दद्ति=सेवा सरकार करते हैं

च=श्रीर

प्वम्=हसी प्रकार

यम्=य इति=ऐसे एकम्=एक अक्षरम्=अक्षर को यः=जो वेद=जानता है सः=वह पुरुष स्वर्गम्=स्वर्ग लोकम्=लोक को

भावार्थ ।

हे शिष्य ! हृदय प्रजापति है, श्रीर कोई श्रन्य पुरुष प्रजापति नहीं है, यही हृदय महान् अनन्त ब्रह्म है, जो कुछ ब्रह्मागड विषे स्थित है. वह यही ब्रह्म है, हृदय में तीन श्रक्षर हैं, उनमें से एक श्रक्षर 'हूं' है, जो 'हुन्' धातु से बना है, क्यों कि इसमें सब विषयों का भोग इन्द्रिय द्वारा प्राप्त होता है, श्रीर इसीमें इन्द्रियगण श्रीर शब्दादि विषय आपने आपने कार्य को करते हैं, यानी इन्द्रिय विषयों को प्रहशा करती हैं ऋौर शब्द, स्पर्श, रूपादि विषय अपने को अर्पगा करते हैं, जो उपासक इस हृदय ब्रह्मको ऐसा जानता है उसके बान्धव ऋौर अपन्य पुरुष उसकी सेवा सत्कार करते हैं, श्रीर जी हृदय में दूसरा आक्षर "द" है, वह दा धातु से निकला है, जिसका अर्थ दयन करना है. यानी इन्द्रियों ख्रोर विषयों को दमन करना चाहिये जो उपासक ऐसा "द" का अर्थ समभता है, उसको भी निज ज्ञाति और पर ज्ञाति के लोग धन आदि समर्पण करते हैं, श्रीर प्रतिष्ठा देते हैं, हृदय में तीसरा अक्षर "य" है जो इसा धात से निकला है, जिसके माने गमन के हैं, जो उपासक हृदय में य श्रक्षर को ऐसा जानता है वह हृदय द्वारा स्वर्ग को प्राप्त होता है, इसी हृदय की छोर ज्ञानी पुरुष जाते

हैं, सब कार्य के करने में हृदयही मुख्य है. जिसका हृदय द्वील है. वह परुषार्थ के करने में आसमर्थ है. सोई यह इदय निश्चय करके प्रजापति है, हृदय में तीन श्रक्षर है, हू., द., य., हू-का श्रर्थ प्रह्ण करना है, यानी जो कुछ प्रहरा करने में स्थाता है वह सब ब्रह्मही है, "द" का अर्थ दान का देना है, इन्द्रियों का दमन करना है श्रीर जीवों पर दया करना है, जिस शक्ति करके जीवमात्र पर दया की जाती है, या इन्द्रियों का या शत्रक्यों का दमन किया जाता है, या क्क जिस किसी को दिया जाता है वह सत्र ब्रह्म है. जो उपासक हृद्य को ऐसा गुगावाला भावना करता है, वह देह त्यागानन्तर ब्रह्म कोही प्राप्त होता है, ऋौर यावत संसार विषे जीता है बड़ा पराक्रमी, तेजस्वी, वलवान . सबका नियामक होता है ॥ १ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मशाम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुथं वाह्मग्म्।

मन्त्रः १ तद्दे तदेतदेव तदास सत्यमेव स यो हेतं महत्रक्षं प्रथमजं वेद सत्यं ब्रह्मेति जयतीमाल्लोकाञ्जित इन्वसावसच एवमेतन्महचक्षं मथमजं वेद सत्यं ब्रह्मेति सत्यध्व ह्येव ब्रह्म ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥ पदच्छंदः।

तत्, वे, तत्, एतत्, एव, तत्, आस, सत्यम्, एव, सः, यः, ह, एतम्, महत्, यक्षम्, प्रथमजम्, बेद्, सत्यम्, ब्रह्म, इति, जयति. इमान्, क्षोकान्, जितः, इनु, श्रासी, श्रासत्, यः, एवम्, एतत्, महत्, यक्षम्, प्रथमजम्, वेद, सत्यम्, ब्रह्म, इति, सत्यम्, हि, एव, ब्रह्म ॥ श्रन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

तत् वै=वही पूर्वीक हृदय तत्=ग्रन्य प्रकार से + कथ्यते=वर्णन किया जाता है सत्यम ध्व=सत्य निश्चय करके

पतत् पव=यही + तत्=वह ब्रह्म

श्चास=होता भवा यः=जो यः=जो कोई एवम्=जपर कहे हुये प्रकार प्रथमजम्=पहिले उत्पन्न हुये पतत्=इस महत्=बड़े महत=बड़े यक्षम्=पूज्य प्तम्=इस हदयरूवी बझको यक्षम्=पृज्य ह=स्पष्ट प्रथमजम्=प्रथम उत्पन्न हुये एव=निश्चय करके ब्रह्म को वेद=जानता है श्रसत्=श्रसत् + सः=वही पुरुष वेद=जानता है यः=जो कोई उपासक सत्यम्=सत्य व्रह्म=बह्म + एवम्≔इस प्रकार + भवति=होता है एतत्=इस हृदय को + च=और महत्=महान् इति=इसी कारया यक्षम्=पृज्य प्रथमजम्=श्रयज सः≃वह इमान्=इन सब सत्यम्≈सत्य लोकान्=कोकों को ब्रह्म=ब्रह्म जयति=जीतता है इति=करके इनु=इसके विपरीत वेद=जानता है श्रसौ=वह + सः≔वह + अज्ञानी } = अज्ञानी पुरुष + पुरुषः } + विजयी=विजयी + भवति=होता है श्चानिना=ज्ञानी पुरुष करके हि=क्योंकि जितः=पराजित ब्रह्म=ब्रह्म + भवति=होता है सत्यम्=सत्य है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! इस हृदय को घ्यन्य प्रकार से वर्णन करते हैं, यही सत्यरूप है, यह सदा घ्यात्मा के साथ विद्यमान रहता है, जो कोई इस हृदय को महान् पुत्र्य प्रथमज ग्रोर कात्यन्त सत्य मानता है, वह इन सब कोकों को जीतता है, झौर इसके विपरीत इस हृदय को जो आसत्य मानता है, वह अज्ञानी पुरुष ज्ञानी करके सदा जीता जाता है, अर्थात् जो हृदय को असत्य माननेवाला है वह वारवार मृत्यु भगशान के मुख में गिरा करता है. आशय इस मन्त्र का यह है कि यह हृदय सत्य है, और अतिशय महान है, इस हृदय के स्वरूप का ज्ञान होने से पुरुष आज्ञानी बना रहता है, इसिलये अपृषि कहते हैं हे शिष्यो ! इस हृदय कोही सत्य पूज्य महान समम्मो, इसीसे तुम्हारा करूया छ होगा ॥ १॥

इति चतुर्थे ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं बाह्मण्म्।

मन्त्रः १

श्राप एवेद्मथ्रे श्रासुस्ता श्रापः सत्यमस्रजन्त सत्यं ब्रह्म प्रजा-पति प्रजापतिर्देवाध्यस्ते देवाः सत्यमेवोपासते तदेतज्ञ्यक्षरथ्य सत्य-मिति स इत्येकमक्षरं तीत्येकमक्षरं यमित्येकमक्षरं प्रथमोत्तमे श्रक्षरे सत्यं मध्यतोऽन्तृतं तदेतदन्त्तसुभयतः सत्यंन परिष्रद्दीतथ्यं सत्यभूयमेव भवति नैवं विद्वाथ्यसमन्तत्थं हिनस्ति ॥

पदच्छेदः।

श्रापः, एव, इद्म्, श्रप्ने, श्रासुः, ताः, श्रापः, सत्यम्, श्रस्तान्त, सत्यम्, श्रद्धाः, प्रजापितः, देवान्, ते, देवाः, सत्यम्, एव, उपासने, तत्, एतत्, त्र्यक्ष्रम्, सत्यम्, इति, सः, इति, एकम्, श्रक्षरम्, ते, इति, एकम्, श्रक्षरम्, यम्, इति, एकम्, श्रक्षरम्, प्रथमोत्तमे, श्रक्षरं, सत्यम्, मध्यतः, श्रानुतम्, तत्, एतत्, श्रानुतम्, उभयतः, सत्येन, परिगृहीतम्, सत्यमूयम्, एव, भवति, न, एवम्, विद्वांसम्, श्रानृतम्, हिनस्ति ॥

अन्वयः

पदार्थाः

ार्थाः । अन्वयः

पदार्था

आपः=यज्ञादिकर्म एच=ही इद्म्=यह नाम रूपात्मक जगत् श्राग्रे=पहिले श्रासुः≔होता भया ताः=वे श्रापः≔कर्म सत्यम्=सत्य ज्ञान को श्चार्जन्त=डत्पन्न करते भये + तत्=वही सत्यम्≔सस्य व्रह्म=ब्रह्म प्रजापितम्=प्रजापित विराट् को + श्रसृजत=उत्पन्न करता भया प्रजापतिः=प्रजापति देवान्=देवें। को + अस्जत=उत्पच करता भया तत्=इस विये त=वे देवाः=देवता सत्यम्≃सस्य की

पव=ही उपासते=उपासना करते हैं

पतत्=यही सत्यम्=सस्य

प्यक्षरम्=तीन श्रक्षर

इति=करके

विरुयातम्=विरुयात है

+ तेषु=तिनमें

सः≃स

इति=ऐसा पकम्≕एक अक्षरम्=अक्षर है ति≕त इति=ऐसा एकम्=एक श्रक्षरम=श्रक्षर है यम्=य इति=ऐसा एकम्=एक श्रक्षरम्=श्रक्षर है + तत्र=तिनमें प्रथमोत्तमे=पहिचा श्रीर तीसरा ग्रक्षर=चक्षर सत्यम्=सत्य है मध्यतः=बीचवाला श्रनृतम्=तकार श्रसत् है तत्=वही एतत्=यह श्चनृतम्=तकार उभयतः=दोनों तरफ से सत्येन=सकार यकार करके परिगृहीतम्=ज्याप्त है + श्रतः=इसी से + तत्=वह + अनुतम्=तकार सत्यभूयम्=सत्य के तगभग एव=ही भवति=होता है एवम्=ऐसे

विद्वांसम्=विद्वान् को श्रनृतम्=श्रसत्य न एव=कभी नहीं हिनस्ति=संसार में गिराता है

भावाथे।

हे शिष्य ! यहादि जो कर्म हैं वही यह नामरूपात्मक जगत् है, उसी यहादि कर्म करके सत्यहान की उत्पत्ति होती भई. वही सत्यह्यान से विराट्ष्प प्रजापित उत्पन्न होताभया, और प्रजापित से देवता लोग उत्पन्न होते भये, इसीलिये देवता लोग सत्यन्नह्यकी ही उपासना करते हैं, यह सत्य तीन अक्षरवाला संसार में विख्यात है, इस सत्य शब्द में एक पहिला अक्षर "स" है, दूसरा अक्षर मध्य का "त" है और तीसरा अक्षर अन्त का "य" है. पिहला और तीसरा अक्षर सत्य है, क्यों कि सा में "अ" और या में "अ" स्वरहोने के कारण विना सहायता के बोले जाते हैं, और दोनों के मध्य में जो "त" अक्षर है वह व्यक्षन है, वह वरीर सहायता स्वर के नहीं बोला जाता है, इस कारणा "स—य" सत्य हैं. और "त" असत्य हैं. "स" अक्षर से मतलब नहासे हैं, और " य" से मतलब जीव से हैं, और " त" असत्य हैं. "स" अक्षर से मतलब नाया दें हैं, यानी जीव और नहा के मध्य में सत् असत् से विलक्षण माया स्थित है, सोई आगे पीळे नहा करके व्यास है, जो विद्वान ऐसा जानता है उसको माया नहीं सताती है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

तचतत्सत्यमसौ स आदित्यो य एव एतस्मिन्मएडले पुरुषो यश्चायं दक्षिणोक्षन्पुरुषस्तावेतावन्योन्यस्मिन्मतिष्ठिनौ रश्मिभिरेषो-स्मिन्मतिष्ठितः प्राणौरयममुष्मिन्स यदोत्क्रमिष्यन्भवति शुद्धमेवैत-न्मएडलं पश्यति नैनमेते रश्मयः प्रत्यायन्ति !!

पदच्छेदः ।

तन्, यत्, तत्, सत्यम्, असौ, सः, आदित्यः, यः, एपः, एत-रिमन्, मगडले, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, दक्षिगो, अक्षन्, पुरुषः, तौ, एतौ, अन्योन्यस्मिन्, प्रतिष्ठितौ, रश्मिभः, एषः, आस्मिन्, प्रतिष्ठितः, प्रागौः, अयम्, अमुध्मिन्, सः, यदा, उत्क्रमिष्यन्, भवति, शुद्धम्, एव, एतत्,मगडजम्,पश्यति, न,एनम्, एते,ररमयः,प्रति, स्रायन्ति ॥

श्चान्वयः पदार्थाः श्रन्वयः यत्≕जो तत्=वह श्रस्मिन्=नेत्र में सत्यम्=सत्य है प्रतिष्ठितः=स्थित है तत्=वही + च=ग्रौर श्रसौ=यह श्चादित्यः=श्रादित्य है य:=जो अमुध्मिन्=सूर्व विवे एपः=यह + प्रतिष्टितः=स्थित है पुरुषः≃पुरुष प्तस्मिन्=इस मराडले=सूर्यमरहल में यदा=जब + अस्ति=ह उत्क्रमिष्यन्=मरने पर च=श्रौर भवति=होता है यः=जो + तदा=तब वह श्चयम्=यह + पुरुषः=पुरुष तापरहित दक्षिण=दहिने श्रक्षन्≔नेत्र में एतत्=इस + ग्रास्त=है पश्यति=देखता हं सः≔वही सत्यम्=सत्यबहा है + च=घौर ततः=इस निये पंत=ये तैं।=वही रश्मयः=किरणें पतेः≔ये दोनों सूर्वस्थ पुरुप पनम्=चक्षु विषे स्थित पुरुष के श्रीर नेत्रस्थ पुरुष प्रति=पास श्चन्योन्यस्मिन्=एक दूसरे में न=नहीं प्रतिष्टितौ=स्थित हैं पषः=यह सूर्यस्थ पुरुष

पदार्थाः रश्मिभः=किरणों करके अयम्=यह नेत्रस्थ पुरुष प्राणः=प्राणों करके सः=वह ऐसा विज्ञानमय

शुद्धम् एव=िकरणरहित यानी मराडलम् ⇒सूर्यमरहल को

श्रायन्ति=श्राती हैं यानी उसकी नहीं सताती हैं

भावार्ध ।

जो सत्य है वही झादित्य है, जो पुरुष सूर्यमगडल विषे स्थित है, वही पुरुष मनुष्य के दिहने नेत्र विषे है, सोई सत्य ब्रह्म है, इस लिये वे दोनों यानी सूर्यस्थ पुरुष ख्रोर नेत्रस्थ पुरुष एक दूसरे में श्थित हैं, यह मूर्यस्थ पुरुष किरगों करके नेत्र में स्थित है झोर नेत्रस्थ पुरुष प्राग्गों करके सूर्यविषे स्थित है, जब ऐसा वह विज्ञानमय पुरुष शारीर त्यागने पर होता है तब वह किरगारहित यानी तापरहित इस सूर्यमगडल को देखता है, और ये किरगों चक्षविषे स्थित पुरुष के पास नहीं झाती हैं, यानी उसको नहीं सताती हैं, आथवा वे किरगों चन्द्रमा के किरगों की तरह सुखदायी होती हैं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

य एप एतस्मिन्मएडले पुरुपस्तस्य भूसिति शिर एकछ शिर एकमेतदक्षरं भुव इति वाहू द्वी वाहू द्वे एते छक्षरे स्वरिति मितिष्टा द्वे मितिष्टे द्वे एते छक्षरे तस्योपनिपदहरिति हन्ति पाप्मानं जहाति च य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

य:, एषः, एतस्मिन्, मगडले, पुरुषः, तस्य, मू:, इति, शिरः, एकम, शिरः, एकम्, एतत्, आक्षरम्, सुवः, इति, बाहू, हो, बाहू, हो, एते, आक्षरे, तस्य, उपिष्ठप्, अहः, इति, हिन्त, पाप्मानम्, जहाति, च, यः, एवम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पतिस्मन्=इस मग्डले=सूर्यमग्डल में पपः=यह यः=जो सत्य यानी ब्यापक पुरुषः=पुरुष धे तस्य=डसका

शिरः=शिर
भूः इति=यह ष्टथ्वी है
+ यथा=जैसे
प्रकम्=एक संख्यावाद्वा
शिरः=शिर है
+ तथा=तैसेही

एकम्≔एक संख्यावाला एतत्=यह-भू श्रक्षरम्=श्रक्षर भी है तस्य=उस सत्यपुरुष का बाह=बाह इति=यह भुवः=भुवः हैं यथा=नेसे है।=दो संख्यावाला बाहू=बाहु हैं + तथः=वैसेही द्वे=दो संख्यावाला एते=यह " भुवः " श्रक्षरे=ग्रक्षर हैं च=धौर तस्य=उस पुरुप का प्रतिष्ठा=पैर इति=यह स्वः=स्वः हैं + यथा=जैसे

द्वे=दो संख्यावाला प्रतिष्ठे≕पैर हैं + तथा=तैसेही द्धे=दो संख्यावाला **ए**ते=यह अक्षर="स्वः" श्रक्षर भी हैं तस्य=उस सत्यव्यापक परुष + अभिश्वानम्=नाम उपनिषद्=उपनिषद् है यः=जो पतत्=इसको श्रहः इति=ग्रहः करके एवम्=इस प्रकार वेद=जानता है + सः=वह + पाप्मानम्=पाप को हान्त=नष्ट करता है + च=ग्रीर जहाति=स्यागता है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! इस सूर्यमगडल विषे जो पुरुष स्थित है उसका शिर पृथिवी है, जैसे शिर एक होता है वेसेही ये "मू" एक प्रश्नरवाला है, उस सत्यपुरुष का बाहु ये "मुवः" हैं, जैसे दो मुजा होते हैं वेसेही मुवः में दो प्रश्नर हैं, श्रीर उस सत्यपुरुष का पाद "स्वः" हैं जैसे पैर दो संख्यावाजा होता है वैसे "स्वः" भी दो ब्राश्चरवाला हे, उस सत्यव्यापक पुरुष का नाम उपनिषद् है यानी ज्ञान है, जो उपासक उसको "श्रहः करके" यानी प्रकाशस्वरूष करके जानता है, बह पाप को नष्ट श्रीर त्याग करता है ॥ ३॥

मन्त्रः ४

योऽयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषस्तस्य भूरिति शिरएकछं शिरएकमेतदक्षरं भुव इति बाहू द्वौ बाहू द्वे एते अक्षरे स्वरिति प्रतिष्ठा द्वे प्रतिष्ठे द्वे एते अक्षरे तस्योपनिषदह्मिति हन्ति पाप्मानं जहाति य एवं वेद ॥

इति पंचमं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥ पदच्छेदः।

यः, श्रायम्, दक्षिणे, श्राक्षन्, पुरुषः, तस्य, भूः, इति, शिरः, एकम्, एतत्, श्राक्षरम्, भुवः, इति, बाहू, द्वौ, बाहू, द्वौ, एते, श्राक्षरे, स्वः, इति, प्रतिष्ठा, द्वे, प्रतिष्ठे, द्वे, एते, श्राक्षरे, तस्य, धपनिषद्, श्राहम्, इति, हन्ति, पाप्पानम्, जहाति, यः, एवम्, वेद् ॥ श्रान्वयः पदार्थाः । श्रान्वयः पदार्थाः

यः=जो श्रयम्≕यह **पुरुषः**=पुरुष दक्षिगा=दहिने अक्षन्=नेत्र में + दृश्यतः=दिखाई देता है तस्य=डसका शिरः≕सिर भू:=भू इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि= श्योंकि + यथा≕जैसे एकम्=एक संख्यावाला शिरः=सिर है + तथा≔वैसाही एतत्=यह "भू" श्रक्षरम्=श्रक्षर भी एकम्≃एक संख्यावाला है तस्य=उसका वाह=बाह .

भुवः=भुवः इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि=क्योंकि + यथा=जैमे बाह्≕बाह द्यो=दो हैं तथा=वैसेही पते≃यह "भवः" भी द्धे=दो श्रक्षरे=श्रक्षरवाला है तस्य=उसका प्रतिष्ठा=पैर स्यः=स्वः इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि=क्योंकि + यथा=जैसे द्वे=दो संख्यावाला प्रतिष्ठे=पैर है + तथा=वैसेही पत=यह स्वः वानी सुवः द्वे=दो श्रक्षरे=श्रक्षरवाला है तस्य=उस सत्यटयापक पुरुष का + नाम=नाम उपनिपद्=ज्ञान है यः≔जो पतत=इस को

ग्रहः इति=ग्रहः करके इस रूप को एवम्=इस मकार वेद्⇒जानता है + सः=वह पाप्मानम्=पाप को हन्ति=नष्ट करता है च=ग्रीर जहाति⇒स्थाग देता है

भावाथे।

जो पुरुष प्रार्गामात्र के दिहने नेत्र में दिखाई देता है, इसका सिर "भू" है क्योंकि जैसे सिर एक होता है वैसेही यह भू श्रक्षर एक संख्यावाला है, उस व्यापक पुरुष का बाहु भुवः है जैसे बाहु दो संख्यावाला होता है वेसेही भुवः भी दो श्रक्षरवाला है, उसका पाद स्वः (सुवः) है क्योंकि जैसे पाद दो संख्यावाला है वेसेही स्वः दो श्रक्षरवाला है, उस सत्य व्यापक पुरुष का नाम उपनिषद् यानी ज्ञान है, जो उपासक उस व्यापक परमात्मा को श्रहः * करके यानी प्रकाश-स्वरूप करके जानता है, वह पापको नष्ट श्रीर त्याग देता है। ४।।

इति पञ्चमं ब्राह्मरणम् ॥ ४ ॥

श्रथ पष्टं ब्राह्मग्रम् । मन्त्रः १

मनोमयोऽयं पुरुषो भाःसत्यस्तस्मिन्नन्तर्हृद्ये यथा त्रीहिर्ना यवो वा स एप सर्वस्येशानः सर्वस्याविपतिः सर्वमिदं प्रशास्ति यदिदं किंच॥

इति पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥

अहः दो शब्दों से याना 'हन्' खोर 'हा' सं निकल सकता है, हन् का अर्थ नाश करना है और हा—का अर्थ झांडना है, तात्पर्य इसका यह है कि उपासक पाप को नाश कर देता है, और त्यागता है।

पदच्छेदः।

मनोमयः, श्रायम्, पुरुषः, भाःसत्यः, तस्मिन, श्रान्तर्हदये, यथा, त्रीहिः, वा, यवः, वा, सः, एषः, सर्वस्य, ईशानः, सर्वस्य, श्रश्चिपतिः. सर्वम्, इदम्, प्रशास्ति, यत्, इदम्, किंच ॥

श्चन्धयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह महान् पुरुषः=परमास्मा पुरुष मनोमयः=मनोमय है यानी ज्ञान विज्ञानसय है

भाःसत्यः=प्रकाश सत्य स्वरूप है अधिपतिः=स्वतन्त्र पातक है

सः=वही पुरुष

तस्मिन् } =उस हृदय विषे अन्तर्हृद्ये } यथा ब्रीहि:=धान के समान

वा=श्रथवा यघो वा=यव के समान स्थित है एषः=यही

सः=वह सर्वस्य=सब का ईशानः=ईश्वर है सर्वस्य=सब का

यत्=जो किंच=क्छ है इदम्=यह सर्वम्=सब है तत्≔उस सब को

प्रशास्ति=वह अपनी आज्ञा मं रखता है

भावार्ध ।

यह महान् परमात्मा पुरुष ज्ञानविज्ञानप्रकाशस्वरूप है, वही प्राग्ती के हृदय विषे धान श्रीर यव के बराबर स्थित है, यही सब का ईश्वर है, सब का ऋथिपति है, सब का पालन करनेवाला है, सब को अपनी आज्ञा में नियमबद्ध रखता है, श्रीर जो कुछ स्थावर जङ्गम संसार भासता है उन सब का वह कर्त्ता, धर्ता झौर हर्ता है ॥ १ ॥

इति षष्ठं ब्राह्मसाम् ॥ ६ ॥

श्रथ सप्तमं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

विद्युद्रहोत्याहुर्विदानाद्विद्युद्विद्यत्येनं पाप्मनो य एवं वेद विद्युद्र-ह्मेति विद्युद्धचेव ब्रह्म ॥

इति सप्तमं त्राह्मणम् ॥ ७ ॥

पदच्छेदः।

विद्युत्, ब्रह्म, इति, श्राहुः, विदानात्, विद्युत्, विद्यति, एनम्, पाप्मनः, यः, एवम्, वेद, विद्युत्, ब्रह्म, इति, विद्युत्, हि, एव, ब्रह्म ॥ पदार्थाः स्रन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः

ब्रह्म=ब्रह्म विद्युत्=विद्युत् है इति=ऐसा

श्राद्धः=जोग कहते हैं विद्युत्=विद्युत्

व्रह्म=ब्रह्म है इति एवम्=ऐसा इस प्रकार

यः=जो

वेद=जानता है

+ सः≔वह

एनम्=उसके वानी अपने

पाप्मनः=पार्थे को

विद्यति=नाश करदेता है

हि=क्योंकि एव=निश्चय करके

व्रह्म=बहा

विद्युत्=विद्युत् है यानी पाप-विदारक है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! सत्यस्वरूप ब्रह्म का वर्णन फिर करते हैं, ब्रह्मको विद्वान कोग विद्युत् कहते हैं, कारण इसका यह है कि वह पाप झौर अन्ध-कार को नाश करता है, जो उपासक ऐसा जानता है वह अपने पापों को नाश करता है, क्योंकि ब्रह्म निश्चय करके पापविदारक है ॥ १ ॥

इति सप्तमं ब्राह्मराम् ॥ ७ ॥

श्रथ श्रष्टमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

वाचं घेनुमुपासीत तस्याश्चत्वारः स्तनाः स्वाहाकारो वपद्का-रो इन्तकारः स्वधाकारस्तस्यै द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहाकारं च वषर्कारं च इन्तकारं मनुष्याः स्वधाकारं पितरस्तस्याः पाण ऋषभो मनो वत्सः ॥

इत्यष्टमं ब्राह्मणम् ॥ = ॥

पदार्थाः

पदच्छेदः ।

वाचम्, धेनुम्, खपासीत, तस्याः, चत्वारः, स्तनाः, स्वाहाकारः, वपट्कारः, हन्तकारः, स्वधाकारः, तस्ये, द्वौ, स्तनौ, देवाः, उपजीवन्ति, स्वाहाकारम्, च, वपट्कारम्, च, हन्तकारम्, मनुष्याः, स्वधाकारम्, पितरः, तस्याः, प्रागाः, श्रृषभः, मनः, वत्सः ॥

पदार्थाः | ऋन्वयः श्चन्वयः वाचम्=वेदवाणी को धनुम्=कामधेनु के समान उपासीत=उपासना करे तस्याः=उस गौके चत्वारः≔चार स्तनाः=स्तन स्वाहाकारः=स्वाहाकार वषट्कारः=वपट्कार ह्रन्तकारः=इन्तकार स्वधाकारः=स्वधाकार हैं तस्याः=उस घेनु के द्वी=दो स्तनी=स्तन स्वाहाकारम्=स्वाहाकार ==चौर वषट्कारम्=वपर्कार के आश्रय

देवाः=देवता

उपजीवन्ति⇒जीते हैं मजुष्याः=मनुष्य हन्तकारम्=इन्तकार स्तन के

श्राभ्रय

+ उपजीवन्ति≕जीते हैं च≕ग्रीर पितरः≕पितर जोग स्वधाकारम्≕स्वधाकार स्तन के

षाश्रय

उपजीवन्ति=जीते हैं तस्याः=उस गौ का ऋषमः=बैद्ध यानी स्वामी प्राणः=आया है + च=चौर वत्सः=बचा मनः=मन है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! सत्यब्रह्म की प्राप्ति का उपाय दिखजाते हैं, सो सावधान होकर सुनो, पुरुष वेदवास्त्री की कामधेतु गो के समान उपासना करें, जैसे गौके चार स्तन होते हैं वैसेही वेदरूपी गौके चार स्तन स्वाहाकार, वपट्कार, हंतकार ख्रोर स्वधाकार हैं, उनमें से दो स्तन स्वाहाकार ख्रोर वपट्कार के ख्राश्रय देवता जीते हैं, मनुष्य हंतकार के ख्राश्रय जीते हैं, झौर पितरलोग स्वधाकार स्तन के झाश्रय जीते हैं, ऐसे गौ का पति प्राग् है, झौर वचा मन है ॥ १॥ इति झप्टमं ब्राह्मग्राम् ॥ ⊏॥

श्रथ नवमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

श्रयमग्निर्वेश्वानरो योऽयमन्तःपुरुषे येनेदमन्नं पच्यते यदिद-मद्यते तस्येष योषो भवति यमेतत्कर्णाविषयाय शृक्णोति स यदो-त्क्रमिष्यन्भवति नैनं घोषं शृक्णोति ॥

इति नत्रमं ब्राह्मणुम् ॥ ६ ॥

पदच्छेदः ।

श्चयम्, श्चिनः, वैश्वानरः, यः, श्चयम्, श्चन्तःपुरुपे, येन, इदम्, श्चन्नम्, पन्यते, यत्, इदम्, श्चयते, तस्य, एषः, घोषः, भवति, यम्, एतत्,कर्गों, श्चिषधाय, श्वगोति, सः, यदा, उत्क्रिमिच्यन्, भवति, न, एनम्, घोषम्, श्वगोति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

श्चयम्=यह पच्यते=पचजाता है ऋग्निः=जठर ऋग्नि तस्य=इस अग्निका वैश्वानरः=वैश्वानर अग्नि है एषः=यह यः=जो घोषः=शब्द +तस्मिन्=उस श्रयम्=यह झन्तःपुरुषे=ुप्रव के भीतर + शरीरे=शरीर में + स्थितः=।स्थित है भवति=होता है + च=ग्रीर यम्=जिस येत=जिस करके एतत्=इसको तत्=जो कर्णी } =कानों के ढांकने पर स्रिपिधाय } इदम्=यह श्युगोति=पुरुष सुनता है अन्नम्=अन श्रद्यते=खायाजाता है यदा=जब + च=भौर सः≔वह उपासक

उत्क्रभिष्यम्=मरनेपर भवति=होता है + तदा=तब पनम्=इस घोषम्=शब्द को न=नहीं श्रुयोति=सनता है

मावार्थ।

हे शिष्य ! जो जठगिन सब शरीरों के भीतर विद्यमान है, सोई वैश्वानरनामक अग्नि है, उसीकी सहायता करके भिक्षत अन्न पच जाता है, उस वैश्वानर अग्नि का घोरशब्द शरीर में हुआ करता है, जब पुरुष हाथ लगाकर दोनों कानों को ढकता है, तब उसके अन्तर के शब्द को सुनता है, और जब वह मरनेपर होता है तब नहीं सुनता है, वैश्वानर अग्नि एक प्रकार का सामर्थ्य है, जिस करके शरीर की स्थित बनी रहती है, जैसे इस शरीर में वैश्वानर अग्नि रहता है, वैसेही इस ब्रह्मायडरूपी महान् शरीर विषे वैश्वानर सर्वन्यापी परमात्मा होकर संपूर्ण जगत् की स्थित का कारण होता है।। १।।

इति नवमं ब्राह्मशाम् ॥ ६ ॥

श्रथ दशमं वाह्मणम्। मन्त्रः १

यदा वे पुरुषोऽस्माञ्जोकात्मैति स वागुमागच्छति तस्मे स तत्र विजिहीते यथा रथचकस्य खं तेन स ऊर्ध्वमाकमते स आदित्य-मागच्छति तस्मे म तत्र विजिहीते यथा लम्बरस्य खं तेन स ऊर्ध्व-माकमते स चन्द्रमसमागच्छति तस्मे स तत्र विजिहीते यथा दुन्दुभेः खं तेन स ऊर्ध्वमाक्रमते स लोकमागच्छत्यशोकमहिमं तस्मिन्य-सति शाश्वतीः समाः ॥

इति दशमं ब्राह्मणम् ॥ १० ॥ पदच्छेदः ।

यदा, वै, पुरुषः, श्रास्मात्, लोकात्, प्रैति, सः, वायुम्, श्रागच्छति, तस्में, सः, तत्र, विजिद्दीते, यथा, रथचक्रस्य, खम्, तेन, सः, ऊर्ध्स्, आक्रमते, सः, आदित्यम्, आगच्छिति, तस्मै, सः, तत्र, विजिहीते, यथा, जम्बरस्य, खम्, तेन, सः, अर्ध्वम्, आक्रमते, सः, चन्द्रमसम्, आगच्छिति, तस्मै, सः, तत्र, विभिहीते, यथा, दुन्दुभेः, खम्, तेन, सः, अर्ध्वम्, आक्रमते, सः, लोकम्, आगच्छिति, अशोकम्, आहिमम्, तिस्मन्, वसति, शाश्वतीः, समाः ॥

अन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

यदा=जब
वै=निश्चय करके
पुरुष:=पुरुष
श्चरमात्=इस
लोकात्=लोक से
प्रेति=मरकर चला जाता है
+ तदा=तव पुरुष
घायुम्=वायु लोक को
श्चागच्छाति=प्राप्त होता है
तत्र=वहां
सः=वह वायु
तर्भे=उस पुरुष को
प्रयार्थ डे=पीहयाके जिद्रके समान

रधचकस्य } =पहियाके ब्रिद्धके समान खम् यथा } =पहियाके ब्रिद्धके समान विजिहीत=मार्ग देता है तेन=उस ब्रिद्ध करके सः=वह पुरुष ऊर्ध्वम्=अपर को झाक्रमते=जाता है + च=धौर फिर सः=वह आदित्यम्=सूर्यंबोक को

श्चागच्छति=माप्त होता है

तस्मै=उस पुरुष के जिये

सः≔वह सूर्य तत्र=उस घवस्था में लम्बरस्य=बाजे के खम्=छिद्र की यथा=तरह त्रातसक्ष्म विजिहीते=मार्ग देता है तेन=उस छेद के द्वारा सः≔वह पुरुष ऊर्ध्वम्=जपर को आक्रमत=जाता है + पुनः=िकर सः≔वह पुरुष चन्द्रमसम्=चन्द्रमा को आगच्छति=प्राप्त होता है तस्मै=उस पुरुष के लिये सः=वह चन्द्र तत्र=उस श्रवस्था में दुन्दुभेः=डमरू बाजे के खम्=छिद्र के यथा=समान विजिहीते=मार्ग देता है +पुनः=किर तेन=उस छिद्र के द्वारा सः≔बह पुरुष

ऊर्ध्वम्=जपर को

झाक्रमते=काता है + ख=भीर झशोकम्=शोकरहित झहिमम्=मानसिक दु:सरहित स्रोकम्=नद्या के बोक को

भागच्छुति=मास होता है तस्मिन्=वहां शाश्वतीः=निरन्तर समाः=वर्षोतक वस्ति=वास करता है

भावार्थ।

जब पुरुष इस लोक से मर कर चला जाता है, तब वह प्रथम बायुलोक में जाता है, वहां पर वायु उस पुरुष को उस ध्रावस्था में पिहिये के छिद्र के समान मार्ग देता है, उस छिद्र के हारा वह पुरुष उपर को जाता है, भौर सूर्यलोक में पहुँचता है, वहां पर उस पुरुष के लिये बाजे के छिद्र की तरह मार्ग देता है, उस मार्ग के हारा फिर उपर को. जाता है, भौर चन्द्रलोक में पहुँचता है, वहां पर उस पुरुष को चन्द्रमा डमरू बाजे के छिद्र के समान मार्ग देता है, ब्रां पर उस पुरुष का चन्द्रमा डमरू बाजे के छिद्र के समान मार्ग देता है, ब्रां पर उस मार्ग हारा वह पुरुष उपर को जाता है, श्रोर श्रन्त में शोकरहित मानसिक दुःखरहित प्रजापित के लोक को प्राप्त होता है, वहां पर बरसों तक निरन्तर वास करता है ॥ १॥

इति दशमं ब्राह्मग्राम् ॥ १० ॥

श्रथ एकादशं ब्राह्मग्रम् । सन्त्रः १

एतद्वे परमं तपो यद्वचाहितस्तप्यते परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेदितद्वे परमं तपो यं प्रेतमरएयछं हरन्ति परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेदेतद्वे परमं तपो यं प्रेतमग्नावभ्याद्वति परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेद ।।

इत्येकादशं ब्राह्मणम् ॥ ११ ॥ पदच्छेदः ।

एतत्, वे, परमम्, तपः, यत्, व्याहितः, तप्यते, परमम्, ह, एव, क्षोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद, एतत्, वे, परमम्, तपः, यम्, प्रेतम्,

श्चन्वयः

डारण्यम्, हरन्ति, परमम्, ह, एव, लोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद, एतत्, वे, परमम्, तपः, यम्, प्रेतम्, डाग्नी, डाभ्याद्धति, परमम्, ह, एव, लोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद ॥

पदार्थाः

पतत्=वही वै=िनस्सन्देह परमम्=श्रेष्ठ तपः=तप है यत्=जब व्याहितः=रोगश्रसित पुरुष तप्यते=ईरवरसम्बन्धी विचार करता है यः=जो पवम्=इस प्रकार वेद=जानता है + सः एव=वही परमम्≂श्रेष्ठ लोकम्=बोक को जयति=जीतता है यानी प्राप्त होता है

तपः=तप है + यदा=जब + ब्याहितः=रोगश्रसित पुरुष + तप्यते=ईश्वरविचार में परा-यख है

वै=निरचय करके

एतत्=यही

परमम्=परम

+ च=बौर + तस्यैवं } टुसको ऐसा स्याज विचारः } मी है कि श्चान्वयः

पदार्थाः

+ यम्=जिस + माम्=मुक प्रेतम्=मरे हुये को श्चरत्यम्=श्ररवय में +दीपनार्थम्=जलाने के लिये हरन्ति=लोग ले जायँगे यः=जो एवम्=इस प्रकार चेद=जानता है + सः=वह परमम्=श्रेष्ठ लोकम्=जोक को ह एव=निश्चय करके जयति=जीतता है यानी प्राप्त होता है एतत्=यही वै≕िन स्स**न्देह** परमम्=परम तपः=तप है

+ यदाः=जिस काल में + क्याहितः=रोगमसित पुरुष + तप्यते=ईश्वर के विचार में तत्पर है च=भौर

+ तस्यैवं } = उसका ख्यास है कि विचारः } मामू=मुक

प्रेतम्≔मरे हुये को स्राग्नी=स्राग्नि में स्रभ्याद्धति=रक्केंगे यः=जो एवम्=इस प्रकार वेव्=जानता है सः पव=वही

परमम्=श्रेष्ठ

स्रोकम्=क्षोक को

जयित=जीतता है यानी प्राप्त
होता है

भावार्थ ।

जो पुरुष रोगप्रसित ह. और मृत्यु उसके निकट खडा है. पर उसका चित्त ईश्वर में लगा है, और इस अपने विचाररूपी तप की भलीप्रकार जानता है, वह देह त्यागने के पश्चात श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होता है. उस पुरुष का भी यह श्रेष्ट तप है जो रोगों से तो प्रसित है. और मृत्य जिसके समीप आन पहुचा है परन्त बहु अपने विचार में तत्पर है, श्रीर यहभी उसको ख्याल होरहा है कि मुक्को भेरे मरने के पीछे मेरे ज्ञाति के लोग अरुएय में मेरे मृतक शरीर को जलाने के लिये ले जायें। ऐसा ज्ञानी पुरुष श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होता है यह उस ज्ञानी का भी श्रेष्ठ तप है जो रोग से तो श्रसित है और जिसके निकट मृत्य आपहुँचा है, परन्तु उस हालत में भी वह ईश्वरके विचार से शुन्य नहीं है, ऋौर उस हालत में उसको चिन्ता होरही है कि मेरे मृतक शरीर को लोग थोड़े काल पीछे अपिन में रक्खेंगे. ऐसा दृढ ज्ञानी पुरुष अवश्य श्रेष्ठ लोकों को जीतता है, जैसे श्रेष्ठकर्मी पुरुष जब गृहस्थाश्रम को त्याग कर वानप्रस्थ आवस्था को धारता कर धारणय को जाता है और उसी अवस्था में शरीर को त्याग करता है तो जिन श्रेष्ठ कोकों को वह प्राप्त होता है वैसेही उन्हीं उन्हीं लोकों को ज्ञानी घरमें ही मरने के पश्चात ईश्वरसम्बन्धी विचार करने के कारण प्राप्त होता है, श्रीर जैसे शुभकर्मी शरीरत्यागानन्तर श्राग्न में प्रवेश करके पापों से निर्मल होकर जिन जिन जोकों को प्राप्त होता है वैसेही उन्हीं जोकों को वह जानी भी अपने घरमें ही शरीर त्याग

के पश्चात् प्राप्त होता है, जो रोगप्रसित है और जिसको सृत्यु ने आनकर घेर जिया है, परन्तु अपने दृढ़विचार से हृदा नहीं है और यहभी उसको मालूम है कि थोड़ेही काज पीछे मेरे सृतक शरीर को मेरे सम्बन्धी अग्नि में दाह करेंगे।। १।।

इति एकादशं ब्राह्मग्रम् ॥ ११ ॥

श्रथ द्वादशं बाह्मग्रम्। मन्त्रः १

श्रमं श्रमेत्येक श्राहुस्तन्न तथा पृथित वा श्रममृते प्राणात्प्राणो श्रम्भेत्वेक श्राहुस्तन्न तथा शृष्यित वे प्राण ऋतेऽन्नादेते ह त्वेव देवते एकधामृयं भूत्वा परमतां गच्छतस्त द्धस्माऽऽह पातृदः पितरं किछेस्विद्धेवं विदुषे साधु कुर्या किमेवास्मा श्रमाधु कुर्यामिति स ह स्माऽऽह पाणिना मा पातृद कस्त्वनयोरेकधाभूयं भूत्वा परमतां गच्छतीति तस्माउ हैतदुवाच वीत्यन्नं वै व्यन्ने हीमानि सर्वाणि भूतानि विष्टानि रिमिति प्राणो वे रं प्राणे हीमानि सर्वाणि भूतानि रमन्ते सर्वाणि ह वा श्रसिन-भूतानि विश्नित सर्वाणि भूतानि रमन्ते य एवं वेद ॥

इति द्वादशं ब्राह्मणम् ॥ १२ ॥

अज़म्, जहा, इति, एके, आहुः, तत्, न, तथा, प्यति, वा, अज़म्, ज़म्ते, प्राग्धात्, प्राग्धः, जहा, इति, एके, आहुः, तत्, न, तथा, ग्रुष्यति, वे, प्राग्धः, ज्ञ्चते, अञ्चात्, एते, ह, तु, एव, देवते, एकधा मूयम्, भूत्वा, परमताम्, गच्छतः, तत्, ह, सम, आह, प्रातृदः, पितरम्, किम्, स्वित्, एव, एवम्, विदुषे, साधु, कुर्याम्, किम्, एव, अस्मै, असाधु, कुर्याम्, इति, सः, ह, सम, आह, पाग्धाना, मा, प्रातृत, कः, तु, अनयोः, एकधा-मूयम्, भूत्वा, परमताम्, गच्छति, इति, तस्मै, च, ह, एतत्, खवाच, वि, इति, अञ्चम्, वे, व्यन्ने, हि, इमानि, सर्वाधा, भूतानि, विद्यानि, सम्, इति, प्राग्धः, वे, रस्, प्राग्धे, हि, इमानि, सर्वाधा, भूतानि, रमन्ते, एम्, इति, प्राग्धः, वे, रस्, प्राग्धे, हि, इमानि, सर्वाधा, भूतानि, रमन्ते,

सर्वाग्यि, इ, वा, ऋस्मिन्, भूतानि, विशन्ति, सर्वाग्यि, भूतानि, रमन्ते, यः, एवम्, वेद् ॥

श्चास्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

म्रजम्=अक्ष ब्रह्म=ब्रह्म है इति=ऐसा एके=कोई माचार्य ह=स्पष्ट श्चाहुः≔कहते हैं किन्तु=किन्तु तत्=वह तथा=ऐसा न=नहीं है + हि=क्योंकि अन्नम्=श्रव भ्राते=विना प्राणात्=प्राण पुयति=दुर्गन्ध को प्राप्त होताहै एके=कोई भाचार्य इति=ऐसा त्राहुः=कहते हैं कि · प्रागः=प्राय ही ह≕निश्चय करके ब्रह्म=ब्रह्म है + किन्तु≔किन्तु तत्≔वह तथा=ऐसा न=नहीं है + हि=क्योंकि प्राणः=प्राण . अजात्=जन

फ्राते≕विना शुष्यति=सृख जाता है ह तु एव=इस पर + एके=कोई भाषार्थ ह इति=ऐसा निरंचय करके आह=कहता है कि देवते=ये दोनों देवता यानी सब सीर प्राया एकधाभूयम्=एक भूत्वा=होकर परमताम्=बडे महत्त्व को गच्छतः=प्राप्त होते हैं या प्राप्त करते हैं तत् ह=इस पर प्रातृदः=प्रातृद ऋषि पितरम्=भवने विता से आह स्म=पृक्ता है कि एवम्=ऐसे माननेवाले विदुष=विद्वान् के विषे किं स्वित्=श्या साधु=सत्कार कुर्याम्=में कहं च=मीर किमेव≕या अस्मै=इस विद्वान् के बिये श्रसाधु=तिरस्कार कुर्याम्=करूं

ह⇒तव

सः=वह पिता पाणिना=हाथ से + वारयन्=निषेध करता हमा इति≕ऐसा आह स्म=कहता भया कि प्रात्द=हे प्रात्द ! मा=मत वोचः=ऐसा कहो अनयोः=अब और प्राण में एकध(भूयम्=एकताभाव भूत्वा=मान कर . कः=कौन पुरुष परमताम्=श्रेष्ठता को गच्छति=प्राप्त होता है अर्थात् कोई नहीं + पुनः≕िकर अपने तस्मै=डस पुत्र से उ ह=स्पष्ट इति=ऐसा उ ह एतत्=यह बात उवाच=कहा कि श्रद्भम्=श्रव इति=ही चि=वि है वै=निश्चय करके हि=क्योंकि व्यक्रे≔विरूप अन में ही

इमानि=यह सर्वाणि=सब भतानि=प्राची विष्यानि=प्रविष्ट हैं रम्=र रूपी इति=निरचय करके प्रागः≔प्राग है वे हि=क्योंकि रम्=र रूपी प्रागो=प्राय में ही इमानि=ये सर्वाशि≕सब भूतानि=प्राची रमन्ते=रमण करते हैं यः≕जो एवम्=ऐसा वेद=जानता है श्रास्मिन्=उसमें सर्वाशि≕सब जीव ह वा=निरचय करके विशान्ति=प्रवेश करते हैं + च=श्रीर अस्मिन्=इसी में सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी रमन्ते=रमण करते हैं यानी वह ब्रह्मरूप होजाता है

भावार्थ ।

प्रातृद ऋषि अपने पिता से कहता है कि कोई आचार्य कहते हैं कि अन्नही ब्रह्म है, यानी ब्रह्म की तरह यह भी पूज्य है, सो ऐसा नहीं है, क्योंकि प्राया के विना अन्न सड़जाता है, और उसमें दुर्गन्य

आने जगती है, ब्रह्म न सहता है और न उसमें दुर्गन्थ आती है, कोई आचार्य कहते हैं कि प्राग्रही ब्रह्म है. सो भी ठीक नहीं कहते हैं. क्यों कि अन के विना प्राण् सूख जाता है, ब्रह्म सूखता नहीं है, इस लिये न केवल अन्न ब्रह्म करके मन्तव्य है, न केवल प्रांगा ब्रह्म करके मन्तन्य है. पर जब ये दोनों एकता की प्राप्त होते हैं तब दोनों मिल कर ब्रह्मभाव को प्राप्त होते हैं, जो कोई अन्न और प्राणा को इस प्रकार जानता है उस विद्वान के लिये न कोई सत्कार है, न कोई असरकार है, क्योंकि ऐसे पुरुष नित्यतम श्रीर कुतकृत्य होते हैं. पुत्र के इस सिद्धान्त को जान कर हाथ से निपेध करता हुआ पिता कहने लगा कि हे पुत्र, प्रातृद ! तुम ऐसा मत कहो कौन पुरुष आत्र और प्राग्त को एक मानकर महत्त्व को प्राप्त होता है, यानी कोई नहीं प्राप्त होता है. फिर पुत्र से पिता ने कहा कि हे पुत्र ! निश्चय करके अप्रजही "वि" है, क्योंकि "वि" का अर्थ वेश यानी प्रवेश है. इस लिये "वि" अपन को कहते हैं कारण इसका यह है कि अन में ही सब प्राणी प्रविष्ट हैं, हे पुत्र ! "र" को प्रामा कहते हैं क्योंकि सब प्रामियों का रममा प्रारा में ही होता है. जो विद्वान पुरुष ऐसा जानता है उसी में सब जीव रमगा करते हैं यानी वह ब्रह्मभाव को प्राप्त होता है ॥ १ ॥

इति द्वादशं ब्राह्मणम् ॥ १२ ॥

श्रथ त्रयोदशं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

जन्यं प्राणो वा जन्यं प्राणो हीदॐ सर्वमुत्यापयत्युद्धास्मादु-क्थविद्वीरस्तिष्ठस्युक्थस्य सायुज्यॐ सलोकतां जयति य एवं वेद् ॥ पवच्छेदः।

जक्थम्, प्रात्मः, वा, जक्थम्, प्रात्मः, हि, इदम्, सर्वम्, उत्थाप-यति, उत्, ह, झ्रस्मात्, उक्थवित्, वीरः, तिष्ठति, जक्थस्य, सायु-ज्यम्, सलोकताम्, जयति, यः, एवम्, वेद ॥ भ्रम्बयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्राणः=माण
वै=ही

छक्थम्=उक्थ है

+ इति=इस प्रकार

उक्थम्=उक्थ की

+ उपासीत=उपासना करे

हि=क्योंकि

प्राणः=प्राण

इदम्=इस

सर्वम्=सकको

उत्थापयित=उठाता है

ग्रमात् } पेसे उक्थ के जानने
+उपासकात् } वाजे पुरुष से

उक्थिवत्=प्राण का जाननेवाजा

वीरः≔र्षर
+ पुत्रः=पुत्र
उत्तिष्ठाति=उत्पन्न होता है
यः=जो
प्वम्=इस प्रकार इसको
ह=स्पष्ट
धेद=जानता है

सः=वह उक्थस्य=उक्थ के सायुज्यम्=सायुज्यता को + च=श्रीर

सालोक्यताम्=सालोक्यता की जयति=प्राप्त होता है

भावार्थ।

हे शिष्य ! प्राग्राही उक्थ है, उक्थशन्द उन् श्रीर स्था से बना है, जिसका श्रर्थ उठना है, यह में उक्थ शस्त्र पढ़ने से श्रृतिज् उठ बैठते हैं, श्रीर श्रपना श्रपना कार्य करने जगते हैं, इसी प्रकार शरीर में प्राग्र जनतक चला करता है तनतक ऋत्विज् रूप सन इन्द्रियां श्रपना श्रपना कार्य किया करती हैं, यह उक्थ श्रीर प्राग्र की साहरयता है, यानी जैसे प्राग्र के सहारे से सन इन्द्रियां श्रथना प्राग्रीमात्र श्रपना श्रपना कार्य करते हैं तैसेही उक्थशस्त्र के यहां में पढ़ने से सन ऋतिज् उठकर श्रपना श्रपना कार्य करने जगते हैं, इस प्रकार उक्थोपासना कर्त्तन्य है, क्योंकि प्राग्राही सन को उठाता है, जो उक्थ का श्रर्थ ऐसा समझता है, वह वीर पुत्र को उत्पन्न करता है, इस कारग्र उक्थ प्राग्र कहा गया है, श्रीर जो इसको जानता है, वह उक्थ सायुज्यता श्रीर साक्रीकता को पाता है। १॥

मन्त्रः २

षजुः माणो वै यज्ञः प्राणे शिमानि सर्वाणि स्तानि बुज्यन्ते युज्यन्ते हास्मै सर्वाणि भूतानि श्रेष्टचाय यज्जुषः सायुज्यण्धं सलोकतां जयति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

यजुः, प्राग्यः, वै, यजुः, प्राग्ये, हि, इमानि, सर्वाग्यि, भूतानि, युज्यन्ते, युज्यन्ते, ह, अस्मै, सर्वाग्यि, भूतानि, श्रेष्ठयाय, यजुषः, सायु-ध्यम्, सलोकताम्, जयति, यः, एवम्, वेद् ॥

सन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्राणः=प्राण थै=ही यजुः=यजु है + प्राणम्=प्राण को हति=हस प्रकार + उपासीत=उपासना करे हि=क्योंकि हमानि=थे सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी प्राणे=प्राण मेंही थउयस्ते=समेवन करते हैं

+ ग्रतः=इसी से

अस्मै=इस पुरुष के निमित्त

भूतानि=प्रायी
श्रेष्ठयाय=श्रेष्ठता के वास्ते
युज्यन्ते=व्यत होते हैं
यः=त्रो पुरुष
प्रयम्=ऐसा
वेद=जानता है
+ सः=वह
यज्जषः=यजु के
सायुज्यम्=सायुज्यता को
च=त्रोर
सलोकताम्=संस्रोकता को

जयति=प्राप्त होता है

सर्वाणि=सब

भाषार्थ ।

हे शिष्य ! प्रागाही यजु है, यानी देह संघात से सम्बन्ध करने बाजा है, यजुसे मतलब यहां यजुवेंद से नहीं है, किन्तु इसका अर्थ 'युजिर योगे' धातु से है, क्योंकि शरीर और इन्द्रिय में कार्य करने की शक्ति जभी होती है जब प्रागा का सम्बन्ध इनके साथ होता है ऐसा समम्मकर पुरुष प्राण की उपासना करे, क्योंकि सब प्राणीमात्र प्राण में ही संमेलन करते हैं, और इसी कारण इस पुरुष को श्रेष्ठ पदवी देने के लिये तच्यार होते हैं, जो ऐसा जानता है, वह यजु यानी प्राण के सायुज्यता और सलोकता को प्राप्त होता है।। २।।

मन्त्रः ः

साप पाणो वै साप पाणे हीमानि सर्वाणि भूतानि सम्यश्चि सम्यश्चि हास्मे सर्वाणि भूतानि श्रेष्टचाय कल्पन्ते साम्नः सायुज्यध्थ सत्तोकतां जयति य एवं वेद ॥

. पद्च्छेदः ।

साम, प्राक्षाः, वै, साम, प्राक्षे, हि, इमानि, सर्वािक्षा, भूतािन, सम्यिक्ष, सम्यिक्ष, ह, अस्मै, सर्वािक्षा, भूतािन, श्रेष्ठयाय, कल्पन्ते, साम्नः, सायुज्यम्, सल्लोकताम्, जयित, यः, एवम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

हि=क्योंकि
इमानि=ये
सर्वाणि=सव
भूतानि=प्राणी
चै=निश्चय करके
प्राण्=प्राण मेंही
सम्यञ्चि=संयुक्त होते हैं
+ झतः=इसी कारण
प्राणः=पाणही
साम=साम है
साम=साम का
यः=जो
उपासीत=उपासना प्राण

+ उपासीत=डपासना प्राय जान कर करे श्रस्मै=उस उपासक की सेवा के जिये सर्वाणि=सब न्वयः पदाधाः
भूतानि=प्राणी
सम्यञ्चि=उद्यत होते हैं

+ च=और
ह=निश्चय करके

+ तस्य=उस उपासक की
श्रेष्ठद्याय=श्रेष्ठता के बिये
करुपन्त=तस्यार होते हैं
यः=जो उपासक
पद्यम्=ऐसा
वेद=जानता है
सः=वह
साम्यः=सायुज्यता को

+ च=ग्रीर
सलोकताम्=सायोज्यता को

जयति=मास होता है

भावार्थ ।

प्राग्ति साम है, सामपद का द्र्यर्थ सामवेद नहीं है, किन्तु सामका द्र्यर्थ संमेजन या सम्बन्ध से है, क्येंकि सब प्राग्ती प्राग्त में प्रविष्ट होते हैं, जो सामरूपी प्राग्त की उपासना इस प्रकार करता है उस उपासक को महत्त्व पदवी देने के लिये प्राग्तीमात्र उद्यत होते हैं।। ३।।

मन्त्रः ४

क्षत्त्रं प्राणो वै क्षत्त्रं प्राणो हि वै क्षत्त्रं त्रायते हुनं प्राणः क्षिणितोः प्रक्षत्रमत्रमामोति क्षत्रस्य सायुज्यक्ष्यं सलोकतां जयति य एवं वेद ॥

इति त्रयोदशं ब्राह्मणम् ॥ १३ ॥ पदच्छेदः।

श्चत्त्रम्, प्राणाः, वै, श्वत्त्रम्, प्राणाः, हि, वै, श्वत्त्रम्, त्रायते, ह, एनम्, प्राणाः, श्वणितोः, प्र, क्षत्रम्, त्रात्रमे, त्राप्तोति, श्वत्रस्य, साथु- क्यम्, सलोकताम्, जयति, यः, एवम्, वेद ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

प्रः पदार्थाः प्राप्नोति=प्राप्त होता है यानी जीवन योग्य होता है

जावन याग्य इति=इस प्रकार श्रञ्जम्=क्षत्र को झात्वा⇒जान कर + उपासीत=उपासना करै

यः=जो

प्वम्=इस तरह वेद्=जानता है

+ सः=वह क्षञ्रस्य=क्षत्र के

सायुज्यम्=सायुज्यता को .

+ च=श्रौर

सलोकताम्=सालोक्यता को जयति=प्राप्त होता है

प्राणः=प्राण चै=ही सत्त्रम्=क्षत्र है हि=क्गोंकि प्राणः=प्राण चै=ही एनम्=इस देह की ह=निश्चय करके शाणितोः=अक के घाव से बचाता है अतः=इसी कारण अत्रम्=औरों करके नहीं रक्षा किया हुआ सत्त्रम्=क्षीत्रय प्राण्म्=जीवन को भावार्थ ।

प्रागाही श्रम्भ है, क्योंकि प्रागाही देह को शक्त के घाव से बचाला है, यानी जब कोई शक्त किसी के शरीर में लगजाता है झौर उससे घाव पैदा होजाता है तब प्रागा के होने के कारण झौषधी करके घाव भर जाता है, झौर पुरुष अच्छा होजाता है, प्रागा को श्रम्भ इस कारण कहा है कि जैसे श्रम्भिय किसी का सहारा न करके अपने वीर्य पराक्रम से अपनी झौर दूसरे की रक्षा करता है, उसी तरह प्रागा भी किसी इन्द्रिय का सहारा न लेकर अपनी झौर दूसरे की रक्षा करता है, इस प्रकार प्रागा को श्रम्भ जानकर प्रागा की उपासना करें, जो पुरुष ऐसा लाचता है, वह श्रम्भरूपी प्रागा के सायुज्यता झौर सालोक्यता को प्राप्त होता है। ४।।

इति त्रयोदशं ब्राह्मग्रम् ॥ १३ ॥

श्रथ चतुर्दशं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

भूमिरन्तरिक्षं चौरित्यष्टावक्षराएयष्टाक्षरः ह वा एकं गायज्ये पद-मेतदु हैवास्या एतत्स यावदेषु त्रिषु लोकेषु तावद्ध जयति योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

पदच्छेदः ।

भूमिः, अन्तरिक्षम्, चौः, इति, अष्टौ, अक्षराग्रि, अष्टाक्षरम्, इ, बा, एकम्, गायभ्रये, पदम्, एतत्, च, इ, एव, अस्याः, एतत्, सः, यावत्, एषु, त्रिषु, लोकेषु, तावत्, ह, जयति, यः, अस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद ॥

भ्रन्वयः पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

भूमिः=म्, मि, श्रन्तरिक्षम्≔म, न्त, रि, स, श्रीः≔दि, सो, इति=इस प्रकार अष्टी≔भाव अक्षराश्चि=मक्षर हैं ज=मीर यतत्≕सोई श्रष्टाक्षरम्=माठ मक्षर वासा

गायश्यै=गायश्री का

एक यानी "तत्, स, वि,तु,र्व,रे,(ययम्) वि,यम्" ‡ पाद् है

> यः≕नी श्रस्याः=इसके यानी गायत्री के षतत्=इस एक पाद को ह=भर्जा प्रकार

घेद्=जानता है यः=जो

श्चास्याः=इस गायश्री के

पतत्≔इस यटम= एक प

पदम्=एक पाद को एवम्=कहे हुये प्रकार

ह=भवी प्रकार

धेद्≔जानता है

सः≃वह

एषु=इन त्रिषु=तीनों

लोकेषु=लोकों में

यावत्≕िजतना

प्राप्तव्यम्=प्राप्तव्य है

तावत् ह=उतने सब को जयति=जीतता है पानी पाताहै

भावार्थ ।

हे शिष्य ! भूमि में दो आक्षर भू, मि, और अन्तरिक्ष में चार अक्षर अ, न्त, रि, क्ष, और दों में दो अक्षर दि, और औ, इस प्रकार सब मिलाकर आठ अक्षर होते हैं, और गायत्री के प्रथम पद में भी आठ अक्षर ''तत्, स, बि, तु, र्व, रे, (ययम्) शि, यम् '' होते हैं, इस िलये गायत्री का प्रथम चरणा आठ अक्षर वाला आठ अक्षर वाले भूमि (पृथिवी) अन्तरिक्ष (आकाश) और दों (स्वर्ग) के बराबर है. अब आगे इस पद की उपासना के फल को कहते हैं, जो कोई उपासक गायत्री के इस एक पद को इस प्रकार उपासना करता है, वह तीनों लोक में जो कुछ प्राप्तन्य है उसको जीतता है।। १।।

मन्त्रः २

ऋचो यजूंषि सामानीत्यष्टावश्चराय्यष्टाश्चर १३ इ वा एकं गायज्ये पदमेतदु हैवास्या एतत्स यावतीयं त्रयी विचा तावद्ध जयित योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

[‡] बरेरयं विरत्तं क्वरीद्वायजीजपमाचरेदित्यापस्तस्वः ॥

पदच्छेदः ।

भूचः, यजूंपि, सामानि, इति, श्रष्टो, श्रक्षगागि, श्रष्टाक्षगम्, ह, वा, एकम्, गायक्वपे, पदम्, एतत्, उ, ह, एव, श्रस्याः, एतत्, सः, यावती, इयम्, त्रयी, विद्या, तावत्, ह, जयति, यः, श्रस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ऋनः=ऋ, च, य जूं वि=य, जूं, बि, सामानि= सा, मा, नि, इति=इस प्रकार श्राष्ट्री=श्राठ श्रक्षरागि=श्रक्षर हैं पतत् उ≕सोई गायभूभै=गायत्री का श्चष्टाक्षरम्=बाठ बक्षर वाला एकम्=एक पदम्="भ,गीं,दे,व,स्य,धी, म, हि" पाद है य:=जो **श्चर्याः**=इस गायश्ची के पदम्=इस एक पाद को ह=भली प्रकार चेद्≔जानता है यः=जो

श्चस्याः=इस गायश्ची के

एतत्=इस

एदम्=पाद की

ह=भजी प्रकार

एचम्=कहे हुये प्रकार
चेद=जानता है यानी उपा
सना करता है

सः=घह

याचती=जितनी

इयम्=यह

स्तः=वह यावती=जितनी इयम्=यह झयी=तीनों विद्या=विद्या हैं तावत् ह=उतनी इन विद्याओं

के फल को पाता है यानी जो तीनोंवेदों करकेप्राप्त जयित=) होने योग्य है उस सबको वह उपासक

भावार्थ।

भृचः में दो आक्षर भृ, च, यजूंपि में तीन आक्षर य, जूं, षि, सामानि में तीन आक्षर सा, मा, नि, इस प्रकार ये आठ अक्षर बरावर हैं गायत्री के दूसरे पाद आठ अक्षर वाले "भ, गों, दे, व, स्य, घी, म, हिं" के और इसी कारणा दोनों की समता है, यानी गायत्री का दूसरा पाद तीनों वेद के बरावर है. अब आगो गायत्री के दूसरे पाद की उपासना का फल दिखलाते हैं. जो उपासक गायत्री के इस एक पाद को ऐसा समस्तकर उपासना करता है तो वह उन सब वस्तुआं को पाता है जो तीन वेदों की उपासना करक पाया जाता है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

प्राणोऽपानो व्यान इत्यष्टावक्षराष्यष्टाक्षरंश्र ह वा एकं गायश्ये पदमेतदु हैंवास्या एतत्स यावदिदं प्राणि तावद्ध जयित योऽस्या एतदेवं पदं वेदाथास्य एतदेव तुरीयं दर्शतं पदं परोरजा य एष तपाति यद्धे चतुर्थं तत्तुरीयं दर्शतं पदिमिति ददृश इव होष परोरजा इति सर्वमु होवेष रज उपर्युपरि तपत्येवश्र हैंव श्रिया यशसा तपित योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

पदच्छेदः ।

प्रासाः, अपानः, ज्यानः, इति, अष्टी, अध्ररासि, अष्टाक्षरम्, ह, वा, एकम्, गायक्ष्ये, पदम्, एतत्, च, ह, एव, अस्याः, एतत्, सः, यावत्, इदम्, प्रासि, तावत्, ह, जयित, यः, अस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद, अथं, अस्य, एतत्, एव, तुरीयम्, दर्शतम्, पदम्, परोक्ताः, यः, एषः, तपित, यत्, वे, चतुर्थम्, तत्, तुरीयम्, दर्शतम्, पदम्, इति, दटशे, इव, हि, एपः, परोरजाः, इति, सर्वम्, च, हि, एव, एषः, रजः, उपि, उपि, तपित, एवम्, ह, एव , श्रिया, यशसां, तपित, यः, अस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद ।।

त्रान्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः प्राणः=प्रा, या, प्रत्त् उ=सोई अपानः=प्र, पा, न, गायःचै=नायञ्जी का स्यानः=वि, था, न, अष्टाक्षरम्=थाउशक्षरबाला''थि,यो, इति=इस प्रकार यो,नः, प्र,चो,द,यात्'' अष्टो=भाठ पक्तम्=एक अक्षराणि=भक्षर हैं पदम्=पाः है

षः≕जो इसस्याः=इस गायक्वी के पतत्=इस पाद को घेद=जानता है यः=जो श्चस्याः=इस गायञ्जी के पतत्=इस पदम्=एक पाद को एवम्=कहे हुये प्रकार चेद=जानता है सः=वह यावत्=जितने इदम्≔यह सब प्राणी=जीवमात्र हैं ताचत् ह=उन सब को अयति=जीतता है यानी अपने वश में करता है अथ=इसके उपरान्त अस्य=इस गायञ्जी मनत्र का पतत् पव=यह निश्चय करके तुरीयम्≕वौथा पदम्=पाद दर्शतम्=दर्शत नामवाला है यः=जो एषः=यह परोरजाः=परोरजा है यानी मकृति से परे है पषः=सोई तपति=सबको प्रकाश करता है यत् तत्≕जो यह वै=निश्चय काके चतुर्थम्=चौथा

तुरी म्=तुरीबा द्शितम्=दर्शत नामवासा पद्म् इति=गायञ्जी का पाद प्रसिद्ध है च=धीर + यः≕जो एषः=यह पुरुष सूर्यमगडले=सूर्यमगडल विवे हि=निश्चय करके दृहशे इव=देखा सा योगिना=योगियों करके प्रतीत होता है सः=वही परोरजाः इति=परोरजा है एषः एवड्डि=यही सूर्वमग्डलस्थ पुरुष सर्वम्=सब रजः≔बोकों को उपरि उपरि=उत्तरोत्तर तपति=प्रकाशता है यः≕जो पुरुष्र ग्रस्याः≔इस गायच्ची के एतत्=इस चतुर्थ पाद को प्वम्=इस प्रकार वेद=जानता है सः≔बह एसम्=सूर्यमग्रजस्य पुरुष की तरह ह एव=भवरव श्रिया=संपत्ति करके यशसा=यश करके तपति=अकाशवान् होता है

भावार्ध ।

प्राता में दो अक्षर प्रा, गा, अपान में तीन अक्षर आ, पा, न, ध्यान में वि. आन, ये सब मिलाकर आठ अक्षर होते हैं, और गायजी के तीसरे पाद में भी आठ श्रक्षर (धियो यो नः प्रचोदयात् ,) होते हैं इस लिये प्राया, अपान, व्यान की समता गायश्री के तीसरे पाद से है, अब गायत्री के तीसरे पाद की उपासना का फल आगे कहते हैं, जो कोई उपासक गायल्ली के तीसरे पाद को प्राण-ध्यपान-च्यान समक्त कर उपासना करता है, वह सब प्राशायों को जीतता है. यानी अपने वश में रखता है. हे शिष्य ! इस गायश्री का चौथा पाद दर्शत नामवाला है, यही परोरजा है, दर्शत का अर्थ है, जो ऋषियों करके सुक्ष्म विचार द्वारा देखा गया है, श्रीर परोरजा का श्रर्थ सब से परे है यानी जो प्रकृति के परे होकर सबको सूर्यवत प्रकाशता है, यही परोरजा है, अथवा दर्शत तुरीय है, जो पुरुष सूर्यमग्डल विषे योगियों को दिखाई देता है वही परोरजा है, यही सूर्यमगडलस्थ पुरुष सब उत्तरोत्तर लोकों को प्रकाशता है, जो पुरुष इस गायन्नी के चतुर्थपाद को इस प्रकार जानता है वह सूर्यमगडलस्थ पुरुष की तरह अवश्य सब संपत्तियों करके और यश करके प्रकाशमान होता है।। 3 ।।

मन्त्रः ४

सैषा गायः येतिस्मध्येरतुरीये दर्शते पदे परोरजिस मितिष्ठिता तद्दैतत्सत्ये मितिष्ठितं चक्कवें सत्यं चक्कि वें सत्यं तस्माचिद्दानीं द्रौ विवदमानावेयातामहमदर्शमहमश्रीपमिति य एवं मूयादहमदर्श-मिति तस्मा एव श्रद्धयाम तद्दै तत्सत्यं बले मितिष्ठितं माणो वें बलं तत्माणे मितिष्ठितं तस्मादाहुर्बलाध्यं सत्यादोगीय इत्येवं वेषा गायः अप्यात्मं मितिष्ठिता सा हेंपा गयाध्यं साणा वें गयास्तत्माणाध्य-सतत्रे तच्द्रस्य ध्यंत्मं क्रितिष्ठतं तस्मादायश्ची नाम स यामेवामुं सावित्रीमन्वा-हेंवेष सा स यस्मा अन्वाह तस्य माणाध्यक्षायते।।

पदच्छेदः।

सा, एषा, गायच्ची, एतस्मिन, तुरीये, दर्शते, पदे, परोरजसि, प्रतिष्ठिता, तत्, वा, एतत्, सत्ये, प्रतिष्ठितम्, चक्षुः, वे, सत्यम्, चक्षुः, हि, वे, सत्यम्, तस्मात्, यत्, इदानीम्, हो, विवदमानो, एयाताम्, आहम्, आदर्शम्, आहम्, आतिष्ठितम्, प्रति, तस्मे, एव, आह्याम, तत्, पार्ये, प्रतिष्ठितम्, तस्मात्, आगीयः, इति, एवम्, उ, एषा, गायच्ची, आध्यात्मम्, प्रतिष्ठिता, सा, ह, एषा, गयान्, तत्रे, प्रासात्, गायच्ची, नाम, सः, याम्, एव, तत्रे, तत्, यत्, गयान्, तत्रे, तस्मात्, गायच्ची, नाम, सः, याम्, एव, आसुम्, सावित्रीम्, अन्वाह, एव, एषः, सा, सः, यस्मै, अन्वाह, तस्य, प्रासाव्, त्रायान्, त्रायोव, त्रायान्, त्रायोव, प्रासाव्, प्रासाव, प्रासाव,

श्चन्तयः

पदार्थाः

सा=वही एषा=यह गायची=गायची पतस्मिन्=इस तुरीये=तुरीय परोरजासि=प्रकृति से परे दर्शते पदे=दर्शत पाद में मतिष्ठिता=स्थित है तत् वै=सोई दर्शत पाद सत्ये=सत्य में व्रतिष्ठितम्=स्थित है तत्=सोई सत्यम्=सत्य वै=निश्चय करके चक्षुः=चक्षु है हि=क्योंकि

अन्वयः

Чđ

चक्षुः=चक्ष सत्यम्≕सत्य वै=प्रसिद् है तस्मात्=इस किये यत्=जो कुछ इदानीम्=इस काव में श्रहम्=में अदर्शम्=देख चुका हूं ग्रहम्=में अश्रीषम्=सुन चुका हूं इति=ेसा विवद्मानी=वाद करनेवासे द्वी=दो पुरुष पयाताम्≔मावं तो + तयोः=उनमें से यः=जो

एवम्,=ऐसा न्यात्=कहे कि ग्रहम्=में सदरीम् इति=देख चुका <u>इं</u> तस्मै एव=उसी को श्रद्वध्याम=इम सत्य मानेंगे तत्=तिसी कारख तत्=वह सस्य + चक्षुषि=चक्षु में + प्रतिष्ठितम्=स्थित है + तत्त=सोई सत्यम्≕सत्य स्ता=बल विषे प्रतिष्ठितम्=स्थित है हि=क्योंकि प्रागाः=प्राग वै≕ही बलम्=बल है तस्मात्=इस विये प्राया=प्राय में तत्≕वइ सत्य प्रतिष्ठितम्=स्थित है तस्मात्=इसी बिये बलम्=प्राय को सत्यात्=सस्य से आंगीय:=प्रधिक वसवासा आहुः=कहते हैं एवम्=इस प्रकार प्राण बब-वान् होने के कारख प्या उ=यह गायची=गायची अध्यातमम्=प्राच में

प्रतिष्ठिता=स्थित है सा ह=वही एषा=यह गायश्री तत्र=रक्षा करती है प्राणाः=प्राण यानी वागादि इन्द्रियां वै≔ग्रवस्य गयाः=गान करने वासे हैं तत्=इसी विवे तान्=उन वागादिकों की त्रायते=गायबी रक्षा करती है तत्=घौर यत्≕जिस कारण गयान्=जपने वालों की तत्रे=रक्षा करती है तस्मात्=तिसी कारण गायश्री=गायश्री नाम=नाम करके प्रसिद्ध है याम्≕िजस समुम्=इस सावित्रीम्=गायत्री को अन्वाह=शिष्य से आचार्य कहता है सा=वडी एख=निरचय करके एषा=यइ गायची है यस्मै=जिस शिष्य के जिये सः=बह भाषार्थ श्रमशाह=कहता है

तस्य=उसके प्राणान्=प्राची की + एषा=षष्ट त्रायते=रक्षा करती है

भावार्थ।

हे शिष्य ! गायत्री का चौथा पाद दर्शत है, यही परोरजा है, क्योंकि यह प्रक्रति के परे है. और प्रकृति और उसके कार्य का प्रका-शक है. इसके आश्रय गायत्री है. यही दर्शतपाद सत्य विषे स्थित है. सोई सत्य निश्चय करके चक्ष है. क्योंकि ख्रीर इन्द्रियों की अपेक्षा चक्ष सत्य प्रसिद्ध है. कारगा यह है कि यह बली है, जैसे दो पुरुष एक ही काल विषे आकर उपस्थित हों और उनमें से एक कहे मैंने देखा है और दसरा कहे कि मैंने सुना है तो द्रष्टा का वाक्य श्रोता. के वाक्य की अपेक्षा सत्य माना जायगा यानी देखने वाले का वाक्य सत्य सममा जायगा, सुनने वाले का वाक्य सचा नहीं सममा जायगा, इस कारण सत्य चक्ष विषे रिथत है, सोई सत्य बल विषे स्थित है, क्योंकि आंख से देखी हुई वस्तु का प्रमाण बज़ी होता है. क्योंकि प्रागाही बल है और उसी करके चक्ष विषयों को देखती है. इस लिये प्रातामें ही सत्य स्थित है, श्रीर यही कारता है कि प्राता को सत्य से श्राधिक बक्तवान् माना है, श्रीर प्राण् बक्तवान होने के कारण यह गायञ्जी भी बलवान है, क्योंकि प्राणा के आश्रय है, और इस लिये यह गायत्री गायत्री जपने वालों की रक्षा करती है, झौर गायत्री के गान करने वाले वागादि इन्द्रियां हैं, इस लिये उनकी भी रक्षा गायत्री करती है, श्रीर जिस कारण यह गायत्री जपने वालों की रक्षा करती है, तिसी कारण इसका नाम गायत्री पडा है।। ४ ॥

मन्त्रः ५

तार्थः हैतामेके सावित्रीमनुष्टुभयन्वाहुर्वागनुष्टुवेतद्वाचमनुबूम इति न तथा कुर्याद्वायत्र्रामेवथः सावित्रीमनुबूयाचदि ह वा अप्येवंविद्व-हिव प्रतिष्टुह्वाति न हैव तहायत्र्या एकं चन पदं प्राते ॥

पदच्छेदः ।

ताम्, ह, एताम्, एके, सावित्रीम्, अनुष्ठुभम्, अन्वाहुः, वाक्, अनुष्ठुव्, एतत्, वाचम्, अनुष्ठ्यः, इति, न, तथा, कुर्यात्, गायश्रीम्, एवं, सावित्रीम्, अनुष्र्यात्, यदि, ह, वा, अपि, एवंवित्, बहु, इव, प्रतिगृह्वाति, न, ह, एव, तत्, गायश्र्याः, एकम्, चन, पदम्, प्रति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

द्यन्वयः पदा एके=कोई बाचार्य

एके≔कोई भाचार्य ताम्≕उसी

प्ताम्=इस

त्रजुष्टुमम् = { श्रनुष्ट्प्छन्द वाजी गायश्री ''तत्सवि-सावित्रीम् | तुर्हेगीमहे " को

अन्वाहुः=उपनयन के समय उपदेश करते हैं

पतत्=ऐसा

+ वदन्ता=कहते हुये कि इयम्=यह अनुष्टुप्छन्दवाली

> गायत्री बाक्=सरस्वतीरूप है

तथा=उस प्रकार

न=न रीच=उपटे

कुर्यात्=उपदेश करे किंतु=किंतु

पतत्=इस

सावित्रीम्=सावित्रीरूप

गायच्चीम्=गायची (तत्सवितुः)के

भावार्थ।

श्रन्वयः पदाथ श्रनुश्यात्=उपनयन के समय

शिष्य से कहे

झनुब्र्मः=हम लोग कहते हैं यदि=धगर

पवंविद्=ऐसा ज्ञाता पुरुष

बहु इव=बहुतसा प्रतिगृह्णाति=भोग्य वस्तु को प्रहरू

करता है

+ तु≔तो

तत् हवाअपि=उस । भोग्य वस्तु का बेना निःसंदेह

गायक्याः⇒गायत्री के

एकम्=एक चन=भी

पदम्=पाद के !

ह एव=निरचय करके

+ समम्=बराबर

न=नहीं है

हे शिष्य ! कोई कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि अनुष्टुप्छन्द वाकी गायत्री (तत् सिवतुर्वृग्गीमहे वयं देवस्य भोजनम् । श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य भीमहि) को उपनयन के समय पढ़ना चाहिये क्यों कि ये अनुष्टुप् इन्द्रवाली गायञ्जी सरस्वतीरूप है, ऐसा उनका कहना ठीक नहीं है, और न उनको ऐसा उपदेश करना चाहिये, सबको इसी सावित्री-रूप गायञ्जी इन्द "क तत् सवितुर्वरेखयं भगोंदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्" का उपनयन के समय उपदेश करना चाहिये अब आगे इसी के फल को ऐसा कहते हैं आगर इस गायञ्जी का ज्ञाता पुरुष आगिता भोग वस्तुओं को परिम्रह में महत्ता है तो वह कुल भोग वस्तु उसको किसी प्रकार की हानि नहीं देसकते हैं, क्योंकि जो गायञ्जी के एक पद के उपासना करने से फल होता है उस फल के बरावर प्राप्त हुये कुल भोगवस्तु होते हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः ६

स य इमाँद्वोकान्पूर्णान्मतिगृह्वीयात्सोऽस्या एतत्मथमं पदमाप्तु-यादय यावतीयं त्रयी विद्या यस्तावत्मतिगृह्वीयात्सोऽस्या एतद्दि-तीयं पदमाप्नुयादथ यावदिदं माणी यस्तावत्मतिगृह्वीयात्सोऽस्या एतचृतीयं पदमाप्नुयादथास्या एतदेव तुरीयं पदं दर्शतं परोरजा य एव तपति नैव केन चनाप्यं कुत उ एतावत्मतिगृह्वीयात् !!

पदच्छेदः ।

सः, यः, इमान्, लोकान्, पूर्णान्, प्रतिगृह्वीयात्, सः, अस्याः, एतत्, प्रथमम्, पदम्, आप्तुयात्, अथ, यावती, इयम्, त्रयी, विद्या, यः, तावत्, प्रतिगृह्वीयात्, सः, अस्याः, एतत्, द्वितीयम्, पदम्, आप्तुयात्, अथ, यावत्, इदम्, प्राणी, यः, तावत्, प्रतिगृह्वीयात्, सः, अस्याः, एतत्, तृतीयम्, पदम्, आप्तुयात्, अथ, अस्याः, एतत्, त्रत्यम्, पदम्, प्राप्ताः, यः, एषः, त्रपति, न, एव, तुरीयम्, पदम्, दर्शतम्, परोरजाः, यः, एषः, तपति, न, एव, केन, चन, आप्यम्, कुतः, उ, एतावत्, प्रतिगृह्वीयात्।।

धान्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः=वद्द विद्वान् यः=जो

इमान्=इन पूर्णान्=धन-धान्यसम्पन्न

त्रीन्≔तीर्<u>नो</u> लोकान्=बोकों को प्रतिगृह्णीयात्=प्रइण करे तो उसका प्रतिगृह्णीयात्=प्रइण करे यानी सः=वह जेना श्चस्याः=इस गायञ्ची के एतत्=इस प्रथमम्=पहिबे पदम } =पादके फलके बराबर + समम् म्राप्नुयात्=पावे अथ=भौर यावती=जितनी त्रयी=तीनों विद्या=विधा हैं तत्=उनके फल को तावत्=पूर्णशिति से यः=जो विद्वान् प्रतिगृह्णीयात्=पावे सः=वह फल श्चस्याः=इस गायक्री के पतत्=इस द्वितीयम्=दूसरे पदम् } =पाद्के फलके बराबर + समम् आप्नुयात्≕पावे ग्रथ=भौर याचत्=जितना इदम्=यह

प्राणी=प्राणीमात्र है

तावत्=३न सबको यः≕जो विद्वान् द्यपने वश में करे सः=उसका वह वश करना श्चस्याः=गायष्री के पतत्=इस तृतीयम्=तीसरे पदम्=पाद के फब को आप्नुयात्=प्राप्त होवे स्थ=श्रीर यः=जो परोरजाः=लोकोत्तरवर्ती एषः=सूर्यस्थ पुरुष तपति=प्रकाशता है एतत् एव=वही तुरीयम्=चौथा द्शीतम्=दशेत नामवाला पद्म्=गायच्ची का पाद है + इदम्=यह पाद केन चन=किसी प्रतिप्रह करके न एव=नहीं श्चाप्यम्=प्राप्य है, यानी **इसके** बराबर कोई वस्तु नहीं है + पुनः=तब उ≔इतना बड़ा पतावत्=फब कुतः=कहां से

भावार्थ ।

हे शिष्य ! वह विद्वान जो धनधान्य से सम्पन्न हुये इन तीनों

प्रतिगृहीयात्=कोई पावे

लोकों को प्रतिप्रह में प्रहण् करता है, तो उसको उन सबका लेगा उसके योग्यता से अधिक नहीं है, यानी वह किसी प्रकार से भी ऐसा प्रतिप्रह लेने पर दूषित नहीं होता है, क्योंकि उसका लिया हुआ प्रतिप्रह इस गायश्वी यानी (तन् सिवतुर्वरेग्यम्) के प्रथम पद के फल के वरावर होता है, और जो इन्ज फल तीनों वेदों यानी भृग्-यनु:-साम के जानने और उपासना करने से फल होता है, सोई प्रतिप्रह इस मन्त्र के द्वितीयपाद (भगों देवस्य धीमहि) की उपासना के फल के वरावर होता है, और जितने प्राणीसमृह हैं यानी जितने प्राणी हैं, उनको अपने वरामें करने का जो प्रतिप्रह में मिले तो वह सब इस गायत्री के तृतीय पाद (धियो यो न: प्रचोदयात्) की उपासना के फल के वरावर है, और जो इस गायत्री का चौथा पाद दर्शत परोरजा है, और जो सर्वत्र प्रकाशित होरहा है इस चतुर्थपाद की उपासना के फल के बरावर कौन दान संसार में होसकता है। है।

मन्त्रः ७

तस्या उपस्थानं गायज्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदीं, चतुष्पचपदिस न हि पद्यसे । नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा मापदिति यं द्विष्यादसावस्यै कामो मा समृद्धीतिवा न हैवास्यै स कामः समृध्यते यस्मा प्वमुपतिष्ठतेऽहमदः पापमिति वा ॥

पदच्छेदः।

तस्याः, उपस्थानम्, गायन्नि, श्रासि, एकपदी, द्विपदी, त्रिपदी, चतु-ध्वदी, श्रापत्, श्रासि, न, हि, पद्यसे, नमः, ने, तुरीयाय, दर्शताय, पदाय, परोरजसे, श्रासी, श्रादः, मा, प्रापत्, इति, यम्, द्विष्यात्, श्रासी, श्रास्मे, कामः, मा, समृद्धी, इति, वा, न, ह, एव, श्रासी, सः, कामः, समृध्यते, यस्मै, एवम्, उपतिष्ठते, श्राहम्, श्रादः, प्रापम्, इति, वा ॥ श्रास्थः पदार्थाः श्रान्वयः पदार्थाः तस्याः=इस गायन्नी का

इति≈ऐसी + ଅध=धव + कथ्यते =कही जाती है गायश्चि=हे गायश्चि! एकपदी=त्रैबोक्यरूप एक चरगवाजी असि=तृ है यानी तीनों लोक तेरा प्रथमपाद है द्विपदी=त्रेविद्यारूप द्वितीय **चरग्**वाबी + असि=तृ है यानी तीनों बेद त्रिपदी=प्राणादिरूप तीन चरणवाली + असि=तू है यानी प्राणीमात्र तेरा तृतियचरण है चतुरपदी=दर्शतरूप चौथी चरणवाकी . + असि= { तू है यानी सबका प्रकाशक तेरा चतुर्थ वरण है +यद्यपि) + एवम् > =यचिष तृ ऐसी है + परन्तु=परन्तु अपद्=वास्तव में तू पदरहित + ग्रसि=डै + हि=स्योंकि त्वम् न=त् नहीं किसी करके जानी जाती है यानी तेरा ज्ञान किसी को नहीं होता है ते=वेरे

तुरीयाय=चौबे परोर जसे=अकारामान व्श्वताय=दर्शत नामवासे पदाय=पाद के किये न्मः=नमस्कार ग्रस्तु=होवे + यः=जो असी=यह मेरा पाप्मा=पाविष्ठ शश्रु है + झस्य=उसका + अदः=श्रभिलाषा तेरा द्वितीय चरण है समृद्धि इति न=पूर्वता को नप्राप्त होवे वा=इस कारण द्यस्मै=उस पापी की सः≔वह कामः=कामना ह एव न=किसी तरह नहीं समृध्यते=पूरी होती है यस्मै=जिसके जिये प्धम्=इस प्रकार उपतिष्ठते=शानी शाप देवा है वा=भौर + शत्रोः=शत्रु के अदः=उत्तम सभीष्ट को श्रहम्=में प्रापम्=प्राप्त होकं इति=ऐसा + यः=जो उपासक उपतिष्ठते=कहता है + तस्य=उसके कामाः=सब मनोरब

समूष्यत्ते=सिद्ध होते हैं

भावांर्ध ।

है शिष्य ! अब गायंत्री के उपस्थान यानी प्रशंसा को कहते हैं है गायत्रि ! त्रैलोक्यरूप तेरा प्रथम चरण है, त्रैविद्यारूप तेरा द्वितीय चरण है, प्राग्तादिरूप तेरा तृतीय चरगा है, ऋौर दर्शतरूप सबका प्रकाश करने वाला तेरा चतुर्थ चरगा है, यद्यपि तू इन सब गुणों करके परिपूर्ण है, तथापि वास्तव में तू पदरहित यानी निर्मुशा है, क्योंकि तू किसी करके नहीं जानी जाती है, तेरे चौथे दर्शन प्रकाशनान पाद के लिये मेगा नमस्कार है, जो कोई मेरा पापिष्ठ शत्रु है उसकी श्रमिलापा पूर्ण न हो किसी तरह से उसकी कामना पूर्ण न हो इस गायत्री के उपासक के शाप देने से शत्रुकी कामना सिद्ध नहीं होती है, श्रीर जब उपासक कहता है कि शत्र के उत्तम अभीष्ट फल उसको न मिलकर सुम्मको मिलें तब उस उपासक के वे सब मनोरथ इच्छानुसार सिद्ध होते हैं॥ ७॥

मन्त्रः ट

एतद्ध वै तज्जनको वैदेहो बुडिलमाश्वतराश्विमुवाच यन्नु हो तद्गायत्रीविदव्या अथ कथछ हस्तिभूतो वहसीति मुखछंह्रस्या स-म्राएन विदांचकारेति होवाच तस्या श्रीग्नरेव मुखं यदि हवा श्रिप बह्विनाग्नावभ्यादधति सर्वमेव तत्संदहत्येवछ हैवैवं विद्यद्यपि बह्विन पापं कुरुते सर्वनेव तत्संप्साय शुद्धः पूर्तोऽनरोऽमृतः संभवति ॥ इति चतुर्दशं ब्राह्मणम् ॥१४॥

एतत्, इ, वै, तत्, जनकः, बेंदेहः, बुडिलम्, श्रास्वतराश्विम्, खवाच, यत्, नु, हो, तत्, गायञ्चीविद्, अन्नूथाः, अथ, कथम्, हस्ति-भूत:, वहसि, इति, मुखम्, हि, श्रस्याः, सम्राट्, न, विदांचकार, इति, ह, खवाच, तस्याः, श्राग्नः, एव, मुखम्, यदि, ह, वा, श्रापि, बहु, इव, श्चानी, श्राभ्याद्धति, सर्वम्, एत, तत्, संदह्ति, एवम्, ह, एव, एवं, विद्, यद्यपि, बहु, इव, पापम्, कुरुते, सर्द्रम्, एव, तत्, संप्साय, शुद्धः, पूतः, श्रज्ञरः, श्रमृतः, संभवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

स्रवयः

पदार्थाः

बैदेहः=विदेह देश का राजा

+ जनकः=जनक

आश्वतः } = श्रारवतरास्य का पुत्र राश्विम

बुडिलम्=बुडिब से

पतत्=इस

तत्=गायच्ची विषय में

ह वै=निरचय करके

नु हो=म्राश्चर्य के साथ प्रश्न उवाच=कहता भया

यत्=गो

त्वम्=तू

गायत्रीविद्=गायत्री जाननेवाला है

इति=ऐसा

अब्था=अपने की कहता है

श्रथ=तो ू

कथम्=कैसे

इस्तिभूतः=इस्ती होता हुआ

बहस्ति= { प्रतिग्रह के दोष रूपभार को जिये हुये फिरता है

इति=ऐसा सुन कर

सः=वह बुदित

ह=स्पष्ट उवाच=कहता भगा कि

सम्राट्र=हे राजा जनक !

अस्याः=इस गायञ्जी के

मुखम्=मुख को

हि≕िनश्चय करके

न विदांचकार=मैं नहीं जानता हूं

ं इति=इस पर

+ जनकः=राजा जनक ने

श्राह=कहा

युडिल=हे बुढिल !

+ भ्रम्यु=पुन

तस्याः=गायभी का

मुखम्=मुख

ऋग्निः=ऋग्नि

एव=िश्चय करके है

इव=जैसे

यदि ह=जब

लोकाः=लोग अग्नी=भग्नि में

यहु=बहुत इन्धन

श्रभ्यादधति=डालते हैं

त्रस्याद्यात=डाजत ह वाद्यपि=तव

आ।प=तब

तत्=उस सर्वम्=सबको

संदहाति एव=ग्रीन श्रवश्य जला

देता है

पवम्विद्=तैसे गायबी का ज्ञाता

पुरुष

यद्यपि=यवि

बहु=बहुत

पापम् इव=पाप को भी

कुरुते=करता है

+ तथापि=तो भी

तत्=उस

सर्वम्=सबको

एव=श्रवश्य

संदलाय=नाश करके

शुद्धः=शुद्ध

पूतः=पापरहित झजरः=जरारहित

्श्रमृतः≔मुक्र संभवति≔होजाता है

भावार्थ।

हे रिष्य ! किसी समय विदेह देश का राजा जनक आरवतरारिव के पुत्र बुडिल से बड़े आरचर्य के साथ इस गायत्री के विषय में प्रश्न किया ऐसा कहता हुआ कि हे बुडिल ! तू कहता है कि मैं गायत्री का ज्ञाता हूं पर मैं तुक्तको देखता हूं कि तू इस्ती के ऐसा बल रखता हुआ भी प्रतिप्रह के भार को लिये हुये किरा करता है इसका क्या कारणा है ? इस प्रश्न को सुनकर बुडिल ने कहा हे राजा जनक ! में इस गायत्री के मुखको नहीं जानता हूं और यही कारणा है कि मैं हस्ती के सहश प्रतिप्रहरूप भार को लिये हुये किरता रहता हूं इस पर राजा जनक ने कहा हे बुडिल ! सुन गायत्री का मुख आग्नि है, जैसे जकड़ी अग्नि में डालने से भस्म होजाती है बैसेही गायत्री के ज्ञाता पुरुष के सब पाप नष्ट होजाते हैं और वह शुद्ध पापरहित जरारहित मुक्त होजाता है।।

।

इति चतुर्दशं ब्राह्मग्रम् ॥ १४ ॥

श्रथ पञ्चदशं ब्राह्मग्रम् ।

मन्त्रः १

हिरएमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखं तत्त्वं पूषत्रपादृणु सत्य-धर्माय दृष्ट्ये पूषत्रेकर्षे यम सूर्य माजापत्य न्यूह रश्मीन् समूह तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि योऽसावसी पुरुषः सोऽहमसिम। बायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्त्यः शरीरम् ॐकृतो स्मर् कृतः स्मर् कृतो स्मर् कृतः स्मर् अग्ने नय सुपथा राये श्रस्मान्विश्वानि देव बयुनानि विद्वान् युयोध्यसमञ्जुहूराणमेनो भूयिद्वां ते नमजिक्कं विधेम।।

इति पश्चदशं ब्राह्मएम् ॥ १४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोप।नेषदि पश्चमोऽध्यायः ॥ ४ ॥

हिरगमयेन, पात्रेगा, सत्यस्य, अपिहितम्, मुखम्, तत्, त्वम्, पूषन्, अपावृत्तु, सत्यधर्माय, दृष्टये, पूषन्, एकर्षे, यम्, सूर्य, प्राजापत्य, न्यूह्, रश्मीन, समृह, तेजः, यत्, ते, रूपम्, कल्यास्तमम्, तत्, ते, पश्यामि, यः, असौ, असौ, पुरुषः, सः, श्रहम्, अस्मि, वायुः, अनि-लम्, ब्रामृतम्, ब्राथ, इदम्, भस्मान्तम्, शरीरम्, ॐ, क्रतो, स्मर्, कृतम्, स्मर, कृतो, स्मर, कृतम्, स्मर, ऋग्ने, नय, सुपथा, राये, अस्मान्, विश्वानि, देव, वयुनानि, विद्वान्, युयोधि, अस्मत्, जुहूरा-ग्राम्, एनः, भूयिष्ठाम्, ते, नमदक्तिम्, विधम ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

+ श्रादित्य- } =सूर्य की प्रार्थना है प्रार्थना है हिरएमयेन=सोने की तरह प्रका-

शमान

पात्रेग्=पात्र करके सत्यस्य=तुभ सत्य का

मुखम्=द्वार अपिहितम्=दका है

पूषन्=हे सूर्य ! तत्=उस दकन को

त्वम्=तू

सत्यधर्माय } = { मुक्तसत्यधर्मावतः -दृश्चेनाय } = { म्बीकेदर्शनके बिये

श्रपावृगु=हटादे

पूषन्=हे पोषणकर्तां सूर्य ! एकर्षे=हे श्रकेला चलनेवाला!

यम=हे जगत्नियन्ता ! सूर्य=हे आकाशचारी !

प्राजापत्य=दे प्रजापति के पुत्र !

रश्मीन्=अपने किरखों को

व्यूह=हटाबे तेजः=अपने तेज को समूह=कम करले ताकि

यत्≕जो ते=तेरा

कल्याणतमम्=ग्रत्यन्त कस्याख

क्पम्=रूप है तत्=उस

ते=तेरे

+ रूपम्=रूप को पश्यामि=मैं देख्ं

असी=बह तेरे विषे

यः≕जो पुरुषः=पुरुष है असौ=सोई

सः≔वह पुरुष

श्रहम्≕में श्र€म=इं

अमृतम्=मुक्त सत्यधर्मावसम्बी

61

वायुः=प्रायवायु अस्मान्=हम लोगों को श्रानिलम्=बाह्यवायु को राये=कर्मफल भोगार्थ प्रतिगच्छतु=भिले यानी प्राप्त होवे सुपथा=बच्डे रास्ते से श्रथ=श्रीर नय=जेचल इद्म्=यह + हि=क्योंकि भस्मान्तम्=दग्ध देख=हे श्रीनदेव ! श्ररीरम्=मेरा देह विश्वानि } =सब कर्म को वयुनानि } + पृथ्वीम्=पृथ्वी को + गच्छुतु=प्राप्त होवे विद्वान्=तृ जानने वाला है ॐ=हे ॐकार ! यानी साक्षी है कतो=हे कतो, हे मन ! धस्मत्≔हमसे छतम्=अपने किये हुये कर्म को जुहू राग्मम्≔कुटिल स्मर=याद कर पनः=पाप को स्मर=याद कर युयोधि } =श्रवग करदे कतो=हे कतो ! कृतम्=अपने किये हुये कर्मको ते=तेरे स्मर=याद कर भूयिष्ठाम्=बहुतसा स्मर=याद कर नमउक्तिम्=नमस्कार श्चरने=हे अग्निदेव ! विधेम=इम करते हैं

भावार्थ ।

कोई सूर्य और अगिन का उपासक सूर्य और अगिन की प्रार्थना नीचे लिखे प्रकार करता है, हे सूर्य, भगवन ! सोने की तरह प्रकाश-मान पात्र करके तुम्म सत्य का द्वार ढका हुआ है, हे भगवन ! उस ढका नो तू मुम्म सत्यधर्मावलम्बी के लिये हटादे, हे जगत् का पालन पोपणा कर्त्ता सूर्य, हे अनेला चलनेवाला, हे जगत्नियन्ता, हे प्रजापित के पुत्र ! तू अपने किरणों को हटाले, अथवा अपने तेज को कम कर दे ताकि मैं तेरे अत्यन्त कल्याणारूप को देखूं, हे भगवन ! जो पुरुष तेरे बिषे दिखाई देता है सोई मैं हूं, जब मैं तेरे बिषे स्थित पुरुष को प्राप्त हो जाऊं तब सुम्म सत्यधर्मावलम्बी का प्राण्वायु

समिष्ठि बाह्य बायु को प्राप्त होवे, क्योर यह मेरा देह दग्ध होकर पृथिवी को प्राप्त होवे, हे ॐकार, हे कतो, हे मन! अपने किये हुये कमों को यादकर, हे मन! अपने किये हुये कमों को यादकर, हे अग्निदेवता! हम लोगों को कर्मफल भोगार्थ अञ्ले रास्ते से ले चल, हे अग्निदेवता! देवता! तू हमारे सब कों को जानता है, यानी उनका साक्षी है, हमारे कुटिल पापों को दूर करदे, हम तेरे लिये बहुतसा नमस्कार करते हैं।। १।।

इति पञ्चदशं त्राह्यगाम् ॥ १४ ॥ इति स्रीवृहद्दारययकोपनिपदि भाषानुवादे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ४ ॥

ऋथ षष्ठोध्यायः।

श्रथ प्रथमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

ॐ यो ह वै ज्येष्ठं च श्रेष्ठं च वेद ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च स्वानां भवति प्राणो वै ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च स्वानां भवत्य-पि च येषां बुभूषति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

ॐ, यः, इ, वै, ज्येष्ठम्, च, श्रेष्ठम्, च, वेद, ज्येष्ठः, च, श्रेष्ठः, च, स्वानाम्, भवति, प्राग्गः, वै, ज्येष्ठः, च, श्रेष्ठः, च, ज्येष्ठः, च, श्रेष्ठः, च, श्रेष्ठः, च, स्वानाम्, भवति, श्रापि, च, येपां, बुभूपति, यः, एवम्, वेद ॥ श्रम्बयः पदार्थाः श्रम्बयः पदार्थाः

थः=जो कोई ज्येष्ठम्=ज्येष्ठ को स्व=ष्रीर त्र=श्रेष्ठ को चेद्=जानता है ह=ही वै च=निरवय करके ज्येष्ठः=ज्येष्ठ च=भीर

+ सः=वह स्वानाम्=अपने भाई बन्धुकों में

भवति=होता है प्राणः=शरीरस्थ प्राय

+ इन्द्रियाणाम्=इन्द्रियां में

ज्येष्ठः=ज्येष्ठ
च=धौर
श्रेष्ठः च=श्रेष्ठ है
+ श्रतः=इसी कारण
+ उपासकः=भाग का उपासक
स्वानाम्=धपनी ज्ञातिके बीच में
ज्येष्ठः=ज्येष्ठ
च=धौर
श्रेष्ठः च=श्रेष्ठ
भवति=इति है

च=धौर

श्रिप=इसके सिवाय

यः=जो पुरुष

एचम्=कदे हुये प्रकार
चेद=जानता दे

+ सः=वद

येषाम्=जिस किसी कोगों

के मध्य में

बुभूषति=ज्येष्ठ श्रेष्ठ होने की

सः=वह + तेषाम्=उनमें भवति≃ज्येष्ठ श्रेष्ठ होजाता **है**

भावार्थ ।

जो कोई पुरुष ज्येष्ठ श्रीर श्रेष्ठ को जानता है, यानी उपासना करता है, वह भी निश्चय करके श्रापने भाई बन्धुवों में ज्येष्ठ श्रीर श्रेष्ठ होता है, शरीरस्थ प्राण् अवश्यही इन्द्रियों बिषे ज्येष्ठ श्रीर श्रेष्ठ है, इस कारण प्राण् का उपासक श्रापनी जाति में ज्येष्ठ श्रीर श्रेष्ठ होता है, श्रीर इनके सिवाय जो पुरुष कहे हुये प्रकार प्राण् की उपासना करता है वह जिस किसी लोगों में ज्येष्ठ श्रीर श्रेष्ठ होने की इच्छा करता है, वह उनके मध्य में भी ज्येष्ठ श्रेष्ठ होता है।। १॥

मन्त्रः २

यो ह वै विसिष्ठां वेद विसिष्ठः स्वानां भवति वाग् वै विसिष्ठा विसिष्ठः स्वानां भवत्यापे च येषां बुभूषति य एवं वेद ॥

यः, ह, वै, विसष्ठाम्, वेद, विसष्ठः, स्वानाम्, भवित, वाक्, वै, विसष्ठः, विसष्ठः, स्वानाम्, भवित, अपि, च, येषाम्, बुभूषित, यः, एवम्, वेद ॥

धान्धयः

पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो पुरुष वेद≕जानता है वसिष्टाम्=रहनेवालीं में से सः=वह पुरुष . अतिश्रेष्ट को स्वानाम्=ग्रपने सम्बान्धयों में घेद=जानता है बसिष्ठः=श्रेष्ठ सः=वह भवति=होता है स्वानाम्=श्रपने सम्बन्धियों के च≕धोर बीच में श्चाप=सिवाय इसके वसिष्टः≔प्रतिश्रेष्ठ येषाम्=श्रीर जिन स्रोगों के भवति=होता है सध्य में वाक=वाणी + सः=वह पुरुष च=निस्सन्देष्ठ व्रभूपति=श्रेष्ठ होने की इच्छा करता है चसिष्ठाः= रहनेवाली हन्द्रियों
में से चतिश्रेष्ठ है + तेषाम्=उन लोगोंके मध्यमें भी + श्रतः=इस लिये + सः=वह पुरुष यः=जो पुरुष + वसिष्ठः=श्रेष्ठ भवाति=होता है प्वम्=इस प्रकार

भावार्थ ।

जो पुरुष रहनेवाओं में से श्रेष्ठ को जानता है वह अपन सम्ब-निधर्यों के विषे ज्येष्ठ श्रेष्ठ होता है, वास्मी शरीर के अन्दर रहनेवाली इन्द्रियों में से आति श्रेष्ठ है, इस लिये जो पुरुष वास्मी को इस प्रकार जानता है वह भी अपने सम्बन्धियों में अतिश्रेष्ठ होता है, इतनाही , नहीं किन्नु इसके सिवाय जिन लोगों के मध्य में वह पुरुष श्रेष्ठ होने की इस्द्रा करता है उन लोगों के मध्य में भी आतिश्रेष्ठ होता है।। २ ॥

मन्त्रः ३

यो ह नै मिल्छां नेद मितिविष्ठति समे मितिविष्ठति दुर्गे चक्षुंनें मितिष्ठा चक्षुषा हि समे च दुर्गे च मितिविष्ठाते मितिविष्ठति समे मितिविष्ठति दुर्गे य एवं नेद ॥

इ२६ बृहदारययकोपनिषद् स०।

पवच्छेदः ।

यः, ह, वे, प्रतिष्ठाम्, वेद, प्रतितिष्ठति, समे, प्रतितिष्ठति, दुर्गे, चक्षुः, वे, प्रतितिष्ठति, दुर्गे, च, प्रतितिष्ठति, प्रतीति-ष्ठति, समे, प्रतितिष्ठति, दुर्गे, यः, एवम्, वेद ॥ भ्रम्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः=जो पुरुष
ह-वै=निश्चय के साथ
प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को
वेद=जानता है
सः=वह
समे=समभूमि में

वै=ग्रन्छी तरह प्रतितिष्ठति=प्रतिष्ठित होता है च=श्रीर

दुगें=नीच ऊंच भूमि में भी प्रतितिष्ठति=प्रतिष्टित होता है

+ प्रश्नः=प्रश्न + प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा

+ का=त्रया वस्तु है + उत्तरम्=उत्तर

चक्षुः=नेत्रही प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा है हि=क्योंकि चश्चुषा=नेत्र करके भी समे=समभूमि में च=श्रोर दुरों=नीव ऊंच भूमि में

च=भी प्रतितिष्ठति=पुरुष स्थित होता है

यः=जो एचम्=इस प्रकार चेद=जानता है

चद्=जानता ह + सः=वह

समे=समभूमि पर प्रतितिष्ठति=स्थित होता है

+ च=धौर हर्जे=बीच कं

दुर्गे=नीच ऊंच भूमि पर

+ श्रपि=भी प्रतितिष्ठति=ग्रहरता है

भावार्थ।
जो पुरुष प्रतिष्ठा को जानता है वह समभूमि झौर विषमभूमि
दोनों में प्रतिष्ठित होता है प्रश्न-प्रतिष्ठा क्या वस्तु है ?. उत्तर-नेत्रही
प्रतिष्ठा है, क्योंकि नेत्र करकेही पुरुष समभूमि झौर विषमभूमि में
स्थित होता है, जो पुरुष इस प्रकार जानता है वह समभूमि झौर
विषमभूमि में स्थित होता है ॥ ३॥

्र मन्त्रः ४ यो इ वै संपदं वेद सर्छइ।स्मै पद्यते यं कामं कामयते श्रोत्रं वै संपच्छ्रोत्रे हीमे सर्वे वेदा अभिसंपद्माः सर्छहास्मै पद्यते यं कार्म कामयते य एवं वेद !।

पवच्छेदः ।

यः, ह, वै, संपदम्, वेदं, सम्, ह, अस्मै, पद्यते, यम्, कामम्, कामयते, श्रोत्रम्, वै, संपत्, श्रोत्रे, हि, इमे, सर्वे, वेदाः, आभिसंपन्नाः, सम्, ह, अस्मै, पद्यते, यम्, कामम्, कामयते, यः, एवम्, वेदः।।

भन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः ह=जो पुरुष वै=निश्चय करके संपदम्=संपदा को

वेद्=जानता **है** + सः=वह

यम्=जिस सम्मानानोय

कामम्=मनोरथ को ह=निश्चय करके

कामयते=चाहता है अस्मै=उसके लिये

संपद्यते ह=वह मनोरथ श्रवश्य

प्राप्त होता है

+ प्रश्नः=धरन + संपत्=संपदा

का=क्या वस्तु है ^१

+ उत्तरम्=उत्तर

श्रोत्रम्=श्रोत्रेन्द्र**य**

वै=ही संपत्=संपदा है हि=क्योंकि ओने=ओन्नोंही सर्वे=सब वेदाः=वेद

श्राभिसंपन्नाः=संपन्न रहते हैं यः=जो

यः=जा एतम्=कहे हुये प्रकार वेद≕जानता है

श्रस्मै=उसके जिये संपद्यत=वड मनोरथ प्राप्त

होता है यम्=जिस

कामम्=मनोरथ को + सः=बह

कामयते=चाहता है

भावार्थ।
जो पुरुष भलीप्रकार संपदा को जानता है वह जिस मनोरथ को
चाहता है वह मनोरथ उसको प्राप्त होता है. प्रश्न—संपत् क्या वस्तु है ?.
उत्तर—श्रोत्र इन्द्रियही संपत् है, क्योंकि श्रोत्रमेंही सब वेद संपन्न
होते हैं जो पुरुष कहे हुये प्रकार जानता है उसके ितये वह मनोरथ
प्राप्त होता है जिसको वह चाहता है।। ४॥

मन्त्रः ५

यो इवा आयतनं वेदाऽऽयतनश्च स्वानां भवत्यायतनं जनानां मनो वा आयतनमायतनश्च स्वानां भवत्यायतनं जनानां य एवं वेद ॥

यः, ह, वा, धायतनम्, वेद, श्रायतनम्, स्वानास्, भवति, श्राय-तनम्, जनानाम्, मनः, वा, श्रायतनम्, श्रायतनम्, स्वानाम्, भवति, श्रायतनम्, जनानाम्, यः, एवम्, वेद ॥

डान्वयः

पद्याथोः ऋन्वयः

पदार्थाः

यः ह=जो झायतनस्=धाश्रय का वै=निश्चय करके वेद्=जानता है + सः=वह

स्वानाम् } ⇒श्वपने ज्ञातियों का जनानाम् } ⇒श्वपने ज्ञातियों का आयतनम्=श्राश्य भवति=होता है + प्रश्नः=प्रश्न आयतनम्=श्राश्य

+किम्=क्या वस्तु है ?

+ उत्तरम्=उत्तर मनः=मन वै=ही आयतनम्=श्राश्रय है एवम्=इस प्रकार यः=भो पुरुष वेद=जानता है + सः=वह

स्वानाम्=श्रपने जनानाम्=श्रातियों का आयतनम्=श्रश्य भवति=होता है

भावार्थ ।

जो पुरुष आश्रय को अच्छीतरह जानता है वह अपने ज्ञातियों का आश्रयभूत होता है, प्रश्न-धाश्रय क्या वस्तु है ?. उत्तर-मनही आश्रय है. इस प्रकार जो पुरुष जानता है वह अपने ज्ञातियों का आश्रय होता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

यो ह वै मजाति वेद मजायते ह मजया पशुभी रेतो वै मजा-तिः मजायते ह मजया पशुभिर्य एवं वेद ॥

पदच्छेदः।

यः, ह, वै, प्रजातिम्, वेद, प्रजायते, ह, प्रजया, पश्चिमः, रतः, वै, प्रजातिः, प्रजायते, ह, प्रजया, पश्चिमः, यः, एवम्, वेद ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः ह=जो पुरुष वै=निश्चय करके

प्रजातिम्=प्रजाति को

ह=भन्नीप्रकार वेद=जानता है

+ सः=वह पुरुष

ह=धवश्य

प्रजया=संतान करके पश्चभि:=पशुश्चों करके

+ संपन्नः=संपत्तिवाला

प्रजायते=होता है + प्रश्नः=प्रश्न

+ प्रजातिः=प्रजाति

+ का=क्या वस्तु है ?

उत्तरम्=उत्तर रेतः=वीर्थ

प्रजाति:=प्रजाति है

यः≕जो पुरुष

एवम्=इस प्रकार वेद=जानता है

+ सः=वह

प्रजया=संतान करके पशुभिः=पशुश्रों करके + संपन्नः=संपत्तिवाला

न संपन्नः=स्पातपात् प्रजायते=होता है

भावार्थ ।

ं जो पुरुष प्रजाति को अन्द्धीतरह जानता है वह संतान करके, पशुओं करके संपत्तिवाला यानी धनाट्य होता है. प्रश्न-प्रजाति क्या वस्तु है? उत्तर-वीर्य प्रजाति है. जो पुरुप इस प्रकार जानता है वह संतान करके, पशुओं करके संपत्तिवाला होता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

ते हेमे पाणा श्रहछंश्रेयसे विवदमाना ब्रह्मजग्मुस्तद्धोचुः कोनो वसिष्ठ इति तद्धोवाच यस्मिन्वउत्क्रान्ते इदछ शरीरं पापीयो मन्यते स वोवसिष्ठ इति ॥

पदच्छेदः ।

ते, ह, इमे, प्राणाः, श्राहं, श्रेयसे, विवदमानाः, श्रह्म, जग्युः, तत्, ह, ऊचुः, कः, नः, वसिष्ठः, इति, तत्, ह, उवाच, वस्मिन्, वः,

चत्कान्ते, इदम्, शरीरम्, पापीयः, मन्यते, सः, वः, वस्तिष्ठः, इति 🔢 पढार्थाः पदार्थाः श्चन्ययः श्रन्ययः कः≔कीन ते ह=वे वाखी श्रोत्र सन चादि इन्द्रियां बसिष्ठः इति=श्रेष्ठ है इस पर + च=ग्रीर तत=वह प्रजापात इमे प्राणाः=ये पांची प्राण श्चार्थेयसे= श्चहंश्रेयसे= हैं हमही श्रेष्ठ हैं' उवाच=कहता भवा कि घः=तुम लोगों के मध्य में यस्मिन=जिसके उत्कानते } =निकल जाने पर + सति } विवद्मानाः रे ऐसा वाद विवाद + सन्तः \ =करते हथ ब्रह्म=बद्या के पास इदम्≂इस जग्मुः≕गये शरीरम्=शरीर को ह=भीर पापीयः=पापिष्ट + लोकः≔लोक + गत्य(=जाकर तत्=उस ब्रह्मा से यानी मन्यते=मानै प्रजापति से स्नः≔वहही ऊचु:=कहा कि वः=तम लोगों म नःइस खोगों में वसिष्ठः इति=श्रेष्ठ है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इन्द्रियों में कौन श्रेष्ठ है ? इस बात के जानने के िक्से आगे कहते हैं कि किसी समय में वास्मी, श्रोत्र, नेत्र, मन, प्रास्म आदि इन्द्रियों में मगड़ा पैदा हुआ, और आपस में एक दूसरे से कहने जगे कि हमी श्रेष्ठ हैं, हमी श्रेष्ठ हैं ऐसा बाद विवाद करते हुये ब्रह्माजी के पास गये और वहां जाकर कहा कि आप निर्माय करदें कि हम जोगों में कौन श्रेष्ठ हैं ? इस पर प्रजापित ने कहा कि तुम कोगों के मध्य में वही श्रेष्ठ हैं जिसके निकलजाने पर यह शरीर पापिष्ठ कहलाता है।। ७।।

मन्त्रः ८

वाग्योचकाम सा संवत्सरं प्रोध्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते

जीवितुमिति ते होचुर्यथाऽकला अवदन्तो वाचा मार्यन्तः मार्येन पश्चन्तश्चक्षुषा शृरवन्तः । श्रोत्रेरा विद्वांसो मनसा मजायमाना रेतसैवमजीविष्मेति मविवेश ह वाक् ॥

पदच्छेदः ।

वाक्, ह, उचकाम, सा, संबत्सरं, प्रोप्य, आगत्य, उवाच, कथम्, अशकत, मत्, अनृते, जीवितुम्, इति, ते, ह, ऊचुः, यथा, अकलाः, अवदन्तः, वाचा, प्राग्णन्तः, प्राग्णेन, पश्यन्तः, चक्षुषा, श्रुगवन्तः, श्रोत्रेग्ण, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, अजीविष्म, इति, प्रविवेश, ह, वाक् ॥

श्चन्यः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

वाक् ह=तिसके पीछे वाणी उद्यक्ताम=शरीर से निकली + च=श्रौर तत्=वह संवत्सरम्=एक वर्षतक प्रोप्य=बाहर रहकर आगत्य=फिर वापस भाकर उवाच=इन्द्रियों से बोली कि मत्=मेरे ऋते=विना जीवितुम्=तुम सब जीवन में कथम्=कैसे द्माशकत=समर्थ होते भये ? इति=पेसा + श्रुत्वा=सुनकर ते=वे सब इन्द्रियां ह=स्पष्टवाणी से ऊचुः=कहने बगीं कि यथा=जैसे

श्रकलाः≔गूंगे पुरुष

वाचा=वाणी करके
श्रवदन्तः=न बोलते हुये
प्राणेन=प्राय करके
प्राणन्तः=जीते हुये
चश्रुषा=नेत्र करके
पश्यन्तः=देखते हुये
श्रोजेण=कान करके
श्राचन्तः=सुनते हुये
मनसा=मन करके
विद्वांसः=जानते हुये
रेतसा=बीर्य करके
प्रायमानाः=संतान उल्पक्ष करते

हुये
+ जीवन्ति=जीते हैं
प्रवम्=वैसेही
त्वाम्ऋते=तेरे विना
+ वयम्=इमलोग
अजीविष्म=जीते रहे हैं
इति=इस प्रकार
+ श्रुत्था=उत्तर सुनकर

वाणी=वाणी ह=भी प्रविवेश=शरीर में प्रवेश करती भई

भावार्थ ।

तिसके पश्चात् वास्सी शरीर से निकली, श्रीर एक वर्षतक बाहर रहकर फिर वापस आई, और श्रपने साथी इन्द्रियों से बोली कि तुम बग्रैर मेरे कैसे जीते रहे, इस पर सब इन्द्रियों ने उस वास्सी से कहा कि जैसे गूंगे पुरुष वास्सी से न वोलते हुथे, नेत्र से देखते हुथे, कानसे सुनते हुथे, मन से जानते हुथे, वीर्थ से संतान उत्पन्न करते हुथे, प्राम्स करके जीते हैं वैसेही हमलोग विना तेरे प्राम्स करके जीते रहे, ऐसा सुनकर वास्सी हार मानकर शरीर में फिर प्रवेश करती भई ॥ = ॥

मन्त्रः ६

चक्षुर्होचकाम तत्संवत्सरं मोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथान्धा अपस्यन्तश्चश्चषा माणन्तः माणेन वदन्तो वाचा शृएवन्तः श्रोत्रेण विद्वार्थसो मनसा मजायमाना रेतसै-वमजीविष्मेति मविवेश ह चक्षुः ॥

पदच्छेदः ।

चक्षुः, ह, उचकाम, तत्, संवत्सरम्, प्रोध्य, श्रागत्य, उवाच, कथम्, श्राशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, ह, ऊचुः, यथा, श्रान्याः, श्रापश्यन्तः, चक्षुषा, प्राण्याः, प्राण्येन, वदन्तः, वाचा, श्र्यवन्तः, श्रोत्रेण्, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, श्रजीविष्म, इति, प्रविवेश, ह, चक्षुः ॥

श्चन्दयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह=इसके पीछे चश्चः=नेत्रेन्द्रिय उच्चक्राम=शरीर से निकली + च=भौर तत्=वह संबत्सरम्=एक वर्षतक

प्रोच्य=बाहर रह करके + च=धार श्रागत्य=फिर वापस धाकर उवाच=कहती भई कि + यूयम्=तुम खोग मत=भेरे

ऋते=विना जीवितुम्=जीने में कथम=कैसे अशकत=समर्थ होते भवे ? इति=पेसा + अत्वा=सुन कर ते=वे सबवागादि इन्द्रियां ह=स्पष्ट ऊचु:=कहती भई कि यथा=जैसे द्याः=ब्रन्धेलोग चश्चषा=नेत्र करके अपर्यन्तः=न देखते हुये प्रागोन=पास करके प्राग्निः=जीते हुये वाचा=वाणी करके बदन्तः=कहते हुये भावार्थ ।

श्रीत्रेग्य=कान करके ऋगवन्तः=सुनते हुये मनसा=मन करके चिद्वांसः=जानते हुये . रेतसा=वीर्य से प्रजायमानाः=संतान उत्पन्न करतेहुये + जीवन्ति=जीते हैं एवम्=वैसेश + वयम्=हमलोग + त्वाम्ऋते=विना तरे अजीविष्म=जीते रहे इति=ऐसा + शत्वा=उत्तर सनकर चक्षुः≕नेत्रं।नेद्रय प्रचिवेश ह=शरीर में फिर प्रवेश

करती भई

तत्पश्चात् नेत्रेन्द्रिय शरीर से निकली, श्रीर एक वर्षतक बाहर रह कर फिर वापस आकर बोली कि, हे मनादि इन्द्रियो ! विना मेरे तुमलोग कैसे जीते रहे ? ऐसा सुनकर वागादि इन्द्रियों ने कहा कि जैसे अन्धेजोग नेत्र से न देखते हुथे, वाणी से बोजते हुये, कान से सुनते हुये, मनसे जानते हुये, बीर्य से संतान उत्पन्न करते हुये जीते हैं, बैसेही हमलोग तुम्हारे विना प्राणों करके जीते रहे, ऐसा उत्तर पाकर चक्षु इन्द्रिय हार मानकर शरीर में फिर प्रवेश करती भई ॥ ६ ॥

सन्त्रः १०

श्रोत्रथं होसकाम तत्संवत्सरं पोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथा बिधरा अशृएवन्तः प्रायन्तः प्रायोन बदन्तो वाचा पश्यन्तश्चश्चषा विद्वाछंसो

मनसा प्रजायमानाः रेतसैवमजीविष्मेति प्रविवेश ह श्रोप्रम् ॥ पदच्छेदः ।

श्रोत्रम्, ह, उचकाम, तत्, संबत्सरम्, प्रोष्य, आगस्य, उवाच, कथम्, आशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, ह, ऊचुः, यथा, बिद्याः, अश्रयवन्तः, श्रोत्रेग्या, प्राग्यन्तः, प्राग्येन, वदन्तः, वाचा, परयन्तः, चक्षुषा, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, आजी-विद्मा, इति, प्रविवेश, ह, श्रोत्रम् ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

श्चन्ययः

श्रश्राधन्तः=न सुनते हुये ह=तत्परचात् श्रोत्रम्=कर्वेन्द्रिय प्राग्न=भाग करके उच्चकाम=शरीर से निकली प्रात्त्र=जीवन निवाह करते हुये + च=श्रीर वाचा=वागी से घदन्तः=कहते हथे तत्=वह चक्षुषा=नेत्र से संवत्सरम्=एक सावतक पश्यन्तः=देखते हुये प्रोध्य=बाहर रहकर मनसा=मन से श्चारात्य=वापस धानकर विद्वांसः=जानते ह्ये उवाच=बोसी कि मत्=मेरे रेतसा=वीर्य से भूते=विना प्रजायमानाः=संतान उत्पन्न करते हुथे + जीवन्ति=जीते हैं जीवितुम्=जीने को प्वम्=वैसंही कथम्≔कैसे अशकत≕तुम सब समर्थ हुये + वयम्=हमलोग इति=ऐसा + त्वाम्ऋते=तेरे विना + श्रुत्वा=सुनकर झजीविष्म=जीते रहे ते=वे वागादि इन्द्रियां इति=ऐसा ह=स्प अ**खुः=वोद्यी कि** + श्रत्वा=सुनकर यथा=जैसे श्रोत्रम्=कर्षेन्द्रय वधिदाः=वहिरे प्रविवेश ह=फिर शरीर में प्रवेश श्रीतेष्ट्यान से करती मई

भावार्थ ।

इसके पीछे कर्ण इन्द्रिय शरीर से निकली, और वह एक सालतक बाहर रहकर और वापस आनकर बोली कि है बागादि इन्द्रियो ! मेरे विना तुम कैसे जीते रहे ? इस पर सबों ने कहा कि जैसे बहिरे कानसे न सुनते हुये, नेत्रसे देखते हुथे, मनसे जानते हुये, वाग्री से कहते हुये, वीर्य से संतान पैदा करते हुये जीते हैं, वैसेही हमलोग भी तुम्हारे विना प्राणा करके जीते हैं, ऐसा सुनकर कर्मा इन्द्रिय अपने को हारी मानकर शरीर में फिर प्रवेश होती भई ॥ १०॥

मन्त्रः ११

मनो होचकाम तत्संवत्सरं पोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत मद्देत जीवितुमिति ते होचुर्यथा मुग्धा अविद्वांसो मनसा पार्यन्तः पार्येन बदन्तो वाचा पश्यन्तश्चक्षुषा शृष्यन्तः श्रोत्रेग्य प्रजायमानाः रेत-सैवमजीविष्मेति पविवेश ह मनः ॥

पदच्छेदः ।

मनः, इ, उचकाम, तत्, संवत्सरम्, प्रोध्य, आगत्य, ववाच, कथम्, अशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, इ, ऊचुः, यथा, मुग्धाः, अविद्वांसः, मनसा, प्रासान्तः, प्रासान, वदन्तः, वाचा, पश्यन्तः, चक्कुषा, श्रयवन्तः, ओत्रेसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, आजीविष्म, इति, प्रविवेशा, इ, मनः ॥

पदार्थाः द्यान्धयः पदार्थाः ग्रास्वयः ह≕तिसके पीड़े उवाच=कहता भवा कि मत्=मेरे ग्रनः=सन ऋते=विना उचकाम=शरीरसे निकसा + स=भौर जीवितुम्=जीने में कथम्=कैसे तत्=वह अशुकत=तुम सब समर्थ होते संवत्सरम्=एक वर्षतक असे १

प्रोध्य=बाहर रहकर मये सागत्य=किर वापस सानकर इति=ऐसा + श्रत्वा=सुनकर
ते=वे वागादि इन्द्रियां
ह=स्पष्ट
ऊञ्चः=कहने नगीं कि
यथा=अैसे
मुखाः=मृद्रलोग
मनसा=मन करके
अविद्वांसः=न जानते हुये
प्राण्यन=प्राण्य करके
प्राण्यनः=चीते हुये
वाचा=वाणी करके
वदन्तः=चीतते हुये
चश्चुषा=नेत्र करके
प्रयुपा=नेत्र करके

श्रोत्रेश्=कान करके

>ट्रस्वन्तः=सुनते हुये

देसता=वीर्थ करके

प्रजायमानाः=संतान बरवन्न करतेहुये

+ जीवन्ति=जीते हैं

एवम्=वैसेही

+ वयम्=हमकोग

श्रजीविष्म=जीते रहे

हति=हस प्रकार

+ श्ररवा=वत्तर सुनकर

मनः=मन

ह=भी

प्रविवेश=शरीर में प्रवेश करता

भया

भाषार्थ ।

इसके पीछे मन शरीर से निकला, झौर एक वर्ष पर्यन्त बाहर रहा, झौर किर वापस झानकर कहने लगा कि तुम सब मुफ विना केंसे जीते रहे ? यह सुनकर वे सब बागादि इन्द्रियां कहने लगीं कि, जैसे मृह पुरुष मन करके न जानते हुये, पर वागाी करके बोलते हुये, नेत्र करके देखते हुये, कान करके सुनते हुये, वीर्य करके संतान को उत्पन्न करते हुये जीते हैं, वेंसेही हम सब प्राग्ण करके जीते रहे हैं, ऐसा सुनकर मन भी आपने को हारी मानकर शरीर में प्राप्त करगया।। ११॥

मन्त्रः १२

रेतो होचकाम तत्संवत्सरं पोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथा क्रीवा श्रमजायमाना रेतसा प्रायान्तः प्रा-योन वदन्तो वाचा पश्यन्तश्चक्षुषा शृपवन्तः श्रोत्रेण विद्वाश्वसो मनसैवमजीविष्मेति प्रविवेश ह रेतः ॥

पदार्थाः

पद्च्छेदः।

रेतः,ह, उश्वकाम, तत्,संवरसरम्, प्रोध्य, आगस्य, खवाच, कथम्, अश-कत्, मत्, ऋते,जीवितुम्, इति,ते, ह, ऊचुः,यथा, क्लीबाः, अप्रजायमानाः, रेतसा, प्रात्मन्तः, प्रात्मेन, वदन्तः, वाचा, पश्यन्तः, चक्षुषा, श्रूरावन्तः, स्रोत्रेग्म, विद्वांसः, मनसा, एवम्, अजीविष्म, इति, प्रविवेश, ह, रेतः ॥

पदार्थाः धास्त्रयः श्चन्वयः + अध=इसके पीछे रेतः=वीर्य ह≕भी उच्चक्राम=शरीर से निकलगया + च=श्रीर तत्=वह संवत्सरम्=एक वर्षतक प्रोध्य=बाहर रहकर श्रागत्य=िकर वापस श्रानकर उवाच=कहता भया कि + यूयम्=तुमकोग मत्=मेरे ऋते=विना जीवितुम्=जीने में कथम्=कैसे अशकत=समर्थ होते भये ? इति=पेसा + श्रुत्वा=सनकर ते=वे सब ह=स्पष्ट ऊचु:=कहते भये कि यथा=जैपे

क्रीबाः=नपुंसक जोग

रेतसा=वीर्य करके अप्रजायमानाः=संतान न उत्पन्न करते प्रारोन=प्राय करके प्राणन्तः=जीते हुये वाचा=वाणी करके धव्नतः=कहते हुये चक्षुषा=नेत्र करके पश्यन्तः=देखते हुये श्रोत्रेण=कान करके श्ट्रग्वन्तः=सुनते हुये मनसा=मन करके विद्वांसः=जानते हुये + जीवन्ति=जीते हैं एवम्=इसी तरह + वयम्=इमलोग श्रजीविष्म=जीते हैं इति=ऐसा + श्रुत्वा=उत्तर सुनकर रेतः≔वीर्यं ह≕भी प्रथिवेश=शरीर में प्रवेश करता भया

बृहदार्ययकोपनिषद् स०।

भावार्थ ।

इसके पीछे वीर्य शरीर से निकला, और वह एक वर्षतक बाहर रहा, फिर वापस आनकर पूछता भया कि है वागादि इन्द्रियो ! तुम कोग मेरे विना कैसे जीते रहे ? उन सबों ने उत्तर दिया कि जैसे नपुंसक पुरुष वीर्य करके संतान न उत्पन्न करते हुये वागाि से कहते हुये, नेत्र से देखते हुये, कानसे सुनते हुये, मनसे आनते हुये जीते हैं, वैसेही हमलोग भी प्राग्त करके जीते रहे, ऐसा सुनकर वीर्य भी अपने को हारी मानकर शरीर में प्रवेश करता भया ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

श्रथ ह प्राण उत्क्रिमिष्यन्यथा महासुहयः सैन्धवः पद्गीशशंकू-न्संटहेदेवछ हैवेमान्याणान्संववर्ह ते होचुर्मा भगव उत्क्रमीर्न वै शक्ष्यामस्त्वहते जीवितुमिति तस्यो मे बर्लि कुरुतेति तथेति ॥ पदच्छेदः।

भ्राथ, ह, प्रात्मः, उत्क्रमिष्यन्, यथा, महासुहयः, सैन्धवः, पङ्गीश-शंकून्, संबृहेत्, एवम्, ह, एव, इमान्, प्रात्मान्, संववर्ह, ते, ह, ऊचुः, मा, भगवः, उत्क्रमीः, न, वै, शक्ष्यामः, त्वत्, ऋते, जीवितुम्, इति, तस्य, उ, मे, विसम्, कुरुत, इति, तथा, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

प्रमचयः पदाधाः
अध ह=तिसके पीक्षे
यथा=जैसे
सैन्धवः=सिन्धुरेश का
महासुहयः=महाबबिष्ठ सुन्दर घोड़
पङ्गाशाकृत्=भपने मेकों को
संबृहेत्=उलाह बावे
पवम्=तैसेशी
प्राणान्=मगादि हिम्मगें को
ह वै=निरवय करके
प्राणाः=माबावाय

प्रतिथाः
संववर्ध=उनके उनके स्थानों से
उलादकर
उत्क्रमिष्यन्=संग क्षेचक्रने स्थानों से
ह=तव
ते=वे बागादि इन्द्रियां
ऊजुः=कहनेबर्गा कि
भगवः=हे पूज्यमाया !
मा=मत त्
उत्क्रमीः=चर्रार से बाहर निकस

प्राते≕विना मे=मेरे हो जीवितुम्=जीने के विये वित्म=बि न वै=कभी नहीं कुरुत=दो शक्यामः≔इम सब समर्थ होंगे इति=ऐसा + श्रत्वा=सनकर + तदा=तब + ते=वे बागादि इन्द्रियां + प्राशाः=प्राय ने + उवाच=उत्तर दिया कि नथा=वैसाही .. चलारा + श्रकुर्वन्=करती भई भावार्थ । तस्य≕तिस

सबके पीछे जैसे सिन्धुदेश का महाबिल हु सुन्दर घोड़ा अपने मेखों को उखाड़ डाको तैसेही बागादि इन्द्रियों को प्राग्यवायु उनके उनके स्थानों से उखाड़कर अपने संग के चलने लगा तब वे बागादि इन्द्रियां कहने लगी कि हे पूज्यप्राग्य ! तू शरीर से बाहर मत निकल तुम्म विना हमलोग जीने में अससमर्थ होंगे तब प्राग्यने उत्तर दिया कि मेरे को तुम सब बिल दो ऐसा सुनकरवागादि इन्द्रियां वेसेही करती मई।। १३।।

मन्त्रः १४

सा ह वागुवाच यद्वा आहं विसिष्ठास्मि त्वं तद्दिसिष्ठोऽसीति यद्वा आहं मितिष्ठाऽस्मि त्वं तत्मितिष्ठोऽसीति चक्षुर्यद्वा आहं छं संपद्स्मि त्वं तत्सं-पद्सीति भोत्रं यद्वा आहमायतनमस्मि त्वं तदायतनमसीति मनो यद्वा आहं प्रजातिरस्मि त्वं तत्प्रजातिरसीति रेतस्तस्यो मे किमकं किं वास इति यदिदं किंचाऽऽश्वभ्य आकृमिभ्य आकीटपतङ्गभ्यस्तत्तेऽस्मा-पोवास इति न ह वा अस्यानसं जग्धं भवति नानसं प्रतिगृहीतं य एवमेतदनस्यासं वेद तदिद्वा असः श्रोत्रिया अशिष्यन्त आचाम-न्त्यामन्त्येतमेव तदनग्नं कुर्वन्तो मन्यन्ते ॥

इति मथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

स, ह, वाग्, ख्वाच, यत्,वै, भ्रहम्, वसिष्ठा, भ्रस्मि, त्वम्, तत्, वसिष्ठः, भ्रसि, इति, यत्,वै, भ्रहम्, प्रतिष्ठा, भ्रस्मि, त्वम्, तत्, प्रतिष्ठः, श्रासि, इति, चक्रुः, यत्, वे, श्रहम्, संपत्, श्रास्म, स्वम्, तत्संपत्, श्रासि, इति, श्रोश्रम्, यत्, वे, श्रहम्, श्रायतनम्, श्रासि, त्वम्, तदा-यतनम्, श्रासि, इति, मनः, यत्, वे, श्रहम्, प्रजातिः, श्रासिम, त्वम्, तदा-यतनम्, श्रासि, इति, रेतः, तस्य, उ, मे, किम्, श्राश्रम्, किम्, वासः, इति, यत्, इदम्, किंच, श्रा, श्रवभ्यः, श्रा, कृमिभ्यः, श्रा, कीटपत-क्रेभ्यः, तत्, ते, श्रव्यम्, श्रापः, वासः, इति, न, ह, वा, श्रास्य, श्रान-श्रम्, अवति, न, श्र्वन्तम्, प्रतिगृहीतम्, यः, एदम्, एतत्, श्रानस्य, श्राश्रम्, वेद, तत्, विद्वांसः, श्रोत्रियः, श्रशिष्यन्तः, श्राचा-मन्ति, श्रशित्वा, श्राचामन्ति, एतम्, एव, तत्, श्रानग्नम्, कुर्वन्तः, मन्यन्ते ॥

पदार्थाः भ्रान्वयः + तेषु=उन सब में से + बलिदानाय=बाल देने के लिये + प्रथमम्=सब के पहिले सा=वह वाकू=वाणी ह=स्पष्ट उवाच=बोली कि यस् वै=यधि श्रहम्=मैं वसिष्ठा=भौरों से श्रेष्ठ श्रा€म≕इं + तथापि=पर + प्राग=हे माया ! त्वम्=तू तद्वसिष्ठः=उससे यानी मेरे से भी श्रेष्ठ त्रासि=है

इति=इसी प्रकार

पदार्थाः श्चन्वयः + चश्चः≔नेत्र ने + उवाच=कहा यत् वा=यद्यपि श्रहम्=भै चश्चः≔नेत्र प्रतिष्ठा=श्रीरों की प्रतिष्ठा श्रा€म=इं + तथापि=पर + प्राण=हे प्राण ! त्वम्=त् तत्प्रतिष्ठः=उसकी यानी मेरी भी प्रतिष्ठा द्यासि=है इति=इस प्रकार + श्रोत्रम् } = कर्ण बोला कि उवाच यत वै=यद्यपि

ऑप्रम्≐कर्ण

संवत्रूप हुं यानी संपत्= प्रविद्या पुरुषी को बेद प्रकृष करने

ग्रस्मि=हं

+ तथावि=पर

+ प्राण≔हे प्राण

त्वम्=तृ

तत्संपत्=स्वतः वेद प्रदृष शक्रिवास्ता

श्रासि≕है

इति=इसी प्रकार

+ मनः=मन

+ उवाच=बोबा कि

यत् वै=यवि श्रहम्=में

सनः=मन

आयतनम् } =सबका भाश्रवं हूं अस्मि

+ तथापि=पर

+ प्राण=हे प्राचा !

त्बम्⇒तृ

तदायतनम्=उसका बानी मेरा भी

भायतन

ग्रसि=है इति=रेसेडी

+ रेतः=कीर्य

+ उवाच=बोबा कि

यत् वै=पचिष

शहम्=मैं

रेतः=धीर्य

प्रजातिः=प्रजनन शक्रिवाला

धास्मि=हं

+ तथापि≕पर

+ प्राण=हे माख ! त्वम्=तृ

तत्प्रजातिः=डलका वानी मेरा भी प्रजनन शक्तिवासा

मसि इति=है

+ प्रायः=प्राय

+ उद्याच=बोला कि

+ यदि=यदि

+ एवम्=तुम्हारा पेसा कहना

+ साधु=डीक है तो

+ बृत=तुम लोग कही कि

तस्य उ≖उस

मे≔मुक्त प्राख का

ग्राग्=भोजन

किम्=क्या है ? + च=भीर

षासः=वष

किम्=स्या है ?

इति=यह सुनकर

ते=वे सब बागादि

+ झाडुः=बोसे कि

+ लेकि=बोक में

यत्=जो किच=कुद

इद्म्=यह यानी ग्राश्वभ्यः=कुत्ती तक

आकृमिभ्यः≔कृमियों तफ

ग्राकीटप- } ⇒कीट पतंगों तक तंगेभ्यः }

+ अस्ति=है तत्=वह सर्व ने ओगः=तेराही भोन + अस्ति≕रे + स=भीर श्चापः=जल वीसः=तेरा वस्र है यः≕जो उपासक प्वम्=इस प्रकार अनस्य=प्राच के पतस्≔इस द्धान्तम्=अब यानी भोग को वेद=जानता है + तस्य=उसको प्रतिगृहीतम्=प्रतिग्रह यानी गजा-दि दान अनुसम्=अन्तरे भिन्न यानी भोग वस्तु से पृथक् न=नहीं है यानी उस में कोई दोष नहीं है + च=भौर तत्=वैसेही श्चस्य=इस प्राण का जग्धम्⇒साया हुमा

सनसम्=स्रक्षते भिन्न नानी

भोज्य वस्तु से भिन्न

(निश्चय करके नहीं

क ह थै= र् है यानी सब सबस्पष्टी है

+ तस्मात्=इस जिये

श्रोत्रियाः=वेदपाठी
विद्वांसः=माज्य

(भोजन करने की
सशिष्यस्तः=(यानी भोजन करने हैं

यानी भोजन करने हैं

स्पाचामन्ति=जजसे आचमन करते हैं

स्पाचामन्ति=जजसे आचमन करते हैं

स्पाचामन्ति=जजसे आचमन करते हैं

सत्=ऐसा करने में
विद्वांसः=विद्वान् छोग

मन्यन्ते=समभते हैं कि

+ वयम्=हम लोग

श्चनम्=प्राय को

द्यानग्नम्=वस्नसहित कुर्चन्तः=करते हुए

पतम्=इस

मन्यामहे=समभते हैं भावार्थ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे वाणी बोली कि, हे प्राणा ! यद्यपि मैं झौरों से श्रेष्ठ हूं परन्तु झाप मेरे भी झायतन हैं किर नेत्र बोला कि यद्यपि मैं झौरों के लिये प्रतिष्ठा हूं परन्तु हे प्राणा ! तू मेरी भी प्रतिष्ठा है, तेरेही कृपा करके मैं प्रतिष्ठा-संगन्न हूं इसके पीछे मन बोला कि हे प्राणा ! यद्यपि मैं

औरों के लिये आयतन हूं परन्तु तही मेरा आयतन है, कर्या ने भी ऐसाही कहा यद्यपि में भीरों के लिये संपत्तिरूप हूं यानी भीर पुरुषों को वेदमहरा करने की शक्ति देनेवाला हं, पर हे प्रारा ! तू स्वतः वेदप्रहस्स शक्तित्राला है, मनने कहा हे प्रासा ! यद्यपि में सबको श्राश्रय देता हूं पर तू मेरा भी श्राश्रय है, ऐसही वीर्य ने कहा यद्यपि में प्रजनन शक्तिवाला हूं पर तू हे प्रासा ! मेरा भी उत्पादक है, इस प्रकार सब इन्द्रियों की बिनतियां सनकर प्रशा ने कहा है इन्द्रियगरा। बताबो मेरा आफ और बस्न क्या होगा ? तब इन्द्रियों ने उत्तर दिया कि हे प्राशा ! हे स्वामिन ! कुत्तों से, कुमियों से, कीट-पतंगों से लेकर जो कुछ इस पृथ्वी पर प्राग्रीमात्र हैं उनका जो भोग हैं वही भोग तुन्हारा भी होगा. श्रीर जल तुन्हारा वस्त्र होगा जो उपासक इस प्रकार प्रांगा की महिमा को जानता है वह कभी अन्न से शन्य नहीं होता है, श्रीर न प्रतिमह का कोई दोष उसको जगता है ऐसे जानते हुये श्रोत्रियगण भोजन करने के पहिले और पीछे, जल का आचमन करते हैं, ऐसा उनका करना मानी प्राग्यको अन्न जल देना है, और नम्न नहीं करते: हैं यानी सेवा सत्कार करते हैं।। १४॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

ऋथ द्वितीयं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

श्वेतकेतुई वा आरुणेयः पश्चालानां परिषद्माजगाम स आज-गाम जैवलि नवाहणं परिचारयमाणं तमुद्दीक्याभ्युवाद कुमारा ३ इति स भो ३ इति प्रतिशुश्रावानुशिष्टोन्वसि पित्रेत्योमिति होवाच ॥ प्रवच्छेवः।

श्वेतकेतुः, ह, वा, आरुपेयः, पञ्चालानाम्, परिषदम्, आजगाम सः, आजगाम, जैनलिम्, प्रवाहण्यम्, परिचारयमाण्यम्, तम्, उदीक्ष्य, काभ्युवाद, कुमारा, इति, सः, भोः, इति, प्रतिशुश्राव, अनुशिष्टः, श्चन्वसि. पित्रा. इति. 🛶. इति. ह. ख्वाच ॥

पदार्थाः ब्राह्मय:

श्चारुरोयः=भारुविका पुत्र श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु

ह वै=निरचय करके

पञ्चासानाम् । पञ्चासदेश के विद्वानीं परिषदम् । =की सभा में

श्राजगाम=जाता भया

+ तत्र=वहां

+ जित्वा=सभाको जीतकर फिर सः=वड श्वेतकेत

जैबिलम्=जीबलके द्रत परिचार- । अपने नौकरीं करके

यमाण्म् \ = सेष्यमान प्रवाहराम्=प्रवाहरा राजा के पास

धाजगाम=जाता भवा + तदा=तब

+ सः≔वह राजा तम्=इसको

उठीश्य=देखकर

कुमाराः=हे कुमार !

श्चान्सय: इति=ऐसा

अभ्युचाद=कहता भया

+ श्र=भीर

सः=बह रवेतकेत भोः=हे भगवन !

इति=ऐसा सम्बोधनकरके

पवार्थाः

प्रतिशुभाव=उत्तर दिया

इति=तिस पर

+ प्रवाह्याः=प्रवाह्य राजा

उवाच=पूछता भया

+ जु≔क्या

पित्रा=न पिता करके अनुशिष्टः } =शिक्षित किया गयाहै?

ह=तब

+ श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ने इति=ऐसा सनकर

खबाख=उत्तर दिया कि

&°=₹i

भावार्थ ।

हे सौम्य ! किसी समय आकृष्णिका पुत्र रवेतकेतु पश्वालदेश के विद्वानों की सभा में जाता भया और उस सभा को जीतकर वह जैबलि के पुत्र राजा प्रवाहरा के पास भी गया जो अनेक सेवकों करके सेवित होरदा था, राजकुमार रवेतकेतु को एक तुच्छ दृष्टि से देखकर सम्बोधन किया, धारे सड़के ! इसके जवाब में श्वेतकेतु ने तन्जन कहा है भगवन् ! इस पर राजा प्रवाहरा ने पूछा हे श्वेतकेतु ! क्या तू पिता करके क्षिणिक न्या है ? उसने उत्तर दिया हां हुआ हूं पृद्धिये ।। ? ।।

पदार्थाः

मन्त्रः २

वेत्य ययेमाः मजाः मयत्यो विमित्यचन्ता ३ इति नेति नेति होवाच वेत्यो यथेमं लोकं पुनरायचन्ता हित नेति हैवोवाच वेत्यो यथाऽसौ लोक एवं बहुभिः पुनः पुनः मयद्भिनं संपूर्यता है इति नेति हैवोवाच वेत्योयितित्थ्यामाहुत्याछं हुतायामापः पुरुषवाचो भूत्वा समुत्याय वदन्ती हैहित नेति हैवोवाच वेत्यो देवयानस्य वा पयः मितपदं पितृयाणस्य वा यत्कृत्वा देवयानं वा पन्थानं मित्यचन्ते पितृयाणं वाऽपि हि न ऋषेवचः श्रुतं देसृती भ्रष्टणवं पितृ-णामहं देवानामुत मत्यीनां ताभ्यामिदं विश्वमेजत्समेति यदन्तरा पितरं मातरं चेति नाहमत एकं च न वेदेति होवाच ।।

पदच्छेदः ।

वेत्थ, यथा, इमा:, प्रजाः, प्रयत्यः, विप्रतिपद्यन्ते, इति, न, इति, न, इति, ह, उवाच, वेत्थ, उ, यथा, इमम्, लोकम्, पुनः, आपद्यन्ते, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, यथा, असौ, लोकः, एवम्, बहुभिः, पुनः, पुनः, प्रयद्भिः, न, संपूर्यते, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, यतिथ्याम्, आहुत्याम्, हुतायाम्, आपः, पुरुषवाचः, भूत्वा, समुत्थाय, वदन्ती, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, देवयानस्य, वा, पथः, प्रतिपद्गम्, पिनृयास्य, वा, यत्, कृत्वा, देवयानम्, वा, पन्थानम्, प्रतिपद्गम्, पिनृयास्य, वा, अपि, हि, न, अर्थः, वचः, अतम्, हे, सुती, अश्रुस्त्वम्, पितृयास्य, अप्तृत्वा, समिति, यदन्तरा, मर्त्यानम्, ताभ्याम्, इदम्, विश्वम्, एअत्, समिति, यदन्तरा, पितरम्, मातरम्, च, इति, न, आहम्, अतः, एकम्, चन, वेद, इति, ह, स्वाच ॥

प्रन्वयः पदार्थाः **अन्वयः** + प्रवाह्याः=प्रवाह्य राजा + यदि=परि

+ प्रवाह्याः=प्रवाह्य राजा + यदि=पदि + उद्याच=रवेतकेतुसे पूकताहै कि वेत्य=तू जानता है तो

यथा=जिस प्रकार ं इमाः≔ये -प्रजाः=प्रजायें प्रयत्यः=मरकर जानेवाली विप्रतिपद्यन्ते= { भिन्न भिन्न कोकों को अपने कर्मानु-सार जाती हैं + ब्रवीतु=कह + सः उवाच=उसने उत्तर दिया कि न इति=नहीं ऐसा न इति=नहीं ऐसा + वेद्मि=जानता हूं मैं + पुनः≕फिर + प्रवाह्णः=प्रवाह्ण राजा + उवाच=पूबता भवा कि यथा=रयों प्रजाः=ये प्रजा इमम्=इस लोकम्=लोक को पुनः=किर आपद्यन्ते इति=जीट भाती हैं ख=क्या वेत्थ≖तू जानता है ह=तब + श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ह=स्पष्ट + उवाच=बोबा कि एव न=नहीं इति≕ऐसा + वेद्या=जानता हूं मैं पुनः≖फिर + प्रवाह्यः=अवाह्य राजा

े पप्रच्छ=पृष्ठता भया कि यथा=म्यां न=नहीं असी=वह लोकः=बोक बहुभिः=बहुतसी पुनः पुनः=बार बार एवम्=इस प्रकार प्रयद्भिः=मरनेवाली प्रजा करके संपूर्यते=पूर्ण होता है उ=क्या वेत्थ=तू जानता है ? + श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ने B=£18 उवाच=उत्तर दिया कि इति≕ऐसा न≕नहीं + वेद्मि=जानता हूं मैं + प्रवाह्यः=प्रवादया राजा ने पुनः=फिर + उवाच=पूद्धा कि यतिथ्याम्=िकतनी आहुत्याम्=भाहुतियों के हुतायाम्=देने पर आपः=जलरूपी जीव पुरुषवाचः=पुरुषवाचक भूत्वा=होकर + च=भौर समुत्थाय=उठकर वदन्ति=बोकने क्रगता है ड≔न्या

इति=पेसा घेत्थ=त् जानता है इति=इस पर + श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु उवाच=बोबा कि ह एच≕निश्चय करके इति=ऐसा न=नहीं + वेद्मि=जानता हुं मैं + प्रवाहगाः=प्रवाहगा राजा + पप्रच्छ=ितर पृष्ठता भया कि ज=∓या देवयानस्य=देवयान पथः=मार्गके प्रतिपदम्=साधन को वा=प्रथवा पित्यानस्य=पितृयान पथः=मार्ग के + प्रतिपद्म्=साधन को यत्=जिसको कृत्वा=प्रहण करके देवयानम्≔देवयान पन्थानम्=मार्ग को वा=ग्रथवा पित्याणम्=पित्यान पन्थानम्=मार्ग को प्रतिपद्यन्ते=बोक प्राप्त होते हैं चेत्थ=तृ जानता है + अत्र≔इस विषय में द्यपि वा=क्या

त्वम्=तुमने

श्रावेः=ऋषि के द्यचः≔वाक्य को न≕नहीं भुतम्=सुना हुना है ग्रहम्≕में इति≕९ेसे द्वे=दो सृती=मार्गी को अश्रुणवम्=सुन चुका हूं + एका=एक मार्ग पितृगाम्=पितरों का + अस्ति=है यानी इस मार्ग से पितरलोक को जाते हैं च=श्रीर द्वितीया=वृसरी मार्ग देवानाम्=देवें का + अस्ति=है यानी इस मार्ग से देवलोक को जाते हैं उत=परन्त् + इमे=ये सृती=दोनों मार्ग मर्त्यानाम्=जीवीं के हैं ताभ्याम्=इन्हीं करके इदम्≔यह विश्वम्≕सारा संसार समेति=जाता है + ते=ये द्वे=दोनों स्ती=मार्ग मातरम्≔माता यानी पृथ्वी

पितरम्=पिता यानी स्वर्ग

यदन्तरा=बोक के मध्य में है इति=इस पर इवेतकेतः=श्वेतकेत ने ह=स्पष्ट द्रवाच⊐कहा

श्रहम=में श्रतः≔इन प्रश्नों में से पकम् चन≐एकको भी वेद=जानता हं

भाषार्थ ।

हे सौन्य ! राजा प्रवाहणा स्वेतकेतु से पृद्धते हैं कि, हे कुमार ! जहां से प्रजा मरकर अपने कर्मानुसार भिन्न भिन्न लोकों को जाती हैं क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया में नहीं जानता हूं फिर राजा प्रवाहरण पूछते हैं कि जिस तरह से ये जीव इस कोक को फिर स्त्रीट आते हैं क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं ज्ञानता हूं, फिर राजा पृद्धते हैं कि हे कुमार ! जरा मरगा दुःखीं से मर कर परलोक को जीव आते हैं झोर वहां रहते हैं तो वह लोक क्यों नहीं जीवों करके भर जाता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं जानता हूं, फिर राजा में पूछा हे कुमार ! कितनी बार अपनि में आहुति देने से जल से लिपटा हुआ जीव उठकर बोलने लगता है यानी पुरुष होजाता है, क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं जानता हूं, फिर राजा ने पूछा हे श्वेतकेतु, हे इत्मार ! देवयान और पितृयान मार्ग का साधन कौनसा है ? तू जानता है जिस करके विधिपूर्वक देवयान या पितृयान मार्ग को जीव जाते हैं यदि कोई शङ्का करे कि ऐसे मार्ग हैं नहीं तो इसपर राजा वेद का प्रमासा देता है झौर कहता है कि क्या आपने वेद के उस वचन की नहीं सुना है ? जो इन दोनों मार्गों को बताता है. मैंने तो सुना है एक वह मार्ग है जो जीवों को पितृलोक में लेजाता है, और दूसरा वह मार्ग है जो जीवों को देवलोक में जेजाता है. यही दो मार्ग हैं जिन करके जीव जी जाते हैं, पितारूपी बुलोक है, मातारूपी पृथिवीक्षोक है, इन्हीं दो कोकों के मध्य में ये दोनों मार्ग विद्यमान है, क्या तू इन सब बातों को जानता है ? स्वेतकेतु ने उत्तर दिया इनमें से मैं किसीको नहीं जानता हूं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रयेनं वसत्योपमन्त्रयाश्वकेऽनाहत्य वसति कुमारः मदुद्राव स भाजगाम पितरं तथ होवाचेति वाव किल नो भवान्पुरानुःशिष्टान-वोचतेति कथथ सुमेध इति पश्च मा मश्नान् राजन्यबन्धुरमाक्षीचतो नैकंचन वेदेति कतमे तहतीम इति ह मतीकान्युदाजहार।।

पदच्छेदः।

अथ, एनम्, वसत्या, उपमन्त्रयाश्वके, अनादत्य, वसतिं, कुमारः, प्रदु-द्राव, सः, आजगाम, पितरम्, तम्, ह, उवाच, इति, वाव, किल, नः, भवान्, पुरा, अनुशिष्टान्, अवीचत, इति, कथम्, सुमेधः, इति, पश्व, मा, प्रश्नान्, राजन्यवन्धुः, अप्राक्षीत्, ततः, न, एकम्, चन, वेद, इति, कतमे, ते, इति, इमे, इति, ह, प्रतीकानि, उदाजहार ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्रन्वयः पदार्था श्रथ=इसके उपरान्त पनम्=स्वेतकेतु से घसत्या=श्रपने निकट बास करने के लिये + प्रवाह्णः=राजा प्रवह्ण ने उपमन्त्रयाञ्चके=कहा + परन्तु=सरन्तु

> सः≔वह कुमारः≔कुमार स्वेतकेतु वसतिम्≔वास को झनादृत्य≔ितादर करके प्रदुद्राव=अपने घरको चता

> > गया च=ग्रीर

पितरम्≔िपता के पास
श्राजगाम=पहुचा
+ च=श्रोर
ह=स्पष्ट
तम्=उस भपने पिता से
इति≕ऐसा
उचा हने खगा कि
पुरा≕पहिले
भचान्=शापने
नः≔मुक्तको
श्राद्योश्राग्=शिक्षा दिवाहुका
श्रावोच्चत=कहा था
घावकिल्ज=न्या यह बात नहीं है
+ पितां=पिताने

+ उवाच=कहा खन≃भी प्रश्त की सुमेधः=हे मेरे बुद्धिमान **श**हम्≕मेंने पुत्र ! न≕नहीं कथम्=कैसे घेद≕जान पाया इति=ऐसा तु कहता है + पिता≕पिता + पुत्रः=पुत्र खबाख=बोबा ते=वे प्रश्न + उद्याच=बोला कतमे=कीनसे हैं राजन्यबन्धुः=प्रवाह्य राजा मा=मुक्तसे + तदा≔तब 🕂 पुत्रः उवाच=पुत्र कहता भवा पञ्ज=पांच प्रश्नान्=प्रश्नों को ते≔वे प्रश्न अप्राक्षीत्=पृष्ठता भया इमे=ये हैं इति=ऐसा कहकर + परन्तु≔परन्तु ततः=डनमें से प्रतीकानि=सब प्रश्नों को पकम=एक उदाजहार=कहता भया

भावार्थ।

हे सौन्य ! इसके पश्चात् राजा प्रवाहता ने श्वेतकेतु से अपने निकट रहने के जिये कहा, परन्तु वह कुमार राजा के वचन को निरादर करके अपने घर चलागया, और अपने पिता के पास जाकर ऐसा कहने लगा कि आपने पहिले कहा था कि तू भलीप्रकार शिक्षित हुआ है, यानी सब विद्या का ज्ञाता होगया है, क्या यह बात ऐसी नहीं है, पिताने कहा हे मेरे प्रिय, पुत्र ! तेरे ऐसे कहनेका क्या कारण है ? पुत्र ने उत्तर दिया कि प्रवाहण राजाने मुक्ससे पांच प्रश्न किये, पर मैंने एकका भी उत्तर न जान पाया इस पर पिताने पूछा वे प्रश्न कीन से हैं, तब पुत्र ने कहा वे प्रश्न ये हैं, ऐसा कहकर प्रश्नों को कहता भया ॥ ३॥

मन्त्रः ४

स होवाच तथा नस्त्वं तात जानीथा यथा यदहं किंचन वेद

सर्वमइं त्युभ्यमवोचं मेहि तु तत्र प्रतीत्य ब्रह्मचर्य बत्स्याव इति भवानेव गच्छत्विति स भाजगाम गौतमो यत्र प्रवाहणस्य जैवले रास तस्मा भासनमाहृत्योदकमाहारयाश्वकाराथ हास्मा भर्ध्य च-कार तथ्य होवाच वरं भगवते गौतमाय दश्च इति ॥

सः, ह, उवाच, तथा, नः, त्वम्, तात, जानीथाः, यथा, यत्, आहम्, किंचन, वेद, सर्वम्, अहम्, तत्, तुभ्यम्, अवोचम्, प्रेहि, तु, तत्र, प्रतीत्य, ब्रह्मचर्यम्, वत्त्यावः, इति, भवान्, एव, गच्छतु, इति, सः, आजगाम, गौतमः, यत्र, प्रवाहरास्य, जैवलेः, आस, तस्म, आस्तम्, आहत्य, उदकम्, आहारयाञ्चकार, अथ, ह, आस्मे, आध्र्यम्, वकार, तम्, ह, उवाच, वरम्, भगवते, गौतमाय, द्दा, इति ॥ अन्वयः पदाधोः । अन्वयः पदाधो

ह≔तब सः≔वह पिता उचाच=बोला कि तात=हे पुत्र ! यथा=जैसा यत्≕जो किंचन≔कुष श्रहम्=मैं घेद्=जानता हूं तथा=वैसाही तत्=उस सर्वम्=सबकी श्रहम्≕में तुभ्यम्=तेरे विये अयोचम्=कर चुकाहूं नः=इमको त्यम्=तुम

इति≕ऐसा जानीधाः=समयो त्र≕सब प्रेहि≕मावो तत्र≔हस राजा के पास प्रतीत्य=चल कर ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्य वतको भारण कर ... वत्स्यावः≔वहां बास करगे + इति=ऐसा सुन कर + सः≔वह पुत्र + आइ≔बोला कि भवान् एव=भाप ही गच्छुतु=जार्ये इति⇒तव गीतमः≕ोतम

तत्र=वहां
श्राजगाम=जाता भया
यत्र=जहां
जीवले:=जीवल का पुत्र
प्रवाहणस्य=प्रवाहण राजा की
+ सभा श्रास=सभा थी
राजा=राजा
तस्मै=उस गौतम उहालक
के लिये
श्रासनम्=जासन
श्राहरय=देकर
उदकम्=जल

आहारयां- } नौकरों से मँगवाता चकार } नभया

श्रथ ह≕तिसके पश्चात्

के जिये

श्राज्यम् मर्म्य

यकार ज्वेता भया

ह=भीर

तम् = उससे

उवाच = योजा कि

भगवते = दे पूज्य,
गीतमाय = गीतम !

+ तुभ्यम् = सेरे जिये

वरम् = श्रेडवर

श्रहम् = में

दशः = देताहूं वामी देने

को तैयार हं

इति-ऐसा

+ उवाच=कहा

अस्मे⇒उस गीतम पारुकि

भाषार्थ।
हे सौम्य! उदालक भृषि पुत्र के वचनको सुनकर कहने लगे कि
हे पुत्र! जिस प्रकार और जो कुळ ज्ञान में जानता था उन सबको
तुम से मैं कह चुकाहूं तुमसे बढ़कर मुम्म को कौन प्रिय हैं जिसके लिये
में विद्या को छिपा रखता राजाने जो जो प्रश्न तुम से पूछे हैं और
तुमने मुम्म से कहा है उन्हें मैं नहीं जानता हूं यदि तुम उनको जानना चाहते हो तो मेरे साथ चलो राजा के निकट ब्रह्मचर्य वत धारण्
करते हुये बास करेंगे और उससे विद्याको महण् करेंगे जहके ने कहा
आपही जाइये, मैं तो राजाके निकट नहीं जाऊंगा, तब आरुण् का
पुत्र गौतम यानी उदालक जीवलके पुत्र प्रवाहण राजाकी सभा में
पहुँचा राजाने उसको आतिथि सत्कार करके आसन दिया और फिर
नौकरों से जल मँगवाकर भृषि को अर्थ दिया और देकर पूछा कि
हे भगवन ! आप जो वर चाहै माँगकों मैं देनेको तैयार हूं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच मतिहातो म एप वरो यां तु कुमारस्यान्ते वाचम-भाषयास्तां मे बूडीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, ख्वाच, प्रतिज्ञातः, मे, एषः, वरः, याम्,तु, कुमारस्य, अन्ते, वाचम्, अभाषथाः, ताम्, मे, बृहि, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह=तब सः=वह गौतम

+ राजानम्=राजा से

उवाच=कहा कि मे=मुक्तसे एषः=यह

वरः=वर + त्वया=भाप करके

प्रतिम्रातः=प्रतिज्ञात किया गयाहै त्र=अब याम्=जिस वाचम्=बात को

+ त्यम्=धापने कुमारस्य झन्ते=मेरे बड्के से

> त्रभाषधाः=पूद्धा था ताम ो

ताम् { =उसी बात को वाचम् } मे=मेरे, विषे

बृहि=कहिये इति=ऐसा कडा

भावार्थ ।

हे सौम्य ! प्रवाहण राजा के बचन को सुन कर गौतम उदालक अनृषि बोको कि, जो जो प्रश्न आपने मेरे कड़के से किये थे धन्हीं को सुक्त से कहिये और उन्हीं के बारे में उपदेश दीजिये यह मैं मांगता हूं !! ½ !!

मन्त्रः ६

स होनाच दैनेषु नै गौतम तद्दरेषु मानुषाणां मूहीति ॥ पदच्छेवः।

सः, ह, ज्वाच, दैवेषु, ते, गौतम, तत्, वरेषु, मानुषाग्राम्, हृहि, इति ॥

अन्सर:

पदार्थाः श्रास्ययः पदार्थाः

इति=इस पर

त्वम्=त्

स्नः=वड प्रवाड्या राजा

मानुषाणाम्=मनुष्यसम्बन्धी वरी

+ गौतमम्=गौतम से उवाच=बोबा कि

में से

गौतम=हे गौतम !

+ अन्यतमम=कोई + बरम्≔वर

तत्=यह वर दैवेषु=देवसम्बन्धी

ह=स्पष्ट

बरेष=वरोंमें से है

वृहि=मांग से

भावार्थ ।

इस पर राजाने कहा कि, हे गौतम ! सब देववरों में से यह वर श्चातिश्रेष्ठ है इस क्रिये उस वर को छोड़ कर मनुष्यसम्बन्धी वर जो आप चाहें मांगर्ज ॥ ६ ॥

मन्त्रः १९

स होवाच विश्वायते हास्ति हिरएयस्यापात्तं गोत्रश्रवानां दा-सीनां प्रवाराणां परिदानस्य मा नोभवान्बहोरनन्तरस्यापर्यन्तस्या-भ्यवदान्योभृदिति स वै गौतम तीर्थेनेच्छासा इत्युपैम्यहं भवन्त-मिति वाचाइस्मैव पूर्व उपयन्ति सहोपायनकीत्योंवास ।।

पदच्छेदः।

सः, ह, ख्वाच, विज्ञायते, ह, अस्ति, हिर्गयस्य, अपात्तम्, गोआ-श्वानाम्, दासीनाम्, प्रवाराग्णाम्, परिदानस्य, मा, नः, भवान्, वहोः, अनन्तरस्य, अपर्यन्तस्य, अभ्यवदान्यः, अभूत्, इति, सः, वै, गौतम, तीर्थेन, इच्छास, इति, उपैमि, श्रहम्, भवन्तम्, इति, वाचा, इ, सम, वै, पूर्वे, उपयन्ति, सः, ह, उपायनकीत्यां, उवास ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ड≔तव स्यः=वड गीतस उवाच=बोद्धा कि

+ त्वया=चापको विज्ञायते=विज्ञात है कि

+ मम=मेरे को

हिरएयस्य**≕सोना** गाम्रश्वानाम्=गौ घोदे हासीनाम्=दासियां प्रवाराणाम्=नौकर चाकर च≃घौर परिधानस्य≔वस्र की श्रपात्तम्=प्राप्ति + अस्ति=है भवान=श्राप नः≔सेरे श्चाभ=प्रति बहोः=बहुत श्चनन्तस्य=श्रनन्तफलपाल भ्रपर्थन्तस्य=समाप्तिरहित धन का अवदान्यः=श्रदाता मा भूत्=मत हो इति=इस पर सः≔वह प्रवाह्य राजा + % ह=बोला कि गौतम=हे गीतम ! नु=क्या आप तीर्थेन=शास्त्रविधिपूर्वक + मत्तः≔मुक्त से

+ विद्याम्=विद्या की
इच्छासे=इच्छा करते हैं ?
इति=इस पर
+ गौतम=गौतम ने
+ साह=कहा कि
सहम्=मैं
भवन्तम्=विधिपूर्वक सापके
निकट
हैंपैमि=मासहुद्या हूं
हि=क्योंकि
सम=पूर्वकाल में
प्रव=मी

शिव्रयान्=श्रिव्रों के पास ब्रह्म-विद्या के जिथे वाचा=नाया करके उपयन्ति=नम्र होकर + स्म=मास होते भये हैं ह सः=वह गीतम उपायन कीत्यां=केवज मुख्य से से वा वात्रय करके उद्यास=राजाके पास विद्या के

निमित्त रहता भया

भावार्थ ।

तव गौतम ने कहा कि, आपको मालूम है कि मेरे यहां गाय, घोड़े, दास, दासियां, वस्त्र आदिक बहुत हैं आप मुस्तको अवि-नाशी अनन्तभन दीजिये राजा ने कहा हे गौतम ! क्या आप विधि-पूर्वक विद्यारूपी धनके प्रह्मा की इच्छा करते हैं ? गौतमने कहा कि मैं आपके निकट शिष्यभाव से उपस्थित हुआ हूं हे राजन् ! पूर्वकाल मैं भी अनेक बाह्ममा वचनमात्र से सेवा और नम्रता करते हुये क्षञ्जिय

बृहदारययकोपनिषद् स०। 8 X 8 के निकट विद्या के लिये उपस्थित हुये हैं, और ऐसा कहकर वह बास करते लगे ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

स होवाच तथा नस्त्वं गौतम मापराधास्तव च पितामहा यथेयं विदेतः पूर्वे न कस्मिथ्रश्चन ब्राह्मण उवास तां त्वहं तुभ्यं वक्ष्यामि को हि त्वैवं ब्रुवन्तमहीति मत्याख्यातुमिति ॥

पदच्छेदः।

सः, इ, ख्वाच, तथा, नः, त्वम्, गौतम, मा, झपराधाः, तव, च, पितामहाः,यथा, इयम्, विद्या, इतः, पूर्वम्, न, कस्मिन्, चन, ब्राह्मगो. खवास, ताम्, तु, शहम्, तुभ्यम्, वक्ष्यामि, कः, हि, तु, एवम्, अव-न्तम्, आईति, प्रत्याख्यातुम्, इति ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः पूर्वम्=पहि**ले** इयम्=यह विद्या≔विषा कस्मिन्=किसी चन=भी ब्राह्मग्रे=बाह्मग्र में म=नहीं उवास=बास करती थी तु=परम्तु श्रहम्⇒में तुभ्यम्≔तुम्हारे बिये + ह=श्रवश्य ताम्=इस विद्या को वक्यामि=कडूंगा हि=क्यों कि प्वमू=ऐसे कोमक वचन मुबन्तम्=कहनेवाली

ह≕सब सः≔वह प्रवाहण राजा उवाच=कहने लगा कि गौतम=हे गौतम ! त्वम्=षाप तथा=वैसेडी ? इमारे अपराध को श्चपराधाः यथा≕जैसे + तब=चापके पितामहाः=पूर्वज**लोग** + पितामही=हमारे पूर्वजलोगों को + क्षमायन्ते } =क्षमा करते जाये हैं गौतम=हे गौतम ! इतः≔इससे

त्या=प्राप नाह्यण को कः=कीन पुरुष प्रत्याख्यातुम्=निरादर करना ऋर्दति इति=योग्य समक्रेगा

भाषार्थ ।

हे सौंम्य ! तब राजा प्रवाहरा कहने लगा कि हे गौतम ! जो मैंने आपसे पहिले कहा था कि आप देववर मांगते हैं उस वरको छोड़कर और कोई मनुष्यसम्बन्धी वर मांग लीजिये यदि आपको भेरे इस कहे हुये से क्रेश हुआ है तो मेरे अपराध को आप वैसेही क्षमा करें जैसे आपके पिता पितामहादि हमारे पितामहादि के अपराध को क्षमा करते आये हैं. हे गौतम ! यह ब्रह्मविद्या वास्तव में पहिले क्ष्त्रिय के कुल में रही है किसी ब्राह्मया के घर नहीं रही थी इस बातको आप भी जानते हैं. यह प्रथम बार है कि क्षत्रिय से ब्राह्मया के पास जायगी उस विद्या को जिसको आप चाहते हैं, मैं अवश्य टूंगा. कौन पुरुष है जो ऐसे कोमल बचन बोकनेवाले ब्राह्मया को इस विद्या के देने से इनकार करेगा। आप इसके पात्र हैं, आपके लिये इस विद्या को अवश्य टूंगा।। दा।

मन्त्रः ६

श्रसौ वै लोकोऽग्निगौंतम तस्यादित्य एव समिद्रश्मयो धूमोऽ हर्र्चिदिशोऽङ्गारा श्रवान्तरदिशो विस्फुलिङ्गास्तस्मिश्रेतस्मिश्चनौ देवाः श्रद्धां जुडति तस्या श्राहुत्यै सोमो राजा संभवति ॥

पदच्छेदः।

असौ, वै, लोकः, अग्निः, गौतम, तस्य, आदित्यः, एव, समित्, रश्मयः, धूमः, अहः, अर्चिः, दिशः, अङ्गाराः, अवान्तरदिशः, विस्कुलिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नौ, देवाः, अद्धाम्, जुह्नति, तस्याः, आहुत्यै, सोमः, राजा, संअवति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

गीतम्=दे गीतम ! लाकः

द्यसौ=वह

बै=निरचय करके

श्वामिनः=प्रथम श्रामिक्यद है|
तस्य=उस भ्रामि का
समित्=इन्धन
श्वादित्यः=सूर्य है
धूमः=चूम
रश्मयः=िकरण हैं
श्वाचिः=उसकी ज्वाला
श्वदः=दिन है
श्रङ्गाराः=प्रगार
दिशः=दिशार्य हैं
विस्फुलिङ्गाः=उसकी चिनगारियां

तिस्मन्=उसी

पतस्मन्=इस

ग्रागी=ग्रागि में
देवा:=इन्द्रादि देवता
श्रद्धाम्=अद्धारूपी इवि को
जुद्धति=देते हैं
तस्या:=उस दिये हुवे
ग्राहुत्य=ग्राहुति करके
सोम:=सोम
राजा=राजा
प्व=निरुचय करके
संभवति=उपम्न होता है

भावार्थ

हे सौम्य ! राजा प्रवाहरा पश्चाग्निविद्या का उपदेश उदालक भृषि से निम्न प्रकार करता है—हे गौतम ! स्वर्गलोकही झ्राग्निकुगड है, उसका इन्घन सूर्य है, उसका घूम किरगा हैं। उसकी ज्वाला दिन है, उसके झंगार दिशायें हैं, उसकी चिनगारियां उपदिशायें हैं, उसी झ्राग्निकुगड में इन्द्रादि देवता श्रद्धारूपी हिव को देते हैं, झ्रोर उस दिये हुये झाहुति से सोमराजा उत्पन्न होता है।। ह ।।

मन्त्रः १०

पर्जन्यो वा अग्निगीतिम तस्य संवत्सर एव सिमदश्वाणि धूमो विद्युद्धिरशनिरङ्गारा हादुनयो विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेतस्मन्नगौ देवाः सोमध्य राजानं जुद्दति तस्या आहुत्यै दृष्टिः संभवति ॥

पदच्छेदः ।

पर्जन्यः, वा, ध्रानिः, गौतम्, तस्य, संवत्सरः, एव, समित्, ध्राध्रािष्, धूमः, विद्युत्, ध्राचिः, ध्रश्निः, ध्रङ्गाराः, हादुनयः, विस्कुत्किङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, ध्रानौ, देवाः, सोमम्, राजानम्, जुह्नति, तस्याः, ध्राहुत्यै, दृष्टिः, संभवति ॥

श्रान्सय:

पदार्थाः

पदार्थाः

गौतम=हे गौतम !

पर्जन्यः=पर्जन्य

विस्फुलिङ्गाः=उसकी चिनगारियां हादुनयः=गर्जनशब्द हैं

आविनः=द्वितीयश्रविनक्षड है

तस्मिन्=उस पतस्मिन्=इस

तस्य=उस भ्राग्निका समित्=समिध् यानी इन्धन एव=ही

द्यानी=प्राग्नि में देवाः=देवतास्रोग

संवत्सरः=संवत्सर है धूमः=धूम उसके सोमम् }=सोम राजा का राजानम्

अभागि=बादव हैं श्राचिः=उसकी ज्वाला विद्युत्=बिजली है

जहाति=होम करते हैं तस्याः=तिस

श्रद्धाराः=उसके श्रद्धार श्रशनिः=वज्र हैं

आहुत्यै=बाहुति करके विष्टिः≂वृष्टि संभवति=होती है

भावार्थ ।

हे गौतम ! पर्जन्यही द्वितीय अग्निकुगड है, ऐसे अग्निकुगड का ईंधन संवत्सर है, उसका धूम बादल है, उसकी ज्वाला विजली है, उसका श्रंगार वज है, उसकी चिनगारियां गर्जना है, ऐसी श्रामि में होतालोग सोमराजा का हवन करते हैं, उस दिये हुये आहति करके बृष्टि होती है ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

श्रयं वे लोकोऽग्निगीतम तस्य पृथिव्येव समिद्दग्निधूमोरात्रि-र्राचेश्चन्द्रमा श्रङ्गारा नक्षत्राणि विस्फुलिङ्गास्तस्मिश्रोतस्मिश्चम्नौ देवा दृष्टिं जुहति तस्या श्राहुत्या श्रश्नं संभवति ॥

पवच्छेदः ।

अयम्, वे, लोकः, अग्निः, गौतम, तस्य, पृथिवी, एव, समित्, अन्ति:, धूमः, रात्रि:, अर्चिः, चन्द्रमा:, अङ्गाराः, नक्षत्राणि, विस्कु- जिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नौ, देवाः, वृष्टिम्, जुह्नति, तस्याः, आहुत्ये, अन्नम्, संभवति ॥

चन्वयः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

गौतम=हे गौतम ! भ्रायम्=यह दरयमान स्रोकः=स्रोक

वै=निरचय करके

ग्राग्निः=तृतीय ग्राग्निकुए**ड है**

तस्य=उसका समित्=इन्धन

पृथिवी=पृथ्वी

एव=ही है

धूमः=उसका धूम अग्निः=श्रग्नि है

श्राचिः=उसकी ज्वाता रात्रिः=रात्रि है

राजिः=राजि ह श्रद्धाराः=उसका सङ्घार चन्द्रमाः=चन्द्रमा है

विस्फुलिङ्गाः=डसकी चिनगारियां

नक्षत्राणि=नक्षत्र हैं

तस्मिन्=उसी पतस्मिन्=इस

> झानौ=ग्राग्नि में देवाः=देवता खोग

वृष्टिम्=दृष्टिरूप आहु-

तियों को जुह्वति=देते हैं

तस्याः=उस ब्राहुत्यै=ब्राहुति से

श्रन्नम्=श्रन्न संभवति=उत्पन्न होता है

भावार्थ ।

हे गौतम ! यह भूजोक तृतीय अग्निकुगड है, इसकी समिधा पृथिवी है, घूम अग्नि है, ज्वाला रात्रि है, अंगार चन्द्रमा है, चिनगा-रियां नक्षत्र हैं, जब इस अग्नि में देवतालोग दृष्टिरूपी आहुति को देते हैं, तब उस आहुति से अन्न उत्पन्न होता है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

पुरुषो वा अग्निगींतम तस्य व्यात्तमेव समित्याणो धूमो वाग-चिश्चश्चरङ्गाराः श्रोत्रं निस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेतस्मन्नग्नौ देवा अन्नं जुडति तस्या आहुत्यै रेतः संभवति ॥

पदच्छेदः ।

पुरुषः, वा, अन्तिः, गौतम, तस्य, व्यात्तम्, एव, समित्, प्रागाः, धूमः, वाक्, अर्चिः, चक्षः, अङ्गाराः, ओत्रम्, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्,

एतस्मिन, अग्नी, देवा:, अन्नम्, जुह्नति, तस्याः, आहृत्ये, रेतः. संभवति ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः श्चन्त्रयः पवार्थाः

गीतम=हे गीतम ! पुरुषः=पुरुष

वा=ही

अगिनः=चतुर्थ अग्निक्यद है तस्य=उसका

समित्≔इन्धन व्यात्तम्=मुख

> पव=ही है धुमः=धुम

वाकु=उसकी वासी है श्रङ्गाराः=श्रङ्गार

प्राणः=उसका प्राण है श्रचिं:=आवा

चक्षुः=उस के नेत्र हैं विस्फुलिङ्गाः=चिनगारियां श्रात्रम्=उसके कान हैं तिसम्बद्धाः

पतस्मिन्=इस श्चानी=श्चीन में

देवाः=देवतागया असम्=असस्पी आहुतिः

जहाति=देते हैं

तस्याः=उस आहत्यै=माहति से रेतः=वीर्य

संभवति=डलक होता है

भावार्थ ।

हे गौतम ! पुरुषही चतुर्थ श्राग्निकुगड है, उसका इन्धन मुख है. धूम उसका प्रासा है, ज्वाला उसकी वासी है, अंगार उसके नेत्र हैं. चिनगारियां उसके कान हैं, ऐसी इस अग्नि में देवता अन्नरूपी आ-हुतिको देते हैं, उस झाहुति से वीर्य उत्पन्न होता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

योषा वा अग्निगीतम तस्या उपस्थ एव समिल्लोमानि धूमो योनिर्रार्चियदन्तः करोति तेऽङ्गारा श्राभनन्दा विस्फुलिङ्गास्तस्मिने-तस्मित्रम्नी देवा रेतो जुहति तस्या त्राहुत्ये पुरुषः संभवति स जीवति यावज्जीवत्यथ यदा म्रियते ॥

पदच्छेदः ।

योषा, वा, अग्निः, गौतम, तस्याः, उपस्थः, एव, समित्,

लोमानि, धूमः, योनिः, अर्विः, यत्, अन्तः, करोति, ते, अङ्गाराः, अभिनन्दाः, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नौ, देवाः, रेतः, जुह्वति, तस्याः, आहुत्यै, पुरुषः, संभवति, सः, जीवति, यावत्, जीवति, स्रथ, यदा, म्रियते ॥

श्रास्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

गीतम=हे गीतम ! योषा=बी चा=ही श्चारिनः≔पांचवीं श्चारिनकुएडहैं। तस्याः=उसका समित्=इन्धन प्व=ही उपस्थः=उपस्थ इन्द्रिय है धूमः=धूम उसके लोमानि=लोम हैं श्रभिः=ज्वाला उसकी योनिः=योनि है यत्≔जो श्चन्तःकरोति=मैथुन करना है ते=वही श्रङ्गाराः=श्रङ्गार हैं विस्फुलिङ्गाः=उनकी चिनगारियां अभिनन्दाः=सुख है तस्मिन्=उसी

पतस्मिन्=**इ**स अग्नी=श्रीन में देवाः=देवतागण रेतः=वीर्य की जुहृति=भ्रःहुति देते हैं तस्याः=उस आहुत्यै=भाहुति से पुरुषः≕पुरुष संभवति=अपन होता है सः=वह पुरुष + तावत्=तबतक जीवति=जीता रहता है यावत्=जबतक + तस्य≃उसका + ऋायुः=भ्रायुष्य जीवति=बना रहता है श्रथ यदा=तत्परचात्

+ सः≔वह

च्चियते=मरजाता है

भावार्थ ।

हे गौतम ! स्त्री पांचवीं अग्निकुगड है, उसका इन्थन उपस्थ इन्द्रिय है, धूम उसके लोम हैं, ज्वाला उसकी योनि है, जो मैथुन करना है वही उसके अंगार हैं, इसकी चिनगारियां सुख है, जब उसी इस आग्नि में देवता लोग वीर्थरूपी आहुति देते हैं, तब उस आहुति से पुरुष उरपक्र होता है, आरोर वह पुरुष तबतक जीता रहता है जबतक उसकी आयु बनी रहती है, आरोर आयु नष्ट होने पर वह मरजाता है।। १३ ।।

मन्त्रः १४

श्रथैनमम्नये हरन्ति तस्याग्निरेवाग्निर्भवति समित्समिद्भूगो धूमो-ऽविंरचिरङ्गारा श्रङ्गारा विस्फुलिङ्गा विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेनौ देवाः पुरुषं जुद्दति तस्या श्राहुत्ये पुरुषो भास्त्ररवर्णः संभवति ॥ पवच्छेवः।

अथ, एनम्, अग्नये, हरन्ति, तस्य, अग्निः, एव, अग्निः, भवति, समित्, समित्, धूमः, धूमः, अचिः, अचिः, अङ्गासः, अङ्गाराः, विस्फु-लिङ्गाः, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नो, देवाः, पुरुषम्, जुह्नति, तस्याः, आहुस्ये, पुरुषः, भास्त्ररवर्षाः, संभवति ॥

श्चाराः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इसके उपरान्त

+ ऋत्विजः=वन्यु ऋत्विजादि

एनम्=स्तक शरीर को

श्रान्ये=द्राहके जिये

हरन्ति=स्मरान को जेजाते हैं

+ तत्र=वहां पर

तस्य=उस श्रान्त का

श्राग्निः=श्राग्न

एव=ही

श्राग्निः=श्राग्न

होता

+ भवति=होता है

समित्=असका इन्थन

समित्=प्रसिद्ध इन्थन है

धूमः=उसका धूम

ग्राचिः=उसकी ज्वासा ग्राचिः=प्रसिद्ध ज्वासा है श्रङ्गाराः=उसके श्रङ्गार श्रङ्गाराः=प्रसिद्ध श्रङ्गार हैं विस्फुलिङ्गाः=उसकी चिनगारियां हैं तिस्फुलिङ्गाः=प्रसिद्ध चिनगारियां हैं तिस्मन्=उसी एतस्मिन्=इस श्रुग्नी=श्रुग्नि में देवाः=देवता यांनी बान्धव-

गबा

पुरुषम्=मृतक पुरुष को जुह्वति=होम करते हैं तस्याः=डस माहुम्ये=माहुति करके पुरुषः=पुरुष मास्यरवर्षः=दीक्षमान् संभवति=होता है

भावार्थ ।

हे गौतम ! मरने के पश्चात् बान्धव झौर ऋत्विज् झादि सृतकं पुरुष को रमशान में दाह के लिये के जाते हैं, इसका जलानेवाला झिन होता हो, जलाने की लकड़ी सिमधा होती है, धूमही प्रत्यक्ष धूम है, ज्वालाही प्रत्यक्ष ज्वाला है, झङ्गारही प्रत्यक्ष झङ्गार हैं, चिन-गारियांही प्रत्यक्ष चिनगारियां हैं, श्मशानवाली झिन्न में बान्धवगणा सृतक पुरुष को झाहुति हप से डालते हैं, ऐसी झाहुति से वह पुरुष जो शरीर से प्रथमही निकलगया है, झितशय दीप्तिमान होजाताहै॥ १४॥

मन्त्रः १४

ते य एवमेतद्विदुर्ये चामी अरएये श्रद्धांश्च सत्यमुपासते तेऽ-चिरिभसंभवन्त्यचिषोऽहरह्व आपूर्यमाणपक्षमापूर्यमाणपक्षाचान्य-यमासानुदङ्ङादित्य एति मासेभ्यो देवलोकं देवलोकादादित्य-मादित्याद्वेश्चतं तान्वेश्चतान् पुरुषो मानस एत्य ब्रह्मलोकान् गमयति ते तेषु ब्रह्मलोकेषु पराः परावतो वसन्ति तेषां न पुनराष्ट्रचिः ॥

पदच्छेदः ।

ते, ये, एवम्, एतत्, विदुः, ये, च, झामी, झारएये, आद्धाम्, सस्यम्, उपासते, ते, झिन्दः, झाम् संभवन्ति, झिन्दः, झाहः, झाहः, झापूर्यमाण्यपक्षम्, झापूर्यमाण्यपक्षात्, यान्, षट्, मासान्, उदङ्, आदित्यः, एति, मासेभ्यः, देवलोकम्, देवलोकात्, झादित्यम्, झादित्यात्, वेयुतम्, तान्, वेयुतान्, पुरुषः, मानसः, एत्य, ब्रह्म- लोकान्, गमयति, ते, तेषु, ब्रह्मलोकेषु, पराः, परावतः, वसन्ति, तेषाम्, न, पुनः, झावृत्तिः ॥

पदार्थाः

द्यन्वयः पदार्थाः भग्वयः

ये=जो बिहान् श्र=भीर एलम्=इस प्रकार श्रमी=वे एतत्=इस प्रझानिनविषाको ये=जो विदुः=जानते हें श्रर्एये=्वन में

असाम्=अदासहित सत्यम्=सत्यम् की उपासते=उपासना करते हैं ते=ये दोनों श्रचिं:=प्रचिं श्रभिमानी वेवता को . श्राभिसंभवस्ति=प्राप्त होते हैं + च=फिर अर्चिष:=अर्चि अभिमानी देवता से श्रहः=दिन श्रभिमानी देवता को + पति=प्राप्त होते हैं श्रद्धः=दिन श्रमिमानी देवता से त्रापूर्यमाग्- } _श्क्रपक्षाभिमानी पक्षम् } देवता को + पति=प्राप्त होते हैं श्रापूर्यमाग्र- } शुक्रपक्षाभिमानी प्रक्षात् } व्हेवता से + तान्) उन छह महीनाभि-+ मासान्) मानी देवता को + पति=प्राप्त होते हैं यान्=जिनमें षट्=इह मासान्=महीना तक आदित्यः=सूर्य उद्क्⇒उत्तरायख पति=रहता है मासेभ्यः=डस इह महीनाभि-मानी देवता से देवलोकम्=देवलोक को + पति=आस होते हैं

देवलोकात्=देवकोक से मादित्यम्=सुर्वकोक को + पति=प्राप्त होते हैं मादित्यात्=सूर्यकोक से वैयुतम्=वियुत् बाभिमानी देवता को + पति=प्राप्त होते हैं + तदा=तब तान्=डन वैद्युतान्=विद्युत् सभिमानी देवताको प्राप्त पुरुषोको मानसः=मनसे सम्बन्ध रखने पुरुषः=कोई पुरुष पत्य=बाकर + तम्=उसको व्रह्मलोकान्=व्रह्मलोक को गमयति=बेजाता है ते≔बे पराः=भ्रष्टकोग तेषु≕डन व्रहालोकेषु=वद्यवोकीं में परावतः=भनेकवर्षी तक वसन्ति=वास करते हैं + च=भीर पुनः≕कर तेषाम्=श्नकी मावृत्तिः=**मा**वृत्ति + संसारे=इस संसार में न=गर्ही + भवति=होती है

भावार्थ ।

हे गौतम ! जो विद्वान इस प्रकार इस पश्चाग्निविद्या को जानते हैं और जो वन में अद्धासहित सत्य ब्रह्म की उपासना करते हैं, ये दोनों अर्थि अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, और अर्थि अभिमानी देवता से दिन अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, दिन अभिमानी देवता से युक्लपक्ष अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, युक्लपक्ष अभिमानी देवता से उन छह महीना अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, जिसमें छह महीना तक सूर्य उत्तरायण रहता है, उस छह महीना अभिमानी देवता से देवलोक को प्राप्त होते हैं, देवलोक से सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं, देवलोक से सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं, सूर्यलोक से वियुत्लोक के अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, सूर्यलोक से वियुत्लोक के अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, तब उन वियुत् प्राप्तहुये युरुषों को मनसे सम्बन्ध रखने-वाला कोई युरुष आकर उनको ब्रह्मलोक में लेजाता है, वे ब्रह्मलोक को प्राप्तहुये श्रेष्ठ युरुष उन को के सामानी देवता को प्राप्तहुये श्रेष्ठ युरुष उन को के सामाने सम्बन्ध रखने-वाला कोई युरुष आकर उनको ब्रह्मलोक में लेजाता है, वे ब्रह्मलोक को प्राप्तहुये श्रेष्ठ युरुष उन जनको ब्रह्मलोक वास करते हैं, और फिर उनकी आवृत्ति संसार में नहीं होती है।। १४।।

मन्त्रः १६

ध्य ये यक्नेन दानेन तपसा लोकाञ्जयन्ति ते धूममभिसंभवन्ति धूमाद्रात्रिश्च रात्रेरपत्तीयमाणपत्तमपत्तीयमाणपत्ताचान् पएमासान्दक्षिणाऽऽदित्य एति मासेभ्यः पितृलोकं पितृलोकाचन्द्रं ते चन्द्रं
प्राप्याकं भवन्ति ताश्चस्तत्र देवा यथा सोम श्च राजानमाप्यायस्वापत्तीयस्वेत्येवमेनाश्चस्तत्र भक्षयन्ति तेषां यदा तत्पर्यवैत्ययेममेवाऽऽ
काशमभिनिष्पचन्त श्चाकाशाद् वायुं वायोद्देष्टिं दृष्टेः पृथिवीं ते
पृथिवीं प्राप्याकं भवन्ति ते पुनः पुरुषाग्नौ इ्यन्ते ततो योषाग्नौ
जायन्ते लोकान् प्रत्युत्थायिनस्त एवमेवानुपरिवर्चन्तेऽथ य एती
पन्यानौ न विदुस्ते कीटाः पतङ्गा यदीदं दन्दश्क्स् ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

इथ, ये, यहेन, दानेन, तपसा, जोकान, अयन्ति, ते, धूमम्,

झिसंसंबन्ति, धूमात, रात्रिम्, रात्रेः, झपक्षियमाण्पक्षम्, झपक्षीयमाण्पक्षात्, यान्, षट्मासान्, दृक्षिणा, झादित्वः, एति, मासेभ्यः, पितृकोकम्, पितृकोकात्, चन्द्रम्, ते, चन्द्रम्, प्राप्य, झम्म, भवन्ति, तान्, तत्र, देवाः, यथा, सोमम्, राजानम्, झाप्यायस्त, झपक्षीयस्त, इति, एवम्, एनान्, तत्र, भक्षयन्ति, तेषाम्, यदा, तत्, पर्यवैति, झथ, इमम्, एव, झाकाशम्, झिमिनिष्पद्यन्ते, झाकाशात्, वायुम्, वायोः, वृष्टिम्, वृष्टेः, पृथिवीम्, ते, पृथिवीम्, प्राप्य, झम्म, भवन्ति, ते, पुनः, पुरुषान्ते, हूयन्ते, ततः, योषान्ते, जायन्ते, लोकान्, प्रति, उत्थायिनः, ते, एवम्, एव, झनुपरिवर्त्तन्ते, झथ, ये, एतौ, पन्थानौ, न, विदुः, ते, कीटाः, पतङ्गाः, यत्, इदम्, दन्दश्क्म् ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः + अभिसं· }=पास होते हैं भवन्ति } श्रथ=इसके उपरान्त ये⇒जो पुरुष रात्रे:=राम्यभिमानी देवता यक्षेन=यज्ञ करके के स्रोक से अपक्षीय- } कृष्यपद्याभिमानी माणपक्षम् ऽ देवता के बोक को द्वानेन=दान करके तपसा=तप करके + अभिसं- }=जाते हैं लोकान्=बोकों को जयन्ति=जीतते हैं यानी प्राप्त | झपक्षीयमा } ूक्ष्यपक्षामिमानी गुपक्षात् 🕽 देवताके बोक से होते हैं ते≔वे + तान=डर्ग + प्रथमम्=पहिने + षट=ब्रह महीना सभि-धूमम्=धूमानिमानी देवता मानी देवताके खोकको के स्रोक को + पति=शास होते हैं यान्=जिनमें श्रभिसंभवन्ति=आते हैं धूमात्=धूमामिमानी देवता ञ्रादित्यः≔सूर्य के खोक से दक्षिणा=दक्षियायन रात्रिम्=रात्रिश्चमिमानी देवता पति=रहता है के बोक की + ख=किं

मासेभ्यः=इइ महीनाभिमानी देवता से पितृलोकम=पितृलोक को + श्राभिसं- } =मास होते हैं महन्ति } पितृलोकात्=िपतृजोक से चन्द्रम्=चन्द्रकोक की + अभिसं- } = शास होते हैं + च=गौर ते=वे खन्द्रम्=चन्द्रकोक को प्राप्य=प्राप्त होकर श्रद्मम्=भोग्य भवन्ति=होते हैं तत्र=उनकी उस श्रवस्था में वेचाः=देवतालोग + एवम्=वैसेही

+ उपभ्रोग करते हैं यानी उनको कर्मा-नुसार भोग्य फल

एनान=उनके साथ

तत्र=उस सोमजोक में

यथा=जैसे
+ श्चरिवजः=श्चरिवज्
सोमम् } =सोमबता रसको
+ यहे=सोमबत में
- श्चाप्याय } =पी पी कर
+ ख=बीर

+ अपक्षयम्=क्षीय कर कर + परस्परम्=मापस में इ.ति≕ऐसा + वद्न्तः=कइते हुये आप्यायस्व=पियो पियो अपश्रीयस्व=जनतक समाप्त न होजाय भक्षयान्ति=अपभोग करते हैं + यदा=जब तेषाम्=उन कर्मियों का तत्=वह सोमजोकपापक पर्यवैति=क्षीय होजाता है ষ্ঠাখ=নৰ + ते≃वे इमम्=इस एव≃दश्यमान आकाशम्=माकाश को श्रमिनिष्पद्यन्ते=प्राप्त होते हैं आकाशात्≕मकाश से वायुम्=वायु को वायोः=वायु से वृष्टिम्=वृष्टि को वृष्टः=वृष्टि से प्रधिवीम्=पृथिवी को + अभिनि- }=बाते हैं + ख=बौर फिर

ते≔वे

पृश्चिवीम्=प्रियवी को

प्राप्य=प्राप्त होकर

प्रम् एव=इसी तरह श्रद्धम्=चव . +ते≕वे भवन्ति=होते हैं पुन:=किर अनुपरिवर्त्तन्ते=बार बार खोकों में या योनियों में प्राप्त होते हैं ते≂वे द्मध=घौर + अञ्जभूताः=अञ्जन्त होते हुये पुरुषाग्नी=पुरुषरूपी भाग्न में ये=जो हयन्ते=आइतिरूप से दिये पती पन्धानी=इन दक्षिया उत्तर जाते हैं सर्गा को न≕नहीं + पुनः≕फिर ततः=उस पुरुष में से चिदुः=जानते हैं यानी उपा-योषाग्नी=स्रीरूपी स्राग्न में सना नहीं करते हैं + ते≔वे ते≔वे + ह्यन्ते=ब्राहतिरूप से दिये कीटाः=की दे जाते हैं पतङ्गाः=पतिङ्गे + च≕केर + भवन्ति=होते हैं लोकम् प्रति=लोकमें भोगने के प्रति + च=श्रीर उत्थायिनः=श्रनुरागी होते हुये यत्=जो क्छ जायन्ते=उत्पन्न होते हैं इदम्=यह + च=भौर दन्दश्रकम्=मच्छरादियोनि है + कर्भ=कर्म को ते=वे + भवन्ति=होते हैं + अनुतिष्ठन्ते=करते हैं

भाषार्थ ।

हे सीम्य! जो कोई पुरुष यह करके, दान करके, तप करके पितृ-लोकादिकों को प्राप्त करते हैं, वे प्रथम धूमाभिमानी देवता के लोक को प्राप्त होते हैं, और धूमाभिमानी देवता के लोक से रात्रिक्षभिमानी देवताके लोकको प्राप्त होते हैं, और रात्रिक्षभिमानी देवता के लोक से कुट्यापक्षाभिमानी देवता के लोक को प्राप्त होते हैं, कुट्यापक्षक्षभिमानी देवता के लोक से उन छह महीनाक्षभिमानी देवताके लोक को प्राप्त होते हैं, जिनमें सूर्य दक्षियायन रहता है, किर छह महीनाक्षभिमानी देवता के लोक से पित्रलोक को प्राप्त होते हैं. पित्रलोक से चन्द्रलोक को प्राप्त होते हैं. और चन्द्रलोकको प्राप्त होकर अन यानी भोग बनते हैं उनके उस अवस्था में वैसेही चन्द्रलोक में उनके साथ देवता उपभोग करते हैं. यानी उनको उनके कर्मानुसार फल देते हैं जिसको उनकी इच्छा होती है. जैसे इस पृथिवीक्षोक में ऋत्विजकोग सोमयक में सोमलता के रस को पी पीकर झौर क्षीशा कर कर आपस में यह कहते हुये कि पीते चलो पीते चलो जब तक इसकी समाप्ति न हो-जाय, उपभोग करते हैं, जब चन्द्रलोक में प्राप्त हुये कर्मियों का फल क्षीता हो जाता है तब वे कर्मीलोग इस दृश्यमान आकाश की प्राप्त होते हैं, और आकाश से वायु को, वायु से वृष्टि को, वृष्टि से पृथिवी को आते हैं, और पृथिवी में आकर अन होते हैं, और फिर वह अन पुरुषह्वपी अभिन में आहुतिह्नप से दिये जाते हैं तब उस अन्न से बीर्य उत्पन्न होता है, वह बीर्य स्त्रीरूपी अग्नि में आहुतिरूप से दिया जाता है. तब वह लोकों में भोगने के लिये अनुरागी होकर उत्पन्न होते हैं. और फिर पहिले की तरह कार्य करते हैं. इस प्रकार वे पुरुष बारबार योनियों में प्राप्तद्वका करते हैं, और जो पुरुष दक्षिणायन और उत्त-रायगा मार्ग को नहीं जानते हैं यानी उनकी उपासना नहीं करते हैं, वे कीडे व पतिकों की योनिकों प्राप्त होते हैं ॥ १६ ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मणम्

मन्त्रः १

स यः कामयेत महत्माप्तुयामित्युदगयन आपूर्यमारापक्षस्य पुष्याहे द्वादशाहमुपसद्वती भूत्वौदुम्बरे कछसे चमसे वा सर्वो-षर्थं फलानीति संग्रत्य परिसमुग्र परिलिप्याग्निमुपसमाधाय परि-स्तीर्योऽऽद्वताऽऽज्वक्षं संक्षस्कृत्य पुछसा नक्षत्रेण मन्यछं संनीय जुहोति यावन्तो देवास्त्विय जातवेदस्तिर्यश्चो व्रति पुरुषस्य कामान्। तेभ्योऽहं भागषेयं जुहोमि ते मा तृप्ताः, सर्वैः कामैस्तर्पयन्तु स्वाहा। यातिरश्ची निपद्यतेऽहं विषरणी इति तां त्वा घृतस्य धारया यजे सर्छराधनीमहर्छस्वाहा।।

पदच्छेदः।

सः, यः, कामयेत, महत्, प्राप्तुयाम्, इति, ख्दगयने, आपूर्यमाण् पक्षस्य, प्रयाहे, द्वादशाहम्, खपसद्वती, भूत्वा, भौदुम्बरे, कंसे, चमसे, वा, सर्वेषभम्, फलानि, इति, संभृत्य, परिसमुद्धा, परिलिप्य, आग्निम्, खपसमाधाय, परिस्तीर्य, आदृताज्यम्, संस्कृत्य, पुंसा, नश्च-त्रेण्, मन्थम्, संनीय, जुहोति, यावन्तः, देवाः, त्वयि, जातवेदः, तिर्यश्वः, प्रन्ति, पुरुषस्य, कामान्, तेभ्यः, आहम्, भागधेयम्, जुहोमि, ते, मा, तृप्ताः, सर्वेः, कामैः, तर्पयन्तु, स्वाहा, या, तिरश्ची, निपचते, आहम्, विधरणी, इति, ताम्, त्वा, घृतस्य, धारया, यजे, संराधनीम्, श्रहम्, स्वाहा।।

अन्वयः

पदार्थाः , अन्वयः

पदार्थाः

न्वयः पद्ययः महत्=वकाई को प्राप्तुयाम्=में मास होकं इति=ऐसा यः=जो कामयेत=इच्छा करता है सः=वह + माक्=यज्ञ से पहिस्रे द्वादशाहम्=वारह दिनतक उपस्कृती=उपसदक्त करने

भूत्वा=होकर भौदुस्वरे=गूबर के कंसे=पात्र में वा=भथवा
चमसे=गूबर के चमस सदश
बर्तन में
सर्वोषधम्=सब बोषधियों को
च=भौर
फलानि=फर्बों को
संभृत्य=इकट्ठा करके
परिसमुद्य=भूमिको कार पाँख
कर बौर
परिसिट्य=कीप कर

श्रश्निम्≔मनि को उपसमाधाय=स्यापन **कर** परिस्तीर्थ=कुरा विदाकर ब्रास्ताज्यम्=रके हुवे वी को संस्कृत्य=संस्कार करके

पुंसा=पुरुवनामक

नक्षत्रेग=नक्षत्र के उदय होने पर

मन्धम्=सब बोवधियों से भरीहई मन्थ को

संतीय=सामने रखकर

उद्दर्शयने=सर्थ के उत्तरायण सार्ग विवे

आपूर्यमाण- } =शुक्रपक्ष के पक्षस्य

पुरायाहें=शुभ दिन में जुहोति=होम करे

+ एवम्=ऐसा

+ बुवतः=कहता हुआ कि

जातवेदः=हे जातवेद, श्राग्न !

यावस्तः=जितने देवाः=कृर देवता

त्वयि=तेरं विषे

+ स्थिताः=स्थित हैं +च=भौर

पुरुषस्य=पुरुष के कामान्=मनोरथों में

तिर्यञ्चः=विध्नरूप होकर झान्त=प्रतिबान्धित होते हैं

तेभ्यः=उनके बिये

श्रहम्≕में

भागधेयम्=वी का भाग

जुहोसि=देता हुं

ते=वे

तृप्ताः=तृप्त होते ह्रये

मा=मुक्को सर्वैः=सब

कामैः=कामनाश्रों से

|पैयन्तु स्वाहा=तृप्त करें ऐसा कहकर स्वाहा शब्द का उचा-

रण करे

+ च=श्रीर

या=जो

तिरश्ची=कुटिसगतिवाकी

+ देवी=देवी

+ त्वयि=तेरे विषे निपद्यते=स्थित है

+ च=भोर

इति=इस तरह या=नो

+ स्मरति=ख्याल करती है कि

ग्रहम्=में ही

विधरणी=सबको निग्रह करने वाली हं

ताम्=ऐसी

त्वा=तुम संराधनीम्=सिद्धकरनेवासी को

> श्रहम्=में वृतस्य=धी की

धारया=धारा करके

यजे=पूजन करता हूं

स्वाहाव्यद् मन्त्र परकरस्वाहा शब्द का उचारण करे

भाषार्थ ।

हे सीम्य ! अब कर्मकायत का वर्शान किया जाता है-जो कोई उपासक ऐसी इच्छा करे कि मैं संसार में बढ़ी पदवी को प्राप्त हो है तो उसको चाहिये कि यज्ञ से पहिले बारह दिनतक चपसदवत का करनेवाला हो, फिर गूलर के पात्र में आथवा गुलर की लकड़ी के बने हुये चमस सदश बर्तन में, भात में उत्पन हुई सब ब्रोषधियों की और फर्लों को इकट्टा करके रक्खे, और सूमि को कार पोंछ कर और कीप पोत कर उसमें अगिन को स्थापन कर वहीं कुशा विख्या कर हके हये घी का संस्कार करके जिस समय प्रहणनामक नक्षत्र उदय हुआ। हो, सब ओविधियों से भरी हुई मन्थ को अन्नि के सामने रखकर सूर्य के उत्तरायसाकाल में और शक्लपक्ष के शमदिन में हवन करे. ऐसा कहता हुआ कि है जातवेदा, अगिन ! तेरे विषे जितने कृर देवता है श्रीर पुरुषों के मनोरथ सिद्ध होने में हानि करनेवाले हैं, उनके किये में घी का आग देकर पूजन करता हूं, वे सब देक्ता मेरी दी हुई आ-हति से तम होकर सफको सब कामनाओं से तम करें, ऐसा कह कर स्वाहा शब्द का उचारणा करे और फिर हे जातवेदा ! तेरे विषे जी देवियां स्थित हैं और जो कुटिल गतिवाली हैं और जिनको यह ख्याल है कि मैं ही सब कामनाओं का निप्रह करनेवाली हूं, ऐसे विच करनेवाली और काम को सिद्ध करनेवाली को मैं नमस्कार करता हक्का घी की धारा दे करके पूजन करता हूं, यह मन्त्र पढ़ कर स्वाहा शब्द का चबारया करे।। १॥

मन्त्रः २

ज्येष्ठाय स्वाहा श्रेष्ठाय स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रवमवन-यति प्राप्ताय स्वाहा वसिष्ठाये स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव-मवनयति वाचे स्वाहा प्रतिष्ठाये स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव-मक्नमति चक्षपे स्वाहा संपदे स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव- मवनयति श्रोत्राय स्वाहाऽऽयतनाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छ-स्रवमवनयति मनसे स्वाहा प्रजात्ये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छ-स्रवमवनयति रेतसे स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छस्रवमवनयति ॥

पद्च्छेदः।

ज्येष्ठाय, स्वाहा, श्रेष्ठाय, स्वाहा, इति, आगो, हुत्वा, मन्ये, संस्नवम्, अवनयित, प्राणाय, स्वाहा, विसष्टाये, स्वाहा, इति, आगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित, वाचे, स्वाहा, प्रतिष्ठाये, स्वाहा, इति, आगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित, चस्रुपे, स्वाहा, संपदे, स्वाहा, इति, आगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित, श्रोत्राय, स्वाहा, आयतनाय, स्वाहा, इति, अगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित, मनसे, स्वाहा, प्रजात्ये, स्वाहा, इति आगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित, रेतसे, स्वाहा, इति, अगो, हुत्वा, मन्ये, संस्रवम्, अवनयित।

श्रन्वयः पदार्थाः ज्येष्ठाय स्वाहा≕ज्येष्ठ के तिये श्राहुति देता हूं

श्रेष्ठाय स्वाहा=श्रेष्ठ के तिये आहुति देता हूं इति=इस प्रकार

ग्रग्नौ=ग्रग्नि में हुत्वा≕ मन्थे=मन्थ में

संस्रवम्=वचे खुचे घृत को अवनयति=छोड़ता जाय प्राणाय स्वाहा=प्राण के लिये ब्राहुति

देता हूं वसिष्ठाये १ वसिष्ठकेलिये बाहुति स्वाहा ऽ दिता हूं इति=इसी तरह

इ।त≔इसा तरह आग्नो=ग्रामि में अन्वयः पदार्थाः

हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्रवनयति=छोडता जाय वाचे स्वाहा=वाणी के लिये बाहुति देता हूं

प्रतिष्ठाये } प्रतिष्ठा के लिये बाहुति स्वाहा } देता हूं इति=इस तरह

हुत्वा=होम करके मन्धे=मन्थ में संकावम्=बचे खुचे घृत को अवनयति=ढाबता जाय चक्षचे स्वाहा=नेत्र के बिये बाहति

दता हू संपदे स्वाहा≔सपद के जिये बाहुति

देता हं इति=इस तरह अन्ती=अन्ति में इत्वा≔होम करके मन्धे=मन्ध में संस्वाम=बचे खुचे घृत को श्चानयति=हालता जाय श्रोत्राय स्वाहा=श्रोत्र के लिये बाहुति देता हूं. आयतनाय } = श्रायतन के लिये स्वाहा } = श्राहृति देता हूं इति=इस तरह श्चारती=श्चरिन में हत्वा=होम करके मन्थे≃मन्थ में संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्रवनयति=डालता जाय

मनसे स्वाहा=मनके विषे भाइति प्रजात्ये स्वाहा=प्रजाति के लिये चाहुति देता हूं इति=इसं तरह श्रामी=श्रीन में इत्वा=होम करके मन्धे=मन्थ में संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्चवनयति=डाबता जाय रेतसे स्वाहा=वीर्य के बिये भाइति देता हं इति=इस तरह श्चरनौ=श्चरिन में हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ मं संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्चवनयति=हालता जाय

भावार्थ ।

हे प्रिय ! नीचे लिखे हुये मन्त्रों को यानी "ज्येष्ठाय स्वाहा, श्रेष्ठाय स्वाहा, प्रात्ताय स्वाहा, विस्तिष्ठाये स्वाहा, वाचे स्वाहा, प्रतिष्ठाये स्वाहा, चाचुले स्वाहा, संपदे स्वाहा, श्रोत्राय स्वाहा, श्रायतनाय स्वाहा, प्रज्ञात्वे स्वाहा, मनसे स्वाहा, रेतसे स्वाहा" इन मन्त्रों को पढ़ कर श्राग्ति में घृत की श्राहुति देता जाय श्रोर हर बार वचे खुचे घी को मन्ध में डालता जाय ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रग्नये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्थे सश्चस्वमवनयति सोमायः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्थे सश्चस्वमवनयति भूः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा कन्ते संश्रंभवमवनयितं भुवः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्क्षवमवन्यित स्वः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित भूभुवः स्वः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित श्रद्धाये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित श्रद्धाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित भूताय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित भविष्यते स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित विश्वाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित प्रवाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित प्रवाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित प्रवापतये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्श्रंभवमवनयित ।।

पदच्छेदः ।

आग्नये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सोमाय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सूः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सुः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, मूः, सुवः, स्वः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, श्रद्धाये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, श्रद्धाये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भूताय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भूताय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वाहा, हति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सर्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सर्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, प्रजापतये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, प्रजापतये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, प्रजापतये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति।।

पदार्थाः ऋग्वयः पदार्थाः श्रामवे स्वाहा≔पनिके क्षिवे प्राहृति इति≔ऐसा रेता हं + डक्स्वा≔कह कर

श्चारती≔शक्ति में इत्वा≔होम करके मस्थे=सम्ब में संस्वम्=वचे हुवे वृत को द्मवनयति≔हासता जाय सोमाय स्वाहा=सोम के विये बाहुति देता हं इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर श्चारनी≔ग्राग्नि में इत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये वृत्त को श्चवनयति=हाबता जाय भः स्वाहा=पृथिवी के विये श्रा-हुति देताहूं

इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर झानी=झिन में हुत्वा=होम करके मन्धे⇒मन्थ में संस्रवम्=क्वे हुवे घृत को झवनयति=डाबता जाय भुवः स्वाहा=अवर्जोक के बिये धाहुति देताहूं इति=ऐसा

बाहुति देताहूं इति=ऐसा + उक्त्वा=कइ कर झग्नी=चाग्न में हुत्वा=होम करके संस्मदम्=को हुवे घृत को मन्धे=मन्य में
झवनयति=दासता साव
द्याः स्वाहा=स्वः के क्षिये बाहुति
देताहूं
इति=ऐसा
+ उक्त्या=कह कर
झग्नी=प्रान्न में
हुरवा=होम करके
मन्धे=मन्य में
संस्रवम्=ष्वे हुये पृत को
अयनयति=छोदता जाय
भूःभुवःस्वः { इन तीनों के क्षिये
स्वाहा } बाहुति देता हूं
इति=ऐसा

हति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर अग्नी=अग्नि में हुत्वा=होम करके मन्धे=मन्थ में संस्रवम्=वचे हुये घृत को अवनयति=डाबता जाय

ब्रह्मणे स्वाहा=नम्म के क्षिये माहुति देताहूं इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर अग्नी=प्रिंग मं हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्य मं संस्रवम्=वचे हुये पृत को स्रवनयति=कालता जाय शक्राय स्वाहा=क्षत्र के क्षिये माहुति देताहुं

इति≕ऐसा + उक्त्या=कह कर अवनी=अविन में इत्वा=होम करके मन्थे=मन्थविषे संस्रवम्=बचे हुये घृत को श्रवनयति≔दावता जाय भूताय स्वाहा=भृत के किये बाहुति देताह इति=पेसा + उक्त्वा=कह कर श्चानी=श्वीन में द्वत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये घृत को श्चवनयति=डाबता जाय भविष्यत=भविष्य के लिये आहुति देता हूं इति=पेसा + उक्त्वा=कह कर श्चारनी=श्चारिन में ं हुत्वा=होम करके मन्धे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये घृत को श्रवनयति=हालता जाय विश्वाय स्वाहा=विश्व के किये ब्राहुति

देता हू

+ उक्त्वा≔कह कर द्यानी=चरिन में द्वत्वा=होम करके मन्धे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुवे वृत को श्चवनयति=हाबता जाय सर्वाय स्वादा=सब के लिये बाहुति देता हं इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर श्चारनी=श्चारिन में हुत्वा≔होम करके संस्रवम्=बचे हुये घृत को मन्धे=मन्थ में अवनयति=हालता जाय प्रजापतये \ _ प्रजापति के लिये

इति=पेसा

+ उपत्वा=कह कर अग्नो=ग्राग्न में हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये पृत को अयनयति=हाबता जाब

स्वाहा } = आहुति देता हं

इति≔ऐसा

भावार्थ ।

हे प्रिय ! इन नीचे लिखे हुये मन्त्रों को यानी " झग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा, भूःस्वाहा, भुवःस्वाहा, स्वःस्वाहा, भूर्मुवः स्वः स्वाहा, ब्रह्मणे स्वाहा, श्रद्धाय स्वाहा, भूवाय स्वाहा, भविष्यते स्वाहा, विश्वाय स्वाहा, सर्वाय स्वाहा, प्रजापतये स्वाहा" पढ कर श्राग्न में हवन करके बचे हये घत को मन्थ में डालता जाय ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

श्रथैनमभिमृशति भ्रमदसि ज्वलदसि पूर्णमसि मस्तब्धमस्ये-कसभमिस हिंकुतमिस हिंकियमाणमस्युद्गीयमस्युद्गीयमानमिस अा-वितमसि प्रत्याश्रावितमस्यार्द्रे संदीप्तमसि विभुरसि प्रभुरस्यन्त्रमसि ज्योतिरमि निधनमसि संवर्गोऽसीति ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एनम्, अभिमृशति, भ्रमद्, असि, ज्वलद्, असि, पूर्णम्, श्रांस, प्रस्तब्धम्, श्रांस, एकसभम्, श्रांस, हिंकृतम्, श्रांस, हिंक्रिय-माराम्, असि, उद्गीथम् , असि, उद्गीयमानम्, असि, आवितम्, श्रसि, प्रत्याश्रावितम्, श्रसि, श्राद्रें, संदीप्तम्, श्रसि, विभुः, श्रसि, प्रभुः, श्रसि, श्रन्भम्, श्रसि, ज्योतिः, श्रसि, निधनम्, श्रसि, संवर्गः. श्रसि, इति ॥

पदार्थाः श्चन्यः **द्यथ**=इसके उपरान्त एनम्=इस मन्थ को श्रभिमृशति=स्पर्श करे + च=भौर + आह=कहे + मन्ध=हे मन्थ ! भ्रमद्=जगत् को भ्रमानेवाला + त्वम् श्रसि=त् ही है असि=तू ही है उचलाद=हे मन्थ ! ब्रह्माएडका प्रकाश करनेवासा + त्वम् असि=त् ही है पूर्णम्=हे मन्थ ! इस ब्रह्मा-यह का ब्यापक

पदार्थाः श्चन्वयः + त्वम् आसि=तू ही है प्रस्तब्धम्=हे मन्थ ! श्राकाश की तरह निष्कश्प

+ त्वम् असि=त् ही है एकसभम्=इस जगत्रूपी सभा का सभापति

हिंकतम्=हे मन्थ ! यज्ञमें हिंकार + त्वम् आसि=तृ ही है हिंकिय- } _हे मन्थ ! हिंकार का

मायम् } विषय भी + त्वम् असि=त् ही है + मन्थ≕हे सन्थ !

उद्गीथम्=ॐकार + त्वम् आसि≔तु ही है + त्वम् असि=तु ही है विभः≔हे मन्य ! विभुरूप उद्गीयमानम्=हे मन्थ ! ॐकार का +त्वम् असि=त् ही है विषय भी प्रभः=हे मन्थ ! सर्वशिक्त-+ त्वम् असि=तृ ही है आवितम्=हे मन्थ ! आवित यानी यज्ञविषे प्रशंसा +त्वम् आसि=त् ही है अन्नम्=हे मन्थ ! अस क्षिया गया + त्वम् असि=त् ही है + त्वम आस=त् हा है ज्योतिः=हे मन्थ ! ज्योतिरूप हे मन्थ ! जिस ज्योतिः=हे मन्थ की प्रशंसा ऋत्विन् + त्वम् झसि=त् ही है जादि यहा विषे निधनम्=हे मन्ध सुनाते हैं सोई + स्वम् ऋति≔त ही है निधनम्=हे मन्ध ! जय स्थान + त्वम् असि=त् ही है + त्वम् असि=तृ ही है संवर्गः=हे मन्थ ! संहार-आर्टे=हे मन्थ ! मेघों के भीतर + त्वम् } =तृ ही है। झसि इति }=तृ ही है। संदीप्तम=प्रकाशरूप

भावार्थ ।

हे सीन्य! इसके उपरान्त आध्वर्धु मन्य को स्पर्श करे और कहे कि हे मन्य! तु जगत् का आमक है, तू ही हे मन्य! ब्रह्मायङ का प्रकाश करनेवाला है, तू ही हे मन्य! इस ब्रह्मायङ में व्यापक है, हे मन्य! तू ही आकाशवत् निष्कम्य है, हे मन्य! तू ही जगत्रूपी सभा का सभापित है, हे मन्य! तू ही यज्ञ विषे हिंकार है, हे मन्य! तू ही यज्ञ में हिंकार का विषय भी है, हे मन्य! अंकाररूप तू ही है, हे मन्य! क्षत्र विषे तू ही प्रशंसा किया गया है, हे मन्य! किसकी अशंसा यज्ञ विषे ऋत्विजादि सुनाते हैं सो तू ही है, हे मन्य! मेघों के अभ्यन्तर प्रकाशरूप तू ही है, हे मन्य! तू ही सर्वशिक्षान है, हे मन्य! तू ही सर्वशिक्षान है, हे मन्य! ज्योतिरूप

तू ही है, हे मन्थ ! जयस्थान तू ही है, हे मन्थ ! संहारकर्ता त ही है।। ४॥

मन्त्रः ५

श्रंथेनमुचच्छत्यामछस्यामछ हि ते महि स हि राजेशानोऽधि-पतिः स मार्थः राजेशानोऽधिपतिं करोत्विति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, एनम्, उदाच्छति, श्रामंसि, श्रामंहि, ते, महि, सः, हि, राजा, ईशानः, अधिपतिः, सः, मां, राजा, ईशानः, अधिपतिम्, करोतु, इति ॥

अथ=इसके उपरान्त एनम्=इस मन्थ को + अध्वर्युः=अध्वर्यु + मन्थम्=मन्थ को + हस्ते=हाथ में उचच्छति=लेता है + च=भौर + आह=कहता है कि

द्यान्वयः

+ सन्ध=हे मन्ध ! + त्वम्=तू + सर्वम्=सब आमंसि=जानता है

+ वयम्=हम खोग

ते≕तेरे

पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः महि=महिमा को आमंहि=मानते हैं स्यः=वही श्राप

हि=भवरय राजा=राजा है

ईशानः=सबका नियन्ता अधिपतिः=सब के पालक हैं

सः=श्राप सब के

राजा=मानिक हैं ईशानः=सब के शासन करने-

डारे हैं

माम्=मुक्को श्रिधिपतिम्=सबका अधिपति

करोत इति=करें

भावार्थ ।

हे सौम्य ! पूर्वोक्त प्रार्थना के पश्चात् मन्थसहित पात्र को हाथ में उठा लेता है और उससे प्रार्थना करता है. हे ब्रह्मन् ! हे मन्थ ! त सबका जानने वाला है हम तेरे महत्त्व को अच्छीतरह जानते हैं. तू ही सब का राजा है, तू ही सबका शासन करनेहारा है. इसिलये तू ही सबका अधिपति है, वही तूराजा सबका मालिक मुम्सको भी स्नोक में सब का अधिपति बना ॥ ४॥

मन्त्रः ६

भयेनमाचामित तत्सिविदुर्वरेषयम् मधुवाता ऋतायते मधुक्षर्रान्त सिन्धवः माध्वीनः सन्त्वोषधाः । भूः स्वाहा भगों देवस्य धीमिह्र मधु नक्षमुतोषसो मधुमत्पार्थिवछं रजः मधु द्यारस्तु नः पिता । भुवः स्वाहा थियो यो नः प्रचोदयात् । मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाछं अस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वः स्वाहेति । सर्वा च सावित्री-मन्वाह सर्वाश्च मुमतीरहमेदछं सर्व भूयासं भूधुवः स्वः स्वाहेत्यन्तत आचम्य पाणी प्रक्षान्य जयनेनाग्नि पाक्शिराः संविशति प्रातरादित्यमुपतिष्ठते दिशामेकपुण्डरीकमस्यहं मनुष्याणामेकपुण्डरितं भूयासमिति यथेतमेत्य जयनेनाग्निमासीनो वछंशं जपित ॥

पद्च्छेदः ।

श्रथ, एनम्, श्राचामित, तत्, सिनतुः, वरेगयम्, मधु, वाताः, श्राचायते, मधु, क्षरित्त, सिन्धवः, माध्वीः, नः, सन्तु, श्रोषधीः, मूः, स्वाहा, भर्गः, देवस्य, धीमिहि, मधु, नक्षम्, खत, उषसः, मधुमत्, पार्थिवम्, रजः, मधु, चौः, श्रस्तु, नः, पिता, भुवः, स्वाहा, धियः, यः, नः, प्रचोदयात्, मधुमान्, नः, वनस्पितः, मधुमान्, श्रस्तु, सूर्यः, माध्वीः, गावः, भवन्तु, नः, स्वः, स्वाहा, इति, सर्वाम्, च, सावित्रीम्, श्रम्वाह, सर्वाः, च, मधुमतीः, श्रहम्, एव, इर्म्, सर्वम्, भूयासम्, भूः, भुवः, स्वः, स्वाहा, इति, श्रम्ततः, श्राचम्य, पाणी, प्रक्षाल्य, जधनेन, श्रानम्, पाक्शिराः, संविश्वति, प्रातः, श्रादित्यम्, उपतिष्ठते, दिशाम्, एकपुण्डरीकम्, श्रासे, श्रहम्, मनुष्याणाम्, एकपुण्डरीकम्, भूयासम्, इति, यथेतम्, एत्य, जधनेन, श्रानम्, श्रासीनः, वशम्, अपति।।

पवार्थाः द्यान्वयः अध=तिस के उपरान्त एनम्=इस मन्य को ग्राचामति=सावे + तस्य=तिस मन्य भक्षण का + प्रकार:=प्रकार + इत्थम्=ऐसा है बरेएयम हे ईश्वर! भापकी अनुब्रह से वायुगण मधुकी तरह सुख-कारी होते हुये मेरी मधु वाता न दियां मधुर रस श्चतायते स्वाहा से पूर्व हो कर इ-मधु क्षरन्ति मारी तरफ चलती सिन्धवः रहें इस जीवों के माध्वीर्नः कल्यायां के लिये सन्त्वोषधीः भादि भः च्चोषधिया<u>ं</u> मध्र स्वाहा कृपा करते

+ एनम्≔इस म्बाइति को

रहो

पदार्थाः

+ उक्त्वा≔पढ़ कर + प्रथमम्=पहिला

+ प्रासम्=प्रास

श्राचामति≕सता है + पुनः=फिर

भगिः 🕽 देघस्य धीमहि

> डे परमात्मन् ! रात्रि और दिन मा-वियों की मधु होय हमारे कक्याम के विये यह पालन करनेहारा गुलोक मधु होय नभचर

+ एनम्=इस व्याहति को + उक्त्वा=कइ कर

+ इतीयम्=मन्थ के दूसरे

+ ग्रासम्=श्रास को ग्राचामति=बाता है

मधुमान्रो वन स्पतिर्म-धुमां अस्त सूर्यः माध्धी-र्गाषो भव-न्तु नः स्वः स्वाहा इति

हे परमात्मन् ! ह-मारेजिये वनस्पति मधुर होवें सूर्य म धुर होवे हमारे ब्रिये गौवें दुग्धदेनेवासी होवें भक्तोक और भूव-लोंक को सख पहुँ-

+ एनम्=इस व्याहति को + उक्त्वा=कह कर + तृतीयम्=मन्थ के तीसरे + प्रासम्=प्रास को +श्राचामति=लाता है

+ च=फिर

सर्वाम् सा-वित्रीम् च मधुमतीः इ-दम् सर्घम् श्रहम् एव भूयासम् भूःभुवःस्वः स्वाद्या इति

हे परमात्मन् !यह सब इम होजावें हे जगन्निवास, पर-मात्मन् ! भापके उस वर्षानीय तेज काध्यान इस सब में कर जो हमारे सब शुभकर्मी भौर भूयासम् इति=होऊं

+ इति=ऐसा

+ अवशिष्टम्=वचे हुवे मन्ध को + भक्षयत्=लावे अन्ततः=अन्त में यानी चारों प्राप्त के बाद श्चाच्य=भाषमन कर पाणी=हाथ प्रक्षाल्य=धो कर अभिनम्=श्रमि के जघनेन=पीछे प्राकृशिराः=पूर्व की तरफ शिर संविशति=सोवे प्रातः=दूसरे दिन प्रातःकाल आदित्यम्=सूर्यं का उपातिष्ठते=उपस्थान यानी प्रार्थना करे + आदित्य=हे सूर्व ! त्वम्=त् दिशाम्=दिशाश्रों में ऐसी आप कृपा करें एकपुराडरीकम्=श्रखयर श्रेष्ठ कमल-असि=स्थित है ऋहम्=मैं भी मनुष्याणाम्=मनुष्यां में प्रपने ग्रन्तःकरस्य एकपुएडरीकम्=ग्रखएड श्रेष्ठ कमल-वत् प्रिय ततः=उपस्थान के उपरान्त यथेतम्=जिस मार्ग से गया

> था उसी मार्ग से एत्य=यज्ञमण्डप में आकर

श्राय्त्रम्=श्रायत् के

जघनेन=पीवे श्रासीनः=वैठा हुमा वंशम्=वंश ब्राह्मण का जपति=जण करे

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जिस मन्थ को ऋत्त्रिज्लोग हाथ में लिये रहें उसको चार ग्रास करके नीचे लिखे हुये मन्त्रों को पढ़ कर भक्षणा करें, पहिला ग्रास इस मन्त्र करके भक्ष्या करें, ''तत्सिवितुर्वरेगयं मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः भूः स्वाहा⁷⁷ दूसरा प्रास दूसरे इस लिखे हुये मन्त्र करके भक्ष्या करें, "भर्गों देवस्य धीमहि मधुनकः-मुतोपसो मधुमत्पार्थिवंरज्ञः मधुद्योरस्तु नः पितासुवः स्वाह्य '' तीसरा ग्रास इस नीचे लिखे हुये मन्त्र करके भक्ष्गा करें, ''धियो यो नः प्रचो-द्यात् मधुमान्नोवनस्पतिर्मधुमां श्रस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वः स्वाहा" चौथे प्रास को इस नीचे लिखे हुये मन्त्र की पढ़ कर भक्षरा करें ''तत्सवितुर्वरेगयं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् मधु-मान्नो वनस्पतिर्मधुमां श्चम्तु र्सूयः माध्वीर्गावो भवन्तु नः मधुवाता श्रृता-यते मधुक्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीर्माध्वीर्गावो भवन्तु नः द्याहमेथेदं सर्व भूयासं भूर्मुवः स्वः स्वाहा⁷⁷ इसके पश्चात् श्राचमन कर दोनों हाथ घोकर अग्नि के पीछे पूर्व की तरफ सिरहाना करके सो जाय और दूसरे दिन प्रातःकाल उठ कर सर्वव्यापी परमात्मा सूर्य की प्रार्थना करे जिसका यह मन्त्र है " दिशाम् एकपुएडरीकम् आसि " हे सूर्य, भगवन् ! तू पूर्व पश्चिम आदि समस्त दिशाओं का श्रेष्ठ और अखगड अधिपति और कमजवत् सबको अतिप्रिय है इस जिये में चाहता हूं कि मनुष्यों में श्रेष्ठ होजाऊं झौर कमलवत् सबको प्रिय लगूं. इसके उपरान्त जिस मार्ग करके वह गया था उसी मार्ग करके यज्ञमगडप में लीट आकर अग्नि के पास घुटनों के बल बैठकर वक्ष्यमाण वंश ब्राह्मण का जप करे यानी ऋषि झौर ऋषियों के शिष्य का उचारण करे ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

तक हैतमुद्दालक आरुणिर्वाजसनेयाय याज्ञवल्क्यायान्तेवासिन उक्त्वोवाचापि य एनक शुष्के स्थाणौ निषिश्चेज्ञायेरघ्शाखाः परोहेयुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

तम्, इ, एतम्, उद्दालकः, आरुणिः, वाजसनेयाय, याझवल्क्याय, अन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, श्रपि, यः, एनम्, ग्रुष्के, स्थाणी, निषि-श्रोत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति ॥

चात्वयः

पदाथा ह=इसके परचात्

ब्रारुणिः≕मरुण के पुत्र

उद्दालकः=उदालक ऋषि ने तम्=उस

एतम्=इस होमविधि को निषिञ्चेत्=हात देवे तो

धाजसनेयाय) + स्वस्य (चाजसनेया

भन्तवासिन) धाद्मचल्क्याय≕याज्ञवल्क्य के प्रति

उक्त्वा=उपदेश देकर

उवाच=कहा कि

पदार्थाः | ऋन्वयः

यः

य≔जो एनम्=इस मन्थ को

पदार्थाः

शुष्कें=स्खे स्थाणी=दृक्ष के जपर

गपञ्चत्≕डातादवत शाखाः≔डातियां

जायेरन्=निकल ग्रावें

च=ग्रीर

पताशानि=पत्ते प्ररोहेयुः इति=जगजाय

भावार्थ।

हे सौम्य! इसके परचात् आरुगा के पुत्र उदालक ऋषि ने इसी होमविधि को आपने शिष्य वाजसनेयी याज्ञवरूक्य के प्रति उपदेश करके उससे कहा कि जो कोई इस मन्य को सूखे दृक्ष पर डाल देवे तो उस सूखे दृक्ष में से नूतन डालियां निकल आवें और पत्तियां भी झगजायाँ॥ ७॥

मन्त्रः द

एतपु हैव वाजसनेयो याइवल्क्यो मधुकाय पेक्वचावान्तेवासिन

जन्त्वोवाचापि य एन**छ शुष्के स्थाग्री निविश्वे**ज्ञायेरण्यास्ताः मरोहेयुः पलाशानीति ॥

पवच्छेतः ।

एतम , उ. ह. एव, वाजसनेयः, याज्ञवल्क्यः, मधुकाय, पेङ्गयाय, अन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, अपि, यः, एनम्, शुष्के, स्थार्यो, निष-🔌त्, जायरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति ॥

श्चन्धयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

ह उ=इसके बाद बाजसनेयः=वाजसनेयी याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने एतम् एव=इस होमविधि को श्चन्तेचासिने=भपने शिष्य पेङ्गश्चाय=पिक्न के पत्र मधुकाय } = मधुक को डपदेश करके

उवाच=कहा कि यः=जो कोई

एनम्=इस मन्थ को शुरके=स्खे स्थागौ=वृक्ष पर श्चपि=भी निषिञ्चत्=डाल देवे तो शाखाः=उस में से दावियां जायेरन्=निकल प्रावें + च=घौर

पलाशानि=पत्ते प्रराहेयुः इति=जगजार्य

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वाजसनेयी याह्यवल्क्य ने इस होमविधि को अपने शिष्य पिङ्ग के पुत्र मधुक के प्रति उपदेश दे कर कहा कि जो इस मन्थ को सुखे बृक्ष पर डाल देवे तो उस में से डालियां निकल आवें और पत्ते लग जायँ ।! ⊂ ।।

मन्त्रः ६

एतम् हैव मधुकः पैहृत्यश्चलाय भागवित्तयेऽन्तेवासिन उक्त्वो-वाचापि य एनछ शुष्के स्थागौ निषिश्चेज्ञायेरव्शालाः परोहेयुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, इ, एव, मधुकः, पैक्कयः, चूलाय, भागवित्तये, अन्तेवा-

सिने, उक्त्वां, डवाच, झिपि, य:, एतम्, शुब्को, स्थागाौ, निविश्वेत्, आयेरन्, शाखाः, प्रः ाः, प्रकाशानि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ह=िकर

पेंद्र्यः=िपक्व का पुत्र

मधुकः=मधुक

एतम् एव=इस होमिविधि को

उक्त्वा=उपदेश करके
अन्तेवासिने=अपने शिष्य
भागवित्तये=भगवित्ति के पुत्र
चुकाय=चुकके प्रति

चूलाय=चूलक प्रात उवाच=कहता भया कि यः=जो यज्ञकर्ता पनम्=इस मन्थ को ग्रुष्के=सूखे स्थाएौ=पेक पर निषिञ्चेत्=डाज देवे तो उसमें से शाखाः=डाजियां

शाखाः=राजियां जायेरन्=निकल श्रावें + च=श्रोर पेलाशानि=पत्तियां

प्ररोहेयुः इति=लगजायँ भावार्थ ।

फिर पिङ्ग का पुत्र मधुक इसी होमविधि को उपदेश करके ब्रापने शिष्य भगवित्ति के पुत्र चूलके प्रति कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सूखे बृक्षपर डाजदेवे तो उसमें से डाजियां निकल ब्रावें ब्योर पत्तियां जगजायाँ।। E।।

मन्त्रः १०

एतपु हैव चूलो भागवित्तिर्जानकय भायस्थूणायान्तेवासिन उक्त्वोवाचापि य एनछं शुष्के स्थाणौ निपिञ्चेज्ञायेर्ऽशालाः मरोहेयुः पलाशानीति ॥

पद्च्छेदः ।

एतम्, उ, इ, एव, चूलः, भागवित्तिः, जानकये, आयस्थूगाय, अन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, अपि, यः, एनम्, ग्रुष्के, स्थागाै, नि-विश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः भागवित्तिः=भगवित्ति का पत्र

भागवित्तिः=भगवित्ति का पुत्र स्रुतः=चूब

एतम् एव-इसी होमविधि को

उक्त्वा=उपदेश करके अन्तेवासिने=अपने शिष्य जानकथे=जनक के पुत्र आयस्थूणाय=आयस्थूण को उक्त्वा=उपदेश कर उवाच=कहता भया कि यः=जो कोई यज्ञकर्ता प्नम=इस मन्य को

शुष्के≔स्वे स्थाणी=पेदपर निषिञ्चेत्=डावदेवे तो शाखाः=डसमें से दावियाँ जायेरन्=निक्त वार्षे + च=घोर पताशानि=पत्तियाँ प्ररोहेयु: इति=बगजायँ

भावार्थ ।

भगवित्ति का पुत्र चूल इसी होमविधि को अपने शिष्य जनक के पुत्र आयस्थूमा के प्रति उपदेश देकर कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सूखे वृक्ष पर डालदेवे तो उसमें से नई डालियां निकल आवें और पत्तियां लगजायें ॥ १०॥

मन्त्रः ११

पतमु हैव जानिकरायस्थूणः सत्यकामाय जाबालायान्तेवासिन उक्त्वोवाचापि य एनछे शुष्के स्थार्णो निषिष्टचेज्जायेरच्छालाः प्ररोहेगुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, ह, एव, जानिकः, आयस्थूग्गः, सत्यकामाय, जाबा-जाय, अन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, अपि, यः, एनम्, ग्रुष्के, स्थाग्गौ, निषिश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पजाशानि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

ह उ=िषर जानिकः=जनक के पुत्र आयस्थूषाः=धायस्थूष पतम् पव=हसी होमविधि को उक्त्वा=उपदेश देकर अन्तेवासिने=धपने शिष्य जाबालाय=जनस के पत्र श्चन्ययः पदार्थाः सत्यकामाय=सत्यकाम के प्रति उवाच=कहता मया कि यः=जो कोई यज्ञकतां एनम्=इस मध्य को शुष्के=पृषे स्थाणी=इक्ष पर निषिञ्चेत्=डाजदेवे तो शाखाः=डसमें से डाव्रियां जायेरन्=निकस बावें + च≔मीर पलाशानि=पत्तियां प्रदोहेयुः इति=सगजाँ

भावार्थ ।

इसके परचात् जनक के पुत्र झायस्थूता इसी होमविधि को झपने शिष्य जवल के पुत्र सत्यकाम को उपदेश देकर कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सूखे दृक्ष पर डालदेने तो उसमें से डालियां निकल झानें और पंतियां लगजायें ॥ ११॥

मन्त्रः १२

एतपु हैव सत्यकामो जावालोऽन्तेवासिभ्य डक्त्वोवाचापि य एनध्य शुष्के स्थार्गी निषिष्टचेज्जायेरच्छालाः परोहेयुः पलाशा-नीति तमेतं नाषुत्राय वाऽनन्तेवासिने वा ब्रुयात् ॥

पदच्छेदः।

एतम्, उ, इ, एव, सत्यकामः, जावालः, अन्तेवासिभ्यः, उक्त्वा, धवाच, अपि, यः, एनम्, शुष्के, स्थाग्गौ, निषिश्चेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति, तम्, एतम्, न, अपुत्राय, वा, अनन्तेवासिने, वा, ब्रूयात् ॥

म्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह उ=फिर
जाबालः=जबल का पुत्र
सत्यकामः=सत्यकाम
पतम् पच=इसी होमविधि को
धानतेवासिभ्यः=अपने शिष्यों से
उदस्या⇒कह कर
उदाच=कहता मया कि
यः=जो कोई
पनम्=इस सन्ध को
ग्राफो=सके

स्थायी≔हक्ष पर ग्राय=भी निषिञ्चेत्=हाबदेवे तो शाखाः=डसमें से डावियां जायेरज्=निकक्ष द्यार्वे + च=द्यौर प्रसाशामि=परियां प्ररोहेगुःइति=बगजार्ये बा=परम्यु तम्=डस

एतम्=इस मन्ध को अपुत्राय=अपुत्र बा=भौर

भावार्थ।

इसी प्रकार हे सौम्य ! जबल का पुत्र सत्यकाम इसी होमविधि को अपने शिष्यों के प्रति उपदेश करके उनसे कहता भया कि जो कोई इस मन्थको सूखे दृश्पर डाज देवे तो उसमें से डाजियां निकल आवें और पत्तियां लगजायेँ परन्तु इस मन्थ यानी इस होमविधि का उपदेश अपुत्र और अशिष्य को न देवे ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

चतुरौदुम्बरो भवत्यौदुम्बरः स्त्रुव श्रौदुम्बरश्चमस श्रौदुम्बर इध्म श्रौदुम्बर्या उपमन्थन्यौ दश ग्राम्याणि धान्यानि भवन्ति त्री-हियवास्तिलमाषा अगुपियक्ववो गोधूमारच मस्रारच खल्वारच खल-कुलाश्च तान्पिष्टान्द्धनि मधुनि घृत उपसिश्चत्याज्यस्य जुहोति ॥ इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३॥

चतुरौदुम्बरः, भवति, श्रोदुम्बरः, ख्रुवः, श्रोदुम्बरः, चमसः, श्रो-दुम्बरः, इध्मः, भ्रौदुम्बर्यी, उपमन्थन्यौ, दश, प्राम्याखि, धान्यानि, भवन्ति, त्रीहियवाः, तिलमावाः, आणुत्रियङ्गवः, गोघूमाः, च, मसूराः, च, खक्वाः, च, खलकुलाः, च, तान्, पिष्टान, द्धनि, मधुनि, घृते, डपसिश्वति, आज्यस्य, जुहोति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

चतुरींदु- } गूबर के चार प्रकार स्वरः भवति } के पात्र होते हैं

इध्मः=बक्दी श्रोतु∓वर्यी=गूबर [।]

भौद्रवरः=गूबर का

झौ<u>तुस्वरः</u>=गृकर की

श्राम्यानि=धान्य

भवन्ति=धक्त विवे होते हैं
ते≔वे

मोहियवाः=धान, जव,
तिस्तमाषाः=तिस्त, उदद,
अणुप्रियद्भवः=भणुवा, कद्गुनी
गोधुमाः=गेहुं

मसुराः=मस्र
च=भार
खल्वाः=मटर
खल्कुलाः=इस्तथी हैं

तान् पिष्टान्=तिन पिसे हुये
धान्यां को
दधनि=दद्दी में
मधुनि=शद्द में
+ च=भौर
वृते=थी में
उपसिञ्जति=मिलावे
+ च पुनः=भौर फिर
झाज्यस्य=वृत का
जहोति=होम करे

भावार्थ ।

हे सौन्य ! होमकर्म करते में जो पात्र और अञ्चादिकों की आन्वश्यकता है उसके विधान को लिखते हैं—गूलर की लकड़ी के चार प्रकार के पात्र होते हैं. एक तो गूलर का खुवा होता है, दूसरा गूलर का प्याला होता है, तीसरी समिधा होती है, चौथे गूलर के उपमन्थनी पात्र होते हैं और जो दश प्रकार के अन्न प्राम में पैदा होते हैं वह यह हैं:—त्रीहि, जव, तिल, माप, कछुनी और आणुवा, गेहूं, मस्र, मटर, छुलथी इन सबको अच्छी तरह से पीस कर एक में मिलावे और उसमें दही, मधु और घृत डाले और फिर इसके पीछे घृत की आहुति देवे।। १३।।

इति तृतीयं ब्राह्मराम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मण्म्।

मन्त्रः १

प्पां वै भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या आपोऽपामोषवय ओष-धीनां पुष्पाणि पुष्पाणां फलानि फलानां पुरुषः पुरुषस्य रेतः ॥ पदच्छेदः।

एषाम्, वे, भृतानाम्, पृथिवी, रसः, पृथिव्याः, आपः, आपाम्,

श्रोषधयः, श्रोषधीनाम्, पुष्पाणि, पुष्पाणाम्, फलानि, फलानाम्, पुरुषः, पुरुषस्य, रेतः ॥

श्चान्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

षषाम्≔इन
भूतानाम्=पांच महाभूतों का
वै=निरचय करके
रसः=सार
पृथिवी=पृथिवी है
पृथिवयाः=पृथिवी का
. + रसः=सार
ग्रापः=जब हैं
ग्रापम्=जब का
+ रसः=सार
ग्रोषध्यः=भोषधियां हैं
श्रोषध्यः=भोषधियां हैं

+ रसः≔सार
पुष्पाखि=रूब है
पुष्पाखाम्=रूबां का
+ रसः≔सार
फलानि=रूबां का
+ रसः=सार
पुरुषः=पुरुष है
पुरुषस्य=पुरुष का
रसः=सार
रेतः≔वीर्थ है

भावार्थ ।

हे सोम्य ! इस चतुर्थ ब्राह्मगा में श्रीमन्थास्त्रकर्म के उपदेश के पश्चात् उत्तम सुयोग्य संतान के चाहने वाले मनुष्य के लिये रजोवीर्य की प्रशंसा की जाती है—हे सोम्य ! पांच जो महाभूत हैं उनका सार पृथिवी है, पृथिवी का सार जल है, जलका सार गेहूं, धान आदि ओषधियां हैं, आपिधियों का सार पुष्प हैं, पुष्पों का सार फल हैं, फलों का सार पुरुष हैं। १ ॥ १ ॥

मन्त्रः २

स ह प्रजापतिरीक्षांचके हन्तास्मै प्रतिष्ठां कल्पयानीति स स्त्रियथं सस्रजे ताथं स्टष्ट्वाऽघ उपास्त तस्मात्स्त्रियमघ उपासीत स एतं प्रान्नं प्रावाणमात्मन एव समुद्रपारयचेनेनामभ्यमृजत ।।

पदच्छेदः।

सः, इ, प्रजापतिः, ईक्षांचके, इन्त, अस्मै, प्रतिष्ठाम्, कल्पयानि,

इति, सः, स्थियम्, सस्जे, ताम्, सृष्ट्रा, अभः, रपास्ते, तस्मात्, स्त्रियम्, अधः, ज्पासीत, सः, एतम्, प्राच्यम्, प्राचार्यम्, आत्मनः, एव, समुद्रपारयत् , तेन, एंनाम् , अभ्यसुजत ॥

श्रन्धयः

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

सृष्ट्रा=उत्पन्न करके उसके

साथ द्यधः उपास्ते=मैथुन करता भवा

सः=वह प्रजापतिः=प्रजापति

ह=श्रवस्य

हन्त=कृपा के साथ ईशांचके=देखता भवा यानी

अस्मै=इस पुरुष के वत्पन करनेवासे वीर्य को

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को

कल्पयानि=देकं यानी शुभस्थान इति=ऐसा सोच कर

सः=वह प्रजापति स्त्रियम् उसी को

सस्क्रे≕डत्पन्न करता भया + पुनः≕किर

ताम्=उस सी को

अभ्यस् जत=संसर्ग करता भवा भाषार्थ ।

तस्मात्=इसी कारवा क्षियम्=ची के साथ विचार करता भगा कि अधः उपासीत=मैथुन जोग करें हि=क्योंकि सः=वह प्रजापति आत्मनः=भपने पतम्=इस प्राञ्चम्=योनिविषे जानेवासे समुद्पारयत्=फबप्रदसामध्यं से पूर्ण करता भया +च पुनः≕धौर किर न तेन=तिस ऐसी इन्द्रियकरके

पनाम्=उस की से

हे साम्य ! वह प्रजापति सृष्टि के पहिले बड़ी अनुप्रह के साथ विचार करता भया कि इस पुरुष के उत्पन्न करनेवाले वीर्य को कोई द्यूसस्थान में दूं ताकि वह विशेष फलदायक हो, ऐसा सोचने पर उसने की जाति को उत्पन्न किया और उत्पन्न करके उसके साथ मैधुनकर्म करता भया फिर वह प्रजापति अपने प्रकृष्टगामी प्रजनन इन्द्रिय को एस क्रीके उपस्थ में स्थापित करता भया (जैसे वाजपेय यहामें सोम-

कता से रस निकाकने के निमित्त सिल पर कोड़ा स्थापित करते हैं) क्योर फिर उसी क्यपनी इन्द्रिय करके उस स्त्रीसे पुत्रोत्पत्ति निमित्त संसर्ग करता भया इसलिये स्वभार्य क्योंके साथ पुत्रोत्पत्ति निमित्त सबको संसर्ग करना चाहिये ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

तस्या वेदिरूपस्थो लोमानि बर्हिश्चर्माधिषवणे समिद्धो मध्य-सस्तौ मुख्कौ स यावान्ह वै वाजपेयेन यजमानस्य लोको भवति तावा-नस्य लोको भवति य एवं विद्वानधोपहासं चरत्यासार्थः स्त्रीणाश्च सु-कृतं दृक्केऽथ य इदमविद्वानधोपहासं चरत्यऽस्य स्त्रियः सुकृतं दृक्कते।।

पदच्छेदः ।

तस्याः, वेदिः, उपस्थः, जोमानि, बर्हिः, चर्म, श्राधिषवग्रो, समिद्धः, मध्यतः, तौ, मुख्कौ, सः, यावान्, ह, वै, वाजपेयेन, यजमानस्य, खोकः, भवति, तावान्, श्रस्य, लोकः, भवति, यः, एवम्, विद्वान्, श्राधोपहासम्, चरति, श्रासाम्, खीग्णाम्, मुक्ठतम्, वृक्ते, श्राथ, यः, इदम्, श्रविद्वान्, श्राधोपहासम्, चरति, श्रस्य, स्त्रियः, मुक्ठतम्, वृक्ते ॥

तस्याः=उस खीकी
खपस्थः=उपस्थ इन्द्रिय
इवै=निरचय करके
चेदिः=चेदी है
लोमानि=जोम
बर्हिः=कुश हैं
तो=चे दोनों
मुफ्की=योनिसमीप मांसखयद

+आतडुहम् रे बैब का वर्म है जो यह-+वर्म रे विवे स्वता बाता है

सर्ग=चर्म

मध्यतः=बीचका कुग्रह समिद्धः=अर्दास सन्ति है वाजपेयेन=जाजपेय करके यावान्=जितना यजमानस्य=यजमान को लोकः=खोक की प्राप्ति भवति=होती है तावान्=बतनाही लोकः=खोक सस्य=स्स पुद्दव के मैधुन-

भवति=होता है

यः≔मो उपासक
प्यम्≔इस प्रकार
विद्वान्=जानता हुआ *
अधोपहासम्=मैयुन को द चरति=करता है अधो + सः=वह आसाम्=इन स्त्रीाणाम्=स्वियों के सुकृतम्=पुषय को

श्रथ=भीर यः=जो इदम्=इस बात को अविद्वान्=नहीं जानता हुमा अधोपहासम्=मैथुन को चरति=करता है अस्य=उसके सुकृतम्=पुग्य को स्थियः=स्थियां घुक्षते=हरलेती हैं

भावार्ध ।

हे सौम्य ! इस खीका सारा शरीर यह का साधन है, और उस की उपस्थ इन्द्रिय पिनत्र वेदी है, लोम कुशा हैं, और जो उपस्थ समीपस्थ दो मांस खयड हैं वही सोमलता के फल हैं और जो चर्म हैं वह वैल के चर्म के सहश है जो नाजपेय यह में रक्खा जाता है उपस्थ इन्द्रिय के बीच का कुगड प्रदीप्त अग्नि हैं जो इस अग्नि में जब वीर्यरूपी होम द्रव्य का हवन किया जाता है तो जितना फल यानी जोकादि वाजपेय यह करके होता है उतनाही फल जोकादि की प्राप्तिरूप इस यह करके होता है जो उपासक इस प्रकार जानता हुआ मेथुनकर्म करता है वह इन खियों के पुराय को प्राप्त होता है अग्रें का उपासक इस प्रकार जानता हुआ ते उपासक इस प्रकार जानता हुआ स्वभार्या से मेथुनकर्म करता है वह उस खीके पुरायकर्म के फल को प्राप्त होता है और जो ऐसा नहीं जानता हुआ मेथुनकर्म करता है वह उस खीके पुरायकर्म के फल को प्राप्त होता है और जो ऐसा नहीं जानता हुआ मेथुनकर्म करता है उसके पुरायकर्म को खिया हरलेशी हैं॥ ३॥

मन्त्रः ४

एतद्ध स्म वै तिद्ददानुदालक आरुणिराहैतद्ध स्म वै तिद्ददान्नाको मौहस्य आहेतद्ध स्म वै तिद्ददान्कुमारहारित आह बहनो मर्या ब्राह्मणायना निरिन्द्रियाविसुकृतोऽस्माङ्कोकात्मयन्ति य इदमवि- हा छंसो अधोपहासं चरन्तीति बहु वा इदछ सुप्तस्य वा जाप्रतो षा रेतः स्कन्टति ॥

पदच्छेवः।

एतत्, इ, सम, बै, तत्, विद्वान्, उदालकः, आकर्तिः, आह, एतत्, ह, स्म, वै, तत्, विद्वान्, नाकः, मोद्गल्यः, आह, एतत्, ह, स्म, वे, तत्, विद्वान्, कुभारहारितः, स्राह, वहवः, मर्याः, ब्राह्मग्णा-यनाः, निरिन्द्रियाः, विसुक्ततः, अस्मात्, लोकात्, प्रयन्ति, ये, इदम्, श्राविद्वांसः, श्राघोपहासं, चरन्ति, इति, बहु, वा, इदम्, सुप्तस्य, वा, जाप्रतः, वा, रेतः, स्कन्दति ॥

श्चन्वयः

श्चरवयः

पदार्थाः

पदार्थाः :=घरण का पुत्र विद्वान्=विद्वान् **उद्दालकः=उदासक ने** तत्=तिस एतत्=इस मैथुनकर्म को + इति=ऐसा भाह स्म=क्हा है + च=घौर तत्=तिसी पतत्=इस मैथुनकर्म को मौद्रल्यः=मुद्रज का पुत्र चिद्वान्=विद्वान् नाकः=नाक ने ह बै≂स्पष्ट + इति=ऐसा ब्राह् स्म=कहा + च≔ग्रीर तत्=तिसी प्ततःइस मैथुनकर्म को

विद्वान्=विद्वान् कुमारहारितः=कुमारहारित ने ह बै=स्पष्ट इति=ऐसा भाह स्म=कहा है कि + ते=वे बह्वः=बहुत से मर्याः=मरग्धर्मी निशिन्द्रयाः=इन्द्रियों के विषयों में भासक हुये विसुकृतः=पुण्यरहित ब्राह्मणायनाः=जातिमात्र के ब्राह्मण

ग्रस्मात् } इस लोक से यानी लोकात् } गरीर से प्रयन्ति=दूसरी योनि को प्राप्त होते हैं ये≕जो

इदम्=इस डक्न मैध्न को श्रविद्यांसः=न जानते हुये

चांच्याक्रम् (विधर्धित मैधुन को वां=या चरन्ति इति करते हैं + स्रल्पम्=क्रम + स्व=मीर इत्म=यह यदि=भगर यदि=भगर स्तुस्य=सोये हुये पुरुष का वां=भथवा + सः=वह आप्रतः=जागते हुये पुरुष का वहु=वहुत + प्रायश्चित्तम्=प्रायश्चित्त + कुर्यात=करे

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इस मैथुनकर्म की प्रशंसा अक्या के पुत्र विद्वान उदा-लक अनुषिने की है, और वैसेही सुद्रल के पुत्र विद्वान नाकने की है, तिसी कर्म की प्रशंसा कुमारहारित ने की है, इन लोगों का यह कहना है कि बहुत से मरण्यभां इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हुये पुरायरहित नाममात्र के ब्राह्मण्य इस योनिसे दूसरी योनि को प्राप्त होते हैं जो मैथुनकर्म की विधि को नहीं जानते हुये और उसके ताल्पर्य को न समस्तते हुये मैथुनकर्म करते हैं, हे सौम्य ! इन अनुषियों की आज्ञा है कि अगर सोये हुये पुरुष का अथवा जागते हुये पुरुष का वीर्य बहुत या कम गिर जाय तो वह प्रायश्चित्त अवस्य करे ॥ ४॥

मन्त्रः ५

तदिभष्टरोदतु वा मन्त्रयेत यन्मेऽच रेतः पृथिवीमस्कान्त्सीच-दोषधीरप्यसरचदपः इदमहं तद्रेत आददे पुनर्मामेत्विन्द्रियं पुनस्तेजः पुनर्भगः पुनरग्निर्धिष्ण्या यथास्थानं कल्पन्तामित्यनामिकाङ्गुष्ठा- -भ्यामादायान्तरेण स्तनौ वा सुवौ वा निष्ठुच्यात् ॥

पदच्छेदः ।

तत्, अभिमृशेत्, अनु, वा, मन्त्रथेत, यत्, मे, अण, रेतः, पृथि-वीम्, अस्कान्स्सीत्, यत्, ओषभीः, अपि, असरत्, यत्, अपः, इदम्, अहम्, तत्, रेतः, आददे, पुनः, माम्, एतु, इन्द्रियम्, पुनः, तेजः, पुतः, भर्गः, पुतः, अनिर्विषयाः, यथास्थानम्, कल्पन्ताम्, इति, अनामिकाङ्गुष्ठाभ्याम्, आदाय, अन्तरेगा, स्तनौ, वा, भ्रुवौ, वा, निमृज्यात् ॥

ब्रास्वयः

पदार्थाः सन्वयः

पदार्थाः

तत्ःविकत्ते हुषे उस वीर्य को अभिमृशेत्=स्पर्य करे या=भीर मन्त्रयेत=उसके कपर हाथ रक कर मन्त्र पढ़े कि

> यत्≕जो झद्य=भाज मे≔मेरा

रेतः=वीर्थं पृथिवीम्=पृथिबी पर श्रस्कान्त्सीत्=गिरता भया

यत्≕जो वीर्य स्रोपधीः≔ग्रोपषी पर स्रपसरत्≕गिरा है यत्≕जो वीर्य

द्मपः=जब में अपसरत्=गिरा है तत्=डसी

इदम्=इस रेतः=वीर्य को

ग्रहम्=में ग्राद्दे=प्रहण करता हूं

तत्=वदी इन्द्रियम्=इन्द्रिय शक्रि माम्=गुक्को प्तु=शाप्त होवे पुनः=किर

+ तत्=वही तेजः=कान्ति

+ पतु≔मुक्तको प्राप्त दोवे पुनः=किर तत्=वदी

भर्गः=ज्ञान एतु=मुक्तको मिले

+ च=भौर

द्याग्मिधिंष्ण्याः=मन्नि में रहनेवाले देवता

तत्=उसी बीर्य को यथास्थानम्≔यथोचित स्थान पर

कल्पन्ताम्=रक्से

इति≔ऐसा + उक्त्वा≔क्इ कर

झनामिका- } झंगुष्ठ और सना-कुष्ठाभ्याम् } मिका करके

श्चादाय=वीर्य को डठाकर स्तनौ=दोनों स्तनों के

बीच में

वा≔गौर

अबी=दोनों औहीं के

भ्रम्तरेण=बीच में

निमृज्यात्=मार्जन करे

भावार्थ ।

है सौम्य ! जिल पुरुष का वीर्य स्वलित होगया है, उसको चाहिये कि उस गिरे हुये वीर्य को स्पर्श करे, और उसके ऊपर हाथ
रख कर मन्त्र पढ़े कि जो आज मेरा वीर्य पृथिवी पर गिर पड़ा है,
और जो वीर्य आपक्षी पर गिरपड़ा है, जो वीर्य जल में गिरपड़ा
है, उस वीर्य को मैं प्रह्मा करता हूं, और फिर उसके द्वारा वही
इन्द्रियशिक मुम्कको प्राप्त होवे, वही कान्ति मुम्क को प्राप्त होवे, वही
ज्ञान मुम्कको प्राप्त होवे, और अग्नि आदि देवता उस मेरे वीर्य को यथोचित स्थान पर स्थापित करें, ऐसा कह कर उसको चाहिये कि उस
गिरे हुये वीर्य को अंगुष्ठ और अनामिका से उठा कर दोनों स्तनों के
बीच में अथवा दोनों मोहों के बीच में लगावे ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

श्रथ यद्युदक भात्मानं पश्येत्तदभिमन्त्रयेत मयि तेज इन्द्रियं यशो द्रविष्पर्थं सुकृतमिति श्रीई वा एषा स्त्रीष्णां यन्मलोद्दासास्त-स्मान्मलोद्दाससं यशस्विनीमभिक्रम्योपमन्त्रयेत ॥

पदच्छेदः ।

ड्यथ, यदि, उदके, आत्मानम्, परयेत्, तत्, आभिमन्त्रयेत, मयि, तेजः, इन्द्रियम्, यशः, द्रविण्म्, सुकृतम्, इति, श्रीः, ह, वा, एषा, कीणाम्, यत्, मलोद्वासाः, तस्मात्, मलोद्वाससम्, यशस्विनीम्, आभिकृत्य, उपमन्त्रयेत ॥

आमकस्य, उपमन्त्रथत ।।

आन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्रथ=श्रोर तत्=उस जब को

यदि=जो प्रामिमन्त्रयेत=श्रमिमन्त्रयः करे यह

उदके=जब में कहता हुशा कि

श्रास्त्रानम्=श्रपने गिरते हुये मिय=मेरे विषे जो

वोर्ष को तेजः=श्रार की कान्ति है

+ परिपश्येत्=देखे तो इन्द्रियम्=इन्द्रियसि है

यशः≔यश है

द्रविणम्=द्रवय है

सुकुतम्=पुर्य है

+ तानि=उनको

+ देवाः=देवता

→ कल्पयन्तु=स्थित रक्खें

ह वै=और

यत्=ओ

मलोद्रासाः=स्वच्छवक धारण

किये हुये है

एषा इति≕वह ऐसी मेरी की

स्त्रीणाम्=स्विषों में श्रीः=बहमी है तस्मात्=तिसी कारण + इति=ऐसी मलोद्वाससम्=स्वच्छवसभारणी यशस्थिनीम्=यशवाबी स्त्री को स्रोभगम्य=प्राप्त हो कर पुकान्त में बैठ व खपमन्त्रयेत= { सन्तान की उत्प

भावार्थ।

हे सौम्य ! ऐसा कभी कभी देखने में आया है कि अधम नर की के साथ जल में कीड़ा करके या अकेलाड़ी स्नान करते समय अपने वीर्य को जल में निरा देते हैं, ऐसे दुष्टकर्म के रोकने के लिये कहते हैं कि यदि जल में अपने वीर्य को गिरते हुये देखे तो उस जल को अभिमन्त्रण करे यह कहता हुआ कि हे भगवन ! इस अष्टकर्म से जो मेरे शरीर की कान्ति, यश, वित्त और पुर्य नष्ट हुये हैं उनको देवता मेरे लिये देवें, और में पुनः ऐसे नीचकर्म को न करूंगा अब की की पवित्रता को दिखलाते हैं, यह कहते हुये कि जो स्वच्छ बल्ल धारण किये विवाहिता मेरी स्त्री है, इस लिये ऐसी स्वच्छ बल्ल धारण आप है, संपत्ति है, लक्ष्मी है, इस लिये ऐसी स्वच्छ बल्ल धारणी और यशस्विनी स्त्री को प्राप्त होकर एकान्त विवे सन्तान उत्पत्ति के लिये संसर्ग करे, और अपनी विवाहिता स्त्री का निरादर न करे, और न अपने इन्द्रिय को कहीं दृषित करे।। ई।।

मन्त्रः ७

सा चेदस्मै न दचात्काममेनामवक्रीणीयात्सा चेदस्मै नैव-दचा-

त्काममेनां यष्ट्रपा वा पास्तिना वोपहैत्यातिक्रामेदिन्द्रियेख ते यशसा यश आददे इत्ययशा एव भवति ॥

पव्चञ्चदः ।

सा, चेत्, अस्मै, न, दद्यात्, कामम्, एनाम्, अवकीयीयात्, सा, चेत्, अस्मै, न, एव, द्यात्, कामम्, एनाम्, यष्ट्या, वा, पासिना, वा, उपहत्य, अविकामेत्, इन्द्रियेस, ते, यशसा, यशः, आददे, इति, अयशाः, एव, भवति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः

चेत्=झगर सा=वह सी अस्मै=पुरुष के कामम्=कामना को

न=न द्यात्=देवे यानी पूर्य न करे तो एनाम्=इस स्त्री को

उसकी इण्डा अनु-सार हुस्य अथवा आक्रीगीयात्= आमृष्यों करके रा-

> + च=पीर चेत्=पगर सा=वह ची बास्मे=इस पुरुष के बिवे + झच=पव भी कामम्=प्रभीष्ट काम को म द्यात्≕र देवे याकी पूर्ण न करे तो प्रनाम्≕इस ची को

ग्रन्वयः

पदार्थाः

यष्ट्या=दरांड का भग दिसा करके

करक **वा=मथवा**

पाखिना≔हाथ से

उपदृत्य=सममा करके कहे कि

ग्रहम्=मैं

यशसा≔यश के हेतु

इन्द्रियेण्=भपनी इन्द्रिय करके ते≔केरे

यशः=यस को

आद्दे=बेबूंगा

इति=ऐसा कइने से

अयशाः=भयशी के

+ भयात्=भय से

+ सा=वह

प्ल≕भवरय

भवति=राजी होजाय

तदा≔तव ऋतिकामेत्≔दस के साथ

गमन करे

भावार्थ ।

हे सौन्म ! आक यह दिखलाते हैं कि आगर स्त्री खक्ष्मीरूप नहीं

है. बानी पतिमनी अनुसारिग्री नहीं है तो फिर उसके साथ देसा वर्ताव करना चाहिये. यदि किसी कार्या सन्तान उत्पत्ति के लिये पति के साथ भीग करने की वह उचत नहीं होती है तो पुरुष को चाहिये कि उसको उसकी इच्छानुसार द्रव्य अथवा आभूषणा दे कर प्रसन्न करे इधगर वह स्त्री तब भी उसकी कामना को पूरान करे तो उस स्त्री को दगड का भव दिखाकर अथवा हाथ से पकड़ कर सममावे कि है सन्दरि ! अगर तू मेरी कामना को पूर्ण न करेगी तो सन्तान करके जो यश की को होता है उस तेरे यश को अपने यश के साथ नष्ट कर दंगा यानी में जनमभर ब्रह्मचारी रहूंगा और इसी कारण तेरे सन्तान न होगी और इसी कारण तू जन्म भर अयशी बनी रहेगी, और सन्तान के अभाव के कारण तमको अनेक प्रकार का लेश होता रहेगा ऐसा कहने से जब वह स्त्री राज़ी होजाय तब उससे समा-गम करे ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

मा चेदसी दचादिन्दियेण ते यशसा यश आदधामीति यश-स्विनावेव भवतः ॥

पदच्छेदः ।

सा, चेत्, अस्मै, दद्यात्, इन्द्रियेगा, ते, यशसा, यशः, आद-धामि, इति, यक्सरिवनी, एव, भवतः ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

चेत=धगर सा=वह सी अस्मै=पुरुष के विषे + कामम्=मभीष्ट को दद्यात=देवे यानी राजी

आद्घामि=देता इं

+ न्यात्=कहे कि

यशसा=यस के हेत

इन्द्रियेख=अपनी इन्द्रिय करके ते=तेरे विधे

+ स:=वह

इति≔ऐसा कह कर

+ ती≃वे कोनों एस=सवस्य

यशस्त्रित्रो=यशवाले भवतः=होवेयानीसमागमकरें

भावार्थ ।

हे सौम्य ! अगर वह स्त्री सन्तानार्थ अपने को समर्परा करे तो पुरुष को चाहिये कि वह इसकी प्रशंसा इस प्रकार करे हे सुन्दरि ! मैं यश के हेत अपनी इन्द्रिय करके तेरे यश को देता हं. इस प्रकार वे दोनों दम्पती स्तोक में यश को प्राप्त होते हैं ॥ = ॥

सन्त्रः ६

स यामिच्छेत्कामयेत मेति तस्यामर्थे निष्ठाय मुखेन मुख्छ संघायोपस्थमस्या अभिमृश्य जपेदङ्गादङ्गात्संभवसि हृदयाद्धिजा-यसे स त्वमङ्गकषायोऽसि दिग्धनिद्धमिव मादयेमाममूं मयीति ॥

पदच्छेदः।

सः, याम्, इच्छेत्, कामयेत, मा, इति, तस्याम्, प्रार्थम्, निष्ठाय, मुखेन, मुखम्, संधाय, उपस्थम्, अस्याः, अभिमृश्य, जपेत्, अङ्गात्, अङ्गात्, संभवसि, हृद्यात्, अधिजायसे, सः, त्वम्, अङ्गकषायः, श्रंसि, दिग्धविद्धम्, इव, माद्य, इमाम्, श्रमूम्, मयि, इति ॥

धारवयः

पदार्थाः ।

अन्वयः

पदार्थाः

तिष्राय≕रख कर मुखेन=पुत्र से मुखम्=मुख को संधाय=मिना कर ग्रस्याः=उस स्री के उपस्थम्=उपस्थ इन्द्रिय को अभिमृश्य=स्पर्श करके जपेत=नाचे विसे हुवे मन्त्र को जप करे

मङ्गात् । = मङ्ग मङ्ग से

याम्=जिस सी के प्रति + यदा=जब सः=वह पुरुष इति=ऐसा इड देत्=चाहे कि + सा≔वह की मा=मेरे साथ कामयेत=शेम करे तो तस्याम्=डस की में द्यर्थम्≔मपने प्रजन इन्द्रिय को

संभवसि=हे की ! तू उत्पन्न होता है + च=मीर + विशेषतः=ज्ञास कर हृद्यात्=हृदय से अधिजायसे=उत्पन्न होता है सः=वही त्वम्=त् + मम=भेरे श्राङ्गकषायः=धङ्गकः क्स श्रासः=है + चीर्यं=हे वीर्ष ! दिग्धविद्धम् } विषक्षिसरार विद्धा-ह्य }=स्ता के समान श्राम्भ्=डस हमाम्=इस मेरी की को मयि=मेरे विषे सादय=मदान्वित कर

भावार्थ ।

जब पित अपनी श्री के प्रति इच्छा करे कि वह स्त्री मेरे वश में
रहे तो उसको चाहिये कि उस स्त्री में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रख
कर मुख से मुख मिला कर उस स्त्री की उपस्थ इन्द्रिय को स्पर्श करके
नीचे जिल्ले हुये मन्त्र का जप करे " अङ्गादङ्गादित्यादि" जिसका
अर्थ यह है कि हे वीर्य! तू मेरे अङ्ग अङ्ग से उत्पन्न हुआ है, और
स्त्रास करके हृद्य से, तू मेरे हर एक अङ्ग का रस है, हे वीर्य! तू
इस मेरी स्त्री को मेरे विषे ऐसी मदान्वित कर दे यानी वश में कर दे
जैसे विषित्तरशरविद्ध मृगी व्याप के वश में होजाती है।। ह ।।

मन्त्रः १०

श्रथ यामिच्छेच गर्भे दधीतेति तस्यामर्थे निष्ठाय मुखेन मुख्छं संघायाभित्राण्यापान्यादिन्द्रियेण ते रेतसा रेत आदद इत्यरेता एव भवति ॥

पदच्छेदः।

अथ, याम्, इच्छेत्, न, गर्भम्, दधील, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुखेन, मुखन्, तंथाय, अभिप्रायय, अपान्यात्, इन्द्रियेगा, ते, रेतसा, रेतः, आददे, इति, अरेताः, एव, भवति ॥

पदार्थाः | अन्तयः पदार्थ + इयम्=षद मेरी की गर्भम्⇒गर्भ को

+ शहस=में दर्धात=भारण करे इन्द्रियेण=अपनी इन्द्रिय करके श्रथ=घगर + च=धौर इति=ऐसी रेतसा=वीर्य करके याम=जिस की के प्रति ते=तेर इच्छेत्=पुरुष इच्छा करे तो रेतः=वीर्यं को तस्याम्=इस सी में आद्दे=खींचता हं अर्थम्=प्रजननेन्द्रिय को इति=ऐसा करने से निष्ठाय=रख कर मुखेन=मुख से + स्ना=बह मुखम्=मुख को श्चरेताः=वीर्यरहित संधाय=मिबाकर पस≕सवस्य श्रमिप्राम्य=उरीपन कर भवति= { होजाती है यानी गर्भधारण योग्य नहीं रहती है अपान्यात्=मैथुन करे + एवम्बवन्=यह कहता हुआ कि भाषार्थ ।

हे सौम्य ! यदि स्त्री विवाह के पश्चात् चाहे कि में गर्भधारणा न करूं, और परोपकार में अपने समय को मैं व्यतीत करूं तो पति को चाहिये कि उस स्त्री में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रखकर और मुख को मिला कर की के काम को उदीपन करके मेंथुन करे यह कहता हुआ कि मैं अपनी इन्द्रिय करके और वीर्य करके तेरे वीर्य को आकर्षण करता हूं ऐसा करने से वह स्त्री वीर्यरहित होजाती है, यानी गर्भधारण योग्य नहीं रहती है।। १०।।

मन्त्रः ११

भय यामिच्छेदधीतेति तस्यामर्थे निष्ठाय मुखेन मुख्छं संघाया-पान्याभिमाएयादिन्द्रियेण ते रेतसा रेत आद्धामीति गर्भिएयेव भवति ॥

पदच्छेदः ।

अथ, याम्, इच्छेत्, दधीत, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुलेन,

मुखम्, संबाय, अपान्य, अभिप्राययात्, इन्द्रियेसा, ते, रेतसा, रेत:, झाद्धामि, इति, गर्भिग्गी, एव, भवति ॥

पदार्थाः पदार्थाः जन्मयः ग्रास्वयः अभिप्रात्यात्=उद्दीपन करे यानी अथ=सिके बाद भोग करे +सः≔वह पुरुष + च=धौर याम्=जिस की के इति=ऐसा +प्रति≔प्रति झाह=कहे कि इच्छेत्=चाहे कि रेतसा=वीर्यदान देनेवासी +सा=वह इन्द्रियेग=अपनी इन्द्रिय के साथ +गर्भम्=गर्भ को ते= तेरे दधीत इति=धारण करे तो रेतः=वीर्य को तस्याम्=उस सी में आदधामि=स्थापित करता हं अर्थम्=अपनी प्रजनन इन्द्रिय को + तदा=तब निष्ठाय=रस कर + सा=वह की मुखेन=मुख से एव=प्रवस्य मुखम्=मुख को गर्भिणी=गर्भवती संधाय=मित्रा कर भवति=होती है

भावार्थ ।

श्चपान्य=प्रवेश कर

अगर पुरुष चाहे कि मेरी स्त्री गर्भ को घारण करे तो वह अपनी स्त्रीकी योनि में प्रजननेन्द्रिय को रखकर मुख से मुख मिला क⁻ और प्रवेश करके और उद्दीपन करके भोग करे, और उसी स्त्री कहे कि वीर्यदान देनेवाली अपपनी प्रजनन इन्द्रिय के साथ तेरे रजन स्थापित करता हूं तब वह स्त्री झवश्य गर्भवती होजाती है।। ११

मन्त्रः १२

श्रथ यस्य जायाये जारः स्यात्तं चेद् द्विष्यादामपात्रेऽग्नि माघाय प्रतिलोपछ शरबर्धिः स्तीत्वी तस्मिन्नेताः शरसृष्टीः प्रतित सर्विषाऽङ्गा जुहुयान्यम समिद्धेऽहीषीः प्राणापानी त श्राददेऽ विति मम समिद्धेऽहीषीः पुत्रपशृश्चस्त आद्देऽसाविति मम समि-द्धेऽहीषीरिष्टासुकृते त त्राददेऽसाविति मम समिद्धेऽहीषीराशापरा-काशी त श्राददे असाविति स वा एव निरिन्द्रियो विसुकृतो अस्मा-छोकात्मैति यमेनंविद्वाह्मणः शपित तस्मादेनंविच्छोत्रियस्य दारेण नोपहासमिच्छेदुत होवंवित्परोभवति ॥

पढच्छेदः ।

आथ, यस्य, जायाय, जारः, स्यात्, तम्, चेत्, द्विष्यात्, आम-पात्रे, श्रानिम्, उपसमाधाय, प्रतिलोमम्, शरबहिः, स्तीर्त्वा, तस्मिन्, एता:, शरभृष्टी:, प्रतिलोमा:, सर्पिषा, श्रक्ताः, जुहुयात्, मम, समिद्धे, अहाषी:, प्रागापानी, ते, आददे, असी, इति, मम, समिद्धे अहाँथी:, पुत्रपश्न, ते, आददे, असी, इति, मम, समिद्धे, आहैं। थी:, इष्टासुकृते. ते, आददे, असी, इति, मम, समिद्धे, अहीवीः, आशापराकाशी, ते, आददे, आसी, इति, सः, वा, एषः, निरिन्द्रयः, विसुकृतः, श्रस्मात्, लोकात्, प्रैति, यम्, एवंवित्, ब्राह्मगाः, शपति, तस्मात्, एवंवित्, श्रोत्रियस्य, दारेगा, न, उपहासम्, इच्छेत्, उत, हि, एवंवित्, पर:, भवति ॥

ग्रस्वयः चेत् उत=यदि

यस्य≕ितस

स्यात्=होवे

पदार्थाः अन्वयः उपसमाधाय=रख करके + सर्वम्=सब कर्म "परिस्त-रयादि" जायायै=ची के विषे जारः=कोई जार प्रतिलोमम्=उलटा + कुर्यात्=करे

पदार्थाः

श्रध=ग्रीर + ख=श्रीर तम्≕उसके साथ शरबार्डि:=सिरकी को + पतिः=डसका पति स्तीत्वी=उलटी विद्या कर द्विष्यात्=द्वेष करना चाहे तो तस्मिन्=उस भग्नि में आमपाने=मिटी के कबे बर्तन में सर्पिषा=षी करके

अग्निम्=भग्नि को श्रक्ताः=तर की हुई प्रतिलोमाः=डलटी एताः=इन शरभृष्टीः=सिरिकयों को जुहुयात्=इवन करे + इदंबुवन्=यह कहता हुआ कि + अरे=बरे दृष्ट ! + त्वम्=तृने मम=मेरी समिद्धे=प्रदीस थीवानि में अहीषी:=होम किया है + श्रतः≔इस लिये ते=तेरे प्रागापानी≔प्राग श्रपान को आददे=में हरे खेता इं श्रसी=उस शत्र का नाम ले कर इति=ऐसा + ब्यात्=कहे कि + त्वम्=तृने मम=मेरी समिद्धे=प्रदीस योपाग्नि में श्रहोषी:=श्राहति दी है + अतः=इस जिबे ते=तेरे पुत्रपशून्=सन्तान भीर पशुओं को द्याद्दे=नाग करता हूं असी=उस शतु का नाम के कर इति=ऐसा + मृयात्=कहे कि + त्वम=त् ने

सस=मेरा समिखे=प्रदीसयोगानि में श्रहीची:=बाहुति दी है + अतः=स्स विये ते=तेरे इष्टासुकृते≔इष्ट और सुकृत के कर्मी को आददे=में इरता हं असी=उस शतु का नाम इति=ऐसा ब्यात्=कहे कि + त्वम्=तृने मम=मेरी समिद्ध=प्रदीस योषारिन में ग्रहौषीः≔होम किया है + अतः=इस विवे ते=तेरी आशापरा- } =माशामों को काशी } आददे=हर बेता हं असी=उस शत्रु का नाम के कर इति=ऐसा + त्यात्=कहे कि एवंवित्=ऐसा जानने वासा ब्राह्मगुः=ब्राह्मग् यम्=जिसको श्रापति=शाप देता है सः=वह एवः=यह निशिन्द्रयः=विषयासक

बिसुइतः=पापा शतु
वै=घवरयं

श्वस्मात्=इस
लोकात्=बोक से
श्रेति=मर कर चवा
जाता है
तस्मात्=इस बिये
एवंचित्=ऐसा जानने वाबा
पुरुष

द्वारेण=की के
+ सह=साय
उपहासम्=उपहास की
त=न
इच्छेत्=इच्छा केर
हि=क्योंकि
एवंवित्=ऐसा ओन्निय नाहण
परः=उसका शतु
भव्यति=य जाता है

भावार्थ ।

यदि स्त्री का को जार हो, झौर उस जार के साथ उसका पति द्रेष करना चाहे. तो एक मिट्टी के कचे वर्तन में अगिन को रख करके श्रीर परिस्तरगादि कर्म को उलटा करे, श्रीर सिरकी को उलटी वि-छाकर उस वर्त्तन में रक्ली हुई अगिन में घी करके तर की हुई इन **डलटी सिरिकरों को इवन करे यह कहता हुआ। कि अरे** दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप योषानिन में होम किया है, इस लिये में तेरे प्राण, अपान को हर लेताहूं, फिर उस शत्रु का नाम लेकर ऐसा कहे कि आरे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषाग्नि में आहुति दी है, इस लिये मैं तेरे सन्तान श्रीर पशुश्रों को नाश किये देताहूं, फिर उस शत्रु का नाम लेकर ऐसा कहे कि हे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषाग्नि में आहुति दी है, इस लिये में तेरे इष्ट और सकत कमें के फलको हर लेता हूं, फिर उस शत्र का नाम लेकर ऐसा कहे कि अरे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषाग्नि में होम किया है, इस लिये में तेरी सब आशाओं को हर जेता हूं, फिर उस रात्रु का नाम जे कर ऐसा कहे कि इस प्रकार का जानने वाला ब्राह्मण जिसको शाप देता है वह विषयासक्त पापी शत्र इस क्रोक से मरकर चला जाता है, इस लिये ऐसा जानने वाला पुरुष वेद

पढ़नेवाले की की के साथ उपहास की इच्छा न करे, क्योंकि ऐसा स्रोत्रिय ब्राह्मण उसका शत्रु वन जाता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

भ्रय यस्य जायामार्त्तवं विन्देत्त्र्यदं कश्चसेन पिवेदहत-वासा नैनां दृषलो न दृषल्युपहन्यात्रिरात्रान्त भ्राप्तुत्य ब्रीही-नवघातयेत् ॥

पद्च्छेदः ।

श्रथ, यस्य, जायाम्, श्रात्तंवम्, विन्देत्, त्र्यहम्, कंसन, पिवत्, श्रह्तवासाः, न, एनाम्, वृषतः, न, वृषती, उपहन्यात्, त्रिरात्रान्ते,

आप्लुत्य, त्रीहीन्, अवघातयेत् ।।

अन्वयः पदार्थाः १

र्धाः **श**न्वयः एनामः

द्यश=इसके उपरान्त एनाम्=अस यस्य=जिसकी वृषतः=शृह

यस्य=ाजलका जायाम्=जी

झार्चवम् } =कपड़ों से हो विन्देत्

+ सा=वह की

कंसन=कांसे के वर्तन के

ड्यहम्+न पिबेत्≕तीन दिन तक पानी न पीवे

+ च=भौर

ग्रहतवासाः } = अपने न भोवे + स्यात् }

+ च=घौर

भान

अवधातयेत्=क्ट कर तैयार करे भावार्थ ।

झगर स्त्री रजस्वका धर्म से होय तो उसको चाहिये कि वह तीन दिन तक कांसे के वर्त्तन में न खावे, न पीवे झौर न कपड़ा धोवे, झौर उसको शूद्र या शूद्री न छूवे झौर न वह शूद्र या शूद्री को छूवे, तीन

पदार्थाः

एनाम्=उसको

उपहन्यात्=च्वे वृषली=शृदकी स्री भी

+ प्नाम्=इसको

+ उपहन्यात्=धूवे त्रिरात्रान्ते=तीन दिन के पींखे

।आन्त∽तागापुग के पा + सा⊐वह की

झाप्लुत्य=नहा कर व्यक्तिन्=चरु बनाने के खिये

590 बहदारगयकोपनिषद् स० दिन क पीछे स्मान करके चह बनाने के क्षिये धान को कूट कर तैयार करे।। १३॥

सन्बः १४

स य इच्छेत् त्रो मे शुक्लो जायेत वेदमनुख्रुवीत सर्वमायु-रियादिति क्षीरोदनं पाचिथत्वा सर्विष्मन्तमरनीयातामीश्वरी जनायतवे ॥

पदच्छेवः ।

सः, यः, इच्छेत्, पुत्रः, मे, शुक्तः, जायेत, वेदम्, श्रानुवृतीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, श्रीरीदनम्, पाचियत्वा, सर्पिष्मन्तम्, श्चरनीयाताम्, ईश्वरी, जनयितवे ॥

ब्रास्वयः

पढार्थाः । अन्वयः

पदार्थाः

मे=मेरे शुक्कः≕गीरवर्ण का पुत्रः≕पुत्र जायेत=उत्पन्न होवे वेदम १ वेद का पढ़ने वासा अनुमुवीत १ होचे सर्वम्=पूर्ष **आयुः=बायुको** इवास्=आस होवे इति≕पेसा यः≕जोः सः≔वह पुरुष इच्छेत्⇒इच्छा करे तो

श्रीरौदनम्=सीर णचयित्वा=पका कर + स=शौर सर्पिष्मन्तम्=धृतकुक्र + कत्वा=करके अश्नीयाताम्=दोनों स्नी पुरुष खार्वे + तदा≔तव जन्यितवै=वैसे पुत्र उत्पन्न करने में + तौ=वे दोनों ईश्वरौ=समर्थ

स्याताम्=होवें

भावार्थ ।

जो पुरुष ऐसी इच्छा करे कि मेरे गौरवर्गा का सड़का होय, और वेद का पढ़नेवाला होय, और पूर्ण आयु को प्राप्त होवे, तो उसको चाहिये कि स्वीर पकाकर, और उसमें घी डाजकर वह और उसकी की दोनों लावें, ऐसा करने से वे दोनों ऐसे सड़के के स्टब्स करने में समर्थ होते हैं । १४ ॥

मन्त्रः १४

ं अयं य इच्छेत्युत्रों में कंपिलः पिङ्गलो जायेत ही वेदावतु-ख्रुवीत- सर्वपायुरियादिति द्य्योदनं पाचयित्वा सर्पिष्यन्तमस्नी-यातामीस्वरी जनयितवै।।

पव्चलेवः ।

डाथ, थः, इच्छोत्, पुत्रः, में, कपिजः, पिङ्गजः, जायेत, द्वौ, वेदौ, इत्तुष्ट्वीतं, सर्वम्, श्रायुः, इयात्, इति, दृष्योदनम्, पाचियत्वा, सर्पित्मन्तम्, डाश्नीयाताम्, ईश्वरो, जनवितवे ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः धान्वयः सर्वम्=पृथं श्रथ=और यः≕जो पुरुष आयु:=आयुको इयात्=आस हो तो इच्छेत्=इच्छा करे कि + तौ≔की पुरुष ±सेग द्ध्योदनम्=दही-चावस पुत्रः=पुत्र कविलः=गौरवर्ष वासा पाचिथित्वा=पक्वाकर जायेत=हो सर्विध्मन्तम्=षृत युक्र + कृत्वा=करके + शशसा=सर्वा पिक्लः=पिक्रसवर्थं वासा श्रश्नीयाताम्=सार्वे तो इति=ऐसा करने से + जायेत=हो जनयितवै=सभीष्ट पुत्र उत्पन्न क-+ सं≃भीर एने के जिये ह्यौ=रो वेदी=वेदां का ईश्वरी=समध श्रानुवीत=वका हो + स्याताम्=होंगे

ञावार्थ ।

की पुरुष इंख्डा करें कि मेरा पुत्र गीरवर्षा वालाही अथवा पिंगल वर्षीवाला हो और दी वेंदों का वस्ता हो और पूर्वा आयु को प्राप्त हो तो स्त्री-पुरुष दही-चावल पका कर झौर उसमें घृत डाल कर खावें ऐसा करने से वे दोनों अभीष्ट पुत्र के उत्पन्न करने में समर्थ होंगे ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

श्रथ य इच्छेत्पुत्रो मे स्यामो लोहिताक्षो जायेत त्रीन्वेदाननु-ब्रुवीत सर्वमायुरियादित्युदौदनं पाचियत्वा सर्पिष्मन्तमश्रीयाता-मीश्वरी जन्यितवै ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, य:,इच्छेत्, पुत्रः, मे, श्यामः, लें।हिताक्षः, जायेत, त्रीन्, वेदान, अनुष्रुवीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, उदौदनम्, पाचियत्वा, सर्पिष्मन्तम्, अश्रीयाताम्, ईश्वरौ, जनयितवै ॥

अन्वयः

पदार्थाः ग्रस्वयः पवार्थाः

श्रथ=श्रीर यः=जो पुरुष इच्छ्रेत्=इच्छाकरे कि

मे=मेरा पुत्र:=पुत्र

प्रयामः=श्यामवर्णवाला जायेत=उत्पन्न होवे

लोहिताक्षः=बावनेत्रवाबा + जायेत=होवे

+ स=धीर

त्रीन्=तीन वेदान्=वेदों को

श्रानुवृत्तीत=वक्रा होवे

+ च=भीर

सर्वम्=पूर्ण

आयुः=त्रायु को इयात्=माप्त होवे तो + दम्पती=स्री पुरुष

उदौदनम्≕जब में भात

पाचियत्वा=पकवाकर सार्पेष्मन्तम्=धृतयुक्र

+ कृत्वा=करके

श्रश्नीयाताम्=ला**वें** इति=ऐसा करने से

जनयितवै=बर्भाष्ट पुत्र पेदा करने

के विये

+ तौ≕वे

ईश्वरौ≕समर्थ

+ स्याताम्=होंगे

भाषार्थ ।

जो पुरुष इच्छा करे कि मेरा पुत्र श्यामवर्णा बाजा हो, झौर उसके नेत्र लाल हों, तीन देदों का बक्ता हो, ख्रीर पूर्ण आयु का ही तो उस को झौर उसकी की को चाहिये कि जल में चावल को पकाकर झौर धृत मिलाकर खावें, ऐसा करने से वे दोनों झमीष्ट पुत्र के पैदा करने में समर्थ होते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

अथ य इच्छेद् दुहिता मे पिएडता जायेत सर्वमायुरियादिति तिलौदनं पाचियत्वा सर्पिष्मन्तमश्रीयातामीश्वरी जनयितवे ॥

पदच्छेदः ।

अथ, यः, इच्छेत्, दुहिता, मे, पिएडता, जायेत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, तिजीदनम्, पाचियत्वा, सिप्टमन्तम्, अभीयाताम्, ईरवरी, जनथितवे ॥

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः मथ=मीर पाचियत्वा=पकवा कर यः≕जो पुरुष सर्पिष्मन्तम्=वृतयुक्र इच्छेत्=इच्छाकरे कि + कृत्वा=करके मे≔मेरी + दम्पती=की-पुरुष दहित श्रश्रीयाताम्=लावें परिडता=गृहकर्म में निपुण इति=ऐसा करने से आयेत=होवे जनयितवै=अभीष्ट पुत्री पैदाकरने + च=धीर के विषे सर्वम्=पूर्व + ती=वे आयुः=षायु को ईश्वरी=समर्थ इयात्=मास दोवे ती तिलीव्नम्=तिब-चावब + स्याताम=होंगे

भाषार्थ ।

अगर पुरुष इच्छा करे कि मेरे को ऐसी कन्या उत्पन्न हो जो गृह के कार्य में निपुता हो, पूर्याआयु वाली हो तो खी पुरुष को चाहिये कि तिल-वावल पकाकर और उसमें घृत मिला कर खाँवे, ऐसा करने से वे अभीष्ट पुत्री के उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं।। १७॥

सन्त्रः १८

भय य इम्ब्रेत्युत्रो मे पिपटतो विगीतः समितिक्रयः सुभूभितां बाचं भाषिता जायेत सर्वान्वेदाननुष्ट्रवीत सर्वमायुरियादिति बाछ-सौदनं पाचयित्वा सर्विष्यन्तम्भीवातामीरवरी जनयितवा भौक्षेण बाऽऽर्वभेण वा ॥

पद्ञ्छेदः।

अथ, यः, इच्छेत्, पुत्रः, में, पिएडतः, विगीतः, समितिङ्गमः, शुश्रूषिताम्, वाचम्, भाषिता, जायेत, सर्वान्, वेदान्, अनुश्रुवीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, मांसौदनम्, पाचित्वा, सर्पिष्मन्तम्, अश्रोयाताम्, ईश्वरौ, जनिवत्वे, औक्षेग्र, वा, आर्थभेग्र, वा ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

> श्रथ=भीर यः=जो पुरुष इच्छेत्=इच्छाकरे कि मे=सेरा

पुत्रः=पुत्र परिद्वतः=विद्वान् विगीतः=मसिद्व

समितिङ्कमः=सभा जीतनेवाक्षा शुभूषिताम्=प्रिय

वाचम्=वात का भाषिता=वक्रा

जायत=होवे सर्वान्=सर

वेदान्=वेदों का अनुत्रवीत≔जानवेदादा

+ च=मोर

सर्वम्=सर स्रायुः=प्रापृ को

इचार्=भास होवे तो

ायः पदायाः मांसीदनम्=मांस श्रीर श्रादक

पार्चायत्वा=पक्वाकर सर्पिष्मन्तम्=वृत्तयुक्त करके

+ द्म्पती⇒सी पुरुष सर्श्रायाताम्=सार्वे

इति=प्रेसा करने से

+ ती=वे की पुरुष

जनायितवै=धर्माष्ट्रपुत्रपैदा करने

के विषये

ईश्वरी=समर्थ +स्याताम्=होंने

+परम्=परन्तु

+ तत्=वह भोदन

भौक्षेण=सांद के मांस के साथ बा=भथवा

आर्वभेगः=किसी वरे वेखके शांस

े के साथ

+ प्रयात्वयात्

भावार्थ ।

जो पुरुष चाहे कि मेरा पुत्र विदान और महतीसभा का जीतने वाला हो, मञ्जूरभाषी हो, सब वेदों का ज्ञाता हो, पूर्या आयुवाला हो तो मांस और चावल पकाकर उसमें घृत डालकर दोनों खावें, ऐसा करने से वे आमीष्ट पुत्र के पैदा करने में समर्थ होते हैं, परन्तु चावल सांद्र के मांस के साथ अथवा किसी वहे बैल के मांस के साथ पकाये जावें ॥ १८ ॥

मन्त्रः १६

श्रथाभिपातरेव स्थालीपाकाद्यताऽऽज्यं चेष्टित्वा स्थालीपाक-स्योपपातं जुहोत्वग्नये स्वाहाऽनुमतये स्वाहा देवाय सवित्रे सत्य-प्रस्तवाय स्त्राहेति हुत्वोद्धृत्य प्राश्नाति प्राश्येतरस्याः प्रयच्छति प्रक्षाल्य पाणी उदपात्रं पूर्णित्वा तेनैनां त्रिरभ्युसत्युतिष्ठातो निश्वावसोऽन्यामिच्छ प्रपृच्या संजायां पत्या सहेति ॥

पदच्छेदः ।

अथ, अभिप्रातः, एव, स्थालीपाकावृताऽऽज्यम्, चिष्टिता, स्थाली-पाकस्य, उपम्रतम्, जुद्दोति, अग्नये, स्वाद्दा, अनुसतये, स्वादा, देवाय, सिवत्रे, सत्यप्रसवाय, स्वाद्दा, इति, हुत्वा, चत्रृत्य, प्राभाति, प्रारय, इतरस्याः, प्रयच्छति, प्रक्षाल्य, पाणी, चद्पात्रम्, पूर्यित्वा, तेन, एनाम्, त्रिः, अभ्युक्षति, उत्तिष्ठ, अतः, विश्वावसो, अन्याम्, इच्छ, प्रपूच्याम्, संजाबाम, पत्या, सद्द, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

श्रम्वयः पदाधाः श्रम्वयः पदाधाः श्रथः पदाधाः श्रथः पदाधाः श्रथः पदाधाः श्रथः पदाधाः श्रथः पदाधाः श्रथः श्रथ

सत्य है प्रसव जि-तंचाय सका यानी नुद्धिका सवित्रे स्रश्यप्र-सवाय स्वाहा इति=इस प्रकार इत्वा=होम करके सदत्य=बचे हुये चह की प्राप्तनाति=पुरुष खाय + च=भौर प्राश्य=साकर फिर इतरस्याः=स्री को प्रयच्छति=देवे + च=भौर पाशी=डाथ को प्रक्षाल्य=धो कर

पूरियत्वा=भर कर नेन=टस जब से एनाम्=उस की को त्रिः=तीन बारै + मन्त्रेश=सन्त्र पर कर श्च¥युक्षति=मार्जन करे + एवस्तुवन्≔षह कहता हुआ कि विश्वावसो=हे गन्धर्व ! झतः=इस मेरी स्त्री स्त्र उत्तिष्ठ=बबग हो **अन्याम्=भौर** प्रपृथ्याम्=किसी दूसरी युवाको भाम हुई पत्या=पति के सह=साथ +संक्रीडमानाम्=केवनेवाबी संजायाम्≔की को प्रक रति=इव्हाँ कर

भावार्थ ।

तत् परचात् बढ़े प्रातःकाल स्थालीपाक की विधिक अनुसार चक को पकाकर, और उसको घी से संस्कार करके, और फिर स्पर्श करके इवन करे, यह मन्त्र पढ़ता हुआ ''आग्नये स्वाहा, अनुमतये स्वाहा, देवाय सिवत्रे सत्यप्रसवाय स्वाहा '' जिस का अर्थ यह है कि अन्ति के लिये आहुतिको देता हूं में, अनुमति देवताके लिये आहुति देताहूं में, सत्य है प्रसव जिसका यानी जो बुद्धिका देनेवाला है, उस प्रकाश-मान सूर्य के लिये आहुति देता हूं में, इस प्रकार होम करके अवशिष्ट चक् को निकाल कर पुरुष प्रथम खाय, और फिर की को देवे, और हाथ थोकर जलपात्र को भरे, और उस जल से भी को तीनवार मीचे किसे मन्त्रको पढ़ कर मार्जन करे, "उत्तिष्ठातः विश्वावसीऽन्यामि-क्छप्रपृक्षी संज्ञायां परया सहेति '' जिसका अर्थ यह है कि है गन्धर्व ! तू इस मेरी स्त्री से अजग हो, और किसी दूसरी युवाको प्राप्त हुई स्त्री जो पति के साथ खेलने वाली हो, उसके निकट जाने की इच्छा कर, मेरी स्त्री को छोड़ दे ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

अयैनामभिषचतेऽमोहमस्मि सा त्वंश्र सा स्वमस्यमोऽई सामाइ-मस्मि ऋक्त्वं धौरई पृथिवी त्वं तावेहि सश्चरभावहै सह रेतो इपावहै पुछसे पुत्राय विचय इति ॥

पवच्छेदः ।

अथ, एताम्, अभिपद्यते, अमः, अहम्, अस्मि, सा, त्वम्, सा, स्वम्, असि, अमः, अहम्, साम्, अहम्, अस्मि, अन्त्, त्वम्, द्योः, अहम्, पृथिवी, त्वम्, ती, एहि, संरभावहै, सहं, रेतः, द्यावहै, पुंसे, पुत्राय, वित्तये, इति ॥

श्चन्यः पदार्थाः श्चन्यः श्चां=इसं के परवात् पनाम्=इसं की को थानी ध-पनी की के साथ श्रीअपद्येत=प्राप्त होवे थानी उसकी श्राक्षित्रन करे + पवस्नुषन्=यह कहता हुँचा कि श्रहम्=में श्रासः=प्राणस्थानीय श्रसिम=हुं सा=बृह त्यम्=त् + श्राक्=वाणी स्थानीय है

सा=बह

त्वम् व्यापीः त्वम् व्यापी श्रास्त-है श्रास्य-में श्राम-सामवेद हे समान श्रास-हैं श्रास-हूं त्वम् व्याप्त वर्षका हैने वाला आकाश श्रास-हैं स्वम-वर्षका वर्षका हैने वाला आकाश 400

पृथिवी=वीर्ववात्री प्रविका है

हीं=वे दोनों हम संरमावहै=मिबें + च=मीर पुँसे=पुरुषायं करते होरे वित्तये=ज्ञानी पुत्राय=पुत्र होने के विषे रेतः=बीये की सहद्वधायडे=पुक साथ धारण करें

भावार्थ ।

इसके परचात् अपनी की से आिलिइन करें यह कहता हुआ कि

मैं प्रायास्थानी हूं तू बागा है, मैं प्राया हूं यानी जैसे प्राया के
आश्रय बागा है, वैसे तू मेरे आश्रय है, मैं सामवेद के समान हूं, तू
अगुवेद के समान है, मैं वर्षारूप वीर्य का देनेवाला आकाश हूं, तू
वीर्यभात्री पृथिवी है, आवो हम दोनों एकान्त विषे एकत्र होकर
पुरुषार्थ करने हारे ज्ञानी पुत्र के लिये एक साथही वीर्य को धारगा
करें।। २०।।

मन्त्रः २१

श्रथास्या ऊरू विद्यापयति विजिहीयां चावापृथिवी इति तस्या-पर्थे निष्ठाय मुखेन मुख्छ संघाय त्रिरेनामनुलोमायनुमार्ष्टि विष्णु-र्योनि कल्पयतु त्वष्ठा रूपाणि पिछ्रुगतु श्रासिश्चतु प्रजापतिर्घाता गर्भे द्वातु ते गर्भे थेहि सिनीवालि गर्भे थेहि पृथुषुके गर्भे ते श्र-रिवनी देवावाधतां पुष्करस्रजी ॥

पदच्छेदः ।

ध्यथ, अस्याः, उन्हें, विद्वापयित, विजिद्दीधाम्, धावापुथिवी, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुखेन, मुखम्, संधाय, तिः, एनाम्, अनुक्रोमाम्, अनुमार्धि, विष्णुः, धोनिम्, करुपयतु, त्वष्ठा, रूपािणा, पिरातु, आसि खतु, प्रजापितः, धाता, गर्भम्, देधातु, ते, गर्भम्, धेहि, सिनीवािल, गर्भम्, धेहि, पृथुष्टुके, गर्भम्, ते, अश्वनौ, देवौ, आध्याम्, पुष्करस्त्रजौ ॥

धाःवयः

पदार्थाः ग्रन्थयः पदार्थाः

+ स्त्रीम्≔की से + बाह=क्टे कि द्यावापृथिवी≔हे शौ और पृथिवी-

रूप ची !

विजिहीधार्म=इम दोनों अवग श्रद्धग होजायँ

> इति=पेसा कह कर आ्रथ=किर पति

श्रस्याः≃इस स्री के ऊक=डहसे

बिहापयति=पृथक् होजावे + पुनः=फिर

तस्याम्=उस की में द्यर्थम्=प्रजनन इन्द्रियको निष्ठाय=स्य कर

मुखेन⊐मुख से मुखम्=मुख को

संधाय=मिला कर

श्रानुकोमाम्=डस धनुक्त एनाम्=इस स्री को

त्रिः=सीन बार

म्रनुमार्छि=मार्जन करे + च=ग्रीर

+ इमम्=इस झागे वासे

+ सन्त्रम्≔मन्त्र को + पडेत=पके

विष्णुः=विष्णुदेव थोनिम्=तेरी योनि को

करपयतु=पुत्रोत्पत्ति के विये समये करे

त्वष्टा=सूर्यरेव

इत्पाणि=तेरे पुत्र के प्रत्येक धात के रूप की

विशतु=देवे

प्रजापतिः=प्रजापति

+ त्वयि=तेरे में

ब्रासिश्चत्=गर्भको स्थापन करे बानी गर्भगिरने न देवे

धाता=सृत्रास्मा

ते=तेरे रार्भम्=गर्भ को

द्धातु=धारख करे यानी

गिरने न देवे

सिनीवालि=हे दर्शदेवता ! गर्भम्=इस स्त्री के गर्भ को धेहिं=रख बानी गिरने

न दे

पृथुदुके=स्तुति की गई है

जिसकी ऐसी + सिनीवालि=हे सिनीवाली देवी!

वर्मम्=इस मेरी जी के शर्भ को

धेडि=रख यानी रक्षा कर

धारण किये हुये

देबी=प्रकाशमान अश्विनौ=सूर्थ-चन्द्र

ते≕तेरे गर्भम्= गर्भ को

ग्राधत्ताम्=स्थापन करें वानी

गिरने न देखें

भावार्थ ।

दे सौन्य ! तत् परचात् की से कहे कि, दे शो और पृथिवी के गुर्शों को धारण करनेवाली की ! इम तुम अलग अलग हों, ऐसा कहकर पति की से अलग हो नाय, फिर स्त्री में प्रजनन इन्द्रिय को रख कर मुख से मुख मिला कर उस अनुकूल स्त्रीका तीन वार मार्जन करे, और आगेवाला मन्त्र पढ़े, ''विष्णुयोंनि कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु आसि खतु प्रजापतिर्धाता गर्भ दधातु ते गर्भ धेहि सिनीवालि गर्भ धेहि पृशुद्धके गर्भ ते अश्वनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजी ?' जिसका अर्थ यह है कि विष्णुदेव तेरी योनि को पुत्रोत्पत्ति के लिये समर्थ करें, स्पृदेव तेरे पुत्र के इर एक अझ में रूप देवे और प्रजापति तेरे वीर्य की रक्षा करे, स्त्रात्मा तेरे गर्भ की रक्षा करे, हे दश्वेवता ! इस मेरी खी के गर्भ की रक्षा कर, स्तुति की गई है जो ऐसी हे सिनीवाली देवी ! इस मेरी स्त्री के गर्भ की रक्षा कर, कमल की माला को धारण करने वाले प्रकाशमान सूर्य-चन्द्र मेरी स्त्री के गर्भ की रक्षा करें गर्श को रक्षा करें ॥ र १ ॥

मन्त्रः २२

हिरएमयी घारणी याभ्यां निर्मन्थतामिश्वनौ । तं ते गर्भे इवा-महे दशमे मासि सूत्ये । यथाऽग्निगर्भा पृथिवी यथा चौरिन्द्रेख गर्भिखी । बायुर्दिशां यथा गर्भे एवं गर्भे द्धामि तेऽसाविति ॥

पद्च्छेदः ।

हिरामयी, आरग्री, याज्याम्, निर्मन्थताम्, अश्विनौ, तम्, ते, गर्भम्, हवामहे, दशमे, मासि, सृतये, यथा, अन्निगर्भा, पृथिवी, यथा, श्वीः, इन्द्रेग्, गर्भिग्री, वायुः, दिशाम्, यथा, गर्भः, एवम्, गर्भम्, दशमि, ते, असी, इति ॥

ग्रन्थयः पदार्थाः ऋन्ययः द्यावापृधिवी⇒यौ भीर पृथिवी य हिर्यसयी=प्रकाशक्य अ अपसी=करणि हैं +

वयः पद्।र्थाः याभ्याम्=किन करके ग्रास्थिनौ=जैसे सूर्य जीर बन्दमा +गर्भम्=गर्नको तिर्मेश्यताम्=मन्यन करते सरे

+ तद्भत्=कर्षी तरह

ते=वे

दशमे=दशके

मासि=मास में

स्तये=पुत्र उत्सव

होने के शिमे

ते=तेरे

गर्भम्=गर्भ को

द्यावहे=स्थापित करें

यथा=औसे

राज्या-० अग्निगर्सा=ग्राग्नि बरके गर्मे बाबी है यथा=ज़ैसे द्यौः=द्यौ
इन्द्रेया=इन्द्र करके
गिर्भियी|=गर्भवती है
यथा=जैसे
वायुः=वाषु
दिशाम्=दिशायों का
गर्भः=गर्भ है
प्रसम्=इसी प्रकार
ते=तेरे
गर्भम्=गर्भ को
इस्सी=इह + सहम्=में
द्धामि=स्थापित करता हूं
इति=पेसा कहे

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यौ और पृथिवी दोनों प्रकाशरूप आरिश हैं जिन करके जैसे सूर्य और चन्द्रमा पूर्वकाल में गर्भ को मन्यन करते अये वैसेही दशवें मास में पुत्र उत्पन्न होने के लिये तेरे उस गर्भ को इम दोनों स्थापित करें और जैसे पृथिवी आनिन करके गर्भवती हैं, जैसे यौ इन्द्र करके गर्भवती हैं, जैसे दिशा वायु करक गर्भवती हैं, उसी प्रकार वह मैं तेरे गर्भ को स्थापित करता हूं।। २२ ॥

मन्त्रः २३

सोध्यन्तीमद्भिरभ्युक्षति । यथा वायुः पुष्करणीथ्ध समिष्ट्रयति सर्वतः एवा ते गर्भ एजतु सहावेतु जरायुणा । इन्द्रस्यायं व्रजः कृतः सार्गलः सपरिश्रयः । तिमन्द्र निर्जीहे गर्भेण सा-वरार्थः सहेति ॥

वद्द्व्यः। स्रोत्वन्त्रीम्, स्रक्रिः, स्रभ्युक्ष्ति, यथा, वायुः, पुल्करग्रीम्, समि- क्क्यित, सर्वतः, एवा, ते, गर्भः, एजतु, सह, क्यवैतु, जरायुगा, इन्द्रस्य, अयम्, त्रजः, कृतः, सार्गतः, सपरिश्रयः, तम्, इन्द्र, निर्जहि, गर्भेगा, सावराम्, सह, इति ॥

पदार्थाः श्चान्सय: अन्वयः पदार्थाः -सोध्यन्तीम्=मसवोन्मुखी बी को श्रयम्=पह + मन्त्रम्=नीचे का मन्त्र इन्द्रस्य=प्राय के नीचे + पठन्=पदता हुआ श्रद्धिः=जब करके व्रजः≔मार्ग अभ्युक्षति=सिश्चन करे (गर्भका प्रतिबन्धक सार्गतः) यथा≔जैसे सपरिश्रयः }= { है यानी गर्भ गिरने कृतः नहीं देता वायु:=वायु पुष्करणीम्=ताल के जल को + तत्त्≕सो सर्वतः=सब प्रोरसे इन्द्र=हे प्राण ! समिक्यति=चबायमान करता है तम्=उस मार्ग को पवा≔इसी तरह + प्राप्य=पा कर ते=तेरा गर्भेण=गर्भ के गर्भः=गर्भ सह=साथ एजतु=चन्नायमान होवे निर्जिहि≕निकल मा + च=भीर जरायुगा=गर्भवेष्टन चर्म के + च≔ग्रीर सावराम्=गर्भ की यैसी को सह=साथ + निर्गमय=निकास सा श्रवैतु=बाहर निकले

भावार्थ ।

हे सोम्य ! प्रसनोन्मुली की को नीचे जिले मन्त्र को पढ़ता हुआ।
जल से सिश्वन करे "यथा वायुः पुष्करणीं सिमङ्गयित सर्वतः एवातेगर्भ
एजतु सहावेतु जरायुगा इन्द्रस्यायं बजः कृतः सार्गतः सपरिश्रयः तमिन्द्र
निर्जिहि गर्भेगा सावरां सहेति " जिसका अर्थ यह है कि जैसे तालके
जल को वायु सब ओर चलायमान करता है इसी तरह से हे सी !
तेरा गर्भ भी चलायमान होवे, और वह गर्भवेष्टन चर्म के साथ

बाहर निकल आये और जो प्राया के नीचे जाने का मार्ग है, वह गर्भ का प्रतिबन्धक होवे यानी गर्भ को गिरने न देवे, हे प्राया ! तू उस मार्ग को पाकर उस गर्भ के साथ निकल आ, और अपने साथ गर्भ की येजी को निकास जा !! २३ !!

मन्त्रः २४

जातेऽग्निमुपसमाधायाङ्क आधाय कछंसे पृषदाच्यर्छ संनीय । पृषदाच्यस्योपघातं जुहोत्यस्मिन्सहस्रं पुष्यासमेधमानः स्वे ग्रहे अ-स्योपसन्द्यां माच्छैत्सीत्मजया च पशुभिश्च स्वाहा । मयि मागाछ स्त्वयि मनसा जुहोमि स्वाहा । यत्कर्मणाऽत्यरीरिचं यद्दा न्यून-मिहाकरं । अग्निष्ठित्स्वष्टकुद्धिद्दान्स्विष्टछं सुद्धुतं करोतु नः स्वाहोति ॥ पवच्छेवः ।

जाते, अग्निम्, उपसमाधाय, अक्के, आधाय, कंसे, पृथदाज्यम्, संनीय, पृथदाज्यस्य, उपवातम्, जुद्दोति, श्रस्मिन्, सहस्रम्, पुष्यासम्, एधमानः, स्वे, गृहे, अस्य, उपसन्याम्, माच्छ्रेत्सीत्, प्रजया, च, पग्रुभिः, च, स्वाहा, मयि, प्राग्यान्, त्वयि, मनसा, जुद्दोमि, स्वाहा, यत्, कर्मग्या, अत्यरीरिचम्, यत्, वा, न्यूनम्, इह, अकरम्, अग्निः, तत्, स्वष्टकृत्, विद्वान्, स्वष्टम्, सुहुतम् करोतु, नः, स्वाहा, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

झन्ययः पदायाः स्राते=बदका होने पर श्रातिम्=शीन को उपसमाधाय=स्थापन कर श्राह्व=गोद में श्राधाय=बाबक को ने कर कंस=कांसे के बर्तन में पृथदाज्यम्=सि मिश्रित बी को संनीय=मिखा कर पृषदाज्यस्य=उस दिधिमिश्रतबीका + श्राट्यम्=थोदा थोदा अन्तयः पदार्थाः
+ भागम्=भाग
+ झादाय=के कर
उपघातम्=वार वार
जुहोति=होम करे
+ एवःजुवन्=वह कहता हुचा कि
अस्मिन्=इस
स्वे=चपने
गृहे=पर में
एधमानः=पुतादि करके वहता

सहस्त्रम्=पक सहस्र मनुष्यो पुष्पासम्=पान्नन पावय करने वान्ना होजं + स्व=चार ग्रस्य=हस मेरे पुत्र के उपसन्धाम्=वंग में +श्रीः (बस्मी साथ स-प्रजया | ताव, वस्य पार पशुष्पां के कभी विनाय की न प्राप्त होवे यानी तीनों वन रहें बुतना पर कर चाहुति देवे

च=भौर
मिय=मेरे विषे
+ यः=जो
+ प्राव्याः=मायाः है
+ तान्=उन
प्रायाःन्मायों को
स्वीय=सेरे में

सनसा=मनद्वारा जुहोमि स्वाहा=चर्यण करता ह + इति=येसा कह कर दिवीस वार प्राद्वित देवे यत्=जो अहम्=मैं कमेला प्रशिक कमें करता अस्परीरि-असा हूं वाम् या=स्थवा यत्=जो

इह) न्यून कर्म करता न्यूनम् }=भया द्व अकरम् तत्=उसको विद्वाव्⇒जानता हुमा

श्चित्रः=र्जाग्न स्विष्टक्रत्=उस किये हुये होमको सुहोस करने वाला + भूतव=होकर नः≔हमारे

स्वष्टम् करोतु=किये हुवे कर्मको सुहुत यानी सुकर्म करे

स्वाहा इति=यह कह कर फिर बाहुति देवे

भाषार्थ।

जब जड़का पैदा होजाय तब जड़के को गोद में जे कर कीर काम्न को स्थापन कर करों के बर्तन में दिश्वमिश्रित ची को मिला कर उस दिश्वमिश्रित घी का थोड़ा थोड़ा हबन नीचे जिल्ले मन्त्रों को पढ़ कर करे, "अस्मिन्सहस्रं पुष्यासमेश्रमानः स्वेगृहे । अस्बोपसम्बामा-क्ल्रेस्सीत्मज्ञया च पशुभिश्च स्वाहा" जिसका अर्थ यह है कि, मैं अपने घर में पुत्र कजन आदिके साथ एक सहस्र मनुष्यों का पाजन पोषशा करने हारा होऊं, और इस मेरे पुत्र के वंश में जहनी संतान, द्रव्य और पशुकी स्पत में सदा बनी रहे, मन्त्र पहने के पश्चात् आ- हुति हैवे फिर नीचे जिस्त मन्त्र को पहे "मयि प्राणाँ स्विध मनसा जुहोमि स्वाहा" जिसका अर्थ यह है, जो मेरे विषे प्राणा है, उन प्राणा को में अपने पुत्र में मन द्वारा अर्पणा करता हूं. ऐसा कह कर द्वितीय बार आहुति देवे, और फिर नीचे जिस्ते मन्त्र को पहे, "यत्क- भंगात्यरीरिचं यदा न्यूनमिहाकरम् । अगिनष्टित्स्वष्टक दिद्वान् स्विष्टं सुहुतं करोतु नः स्वाहेति " जिस का अर्थ यह है, जो में इस कर्म करके अ- चिक कर्म करता भया हूं, अथवा इस कर्म में जो न्यूनकर्म करता भया हूं, उसको जानता हुआ अगिन इस मेरे किये हुवे होम को सुहोम करने वाला हो कर हमारे किय हुये कर्म को सुकर्म करे, फिर मन्त्र पहने के पश्चात् आहुति देवे ॥ २४॥

मन्त्रः २५

श्रयास्य दक्षिणं कर्णमिभिनिधाय नाग्नागिति त्रिस्य दिधि मधु षृत्रंथं संनीयानन्तर्हितेन जातरूपेण प्राशयति । भूस्ते दधामि भुवस्ते दधामि स्वस्ते दधामि भूभुवः स्वः सर्वे त्विय दधामीति ॥

पदच्छेदः ।

आथ, आस्य, दक्षिसाम्, कसाम्, आभिनिधाय, वाक्, वाक्, इति, त्रिः, आथ, दिध, मधु, घृतम्, संनीय, आनन्तिहितेन, जातरूपेश, प्रा-श्यति, मूः, ते, दधामि, सुवः, ते, दधामि, स्वः, ते, दधामि, मूः, सुवः, स्वः, सर्वम्, त्वयि, दधामि, इति ॥

² श्रात्सयः

पदार्थाः भ्रम्बयः

पदार्थाः

आथ-इवन कमें के पींड़े आस्य=वातक के इक्षियाम्=दिन कर्याम्=कान को अभिनिधाय=स्पर्ध करके + तस्मिन्=वस में वाक्=वाक् धाक्=वाक् इति≕ऐसा त्रिः=तीन वार

+ पिता≕पिता भुवः=हे भुवः ! + जपति=उचारण करे ते=तेरे विवे श्रध=भौर वधामि=दण्यादिक वस्त की द्धि=दही रखता हं घृतम्=धी स्वः≔डे स्वः ! मधु=शहद संनीय=मिला कर ते=तेरे विधे इधामि=द्रथादिक बस्तु की रखता हूं भुः≔हे मृः ! प्राशयति=चरावे भुवः≔हे भुवः ! + एवम्बुवन्=ऐसा कहता हुन्ना कि स्वः≔हे स्वः ! भुः=हे भृः ! ते=तेरे जिये त्वयि=तेरे विषे द्धामि=द्रश्यादिक वस्तु को सर्वम्≕सव वचे हुये को दधामि इति=रखता हूं रखता ह भाषार्थ ।

हे सौस्य ! इवनकर्म के पीछे बाजक के दृष्टिने कान में वाक् धाक् ऐसा तीन बार उचारण करे, और दृही, घी, शहद मिला कर सोने के शलाके से लड़के के गुँह में चटावे, ऐसा कहता हुआ कि, हे भू: ! तेरे लिये दृष्यादि वस्तु को इसके गुल में रखता हूं, हे भुव: ! तेरे लिये इसके गुल में दृष्यादि वस्तु रखता हूं, हे स्व: ! तेरे लिये इसके गुलमें दृष्यादि वस्तु रखता हूं, हे भू: ! हे भुव: ! हे स्व: ! तेरे निमित्त सब बचे हुये होमद्रव्य को इसके गुल में रखता हूं ॥ २४ ॥

मन्त्रः २६

श्रथास्य नाम करोति वेदोऽसीति तदस्य तद्गुह्यमेव नाम मवति ॥

भथ, श्रस्य, नाम, करोति, वेद:, श्रसि, इति, तत्, श्रस्य, तद्, गुह्मम्, एव, नाम, भवति ॥

श्चारं वयः

पदार्थाः श्चान्त्रयः पदार्थाः

अध=इस के पीड़े

+ पिता≕पिता

अस्य≖इस बालक का

नाम=नामकरण करोति=करे

त्वम्=त्

चेदः=वेदस्वरूप यानी

ब्रह्मरूप असि इति=है ऐसा कहे

+ च=भीर + यत्=जंः

तत्=वह नाम है

तत्=वह

ग्रस्य=इस बातक का गुह्यम्⇒ग़प्त

न(म=नाम एव=निश्चय करके

भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इसके पीछे पिता अपने लड़के का नामकरण करे भ्रौर ऐसा कहे कि तू वेदस्वरूप यानी ब्राह्मस्वरूप है स्रीर जो यह वेद नाम उसका रक्खा गया है वह उस बालक का गुप्त नाम होता है ॥ २६ ॥

मन्त्रः २७

अर्थैन मात्रे पदाय स्तनं पयच्छति यस्ते स्तनः सशयो यो मयोभूर्यो रत्नथा वसुविद्यः सुदत्रः । येन विश्वा पुष्यति वार्याणि सरस्वाति तमिह धातवे कारिति ॥

पदच्छेदः ।

डाथ, एनम्, मात्रे, प्रदाय, स्तनम्, प्रयच्छ्रति, यः, ते, स्तनः, सरायः, यः, मयोभूः, यः, रल्लघाः, वसुवित्, यः, सुदत्रः, येन, विश्वा, पुष्यसि, वार्याणि, सरस्वति, तम्, इह, धातवे, कः, इति ॥ पदार्थाः पदार्थाः । स्रन्वयः

द्यान्वयः श्रथ=तरपश्चात्

+ स्वाङ्कस्थम्=प्रपनी गोद में रक्खे

हुये एनम्=उस बाबक की मात्रे≕मातां के प्रति

प्रदाय=देकर स्तनभ्=उसको स्तन

प्रयच्छति=प्रदान करे

एसम्बदन्=यह कहता हुआ कि सरस्वति=हे सरस्वति !

-

यः=जो ते=तेरा सश्यः=सफक स्तनः=स्तन है यः=जो मयोभूः=प्राणियों के पाकनार्थ हुवा है यः=जो स्तन रक्कधाः=दुःखवारक है यः=जो कसुवित्=कर्मफल का ज्ञाता है + च=भीर

सुद्तः=परम करवाय का देने वासा है येन=जिस करके त् विष्या=संप्यं वार्याणि=भेद्यावियों को पुष्पसि=पुष्ट करती है तम्=उस स्तन को इह=मेरी भाषां के स्तन में धातवे=वासक के पीने के विषे का: इति=मंगिष्ट कर

भाषार्थ ।

हे सौन्य ! फिर पिता अपनी गोद में रक्खे हुये वालक को माता की गोद में देकर माता के स्तन के तरफ़ अभिमुख करावे और सरस्वती देवी की प्रार्थना करता हुआ कहे कि हे देवि ! जो तेरा स्तन सफल है और जो प्रार्थायों का पालन करने हारा है और जो दुग्ध- धारक है और जो कर्मफल का ज्ञाता है और कल्याया फल का देने वाला है जिस करके तू सम्पूर्ण प्रार्थायों को पुष्ट करती है उस अपने स्तन को मेरी भार्या के स्तन में वालक के पीने के ज्ञिये प्र- विष्ट कर !! २७ !!

मन्त्रः २८

भयास्य मातरमियन्त्रयते । इलासि मैत्रावरूणी बीरे वीरमजी-जनत् । सा त्वं वीरवती भव याऽस्मान्वीरवतोऽकरिदिति । तं वा एतमाहुरतिपिता बताभूरतिपितामहो बताभूः परमां बत काष्टां पाप-च्छिया यशसा ब्रह्मवर्चसेन य एवंविदो ब्राह्मणस्य पुत्रो जायत इति ।।

> इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि षष्टोऽध्यायः ॥ ६ ॥

पद्रह्येदः ।

आय, अस्य, मातरम्, अभिमन्त्रयते, इला, असि, मैत्रावरुग्गी, बीरे, वीरम्, अजीजनत्, सा, त्वम्, वीरवती, भव, या, अस्मान्, बीरवतः, अकरत्, इति, तम्, वा, प्रतम्, आहुः, अतिपिता, वत, अमूः, अतिपितामहः, वत, अभूः, प्रमाम्, वत, काष्ठाम्, प्रापत्, श्रिया, यशसा, ब्रह्मवर्षसेन, यः, एवंविदः, ब्राह्मग्यस्य, पुत्रः, जा-यते, इति ॥

पदार्थाः ग्रम्बयः अथ=इसकें उपरान्त ग्रस्य=उस दावक की मातरम्≔माता को श्रामिमन्त्रयते=श्रमिमन्त्रण करे यानी उसकी प्रशंसा करे कि + त्वम्=त् मित्रावरुणी=मस्न्यती तुस्य ् बू प्रीधवी तुक्य है यानी सब प्रकार के इस्ता=) भोगसामग्री की देने (बाबी श्रसि=है + श्रसि=है + त्वम्⊃त् + मिय) झजीजनत्≕वैदा करती मई है या=जो

+ भवती=त

पदार्थाः ग्रस्मान्≔इमको घीरवतः=वीरपुत्र युक्र अकरत्=करती भई है + झतः≔इस क्षिये सा=बह त्वम्=पू वीरवतः=वीरपुत्रवासी भव=हो + ग्रद्य=बर + पुत्रम् } पुत्रको सन्दोषन + सम्दोध्य } =करके + पिता आह=पिता कहता है कि + पुत्र=हे पुत्र ! + जनाः=कोग + इति=पेसा + त्वाम्=तुमको बाहु:=कहें कि + त्वम्=त् श्रतिपिता=भवने विता से अभृ≔हुवा है बत=पह बदा चारवर्ष है + त्यम्=त्

श्वतिपितामहः=दादा से वदकर

श्वमूः=हुंबा है

बत=यह बदा झारवर्य है

+ च=मौर

यः=त्रो

+ त्यम्=त्

यशसा=यरा करके

श्विया=संपत्ति करके

श्वह्याचचसा=महातेज करके

परमाम्=उत्तम
काष्टाम्=बदती को

प्रापत्=पात हुआ है
बत=पह वहा भारवर्ग है
प्रवंदिद:=इस प्रकार पुत्रीस्पिक
विधिके जानने वाखे
+ यस्य≕जित
झाझग्रस्य=आझग्र को
पुत्र:=ऐसा ख़दका
जायते=उस्पन्न होता है
+ स:=वह
+ स्तुत्य:=स्तुति के योग्य
+ भवति=होता है

भावार्थ ।

ह सौम्य ! इसके पीछे उसकी माता को अभिमन्त्रण करके उसकी प्रशंसा, पित करे यह कहता हुआ कि, हे की ! तू अरुम्बतीतुल्य है, तू पृथिवीतुल्य है, यानी सवप्रकार की भोग्यसामग्री की देने वाजी है, तू ही मुक्त वीरपुरुष के निमित्तकारणा होने पर वीरपुरु को पैदा करती मई है, चूं कि तू हमको वीरपुत्र करती मई है, इसिंजिये तू वीरपुत्रवती हो. इसके बाद पुत्र को सम्बोधन करके पिता कहता है कि मैं चाहता हूं कि जोग तुक्तको ऐसा कहें कि तू अपने पितासे बुढ़कर है, तू अपने दादा से बढ़ कर है, तू यश, संपत्ति, ब्रह्मते करके उत्तम बढ़ती को प्राप्त हुआ है, यह बड़ा आश्चर्य है, आगो अपने कहती है कि इस प्रकार पुत्रोत्पत्तिविधि के जानने वाले जिस बाइत्या को ऐसा जड़का उत्पन्न होता है वह स्तुति के रों अबस्य होता है। र⊏॥

इति चतुर्ये ब्राह्मराम् ॥ ४ ॥ इति श्रीबृहदारययकोपनिषदि भाषातुवादे षष्ठोऽध्यायः संमान ॥

लाल बहर्र ुँ शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration Library

मचूरी MUSSOORIE

अवाष्ति सं**॰** Acc. No.....

कृपया इस पुस्तक को निम्न लिखित दिनांक या उससे पहले वापस कर हैं।

Please return this book on or before the date last stamped below,

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की सख्या Borrower's No.
:			
			·

	_		

GL H 294.59218 ARA

121560

स्ति सं ति प्रति सं ति ।

प्रति प्रति सं ति प्रति सं ति ।

प्रति प्रति सं ति प्रति सं ति ।

प्रति सं ति सं ति ।

294.59218 JOHS 11

VALUE AHADUR SHASTRI National Academy of Administration MUSSOORIE

Accession No. 121560

- Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
- 2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
- 3. Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
- Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
- Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving